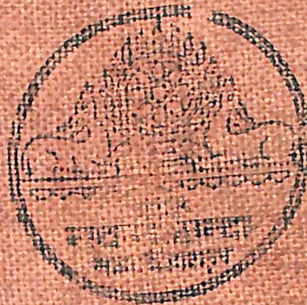
नव-नालन्दा-महाविहार-ग्रन्थमाला

सुमङ्गलविलासिनी

(दीघनिकाय-अट्ठकथा)

ततियो भागो



संशोधक

डॉ० महेश तिवारी, शास्त्री



नव-नालन्दा-महाविहार-गन्थमाला
बिहाररज्जाणाय पकासिता

सुमङ्गलविलासिनी

(दीघनिकाय-अट्ठकथा)

दुतियो भागो

प्रधान संशोधक

डॉ० नथमल टाटिया

एम० ए०, डी० लिट्०

निदेशक

नव नालन्दा महाविहार, नालन्दा

संशोधक

डॉ० महेश तिवारी, शास्त्री

एम० ए० (संस्कृत, पालि) पी० एच० डी०

शोध प्राध्यापक

नव नालन्दा महाविहार, नालन्दा



नव नालन्दा महाविहार

नालन्दा

बुद्धाब्द २५१९ ई० १९७५ विक्रमाब्द २०३२

मुख्य वितरक :—

चौखम्बा संस्कृत सिरीज,
गोपाल मन्दिर लेन,
पो० बा० नं० ८,
वाराणसी-१
(उत्तर प्रदेश)

मूल्य 30) रुपये

मुद्रक :—

बिहार राज्य शिक्षक सहयोग संघ लि० प्रेस,
एक्जीवीशन रोड, पटना-१

Nava Nālandā Mahāvihāra Publication
Published under the authority of
Government of Bihar

THE
SUMAṄGALA-VILĀSINĪ

(DĪGHANIKĀYA-AṬṬHAKATHĀ)

Vol. II

General Editor,
Dr. Nathmal Tatia,
M. A., D. Litt.,
Director, Nava Nālandā Mahāvihāra.

Editor,
Dr. Mahesh Tiwary, Shastri,
M. A. (Pali, Sanskrit), Ph. D.,
Research Professor,
NAVA NĀLANDĀ MAHĀVIHĀRA



NAVA NĀLANDĀ MAHĀVIHĀRA
NĀLANDĀ (Bihar)

B. E. 2519 C. E. 1975 V. E. 2032

Sole Agents :—

M/s. Chaukhamba Sanskrit Series
Gopal Mandira Lane,
Post Box No 8,
Varanasi-1
(U. P.)

Price Rupees



Printed by :

Bihar Rajya Shikshak Sahyog Sangh Ltd. Press,
Exhibition Road, Patna-1.



The Government of Bihar established the Nalanda Institute of Post-Graduate Studies and Research in Buddhist Learning and Pali (NAVA NĀLANDĀ MAHĀVIHĀRA) at Nalanda *in* 1951 with the object, *inter alia*, to promote advanced studies and to publish works of permanent value to scholars. This Institute is one of five others, planned by this Government as a token of their homage to the tradition of learning and scholarship for which ancient Bihar was noted. It has been doing useful work in the field of scholarship for the last twentyfour years.

As part of the programme of rehabilitating and reorientating ancient Learning and Scholarship, the edition and publication of the Aṭṭhakathās have been undertaken with the co-operation of the scholars of the Institute. The Government of Bihar hope to continue to sponsor such projects and trust that this humble service to the work of scholarship and learning would bear fruit in the fulness of time.



प्रधान सम्पादकीय वक्तव्य

नव नालन्दा महाविहार के सीमित साधनों के मध्य नागरी लिपि में अट्ठकथाओं के प्रकाशन की सन्तोषप्रद प्रगति अत्यन्त हर्ष की बात है। इसकी इस पृष्ठभूमि में हमारा विश्वास है कि आगामी तीन वर्षों में हम समस्त अट्ठकथाओं को सुधी जनों के सम्मुख उपस्थित कर सकेंगे। इससे स्थविरवादी परम्परा की वे बहुमूल्य सामग्रियां सहजतया सुलभ हो सकेंगी, जो अब तक अपरिचिति के गर्भ में पड़ी थीं।

सुमंगलविलासिनी, भाग-२ में दीघनिकाय के सोलह सुत्तों की अट्ठकथा है। इसमें सीलक्खन्धवग्ग के नौ तथा महावग्ग के सात सुत्त हैं। इन सोलह सुत्तों की अट्ठकथाओं की परिधि में जिन सामग्रियों का अभिग्रन्थन हुआ है, वे कई दृष्टियों से अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं। ईसा पूर्व छट्ठी शताब्दी में भारत में धर्म, दर्शन, संस्कृति, नीति, समाजशास्त्र, राजव्यवस्था आदि का क्या रूप था, उसका स्पष्ट चित्र इनके मध्य देखा जा सकता है। यहां शास्त्र-परम्परा, लोकपरम्परा तथा स्वमति के अनुसरणपूर्वक बुद्ध वचनों को सुगमतया अवबोध्य बनाने का प्रयत्न है। मौखिक रूप में विद्यमान तथ्य भी पूर्वापर पूर्ण सामंजस्य के साथ लिपिबद्ध हो कालप्रवाह से व्यवच्छिन्न परम्परा के कारण प्राविधिक रूप में उपलब्ध पदों के अवगाहन में अत्यन्त सहायक हैं। विशेषकर पोट्ठपाद सुत्त, तेविज्जसुत्त, महापदानसुत्त, महानिदानसुत्त, महापरिनिब्बानसुत्त की अट्ठकथाओं में क्रमशः बुद्धकालीन आत्मा-विषयक धारणा, ब्राह्मणवाद, महापुरुषलक्षण, प्रतीत्यसमुत्पाद तथा भगवान बुद्ध के अन्तिम जीवन—आदि विषयों पर प्रभूत प्रकाश पड़ा है। इससे शोधार्थियों तथा बौद्ध विद्या के जिज्ञासुओं को अमित लाभ हो सकेगा, ऐसी आशा है।

सुमंगलविलासिनी, भाग-२ का सम्पादन मेरे मेधावी शिष्य डा. महेश तिवारी, शोध प्राध्यापक, नव नालन्दा महाविहार, द्वारा सफलतापूर्वक किया गया है। इन्होंने अन्य लिपियों में उपलब्ध संस्करणों के तुलनात्मक अभिवाचन, अनुच्छेदव्यवस्था, व्याख्यात पदों का प्रसंगनिर्देश, शीर्षक, अनुशीर्षक आदि के योग से ग्रन्थ को परिष्कृत एवं सुबोध बनाने का प्रयास किया है। ग्रन्थ के विषय में सुगमतया प्रवेश के लिए प्रारम्भ में दी गयी भूमिका अत्यन्त उपयोगी है। मेरी मंगलकामना तथा शुभ आशीष है कि ये दीर्घायु हों, जिससे पालि एवं बौद्ध विद्या के अधिकाधिक ग्रन्थों को विद्वत् जगत् के समक्ष ला सकें।

नथमल टाटिया

२६-२-७५

निदेशक
नव नालन्दा महाविहार,
नालन्दा

पुरोवाक्

सुमङ्गलविलासिनी, भाग-२ में दीघनिकाय के सोलह सुत्तों की अट्ठकथा है। इसमें सीलक्खन्धवग्ग के कूटदन्तसुत्त, महालिसुत्त, जालियसुत्त, महासीहनादसुत्त, पोट्ठपादसुत्त, सुभसुत्त, केवट्टसुत्त, लोहिच्चसुत्त एवं तेविज्जसुत्त नामक नौ सुत्त तथा महावग्ग के महापदानसुत्त, महानिदानसुत्त, महापरिनिब्बानसुत्त, महासुदस्सनसुत्त, जनवसभसुत्त, महागोविन्दसुत्त एवं महासमयसुत्त नामक सात सुत्त हैं। दीघनिकाय के चौंतीस सुत्तों में प्रथम चार की अट्ठकथायें इसके प्रथम भाग में प्रकाशित हैं। अवशेष चौदह सुत्तों की अट्ठकथा का आलोचनात्मक सम्पादन सम्पन्न हो चुका है। उनका प्रकाशन इसके तृतीय भाग के रूप में अगले वित्तीय वर्ष में हो जायगा, ऐसी आशा है।

इस ग्रन्थ की पाण्डुलिपि तैयार करने में कई पूर्ण अथवा अपूर्ण प्रतियों का सहारा लिया गया है। बर्मा की षष्ट बौद्ध संगीति के अवसर पर प्रकाशित सुमङ्गलविलासिनी के आधार पर इसकी मूल पाण्डुलिपि तैयार की गई है। पुनः सीहली, स्यामी तथा रोमन लिपियों में विद्यमान ग्रन्थों के तुलनात्मक अभिवाचन द्वारा इसके पाठों को शुद्ध तथा परिष्कृत किया गया है। इनमें हेवावतरण संस्करण सीहली, महामुकुट राज विद्यालय संस्करण स्यामी, पालि टेक्स्ट सोसायटी संस्करण रोमन तथा डा. नलिनाक्ष दत्त द्वारा सम्पादित संस्करण रोमन ग्रन्थों का पूर्णतया उपयोग किया गया है। तुलनात्मक अभिवाचनक्रम में कई स्थलों पर अनेक पाठभेद पाये गये हैं। उनमें जो पाठ व्याख्यात पदों के अर्थ को सुबोध बनाने में अधिकतम सहायक हैं, वे इस ग्रन्थ के कलेवर में समाविष्ट हैं। अवशेष इसके पृष्ठपाद में रखे गये हैं। कुछ निरर्थक से प्रतीत होने वाले पाठभेदों को छोड़ दिया गया है।

प्रकृत ग्रन्थ के आलोचनात्मक सम्पादन में नव नालन्दा महाविहार, नालन्दा द्वारा स्वीकृत सम्पादन-विधि का अनुसरण किया है। यत्न सर्वत्र यही है कि ग्रन्थ सुगमतया अवबोध्य हो। इस उद्देश्य से बड़े-बड़े अनुच्छेदों को सोपान, विषय-प्रतिपादन, स्पष्टीकरण आदि दृष्टियों से विभक्त कर दिया गया है। साथ ही शीर्षक, अनुशीर्षक आदि का भी यथास्थान योग है। मूलग्रन्थ के पदों एवं अट्ठकथा में पार्थक्य निदर्शनार्थ व्याख्यात पदों को कृष्ण अक्षरों में तथा मूलग्रन्थों से समाहृत पदों को युग्म उद्धरण चिन्हों के मध्य रखा गया है। अट्ठकथा का अध्ययन करते समय पाठक मूल ग्रन्थ के प्रसंग से सुपरिचित रहें, इसलिए दीघनिकाय के सुत्तों के पृष्ठ प्रसंग, अनुच्छेद, अनुक्रमांक आदि दिये गये हैं। ये सभी अंक नालन्दा संस्करण के ग्रन्थों के हैं। इसके साथ-साथ बर्मी तथा रोमन

लिपियों में उपलब्ध ग्रन्थों के प्रसंगानुकूल सुलभ उपयोग के लिए इसके पृष्ठ पार्श्व में उनके पृष्ठांक दिये गये हैं। इस सम्बन्ध में निवेदन है कि सम्पादन के प्रारम्भ में सुमङ्गलविलासिनी, पालि टेक्स्ट सोसायटी संस्करण, उपलब्ध नहीं थी। फलतः पृष्ठ ३२ से ९२ तक के तुलनात्मक अभिवाचन में डा. नलिनाक्ष दत्त द्वारा रोमन लिपि में सम्पादित एवं इण्डियन हिस्टोरिक क्वार्टरली में प्रकाशित पुस्तक का उपयोग किया गया तथा उन पृष्ठों के पार्श्व में उसी ग्रन्थ के पृष्ठांक १ से ४२ तक दिये गये। अन्य सभी पृष्ठांक पालि टेक्स्ट सोसायटी लन्दन संस्करण के हैं।

लगभग पन्द्रह सौ वर्षों के दीर्घ अन्तराल के अनन्तर सुमङ्गलविलासिनी के सर्वप्रथम देवनागरी लिपि में प्रकाशन के पुनीत अवसर पर अपने कल्याणमित्रों एवं गुरुजनों के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करना मेरा पावन कर्त्तव्य है। ऐसे अवसर पर शिक्षा विभाग, बिहार सरकार के प्रति मैं सर्वप्रथम आभार व्यक्त करता हूं, जिसके द्वारा अपनी समृद्ध सांस्कृतिक परम्परा के समादरक्रम में ऐसे दुर्लभ ग्रन्थों के प्रकाशन की योजनायें कार्यान्वित की गयी हैं। परम पूज्य गुरुदेव भिक्षु जगदीश काश्यप तथा डा. सत्कड़ी मुखर्जी के चरणों में मैं श्रद्धा एवं भक्ति से नत हूं, जिनकी कृपा एवं आशीर्वाद के सम्बल से ही ऐसे कार्यों में मेरी प्रवृत्ति हुई। नव नालन्दा महाविहार के विदेशक गुरुवर डा. नथमल टाटिया के स्नेह भरे मार्ग दर्शन, उत्साह एवं प्रेरणा का विस्मरण कदापि नहीं हो सकता है, जिनके बल यह कार्य सम्भव हो पाया है। मैं उनके प्रति श्रद्धा विनत हो हार्दिक कृतज्ञता ज्ञापित करता हूं। पूज्य गुरुवर डा. पी. वी. बापट, डा. अनुकूल चन्द्र बनर्जी, डा. बी. जिनानन्द आदि ने अपने आशीर्वाद भरे वचनों से मुझे सर्वदा ऐसे कार्यों के लिए उत्साहित किया है। मैं उन सबके प्रति कृतज्ञ हूं।

सम्पादनक्रम में जो ग्रन्थिस्थल मिले हैं, उनके परिष्करण में नव नालन्दा महाविहार के प्राध्यापकगण सर्व श्री डा. उ. धम्मरतन, डा. चन्द्रिका सिंह उपासक, डा. उ. जागराभिवंस, प्रो. ब्रह्मानन्द सरस्वती, प्रो. दिलीप कुमार बनर्जी, प्रो. उमाशंकर व्यास, प्रो. चन्द्रशेखर प्रसाद, प्रो. विनय कुमार शर्मा प्रभृति से मुझे प्रभूत लाभ हुआ है। डा. अंगराज चौधरी के आलोचनात्मक विश्लेषण मेरे लिए बड़े उपयोगी सिद्ध हुए हैं। डा. ना हे. साम्ताणि द्वारा प्राप्त कई दिशायें श्लाघ्य हैं। पुस्तकालयाध्यक्ष श्री मिथिलेश्वर प्रसाद एवं उनके सहकर्मियों का पुस्तक प्रदान एवं उपलब्धिकरण विषयक तत्परतापूर्वक सहयोग अत्यन्त लाभप्रद रहा है। मैं इन सभी कल्याण मित्रों के प्रति हार्दिक कृतज्ञता ज्ञापित करता हूं।

इस प्रसंग में मैं कपने भविष्णु एवं मेधावी छात्रों के सहयोग को कथमपि विस्मृत नहीं कर सकता हूं, जिनके सहयोग से अनुक्रमणिका विषयक कार्य सत्वर सम्पन्न हो पाये हैं। इनमें सर्वश्री डा. ब्रह्मदेव नारायण शर्मा, गोपाल शरण सिंह, जनार्दन उपाध्याय, परमेश्वर दलाय सिंह, लड्डू शर्मा प्रभृति के कार्य अत्यन्त

श्लाघ्य हैं। श्री सत्येन्द्र प्रसाद सिंह इस प्रकाशन यज्ञ के अत्यन्त कर्मठ सदस्य रहे हैं, जिनके अहर्निश सहयोग से इस ग्रन्थ के प्रूफ संशोधन विषयक कार्य अल्प काल में सम्पन्न हो पाया है। मैं इन सभी शिष्यों को हार्दिक साधुवाद देता हूं तथा इनके मंगलमय उज्वल भविष्य की कामना करता हूं।

अन्त में बिहार राज्य शिक्षक सहयोग संघ प्रेस, पटना के व्यवस्थापक श्री ठाकुर दयाल सिंह, कोषपाल श्री जगधारी पाण्डेय तथा अन्य सभी सहकर्मियों को हार्दिक साधुवाद देता हूं, जिनके साधु व्यवहार, निष्ठापूर्वक कार्य तथा सहयोग से इस ग्रन्थ का मुद्रण यथा समय हो पाया है।

ग्रन्थ को शुद्ध रूप में सुधी जनों के सम्मुख उपस्थित करने का मेरा सतत यत्न रहा हैं, पर मनुष्य के स्खलनधर्मा होने के कारण त्रुटियां कुछ आ ही गई हैं। इनके परिहार के लिए प्रारम्भ में एक शुद्धि पत्र दे दिया गया है। पुनः पुनः विनम्र निवेदन एवं क्षमा याचना सहित सुधी जनों से सादर अनुरोध है कि अपने अध्ययन क्रम में इसमें प्राप्त त्रुटियों से मुझे अवगत कराने की कृपा करें, जिससे अगला संस्करण सुन्दरतर हो सके।

महेश तिवारी

२७-३-७५

परिचिति

सुमंगलविलासिनी, भाग-२, में दीघनिकाय के सोलह सुत्तों की अट्ठकथा है। इसमें सीलक्खन्धवग्ग के नौ तथा महावग्ग के सात सुत्त हैं। इन सोलह सुत्तों तथा उनकी अट्ठकथाओं में प्राचीन भारतीय विद्याओं का एक विपुल भंडार संचित हैं। उनके सम्यक् विन्यास से अनेक विषयों पर प्रभूत प्रकाश पड़ सकता है। प्रकृत प्रसंग में स्थान की सीमावद्धता के कारण उसके कुछ शीर्षों पर प्रकाश डालने का यत्न किया जा रहा है।

यज्ञ

त्रिविध यज्ञ :—कूटदन्तसुत्त से प्रकट होता है कि उस समय समाज में धार्मिक कृत्य के रूप में यज्ञ का प्रचलन था। पुरोहित का काम ब्राह्मण किया करते थे। उनकी जीविका के लिए राजा की ओर से सभी आवश्यक उपकरण प्राप्त थे, जिन्हें राजदाय कहा जाता था। प्राप्त उपकरणों से ब्राह्मण अत्यन्त सुखपूर्वक जीवन व्यतीत करते थे। राजाओं के लिए विभिन्न प्रकार के यज्ञों का विधान उनके द्वारा होता था। उपलब्ध विवरण से प्रकट होता है कि वे यज्ञ बहुलसामग्रीसाध्य तथा हिंसा मूलक थे। अपर पार्श्व में भगवान बुद्ध को चारिका रत देखा जाता है। उनके द्वारा भी विभिन्न प्रकार के यज्ञों का विधान देखा जाता है, जो अल्पसामग्रीसाध्य तथा हिंसा रहित थे। इस प्रकार इस सुत्त की सामग्री का विश्लेषणात्मक अध्ययन करने से यज्ञ के तीन प्रमुख रूप देखे जाते हैं। प्रथम प्रकार के यज्ञ बहु-सामग्री-साध्य तथा हिंसा पूर्ण थे। दूसरे प्रकार के यज्ञ सामग्री-साध्य अहिंसा मूलक थे। तीसरे प्रकार के यज्ञ सामग्री रहित अहिंसा पूर्ण थे।

(१) बहु-सामग्री-साध्य हिंसामूलक यज्ञ : इस प्रकार के यज्ञ के सम्पादन में बड़े परिमाण में होमसामग्रियाँ तथा बलिकर्म के लिए अनेक प्रकार के पशुओं की आवश्यकता होती थी। मूल ग्रन्थ से प्रकट होता है कि "उस समय कूटदन्त ब्राह्मण के घर महायज्ञ उपस्थित हुआ था। उसमें बलि के लिए सात सौ वृषभ, सात सौ बछड़े, सात सौ बाछियाँ, सात सौ बकरे, सात सौ तरुण भेडें स्थूण (बध स्तम्भ) पर लाये गये थे[१]"। इनके अतिरिक्त भी कई प्रकार के पशु-पक्षी बांध कर यूप के निकट उपस्थित किये गये थे। इस प्रकार के यज्ञ में यज्ञ स्तम्भ के लिए विभिन्न प्रकार के वृक्षों को काटा जाता था। कुश तथा अन्य समिधायें एकत्र की जाती थी।

---

१. दी० नि० १.१०६।

इनके संग्रह के लिए दासों को कठोर श्रम करना पड़ता था। दण्डतर्जित, भयतर्जित अश्रुमुख हो उन्हें न चाहने पर भी काम करना पड़ता था। इस दृष्ठि से इस प्रकार के यज्ञ बहु-सामग्री-साध्य तथा हिंसा पूर्ण थे।

(२) **बहु-सामग्री-साध्य अहिंसा मूलक यज्ञ :—**प्रकृत प्रकरण में यज्ञ का जो दूसरा प्रकार देखा जाता है, उसमें सामग्रियां अवश्य बहुत लगती थी, पर हिंसा नहीं था। इस प्रकार के यज्ञ को तीन विधाओं तथा सोलह परिष्कार-सम्पन्न यज्ञ कहा जाता था। यह होम यज्ञ था। इसमें पशु-पक्षियों की बलि नहीं दी जाती थी[1]। इस प्रकार के यज्ञ के लिए राज्य में सर्वप्रथम उत्तम परिवेश की आवश्यकता होती थी। जो राजा इस प्रकार का यज्ञ कराना चाहता था, उसे प्रजा को सन्तुष्ट करना पड़ता था। प्रजावर्ग में व्याप्त असन्तोष के कारणों का सर्वेक्षण करा उन्हें उन उपकरणों को उपलब्ध कराना पड़ता था, जिनके अभाव में प्रजा असंतुष्ट रहती थी। जो लोग कृषिकर्म के लिए उत्साही थे, पर उपकरणों के अभाव में कृषि कर्म नहीं कर पाते थे, उन्हें कृषि के उपकरण दिये जाते थे। वाणिज्य के उत्साही को पूंजी, राजसेवा के इच्छुकों को राज सेवा तथा अन्य प्रकार की सेवाओं में नियुक्त कर भत्त-वेतन की व्यवस्था की जाती थी। ऐसा होने से सभी मनुष्य अपने-अपने काम में लगकर सुखपूर्वक हर्षित, मोदित हो जीवन व्यतीत करने लगते थे[2]। समस्त जनपद अपीड़ित, अकंटक, तथा क्षेम युक्त हो जाता था। ऐसा सुखद परिवेश प्राप्त कर यज्ञ का आरंभ होता था।

(क) **अनुमति पक्षीय चार यज्ञ संस्कार :—**यज्ञ के सोलह संस्कारों में चार अनुमति पक्षीय होते थे। राजा अपने राज्य के जनपद नैगम तथा अनुयुक्तक क्षत्रियों, अमात्य पारिषद्यों, महाशाल ब्राह्मणों, तथा सम्पन्न (नेचयिक) गृहपतियों से यह कहते हुए अनुमति प्राप्त करते थे कि—"मैं महायज्ञ करना चाहता हूं, आपलोग अनुज्ञा करें, जो चिरकाल तक मेरे हित-सुख के लिए हो। यह चार वर्ग के लोगों से अनुमति प्राप्त करने के कार्य को चार अनुमनि पक्षीय संस्कार कहा जाता था।

(ख) **यजमान-विषयक आठ यज्ञ संस्कार :—**यज्ञ करने वाले के लिए यह आवश्यक समझा जाता था कि वह आठ गुणों से उपेत हो। वे आठ गुण हैं—१. वह माता-पिता दोनों ओर से सुजात हो। २. वह अभिरूप, दर्शनीय तथा पुष्कल सौन्दर्य सम्पन्न हो। (३) वह सदाचार से युक्त हो। ४. वह अपार धन-स्वर्ण

---

१. सप्पितेलनवनीतदधिमधुफाणितेन चेव सो यञ्ञो निट्ठानमगमासि—दी० नि० १.१२१।

२. ते च मनुस्सा सकम्मपसुता रञ्ञो जनपदं न विहेठेस्सन्ति, महा च रञ्ञो रासिको भविस्सति। खेमट्ठिता जनपदा अकण्टका अनुप्पीला। मनुस्सा मुदा मोदमाना घरे पुत्ते नच्चेन्ता अपारुतघरा मञ्ञे विहरिस्सन्ती ति—दी० नि० १.११६।

रजत आदि से युक्त हो। ५. उसके पास प्रभूत बलशाली चतुरंगिनी सेना हो। ६. वह श्रद्धालु, दानी तथा श्रमण ब्राह्मण प्रेमी हो। वह श्रमण ब्राह्मण तथा अन्य याचकों के लिए अनावृत द्वार हो। ७. वह बहुश्रुत हो। ८. वह पंडित, मेधावी समर्थ तथा भूत भविष्य एवं वर्त्तमान की बातों का ज्ञाता हो। यजमान के ये आठ गुण ही अंगमयिक आठ यज्ञ संस्कार कहे जाते थे[1]।

(ग) पुरोहित-विषयक चार यज्ञ संस्कार :—यज्ञ कर्म के सम्पादन में पुरोहित की प्रमुख भूमिका होती थी। उसके समुचित मार्गदर्शन पर ही यज्ञ की शान्तिपूर्ण एवं विधिवत् समाप्ति निर्भर थी। इसलिए यह आवश्यक समझा जाता था कि पुरोहित भी चार गुणों से युक्त हो। वे चार गुण इस प्रकार थे कि वह १. माता पिता दोनों ओर से सुजात हो, २. अध्यापक मन्त्रधर, तीनों वेद तथा अन्य विद्याओं में निपुण हो, ३. शीलवान, एवं शुभाचरण वाला हो तथा ४. पण्डित, व्यक्त, मेधावी तथा दक्षिणा ग्रहण करने में अग्रणी हो। पुरोहित के ये चार गुण ही पुरोहित पक्षीय चार यज्ञ के संस्कार समझे जाते थे।

(घ) तीन विधायें :—यज्ञ की तीन विधाओं का सम्बन्ध त्रिविध विप्रतिसारों का निवारण है। यज्ञ के सम्पादन में अपार धनराशि का व्यय होता था। यज्ञ वस्तुतः त्याग का ही नाम है। अतः धनराशि के व्यय-विषयक विप्रतिसार न हो, इसके लिए त्रिविध निश्चयात्मक मनोबल का होना आवश्यक है। वे इस प्रकार हैं :—(१) इस यज्ञ में एक विशाल धनराशि का व्यय होगा, इसके लिए विप्रतिसार नहीं होना चाहिए। (२) इस यज्ञ में एक बड़ी धनराशि का व्यय हो रहा है, ऐसा चिन्तन कर विप्रतिसार नहीं होना चाहिए। (३) इस यज्ञ में एक अपार धनराशि का व्यय हो गया, ऐसा विचार कर विप्रतिसार नहीं होना चाहिए। इस प्रकार यज्ञ के प्रारंभ मध्य तथा पर्यवसान के क्षणों में यज्ञ में हुये अपार धन के व्यय विषयक किसी प्रकार की मानसिक प्रतिकूल अनुभूति नहीं होनी चाहिए। इस प्रकार की भयकालिक विप्रतिसार निवारण की निश्चयात्मक प्रवृत्ति को यज्ञ की तीन विधायें कहा जाता था।

इस प्रकार तीन विधायें तथा सोलह परिष्कारों से समन्वित अपार होम सामग्रियों से यज्ञ का प्ररम्भ होता था। इसमें पशु वध आदि नहीं होता था। केवल घी, तेल, नवनीत, दधि, मधु, सर्करा आदि के हवन से यज्ञ सम्पन्न किया जाता था। इस तथ्य का परिचय मूल प्रकरण से इस प्रकार होता है कि—"उस यज्ञ में गो बध नहीं हुआ। अज, मेण्डक, कुक्कुर, सूकर आदि की भी हिंसा नहीं की गयी। न यूप के लिए वृक्ष काटे गये, न पर हिंसा के लिए कुश ही। जो कोई भी दास, प्रेष्य कर्मकर थे, उन्होंने दण्डतर्जित, भयतर्जित, अश्रुमुख सेवा नहीं की। जिन्होंने चाहा, उन्होंने वैसा काम किया। जिन्होंने जो नहीं चाहा, वह नहीं किया। केवल घी, तेल, नवनीत, दधि, मधु, सर्करा आदि से यज्ञ सम्पन्न हुआ।"

---

१. दी० नि० १.११७।

(३) **महाफलदायी यज्ञ :**—सोलह परिष्कार एवं तीन विधाओं से युक्त यज्ञ के वर्णन के अनन्तर अन्य छ प्रकार के यज्ञों का उल्लेख मिलता है, जिनमें अल्प यज्ञ सामग्रियों की आवश्यकता होती है। इनमें न तो पशुओं की हिंसा होती हैं, न दण्डप्रहार गलग्राह ही होता है, पर ये महाफलदायी तथा महा माहात्म्य सम्पन्न हैं। वे हैं—दान यज्ञ, त्रिशरण यज्ञ, शिक्षापद यज्ञ, शील यज्ञ, समाधि यज्ञ, तथा प्रज्ञा यज्ञ। प्रत्येक प्रकार के यज्ञ त्याग-परिनिष्ठ है तथा त्याग के अर्थ में ही इन्हें यज्ञ कहा जाता है—"परिच्चत्तत्ता व यञ्ञो ति वुच्चति।"

(१) **दान यज्ञ :**—इस प्रकार के यज्ञ का सम्पादन करते हुए शीलवान प्रव्रजितों को नित्य दान दिया जाता है प्रव्रजितों के लिए चार आवश्यकतायें—भिक्षान्न, चीवर, निवास स्थान तथा औषधि कही गयी हैं। कुल परम्परा के अनुरूप शीलवान प्रव्रजितों को इन चार आवश्यकताओं की सर्वदा आपूर्त्ति करना दान यज्ञ है। रम्य तथा गमनागमन की सुविधाओं से युक्त भूमि में विहार बनाकर संघ के लिए परित्याग करना दान यज्ञ के अन्तर्गत है।

(२) **त्रिशरण यज्ञ :**—दान यज्ञ से भी अल्प सामग्री तथा अल्प हिंसा वाला त्रिशरण यज्ञ है। प्रसन्न चित्त एवं कम्पन रहित श्रद्धा के साथ बुद्ध, धर्म एवं संघ की शरण जाना त्रिशरण यज्ञ है। प्रव्रजितों को दान देते समय अपात्र को दिये जाने पर ग्लानि हो सकती है। संघ के लिए विहार का दान किये जाने पर भी उसके जीर्णोद्धार आदि में कुछ सामग्रियों की भी आवश्यकता हो सकती है तथा जाने या अनजाने कुछ छोटे-छोटे प्राणियों के हिंसा की भी संभावना भी देखी जा सकती है, पर त्रिशरणगमन में किसी वस्तु की आवश्यकता नहीं है। शुद्ध चित्त से बुद्ध, धर्म तथा संघ के गुणों का व्यतिक्रम-विरहित अनुसरण करना ही त्रिशरण गमन है। इसमें जीवन के परित्याग करके भी शरण गमन की शुद्धता की रक्षा होनी चाहिए। ऐसी दृढ़ निष्ठा एवं त्याग के अर्थ में इसे यज्ञ कहा जाता है—"तिण्णं पन रतनानं जीवितपरिच्चागवसेन यञ्ञो ति वुच्चति"।

(३) **शिक्षापद यज्ञ :**—त्रिशरण यज्ञ से भी उत्तम शिक्षापद यज्ञ है। इसमें न तो अन्नपानादि सामग्रियों की आवश्यकता होती है, न किसी प्रकार हिंसा ही देखी जाती है। केवल परिशुद्ध चित्त से पांच शिक्षापदों का ग्रहण करना होता है। इन्हें ग्रहण करते हुए—प्राणि-हिंसा, चौर कर्म, व्यभिचार, मिथ्या कथन तथा मद्यपान से विरति का सम्यक् रूप से पालन करना पड़ता है। विरत रहने के भाव को विरति कहा जाता है। यह तीन प्रकार की होती है, यथा—सम्पत्त-विरति, समादान-विरति, सेतुघात-विरति। कोई मनुष्य उक्त शिक्षा पदों का ग्रहण किये बिना केवल अपनी जाति, गोत्र, कुल, प्रदेश आदि की मर्यादा का अनुस्मरण करते हुए प्राणि-हिंसा, चौर्य कर्म आदि से विरत होता है। उसकी ऐसी विरति को 'सम्पत्त-विरति', कहा जाता है। पुन: कोई मनुष्य शिक्षा पदों का सम्यक् रूप से ग्रहण कर उक्त पाँच प्रकार के दुष्कर्मों से विरत रहता है। इसे समादान-विरति कहा जाता है। आर्य

श्रावकों की जो मार्ग सम्प्रयुक्त विरति है, उसका नाम सेतुघात-विरति है। प्रकृत प्रसंग में समादान-विरति ही अभिप्रेत है।

पाँच शिक्षा पदों का पालन करते हुए वह अपने जीवन का उत्सर्ग कर सकता है, पर इनके परिपालन में व्यतिक्रम नहीं होने देता है। उसका यह कार्य आत्म स्नेह एवं जीवन-परित्याग परिनिष्ठ है, फलतः यज्ञ कहा जाता है[1]।

पंच शील वे पालन को भगवान बुद्ध ने महादान बतलाया है। इनके परिपालन से मनुष्य असंख्य प्राणियों को अभय देता है। ऐसा करते हुए वह असंख्य प्राणियों से अवैर तथा मैत्री की स्थापना करता है। इस प्रकार अभय दान तथा अवैर दान के अर्थ में यह महादान है तथा अपरिमाण अवैर एवं मैत्री के संग्रह के अर्थ में यह यज्ञ महाफलदायी है।

(४) **शील यज्ञ :**—शिक्षापद यज्ञ के वर्णन के उपरान्त शील यज्ञ का कथन देखा जाता है। यह यज्ञ उक्त यज्ञ से भी अल्प सामग्री वाला तथा महाफलदायी है। शील ब्रह्मचर्यवास का आधार है। जिस प्रकार आधार शिला के बिना किसी भवन की प्रतिष्ठा संभव नहीं है, उसी प्रकार शील के परिपालन बिना कुलपुत्रों का साधु-जीवन में प्रतिष्ठा नहीं हो सकती है। शील-परिपालन से उसके कायिक तथा वाचसिक दुराचार प्रहीण हो जाते हैं। केवल काय कुशल कर्म तथा वची कुशल कर्मों की ही प्रवृत्ति होती है।

शील के तीन प्रकार कहे गये हैं। वे हैं—चूल शील, मज्झिम शील तथा महा शील। इनका विस्तृत वर्णन 'सामञ्ञफलसुत्त' में देखा जा सकता है।

शील का परिपालन विरतिनिष्ठ है। इसके कथनक्रम में कुछ ऐसे कार्यों का उल्लेख है, जो हेय हैं। उनसे विरत रहना ही शील है। ऐसी विरति से मनुष्य असंख्य प्राणियों को उन-उन दुष्कर्म जनित आघातों से अभय करता है, जो शील के न पालन से संभव थे। ऐसे अभयदान के अर्थ में इसे यज्ञ कहा जाता हैं तथा अनायास अपार मैत्री के अभिवर्षण के फलस्वरूप यह महाफलदायी है।

(५) **समाधि यज्ञ :**—समाधि का अर्थ एकाग्रता है। चित्र, चैतसिकों को विभिन्न विषयों से हटाकर किसी निश्चित आलम्बन पर एकाग्र करना समाधि है। यह एकाग्रता कुशल चित्त की होनी चाहिए। चित्त स्वभावतः चंचल है। उसकी गति इतनी तीव्र है कि एक क्षण में वह अनेक विषयों के साथ आसक्ति उत्पन्न कर लेता है। समाधि के लिए इसकी इस प्रकार की गतिशीलता का निरोध आवश्यक है।

---

१. इदं च पन सीलपञ्चकं अत्तसिनेहं च जीवितसिनेहं च परिच्चजित्वा रक्खिस्सामी ति समादिन्नताय यञ्ञो ति वुच्चति—सु० वि० २.१६ ।

चित्त की चंचलता के कारण नीवरण हैं। एकाग्रता में बाधा उपस्थित करने के कारण इन्हें नीवरण कहा जाता है। वे पांच हैं; यथा—कामछन्द, व्यापाद, थीनमिद्ध, उद्धच्च-कुकुच्च तथा विचिकिच्छा। वासनात्मक इच्छा का नाम कामछन्द है। परविनाशचिन्ता को व्यापाद कहा जाता है। थीनमिद्ध वस्तुतः चित्त चैतसिक में व्याप्त आलस्य है। चित्त की भ्रान्तता को उद्धच्च कुकुच्च तथा संशय को विचिकिच्छा कहा जाता है। जब तक ये पांच नीवरण कार्यरत रहते हैं, तब तक चित्त की एकाग्रता संभव नहीं। इसलिए इनका उपशम नितान्त आवश्यक है।

समाधि यज्ञ में लगे पुरुष के अनवरत अभ्यास से ये नीवरण शान्त हो जाते हैं। इनके ऐसे उपशम के अनन्तर ध्यान में साधक पाँच अंगों का उदय होता है। वे हैं—वितक्क, विचार, पीति, सुख तथा एकग्गता। विषय की ओर चित्त की उन्मुखता वितक्क है। विषय पर उसका स्थित होना विचार है। वांछित वस्तु की प्राप्ति की आशा में प्राप्त आनन्द का नाम पीति है। वांछित वस्तु के लाभ से प्राप्त आनन्द का नाम सुख है। चित्त की निश्चल भाव से स्थिति एकाग्रता हैं। इन पांच ध्यानांगों के उदय के साथ चित्त एकाग्र होने लगता हैं। ज्यों ज्यों ध्यान परिपक्व होता जाता है, ध्यानांग अनुपस्थित होने लगते हैं।

सुत्त की परम्परा के अनुसार ध्यान की चार अवस्थायें हैं। इन्हें प्रथम ध्यान, द्वितीय ध्यान, तृतीय ध्यान तथा चतुर्थ ध्यान कहा जाता है। प्रथम ध्यान की अवस्था में पांचों ध्यानांग रहते हैं। द्वितीय ध्यान में वितक्क तथा विचार अनुपस्थित हो जाते हैं। तृतीय ध्यान में पीति भी अनुपस्थित हो जाती है। उपेक्खा तथा एकग्गता के साथ चतुर्थ ध्यान की प्राप्ति होती है। ध्यान की इन क्रमशः विकासोन्मुखी अवस्थाओं के लाभ से चित्त क्लेशों से मुक्त हो समाहित, परिशुद्ध, अवदात, अनंगण, विगतोपक्लेश, मृदुभूत, कर्मनीय, स्थित तथा अत्यन्त एकाग्र हो जाता है। चित्त की ऐसी दशा की प्राप्ति समाधि यज्ञ की सम्पन्नता है। यह शील यज्ञ की अपेक्षा अल्प सामग्रीवाला पर महाफलदायी है।

(७) **प्रज्ञा यज्ञ :**—प्रज्ञा का अर्थ ज्ञान है। यह शब्द सामान्य वस्तुओं के ज्ञान के अर्थ में प्रयुक्त नहीं है, वरन् कुशल-चित्त-सम्प्रयुक्त विपश्यना ज्ञान का ही यह अभिवचन है। इसके अन्तर्गत सत्त्व के स्वरूप का ज्ञान, मनोमयी ऋद्धि ज्ञान, ऋधि-विध ज्ञान, दिव्यश्रोतज्ञान, परचित्तज्ञान, पूर्व निवासानुस्मृति ज्ञान, दिव्य चक्षु ज्ञान तथा आश्रवों का क्षय ज्ञान सम्मिलित है। ज्ञान की क्रमशः परिपक्व अवस्थाओं के लाभ से अज्ञान का आवरण क्रमेण क्षीण हो जाता है। कामाश्रव, भवाश्रव, दृष्टयाश्रव तथा अविद्याश्रव से चित्त विमुक्त हो जाता है। वह जान लेता है कि जीवन-मरण-परम्परा क्षीण हो गयी, ब्रह्मचर्य वास सम्पन्न कर लिया गया, करणीय कर लिये गये, पुनः भव परम्परा में यहाँ आना नहीं रहा। चित्त की इस दशा की प्राप्ति प्रज्ञा यज्ञ है।

अभिसंज्ञानिरोध

पोट्ठपाद सुत्त में अभिसंज्ञानिरोध की चर्चा देखी जाती है। प्रसंग ऐसा है कि पोट्ठपाद नामक एक परिव्राजक तिण्डुकाचीर नामक स्थान में स्थित मल्लिका द्वारा निर्मित एक सालक नामक आराम में रहा करते थे। उनके अनुयायियों की एक बड़ी परिषद् थी। वे अपने अनुयायियों द्वारा पूजित थे। समय-समय पर वहाँ विभिन्न कथा प्रसंगों को लेकर चर्चा हुआ करती थी। ऐसे ही एक दिन उस आराम में राजकथा, चोरकथा, महामात्यकथा आदि विषयों पर कुछ चर्चा चल रही थी। भगवान बुद्ध भी उन दिनों उसी ग्राम में विहार कर रहे थे। पूर्वाह्न समय भिक्षा के लिए निकले। बुद्ध ने शिक्षा वेला में सबेरा जान उस आश्रम में प्रवेश किया तथा वहाँ होने वाली चर्चा के सम्बन्ध में पूछा। पोट्ठपाद ने उनका आदर सत्कार करते हुए उन सामान्य कथाओं की चर्चा न की वरन् अभिसंज्ञानिरोध के प्रश्न को उपस्थित किया। उन्होंने बुद्ध के सामने प्रश्न के रूप में इस बात को रखा कि अभिसंज्ञानिरोध कैसे संभव है ?

अभिसंज्ञा शब्द का अर्थ चेतना या चित्त होता है। यह अभिसंज्ञा पोट्ठपाद द्वारा एक सामान्य अर्थ में ली गयी है। पोट्ठपाद का अभिप्राय इतना ही मात्र है कि अभिसंज्ञा का निरोध या उत्पत्ति कैसी होती है? बुद्ध ने अभिसंज्ञा शब्द को एक अधिक परिष्कृत अर्थ में लिया। किस प्रकार अभिसंज्ञा का उत्तरोत्तर विकास होते हुए स्थूल संज्ञा का निरोध तथा सूक्ष्म-संज्ञा की उत्पत्ति होती है। इस प्रकार संज्ञा में गुणात्मक परिवर्त्तन के सहित जो उत्पत्ति तथा निरोध होता है वही बुद्ध का अभिप्राय था। इस प्रसंग में देखा जाता है कि बुद्ध ने अभिसंज्ञा के निरोध के सम्बन्ध में अपना मत सर्वप्रथम उपस्थित न करते हुये पोट्ठपाद तथा अन्य आचार्यों के मत को जानना चाहा। इस पर पोट्ठपाद ने अभिसंज्ञानिरोध विषयक जो विभिन्न आचार्यों के मत हैं उनको उपस्थित किया।

अभिसंज्ञानिरोध विषयक जो पहली मान्यता थी उसके अनुसार कहा जाता था कि बिना हेतु बिना प्रत्यय की ही पुरुष की संज्ञा उत्पन्न होती है उस समय पुरुष संज्ञावान या चेतन होता है। जिस समय वह निरूद्ध होती है उस समय पुरुष अचेतन हो जाता है। इस प्रकार हेतु प्रत्यय के बिना ही चेतना की उत्पत्ति तथा निरोध कुछ आचार्यों द्वारा दर्शाया जाता है।

दूसरे विचारक ऐसा मानते हैं कि संज्ञा ही पुरुग की आत्मा है। वह पुरुष के साथ संलग्न होती है तथा उससे पृथक होती है। जिस समय वह पुरुष के साथ संलग्न होती है उस समय पुरुष संज्ञावान होता है। जिस समय वह पुरुष से असंलग्न रहती है उस समय पुरुष असंज्ञी हो जाता है। इस प्रकार संज्ञा के संलग्न या पृथक होने से मनुष्य में चेतना की उत्पत्ति तथा निरोध होता है।

तीसरे प्रकार के विचारक इस प्रश्न पर एक अन्य दृष्टि से प्रकाश डालते हैं। वे संज्ञा की उत्पत्ति एवं निरोध में कुछ ऋद्धिमान श्रमण ब्राह्मणों का प्रभाव कारण के रूप में मानते हैं। उनकी मान्यता है कि कुछ श्रमण-ब्राह्मण बहुत ऋद्धि सम्पन्न होते हैं। वे पुरूष की संज्ञा को उसमें संलग्न भी कराते हैं एवं उससे पृथक् भी कराते हैं। जिस समय वे संज्ञा को किसी पुरूष के साथ संलग्न कराते हैं, उस समय पुरूष संज्ञावान हो जाता है। पुनः जिस क्षण वे संज्ञा को उस पुरुष से पृथक् कर लेते हैं उस समय वह संज्ञा विरहित हो जाता हैं। इम प्रकार ऐसे ऋद्धिमान पुरूषों के योग से वे संज्ञा का निरोध बतलाते हैं।

इस सम्बन्ध में अभिसंज्ञानिरोध विषयक एक अन्य मान्यता भी है। कुछ विचारकों की ऐसी धारणा है कि कुछ देवता ऋद्धि सम्पन्न हैं। वे ऋद्धिविषयक शक्तियों से युक्त हैं। वे अपने शक्तियों द्वारा मनुष्य में संज्ञा का योग एवं वियोग कराने में समर्थ है। जिस समव वे पुरुग में संज्ञा का योग कराते हैं उस समय पुरूष संज्ञी होती है। जिस समय वे पुरुष से संज्ञा का वियोग कराते हैं उस समय पुरुष संज्ञा रहित हो उठता है। इस प्रकार वे ऋद्धिविषयक ऐश्वर्य से युक्त देवताओं के द्वारा अभिसंज्ञा की उत्पत्ति एवं विरोध की चर्चा करते हैं।

पोट्ठपाद के द्वारा उक्त विषय पर विचार सरणि में विद्यमान जो चार मान्यतायें उपस्थित की गयी हैं उनसे प्रगट होता है कि अभिसंज्ञा एक इस प्रकार की सामान्य चेतना है जिसके द्वारा मनुष्य सचेतन या अचेतन होता है।

अभिसंज्ञानिरोध पर बुद्ध के विचार

भगवान बुद्ध ने पोट्ठपाद द्वारा अन्य विचारकों के मतों को सुनने के उपरान्त यह बतलाया कि संज्ञा की उत्पत्ति और निरोध का प्रश्न है उसमें न तो अहेतु अपच्चय से सम्बन्ध है न देवता ऋद्धिमान पुरुष आदि सम्बन्ध है। शिक्षा के द्वारा ही एक संज्ञा उत्पन्न होती है एक संज्ञा निरूद्ध होती है। इसका अर्थ है कि मनुष्य में ज्यों-ज्यों शिक्षा होती है क्रमशः उसकी संज्ञा सूक्ष्म होती जाती है। ऐसा होने से स्थूल संज्ञा का निरोध तथा सूक्ष्म संज्ञा का उदय होता है। इस तथ्य को दर्शाने के लिए बुद्ध ने संज्ञानिरोध के क्रमिक विकास की अवस्थाओं पर प्रकाश डाला।

उन्होंने दर्शाया कि इस लोक में तथागस उत्पन्न होते हैं। वे त्रिविध कल्याण प्रद धर्म का उपदेश देते हैं। उनके उपदेश को सुनकर कोई श्रद्धालु गृहस्थ उनमें श्रद्धा लाभ करता है। वह उनके उपदेशों से अपने अज्ञान की यवनिका को धीरे-धीरे हटाता है। इससे उसमें क्रमशः सद्‌गुणों का विकास होता है। उसके कायिक और वाचसिक दुराचार समाप्त हो जाते हैं। वह शील सम्पन्न हो उठता है। शीलवान होने के कारण जो कोई भी कायिक एवं वाचसिक कर्म होते हैं वे कुशल होते हैं। इस प्रकार उस शील सम्पन्न भिक्षु की जो पूर्व की स्थूल संज्ञा रहती है वह निरूद्ध हो जाती है तथा सूक्ष्म संज्ञा का उदय होता है।

पुनः वह भिक्षु चित्त परिशुद्धि के लिए अग्रसर होता है। चित्त परिशुद्धि समाधि के द्वारा सम्भव है इसलिए वह समाधि भावना प्रारम्भ करता है। इस दिशा में वह देखता है कि पाँच नीवरण उसके मन को चंचल बनाये रखते है। वे हैं—कामच्छन्द, व्यापाद, थीनमिद्ध, उद्धच्च-कुकुच्च तथा विचिकइच्छा। जबतक ये पाँच नीवरण कार्यरत रहते हैं तबतक चित्त की एकाग्रता सम्भव नहीं है। इसलिए वह इन पाँच नीवरणों के उपशमन के लिए यत्नवान होता है। अनवरत अभ्यास के फलस्वरूप इन नीवरणों का उपशम हो जाता है। जब इनका उपशम होता है तब पाँच ध्यानांगों का उदय होता है। वे हैं—वितक्क, विचार, पीति, सुख तथा एकग्गता। इन ध्यानाँगो के उदय होने से उसका चित्त एकाग्र हो उठता है। वह क्रमशः प्रथम ध्यान, द्वितीय ध्यान, तृतीय ध्यान तथा चतुर्थ ध्यान को प्राप्त करता है। यहां पहुँच कर उसका चित्त परम परिशुद्ध, क्लेशरहित, शांत, प्रणीत, मृदूभूत, कर्मनीय एवं स्थित हो जाता है। यहाँ दर्शनीय है कि शील के क्षण में जो संज्ञा थी वह समाधि के क्षण की तुलना में स्थूल थी। इसलिए जब वह शील के अभ्यास के अनन्तर समाधि का अभ्यास करता है तो प्रथम प्रकार की स्थूल संज्ञा का निरोध हो जाता है एवं क्रमशः सूक्ष्म संज्ञा का उदय होता। ध्यान के क्रम में जो चार अवस्थाओं का कथन है वे भी क्रमशः विकसित अवस्थाऐं हैं। इसलिए प्रथम ध्यान के क्षण में जो संज्ञा है वह प्रथम ध्यान के क्षण की जो संज्ञा है वह द्वितीय ध्यान के क्षण की संज्ञा की तुलना में स्थूल है। उसी प्रकार द्वितीय ध्यान के क्षण की संज्ञा, तृतीय ध्यान के क्षण की संज्ञा द्वितीय ध्यान क्षण की संज्ञा, तृतीय ध्यान क्षण की संज्ञा की तुलना में स्थूल हैं। पुनः तृतीय ध्यान क्षण की संज्ञा, चतुर्थ ध्यान के क्षण की संज्ञा की तुलना में स्थूल है। अब यहाँ दर्शनीय है कि वह भिक्षु ज्यों-ज्यों ध्यान की विकसित अवस्थाओं को प्राप्त करता है त्यों-त्यों उसकी स्थूल संज्ञा निरुद्ध होती जाती है तथा सूक्ष्म संज्ञा का उदय होता हैं। ये जो ऊपरी-ऊपरी ध्यान की अवस्थाऐं हैं उनकी प्राप्ति अनवरत अभ्यास अर्थात् शिक्षा द्वारा सम्भव है। इसलिए देखा जा सकता है कि इस क्रम में स्थूल संज्ञा का निरोध एवं सूक्ष्म संज्ञा का उदय होता है।

भगवान बुद्ध ने इस प्रसंग को बढ़ाते हुए अरूप ध्यान की चर्चा की है। वह भिक्षु उपेक्षा तथा एकाग्रता नामक दो ध्यानांगो के साथ अपने ध्यानाभ्यास को बढ़ाते हुए चार अरूप ध्यान को प्राप्त करता है। वे हैं—आकासाञ्चायतन, विञ्ञाणाञ्ञ-चायतन, आकिञ्चायतन, नेवसञ्ञानासञ्ञायतन। ये क्रमशः प्रथम अरूप ध्यान द्वितीय अरूप ध्यान, तृतीय अरूप ध्यान तथा चतुर्थ अरूप ध्यान के अधिवचन हैं। ध्यान की दिशा में उस भिक्षु की ये क्रमिक विकास के द्योतक हैं। ज्यों-ज्यों ऊपर के ध्यानों की प्राप्ति होती जाती है त्यों-त्यों उसकी स्थूल संज्ञा निरूद्ध होती जाती है एवं सूक्ष्म संज्ञा की उत्पत्ति होती है। किसी प्रकार अनुपूर्व रूप से अभिसंज्ञा निरोध को समझना चाहिए।

अव्याकत प्रश्न

पिटक ग्रन्थों के अवलोकन से प्रकट होता है कि बुद्ध का समय भारत में आध्यात्मिक जागरण का समय था। विभिन्न विचारक जब कभी भी एक स्थान में मिलते थे तो कुछ ऐसे ही प्रश्नों पर विचार किया करते थे। उनके सामने कुछ ऐसे प्रश्न थे जो उस युग के व्यापक प्रश्न समझे जाते थे। वैसे ही प्रश्नों में अव्याकत प्रश्न भी थे।

अव्याकत प्रश्न का अर्थ है वैसा प्रश्न जिसका सम्यक् रूप से व्याकरण न किया जाय, अर्थात् जिनका सम्यक् रूप से उत्तर नहीं दिया जा सके। ऐसे प्रश्न बौद्धेतर विचारकों के थे। जब कभी वे बुद्ध के समागम में आते थे तो इन प्रश्नों को किया करते थे। बुद्ध इन प्रश्नों को सुनकर चुप रह जाया करते थे। इनका कुछ भी सीधा उत्तर नहीं देते थे।

अब प्रश्न यह है कि बुद्ध इन प्रश्नों का उत्तर क्यों नहीं देते थे। इस सम्बन्ध में दो ही विकल्प सम्भव हो सकते हैं, या तो बुद्ध को इनके उत्तर ज्ञात नहीं थे अथवा बुद्ध ने इनका उत्तर देना सार्थक नहीं समझा। यहाँ प्रथम विकल्प निरर्थक मालूम होता है क्योंकि समस्त अज्ञानावरण का भेदन कर बुद्ध ने बुद्धत्व की प्राप्ति की थी। उनके लिए अज्ञेय कुछ नहीं था। वे सर्वज्ञ थे। इसीलिए सर्वज्ञ के सम्बन्ध में ऐसा कहना कि वे उसका उत्तर नहीं जानते थे उचित नहीं, फलतः द्वितीय विकल्प ही यहाँ सार्थक प्रतीत होता कि बुद्ध ने इन प्रश्नों का उत्तर देना अर्थ युक्त नहीं समझा। पोट्ठपाद सुत्त से भी यह स्पष्ट होता है कि ये प्रश्न न अर्थ युक्त है, न धर्मयुक्त है, न आदिब्रह्म-चरियक है, न निर्वेद वैराग्य निरोध उपशम अभिज्ञा सम्बोधि या निर्वाण की प्राप्ति में ही सहायक है। इसलिए बुद्ध के सम्मुख जब ये प्रश्न आये तब उन्होंने इनको अव्याकत प्रश्न बताया।

ये प्रश्न क्या है ? ये प्रश्न निम्नलिखित दस हैं :—(१) लोक शाश्वत है (२) लोक अशाश्वत है (३) लोक अन्तवान है (४) लोक अनन्त है (५) जो जीव है वही शरीर है (६) जीव अन्य है शरीर अन्य ह (७) तथागत मरने के बाद उत्पन्न होते हैं (८) तथागत मरने के बाद उत्पन्न नहीं होते हैं (९) तथागत मरने के बाद उत्पन्न होते भी हैं न भी होते हैं (१०) तथागत मरने के बाद न उत्पन्न होते हैं न उत्पन्न नहीं होते हैं।

इन्हीं प्रश्नों को भगवान् बुद्ध ने अव्याकत बतलाया है तथा इसका कारण देते हुए इन्हें न अर्थ युक्त न धर्मयुक्त न निर्वेद में सहायक न निर्वाण में सहायक आदि कहा है।

अब प्रश्न है कि ये कैसे अर्थयुक्त नहीं है। इसके उत्तरस्वरूप एक-एक प्रश्न पर विचार किया जा सकता है। यथा—प्रथम प्रश्न है कि क्या लोक शाश्वत है। लोक शब्द यहाँ मनुष्य के लिए प्रयुक्त है "लुभुञ्जनपञ्जुञ्जनट्ठेन लोको" अर्थात् पुनः पुनः

उत्पन्न होने तथा विनष्ट होने के अर्थ में मनुष्य मात्र को ही लोक कहा जाता है। आत्मा एक नित्य सद्वस्तु का नाम है। वह अजर अमर एवं अविपरिणामी है। उसका न आदि है न अन्त है वह ध्रूव कूटस्थ तथा शाश्वत है। इस आत्मा के कारण ही मनुष्य की गति या स्थिति है। भगवान् बुद्ध का कहना है कि आत्मवादियों के आत्मा विषयक इस प्रश्न को स्वीकार करने से ब्रह्मचर्यवास नहीं सम्भव है। ब्रह्मचर्यवास करते हुए मनुष्य शील का पालन करता है समाधि की भावना करता है तथा प्रज्ञा का साक्षात्कार करता है। इस प्रकार क्रमशः वह अपने में आध्यामिक विकास लाता है। उसकी साधना एक पृथक जन से प्रारम्भ होती है। क्रमशः उसके चित्तमल विनष्ट होते जाते हैं। एवम् अन्त में उसकी परिणति आर्य पुरुष के रूप में होती है। वह समस्त क्लेशों से मुक्त हो निर्वाण को प्राप्त करता है ऐसे पुरुष को ही अर्हत् कहते हैं। यहाँ दर्शनीय है कि बुद्ध मार्ग पर प्रतिपल पुरुष पृथक् जन से अर्हत् बन जाता है यह तभी सम्भव है जब वह पुरुष परिणामी है उसमें क्लेशों के परित्याग तथा गुणों के समावेश की सम्भावना है। ऐसा होने से ही पृथक् जन से अर्हत् होना चरितार्थ समझा जा सकता है पर यदि इस मनुष्य को शाश्वत, नित्य तथा अविपरिणामी मान लिया जाय तो वह सर्वदा एक ही रूप में रह सकता है। परिणाम के अभाव में यदि वह बन्धन में है तो सर्वदा बन्धन में ही रहेगा तथा यदि वह मुक्त है तो सर्वदा मुक्त रहेगा। इसलिए मनुष्य को नित्य और शाश्वत मानने से बन्धन से मोक्ष की सम्भावना नहीं हो सकती है। सभी विचारक अपने अनुयायियों को दुःख की अवस्था से सुख की ओर ले जाने की बात करते हैं पर जब उस मनुष्य को नित्य और अविपरिणामी माना जाय तो उसके पक्ष में दुःख से सुख की ओर जाने का प्रश्न नहीं हो सकता है। इन्हीं बातों को लक्ष्य करके बुद्ध ने इस प्रश्न का कुछ भी उत्तर नहीं दिया।

यह मान्यता कि लोक शाश्वत है, व्यवहार की दृष्टि से भी बाधित हो जाती है। लोक अर्थात् मनुष्य को शाश्वत् आर्थात नित्य मानने से व्यवहार भी नहीं चल सकता है। हम देखते हैं कि एक समय कोई शिशु है पुनः बालक है पुनः किशोर है पुनः युवक है वयस्क है, और अन्त में वृद्ध होकर लोक लीला समाप्त करता है। ये समस्त अवस्थाएं मनुष्य के परिवर्त्तन होने की सूचना देती हैं। यदि उसको नित्य माना जाय तो उसमें किसी प्रकार का परिवर्त्तन नहीं हो सकता है।

इस धारणा को स्वीकार करने से लोक व्यवहार एक अन्य दृष्टि से भी बाधित हो जाता है। मनुष्य को शाश्वत मानने से उसके अङ्ग प्रत्यङ्ग सबको नित्य तथा अविपरिणामी मानना होगा। मनुष्य का गमनागमन, शयन, निसीदन हस्तपादादि संचालन कुछ भी संभव नहीं हो सकता है। इसलिए बुद्ध ने इस प्रश्न को निरर्थक जान इसका कुछ भी उत्तर नहीं दिया।

दूसरा प्रश्न है कि क्या लोक अशाश्वत है? इस धारणा का आधार यह है कि मनुष्य उच्छिन्न धर्मी है। मरणोपरान्त उसका उच्छेद हो जाता है। उसका पुनः जन्म

नहीं होता है। बुद्ध का कहना है कि इस धारणा को स्वीकार करने से भी ब्रह्मचर्य वास सम्भव नहीं है। मनुष्य की संशुद्धि की प्रक्रिया अनेक जन्मों के सतत् प्रयत्न के फलस्वरूप है। जातकों से प्रकट है कि बुद्ध ने पाँच सौ पचपन प्रकार की योनियों में उत्पन्न होते हुए दश पारमिताओं का पूरण किया तथा उनके माध्यम से अपने में सद्‌गुणों तथा उत्तम विचारों का अभिबर्द्धन किया। एक जन्म में किये गये शुभ एवं अशुभ कर्मों के फलों का अगले जन्म में संसरण होता रहा। धार्मिक कृत्य इस मूल निष्ठा से किये जाते हैं कि उनके फलस्वरूप लोक तथा परलोक दोनों में सुधार हो सकता है। एक-एक जन्म के शुभ कर्मों के संस्कार अगले अगले जन्मों में एकत्र होते जाते हैं और उनकी पृष्ठभूमि में ही मनुष्य की एक महामानव या लोकोत्तर पुरुष के रूप में परिणित होती है। एक साधारण मनुष्य इसी कर्म फल की परम्परा का अनुशरण करता हुआ पृथक्‌जन से बोधिसत्व तथा बोधिसत्व से बुद्ध बन जाता है।

यदि मनुष्य को अशाश्वत मान लिया जाय तो यह भी मानना होगा कि मरणोपरान्त उसका पूर्णतः उच्छेद हो जाता है तथा उसके उच्छेद होने के साथ ही साथ उसके समस्त शुभ कर्मों संस्कार के रूप में संगृहीत फलों का भी उच्छेद हो जाता है। ऐसा होने से जन्म जन्मान्तरों में किये गये या इस जन्म में किये गये सभी कुशल कर्म निरर्थक सिद्ध हो जायेंगे। इस दृष्टि से इस धारणा को बुद्ध ने निर्थक बतलाया कि लोक अशाश्वत है। इसको स्वीकार करने से भी ब्रह्मचर्यवास संभव नहीं हैं। लोक अशाश्वत है इस धारणा को स्वीकार करने से समाज में नैतिक व्यवस्था नहीं चल सकती है। यह अनुभव की बात है कि कुशल कर्मो की अपेक्षा अकुशल कर्मो का सम्पादन सरल है। कठिन परिश्रम से जीविकोपार्जन की अपेक्षा अदिन्नादान द्वारा जीविकोपार्जन सरल है। जब अदिन्नादान तथा अदिन्नादानावेरमणि दोनों कर्म के फलों का मरणोपरान्त उच्छेद इष्ट है तब अदिन्नादान में रत रहना ही सामान्यजनों के लिए सुगम प्रतीत होगा। फलस्वरूप अधिक लोगों की अभिरति सुगमतया साध्य अकुशल कर्मो में ही होगी। इससे समाज में नैतिक जीवन विश्रृंखल हो उठेगा। कहीं भी साधु जीवन का नाम भी नहीं रह सकेगा। इस दृष्टि से बुद्ध ने इस प्रश्न को निरर्थक बतलाया।

तीसरा प्रश्न है क्या लोक अन्तवान है ? अन्तवान का अर्थ उच्छेद आपन्न होता है। इसमें इस तथ्य की स्वीकृति है कि मरणोपरान्त सत्व का उच्छेद हो जाता है। यह प्रश्न संख्या दो का ही दूसरा रूप है इसलिए इसकी मान्यता को स्वीकार करने से वे समस्त दोष उत्पन्न होगें जो प्रश्न संख्या दो के अन्तर्गत दर्शाये जा चुके हैं।

चतुर्थ प्रश्न है क्या लोक अनन्तवान है ? इसका अर्थ है कि लोक का अन्त नहीं होता है। अर्थात् लोक शाश्वत है। यह प्रथम प्रश्न का ही एक दूसरा रूप है इसलिए प्रथम प्रश्न की स्वीकृति में जिन दोषों का कथन किया गया है वे समस्त दोष इस प्रश्न को भी स्वीकार करने में उत्पन्न हो सकते हैं।

पञ्चम प्रश्न है कि जो जीव है वही शरीर है? इसकी स्वीकृति से नित्य आत्मा की भांति शरीर को भी नित्य स्वीकार करने की धारणा है। यहाँ भी मनुष्य को शाश्वत् दर्शाने का यत्न है। आत्मा की भाँति शरीर को नित्य मानने से व्यवहार तथा परमार्थ दोनों में बाधा उपस्थित हो सकती है। व्यवहार में देखा जाता है कि जन्म ले लेकर मरण तक शरीर में परिवर्त्तन होते रहते हैं। शिशु, बालक, किशोर वयस्क आदि की अवस्थायें इसी प्रकार के परिवर्त्तन की सूचना देती है। इस प्रकार यदि शरीर को नित्य मान लिया जाय तो ऐसे कोई भी परिवर्त्तन इसमें वांछनीय नहीं कहे जा सकते हैं। यदि वह शिशु रूप में है तो सर्वदा शिशु रूप में ही रहेगा तथा यदि वह अन्य किसी रूप में है तो उसी रूप में रहेगा। यह व्यवहार से बाधित है इसलिए शरीर को नित्य मानना निरर्थक है। इतना ही नहीं मनुष्य अपने जीवन में प्रतिक्षण शरीर से शुभ तथा अशुभ कर्म करता है। उसकी सारी क्रियाएँ गति तथा परिवर्त्तन का द्योतन करती हैं। इसलिए इसे नित्य मानने से इन क्रियाओं का होना असम्भव हो जायगा। यह प्रश्न भी पर्यायभेद से प्रश्न संख्या एक का ही दूसरा रूप है।

षष्ठ प्रश्न है क्या जीव और शरीर भिन्न है? जीव अर्थात् आत्मा को नित्य, शाश्वत् स्वीकार किया गया है। उससे भिन्न जो धारणा है वह उच्छेद मूलक है। इस प्रश्न के अन्त: में इस धारणा को अव्यक्त रूप से रखकर प्रश्न किया गया है कि क्या यह लोक उच्छिन्न होने वाला है? इसकी स्वीकृति से वे समस्त दोष उपस्थित हो सकते हैं जो प्रश्न संख्या दो में दर्शाये जा चुके हैं। इसलिए इस प्रश्न को उपस्थित होने पर भगवान बुद्ध ने मौन धारण कर लिया और इसे अव्याकृत बतलाया। अव्याकृत कहने में उनकी ओर से पूर्व में दर्शायी गई निरर्थकता ही कारण है।

सप्तम प्रश्न है कि क्या तथागत मरणोपरान्त उत्पन्न होते हैं? भगवान् बुद्ध ने इस प्रश्न को भी अव्याकृता बतलाया है। इसको अव्याकृता कहने में कारण भी हैं, तथागत ऐसे पुरुष का अधिवचन है जो निर्माण को प्राप्त कर चुका है। अथवा यों कहा जाय कि जिसने इससे भी आगे सम्यक् सम्बोधि की प्राप्ति की है। निर्वाण एक ऐसा पद है जिसके अधिगम से आवागमन का चक्र सर्वदा के लिए समाप्त हो जाता है। यह अच्युत पद है। इसकी उपलब्धि के बाद पुन: च्युति की सम्भावना नहीं है। यदि ऐसा स्वीकार किया जाय कि तथागत मरणोपरान्त उत्पन्न होते हैं तो इससे इस बात को भी स्वीकार करना होगा कि निर्वाण अच्युत पद नहीं है। यस्मात् वह सम्यक् प्रतिपन्न आर्य श्रावकों द्वारा अनुभूत है एवं उसका अच्युतभाव सिद्ध है इसलिये तथागत को मरने के बाद भव परम्परा में पुन: आने की बात निरर्थक है।

साथ ही इसमें एक अन्य बात भी है। तथागत का जो परिनिर्वाण है वह केवल मृत्यु नहीं है वरन् जीवन मरण परम्परा का सर्वदा के लिए भग्न हो जाना है। एक निर्वाण प्राप्त पुरुष की क्या दशा होती है इसे शब्दों से अभिव्यक्त नहीं

किया जा सकता हैं। कारण यह है कि अभिव्यक्ति के साधन शब्द या इसी प्रकार के अन्य उपकरण ससीम है। परिनिर्वाण की दशा असीम है। इसलिए ससीम साधनों द्वारा असीम का कथन करना कठिन हैं। इस तथ्य को दर्शाते हुए ही कहा गया है कि

एवं मुनि नाम काया विमुत्तो।

अत्थं पलेति न उपेति सङ्खं ।।

अथवा "निब्बन्ति धीरा यथायं पदीपो।"

अभिव्यक्ति के साधन की असमर्थता एवं ससीमता के कारण ही उसके द्वारा निर्वाण का कथन इष्ट नहीं है इसलिए निर्वाण को अनिर्वचनीय कहा गया है। इस परिप्रेक्ष्य में उक्त प्रश्न को अव्याकृत कहना उचित प्रतीत होता है।

अष्टम प्रश्न है क्या तथागत मरणोपरान्त उत्पन्न नहीं होते हैं? इस प्रश्न को उपस्थित करते हुए प्रश्नकर्ता का जो उद्देश्य है वह यह है कि तथागत का मरणोपरान्त उच्छेद हो जाता है। इसका स्वीकारात्मक उत्तर देने से इसकी स्वीकृति हो जाती है कि मरणोपरान्त तथागत उच्छेद को प्राप्त करते हैं। भगवान बुद्ध के समस्त उपदेश शश्वतोच्छेद वर्जित है। शाश्वत् एवं उच्छेदमूलक धारणाओं को स्वीकार करने से क्या दोष उत्पन्न हो सकते हैं इसकी चर्चा पूर्व में की जा चुकी है। यह प्रश्न उच्छेदवाद पर स्थित होने के कारण ही बुद्ध के द्वारा अव्याकृत बतलाया गया।

नवम प्रश्न है क्या तथागत मरणोपरान्त होते भी है न होते हैं? यह प्रश्न भी शाश्वत् एवं उच्छेद वाद परिनिष्ठ है इसलिए यह अव्याकृत है।

दशम प्रश्न है कि क्या तथागत मरणोपरान्त न होते हैं न न होते हैं। इसके अन्तर में भी शाश्वतोच्छेद की भावना निहित है।

बुद्ध युग में बौद्धेतर विचारकों के सम्मुख ये दश प्रश्न व्यापक रूप में देखे जाते हैं। इनका विश्लेषण करने से प्रकट होता है कि ये किसी न किसी रूप से या तो शाश्वत-वाद पर आधारित है या उच्छेदवाद पर। यस्मात् ये दोनो विचारधाराएं दो अन्त हैं एवम् ब्रह्मचर्यवास में सहायक नहीं हैं इसलिए तदमूलक जो प्रश्न बुद्ध के समय जब कभी भी उपस्थित किये गये तो उन्होंने उन्हें अव्याकत बतलाया।

इस आशय की उनकी वाणी स्पष्ट है कि न हेतं पोट्ठपादं, अत्थ संहितं न धम्मसंहितं न आदिब्रह्मचरियकं न निब्बिदाय न विरागाय न निरोधाय न उपसमाय न अभिञ्ञाय न सम्बोधाय न निब्बनाय सब्बत्तति, तस्मा तं मया अव्याकतं ति।

जब बुद्ध की दृष्टि में ये प्रश्न अव्याकृत थे तो उन्होंने व्याकृत किसको बतलाया? इसके उत्तर में कहा जा सकता है कि बुद्ध एक ठोस तथा व्यवहार कुशल चिन्तक थे। उन्होने अपने शिष्यों को कल्पना जाल में नहीं लगाया, वरन् जीवन की जागृत समस्याओं को सबके सम्मुख रखते हुए उनका समाधान उपस्थित करने का यत्न किया। इसलिए उन्होंने जिसे व्याकृत बतलाया वे हैं चार आर्यसत्य। इस विषय में उनकी वाणी अत्यन्त स्पष्ट है :—"इदं दुक्खं ति मया ब्याकतं, अयं दुक्ख समुदयो

ति मया व्याकतं अयं दुक्खनिरोधो ति मया व्याकतं, अयं दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा ति मया व्याकतं। इस प्रसंग को आलोकित करते हुए परवर्ती आचार्यों द्वारा बुद्ध को एक चिकित्सक कहा गया है। जिस प्रकार एक चिकित्सक किसी रुग्ण पुरुष के उपस्थित होने पर उसके रोग को जानता है, रोग की उत्पत्ति के कारणों को जानता है। उनके निरोध को जानता है तथा उनके निरोध के मार्ग को भी जानता है। एवं ऐसा जानते हुए रोग से मुक्ति के उपाय का कथन करता है। उसी प्रकार बुद्ध ने भी समस्त प्राणियों में व्याप्त दुःख रूपी रोग के निवारणार्थ चार आर्य सत्यों का कथन किया। उन्होंने स्पष्ट रूप से दर्शाया कि इस मार्ग का अनुसरण पूर्वक ही भवरोग से मुक्ति मिल सकती है। इसलिए उन्होंने चार आर्य सत्यों को सर्वधिक कल्याणप्रद मानते हुए उन्हें व्याकृत प्रश्न कहा। मूल ग्रन्थ से प्रकट है कि :—एतं हि अत्थ संहितं, एतं धम्म संहितं एतं आदिब्रह्मचरियकं एतं निब्बिदाय विरागाय निरोधाय उपसमाय अभिञ्ञाय सम्बोधाय निब्बानायसंवत्तति, तस्मा एतं मया व्याकतं ति।

आत्मा विषयक प्रश्न

शाश्वतवादी विचारधारा के अन्तर्गत आत्मा विषयक प्रश्न बुद्ध युग में एक व्यापक प्रश्न था। इस परम्परा के अनुसार आत्मा की धारणा एक नित्य सद्वस्तु के रूप में देखी जाती है जो अजन्मा शाश्वत् नित्य तथा अविपरिणामी कहा जाता हैं। इस आत्मा के कारण ही शरीर में गति तथा स्थिति की बात मानी जाती है। पोट्ठपाद सुत्त से प्रकट है कि उस समय के विचारक आत्म की स्थिति मनुष्य के व्यक्तित्व में स्वीकार करते हैं तथा उन्हें विभिन्न रूपों में मानते हैं। पोट्ठपादसुत्त में आत्मा विषयक तीन धारणाएँ उपलब्ध होती हैं। प्रथम धारणा के अनुसार आत्मा को चार महाभूतों से निर्मित तथा कवलीङ्कार आहारभक्षी कहा जाता है। दूसरी धारणा यह प्रतिपादित करती है कि आत्मा मनोमय है जो सभी अङ्ग और इन्द्रियों से युक्त है। तीसरी धारणा में आत्मा को अरूपी तथा संज्ञामय कहा गया है।

आत्मा विषयक इन तीनों धारणाओं को सुनते हुए भगवान बुद्ध ने स्पष्ट कहा कि आत्मा को उक्त किसी रूप में मानने पर भी अभिसंज्ञा निरोध से कुछ भी सामञ्जस्य नहीं है। ज्यों ही आत्मा को नित्य रूप में स्वीकार किया जाता है त्यों ही उसमें परिणाम की संभावना समाप्त हो जाती है। इसलिए संज्ञा पुरुष की आत्मा नहीं हो सकती है संखा परिणामी है। एक-एक क्षण में रूपादि आलम्बनों को लेकर एक संज्ञा उत्पन्न होती है। जिस समय एक संज्ञा उत्पन्न होती है दूसरी संज्ञा निरुद्ध हो जाती है। इसलिए आत्मा को पुरुष की संज्ञा मानने पर वह भी उत्पत्तिमान तथा निरोधधर्मा होगा।

मूलग्रन्थ में इस प्रश्न को भगवान् बुद्ध ने अत्यन्त संक्षेप रूप से विश्लेषित किया है। वास्तविकता यह है कि पुरुष पञ्चस्कन्ध का पुञ्जमान है। यह सभी स्कन्ध पृथक्-पृथक् या सम्मिलित रूप से उत्पत्तिमान तथा निरोधधर्मा है। इन पञ्चस्कन्धों के अतिरिक्त पुरुष के व्यक्तित्व में आत्मा नामक किसी भी नित्य सद्‌वस्तु का सर्वथा अभाव है। इसलिए बुद्ध ने सभी धर्मों को अनात्म बतलाया है।

अब यदि आत्मवादी परम्परा इन पञ्चस्कन्धों को ही आत्मा मान ले तो यह युक्त नहीं है, क्योंकि ऐसा मानने से कई प्रकार दोष उत्पन्न होंगे। यदि स्कन्ध को आत्मा माना जाय तो स्कन्ध की भाँति आत्मा भी उत्पत्तिमान् तथा विनाशसम्पन्न होगी। जो आत्मवादियों को स्वीकार नहीं है। अथवा आत्मा की भाँति पञ्च-स्कन्धों को यदि नित्य माना जाय तो यह व्यवहार से बाधित होगा। मनुष्य जीवन में होनेवाले समस्त अनुभूत परिणामों का विरोध उपस्थित होगा। यस्मात् ये अनुदिन के परिणाम अनुभूत हैं। इसलिए आत्मा की भाँति पञ्चस्कन्धों को नित्य मानना भी निरर्थक है।

इस पर यदि यह कहा जाय कि यह ठीक है कि पञ्चस्कन्ध पृथक्-पृथक् रूप में अनित्य है पर उनका जो संघात है वह नित्य है। यह कथन भी निरर्थक है क्योंकि जो पञ्चस्कन्ध हैं वही उनका संघात भी हैं पञ्चस्कन्धों से भिन्न कोई संघात नामक विषय नहीं है। यह कथन वैसा ही है जैसा किसी वृक्ष के सम्बन्ध में कोई कहे कि इस वृक्ष के मूल अनित्य हैं शाखा, पर्ण, पुष्प, तथा फल भी अनित्य हैं पर यह वृक्ष नित्य है। यह कथन भ्रामक है क्योंकि मूल, शाखा, पर्ण, पुष्प, फल आदि से व्यतिरिक्त वृक्ष नामक कोई वस्तु नहीं है।

इस प्रकार आत्मा जैसे भ्रामक वस्तु खोजने के लिए विविध प्रकार के यत्नों को भगवान् बुद्ध ने निरर्थक बतलाया। साथ ही जीवन से सीधे रूप से सम्बन्धित दु:ख के प्रश्न के समाधान को उन्होंने सार्थक बतलाया। इस प्रसंग में तीरबिद्ध पुरुष एवं उसके सम्मुख उपस्थित वैद्य की उपमा अत्यन्त युक्त प्रतीत होती है।

इस प्रसंग के निगमन स्वरूप बुद्ध ने दो उपमाएँ दी है। प्रथम उपमा जनपद कल्याणी की प्राप्ति तथा दूसरी उपमा निस्सेनी निर्माण की है। आत्मा जैसी अतथ वस्तु का मनुष्य के व्यक्तित्व में गवेषण वैसा ही है जिस प्रकार नाम, गोत्र, वर्ण, आकार, ग्राम, निगम, नगर आदि को न जानते हुए कोई पुरुष जनपद कल्याणी की प्राप्ति के लिए चिन्ता पूर्ण कार्यशील है। जिस प्रकार यह जनपद कल्याणी एक मिथ्या धारणा है उसी प्रकार आत्मा की एक मिथ्या धारणा मात्र है। साथ ही जिस प्रकार उत्तम प्रासाद की स्थिति, आकृति, वर्ण आदि को न जानते हुए उस पर आरोहणार्थ किसी पुरुष द्वारा निस्सेनी का निर्माण निरर्थक है, उसी प्रकार सभी दृष्टियों से अनुपलब्ध आत्मा नामक किसी वस्तु की प्राप्ति के लिए यत्नवान् होना निरर्थक है। अज्ञात एवं अतथ प्रासाद की भाँति आत्मा भी केवल एक मिथ्या धारणा मात्र है।

बुद्ध क्यों प्रशंसित होते थे ?

दीघ निकाय के शुभसुत्त में इस प्रश्न पर बहुत सुन्दर ढंग से प्रकाश डालने का यत्न किया गया है कि अनेक आचार्यों के मध्य बुद्ध की प्रशंसा क्यों होती थी। बुद्ध का युग आध्यात्मिक जागरण का युग था। विभिन्न सुत्तों में उपलब्ध सामग्रियों से प्रकट होता है कि अनेक विचारक अनुयायियों की एक बड़ी परिषद के साथ अपने-अपने मत के प्रचार एवं प्रसार में रत थे। पूरणकश्यप, मक्खलिगोशाल, अजितकेशकम्बली, पकुधकच्चायन, संजयवेलट्ठिपुत्त, तथा निगंठनाथपुत्त नामक छः तीर्थङ्करों के नाम सामञ्ञफलसुत्त में आये हैं। इसके अतिरिक्त ब्राह्मणों की एक सुदृढ़ परम्परा देखी जाती है, वे वृहद् शिष्य मंडली के साथ विभिन्न ग्राम निगमों में स्थायी रूप से निवास करते हुए धर्म कथा में रत दिखाई पड़ते हैं। उन ब्राह्मणों के सम्मुख कुछ मान्यताएँ थी जिन पर वे स्वयं विचार करते थे तथा उनके शिष्यानुशिष्य भी उनका अनुसरण करते थे। पोक्खरसाति, कूटदन्त, सोनदण्ड, शुभ आदि विचारकों के नाम भी यत्र-तत्र उपलब्ध होते हैं। अब प्रश्न है कि इन विभिन्न विचारकों एवं इनकी सुदृढ़ परम्परा के रहते हुए भी उस युग में बुद्ध की प्रशंसा क्यों होती थी। बुद्ध के विचार में कौन ऐसे गुण विशेष थे जिनके कारण महती प्रजा उनकी ओर आकृष्ट होती थी। ऐसा प्रतीत होता है कि यह प्रश्न उस युग में भी विवेकशील मनुष्यों के मस्तिष्क में स्फुरण उत्पन्न करता था। इसलिए शुभसुत्त में स्पष्ट निर्देश है कि तीन स्कन्धों के कारण ही भगवान् बुद्ध प्रशंसित थे[1]—तिण्णं खन्धानं सो भगवा वण्णवादी अहोसि' वे कौन तीन स्कन्ध थे ? आर्यशीलस्कन्ध, आर्यसमाधिस्कन्ध, तथा आर्यप्रज्ञास्कन्ध। यह स्पष्ट है कि अन्य विचारकों की परम्परा में भी ये स्कन्ध किसी न किसी रूप में रहे होंगे और उनसे वैभिन्न दर्शाने के लिए यहाँ आर्य विशेषण पद का प्रयोग किया गया है। इस विशेषण पद से युक्त थे तीनों स्कन्ध अपने में प्राविधिक हैं तथा विशिष्ट आध्यात्मिक उपलब्धियों के परिचायक हैं। प्रकृत प्रसंग में इनका संक्षिप्त विवरण इष्ट है।

(१) आर्यशीलस्कन्ध

बौद्ध परम्परा में शील ब्रह्मचर्य का आधार या प्रतिष्ठान समझा जाता है। शील के विना कुल पुत्रों की इस प्रतिपदा में प्रतिष्ठा नहीं हो पाती है। जिस प्रकार सभी उद्भिज तृण तरू, लता आदि पृथ्वी के आश्रय से अपनी स्थिति धारण करते हैं उसी प्रकार शील में प्रतिष्ठा प्राप्त कर ही बौद्ध साधना का प्रारम्भ होता है।

शील शब्द का व्युतिपत्तिमूलक अर्थ शिला हो सकता है। शिला आधारशिला का अधिवचन है। जिस प्रकार कोई गृह किसी आधार शिला पर प्रतिष्ठित होता है, उसी प्रकार साधना जीवन की प्रतिष्ठा शील पर ही होती है। शील का दूसरा अर्थ

---

१. तिण्णं खो, माणव खन्धानं सो भगवा वण्णवादी अहोसि—दी० नि० पृष्ठ १७०।

शीतल होता है। जिस प्रकार गंगा, यमुना, सरयुग आदि नदियाँ अपने शीतल जल से मनुष्य के आतपजनित परिलाह का शमन करती हैं, उसी प्रकार से रागाग्नि, दोषाग्नि एवं मोहाग्नि जनित परिलाह का शमन शील के द्वारा होता है। शील का तीसरा अर्थ अबाध प्रवाह है। जिस प्रकार तगर, मल्लिका आदि पुष्पों के सुगन्ध को पवन अपनी दिशा में बहुत दूर तक ले जाता है उसी प्रकार शील शीलवान् पुरुष के सत्कर्मों के यश का परिवहन करता है। अन्तर इतना ही है कि पवन पुष्प गन्ध को उसी दिशा में ले जाता है जिस दिशा की ओर उसका प्रवाह रहता है। वह प्रवाह की प्रतिकूल दिशा में सुगन्ध का परिवहन नहीं कर सकता है, पर शील में ऐसी सीमाबद्धता नहीं है। यह दिशा, विदिशा, के परिच्छेद से परे समस्त दिशाओं में शीलवान के यश को प्रवाहित करता है। शीर्ष अर्थ में भी शील का प्रयोग आया है। इसके माध्यम से यह दर्शाया गया है कि बौद्ध साधना में शील का शीर्ष स्थान है। इसका शीर्ष स्थान इस दृष्टि से भी है क्योंकि शील की परिपूर्ति के बिना समाधि तथा प्रज्ञा की भावना सम्भव नहीं है।

यह शील है क्या ? शील कुछ ऐसे संवर का नाम है जिनके परिपालन से कायिक एवं वाचसिक कुकृत्यों का निवारण हो जाता है। अथवा जिसके द्वारा कायिक एवं वाचसिक मिथ्याचारों का उपशम हो जाता है उसे शील कहते हैं। यह कुछ परिपालनीय विरतियों का नाम है।

भगवान् बुद्ध एक व्यवहार कुशल विचारक थे। इसलिए उन्होंने क्रमिक विकास की प्रक्रिया का ध्यान रखते हुए धर्मोपदेश किया है। मूलग्रन्थ से प्रकट है कि :—तथागत लोक में उत्पन्न होते हैं वे अरहत सम्यक् सम्बुद्ध विद्याचरण सम्पन्न सुगत लोकविदू तथा देव मनुष्यों के शास्ता के रूप में उत्पन्न होते हैं। इस प्रकार उत्पन्न हो वे ऐसे धर्म का प्रज्ञापन करते हैं जो आदि, मध्य एवं पर्यवसान में कल्याणप्रद हो[१]। उनके ऐसे धर्म को सुनकर कोई भी पुरुष उनमें श्रद्धा प्राप्त करता है। श्रद्धा-प्रतिलाभ से उसके मन में विवेक का स्फुरण होता है. उसे यह सुज्ञात हो जाता है कि यह गृही जीवन बाधाओं से पूर्ण रजोकीर्ण एवं रागपरिजनक है। प्रव्रजित का जीवन अभ्र आकाश की भाँति स्वच्छन्द है। तथागत द्वारा जिस एकान्तः परिशुद्ध पथ का परिज्ञापन किया गया है उसका परिपालन गृही जीवन में सम्भव नहीं है। इसलिए यह समीचीन है कि प्रव्रजित का जीवन ही अपनाया जाय। ऐसे विचार के आगमन से ही वह अल्प या महान भोगस्कन्ध, पुरजन परिजन, परिवार का परित्याग कर प्रव्रजित के जीवन में प्रविष्ट होता है। बौद्ध परम्परा के अनुसार साधु जीवन व्यतीत करने की यही पूर्व पीठिका है।

---

१. दी० नि० पृ० १७०-१७१।

प्रव्रजित होने के उपरान्त उस पुरुष की गृही संज्ञा समाप्त हो जाती है और वह भिक्षु संज्ञा से उपेत होता है। वह अब परिजन, पुरिजन के मध्य न रहकर संघ में सब्रह्मचारियों के मध्य रहता है। ऐसा रहते हुए वह एक नये प्रकार के जीवन का प्रारम्भ करता है। बुद्ध द्वारा प्रज्ञप्त प्रातिमोक्ष में कहे गये संवरो से वह अपने युक्त करता है। आचार गोचर सम्पन्न हो विहार करता है। उनके नियमों के परिपालन में लेशमात्र भी व्यतिक्रम नहीं हो इस बात पर सदा ध्यान रखता है। वह काय या वची से जिन कर्मों का सम्पादन करता है वे कुशल हेतुओं से सम्प्रयुक्त कुशल कर्म होते हैं। उसकी जीविका परिशुद्ध होती है। वह शील सम्पन्न होता है। इन्द्रियों में अपने कार्य सम्पादन क्रम में असंयम न हो इसके लिए वह जागरूक रहता है। सर्वदा स्मृतिमान् हो सन्तोषपूर्ण जीवन वह संघ में व्यतीत करता है। इस प्रकार उपर कहे हुये सद्‌गुणों से विहार करना ही शील सम्पन्न होना है। तथा वह पुरुष भी शीलवान पुरुष कहा जाता है।

यह कैसे ? प्रातिमोक्ष भिक्षु जीवन का संविधान है। "पाति रक्खति सब्बेहि अकुसल धम्मेहि" इस निर्वचन के अनुसार प्रातिमोक्ष वह है जो उसे भिक्षु जीवन व्यतीत करते हुए सभी प्रकार के अकुशल कर्मों से बचाता है। इस ग्रन्थ में भिक्षुओं के लिए २२७ नियम हैं तथा भिक्षुणियों के लिए ३११ नियमों का प्रतिपादन किया गया है। नियमों का कथन उनकी गर्हिता की दृष्टि से किया गया है। वे नियम दो प्रकार हैं। कुछ दोषों के कथन हैं जिनसे उस भिक्षु को विरत रहने की शिक्षा दी गई है। कुछ परिपालनीय नियमों का कथन है जो भिक्षु के लिए सेवितव्य बतलाये गये हैं। इन समस्त नियमों का कथन आठ शीर्षों में किया गया है जिन्हें क्रमशः पाराजिक, संघादिशेष, अनियत, निस्सग्गिय पाचित्तिय, पाचित्तिय, पटिदेसनीय, सेखिय—तथा अधिकरणसमथ है। भिक्खुणी पातिमोक्ख में अनियत धर्मों का उल्लेख नहीं है। इस प्रकार पातिमोक्ख के नियमों के अनुरूप विहार करना ही प्रातिमोक्ष संवर संवृत होना है। धार्मिक जीवन व्यतीत करता हुआ वह भिक्षु इन नियमों का पालन अपने जीवन के मूल्य पर करता है। उसे जीवन का उत्सर्ग स्वीकार है, पर नियमों में व्यतिक्रम स्वीकार नहीं होता है। नियमों का अणुमात्र व्यतिक्रम भी उसके लिए भयप्रद होता है। इस प्रकार वह प्रातिमोक्ष में कथित पदों को धारण कर विहार करता है।

कायद्वार से प्रवृत्त कर्मों को काय कर्म तथा वचीद्वार से प्रवृत्त कर्मों को वची कर्म कहा जाता है। ये दोनों प्रकार के क्रम उसके कुशल होते हैं। कायद्वार से तीन प्रकार के कुशल कर्मों की प्रवृत्ति होती है वे हैं जीवहिंसा से विरति, चौर्यकर्म से विरति, व्यभिचार से विरति। वचीद्वार से चार प्रश्न के कुशल कर्मों की प्रवृति होती है वे हैं असत्यकथन से विरति, कठोरवचन से विरति, पैशुन्य से विरति तथा निरर्थक संल्लाप से विरति। यही सात प्रकार के कुशलकर्म कायिक तथा वाचसिक कुशल कर्म कहे जाते हैं इनसे वह विरत रहता है, उसकी जीविका के साधन भी परिशुद्ध होते हैं। कुहना लपना, लाभेन लाभ निजिगिसनता आदि जीविका के अशुद्ध

तथा गर्हित साधन है, वह उनसे विरत हो परिशुद्ध विधि से जीविका का उपार्जन करते हुए विहार करता है ।

पिटक के अनेक स्थलों में शील की चर्चा आई है। दीघ निकाय के ब्रह्मजालसुत्त, सामञ्ञफलसुत्त, अम्बट्ठसुत्त, शुभसुत्त आदि सुत्तों में शील का कथन चूलशील, मध्यमशील, एवं महाशील नामक तीन शीर्षों के अन्तर्गत कहा गया है । इन तीनों शीर्षों अन्तर्गत स्थूल से सूक्ष्मतर जाते हुये कुछ ऐसे दोषों का कथन है जिससे वह भिक्षु अपने को विरत रखता है । ऐसे विरत रहने के भाव को ही शीलसम्पन्न होना कहा जाता है ।

भिक्षु जीवन में इन्द्रिय संवर महत्वपूर्ण कार्य है । इसे इन्द्रियों के प्रति गुप्त-द्वारता कहा जाता है । चक्षुरिन्द्रिय, श्रोयेन्द्रिय, घ्राणेन्द्रिय, जिह्वेन्द्रिय, कायेन्द्रिय तथा मनिन्द्रिय नामक छः इन्द्रियाँ हैं। रूपालम्बन, शब्दालम्बन, गन्धालम्बन, रसालम्बन, स्पृष्टव्यालम्बन तथा धर्मालम्बन नामक इनके क्रमशः छः विषय हैं। इन्द्रियों द्वारा इन विषयों को देखकर उनका सरस अस्वादन करना इन्द्रियों के प्रति असंयम है पर इन्द्रियों द्वारा अपने विषय का ग्रहण करते समय निमित्त तथा अनुव्यञ्जन का नहीं ग्रहण करना ही इन्द्रिय संवर है। इसका अभिप्राय है कि आलम्बन का पूर्ण विवरण के साथ रसास्वादन न करना ही इन्द्रिय संवर है। चक्षु द्वारा रूप का दर्शन होने से देखना मात्र ही समझना चाहिये 'दिट्ठं दिट्ठमत्तं भवितब्बं'—चक्खुना रूपं दिस्वा न निमित्तग्गाही होती नानु व्यञ्जनग्गाही होति। इसी प्रकार अन्य इन्द्रियों के पक्ष में भी समझना चाहिए। जिस इन्द्रिय के असंवृत्त विहार से लोभ द्वेष या अन्य अकुशल धर्मों की वृद्धि होती है उनके प्रति संवर रखना ही इन्द्रिय संवर, या इन्द्रियों के प्रति गुप्तद्वारता है ।

स्मृति सम्पन्न होने का अर्थ सतत् जागरूक रहना है। बौद्ध चिन्तन में स्मृति की उपमा द्वारपाल से दी गई है । जिस प्रकार किसी भवन के द्वार पर स्थित द्वारपाल भवन प्रवेश से अवांछनीय पुरुषों का निवारण करता है तथा वाँछनीय पुरुषों के प्रवेश का अवसर प्रदान करता है उसी प्रकार स्मृति भी चित्तद्वार पर स्थिति हो अकुशल धर्मों का निवारण तथा कुशल धर्मों के आगमन में सहायक होती है। स्मृतिसम्पन्न होना किसी एक शरणविशेष या कार्यविशेष से सम्बन्धित नहीं है वरन् इसकी उपयोगिता प्रतिक्षण तथा प्रत्येक कार्य के साथ है। वह भिक्षु चलते समय लौटते समय, आगे पीछे देखते समय, अपनी भुजाओं को पसारते या मोड़ते समय, चीवर आदि वस्त्रों को धारण करते समय जागरूक रहता है। उसकी यह जागरूकता भोजन, पान, आस्वादन मल, मूत्र विसर्जन, गमन, निसीदन, शयन, जागरण आदि सभी क्षणों में विद्यमान रहती है। वह जिस क्षण जिस कार्य का सम्पादन करता है, उस क्षण उसके प्रति जागरूक रहता है। ऐसी जागरूकता से सम्पन्न होना ही स्मृति सम्पन्न होना है।

भिक्षु जीवन में सन्तोष का महत्वपूर्ण स्थान है। तृष्णा के निवारण के लिए ही तो वह अपने इस जीवन को अपनाता है इसलिए धार्मिक जीवन व्यतीत करते हुए

अल्पेक्षता सुभरता, सन्तोष अभिरत्तता आदि गुणों का वह अपने में सम्बर्द्धन करता है। अनवरत अभ्यास से उसकी विविध वस्तुओं की स्पृहा समाप्त हो जाती है। वह केवल चीवर एवं पिण्डपात से ही सन्तुष्ट होता है। चीवर धारण करने में भी उसकी उनके प्रति आसक्ति नहीं होती है। उनकी उपयोगिका मात्र इतनी ही रहती है जिससे काय का परिहरण हो सके। यही बात भोजन के प्रति भी है। कहा गया है कि एक भिक्षु सम्यक् रूप से जानकर ही भोजन ग्रहण करता है। भोजन ग्रहण में मण्डन विभूषण, दव, मद आदि की भावना नहीं रहती है। भोजन की उपयोगिता उसके लिए इतनी ही है कि जिससे काय का परिहरण हो जाय। उसे अन्न, वस्त्र के संग्रह की आवश्यकता नहीं है। सन्तोष के ऐसे स्वरूप की उपमा एक पक्षी से दी गयी है जिस प्रकार एक पक्षी जहाँ-जहां उड़ता हुआ जाता है अपने सुगमतया परिवहनीय पंखों के साथ ही जाता है उसी प्रकार चीवर एवं पिण्डपात से सन्तुष्ट भिक्षु बहुजन हिताय बहुजन सुखाय चारिका करता है।

इस प्रकार से ऊपर में जिन गुणों का कथन किया गया उन्हें शीलस्कन्ध कहते हैं। भगवान् बुद्ध स्वयं भी इन शीलों का परिपालन करते थे तथा अपने शिष्यों को भी इनके परिपालन की शिक्षा देते थे। इसलिए जन वर्ग में सभी कोटि के मनुष्यों द्वारा बुद्ध की प्रशंसा होती थी। ये गुण विशेष अपने में परम उदात्त होने के कारण आर्य-शीलस्कन्ध कहे जाते हैं।

(२) आर्यसमाधिस्कन्ध

भगवान् बुद्ध की प्रशंसा जिन विशेष गुणों के कारण होती थी उनमें दूसरा आर्यसमाधिस्कन्ध है। वस्तुतः बौद्ध साधना का यह द्वितीय चरण है। शील परिपालन के अनन्तर इसी का स्थान आता है समाधि द्वारा चित्तमल क्षीण हो जाते है एवम् उसकी अभिव्यक्ति परम परिशुद्ध कर्मनीय एवं आनेञ्जप्राप्त रूप में होती है। स्पष्ट शब्दों में इस प्रकार कहा जा सकता है कि मानसिक दुश्चरितों का प्रहाण समाधि द्वारा होता है।

समाधि का अर्थ एकाग्रता है। सम्+आ+धा क्रम से इसकी व्युत्पत्ति होती है। चित्त चैतसिक धर्मों का एक आलम्बन पर सम्यक् आधान ही समाधि है। इस परिभाषा में अकुशल आधान का वर्जन समझना चाहिए। सरोवर तट पर स्थित बक की एकाग्रता भी मत्स्यालम्बन पर सम्यक् आधान कही जा सकती है पर वह समाधि नहीं है। इसलिए परवर्ती आचार्यों द्वारा समाधि की स्पष्ट व्याख्या करते हुए कहा गया है कि कुशल चित्त की एकाग्रता ही समाधि है—'कुसलचित्तेकग्गता समाधि'। चित्त की एकाग्रता के प्रश्न पर विचार करने के पूर्व यह ज्ञातव्य है कि चित्त चंचल

---

१. कायपारिहारिकेन चीवर कुसि परिहारिकेन पिण्डपातेन—दी० नि० पृ० १६२।

क्यों रहता है ? जब चित्त चंचल है तब ही उसे एकाग्र करने का प्रश्न उत्पन्न होता है। इसलिए उसके चंचल होने के कारणों पर विचार करना इष्ट है। पिटक ग्रन्थों के अध्ययन से प्रकट होता है कि चित्त को चंचल बनाये रखने के कारण पाँच नीवरण हैं। इन्हें कामच्छन्द, व्यापाद, थीनमिद्ध, उद्धच्चकुक्कुच्च तथा विचिकिच्छा कहा जाता है। वासनात्मक इच्छा या प्रबल इच्छा को कामच्छन्द कहा जाता है। परविनाश चिन्ता का नाम व्यापाद हैं। चित्त तथा तत्सम्प्रयुक्त चैतसिकों के साथ विद्यमान आलस्य को थीनमिद्ध कहते हैं। चित्त की भ्रान्तता तथा कृत्य एवं अकृत्य का केवल अनुसोचन उद्धच्च कुक्कुच्च है। विचिकिच्छा का अर्थ संवाय है। बुद्ध, धर्म तथा संघ के प्रति जो शंका है उसका नाम विचिकिच्छा हैं। ये पाँच नीवरण चित्त को एकाग्र होने में बाधक हैं। जबतक ये कार्यरत रहते हैं तबतक चित्त चंचल बना रहता है।

समाधि भावना के प्रसंग में नीवरणों के बाधक कार्य स्पष्टतया देखे जाते हैं। ये चित्त को इस प्रकार उद्विग्न बनाये हुए रहते हैं जिससे उसे एकाग्रता लाभ में बाधा उत्पन्न होती है। इसलिए सुत्त में पाँच नीवरणों को पांच उपमाओं से स्पष्ट किया गया है। कामच्छन्द को ऋण कहा गया है। व्यापाद का कथन रोग से किया गया है। थीन मिद्ध को बन्धनागार से समझाया गया है। उद्धच्चकुक्कुच्च की व्याख्या दासव्यता से की गई है। एवं विचिकिच्छा को कान्तारगत मार्ग कहा गया है।

एक-एक नीवरण के कार्यकलाप समाधि लाभ में घातक है। जिस प्रकार ऋण ग्रस्त पुरुष अपने को बन्धन में पाता है। उसके कारण उसके मन में सर्वदा व्यग्रता बनी रहती है उसी प्रकार कामच्छन्द के प्रभाव से चित्त का चांचल्य बना रहता है। कामच्छन्द का प्रहाण ऋण से मुक्ति जैसे सुख की उपलब्धि है। जिस प्रकार कोई पुरुष ऋण लेकर किसी काम में लगावें तथा उसका वह कार्य सफल हो जाय। जो ऋण उसने लिया था उसे वापस दे कर स्त्री, पुत्र के भरण पोषण के लिये कुछ धन उसके पास भी अवशेष रह जाय। इससे उसकी ऋण से मुक्ति भी हो जाय तथा मुक्ति के उपरान्त उसके पास यथेष्ठ धनराशि भी अवशेष रहे। अपनी इस आर्थिक दशा का चिन्तन कर वह जिस प्रकार प्रीति का अनुभवन करता है उसी प्रकार नीवरणों के प्रहीण हो जाने पर उपलब्ध दशा को प्राप्त कर भिक्षु सुख की अनुभूति करता है। इस न्याय से नीवरण को ऋण तथा नीवरण प्रहाण को ऋण से मुक्ति कहा गया है।

द्वितीय नीवरण व्यापाद की उपमा रोग से दी गई है। व्यापाद युक्त होने का अर्थ रोगग्रस्त होता है तथा व्यापाद से मुक्त होने का अर्थ रोगमुक्त होना है। रोगयुक्त पुरुष का बन्धन व्यापाद जनित बन्धन समझा जा सकता है एवं रोग से मुक्ति जनित सुख व्यापाद मुक्ति जनित सुख समझा जा ससकता है। इस तथ्य को स्पष्टतर करते हुये कहा गया हैं कि कोई पुरुष रुग्ण तथा असाध्य रोगग्रस्त हो, न तो उसके साथ भोजन का परिपाक सम्भव हो न शरीर में बल ही हो। ऐसी स्थिति के कारण वह असह्य दुःख वेदना का अनुभवन करता हो। वह पुरुष ही कालान्तर में उस रोग से

मुक्त हो जाय, भोजन भी उसे पचने लगे तथा शरीर में बल भी प्राप्त हो। इस दशा से वह अपार सुख की अनुभूति करे। ऐसे रूग्ण पुरुष की रोगयुक्त दशा व्यापाद नामक नीवरण से सम्पन्न दशा है। एवं रोग मुक्त दशा उक्त नीवरण से मुक्ति की दशा है।

थीन मिद्ध को बन्धनागार की उपमा से समझाया गया है। कोई पुरुष किसी कारणवश बन्धनागार में आबद्ध रहे, वहाँ रहते हुए सभी प्रकार से अपने को परवश पाकर असह्य दुःख की अनुभूति करे। कालान्तर में वह उस बन्धनागार से मुक्त हो निर्भय, शान्त, एवं स्वच्छन्द जीवन को प्राप्त कर अपूर्व सुख की अनुभूति करे। उसके जीवन की ये दो अवस्थाएँ क्रमशः थीन मिद्ध नीवरण से युक्त एवं उससे मुक्त दशा की द्योतक हैं।

उद्धच्च कुक्कुच्च को दास भाव कहा गया है। उनसे मुक्त होना दासता है एवं उनसे मुक्त होना दास भाव से मुक्ति है। जिस प्रकार एक दास पराधीन हो दासता का जीवन व्यतीत करता हो, वह इच्छानुकूल कोई कार्य करने में असमर्थ हो। कालान्तर में वह उस दासता से मुक्त हो अपराधीन जीवन व्यतीत करे। जहां जाना चाहे वहाँ जाय। यहाँ दर्शनीय है कि दास की पूर्व जीवन की स्थिति उद्धच्च कुक्कुच्च नीवरण से युक्त बन्धन की स्थिति है, तथा उस नीवरण से मुक्ति की स्थिति दासभाव से मुक्ति की स्थिति जैसी है।

विचिकिच्छा को कान्तार मध्य स्थित मार्ग प्रतिपन्न भाव से समझाया गया है। जिस प्रकार कोई पुरुष अपार धनराशि के सहित कान्तारगत मार्ग में प्रतिपन्न हो। वह वहाँ सभी दिशाओं में दुर्भिक्ष एवं भय का ही दर्शन करे। इस विपन्न स्थिति को प्राप्त कर मरणभय से त्रस्त वह मनुष्य अपार दुःख का अनुभव करे। कालान्तर में ऐसा समय आवे जब वह स्वस्तिपूर्वक उस दुस्तर कान्तार को पार करे एवं अपने को निर्भय स्थान में प्राप्त कर अपार सुख की अनुभूति करे। उस पथिक के जीवन के दो क्षणों की ये दो अवस्थाएँ विचिकिच्छा नीवरणयुक्त तथा विचिकिच्छा नीवरण मुक्त दशा का द्योतन करती हैं।

इस प्रकार इन उपमाओं के माध्यम से नीवरणों के दुष्परिणाम एवं उनकी विमुक्ति से एक अद्भुत सुख की अनुभूति का परिचय दिया गया है। इन पाँच नीवरणों के प्रहीण होने से चित्त में आनन्द, प्रीति, प्रश्रब्धि एवं सुख की अनुभूति होती है एवं ऐसा विमुक्त चित्त ही समाधिस्थ होता है :—"तस्स इमे पञ्च नीवरणे पहीने अत्तनि समनुपस्सतो पामोज्जं जायति, पमुदितस्स पीति जायति, पीतिमनस्स कायो पस्सम्भति, पस्सद्धकायो सुखं वेदेति, सुखिनो चित्तं समाधियति"।

नीवरणों के केवल उपसम से ही चित्त की एकाग्रता नहीं होती है वरन् उनके उपशम के साथ ही साथ एकाग्रता में साधक पाँच ध्यानाङ्गों का उदय होता है। इन ध्यानाङ्गों के उदित होने से ही चित्त एकाग्र होने लगता है।

ध्यान में सहायक अङ्गों को ध्यानाङ्ग कहते हैं। ये संख्या में पाँच हैं यथा—वितक्क, विचार, पीति सुख तथा एकाग्रता। ये पाँचों शब्द अपने में प्रविधिक हैं तथा

एक निश्चित अर्थ के द्योतक हैं। वितक्क का अर्थ चित्त का आलम्बन की ओर उन्मुख होना है। विचार का अर्थ चित्त का विषय पर स्थित होना है। इन्हें क्रमशः चित्त का विषय पर अभिनिरोपण एवं अनुमार्जन कहा जाता है। यद्यपि एकाग्रता के प्रसंग में ये दोनों ध्यानाङ्ग एक सदृश कार्य करने वाले हैं तथापि उनके कार्यकलाप में अन्तर है। इस अन्तर को दर्शाते हुए कहा गया है कि जिस प्रकार एक भ्रमर मधुर गुञ्जन करता हुआ पुष्प की ओर अभिमुख होता है एवं उसी क्रम में कुछ क्षणों के उपरान्त उस पर स्थित हो जाता है, उसी प्रकार भ्रमर के पुष्प की ओर अभिमुख होना ही वितक्क है एवं पुष्प पर स्थित होना विचार है। पुनः जिस प्रकार एक पक्षी उड़ने के पूर्व दिशा का आकलन करता है, पंखों को प्रकम्पित करता है एवं पुनः उड़ जाता है। उसी प्रकार वितर्क एवं विचार के कार्य होते हैं। पक्षी द्वारा दिशा का आकलन, पंखों का प्रकम्पन वितर्क है एवं उड़ना विचार है। जिस प्रकार किसी लौहमय घंटे पर आघात करने से वह अनुरवित होता है उसी प्रकार वितर्क और विचार भी हैं। घंटे पर आघात सदृश वितर्क एवं अनुरवन सदृश विचार को समझना चाहिए। इसलिए अट्ठसालिनीकार ने कहा है :—वितक्को ति आरम्मणे चित्तस्स अभिनिरोपणलक्खणो, विचारो ति आरम्मणमनुभज्जनलक्खणो[1]।

पीति का अर्थ प्रीति या मानसिक आह्लाद है। यह चित्त में आनन्द का प्रजनन करती है अट्ठकथा में खुद्दिका पीति, खणिका पीति, ओक्कन्तिका पीति, उठबेग्ग पीति, फरणा पीति नामक इसके पाँच भेद कहे गये हैं।

मन और शरीर दोनों में व्याप्त आनन्द को सुख कहते हैं। यह वस्तुतः सौमनस्य वेदना का ही नाम है।

पीति एवं सुख दोनों आनन्द के अधिवचन हैं, पर दोनों के स्वभाव पर सूक्ष्मतया विचार करने से पार्थक्य के कुछ विन्दु भी देखे जा सकते हैं। वास्तविकता यह है कि जहाँ पीति है वहाँ सुख अवश्य है, पर जहाँ सुख है वहाँ नियमतः पीति नहीं है। संस्कार स्कन्ध में संगृहीत प्रीति है एवं वेदना स्कन्ध में संगृहीत सुख है।

इसके पार्थक्य को एक अन्य प्रकार से भी स्पष्ट किया जा सकता है। अभीप्सित वस्तु के लाभ की आशा में उत्पन्न आनन्द को पीति कहा जा सकता है तथा अभीप्सित वस्तु के लाभ से उत्पन्न आनन्द का नाम सुख हैं। कान्तारगत मार्ग प्रतिपन्न पिपासित पुरुष द्वारा कमल नाल हस्तगत पुरुष के दर्शन की भाँति प्रीति है एवं सरोवर को प्राप्त कर जल से संतृप्त हो आनन्द का अनुभवन सुख है।

एकग्गता चित्त के एकाग्रभाव का नाम है। यह अविक्षेप लक्षण सम्पन्न कहा जाता है।

इन्हीं पाँच ध्यानाङ्गों के उदय होने से चित्त क्रमशः एकाग्र होने लगता है।

अब प्रश्न है कि किस ध्यानाङ्ग द्वारा किस नीवरण का प्रहाण होता है? इसके उत्तर स्वरूप अट्ठकथा में जो सामग्री उपलब्ध है उससे प्रकट होता है कि

---

१. अ० सा० पृ० ६४।

कामच्छन्द का प्रहाण समाधि नामक ध्यानाङ्ग से होता है। व्यापाद पीति से प्रहीण होता है। थीन मिद्ध वितक्क से प्रहीण होता है। उद्धच्च कुक्कुच्च का शमन सुख से होता है तथा विचिकिच्छा का प्रहाण विचार से इष्ट है। इस न्याय से पाँच नीवरणों का प्रहाण पाँच ध्यानाङ्गों द्वारा इष्ट कहा गया है। जब पाँचों नीवरण प्रहीण हो जाते हैं एवं पाँच ध्यानाङ्गों का उदय होता है तो चित्त क्रमशः एकाग्र होने लगता है।

समाधि दो प्रकार की होती है। रूप समाधि तथा अरूप समाधि। वर्ण सम्पन्न आलम्बन को रूप कहते हैं। ऐसे आलम्बन पर जो चित्त की एकाग्रता होती है उसे रूप समाधि कहते हैं। वर्ण आकार विरहित विषय को अरूपालम्बन कहते हैं। उस पर प्राप्त एकाग्रता का नाम अरूप समाधि है। पिटक ग्रन्थों में कहीं केवल रूप समाधि का वर्णन है तो कहीं रूप एवं अरूप समाधि दोनों का। रूप समाधि के चार भेद कहे गये हैं जो इसके क्रमिक विकास के द्योतक हैं। इन्हें चार ध्यान के नाम से व्यक्त किया गया है। यथा—प्रथम ध्यान, द्वितीय ध्यान, तृतीय ध्यान एवं चतुर्थ ध्यान। सुत्तन्त प्रक्रिया के अनुसार रूप समाधि की ये चार अवस्थाएँ हैं। अभिधर्म प्रक्रिया के अनुसार रूप समाधि की पाँच अवस्थाएँ हैं। यद्यपि चित्त की सूक्ष्मता अरूप समाधि के लाभ से अत्यधिक हो जाती है तथापि विपस्सना के अभ्यास के लिए यह आवश्यक नहीं प्रतीत होता है। रूपावचर चतुर्थ ध्यान के अनन्तर भिक्षु विपस्सना के अभ्यास में रत हो जाता है इसलिए पिटक के अनेक स्थलों में रूपावचर चतुर्थ ध्यान के कथन के अनन्तर विपस्सना भावना का उल्लेख है। यह इस तथ्य का परिदीपन करता है कि रूप समाधि के चतुर्थ ध्यान का जो स्तर है वह अरूप समाधि के सभी ध्यानों के सदृश है। सम्भवतः इसी कारणवश रूप समाधि के अनन्तर विपस्सना में प्रवेश की बात कही गई है।

यह ऊपर कहा जा चुका है कि रूप समाधि चार ध्यानों से समुपेत है। इन्हें प्रथम ध्यान, द्वितीय ध्यान, तृतीय ध्यान एवं चतुर्थ ध्यान कहा गया है प्रथम ध्यान की प्राप्ति पाँच ध्यानाङ्गों के योग से होती है। चंचल मन नीवरणों के प्रहीण होने से ध्यानाङ्गों के वशवर्ती हो विहित आलम्बन पर एकाग्र हो उठता है। एकाग्रता का यह प्रथम चरण होने के कारण इस अवस्था में पाँचों ध्यानाङ्ग कार्यरत रहते हैं। इसलिए वितर्क, विचार, प्रीति सुख तथा एकाग्रता सहित प्रथम ध्यान कहा जाता है। इस प्रथम ध्यान के लाभ से उस भिक्षु का चित्त विवेक जनित प्रीति सुख से पूर्णतः परिव्याप्त हो उठता है। उसके नाम काय में कोई भी ऐसा अंश नहीं रहता है जो इस विवेक जनित प्रीति सुख से असंतृप्त रहे। इस अवस्था को एक उपमा के द्वारा स्पष्ट किया गया है। जिस प्रकार एक दक्ष स्नापक काँसे की थाल में स्नानीय चूर्ण को विकीर्ण कर जल से सिक्त कर मिश्रित करता है। वे स्नानीय चूर्ण जल अनुगत जल परिपारित एवं जल से सम्पृक्त हो जाते हैं। उनमें कोई भी एक ऐसा अंश नहीं रहता है जो जल से संपृक्त होने से बचा रहे, उसी प्रकार प्रथम ध्यान लाभ पूर्वक भिक्षु का सम्पूर्ण नाम काय विवेक जनित प्रीति से सम्पृक्त हो उठता है। प्रथम ध्यान का लाभ एकाग्रता की दिशा में एक महत्वपूर्ण उपलब्धि है। भिक्षु इस लाभ से उपगत हो

त्वरित गति से आगे की ओर बढ़ने का यत्न नहीं करता है वरन् उसको सुदृढ़ एवं परिपक्व बनाता है। बौद्ध परम्परा के अनुसार ध्यान को परिपक्व बनाने के लिए पाँच वशिताओं के नाम आये हैं इन्हें आवज्जन वसि, समापज्जन वसि, अधिट्ठान वसि, उट्ठान वसि तथा पच्चवेक्खन वसि कहते हैं। इन पाँच वसिताओं के योग से जब प्रथम ध्यान सुदृढ़ तथा परिपक्व हो जाता है तब वह भिक्षु पुनः आगे की ओर बढ़ता है।

द्वितीय रूप ध्यान में वितक्क एवं विचार नामक दो ध्यानाङ्ग अनुपस्थित हो जाते हैं, केवल पीति, सुख एवं एकग्गता नामक तीन ध्यानाङ्ग, ही उपस्थित रहते हैं। इन्हीं तीन ध्यानाङ्गों से उपेत एकाग्रता को द्वितीय ध्यान कहा जाता है। इसका अभिधान पीति सुख एकाग्रता सहित द्वितीय ध्यान कह कर किया जाता है।

द्वितीय ध्यान के लाभ से भिक्षु का नाम काय समाधि जनित प्रीति सुख से पूर्णतः परिपूर्ण हो जाता है। उसके नाम काय में कोई भी ऐसा अंश नहीं रहता है जो विवेक जनित प्रीति सुख से असम्पृक्त हो। वह भिक्षु किस प्रकार समाधि जनित सुख से सम्पृक्त कर विहार करता है। इसे एक उपमा से स्पष्ट किया गया है। जिस प्रकार एक गम्भीर सरोवर हो, जिसमें अन्तः से जलधारा निकलती हो। उस सरोवर के पूर्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण किसी दिशा से कोई आयमुख न हो। वृष्टि से भी समय-समय पर जल का आगमन उसमें न हो, पर उस सरोवर के अन्तः से शीतल जल की धारा स्फुरित हो सरोवर की सम्पूर्ण जलराशि को अपनी शीतलता से परिव्याप्त कर देती हो। जलराशि का कोई भी एक अंश ऐसा नहीं रह जाता हो जो उस शीतल धारा से सम्पृक्त एवं परिव्याप्त न हो, उसी प्रकार द्वितीय ध्यान लाभी भिक्षु का नाम काय समाधि जनित प्रीति सुख से पूर्णतः सम्पृक्त एवं परिव्याप्त हो उठता है।

द्वितीय ध्यान का लाभ चित्त की एकाग्रता की दिशा में विकास का द्योतक है। भिक्षु के आध्यात्मिक जीवन में उत्थान मयक पदनिक्षेप है। यहाँ भी वह उन वसिताओं से इसे दृढ़ कर आगे बढ़ता है।

तृतीय रूप ध्यान में वितक्क विचार एवं प्रीति नामक तीनों ध्यानाङ्ग अनुपस्थित हो जाते हैं। केवल सुख एवं एकग्गता नामक दो ध्यानाङ्ग वहाँ उपस्थित रहते हैं।

ध्यानाङ्गों का अनुपस्थित होना स्वाभाविक है। अनवरत अभ्यास के कारण चित्त अपने स्वाभाविक रीति से आलम्बन के अभिमुख होने लगता है एवं उसकी चंचलता शनैः शनैः क्षीण होकर एकाग्रता के उदय में सहायक होती है। इसलिए ध्यानों के क्रमिक विकास एकाग्रता की अभिवृद्धि एवं परिपक्वता का परिचायक है।

तृतीय ध्यान को अभिव्यक्त करते हुए इसे निष्प्रीतिक सुख से युक्त बतलाया गया है। तृतीय ध्यान लाभी भिक्षु का नाम काय पूर्ण रूप से निष्प्रीतिक सुख से संपृक्त एवं परिव्याप्त हो उठता है। उसका कोई भी अंश असम्पृक्त नहीं रहता है। यह कैसे? जिस प्रकार किसी सरोवर के विभिन्न प्रकार के उत्पल, पदुम, पुण्डरीक आदि जल में ही उत्पन्न जल में अभिवर्द्धित जल में समुत्थित एवं जल से सम्पोषित रहते हैं। कमल

के मूल से लेकर अग्रभाग तक कोई भी ऐसा अंश नहीं रहता है जो उस शीतल जल से सम्पृक्त न हो, उसी प्रकार तृतीय ध्यान लाभी पुरुष का नाम काय निष्प्रीतिक सुख से पूर्णतः सम्पृक्त हो उठता है।

चतुर्थ ध्यान एकाग्रता की दिशा में चरम उत्थान का गमक है। इसमें वितक्क, विचार, पीति तथा सुख नामक चारो ध्यानाङ्ग अनुपस्थित हो जाते हैं। सुख के स्थान पर एकाग्रता नामक नये ध्यानाङ्ग का उदय होता है इस प्रकार उपेक्षा एकाग्रता सहित चतुर्थ ध्यान की प्राप्ति होती है। चतुर्थ ध्यान का लाभी भिक्षु अपने नाम काय को उपेक्षा और एकाग्रता से परिव्याप्त करता है। उसके नाम काय परिशुद्ध एवं पर्यवदात हो जाता है। इस प्रकार की परिशुद्धि एवं पर्यवदात भाव से उसका सम्पूर्ण नाम काय पूर्णतः परिव्याप्त रहता है कोई भी ऐसा अंश यहाँ नहीं रह जाता है जो परिशुद्धि एवं पर्यवदात से असम्पृक्त हो।

चित्त की इस परिशुद्ध दशा पर प्रकाश डालने के लिए एक उपमा देखी जाती है। जिस प्रकार कोई पुरुष पूर्णतः अवदात वस्त्र से अपने को सीस तक आवृत्त कर बैठा हो। उसके शरीर का कोई भी एक ऐसा अंश ऐसा नहीं रह जाता है जो उस अवदात वस्त्र से स्पर्शित न हो, उसी प्रकार सुख-दुःख के प्रहाण पूर्वक सौमनस्य दौर्मनस्य के अस्तंगत भाव प्राप्त कर उपेक्षा एकाग्रता से युक्त हो चतुर्थ ध्यान को प्राप्त कर विहार करते हुए अपने नाम काय को चित्त परिशुद्धि से पूर्णतः परिव्याप्त पाता है।

रूप समाधि की यही चार ध्यानावस्था हैं जो अनवरत अभ्यास के फलस्वरूप क्रमशः प्राप्त होते हैं। चतुर्थ ध्यान के उपरांत उसका चित्त पूर्णतः चांचल्यरहित परम परिशुद्ध पर्यवदात अनङ्गण, विगत उपक्लेश, मृदुभूत कर्मनीय, स्थित तथा आनेञ्ज प्राप्त हो उठता है। चित्त की इस दशा की उपलब्धि रूप समाधि की परिपक्वता फलस्वरूप कही जा सकती है।

(३) आर्य प्रज्ञा स्कन्ध

समाधि भावना के अनन्तर प्रज्ञा भावना का प्रश्न आता है। यह बौद्ध साधना का तृतीय चरण है। प्रज्ञा भावना से सम्यक् दृष्टि का उदय होता है जिससे भिक्षु धर्म के स्वभाव को यथार्थ रूप में समझ लेता है। सभी संस्कार अनित्य हैं, अनात्म हैं तथा दुःख हैं इनका यथेष्ट ज्ञान उसे हो जाता है। धर्म स्वभाव को आच्छादित करने वाली अविद्या सर्वदा के लिए विनष्ट हो जाती है तथा ज्ञान प्रकाश का उदय होता है।

प्रज्ञा का अर्थ सम्यक् दृष्टि है। पालि परम्परा में जानने के अर्थ में तीन शब्दों का प्रयोग देखा जाता है। संज्ञा, विज्ञान और प्रज्ञा। किसी भी वस्तु के बाह्य आकार का ज्ञान संज्ञा है। संज्ञा द्वारा केवल इतना ही ज्ञान होता है कि यह आलम्बन नील, पीत, लोहित, अवदात आदि है। न तो लक्षण प्रतिवेध होता है न निर्वेद की ही प्राप्ति होती है। विज्ञान द्वारा किसी विषय के बाह्य रूप तथा लक्षण का ज्ञान

होता है। उस आलम्बन के नील, पीतादि भेद सहित अनित्य, अनात्म ज्ञान का भी यथार्थ ज्ञान हो जाता है, पर निर्वेद की प्राप्ति नहीं होती है। प्रज्ञा द्वारा बाह्य आकार का ज्ञान होता है, लक्षण प्रतिवेध होता है तथा निर्वेद की प्राप्ति होती है। इसलिए सम्यक् ज्ञान को ही प्रज्ञा कहा जाता है—"कुसलचित्तसम्पयुत्तं विपस्सनाञाणं पञ्ञा"।

लक्षण की दृष्टि से प्रज्ञा धर्म स्वभाव प्रतिवेध लक्षण सम्पन्न है। धर्म स्वभाव के आच्छादक मोहान्धकार को विनष्ट करना इसका कार्य है। सम्यक् ज्ञान के रूप में प्रतिविम्बित होना इसका प्रत्युपस्थान है तथा समाधि के अनन्तर इसका लाभ होने के कारण समाधि ही इसका पदस्थान है।

समाधि द्वारा चित्त को परिशुद्ध करने के अनन्तर भिक्षु प्रज्ञा भावना अर्थात् विपस्सना में प्रविष्ट होता है। सुत्त की परम्परा के अनुसार विपस्सना के अन्तर्गत अपना ज्ञान, मनोमयी ऋद्धि ज्ञान, ऋद्धिविध ज्ञान, दिव्यश्रोत ज्ञान, चेतोपरिय ज्ञान, पूर्व निवास ज्ञान, दिव्यचक्षु ज्ञान तथा आश्रवक्षय ज्ञान सम्मिलित है। इन विभिन्न प्रकार के ज्ञानों का विश्लेषण करने से प्रगट होता है कि अपना यथार्थ ज्ञान एवं आश्रवक्षय ज्ञान विपस्सना के यथार्थ रूप हैं। मध्य के पाँच प्रकार के ज्ञान पाँच प्रकार के ऋद्धिविध हैं जो रूपावचर चतुर्थ ध्यान की प्राप्ति के बाद उपलब्ध होते हैं। जो हो, सुत्तन्त परम्परा के अनुसार ऋद्धिविध ज्ञान भी विपस्सना के अन्तर्गत कहे गये हैं।

मूल ग्रन्थ से प्रकट है कि समाधि भावना द्वारा परिशुद्ध, पर्यवदात, अनङ्गण, विगत उपक्लेश, मृदुभूत, कर्मनीय एवं स्थित चित्त द्वारा वह अपना ज्ञान प्राप्त करता है। वह यथार्थतः जान लेता है कि यह मेरा शरीर चार महाभूतों से बना है। माता-पिता से उत्पन्न है। भात, दाल आदि अन्नों से उपचित है एवं अनित्य एवं विद्धंसन धर्मा है, तथा यह विज्ञान इसी में परिबद्ध है। इस प्रकार वह स्पष्टतः जान लेता है कि जिसे मनुष्य, सत्व प्राणी आदि कहा जाता है वह नाम और रूप का संघात है। इस नाम रूप को वह इस प्रकार स्पष्टतः देखता है जैसे किसी सुन्दर एवं स्वच्छ मणि में पिरोये गये नील या पीत सूत्र को देखा जा सकता है।

मनोमय ऋद्धि ज्ञान की उपलब्धि से इस काय से दूसरे काय का वह निर्माण करता है जो रूपी मनोमय सर्वाङ्ग युक्त एवं सभी इन्द्रियों से उपेत होता है। जिस प्रकार मूँज से इसिका को निकाल लिया जाता है और ऐसा स्पष्टतर जाना जाता है कि यह मूँज है तथा यह इसिका है। उसी प्रकार वह भिक्षु इस काय से अन्य काय का निर्माण करते हुए उन्हें जानता है।

ऋद्धिविध ज्ञान की चर्चा करते हुए अनेक प्रकार की ऋद्धियों का उल्लेख देखा जाता है। इस प्रकार की उपलब्धि से उस भिक्षु को अनेक प्रकार की ऋद्धियों के प्रदर्शन की क्षमता प्राप्त होती है। वह एक होकर अनेक हो जाता है। पुनः अनेक होकर एक होता है, कहीं अन्तर्ध्यान होकर अन्यत्र प्रकट होता है। आकाश में पक्षियों

के समान उड़ता है। पृथ्वी में जल की भाँति डुबकी लगाता है। जल में बिना डूबे हुए चलता है इत्यादि। यहाँ तक की इस शरीर से ही जाकर अपने हाथों चन्द्रमा सूर्य आदि का स्पर्श करता है।

दिव्यश्रोत ज्ञान से वह दूर एवं निकट के शब्दों को विवाधारहित सुनता है। शब्द श्रवण क्रम में दूर या निकट, मानुषिक या दिव्य शब्दों में किसी प्रकार का भेद नहीं रह जाता है।

चेतोपरिय ज्ञान की उपलब्धि से वह अपना तथा दूसरों के चित्त को यथार्थतः जान लेता है। सराग चित्त, वीतराग चित्त, सदोष चित्त, वीतदोष चित्त, सम्मोह चित्त, वीतमोह चित्त, महग्गत चित्त, लोकोत्तर चित्त, अविमुक्त चित्त, विमुक्त चित्त को वह यथार्थ रूप में जानता है।

पूर्व अनुस्मृति ज्ञान के लाभ से उस भिक्षु को अपने पूर्व जन्मों की स्मृति पूर्ण विवरण के साथ हो उठती है। एक जन्म से लेकर अनेक संवर्त विवर्त कल्पों तक के जन्मों को वह पूर्ण विवरण के साथ जानता है। प्रत्येक जन्म के नाम, गोत्र, वर्ण, आहार, आयु आदि का ज्ञान उसे स्पष्ट हो जाता है।

दिव्य चक्षु ज्ञान से उस भिक्षु को एक ऐसे चक्षु का लाभ होता है जिससे वह विभिन्न प्रकार के सत्वों को अपने कुशल तथा अकुशल कर्मो के आधार पर हीन प्रणीत गति योनियों में उत्पन्न होते एवं मृत्यु को प्राप्त करते हुए देखता है। जिस प्रकार किसी प्रासाद के शिखर स्थित प्रकोष्ट में बैठा हुआ कोई पुरुष गृह में प्रवेश करते हुए एवं निकलते हुए मनुष्यों को स्पष्टतया देखता है, उसी प्रकार दिव्य चक्षु प्राप्त पुरुष भी कर्मानुसार विविध गति एवं योनियों में आते-जाते सत्त्वों को देखता है।

आश्रवक्षय ज्ञान से वह भिक्षु दुःख, दुःख समुदय, दुःख निरोध एवं दुःख—निरोध गामिनी प्रतिपदा को यथार्थ रूप से जान लेता है। इसी प्रकार आश्रव समुदय आश्रव निरोध तथा आश्रव निरोधगामिनी प्रतिपदा को वह यथार्थतः जानता है। ऐसा जानने से उसका चित्त कामाश्रव, भवाश्रव, दृष्टयाश्रव, एवं अविद्याश्रव से विमुक्त हो जाता है। उसका चित्त सभी प्रकार के मलों से विमुक्त हो गया ऐसा उसे ज्ञान होता है। वह स्पष्टतः जान लेता है कि जीवन मरण परम्परा क्षीण हो गई, ब्रह्मचर्यवास का सफल पर्यवसान हो गया, सभी करणीय कार्य कर लिए गए। पुनः उसे इधागमन भाव समाप्त हो गया[१] यही प्रज्ञा का पर्यवसान है।

इन्हीं आर्य शीलस्कन्ध, आर्य समाधि-स्कन्ध तथा आर्य प्रज्ञा स्कन्ध के कारण भगवान् बुद्ध की जनवर्ग में प्रशंसा होती है। इन्हीं उदात गुणों को देखकर ही सभी उनकी प्रशंसा करते हैं। इन्हीं गुणों से वे स्वयं उपेत हैं तथा जनवर्ग को भी अपने उपदेशों के माध्यम से इन्हीं गुणों से समुपेत कराते हैं—"तिण्णं खन्धानं सो भगवा वण्णवादी अहोसि।" एत्थ च इमं जनतं समादपेसि, निवेसेसि पतिट्ठापेसी' ति[२]"।

---

१ खीणा जाति, वुसितं ब्रह्मचरियं कतं करणीयं ना परं इत्थत्ताया ति। दी० नि० १।१८२

२ दी० नि० १।१७०।

अपरिहानिय धर्म

भगवान बुद्ध परम कारुणिक पुरूष थे। उनके चारिका-क्रम के अवलोकन से प्रकट होता है कि उनका प्रत्येक कार्य जनहित के लिए होता था। दुःख-ज्वाला से सन्तप्त मनुष्य को कैसे त्राण मिल सकता है, यह प्रश्न उनके सम्मुख सदा विद्यमान रहता था। इसलिए उन्होंने अनेक पर्यायों से सुखोपलब्धि के विविध उपायों का कथन किया है। महापरिनिब्बानसुत्त में वज्जियों एवं भिक्षुओं के व्याज से उन्होंने अड़तालीस नियमों का उल्लेख किया है। उनमें सात नियम गृहस्थों की दृष्टि से तथा एकतालीस नियम साधुओं की दृष्टि से कहे गये हैं। यद्यपि वे नियम के एक निश्चित काल एवं प्रसंग में चर्चित हैं, पर तद्गत विचारों का समीक्षण करने से प्रकट होता है कि वे सभी काल के प्राणियों के लिए हितकर हो सकते हैं। तन्निहित तथ्य कल्पनाजाल से दूर ठोश धरातल परिनिष्ठ है। उनका परिपालन व्यक्तिगत, सामाजिक, राष्ट्रीय एवं धार्मिक सभी स्तरों पर सदृश लाभ सहित किया जा सकता है। इनकी ऐसी उपादेयता के कारण प्रकृत प्रसंग में उनकी चर्चा इष्ट है।

वज्जियों के पर्याय से कहे गये नियम :—किसी भी राष्ट्र की अखण्डता एवं सुदृढ़ता के लिए भगवान बुद्ध द्वारा सात नियमों का कथन वज्जियों के प्रसंग में किया गया है। ये राष्ट्रीय जीवन को दृढ़ आधार प्रदान करने वाले बुद्ध के सार्वभौम विचार हैं। यथा—

(१) सन्निपात बहुल होना :—किसी प्रश्न पर सम्यक् रूप से विचार करने के लिए एक साथ बहुधा बैठना सन्निपातबहुल होना है। राष्ट्रीय जीवन से सम्बन्ध रखने वाले किसी प्रश्न के उपस्थित होने पर एकाकी तथा सहसा निर्णय लेना अहितकर होता है। इसलिए यह बतलाया गया है कि ऐसे अवसर पर राष्ट्र-हित के रक्षकों की बैठक हो तथा वे प्रश्न पर सभी दृष्टियों से विचार कर एक हो निर्णय लें।

(२) समग्र सन्निपात एवं समुत्थानपूर्वक करणीय परिपालन :—इस नियम के अन्तर्गत तीन बातें कहीं गयी हैं। वे हैं—एक हो बैठना, एक हो उठना तथा एक हो करणीय कर्मों को करना। इसके अन्तर्गत संकेत यह है कि केवल एक साथ बैठना मात्र ही सार्थक नहीं है। ऐसा भी संभव है कि राष्ट्रीय प्रश्न के उपस्थित होने पर एक साथ बैठा जाय पर आन्तरिक मतभेद के कारण प्रश्न पर सम्यक् विचार न कर कुछ उठ कर चले जाँय तथा जिस उद्देश्य से वह सन्निपात हुआ हो वह कार्य अधूरा रह जाय। ऐसा होना अहितकर है। इसलिए एक हो बैठना, प्रश्न पर विचार करना तथा दृढ़ निर्णय के साथ उठकर करणीय कार्य को तत्परता एवं निष्ठा के साथ करना ही हितकर है।

(३) अप्रज्ञप्त का न प्रज्ञापन तथा प्रज्ञप्त का उच्छेद न करना :—अप्रज्ञप्त का अर्थ अविहित है। प्रज्ञप्त विहित को कहते हैं। इसके माध्यम से यह दर्शाया गया है कि किसी प्रकार के लोभ या प्रमाद वश न तो अविहित कार्यों को विहित कहना चाहिए, न विहित को अकरणीय कह परित्याग करना चाहिए। किसी भी राष्ट्र में दीर्घ

कालिक परम्परा के अनुसार ही राष्ट्र हित की दृष्टि से कुछ कार्य विहित कहे जाते हैं। कभी कभी उनके दृढ़ परिपालन से सामयिक हानि भी दिखायी पड़ सकती है, पर मूलतः वे अपरिहानीय होते हैं। उनके ऐसे स्वरूप को जानकर ही क्षणिक हानि के कारण उनका परित्याग नहीं होना चाहिए, वरन् दृढ़ता के साथ पालन होना चाहिए। साथ ही अविहित कार्यों से तात्कालिक कुछ लाभ होने पर भी उन्हें विहित नहीं समझना चाहिए। इसलिए राष्ट्रीय हित के लिए परम्परापरिनिष्ठ विहित धर्मों का परिपालन ही इष्ट है[1]।

(४) वृद्धों का सत्कार, पूजा तथा उनके वचनों को सुनना :—वृद्ध का अभिप्राय यहां ज्ञान तथा वय की दृष्टि से परिपक्वता लाभी पुरुष से है। जिन पुरुषों ने सम विषम अनेक प्रकार की परिस्थितियों के मध्य से अपने को अकम्पित भाव से परिहरण किया है, वे अनवरत प्राप्त अनुभव से परिपूर्ण एवं परिपक्व होने से वृद्ध कहलाते हैं। ऐसे पुरुषों के वचन महार्घ्य होते हैं। ऐसे पुरुषों का सत्कार, गरुकार, मानप्रदान तथा पूजन हितकर है। उन्हें सुखद परिस्थित में रख उनके मार्ग दर्शन का अनुसरण महानिशंस है। ये पुरुष वस्तुतः राष्ट्रीय निधि हैं।

(५) कुल स्त्रियों, कुल कुमारियों के साथ अव्यवहार न करना, न उन्हें बलात् वश में कर अपना घर बसाना :—इस नियम के अन्तर्गत स्त्रियों को यथोचित आदर सम्मान प्रदान करने की बात कही गयी है। स्त्रियाँ दो प्रकार की होती हैं—विवाहिता तथा अविवाहिता। स्त्रियाँ ही कुल की मर्यादा है, उनके सम्यक् परिवहन से कुल का सम्यक् परिवहन इष्ट कहा जाता है। प्रत्येक कुल की अपनी एक मर्यादा होती है, वह मर्यादा व्यक्तिगत, सामाजिक, नैतिक तथा धार्मिक जीवन की सीमा बनती है। इसलिए राष्ट्रीय उत्थान के लिए आवश्यक है कि स्त्रियाँ अपने अपने कुल की मर्यादा के अन्तर्गत रह कर विहित कर्त्तव्यों का पालन करें। ऐसा करने से जीवन का संचरण सुखद होता है। इस पृष्ठभूमि में राष्ट्र की अखण्डता के लिए यह आवश्यक है कि विभिन्न कुल की स्त्रियों तथा कुल कुमारियों को अपने अपने कुल की मर्यादा के अनुरूप में स्वाधीनता से विहित कर्त्तव्यों के पालन करने का अवसर प्रदान किया जाय। न तो उन्हें मर्यादा भंग करने का प्रलोभन दिया जाय, न उन पर बलात्कार ही किया जाय। बलपूर्वक अपहरण कर मर्यादा विहीन होने के लिए नारी वर्ग को वाध्य करना राष्ट्र दाह के लिए चिता सजाना है। इसलिए भगवान् बुद्ध ने राष्ट्रीय अखण्डता के लिए नारियों के सम्मान पर अधिक बल दिया है।

(६) चैत्य अर्थात देवस्थानों का सत्कार सुरक्षा एवं उनकी वृत्ति को बनाये रखना :—धर्म एवं संस्कृति देश में सुखद परिवेश बनाने में सहायक होती हैं। धर्म के प्रतीक रूप देवस्थान होते हैं। उन देवस्थानों का विविध प्रकार से पूजन बन्दन

---

१ वज्जी अपञ्ञत्तं न पञ्ञापेन्ति, पञ्ञत्तं न समुच्छिन्दन्ति, यथापञ्ञत्ते पोराणे वज्जिधम्मे समादाय वत्तन्ती ति। दी० नि० २.५६।

व्रतादि परिपालन मनुष्य के लिए प्रेरणा का श्रोत है। उनसे प्रेरणा प्राप्त कर अनेक प्रकार के उदात्त विचारों का उद्भव होता है। वे विचार घनीभूत हो एक-एक विशिष्ट गुण के रूप में अभिव्यक्त होते हैं। उनके परिपालन से व्यक्तिगत, सामाजिक तथा राष्ट्रीय चरित्र का निर्माण होता है। इसलिए भगवान् बुद्ध के अनुसार यह परम आवश्यक है कि नगर के भीतर या बाहर जो देवस्थान बनें हों उनकी सम्यक् पूजा होनी चाहिए। उन्हें यथोचित सत्कार मिलना चाहिए। साथ ही उनके संरक्षण के लिए जो दान का विधान पूर्व से चला आता हो, उसको गतिशील रखने में सहायता देनी चाहिए एवं उनके अभिवर्द्धन में भी योग होना चाहिए। ऐसा होने से ही ग्राम-ग्राम में स्वतः धार्मिक एवं सांस्कृतिक परिवेश का उन्मेष हो सकेगा, जिसके सहज एवं अनभिव्यक्त प्रभाव से मनुष्य अनायास ही धार्मिक तथा सुसंस्कृत बन सकेंगे।

७. **अर्हत्तों की रक्षा, उनके आगमन एवं सुख विहार के लिए सम्यक् परिवेश का निर्माण** :—जीवन मुक्त पुरुष को अर्हत्त कहते हैं। जिन्होंने अपनी समस्त तृष्णाओं को समाप्त कर निर्वाण की प्राप्ति की है तथा जिनके सभी चित्त-मल सर्वदा के लिए समूल नष्ट हो चुके हैं, वे अर्हत्त कहलाते हैं। ये वस्तुतः संत हैं। संत के लिए सभी पुरुष मित्र ही होते हैं, उनकी अहित भावना समाप्त रहती है। इसलिए उनके जो कुछ भी काय-कर्म या वची-कर्म होते हैं, वे बहुजन हिताय बहुजन सुखाय होते हैं। ऐसे संतों की सभी दृष्टियों से रक्षा होनी चाहिए। क्योंकि वे राष्ट्रीय निधि हैं। साथ ही विकास की इच्छा रखने वाले देशवासियों को ऐसा चाहिए कि वे अपने देश में ऐसा मनोरम परिवेश बनावें जिससे कि ऐसे संत सहज भाव से वहाँ आवें तथा आकर सुख पूर्वक निवास कर सकें। उनके निवास से कई प्रकार के लाभ हो सकते हैं। प्रथमतः उनका व्यक्तित्व दूसरों के उत्थान के लिए प्रेरक बन सकता है, एवं उनके मंगलमय उपदेश सबके उत्थान में सहायक हो सकते हैं। इसलिए भगवान् बुद्ध ने अर्हत्तों की रक्षा एवं उनके शुभागमन तथा सुखद संवास पर बहुत बल दिया है।

ऊपर कहे गये सात नियमों को अपरिहानिय धर्म कहा गया है। इनका परिपालन व्यक्ति, समाज फलतः राष्ट्र के उत्थान में परम सहायक है। ये किसी भी प्रकार से हानिप्रद नहीं हो सकते हैं। इसलिए वज्जियों के पर्याय से बुद्ध ने सबका ध्यान इनके ओर आकृष्ट करते हुए सबल शब्दों में कहा है कि—जब तक ये सात अपरिहानिय धर्म वज्जियों में रहेंगे, इन सात अपरिहानिय धर्मों के परिपालन में वज्जी दिखाई पड़ेंगे तब तक उनकी वृद्धि ही समझनी चाहिए, हानि नहीं।

ऊपर में दर्शाया गया है कि अपरिहानिय धर्मों का कथन गृही एवं प्रव्रजित दो दृष्टियों से यहाँ किया गया है। बुद्ध काल में गृही जीवन तथा प्रव्रजित जीवन का व्यापक रूप विद्यमान था। समाज का यह द्विधा रूप बुद्ध के पूर्व काल में भी देखा जाता है एवं परिस्थितियों के कारण विभिन्न प्रकार के आरोह-अवरोह के साथ आज भी विद्यमान है। जिस प्रकार ऊपर कहे गये सात नियम राष्ट्रीय अखण्डता में दृढ़ता के लिए स्तम्भ रूप हैं, उसी प्रकार धार्मिक जीवन की दृढ़ता के लिए भी

वैसे ही एकतालीस नियमों का विधान है, जो पाँच सप्तक तथा एक षष्टक में विभक्त है। इनका संक्षिप्त परिचय निम्नलिखित प्रकार से जाना जा सकता है—

(१) **प्रथम सप्तक :—** इसके अन्तर्गत सात नियम कहे गये हैं। यथा—(१) भिक्षुओं का संघ कृत्य के लिए सन्निपात बहुल होना। संघ के किसी विचारणीय प्रश्न के उपस्थित होने पर भिक्षुओं द्वारा सम्मिलितरूप से एक स्थान में एकत्र हो उस पर सम्यक् विचार कर उचित निर्णय लेना आवश्यक बतलाया गया है। भिक्षुओं की ऐसे बैठक का ही नाम सन्निपात है। ऐसा सन्निपात अभिक्षण होना चाहिए। (२) प्रव्रजितों के लिए यह भी आवश्यक बतलाया गया है कि संघ का कार्य उपस्थित होने पर वे एक साथ बैठें, एक साथ उठें, एक ही उनका निर्णय हो एवं उस निर्णय का दृढ़ता के साथ कार्यान्वयन हो। (३) इस क्रम में तीसरी बात इस तथ्य का निर्देश करती है कि भिक्षु अप्रज्ञप्त शिक्षा पद को प्रज्ञप्त न कहें तथा जो प्रज्ञप्त हैं उनका उच्छेद न करें। वे प्रज्ञप्त शिक्षा पदों के अनुसार ही अपने धार्मिक जीवन का परिहरण करें। इस नियम में एक सम्भावित व्याघात के निवारण का संकेत दिया गया है। नियमों के व्यक्तिक्रम की स्थिति लोभ के कारण होती है। जहाँ तृष्णा बलवती हो उठती है, वहाँ मोह स्वभावतः विवेक को आवृत्त कर देता है। फलस्वरूप उसी कार्य को करने में प्रवृत्ति होती है, जो उसे आपाततः लाभप्रद दिखलाई पड़ता है। ऐसी परिस्थिति में प्रज्ञप्त नियमों का व्यक्तिक्रम हो उठता है। धार्मिक जीवन की दृढ़ता के लिए इस प्रकार की परिस्थितियों को जानना और उनके प्रभाववश प्रज्ञप्त नियमों का उच्छेद नहीं करना ही इष्ट है। बुद्ध ने इस दृष्टि से ही अप्रज्ञप्तों के अपरिपालन एवं प्रज्ञप्तों के संरक्षण एवं अनुसरण पर बल दिया है। (४) चतुर्थ नियम चिर प्रव्रजित एवं संघ परिनायकों के प्रति समुचित आदर प्रदान करने के सम्बन्ध में है। भगवान बुद्ध का धर्म—'एहि-पस्सिक' तथा प्रत्यात्म वेद्य है। प्रव्रजित कुलपुत्र संघ में रहकर शील, समाधि तथा प्रज्ञा के चरणों से क्रमशः अग्रसर होते हुए अध्यात्मिक लाभ प्राप्त करते हैं। उनका यह लाभ अनवरत उद्योग के कारण है। इसलिए आवश्यक है कि नव प्रव्रजित उन ज्ञान एवं वय वृद्ध संघ परिनायकों के प्रति आदर सत्कार एवं पूजा की भाव रखें तथा उनकी अनुभूत बातों का श्रद्धा के साथ परिपालन करें। उनके ऐसे कार्य ही उनके आध्यात्मिक उत्थान के लिए हितकर हो सकते हैं। (५) पञ्चम नियम तृष्णा के प्रति वैराग्य भाव बनाये रखने का संकेत करती है। बौद्ध परम्परा के अनुसार तृष्णा ही दुःख की जननी है। इसके कारण ही मनुष्य नये-नये भवों में अनुरक्ति उत्पन्न कर जीवन-मरण परम्परा को गतिशील बनाये रखता है। इसलिए तृष्णा को पोनोब्भविका कहा गया है। बौद्ध साधना की समस्त विधियाँ तृष्णा के प्रहाण के लिए ही हैं। इसलिए आध्यात्मिक जीवन की सुदृढ़ता के लिए तृष्णा के वश में न जाना ही हितकर बतलाया गया है। (६) षष्ठ नियम सेनासन के प्रति रति निवारण विषयक है। प्रव्रजितों के लिए अरण्य, वृक्ष-मूल, गिरि-गुहा, श्मशान पलालपुंज आदि ही निवासस्थान बतलाये गये

हैं। ऐसे स्थानों में भिक्षु पर्ण कुटी बना अनासक्त भाव से सुख पूर्वक विहार करता है। उनका ऐसा अनासक्त विहार ही अध्यात्मिक जीवन की क्रमिक उपलब्धि में सहायक हो सकता है। (७) इस नियम के अन्तर्गत भिक्षुओं के मध्य अनागत ब्रह्मचारियों के आगमन तथा आगत ब्रह्मचारियों के सुख विहार की बात कही गई है। भगवान बुद्ध ने संघ निर्माण के अनन्तर भिक्षुओं को क्षीरोदकी के भाव से विहार करने का उपदेश किया है। वह तब ही सम्भव है, जब वे परस्पर सम्मान स्नेह और मैत्री की भावना रखें। विशेषकर नव प्रव्रजितों के लिए चिर प्रव्रजितों का समागम लाभप्रद है, इसलिए सघ जीवन में भिक्षुओं द्वारा ऐसे सुखद परिवेश का निर्माण होना चाहिए कि उनके मध्य न आये हुए अनुभवी भिक्षु आवें तथा आये हुए सुख पूर्वक विहार करें। उनके सुख पूर्वक विहार से ही जो समय-समय पर प्रेरणा मूलक उपदेश प्राप्त होंगे, उनसे नव प्रव्रजितों को अपनी साधना में विकास करने के लिए उचित अवसर प्राप्त होगा। इस प्रसंग में यह भी देखा जाता है कि जहाँ अर्हन्त्त निवास करते हैं. वह भूमि रमणीय हो जाती है। इसका यह अर्थ है कि उनकी उत्तम चर्या उस स्थान को सभी प्रकार से सुखद बनाती है। ऐसी दशा में उनका व्यक्तित्व वहाँ के प्राणियों के लिए आध्यात्मिक उत्थान के श्रोत का काम करता है। इस न्याय से भगवान् बुद्ध ने प्रथम सप्तक में सात अपरिहानिय धर्मों का कथन किया है।

(२) **द्वितीय सप्तक :**—इसके अन्तर्गत भिक्षु जीवन के सम्यक् संचालन के लिए सात नियम कहे गये हैं। इनके माध्यम से प्रव्रजितों के मध्य गृही जीवन से चली आयी हुई विभिन्न प्रकार की लिप्साओं का विनोदन किया गया है। यथा—(१) कर्मारामता का निवारण :—एक भिक्षु प्रव्रजित होने के पूर्व अपने गृही जीवन में विभिन्न प्रकार के कर्मों में रत रहा करता है, उसकी कार्यों के प्रति ऐसी दृढ़ प्रवृत्ति हो जाती है कि उनके विना वह रह ही नहीं सकता है। प्रव्रजित होने पर भी अपने क्षणों का वह साधना मूलक कार्यों में सदुपयोग नहीं करता है, वरन् चीवरादि के सीने, रंगने, साफ करने में ही रत रहता है। उसकी ऐसी कर्मारामता साधु-जीवन के लिए हानिकर है। इसलिए कहा गया है कि एक प्रव्रजित को कर्मारामता से युक्त नहीं होना चाहिए। (२) निरर्थक बातों में रत न होना चाहिए :—ऐसा भी देखा जाता है कि जो पुरुष गृही जीवन में सर्वदा विभिन्न प्रकार की निरर्थक बातों में लगाये रहता है, वह प्रव्रजित होने पर भी निरर्थक कथा संलापों के मध्य देखा जाता है। बुद्ध ने 'सहस्सवग्ग' में दर्शाया है कि कोई आदमी एक हजार बार एक हजार निरर्थक गाथाओं का पाठ करे जो अनर्थकारी हैं, उसका वह कार्य अत्यन्त निन्द्य है। उससे तो अच्छा यह है कि एक ही पद का कथन किया जाय, जो सार्थक हो। अन्यत्र भी उन्होंने कहा है कि "भिक्षुओं के लिए दो ही काम करणीय है या तो वे धार्मिक कथा करें या आर्य मौन रहें"। किसी भी दशा में अनर्थकारी वचनों से विरत रहने को ही श्रेष्ठ बतलाया गया है। (३) **निद्रारत न होना :**—मनुष्य का जीवन सम्यक् उपयोग के लिए है। इसके क्षणों का सुन्दर उपयोग होना चाहिए। यदि जीवन का उपयोग न कर निद्रा, तन्द्रा, आलस्य आदि में ही इसे बिताया जाय, तो इसे जीवन का दुरुपयोग समझना चाहिए। कहा

गया कि जिस प्रकार उद्यान में विभिन्न प्रकार के पुष्प खिले रहते हैं, यदि उन फूलों का उपयोग किया जाय तो उनके योग से सुन्दर मालाएं बनाई जा सकती है, जिनसे मनुष्य अपने को विभूषित कर सकता है तथा देवताओं को भी प्रसन्न कर सकता है। उसी प्रकार जीवन के क्षण भी फूल के समान सुन्दर हैं, यदि मनुष्य चाहे तो इन क्षणों का उपयोग करके अनेक कुशल कर्म कर सकता है और यदि नहीं चाहे तो उसका सारा जीवन व्यर्थ ही हो सकता है। बुद्ध ने स्पष्ट शब्दों में अप्रमादी बनने का उपदेश किया है। इसलिए निद्रा आलस्य आदि में समय को लगाना निरा मूर्खता है। (४) संगणिकारामता से विरत रहना :—संगणिकाराम का अर्थ होता है बहुत लोगों के मध्य रहना। कुछ लोग इसमें ही अपनी विशेष रूचि रखते हैं कि वे गण के बीच ही रहें। जितने अधिक लोगों से उनका सम्पर्क रहता है, उतना ही उन्हें आनन्द होता है। मनुष्यों की ऐसी प्रवृत्ति साधना के लिए घातक होती है। इसलिए कहा गया है कि भिक्षुओं को चाहिए कि साधु जीवन व्यतीत करते हुए बहुत मनुष्यों की संगति से अपने को बचावें। इसे ही संगणिकारामता से विरति कहा जाता है। (५) अकुशल इच्छाओं से विरत रहना :—भगवान बुद्ध ने अपने धर्म का सार यही बतलाया है कि समस्त अकुशल प्रवृत्तियों का परित्याग किया जाय। मनुष्य के मन में शुभ और अशुभ दोनों प्रकार की प्रवृत्तियाँ हैं। उसका सम्यक् यत्न यह होना चाहिए कि उसकी समस्त अकुशल प्रवृत्तियाँ विनष्ट हों तथा कुशल प्रवृत्तियों का उदय हो। अकुशल प्रवृत्तियों का अत्यन्त अभाव ही इष्ट है। (६) पाप मित्रता से विरत रहना :—मित्रों का सम्पर्क जीवन में हर दृष्टि से अपना प्रभाव छोड़ जाता है। अच्छे मित्रों के योग से ये प्रभाव शुभ होते हैं तथा बुरे मित्रों की संगति से अशुभ। इस तथ्य को स्पष्ट रूप से निर्देश करते हुए बुद्ध ने कहा है—"सब्भिरेव समासेथ, सब्भि कुब्बेथ संथवं" अर्थात् सत्पुरुषों का संग किया जाय। सत्पुरुषों का ही संग्रह किया जाय। साधु जीवन व्यतीत करते हुए यदि श्रेष्ट पुरुषों की संगति न प्राप्त हो, तो चिन्ता नहीं करनी चाहिए, उसे अकेले ही विचरण करना चाहिए। किसी भी दशा में पाप मित्रों की संगति नहीं करनी चाहिए। इस प्रसंग में केवल पाप मित्रों की संगति का ही वर्जन नहीं है वरन् पाप मित्रता की ओर रूझान भी वर्जित है। (७) अल्प लाभ से साधु जीवन का परित्याग न करना :—ऐसा देखा जाता है कि साधु जीवन व्यतीत करते हुए भिक्षुओं को मार्ग में कुछ ऐसी चमत्कारी उपलब्धियाँ हो जाती हैं, जिनके प्रभाव में आकर वह महान् उपलब्धि की ओर से अपने को विमुख कर लेता है। वह उस उद्देश्य को भूल जाता है, जिसको लेकर उसकी प्रव्रज्या हुई रहती है। ऋद्धियों के प्रदर्शन एवं तज्जनित लाभ से ही वह संतोष का अनुभव करता है। एक सच्चे साधक के लिए ये बाधाएँ हैं। इसलिए अल्प लाभ के कारण अपने को च्यूत करने से भिक्षु को विरत रहना चाहिए।

ये सात नियम द्वितीय सप्तक में भिक्षुओं के जीवन को सुदढ़ बनाने के लिए कहे गये हैं।

(३) तृतीय सप्तक :—इस सप्तक के अन्तर्गत ऐसे सात गुणों के विकास की चर्चा की गई जो भिक्षु जीवन की सम्यक् अभिवृद्धि में परम सहायक हैं। यथा — (१) श्रद्धावान होना :—चित्त के प्रसन्न भाव को श्रद्धा कहते हैं। गुरू या शास्ता के वचनों में कम्पन रहित प्रवृत्ति ही श्रद्धा है। श्रद्धा उत्पन्न होकर चित्त को स्वच्छ बना देती है। जिस प्रकार किसी नदी के कर्दमपूर्ण जल में उदक-प्रसादक मणि को डाल देने से जल निर्मल एवं स्वच्छ हो जाता है, कर्दम सेवाल शंख आदि नीचे चले जाते हैं, उसी प्रकार श्रद्धा के उदय से मनुष्य के चित्त में व्याप्त क्लेश क्षीण हो जाते हैं। क्लेशों के क्षीण होने से चित्त की अभिव्यक्ति परिशुद्ध रूप में होती है। इस दृष्टि से ही भगवान् ने श्रद्धा को सबसे उत्तम धन कहा है। उन्होंने यह भी बतलाया है कि श्रद्धा से ही चार प्रकार की बाढ़ों को पार किया जा सकता है। इसलिए श्रद्धावान् होना लाभप्रद कहा गया है। (२) ह्री से युक्त होना :—आत्म लज्जा को ह्री कहते हैं। यह आत्म गौरव करते हुए उत्पन्न होती है। जब जीवन में ऐसे क्षण उपस्थित होते हैं, जहाँ पाप का प्रलोभन अधिक होता है, तो वहां ह्री का कार्य देखा जाता है। ह्री के कारण मनुष्य ऐसा सोचना प्रारम्भ करता है कि मैं मनुष्य हूँ, प्रज्ञावान् हूँ, क्यों मैं इस प्रकार का अकुशल कर्म करूँ? ऐसा सोचते हुए वह अपने को पाप से बचाता है। इस दृष्टि से अकुशल कर्म करने के क्षण में ह्री मनुष्य की रक्षा करती है। अतः बुद्ध ने ह्री सम्पन्न होना श्रेयष्कर बतलाया है। (३) ओतप्पी होना :—लोक लज्जा को ओतप्प कहते हैं। मनुष्य सामाजिक अकुशल कर्मों के करने के क्षण एक ऐसी अन्तः-प्रेरणा प्राप्त करता है, जिसके कारण उसकी अकुशल प्रवृत्ति नहीं होती है। वह ऐसा चिन्तन करना प्रारम्भ कर देता है कि मैं एक सामाजिक प्राणी हूँ, इस प्रकार का कोई भी कार्य न करूँ जिससे समाज के लोगों को क्षति पहुँचे। उसके ऐसे चिन्तन का जो आधार विन्दु है वह है ओतप्प। इसलिए ओतप्प से युक्त होकर विहार करना ही विहित बतलाया गया है। (४) बहुश्रुत होना :—बहुश्रुत होने का अर्थ ज्ञानी होना है। बौद्ध साधना में परियत्ति तथा पटिपत्ति नामक दो प्रकार की ज्ञेय परम्परा है। परियत्ति बुद्ध शासन के सैद्धान्तिक ज्ञान का नाम है। पटिपत्ति का अर्थ उसका व्यावहारिक ज्ञान है। इस प्रकार बुद्ध शासन का उभयतः ज्ञान ही प्रज्ञा है। उससे उत्तम ढंग से उपेत होना प्रज्ञावान् या बहुश्रुत होना है। यहाँ दर्शनीय है कि साधना के सफल पर्यवसान में इन दोनों का योग आवश्यक है। परियत्ति के अभाव में पटिपत्ति की उचित गति नहीं होती है, उसी प्रकार पटिपत्ति के अभाव में परियत्ति सफल नहीं हो पाती है। दोनों के योग से ही साधना की सफलता है। इसलिए भगवान ने बहुश्रुत होने का उपदेश किया है। (५) वीर्य सम्पन्न होना :—उद्यम या उत्साह को विरिय या वीर्य कहते हैं। यह उपस्थम्भन लक्षण वाली होती है। जिस प्रकार किसी गृह के गिरते हुए छत को स्तम्भों के द्वारा बल प्रदान कर गिरने से बचाया जा सकता है, उसी प्रकार साधना जीवन में अग्रसर होते हुए विभिन्न प्रकार की बाधाओं के व्याघात से विचलित साधक को वीर्य नामक स्तम्भ से बचाया जा सकता है। वीर्य के अभाव होने से साधना में क्षीणता आती है। इसलिए सम्यक् प्रतिपन्न भिक्षु के

लिए वीर्यवान् होना आवश्यक बतलाया गयाहै। (६) स्मृतिमान होना :—स्मृति का अर्थ यहाँ सतत् जागरूकता है। जिस प्रकार एक द्वारपाल नगर द्वार पर स्थित हो गतागत मनुष्यों के प्रति जागरूक रहता है तथा अवांछनीय पुरुषों के प्रवेश का निवारण करता है, उसी प्रकार स्मृति चित्त-द्वार पर प्रहरी का काम करती है। मन वस्तुतः कुशल एवं अकुशल प्रवृत्तिग्रों का गृह है। उनका मानस धरातल पर आरोह-अवरोह होता रहता है। एक संयमी पुरुष के लिए विहित यह है कि वह अकुशल प्रवृत्तियों का आरोह-अवरोह स्थगित कर कुशल प्रवृत्तियों की उत्पत्ति में ही प्रेरणा प्रदान करे। यह काम तभी सम्भव है जब वहाँ स्मृति उपस्थित हो। इसके उपस्थि होने से ही मानस धरातल पर अकुशल प्रवृत्तियों का आगमन उस प्रकार सहज रूप से स्थगित हो जाता है, जिस प्रकार चोर या अवांछनीय पुरुषों की प्रवृत्ति देख लेने के बाद अवरूद्ध हो जाती है। इतना ही नहीं स्मृत्ति परिनायक रत्न की भांति सर्वदा अकुशल धर्म एवं कुशल धर्मों का निर्देश करती है। उन्हें जानकर मनुष्य अपने को अकुशल से बचाता है तथा कुशल की ओर लगाता है। स्मृति का योग इस पृष्ठभूमि में साधना जीवन के प्रत्येक क्षण में है। इसलिए भगवान् बुद्ध ने इसे सर्वार्थिका कहा है या सभी व्यञ्जनों में लवण रूप बतलाया है। (७) प्रज्ञावान होना :—प्रज्ञा का अर्थ ज्ञान होता है। यह शब्द सामान्य वस्तुओं के ज्ञान के अर्थ में प्रयुक्त न होकर विशेष अर्थ में प्रयुक्त है। कुशल चित्त से युक्त विपश्यना ज्ञान ही प्रज्ञा है। यह विपश्यना क्या है? सभी धर्मों को अनित्य अनात्म एवं दुःख स्वरूप देखना ही विपश्यना है। धर्मों का यह स्वभाव अपाततः अनुभवगम्य नहीं होता है, प्रज्ञा के उदय होने से अविद्या अन्धकार का विनाश हो जाता है। अविद्या के कारण जो आवरण पड़ा रहता है वह नष्ट हो जाता है। प्रकाश रूप में ज्ञान का उदय होता है, जिससे धर्मों का स्वभाव स्वतः स्पष्ट हो जाता है। इसलिए प्रज्ञा के लक्षण आदि पर प्रकाश डालते हुए कहा गया है कि धर्म स्वभाव प्रतिवेधन लक्षण प्रज्ञा होती है। अविद्या अन्धकार को विनष्ट करना ही इसका कार्य है। सम्यक् ज्ञान के रूप में ही इसकी अभिव्यक्ति होती है तथा समाधि ही इसका पदस्थान है, क्योंकि समाहित पुरुष ही जान सकता है। इन सब दृष्टियों से प्रज्ञा बौद्ध साधना का एक बलिष्ट चरण है। फलतः भगवान ने प्रज्ञावान् होना युक्त बतलाया है।

इस तृतीय सप्तक में इन सात नियमों द्वारा सात गुणों पर प्रकाश डाला गया है, जिनसे युक्त होकर भिक्षु साधु जीवन का सम्यक् परिहरण कर सकता है।

(४) **चतुर्थ सप्तक :**—इस सप्तक के अन्तर्गत भगवान ने सात नियमों के रूप में सात बोध्याङ्गों की चर्चा की है। बोधि सम्यक् ज्ञान का अधिवचन है। ऐसे सम्यक् ज्ञान की प्राप्ति में जो सहायक अंग हैं, उनको सम्बोध्याङ्ग कहते हैं। इन अंगों के सम्यक् अनुसरण एवं परिपालन से बोधि का अधिगम इष्ट कहा गया है। वे संख्या में सात हैं। यथा—

(१) स्मृति सम्बोध्याङ्ग :—स्मृति की चर्चा पूर्व में की जा चुकी है। यह सतत जागरूकता का नाम है, जो अकुशल धर्मों के निवारण में सहायक है। इसलिए

उपट्ठान लक्षण से युक्त इसे बतलाया गया है। (२) धर्मविचय सम्बोध्याङ्ग :—धर्म-विचय का अर्थ धर्मों के वास्तविक स्वभाव के ज्ञान के लिए यत्न होता है। सभी धर्म अनित्य हैं, अनात्म हैं और दुःख हैं। इनके इस स्वभाव को जानने के लिए जो यत्न है, वह धर्मविचय है। वस्तुतः यह जिज्ञासा एवं उद्योग आधार पर निष्ठित एक यत्न का नाम है। इसलिए इसे प्रविचय लक्षण से युक्त कहा गया है। (३) वीर्य सम्बोध्याङ्ग :—वीर्य की चर्चा पूर्व में की जा चुकी है। सम्बोधि की प्राप्ति के लिए जो उत्साह या उद्यम है, उसे यहाँ बोध्याङ्ग के रूप में दर्शाया गया है। बोधि के अधिगम में हीन वीर्य से लाभ नही हो सकता है। इसलिए जहाँ स्मृति प्रज्ञा आदि की चर्चा आती है, वहां वीर्य का भी कथन होता है। केवल इस बात पर बल दिया जाता है कि इनका समत्व प्रतिपादन हो। (४) प्रीति सम्बोध्याङ्ग :—चित्त के प्रसन्न भाव को प्रीति कहते हैं। बोधि नामक लक्ष्य की प्राप्ति के लिए प्रतिपन्न पुरुष को क्षण-क्षण आशा एवं अह्लाद का संचार होना ही प्रीति है। यहाँ स्पष्टतः जान लेना चाहिए कि प्रीति और सुख चित्त के एक क्षेत्रिय धर्म होने पर भी उनमें स्वभावगत भेद है। इच्छित वस्तु की प्राप्ति के लिए नव-नव आशा के संचार पूर्वक उत्पन्न आनन्द का नाम प्रीति है तथा उस वस्तु के उपभोग जनित आनन्द का नाम सुख है।

अट्ठकथाओं में प्रीति के कई प्रकार बतलाये गये हैं। खुद्दिका-प्रीति, खणिका-प्रीति, ओक्कन्तिका-प्रीति, ऊवेग्गा-प्रीति तथा फरणा-प्रीति नामक इसके पांच भेद कई प्रसंगों में देखे जाते हैं। खुद्दिका प्रीति ऐसी प्रीति का नाम है, जो शरीर में रोमांच मात्र उत्पन्न करती है। खणिका-प्रीति एक बार उत्पन्न न होकर बिजली की भांति क्षण-क्षण में उत्पन्न होती है। ओक्कन्तिका-प्रीति समुद्र की तरंगों की भांति सम्पूर्ण शरीर में व्याप्त हो जाती है। उव्वेगा-प्रीति अत्यन्त बलवती होती है। शरीर में अत्यन्त लघु भाव उत्पन्न कर आकाश में उड़ने के सदृश बना देती है। फरणा-प्रीति उत्पन्न होकर सम्पूर्ण शरीर में व्याप्त हो उठती है। जिस प्रकार एक बहुत बड़ी बाढ़ से पर्वत के कन्दरा आदि जलपूर्ण हो उठते हैं, उसी प्रकार फरणा-प्रीति के उदय होने से शरीर में कोई भी ऐसा भाग नहीं रहता है, जो उससे अछूता हो। इस प्रकार इन पाँच प्रकार की प्रीतियों में समयानुरूप कोई न कोई प्रीति उत्पन्न होकर मनुष्य के हृदय को आनन्द से परिपूर्ण करती है। यहाँ पर बोधि के लिए चित्त में जिस प्रीति से आनन्द का प्रजनन होता है, उसे प्रीति सम्बोध्यांग कहते हैं। (५) प्रश्रब्धि सम्बोध्याङ्ग :—मन की शांति को प्रश्रब्धि कहते हैं। प्रश्रब्धि के उदय होने से चित्त और काय दोनों में पूर्ण शान्ति विद्यमान हो जाती है। मन की एकाग्रता में बाधक सभी तत्त्व शान्त हो जाते हैं। इस प्रकार सम्बोधि की प्राप्ति में जो अङ्ग के रूप में उपशम या उपशान्ति मन और शरीर को व्याप्त करता है, उसे प्रश्रब्धि सम्बोध्याङ्ग कहते हैं। (६) समाधि सम्बोध्याङ्ग :—चित्त की एकाग्रता को समाधि कहते हैं। यह समाधान लक्षण से युक्त होती है। चित्त, चैतसिक धर्मों का एक विषय पर सम्यक् आधान ही समाधान है। कहा जाता है कि किसी भी लक्ष्य के अधिगम में चित्त की एकाग्रता एक सहायक अंग है। जब तक चित्त किसी विषय पर एकाग्र नहीं होता है, तब

तक उसका अधिगम इष्ट नहीं है। बोधि की प्राप्ति में समाधि एक अङ्ग के रूप में सहायक होने के कारण समाधि की गणना एक सम्बोध्याङ्ग के रूप में की जाती है। अट्ठकथा में इसे अविक्षेप लक्षण सम्पन्न कहा गया है। (७) उपेक्षा सम्बोध्याङ्ग :—अदु:ख, असुख भाव को उपेक्षा कहते हैं। उपेक्षा के उदय होने से विषय के प्रति अनासक्ति भाव का उदय होता है। सभी विषयों से चित्त अपने को अनासक्त बना इच्छित वस्तु के प्रति अभिमुख होता है। इसलिए सम्बोधि की प्राप्ति में सहायक ऐसे अङ्ग को उपेक्षा सम्बोध्याङ्ग कहते हैं।

इस प्रकार इस सप्तक के अन्तर्गत सात सम्बोध्याङ्गों की गणना सात ऐसे धर्मों के रूप में की गई है, जो सर्वदा लाभप्रद हैं। कभी भी हानि नहीं कर सकते हैं।

(५) **पञ्चम सप्तक** :—इस सप्तक के अन्तर्गत सात प्रकार की संज्ञाओं की भावना पर बल दिया गया है। भावना का अर्थ अभ्यास है। ये मानसिक अभ्यास हैं। यथा :—

(१) अनित्य संज्ञा की भावना :—मनुष्य के अध्यात्मिक विकास में बाधक नित्य संज्ञा है। जब उसके मन में नित्य सद्वस्तु के होने की दृढ़ आस्था बन जाती है, वहीं से उसका विकास रुक जाता है। वह आत्मा जैसे नित्यवस्तु में विश्वास कर अपने को साधना से विमुख कर लेता है। नित्य सद्वस्तु में विश्वास एक प्रकार का ग्राह है। भगवान् ने इससे वचने के लिए उपदेश किया है। सर्वदा इस बात पर बल दिया है कि सभी धर्म अनित्य हैं। वे क्षण-क्षण उत्पन्न होते हैं, तथा निरूद्ध होते हैं। धर्मों के ऐसे स्वरूप के ज्ञान से उनके प्रति आसक्ति का परित्याग होता है। इस प्रकार से सभी धर्मों के प्रति अनित्य संज्ञा का अभ्यास करना ही अनित्य संज्ञा की भावना है। (२) अनात्म संज्ञा की भावना :— बौद्धेतर परम्परा में आत्मा नामक एक नित्य सद्वस्तु की मान्यता देखी जाती है। विशेषकर वैदिक परम्परा तथा जैन परम्परा में यह मान्यता है। इस मान्यता के अनुसार ऐसा विश्वास किया जाता है कि प्रत्येक प्राणी के व्यक्तित्व में आत्मा नामक एक नित्य सद्वस्तु विद्यमान है। जब तक यह नित्य सद्वस्तु विद्यमान है, तब तक उस व्यक्ति की स्थिति है। आत्मा के नहीं रहने पर उस पुरुष का व्यक्तित्व भी समाप्त हो जाता है। भगवान् बुद्ध ने ऐसी आत्मा की स्थिति को अत्यन्त मूर्खतापूर्ण स्थिति बतलाया है। क्योंकि आत्मा को मानने से शाश्वतवाद में विश्वास करने की बात आ जाती है। यदि नित्य आत्मा की स्थिति स्वीकार की जाय तो मनुष्य की बन्धन की अवस्था से मोक्ष की अवस्था में जाने की बात बिल्कूल व्यर्थ सिद्ध होगी। यदि वह बन्धन की अवस्था में रहेगा तो सर्वदा बन्धन की ही अवस्था में रहेगा। यदि वह मुक्त रहेगा तो सर्वदा मुक्त ही रहेगा। न तो शील, समाधि, प्रज्ञा से उसमें किन्हीं सद्गुणों का आगमन हो सकता है, न क्लेशों का प्रहाण ही। इसलिए भगवान् ने ऐसे नित्य सद्वस्तु का निराकरण करते हुए स्पष्ट शब्दों में दर्शाया है कि सभी धर्म अनात्म हैं। इस प्रकार सभी धर्मों को आत्मा नामक नित्य सद्वस्तु से रहित जानना ही अनात्म संज्ञा की भावना है। (३) अशुभ संज्ञा की भावना मनुष्य में सबसे बड़ी आसक्ति अपने शरीर के प्रति होती है। वह अन्य प्रकार

की आसक्तियों का परित्याग कर सकता है। पर अपने प्रति जो उसकी आसक्ति है, उसका परित्याग नहीं कर सकता है। वह अपने को तथा अपने से सम्बन्धित वस्तुओं को शुभ रूप या सुख रूप मानता है। यह उसकी मूर्खता है। वास्तविकता यह है कि यह शरीर अशुभ वस्तुओं का पुञ्ज मात्र है। केश, लोम, नख, दन्त, त्वचा अस्थि आदि से यह भरा हुआ है। कहा गया है कि यह हड्डियों का नगर है, जो त्वचा एवं मांस से घिरा हुआ है और लोभ, मोह, द्वेष, मान ईर्ष्या, मात्सर्य आदि अनेक अकुशल धर्म ही इसके नागरिक हैं। इसमें नौ द्वार हैं, जिनमें प्रत्येक द्वार से अपवित्र वस्तुओं का ही निःसरण होता है। यहां तक कि यदि इस शरीर के ऊपर के आवरण को हटा लिया जाय, तो स्थिति यह आ जायगी कि इसे कौवे और सियार से बचाना ही कठिन हो जायगा। इसका वास्तविक रूप तब देखने को मिलता है, जब यह श्मशान में फेंका हुआ अपने विवर्ण रूप में पाया जाता है। जो श्मशान का घृणास्पद रूप है, वही इसका यह रूप भी है। अन्तर इतना ही है कि त्वचा के आवरण से यहाँ यह आवृत्त है। इस प्रकार शरीर को अशुभ रूप में स्वीकार करना ही अशुभ संज्ञा की भावना है। (४) आदीनव संज्ञा की भावना :—आदीनव का अर्थ दोष होता है। गृही जीवन दुःख पूर्ण है, वाधाओं से परिवृत है तथा रजपूर्ण पथ है। ऐसे जीवन का संचालन करते हुए यह सुकर नहीं है कि एकान्ततः परिशुद्ध ब्रह्मचर्य जीवन का परिपालन हो। इस प्रकार गृही जीवन को दोषपूर्ण समझना ही आदीनव संज्ञा की भावना है। (५) प्रहाण संज्ञा की भावना :—प्रहाण का अर्थ त्याग होता है। मनुष्य जिन वस्तुओं में ममत्व का भाव स्थापित करता है, वे वस्तुएँ तथा रूप नहीं हैं। भ्रमवश ऐसी प्रतीति होती है, कि ये वस्तुएँ उसकी हैं। वे तो अनित्य प्रवाह में होने के कारण क्षण-क्षण उससे दूर होती जा रही हैं। ऐसी अनित्य वस्तुओं के प्रति ममता का परित्याग इष्ट है। इन सभी वस्तुओं के प्रति ममता अकरणीय है। इस प्रकार विचारना ही प्रहाण संज्ञा की भावना है। (६) विराग संज्ञा की भावना :— विगतराग भाव को वैराग्य कहते हैं। राग का अर्थ आसक्ति है। आसक्ति वस्तुओं के प्रति होती है, जिनसे अहं तथा मम भाव लगा रहता है। जब तक आसक्ति की भावना बनी रहती है, तब तक तृष्णा दृढ़तर होती जाती है। तृष्णा के दृढ़ रूप से बने रहने के कारण संसार बन्धन दृढ़तर बना रहता है। बुद्ध ने कहा है कि यह तृष्णा ही पुनः पुनः भव में आसक्ति उत्पन्न करती है, जिससे दुःख की शृंखला सर्वदा नवीन होती रहती है। इसलिए तृष्णा के प्रति वैराग्य ही इष्ट है। उससे अशेष वैराग्य ही निवार्ण कहलाता है। तृष्णा के दोषों को जानकर उसके प्रति वैराग्य का अभ्यास करना ही विराग संज्ञा भावना है। (७) निरोध संज्ञा भावना : निरोध का अर्थ परिसमाप्ति है। तृष्णा के निरोध को निर्वाण कहते हैं। निर्वाण की अवस्था में सम्पूर्ण पूर्व संचित संस्कारों का निरोध हो जाता है। नये संस्कारों की उत्पत्ति क्षीण हो जाती है। चित्त भविष्य की उत्पत्ति से विरत हो जाता है। पुनर्जन्म के साधक सभी बीजों का निरोध हो जाता है। इस प्रकार तृष्णा के निरोध का अभ्यास करना ही निरोध संज्ञा का अभ्यास है। इस दृष्टि से भगवान बुद्ध ने इस सप्तक के अन्तर्गत सात प्रकार की संज्ञाओं की भावना पर बल दिया है।

(६) **अन्तिम षष्टक :**—भगवान् बुद्ध ने भिक्षुओं के लिए अपरिहानिय धर्मों का कथन पाँच सप्तकों के अन्तर्गत करने के उपरान्त एक षष्टक के शीर्ष में भी छः बातों का उल्लेख किया है। इनमें कही हुई छः बातें धार्मिक जीवन को दृढ़ तथा सफल बनाने में परम सहायक हैं। यथा :—

(१) मैत्री पूर्ण काय-कर्म करना :—एक पुरुष गृह त्याग प्रव्रजित का जीवन अपनाता है। उसके गृह जीवन में पुत्र कलत्र आदि का एक दृढ़ स्नेह बन्धन रहता है। प्रव्रजित हो संघ में आने पर सहब्रह्मचारी ही उसके परिवार के सदस्य होते हैं। इसलिए यहां आकर उसके लिए परम आवश्यक है कि उन सहब्रह्मचारियों के प्रति मैत्रीपूर्ण काय-कर्म करे। कर्म वस्तुतः मानसिक ही होते हैं। कायद्वार से प्रवृत्त होने के कारण वे काय-कर्म कहलाते हैं। उन काय कर्मों के मूल में मैत्री विद्यमान हो एवं उससे प्रेरित हो इन कार्यों की प्रवृत्ति देखी जाय, तो इसे मैत्रीपूर्ण काय-कर्म कहा जा सकता है। स्पष्ट शब्दों में अद्वेष और अमोह नामक दो कुशल हेतुओं से युक्त होकर कार्य की प्रवृत्ति ही मैत्रीपूर्ण काय-कर्म है। (२) मैत्री पूर्ण बाचसिक-कर्म करना :—वची-द्वार से प्रवृत्त कर्म को वची-कर्म या वाचसिक कर्म कहते हैं। वची द्वार से प्रवृत्त ऐसे कर्मों के मूल में अद्वेष अमोह की प्रेरणा का होना मैत्रीपूर्ण वची-कर्म कहा जा सकता है। प्रव्रजितों के लिए यह विहित है कि संघ जीवन में सब्रह्मचारियों के प्रति ऐसे वची-कर्म का प्रयोग करें जो मैत्रीपूर्ण हों। ऐसा होने से वह व्यक्ति भी लाभान्वित होता है तथा जिनके प्रति इन कर्मों का प्रयोग होता है वे भी लाभान्वित होते हैं। इसलिए मैत्रीपूर्ण वची-कर्म से उभयपक्षीय लाभ है। (३) मैत्रीपूर्ण मनो-कर्म करना:—बौद्ध परम्परा के अनुसार सभी कर्म मनो-कर्म ही है। मन के धरातल पर सर्वप्रथम ऐसा निर्णय होता है कि यह करना चाहिए और उसी की प्रवृत्ति कायद्वार से होने पर काय-कर्म तथा वची-द्वार से होने पर वची-कर्म कहलाता है। जब उसकी प्रवृत्ति केवल मनोद्वार पर ही देखी जाती है, तब उसकी संज्ञा मनोकर्म होती है। मैत्रीपूर्ण मनो-कर्म के होने का अर्थ है अद्वेष अमोह तथा अलोभ नामक तीन कुशल हेतुओं से युक्त होकर कार्य का होना अथवा अलोभ अद्वेष और सम्यक् दृष्टि ही कुशल मनो-कर्म हैं। इन्हीं शुभ भावनाओं से युक्त होकर सब्रह्मचारियों के प्रति सद्व्यवहार करना मैत्रीपूर्ण मनो-कर्म करना है। (४) धर्म-लाभी होना:—लाभ दो प्रकार के होते हैं। आमिष-लाभ तथा धर्म-लाभ। आमिष-लाभ के अन्तर्गत उन समस्त सांसारिक वस्तुओं का लाभ है जो भव बन्धन में साधक हैं। धर्म-लाभ से उन सद्गुणों का लाभ अभिप्रेत है, जो भव बन्धन को भग्न करने में साधक हैं। धर्म शब्द से यहां कुशल धर्म अभिप्रेत है। अकुशल धर्मों का परित्याग कर कुशल धर्मों का संग्रह ही धर्म-लाभ है। जितने अधिक कुशल धर्मों का संग्रह होता है उतनी ही चित्त परिशुद्धि में वृद्धि होती है। इस सम्बन्ध में आमिष-लाभ के प्रति भी एक उदार दृष्टिकोण रखना आवश्यक बतलाया गया है। भिक्षाचार वेला में भिक्षु को अपने पात्र में जिस किसी वस्तु की प्राप्ति हो, उसे वह अपने सब्रह्मचारियों में समान रूप से बाँटकर ही उपभोग करे। यह मैत्री अभिवर्द्धन में सहायक समझा जाता है। (५) अखण्ड शील का

पालन करना:—शील बौद्ध साधना का आधार है। शील पर प्रतिष्ठित होकर ही एक प्रव्रजित बौद्ध साधना में अग्रसर होता है, जब तक कुलपुत्र की शील में प्रतिष्ठा नहीं होती है, तब तक उसकी साधना में प्रतिष्ठा भी नहीं होती है। इसलिए बौद्ध साधना का आदि रूप से परिपालनीय धर्म शील है। शील का परिपालन अखंड रूप से होना चाहिए। जब तक प्रव्रजित शील का अखंड रूप से परिपालन करते हैं एवं उसमें किसी प्रकार का व्यतिक्रम नहीं होने देते हैं, तब तक उनके अध्यात्मिक जीवन में वृद्धि ही होती रहती है। इसलिए जीवन का उत्सर्ग करके भी शील का पूर्ण रूप से परिपालन युक्त बतलाया गया है। (६) दुःख क्षय की दृष्टि से सम्पन्न होना:— भगवान बुद्ध द्वारा आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग का प्रतिपादन किया गया है। इस मार्ग के अनुसरण से दुःख का सर्वदा के लिए विनाश हो जाता है। बुद्ध ने अपनी आदि देशना धर्म चक्रप्रवर्त्तन सुत्त में स्पष्टतः निर्देश किया है कि जन्म लेना, व्याधिसम्पन्न होना, मृत्यु को प्राप्त करना, प्रियजनों से विछोह होना, अप्रिय जनों से संयोग होना, इच्छित वस्तुओं को न प्राप्त करना तथा संक्षेप में पंचुपदान स्कन्धों का लाभ करना ही दुःख है। इस दुःख की निवृत्ति के लिए उन्होंने एक मार्ग का प्रतिपादन किया है। उसे दुःख निरोधगामिनि प्रतिपदा या आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग कहते हैं। भिक्षु के लिए यह विहित है कि पूर्ण निष्ठा के साथ इस मार्ग पर अपने सब्रह्मचारियों के साथ विहार करे।

इस प्रकार उक्त अपरिहानिय धर्मों के विश्लेषण से देखा जा सकता है कि भगवान् बुद्ध ने इनके माध्यम से ऐसे इकतालिस नियमों का विधान किया है, जिनके परिपालन से आध्यात्मिक जीवन में सर्वदा लाभ ही हो सकता है। वहाँ कभी भी किसी प्रकार की हानि का नाम नहीं है। इस दृष्टि से ही उन्होंने उन्हें अपरिहानिय धर्म कहा है।

भगवान बुद्ध की अंतिम यात्रा

महापरिनिब्बानसुत्त कई दृष्टियों से महत्वपूर्ण है। इस सुत्त में आगत अपरिहानिय धर्मों की चर्चा की जा चुकी है। उनके अतिरिक्त भी कई उपयोगी तथ्यों का यहाँ समागम है। भगवान बुद्ध के मुख से ही अपनी अन्तिम यात्रा के सम्बन्ध में जो विवरण उपलब्ध है, वह बौद्ध शासन में विशिष्ट स्थान रखता है। उनके जीवन का अंतिम भाग वर्षों की साधना जनित अनुभव से परिपूर्ण था। उस समय जो बातें उनके मुख से निकलीं हैं, वे बहुमूल्य हैं।

प्रसंग इस प्रकार देखा जाता है कि भगवान बुद्ध आनन्द के साथ राजगृह में विहार कर रहे हैं। वे एकाएक आनन्द से प्रस्थान के लिए कहते हैं। यात्रा अतुरित चारिका से प्रारंभ होती है। वे क्रमशः मार्गस्थ ग्रामजनों को अपने उपदेशों से आप्लावित करते हुए कुशीनारा पहुंचते हैं तथा वहीं उनका परिनिर्वाण होता है।

यह यात्रा कैसे प्रारंभ होती है? राजगृह के गृद्धकूट पर्वत पर भगवान बुद्ध का बिहार हो रहा है। भगवान धार्मिक कथाओं से भिक्षुओं को लाभान्वित कर रहे

हैं। उनके ये उपदेश साधना के मूल विन्दुओं पर आधारित हैं। वे बल देते हुए दर्शाते हैं कि उनकी साधना के तीन चरण हैं—शील, समाधि तथा प्रज्ञा। इनका क्रमशः परिपालन इष्ट है। "शील-परिभावित समाधि महा फलवती एवं महानिशंसयुक्त होती है। समाधि-परिभावित प्रज्ञा महा फलवती एवं महानिशंसयुक्त होती है। प्रज्ञा-परिभावित-चित्त कामस्रव, भवास्रव तथा अविद्यास्रव नामक मलों से सम्यक् रूप से मुक्त हो जाता है"।

यहां द्रष्टव्य है कि शील बौद्ध साधना का आधार है। यह शिला या आधार शिला के अर्थ में शील है। जिस प्रकार सभी प्रकार के तृणलतादि पृथ्वी नामक आधार में प्रतिष्ठित होते हैं, उसी प्रकार समस्त कुशल धर्मों का आधार शील है। शील के सम्यक् परिपालन से कायिक तथा वाचसिक दुराचरणों का निषेध हो जाता है। जो कोई भी काय-कर्म या वची-कर्म होते हैं, वे शुद्ध होते हैं। उसी प्रकार समाधि से मानसिक दुराचारों का निषेध होता है। शुद्ध मन रूप एवं अरूप आलम्बनों पर एकाग्रता प्राप्त करता है। प्रज्ञा के उदय से धर्मों के स्वरूप का यथार्थ बोध हो जाता है। फलस्वरूप चित्त आसक्ति रहित परमपरिशुद्ध हो जाता है। यही निर्वाण है। इस प्रकार शील समाधि तथा प्रज्ञा नामक तीन चरणों से युक्त जो भगवान का साधना पथ है, उसका वे पुनः पुनः कथन, विश्लेषण एवं प्रकाशन करते हैं।

राजगृह में इच्छानुकूल विहार करने के उपरान्त भगवान की इच्छा वहां से चलने की होती है। वे आनन्द को आमन्त्रित करते हुए कहते हैं—"चलो, आनन्द, जहां अम्बलट्ठिका है, वहा चलें" इस वचन के कुछ ही क्षण के उपरान्त उनकी चारिका प्रारंभ हो जाती है। मार्गस्थ ग्राम के जिज्ञासुओं को धर्मामृत का पान कराते हुए वे उसी दिन सूर्यास्त के पूर्व अम्बलट्ठिका पहुंच जाते हैं। यह नालन्दा तथा राजगृह के मध्य राजपथ पर स्थित एक विहार था। राजा द्वारा बनाये जाने के कारण उसे राजागारक कहा जाता था। विहार के द्वार पर दो तरुण आम्र वृक्ष थे। इसलिए वह अम्बलट्ठिका के नाम से भी अभिज्ञात था। वहां भी विहार करते हुए भगवान की धर्म कथा का प्रवाह पूर्ववत् देखा जाता है, जिसके विचार्य विषय शील, समाधि तथा प्रज्ञा देखे जाते हैं।

अम्बलट्ठिका में यथेच्छ विहार के उपरान्त भगवान नालन्दा पहुँचते हैं। वहाँ भी उनका शील, समाधि तथा प्रज्ञा-विषयक उपदेश पुनः पुनः उद्गीत होता है। ऐसा प्रतीत होता है कि वे साधना के इन चरणों को जन-जन के मानस पर अमिट छाप के रूप में छोड़ देना चाहते हैं। इस प्रसंग में भगवान बुद्ध तथा धर्मसेनापति सारिपुत्र के मध्य एक मधुर संलाप देखा जाता है। इस संलाप की यहाँ कोई पूर्व पीठिका नहीं देखी जाती है। सारिपुत्र के उद्गार रूप इसकी प्रवृत्ति होती है तथा बुद्धों के समान-धर्मों की ओर इससे कुछ संकेत देखे जाते हैं।

सारिपुत्र सहसा कह उठते हैं—"भन्ते, मेरा ऐसा विश्वास है कि सम्बोधि में भगवान से बढ़कर कोई अन्य श्रमण ब्राह्मण न अतीत में हुआ, न भविष्य में होगा, न

वर्तमान में है ही"। भगवान ने सारिपुत्र से ऐसे उदार वचन का आधार जानना चाहा। सारिपुत्र ने बतलाया कि यद्यपि उन्होंने अपने चित्त से त्रयकालिक सम्बुद्धों की उपलब्धियों तथा चर्या को नहीं जाना है, पर उन्हें बुद्धों की धर्म-अन्वयता ज्ञात है। जो बुद्ध हो चुके हैं, होंगे या अभी हैं, उनमें एक धर्म-समानता है। सभी बुद्धों द्वारा प्रज्ञा को दुर्बल करने वाले उपक्लेशों, तथा पंच नीवरणों का परित्याग, चार स्मृति-प्रस्थानों में स्थिति, तथा सात बोध्यांगों की भावना पूर्वक अलौकिक सम्यक् सम्बोधि की प्राप्ति की जाती है। इसी आधार पर उन्होंने ऐसे आर्ष वचन का उद्गीरण किया है। सारिपुत्र की इस व्याख्या से भगवान संतुष्ट प्रतीत होते हैं।

इसके उपरान्त भगवान पाटलिग्राम पहुँचते हैं। भगवान के आगमन से वहाँ के उपासकों के आनन्द की सीमा नहीं है। उन लोगों ने अपने आवस्थागार में उनके रहने की सुन्दर व्यवस्था की। भगवान ने उस रात उन्हें शील विपत्ति एवं शील सम्पत्ति के पाँच-पाँच दोषों एवं गुणों की चर्चा की। जो पुरुष शील से विपन्न होता है, उसे ऐसी विपन्नता के कारण पाँच दोष अनायास चले आते हैं। यथा—(१) वह आलस्य बहुल होने के कारण अपनी भोगराशि को खो देता है; (२) निन्दा का पात्र बनता है; (३) क्षत्रिय, ब्राह्मण, गृहपति या श्रमण, जिस किसी सभा में जाता है, मूक होकर जाता है, (४) मूढ़ रह मृत्यु को प्राप्त करता है तथा (५) मरने के उपरान्त दुर्गति को प्राप्त करता है। इसके विपरीत शील सम्पन्न पुरुष अपने शुद्धाचार के कारण पाँच गुणों से उपेत होता है। यथा—(१) सदाचार के फलस्वरूप वह पुरुष अप्रमाद के कारण एक बड़ी भोग राशि को प्राप्त करता है, (२) उसका मंगलमय यश फैलता है, (३) वह जिस किसी सभा में जाता है, मूक न होकर विशारद हो जाता है, (४) मूढ़ न होकर, एक ज्ञानी के रूप में मृत्यु को प्राप्त करता है, (५) तथा वह सदाचार के कारण मरणोपरान्त स्वर्ग को प्राप्त करता है। इस प्रकार शील विपत्ति के दोषों एवं शील सम्पत्ति के गुणों की चर्चा कर भगवान ने वहाँ के उपासकों को सन्तुष्ट किया।

इसी प्रसंग में पाटलिपुत्र नामक नगर के निर्माण एवं भगवान बुद्ध द्वारा उसके उद्घाटन की चर्चा आती है। कहा जाता है कि जिस द्वार से भगवान ने उस नगर में प्रवेश किया, वह गौतम द्वार कहलाया। जिस घाट से उन्होंने गंगा नदी को पार किया वह गौतम तीर्थ कहलाया। भगवान ने पुनः पाटलिपुत्र के एक सुदृढ़ नगर होने तथा उसके ऊपर आने वाले अन्तरायों (विपत्तियों) के सम्बन्ध में भविष्यवाणी करते हुए कहा—"आनन्द, जितने आर्य जनों के नगर हैं, जितने व्यापारिक केन्द्र हैं, पाटलिपुत्र उनमें अग्र होगा। इसके तीन अन्तराय होंगे। वे हैं—आग, जल एवं आन्तरिक कलह[१]।

पाटलिपुत्र के बाद भगवान कोटिग्राम पहुँचते हैं। कोटिग्राम में विहार करते हुए उन्होंने इस तथ्य को स्पष्ट किया कि भवचक्र की प्रवृत्ति इसलिए होती है कि

---

१. तयो अन्तराया भविस्सन्ति, अग्गितो वा उदकतो वा मिथुभेदा वा ति। दी० नि० २.७१।

मनुष्य आर्य सत्यों को यथार्थतः नहीं जानता है। चार आर्य सत्यों के यथार्थावबोध से भव तृष्णा उच्छिन्न हो जाती है तथा वह परम सुखप्रद पद निर्वाण को प्राप्त कर विहार करता है।

कोटिग्राम के अनन्तर भगवान का विहार नादिका के गिंजकावसथ में देखा जाता है। वहाँ पर भगवान को साल्ह, नन्दा, सुदत्त आदि भिक्षु तथा उपासकों की मृत्यु की सूचना दी जाती है, तथा उनकी गति-विषयक प्रश्न किया जाता है। भगवान ने इस प्रसंग में पूर्ण विवरण के साथ उनकी गति को बतलाया है। यथा—"आनन्द, साल्ह भिक्षु इसी जन्म में आस्रवों के क्षय से आस्रव रहित चित्त-विमुक्ति, प्रज्ञा-विमुक्ति को स्वयं जान, साक्षात्कार कर विहार कर रहा था" आदि। इस न्याय से सबकी गति का विवरण देते हुए उन्होंने आनन्द से कहा कि "यह ठीक नहीं कि जो कोई मनुष्य मरे उसके मरने पर तथागत के पास आकर उनकी गति के सम्बन्ध में पूछा जाय। यह तथागत को कष्ट देना है।" साथ ही उन्होंने यह भी बतलाया कि 'धर्मादास' से युक्त होना चाहिए। इससे युक्त होने पर मनुष्य स्वयं ही अपने भविष्य के सम्बन्ध में कथन कर सकता है।

यह धर्मादास क्या है? इससे कैसे मनुष्य सम्पन्न हो सकता है? धर्मादास धर्म जन्य दर्पण का नाम है। जिस प्रकार दर्पण के सम्मुख खड़ा होकर मनुष्य अपने सम्पूर्ण-रूप को यथार्थतः देख लेता है, उसी प्रकार धर्म दर्पण के अधिगम से वह अपने भविष्य को स्पष्टतः देख सकता है। धर्म-दर्पण की प्राप्ति के लिए बुद्ध, धर्म तथा संघ में कम्पन रहित श्रद्धा होनी चाहिए तथा शील का अखण्ड रूप से पालन होना चाहिए। इस कथन के अनन्तर भगवान ने पूर्ववत बल देते हुए शील, समाधि, तथा प्रज्ञा की चर्चा की—इति शीलं, इति समाधि, इति पञ्ञा, सीलपरिभावितो समाधि महप्फलो होति महानिसंसो, समाधिपरिभाविता पञ्ञा महप्फला होति महानिसंसा, पञ्ञापरिभावितं चित्तं सम्मदेव आसवेहि विमुच्चति; सेय्यथिदं कामासवा, भवासवा, अविज्जासवा" ति (दी० नि० २.७६)।

नादिका में यथेच्छ विहार के अनन्तर भगवान वैशाली पहुँचते हैं। वहाँ अम्बपालि द्वारा निर्मित विहार में उनका निवास होता है। विहार सुरम्य स्थान में बना था तथा सभी प्रकार के सन्तोचित उपकरणों से युक्त था। भगवान के साथ गये भिक्षु भी यथोचित स्थान ले ठहर गये। धीरे-धीरे दिवस का अन्त हुआ, रात्रि का प्रथम प्रहर प्रारम्भ हुआ। भगवान ने भिक्षुओं को सम्बोधित कर 'स्मृति सम्प्रजन्य' से युक्त होकर विहार करने का उपदेश किया। इसे ही उन्होंने अपना अनुशासन बतलाया।

स्मृति-भावना के चार चरण होते हैं:—कायानुपश्यना, वेदनानुपश्यना, चित्तानुपश्यना तथा धर्मानुपश्यना। काय, जिस पर मनुष्य गर्व करता है, जिसे वह शुभ मानता है, वह वस्तुतः केश लोमादि बत्तीस विकारों का पुञ्जमात्र है। उसको तथारूप देखना ही कायानुपश्यना है। सुखावेदना, सोमनस्सवेदना, दुःखा वेदना दोमनस्स

वेदना तथा उपेक्षा वेदना नामक पाँच वेदनायें हैं। जिस समय जो वेदना उत्पन्न होती है, उसे उस रूप में जानना ही वेदनानुपश्यना है। सरागचित्त, सद्वेषचित्त, समोह-चित्त आदि के कई रूप हैं। जिस क्षण जिस प्रकार का चित्त उत्पन्न हो, उसको उसी रूप में जानना चित्तानुपश्यना है। धर्म के अन्तर्गत नीवरण, स्कन्ध, आयतन, धातु तथा सत्य का कथन किया गया है। इनके यथार्थ स्वरूप को तथारूप जानना ही धर्मानुपश्यना है। इस प्रकार इन चार चरणों का सतत जागरूकता के साथ यथार्थ रूप को जानना स्मृति के साथ विहार करना है।

संप्रज्ञ विहार के सम्बन्ध में भगवान ने कहा है कि भिक्षु को अपने सभी कर्मों को करते हुए जानते हुए करना चाहिए। चलना, फिरना, आगे देखना, पीछे देखना, बाहों को पसारना, समेटना, पात्र-चीवर धारण करना, खाना, पीना, सोना, जागना आदि उसके दैनिक जीवन के कार्य हैं। इन कामों को करते हुए भिक्षु उन्हें जानते हुए करे। कोई भी काम उसके किसी द्वार से ऐसा न हो जो उससे बिना जाने प्रवृत्त होता हो। ऐसे विहार को संप्रज्ञ-विहार कहा गया है—"सतो, भिक्खवे, भिक्खु विहरेय्य, सम्पजानो। अयं वो अम्हाकं अनुसासनी ति"।

इस प्रसंग में अम्बपाली द्वारा भिक्षु संघ सहित महादान की चर्चा देखी जाती है। अम्बपाली लिच्छवी गणतन्त्र की जनपद-कल्याणी थी। ज्योंही उसे यह सूचना मिली कि भगवान उसके आम्रवन में विहार कर रहे हैं, त्योंही वह सुन्दर यान से भगवान् के निकट पहुँची। बुद्ध ने अनुक्रमिक धार्मिक कथाओं से उसको संतृप्त किया। हृदय में प्रसाद की अधिकता से उसने भगवान् से प्रार्थना की कि वे भिक्षु सहित उसके घर दूसरे दिन भोजन स्वीकार करें। भगवान् ने तुष्णी भाव से उसकी स्वीकृति दी। जब लिच्छवियों को यह बात मालूम हुई, तो उनलोगों ने अपने को अम्बपाली से पराजित समझा। उनके पुनः पुनः आग्रह पर भी अम्बपाली ने इस बात को नहीं स्वीकार किया कि भिक्षु सहित भगवान् लिच्छवियों के घर भोजन करें। दूसरे दिन अम्बपाली ने अपने घर विभिन्न प्रकार के खाद्य, भोज्य, लेह्य, पेय आदि प्रकार के भोजन बना भगवान् को सूचना दी। पूर्वाह्न समय भगवान ने भिक्षु संघ सहित पात्र चीवर ले अम्बपाली गणिका के घर पधार कर सुरुचिपूर्ण भोजन किया। भोजनोपरान्त अम्बपाली ने अपने आम्रवन को बुद्धप्रमुख भिक्षु संघ के लिए दान दिया—"इमाहं, भन्ते, आरामं बुद्धप्पमुखस्स भिक्खुसंघस्स दम्मी ति। बुद्ध ने इस दान का ग्रहण सुन्दर धार्मिक कथाओं के साथ किया। कहा जाता है कि इस प्रसंग में भी उन्होंने शील, समाधि एवं प्रज्ञा पर बल दिया।

वैशाली के बाद भगवान वेलुग्राम पहुँचे। वहां 'वेलुग्रामके' नामक विहार में उन्होंने वर्षावास प्रारम्भ की। जो भिक्षु उनके साथ थे, उनलोगों ने भी वैशाली के पार्श्व में उचित स्थानों को देखकर वर्षावास प्रारम्भ किया।

इस बीच भगवान असह्य पीड़ा के साथ अस्वस्थ हुए। उनकी वेदना इस प्रकार असह्य थी, मानों उससे मरण हो जायेगा। उन्होंने ऐसी वेदना को स्मृतिवान और

संप्रज्ञ होकर सहन किया। उन्होंने सोचा कि यह मेरे लिए उचित नहीं है कि अपने सेवकों को बिना सूचित किये तथा भिक्षु संघ को बिना संतुष्ट किये निर्वाण को प्राप्त करूँ। ऐसा विचार वे वीर्य के सहारे रोग को शाँत कर जीवित संस्कार के बल विहार करने लगे। क्रमशः उनका वह रोग शान्त हो गया। भगवान को स्वस्थ्य होने से आनन्द तथा अन्य भिक्षु बड़े प्रसन्न हुए। आनन्द ने अपने विश्वास को व्यक्त करते हुए यहाँ तक कहा कि "भगवान तबतक महापरिनिर्वाण नहीं प्राप्त करेंगे, जबतक भिक्षु संघ को कुछ कह न लेंगे"।

आनन्द की इस बात को सुनकर बुद्ध द्वारा स्पष्ट वचन निसृत हुआ कि "अब भिक्षु संघ को उनसे कुछ नहीं आशा करनी चाहिए। जो कुछ भी धर्म उन्होंने अर्जित किया, उसे पूर्ण रूप से भिक्षु संघ को दे दिया। तथागत को कोई भी आचार्य मुष्ठि नहीं है। उन्हें ऐसी भी धारणा नहीं है कि वे भिक्षु संघ को धारण करते हैं या भिक्षु संघ उनके उद्देश्य से है"। इव प्रसंग में भगवान ने अपने वृद्ध होने के सम्बन्ध में जो व्यक्त किया, वह अत्यन्त कारुणिक है—"आनन्द, मैं जीर्ण वृद्ध महल्लक अध्वगत वयप्राप्त हूँ। मेरी आयु अस्सी वर्ष की हो गई है। जिस प्रकार एक जीर्ण शकट (पुरानी गाड़ी) जिस किसी प्रकार से बांध बूंधकर चलती है, उसी प्रकार ही तथागत का शरीर भी बांध-बूंध कर चल रहा है"। इन शब्दों में अपनी वृद्ध अवस्था का एक परिचय देते हुए भगवान ने अपने शान्त विहार का भी सुन्दर चित्र दिया है। उन्होंने आनन्द को सम्बोधित करते हुए बतलाया कि—"जिस समय तथागत समस्त निमित्तों को मन में न करने से वेदनाओं के निरोधपूर्वक निमित्त रहित चित्त की समाधि को प्राप्त कर विहार करते हैं, उस समय ही उनके शरीर का सुख पूर्वक परिहरण होता है। उनके ये वचन इस तथ्य के प्रकाशक हैं कि उनका शरीर सुखपूर्वक परिहरण के योग्य अब नहीं रहा, पर समाधि द्वारा उसमें अनुकूलता लाकर तथागत का फासुविहार होता है।

बुद्ध ने इस प्रसंग में स्पष्ट रूप से दर्शाया कि भिक्षु संघ उनसे अब किसी प्रकार की आशा न करे। प्रत्येक भिक्षु आत्मदीप, आत्मशरण, धर्मदीप, धर्मशरण होकर विहार करे। यह आत्मदीप एवं आत्मशरण विहार कैसे सम्भव हो सकता है, इसको प्रकाशित करते हुए उन्होंने स्मृति की भावना पर बल दिया। कायानुपस्सना, वेदनानुपस्सना, चित्तानुपस्सना तथा धम्मानुपस्सना नामक जो चार स्मृति-भावना के प्रकार हैं, उनका, लोभ-द्वेष परित्याग पूर्वक यथा निर्दिष्ट विधि से अभ्यास करना ही आत्मदीप एवं आत्मशरण तथा धर्मदीप एवं धर्मशरण हो विहार करना है।

दूसरे दिन भगवान ने पूर्वाह्न समय में वैशाली में भिक्षाचार कर आनन्द के के साथ चापाल चैत्य में पदार्पण किया। उन्होंने वैशाली, उदयन चैत्य, गौतमक चैत्य, सत्तम्बक चैत्य, बहुपुत्त चैत्य, सारन्द चैत्य, चापाल चैत्य आदि का उल्लेख करते हुए उन्हें रमणीय बतलाया। साथ ही आनन्द को सम्बोधित करते हुए कहा—"हे आनन्द, जिसने चार ऋद्धिपादों का सम्यक् अभ्यास कर लिया है, वह यदि चाहे तो

कल्प भर या, कल्प के बचे काल तक जी सकता है। तथागत ने भी इन चार ऋद्धिपादों की भावना अच्छी तरह कर ली है। इसलिए यदि तथागत चाहें, तो कल्प भर ठहर सकते हैं, या कल्प के बचे काल तक"। तथागत ने इन शब्दों द्वारा अपने जीवित रहने के प्रति स्थूल संकेत किया। पर "ऐसे स्थूल संकेत करने पर भी, स्थूलतः प्रकट करने पर भी आयुष्मान् आनन्द नहीं समझ सके। तथा उन्होंने भगवान से ऐसी प्रार्थना भी न की कि—'भन्ते भगवान् बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय कल्प भर ठहरें; क्योंकि मार द्वारा उनका चित्त दुषित हो उठा था[1]"। भगवान् ने तीन बार ऐसा स्थूल संकेत किया, पर आनन्द ने किसी बार भी उनसे जीवित रहने के लिए याचना न की।

भगवान बुद्ध के चापाल चैत्य में विहार करते हुए मार की याचना का प्रसंग देखा जाता है। जब भगवान वहाँ अकेले बैठे थे तो मार वहाँ पहुँचा तथा एक ओर खड़े हो विनम्र भाव से भगवान से याचना की कि—"भन्ते, भगवान अब परिनिर्वाण प्राप्त करें, सुगत अब परिनिर्वाण प्राप्त करें। यह भगवान के परिनिर्वाण का समय आ गया है"। पुनः मार ने इस प्रसंग पर बल देते हुए कहा कि भगवान द्वारा पूर्व में ऐसा कहा जा चुका है कि—"मैं तब तक परिनिर्वाण प्राप्त नहीं होऊंगा, जब तक मेरे भिक्षु श्रावक व्यक्त, विनय युक्त, विशारद, बहुश्रुत, धर्मधर, धर्मानुसार धर्म-मार्ग पर आरूढ़, सम्यक् मार्ग पर आरूढ़, अनुधर्मचारी नहीं होंगे, अपने सिद्धान्त को सीख कर उपदेश, आख्यान, प्रज्ञापन, प्रतिष्ठापन, विवरण, सरलीकरण न करने लगेंगे, दूसरे द्वारा उठाये आक्षेप को धर्मानुसार खण्डन करके युक्ति के साथ धर्म का उपदेश नहीं करने लगेंगे। इस समय, भन्ते, भगवान के भिक्षु श्रावक उक्त प्रकार से धर्म का उपदेश कर रहे हैं। अतः भन्ते, भगवान परिनिर्वाण प्राप्त करें"।

पापी मार भगवान बुद्ध के सम्मुख पुनः पुनः उनके परिनिर्वाण प्राप्त करने की याचना की तथा भगवान ने स्पष्टतः बतलाया कि वे तबतक परिनिर्वाण नहीं प्राप्त करेंगे, जबतक भिक्षु भिक्षुणी उपासक उपासिकायें उक्त ढंग से धर्म में विशिष्ठता नहीं प्राप्त कर लेती हैं तथा तथागत प्रतिपादित धर्म समुन्नत, सुदृढ़, विस्तारित, बहुजनगृहीत हो मनुष्यों एवं देवताओं तक सुप्रकाशित नहीं हो जाता है। इतना कहने के उपरान्त उन्होंने मार को सम्बोधित करते हुए पुनः कहा कि—पापी मार, चिन्ता न करो, शीघ्र ही तथागत का परिनिर्वाण होगा। आज से तीन महीनों के बाद तथागत परिनिर्वाण को प्राप्त करेंगे। उसके कुछ ही क्षण बाद उन्होंने जीवनी शक्ति (आयुसंखार) का परित्याग किया। आयुसंखार के परित्याग होते ही भीषण भूचाल हुआ, देव दुंदुभियां बज उठी। भगवान के मुख से उद्गार निकल पड़ा :—

---

१. "तथागतस्स खो, आनन्द, चत्तारो इद्धिपादा भाविता बहुलीकता यानीकता वत्थुकता अनुट्ठिता परिचिता सुसमारद्धा, सो आकंखमानो, आनन्द; तथागतो कप्पं वा तिट्ठेय्य, कप्पावसेसं वा" ति। एवं पि खो आयस्मा आनन्दो भगवता ओलारिके निमित्ते कयिरमाने ओलारिके ओभासे कयिरमाने ना सक्खि पटिविज्झितुं; न भगवन्तं याचि—तिट्ठतु भन्ते, भगवा कप्पं, तिट्ठतु सुगतो कप्पं बहुजनहिताय बहुजनसुखाय......यथा तं मारेन परियुट्ठितचित्तो। दी० नि० २.८१।

"तुलमतुलं च संभवं, भवसंखारमवस्सजि मुनि ।
अज्झत्तरतो समाहितो, अभिन्दि कवचमिवत्तसंभवं ।।

ज्योंही तथागत ने जीवनी शक्ति का परित्याग किया, त्योंही भयंकर भूकम्प हुआ । आनन्द इसके कारण को नहीं समझ सके । उन्होंने समय पाकर भगवान से इसके कारण को पूछा । इस प्रसंग में बतलाया गया है कि भूकम्प आठ कारणों से होता है । वे इस प्रकार हैं—

(१) पृथ्वी जल पर प्रतिष्ठित है, जल वायु पर प्रतिष्ठित है, वायु आकाश में स्थित है । कभी वायु का प्रकोप होता है, जिससे जल प्रकम्पित हो जाता है । इसके प्रकम्पन से पृथ्वी काँप जाती है ।

(२) कभी-कभी कोई श्रमण या ब्राह्मण या कोई देवता अपने ऋद्धिबल से चेतोवशित्व अर्थात् चित्त पर पूर्ण अधिकार प्राप्त करता है । उसके द्वारा पृथ्वी संज्ञा की भावना कम की हुई रहती है तथा आप-संज्ञा की भावना अधिक । वह अपने ऋद्धि बल से पृथ्वी को प्रकम्पित कर सकता है ।

(३) जब बोधिसत्व तुषितलोक से स्मृतिमान एवं जागरूक हो माता की कुच्छि में प्रवेश करता है ।

(४) जब बोधिसत्व स्मृतिमान एवं सम्प्रज्ञ हो माता की कुच्छि से निकलते हैं।

(५) जब तथागत अलौकिक सम्यक् सम्बोधि को प्राप्त करते हैं ।

(६) जब तथागत धर्म चक्र प्रवर्तन करते हैं।

(७) जब तथागत सम्प्रज्ञ हो आयुसंखार (जीवनी शक्ति) का परित्याग करते हैं ।

(८) जब तथागत अनुपाधिशेष परिनिर्वाण को प्राप्त करते हैं ।

इसी प्रसंग में भगवान ने आठ प्रकार की परिषद्, आठ अभिभायतन, तथा आठ प्रकार के विमोक्षों की चर्चा की । साथ ही उन्होंने यह भी बतलाया कि पापी मार ने सम्बोधि-प्राप्ति के तुरत बाद तथा अभी चापाल चैत्य में उपस्थित होकर याचना की कि तथागत परिनिर्वाण को प्राप्त करें । अन्त में तथागत ने उसे यह कहा कि वह चिन्ता न करें, तीन महीनों के उपरान्त तथागत का परिनिर्वाण होगा । इसी के क्रम में तथागत द्वारा उसी चापाल चैत्य में आयुसंखार का परित्याग कर दिया गया । भगवान की इस बात को सुनकर आनन्द हतप्रभ हो उठे । उन्होंने पुनः पुनः याचना करना आरम्भ किया कि तथागत बहुजन हिताय बहुजन सुखाय अनेक कल्पों तक जीवित रहें । पर वे समय से चूक गये थे । तथागत ने स्पष्टतः कहा कि "अब आनन्द वैसी याचना न करें—अब समय न रहा" ।

"अलं दानि, आनन्द, मा तथागतं याचि ।
अकालो दानि आनन्द, तथागतं याचनाया" ति ।।

इस घटना के बाद भगवान महावन के कूटागारशाला में देखे जाते हैं । वैशाली को उपनिश्रय बनाकर विहार करने वाले भिक्षुओं को उन्होंने बुलाया तथा शासन की चिरस्थिति एवं बहुजन के हित के लिए धर्म-अभिज्ञा की भावना का उपदेश किया ।

धर्म-अभिज्ञा के अन्तर्गत सात बातें आती हैं। वे हैं—चार स्मृति उपस्थान, चार सम्यक् प्रधान, चार ऋद्धि पाद, पाँच इन्द्रिय, पाँच बल, सात बोध्यांग, तथा आर्य अष्टांगिक मार्ग। इसके उपरान्त उन्होंने कहा कि—"सभी संस्कार व्ययधर्मा हैं, अप्रमादी बनकर अपने लक्ष्य की प्राप्ति करो, आज से तीन महीनों के बाद तथागत का परिनिर्वाण होगा"। उन्होंने स्पष्टतः दर्शाया—

"परिपक्को वयो मय्हं, परित्तं मम जीवितं।
पहाय वो गमिस्सामि, कतं मे सरणमत्तनो॥
अप्पमन्ता सतीमन्तो, सुसीला होथ भिक्खवे।
सुसमाहितसंकप्पा, सचित्तमनुरक्खथ॥
यो इमस्मिं धम्मविनये, अप्पमत्तो विहस्सति।
पहाय जातिसंसारं, दुक्खस्सन्तं करिस्सती ति॥
दी० नि० २.९५।

धर्म-अभिज्ञा की देसना के अनन्तर तथागत ने वैशाली का अन्तिम दर्शन नागापलोकित ढंग से किया तथा आनन्द सहित वहाँ से चलकर भण्डग्राम पहुँचे। वहाँ पर उन्होंने बतलाया कि शील, समाधि, प्रज्ञा तथा विमुक्ति नामक चार धर्मों के ज्ञान के बिना मनुष्य भवपरम्परा में आबद्ध हो विभिन्न गति एवं योनियों में संसरण करता है। जब उसे इन चार धर्मों का सम्यक् अवबोध हो जाता है, तब उसकी भवपरम्परा सर्वदा के लिए उच्छिन्न हो जाती है। इस प्रकार भण्डग्राम में निवास करते हुए उन्होंने उक्त चार धर्मों पर विविध दृष्टिकोणों से प्रकाश डाला। इसके अनन्तर वे क्रमशः हस्ति ग्राम, आम्र ग्राम, जम्बु ग्राम तथा भोगनगर पहुँचे। वहाँ पर उन्होंने चार महाप्रदेशों का उपदेश किया। इसके निगमन रूप में उन्होंने शील, समाधि तथा प्रज्ञा की भावना पर बल दिया।

भोगनगर में यथेच्छ विहार के बाद भगवान पावा में पहुँचे। वहाँ भगवान चुन्द के आम्रवन में विहार करते थे। चुन्द ने भगवान के विहार की बात को सुन उनके निकट जाकर धार्मिक कथाओं से तृप्त हो दूसरे दिन के लिए भोजन के लिए निमन्त्रित किया। उन्होंने अनेक प्रकार के खादनीय भोजनीय के साथ पर्याप्त मात्रा में सूकरमद्दव (सूकरमार्दव) तैयार किया। भगवान के निर्देशानुसार उसने सूकरमद्दव केवल भगवान को ही दिया तथा बचे भाग को पृथ्वी में खोद कर गड़वा दिया। इस भोजन के उपरान्त भगवान को अत्यन्त असह्य वेदना उत्पन्न हुई, मरण लानेवाली पीड़ा हुई। भगवान ने इसका स्मृतिसम्पन्न तथा संप्रज्ञ होकर सहन किया। उन्होंने आनन्द को सम्बोधित करते हुए कहा कि वे अब कुशीनारा चलें[1]।

---

१. चुन्दस्स भत्तं भुञ्जित्वा, कम्मारस्सा ति मे सुतं।
आबाधं सम्फुसी धीरो, पबाल्हं मारणन्तिकं॥
भुत्तस्स च सुकरमद्दवेन, व्याधिप्पबाल्हो उदपादि सत्थुनो।
विरेचमानो भगवा अवोच, गच्छामहं कुसिनार नगरं ति॥
दी० नि० २.९६।

तथागत का शरीर जीर्ण शीर्ण एवं क्लान्त था। चलते हुए वे शीघ्र थक जाते थे। कुछ ही दूर चलने के बाद उन्होंने एक वृक्ष को देखा तथा उसके नीचे वे जा बैठे। उन्हें प्यास लगी थी। आनन्द से उन्होंने पानी लाने को कहा। पास में एक छोटी नदी थी, जिससे कुछ ही क्षण पूर्व पाँच सौ गाड़ियों के पार करने के कारण जल कर्दमपूर्ण हो गया था। आनन्द उस मलपूर्ण जल को नहीं लाना चाहते थे, इसलिए उन्होंने निवेदन किया कि कुछ ही दूर पर ककुधा नदी है, जो स्वच्छ जल से पूर्ण है, वहीं जल पिया जायगा। पर भगवान द्वारा तीन बार जल लाने की बात कहे जाने पर आनन्द ने उस छोटी नदी के तट पर जाकर देखा कि उसका जल स्वच्छ, निर्मल तथा पीने योग्य था। उन्हें यह आश्चर्य पूर्ण प्रतीत हुआ। उन्होंने तुरत जल लाकर भगवान को पीने को दिया। भगवान ने प्यास बुझायी।

इसके अनन्तर वे मल्ल पुत्र पुक्कुस को त्रिशरण प्रदान कर उसके द्वारा प्रदत्त दुपट्टे को धारण कर अत्यन्त सुशोभित हुए। उन्होंने इस प्रसंग में बतलाया कि "दो समयों में तथागत का शरीर अत्यन्त सुशोभित होता है—जब वे सम्बोधि को प्राप्त करते हैं तथा जब वे अनुपाधिशेष निर्वाण धातु में प्रवेश करते हैं। आज ही रात के अन्तिम याम में कुशीनारा में मल्लो के सालवन में युग्म साल वृक्षों के मूल में तथागत का परिनिर्वाण होगा। इसलिए कुशीनारा चला जाय"।

तदनुसार भिक्षु संघ-सहित भगवान ककुधा नदी के तट पर पहुँचे। वहाँ उन्होंने स्नान किया, जल पिया तथा कुछ ही दूर आगे चलकर आम्रवन में विश्राम किया। इस प्रसंग में उन्होंने चुन्द से स्पष्टतः कहा कि उसे ऐसा न हो कि उसका भोजन कर भगवान ने परिनिर्वाण को प्राप्त किया। वस्तुतः दो ही पिण्डपात महान् फलदायी होता है। एक वह जिसे ग्रहण कर तथागत सम्यक् सम्बोधि को प्राप्त करते हैं तथा दूसरा वह जिसे प्राप्त कर वे परिनिर्वाण को प्राप्त करते हैं। चुन्द ने परिनिर्वाण के पूर्व भोजन देकर पुण्य का काम किया, जो उसे सुखद फल देनेवाले हैं।

इतना कहकर भगवान हिरण्यवती नदी के पार कुशीनारा के मल्लो के शालवन में भिक्षु संघ सहित पहुँचे। धीरे-धीरे परिनिर्वाण का क्षण निकट आ रहा था। शरीर की गति मन्द पड़ती जाती थी। उन्होंने आनन्द से कहा—"आनन्द, इन यमक शाल वृक्षों के मध्य उत्तर की ओर सिरहाना करके मंच को विछा दो, थक चुका हूँ, लेटने की इच्छा है"। आनन्द ने वैसा ही किया। भगवान स्मृतिमान हो दाहिने करवट पैर पर पैर रखते हुए सिंह-शय्या से लेटे।

यह सिंह-शय्या वस्तुतः परिनिर्वाण शय्या थी। सम्पूर्ण शालवन अकस्मात् असामयिक फल फूल से लद गया। नाना प्रकार के फूल तथागत की पूजा के लिए उनके शरीर पर विकीर्ण होते थे। दिव्य चन्दन चूर्ण आकाश से तथागत के शरीर पर बिखरते थे। दिव्य दुंदुभियाँ बजती थीं। यह समस्त कृत्य तथागत की पूजा के लिए हो रहे थे। भगवान ने इस प्रसंग को उद्भासित करते हुए कहा कि इन अकाल पुष्पों, दिव्य चन्दन, देव दुन्दुभी आदि से वस्तुतः तथागत की पूजा नहीं होती है। तथागत तब

पूजित होते हैं, जबकि उनके द्वारा उपदिष्ट मार्ग पर आरूढ़ हो भिक्षु, भिक्षुणी उपासक तथा उपासिका धर्मानुसार आचरण करने वाला होते हैं। यही वस्तुतः तथागत की पूजा विधि है।

तथागत ने इस क्रम में चार स्थानों को दर्शनीय तथा वैराग्यप्रद बतलाया। वे हैं—लुम्बिनी, (जहाँ उनका जन्म हुआ), बोधगया (जहाँ उन्होंने सम्बोधि प्राप्त की), सारनाथ (जहाँ उन्होंने धर्म चक्र प्रवर्त्तन किया) तथा कुशीनारा (जहाँ उन्होंने परिनिर्वाण प्राप्त किया।)

इस प्रसंग में आनन्द ने भगवान से पूछा कि भिक्षु स्त्रियों के साथ कैसा वर्ताव करेंगे। भगवान ने कहा कि उन्हें न देख कर अर्थात् भिक्षु स्त्रियों को न देखें। यदि दर्शन हो जाय तो उनसे बातें न करें। बात करने का अवसर आने पर स्मृतिमान हो बातें करें। इसी क्रम में आनन्द द्वारा पूछे जाने पर कि उनकी दाह-क्रिया कैसे की जायगी, भगवान ने बतलाया कि जैसे चक्रवर्ती राजा की की जाती है, उसी प्रकार। यहाँ चक्रवर्ती की दाहक्रिया की विधि इस प्रकार देखी जाती है"। राजा चक्रवर्ती के शरीर को नये वस्त्र से लपेटा जाता है, पुनः उसे धुनी रूई से लपेटा जाता है, पुनः उसे नये वस्त्र से लपेटते हैं। इस प्रकार लपेटकर उसे तेल की लोह द्रोणी में रखकर, दूसरी लोह द्रोणी से ढक देते हैं। पुनः गन्ध पूर्ण काष्ठफलकों से चिता बनाकर राजा चक्रवर्ती के शरीर को जलाते हैं। जलाने के उपरान्त उस अवशेष पर चौरास्ते पर स्तूप बनाते हैं"। ऐसे स्तूपों पर श्रद्धालु लोग माला, गन्ध चढ़ाकर अपने चित्त को प्रसन्न करेंगे तथा यह उनके दीर्घकालिक हित की बात होगी। ऐसे स्तूप के अधिकारी वस्तुतः चार ही प्रकार के पुरुष हैं। वे हैं—(१) सम्यक् सम्बुद्ध (२) प्रत्येक बुद्ध (३) तथागत के श्रावक (४) तथा राजा चक्रवर्ती।

इन श्रवणामृत बातों को कहते-कहते तथागत का शरीर क्षीण होता जा रहा था। वह क्षण निकट था, जब उनके दर्शन दुर्लभ हो जायेंगे। यह दृश्य आनन्द के लिए असह्य हो उठा। वे विहार की एक कोठरी में जाकर रो रहे थे। भगवान ने इसे जान उन्हें बुलाया तथा उन्हें सम्बोधित करते हुए कहा—'आनन्द, शोक न करो, मत रोओ, सभी प्रियजनों से वियोग होना निश्चय है, सभी संस्कृत धर्म विनश्वर हैं, किसी को विनाश से रोका नहीं जा सकता है। आनन्द, तूने दीर्घकाल से अप्रमाण कायकर्म, वचीकर्म तथा मनोकर्म से तथागत की सेवा की है। तुम कृत पुण्य हो, यत्न में लग जाओ, शीघ्र अनास्रव हो जा"। यह कहते हुए उन्होंने आनन्द के दस गुणों का कथन कर उनकी प्रशंसा की तथा उन्हें उपस्थाकों में उत्तम बतलाया[1]।

इस क्रम में भगवान के सम्मुख जो अन्तिम प्रव्रज्या थी, वह सुभद्र की थी। सुभद्र एक परिव्राजक था। उसे जब यह ज्ञात हुआ कि उसी दिन रात के तीसरे प्रहर

---

१. पण्डितो, भिक्खवे आनन्दो, मेधावी, भिक्खवे, आनन्दो। जानाति अयं कालो तथागत दस्सनाय उपसंकमितुं भिक्खूनं, अयं कालो भिक्खुनीनं, अयं कालो उपासकानं......तित्थियसावकानं।

दी० नि० २.११२।

में तथागत का परिनिर्वाण होगा, तो उसके मन में उनके दर्शन की उत्कंठा हुई। उसने सोचा कि यह आचार्यों का कथन है कि "कदाचित् कभी ही तथागत अर्हत् सम्यक् सम्बुद्ध इस लोक में उत्पन्न होते हैं। ऐसे दुलर्भ पुरुष का आज ही रात के अन्तिम प्रहर में परिनिर्वाण होगा। इसलिए मैं उनके दर्शन करूं। ऐसा विचार वह परिनिर्वाण मंच पर निपन्न भगवान के निकट गया। आनन्द ने भगवान की दशा पर ध्यान देते हुए पहले उसे उनके सम्मुख जाने से निवारण किया पर भगवान द्वारा अनुमति दिये जाने पर वे उसे वहाँ ले गये। भगवान ने उसकी शंकाओं को सुन अष्टांगिक मार्ग पर प्रकाश डाला। कुछ ही क्षण में उसकी समस्त शंकायें जाती रही तथा उसने तथागत से प्रव्रज्या एवं उपसम्पदा की याचना की। भगवान की अनुमति से आनन्द ने उसे प्रव्रजित किया। इस प्रकार भगवान के सम्मुख सुभद्र ने प्रव्रज्या एवं उपसम्पदा प्राप्त की। संयमपूर्वक जीवन व्यतीत करते हुए उन्होंने कुछ ही दिनों में अर्हत्व की प्राप्ति की। वे भगवान के अन्तिम शिष्य हुए।

तथागत के अन्तिम उपदेश अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं। अपने परिनिर्वाण के क्षण को अत्यन्त निकट जान तथागत ने आनन्द से स्पष्टतः कहा कि "ऐसा नहीं समझना चाहिए कि मेरे शास्ता अब नहीं रहे। वे परिनिर्वाण को प्राप्त कर गये। पर वास्तविकता यह है कि तुम सर्वदा अपने शास्ता के साथ हो। जिस धर्म एवं विनय का मेरे द्वारा उपदेश किया गया है, वे ही मेरे परिनिर्वाण के बाद तुम्हारे शास्ता हैं। ऐसा कहते हुए उन्होंने यह भी कहा कि जिस किसी के मन में धर्म विनय के सम्बन्ध में कोई शंका हो, उसे वह पूछ ले। उसे ऐसा विप्रतिसार न हो कि 'शास्ता जब हमारे सम्मुख थे, तब हम भगवान से कुछ पूछ न सके"। भिक्षु शान्त रहे। भगवान ने प्रसन्नता व्यक्त की कि भिक्षुओं को शासक के प्रति कोई विमति नहीं है। उन्होंने भिक्षुओं को सम्बोधित करते हुए कहा—"हन्त, भिक्षुओं, अब तुम्हें (धर्म का सार) बतला रहा हूँ"—सभी संस्कार (कृत वस्तु) व्यय धर्मा हैं, अप्रमाद के साथ जीवन के चरम लक्ष्य निर्वाण को प्राप्त करो। यही तथागत का अन्तिम वचन है[1]"।

इसके अनन्तर भगवान के परिनिर्वाण का दृश्य है। यमक शाल वृक्षों के नीचे परिनिर्वाण मंच पर पड़े तथागत इस लोक के लिए अब कुछ ही क्षण की विभूति थे।

---

१. "हन्द दानि, भिक्खवे, आमन्तयामि वो—वयधम्मा संखारा, अप्पमादेन सम्पादेथा" ति। अयं तथागतस्स पच्छिमा वाचा। दी० नि० २.११६।

× × ×

अप्पमादेन सम्पादेथा ति सतिअविप्पवासेन सब्बकिच्चानि सम्पादेय्याथ। इति भगवा परिनिब्बानमञ्चे निपन्नो पंचचत्तालीस वस्सानि दिन्नं ओवादं सब्बं एकस्मिं अप्पमादपदेयेव पक्खिपित्वा अदासि। सु० वि० २.३०६।

× × ×

अप्पमादो अमतपदं पमादो मच्चुनो पदं।
अप्पमत्ता न मीयन्ति, ये पमत्ता यथा मता॥
ध० प० १६।

समस्त कुशीनारा तथागत के अन्तिम दर्शन के लिए आये देवताओं से परिपूर्ण था। भिक्षु वृन्द शान्त खड़े थे—उस लीला को देखते हुए कि एक क्षण पूर्व तथागत उनके बीच हैं तथा दूसरे क्षण उनका कुछ अन्य रूप ही होने वाला है। तथागत की अन्तिम ध्यान प्रक्रिया प्रारम्भ हुई। उन्होंने रूप-ध्यान की चार अवस्थाओं में क्रमशः जाते हुए अरूप-ध्यान की भावना प्रारम्भ की। उसकी भी चार अवस्थाओं को प्राप्त करते हुए अन्त में उन्होंने संज्ञा-वेदयित-निरोध दशा को प्राप्त किया। प्रतिलोम क्रम से ध्यान की इन अवस्थाओं को प्राप्त करते हुए रूप-ध्यान की प्रथम अवस्था में आये। पुनः उससे क्रमशः ऊपर की ओर बढ़ते हुए रूप ध्यान की चतुर्थ अवस्था की प्राप्ति की। उसी चतुर्थ अवस्था से उठकर उन्होंने परिनिर्वाण प्राप्त की[1]। परिनिर्वाण में प्रवेश करते ही समस्त दिग्दिगन्त कांप उठा। भीषण लोमहर्षण भूकम्प हुआ। देव दुन्दुभियाँ बज उठीं। कुछ क्षण पूर्व जो शास्ता उपदेश देते हुए भिक्षुओं के मध्य विद्यमान थे, वे भी अनित्य प्रवाह-रत देखे गये[2]। दुर्लभ विभूति निर्वापित दीप शिखा की भाँति अनिर्वचनीय अमृत पद को प्राप्त कर हमारे लिए अमिट धर्म पथ को छोड़ उपशान्त हो गई[3]।

महेश तिवारी

---

१. चतुत्थझाना वुट्ठहित्वा समनन्तरा भगवा परिनिब्बायि दी० नि० २.१२०।

२. सब्बेव निक्खिपिस्सन्ति, भूता लोके समुस्सयं।
   यत्थ एतादिसो सत्था, लोके अप्पटिपुग्गलो॥
   तथागतो बलप्पत्तो, सम्बुद्धो परिनिब्बुतो॥
   —दी० नि० २.१२०।

३. नाहु अस्सासपस्सासो, ठितचित्तस्स तादिनो।
   अनेजो सन्तिमारब्भ, यं कालमकरी मुनि॥
   असल्लीनेन चित्तेन, वेदनं अज्झवासयि।
   पज्जोतस्सेव निब्बानं, विमोक्खो चेतसो अहू ति॥
   —दी० नि० २.१२०।

सुमंगलविलासिनी

विसय-सूची

२. महावग्गवण्णना



संकेत-सूची

अ० सा०	=	अट्ठसालिनी
अं० नि०	=	अङ्गुत्तरनिकायो
इति०	=	इतिवुत्तकं
उदा०	=	उदानं
खु० पा०	=	खुद्दकपाठो
चु० व०	=	चुल्लवग्गो
जा०	=	जातकं
थेर० गा०	=	थेरगाथा
दी० नि०	=	दीघनिकायो
ध० प०	=	धम्मपदं
ध० सं०	=	धम्मसङ्गणि
पटि० म०	=	पटिसम्भिदामग्गो
परि०	=	परिवारपाठो
पाचि०	=	पाचित्तियपालि
पारा०	=	पाराजिकपालि
पे० व०	=	पेतवत्थु
म० नि०	=	मज्झिमनिकायो
म० व०	=	महावग्गो
महा० नि०	=	महानिद्देसो
विभं०	=	विभङ्गो
वि० म०	=	विसुद्धिमग्गो
वि० व०	=	विमानवत्थु
सु० नि०	=	सुत्तनिपातो
सु० नि० अ०	=	सुत्तनिपात-अट्ठकथा
सं० नि०	=	संयुत्तनिकायो

सुद्धिपण्णं

पिट्ठे	पन्तियं	असुद्धपाठो	सुद्धपाठो
५	५	कतकम्मम्हि	कतकम्मम्हि
५	१६	अन्दुबन्धनादिना	अद्दुबन्धनादिना
६	२	अणु	अणुं
१२	९	जबुदीप०	जम्बुदीप०
१३	२	गणहथ	गण्हथ
१३	२३	खन्ध०	खन्धक०
१७	१०	पठज्मझानं	पठमज्झानं
१९	१६	तत्थेव ति	तत्थेवा ति
२८	५	बहितुं	वहितुं
२९	६	अन्तरत्तकोसम्बि	अन्तरन्तरा कोसम्बि
३१	४	होती	होति
३२	४	भिगदाये	मिगदाये
३३	९	मयं	मय्हं
३४	३	पुरेत्वा	पूरेत्वा
३५	१५	लोकेन कोचिना	लोके न कोचि न
३५	१७	निरन्धितब्बं	निरुन्धितब्बं
३७	१	०विरतिभत्तमेव	०विरतिमत्तमेव
३८	९	भन्ते, हि	भन्ते ति
३८	११	अभिहं	अभिहटं
४०	४	हिरीटानी ति	तिरीटानी ति
४१	–	ततोपक्कम०	तपोपक्कम०
४१	२०	पटिपत्ति या	पटिपत्तिया
४२	१४	तपती	तपती ति
४४	२३	पुञ्हं	पञ्हं
४६	१	पंसित्वा	घंसित्वा
४६	१७	दिठेव	दिट्ठेव
४८	७	०परिमानं	०परिमाणं
४८	१०	०पपरिब्बाजका०	०परिब्बाजका०
४८	१३	तिम्बरुक्ख०	तिम्बरुरुक्ख०
४८	१३	परिक्खतत्ता	परिक्खित्तत्ता
४८	१८	तङ्गं	सङ्गं
५०	१७	पुच्छति	पुञ्छति

५१	९	निस्सद्दो	निस्सद्दा
५१	१६	पच्चुगमनकासि	पच्चुगमनमकासि
५३	१०	मञ्ञमाने	मञ्ञमानो
५३	१८	पवित्वा	पिवित्वा
५४	२३	बद्धुप्पादतो	बुद्धुप्पादतो
५५	४	समुग्धातं	समुग्घातं
५५	९	०पीतिसुखुम०	०पीतिसुखसुखुम०
५५	१०	०सुखङ्खाता०	०सुखसङ्खाता०
५५	१५	०पीतिसुखुम०	०पीतिसुखसुखुम०
५६	१४	सञ्ञागं	सञ्ञग्गं
५६	२१	व	न
५७	१५	०सञ्ञानिरोध०	०सञ्ञानिरोध०
५८	२०	०लक्खणेत्वा	०लक्खणेन
६०	६	नप्पतिट्ठा ति	नप्पतिट्ठाति
६१	१९	सुत्तपयुत्तता	युत्तपयुत्तता
६०	१९	सञ्चु०	सञ्झ०
६२	१४	असक्कन्तो	असक्कोन्तो
६३	८	पुरत्थिमाह	पुरत्थिमाय
६३	२१	अरुपअत्त०	अरूपअत्त०
६४	२०	सञ्ञानाथा ति	सञ्जानाथा ति
६६	१६	परमत्त०	परमत्थ०
६८	२	भगवती	भगवति
६९	१	सयनाआरोपितो	सयना ओरोपितो
७०	२०	सन्मोदनीयं	सम्मोदनीयं
७१	१	घरं ति	घरन्ति
७१	३	खन्धेहि	खन्धेहि
७१	१४	गत्तद्वारो	गुत्तद्वारो
७४	११	गुथं	गूथं
७५	४	०गुणिकराणं	०गुणिकरागं
७७	१९	परियट्ठिं	परियेट्ठिं
७८	१३	दस्सन्तो	दस्सेन्तो
८०	१५	न हापितं	नहापितं
८१	९	देस्सन्तो	दस्सेन्तो
८१	२३	गब्भो	गब्भे
८२	२१	ईदिसनेव	ईदिसमेव
८५	८	आयं ति	आयन्ति

८५	१८	गोतमा	गोतमो
८६	१६	अवजानं ति	अवजानन्ति
८९	२०	काकपेय्या । नदी ति	काकपेय्या नदी ति
९१	७	सङ्खधमो	सङ्खधमो ति
९१	७	०धम्मको	०धमको
९५	१४	०पुटवेग०	०पुटे वेग०
९८	२४	आयुसङ्खयारं	आयुसङ्खारं
१००	२३	बहवाबाधा	बह्वाबाधा
१०१	९	परिपाळं	परिपाकं
१०२	१०	०वण्णहि	०वण्णेहि
१०३	५	फतविभूति	फलविभूति
१०६	१६	पूरियं	पूरयिं
११०	२१	सब्बुञ्ञुतं	सब्बञ्ञुतं
११२	१२	निब्बत्तं ति	निब्बत्तन्ति
११५	६	आरुळहो	आरुळ्हो
१२०	९	वत्थुनि	वत्थूनि
१२२	८	ति गावुतिको	तिगावुतिको
१२३	९	वोरापेय्य	वोरोपेय्य
१२३	१२	भेखरूपा	भेरवरूपा
१२४	१०	०गुणूपप०	०गुणूप०
१२५	१७	चेति यकुटि०	चेतियकुटि०
१२६	७	०ब्राह्मणो	०ब्रह्मानो
१२६	८	सुतिवेसं	सूतिवेसं
१२७	१४	अनुधारियमानो	अनुधारियमाने
१३२	४	ब्रह्मो	ब्रह्मे
१३२	९	०रज्जता	०रज्जत्ता
१३२	११	चतुनन्ताय	चतुरन्ताय
१३३	९	सरुपतो	सरूपतो
१३४	१३	सस्सेतुं	दस्सेतुं
१३४	२३	०च्छिना	०च्छिन्ना
१३५	३	खग्गोतालवण्टं	खग्गो तालवण्टं
१३५	५	मणिपत्तो	मणि पत्तो
१३७	१०	आवट्टरियोसाने	आवट्टपरियोसाने
१३७	११	उल्लोककयमानानि	उल्लोकयमानानि
१३८	८	दीघयुत्तुट्ठाने	दीघयुत्तट्ठाने

१३८	१४	सोभति, +	+तानि अंगानि किसानि सन्ठुन्ति। येहि अंगेहि पुथुलेहि सोभति,
१३९	१२	अविवचनं	अधिवचनं
१३९	१७	बव्हाबाधा	बह्वाबाधा
१४०	२३	०रूत०	०रुत०
१४१	११	०छितानि	०चितानि
१४१	१७	लतानूल०	लतातूल०
१४२	१९	अदिसु	आदीसु
१४३	१३	अत्थी	अतिथ
१४७	१६	इमम्मिस्स	इमम्पिस्स
१५३	१९	०परमिनो	०पारमिनो
१५४	६	रूपस्म	रूपस्स
१५६	७	अगन्त्वा	आगन्त्वा
१५६	१९	आलयं ति	आलयन्ति
१६२	८	०मनसिकरो	०मनसिकारो
१६५	११	मयपलित्ताणट्ठेन	भयपरित्ताणट्ठेन
१६७	६	पिपाकं	विपाकं
१७०	३	अतिक्कखलं	अतिकक्खलं
१७०	१०	अस्सुनि	अस्सूनि
१७१	१८	उपगञ्हि	उपगञ्छि
१७३	१०	परूपघाति	परूपघाती
१७४	५	सङ्घट्टन०	सङ्घट्टन०
१७८	५	कुरूरट्ठं	कुरुरट्ठं
१७८	११	निद्धट्ठाने	विद्धट्ठाने
१७९	२२	इत्तु०	रत्तुं०
१८०	५	गन्थकुटिं	गन्धकुटिं
१८२	१३	०ट्ठानट्ठि	०ट्ठानं ति
१८३	२०	बहलत्तेव	बहलत्तेन
१८५	३	कनिट्ठमाता	कनिट्ठभाता
१८५	१३	दुब्लभं	न दुल्लभं
१८५	२१	अञ्ञावरेही ति	अञ्ञां वरेही ति
१९२	७	अप्पटिविज्झुना	अप्पटिविज्झना
१९३	१६	पुत्तगोणो	युत्तगोणो
१९४	१३	निगुम्मे	निगुम्बे
१९५	१२	अदिदं	यदिदं

१९५	१८	परनिम्मितिवसवत्तदेवे	परनिम्मितवसवत्तिदेवे
१९७	२	परस्सं	परस्स
१९८	१६	कञ्जानन०	सञ्जानन०
२००	८	पटिपुण्ण०	परिपुण्ण०
२०४	१२	कारणनेव	कारणेनेव
२०६	५	भगवापच्चया०	भगवा पच्चया०
२१२	१३	उत्पादित०	उप्पादित०
२१३	८	मदिच्छकं	यदिच्छकं
२१३	२३	०चत्थुज्ञानतो	०चतुत्थज्ञानतो
२१४	१४	दिस्सा	दिस्वा
२२२	२२	गहेस्सामी	गहेस्सामि
२२२	२४	महाराजा	महाराज,
२२३	९	एकच्चकेहि	एकच्चेहि
२२४	२१	सन्निपाता	सन्निपाता ति
२२४	२१	विज्जसत्तके	वज्जिसत्तके
२२५	११	वीवरकम्मं	चीवरकम्मं
२२५	१९	असुकट्ठानो	असुकट्ठाने
२२६	१६	वा	वो
२२७	३	संधपरिणायका	संघपरिणायका
२३०	५	सत्तो	सतो
२३२	१३	सम्बोज्झङ्गा	सम्बोज्झङ्गो
२३४	१	अवि	आवि
२३४	१२	आरोगो	अरोगो
२३७	४	पुरितो	पूरितो
२३८	२०	०मत्तमेव	०भत्तमेव
२३८	२३	पीति०	वीति०
२४०	१७	एहियाम	एहि याम
२४१	१२	०सन्थरिं	०सन्थरिं ति
२४१	२३	०मत्तमत्तम्पि	०मत्तम्पि
२४४	१५	ववेन	वसेन
२४५	२०	कट्टेत्वा	कोट्टेत्वा
२४९	११	भो ति	भोति
२४९	२२	उच्योजेति	उय्योजेति
२५३	७	०निमित्तानं	०निमित्तानं ति
२५३	१८	कदापाविसि	कदा पाविसि
२५७	१	चिन्तेन्ती ति	चिन्तेन्ती

२५७	२	जलेत्वा	जालेत्वा
२५८	२२	कावेसा	का वेला
२५९	२४	अनियमेव	अनियमेन
२६०	१०	वियठातब्बं	विय ठातब्बं
२६०	१५	तन्ति	तं ति
२६०	१६	पटिविज्झतुं	पटिविज्झितुं
२६२	८	विखन्तो	विरवन्तो
२६२	१७	सुक्खवज्जितं	सुक्खगज्जितं
२६५	१४	पठवीकप्पेसु	पठवीकम्पेसु
२६५	२१	चित्तसङ्खातं	चित्तसङ्खोभं
२६७	१४	अक्खिनं	अक्खीनं
२६८	२४	०सङ्गाहकसेन	०सङ्गाहकवसेन
२६८	२५	निद्दसन०	निदस्सन०
२६८	२६	अपञ्ञाय । मान०	अपञ्ञायमान०
२७२	१	अतिनन्दितब्बं	अभिनन्दितब्बं
२७३	१८	अञ्ञातरो	अञ्ञातरतो
२७४	१४	व्याकरणीयो,	व्याकरणीयो पञ्हो,
२७५	८	तीस्सो	तिस्सो
२७७	२०	युगमठं	युगमट्ठं
२८३	१९	उञ्ञासन्तो	उत्रसन्तो
२८३	२२	अनरूपं	अनुरूपं
२८४	१६	०फालि०	०पालि०
२८४	१८	सन्धपदुमानि	खन्धपदुमानि
२८४	२२	०च्छितो	०च्छिको
२८५	१४	विकत्तियो	विकतियो
२८७	२०	सिपस्सनागब्भं	विपस्सनागब्भं
२९०	१	महासक्खताय	महेसक्खताय
२९०	३	चेतिय	चेतिये
२९२	१४	निसदिति	निसीदति
२९५	१४	अलञ्च	अहञ्च
२९७	१८	राजकुसलो	राजकुलतो
३००	३	फालित्वा	फालेत्वा
३०१	२८	पदे सवत्ती	पदेसवत्ती
३०४	३	चतुरासी ति	चतुरासीति
३०४	८	वा	वो
३०५	१३	खुद्दानुखुद्दकपत्ति	खुद्दानुखुद्दकापत्ति

३०७	६	आनापने	आनापाने
३०९	२०	थामसम्मन्ना	थामसम्पन्ना
३१३	५	पब्बजित्ता	पब्बजितत्ता
३१४	४	भोउजयागु	भोज्जयागु
३१६	२	वुड्ढिमा	वुड्ढिमा
३२१	१३	पहरित्वा...उरं	Omit
३२१	२१	तुम्हे	Omit
३२३	१५	किमङ्ग	किमङ्गं
३२७	८	०करण्डसु	०करण्डेसु
३२८	५	अस्सापेत्वा	उस्सापेत्वा
३३५	६	०गेण्डुक०	०गेण्डुकं०
३३७	१०	चकरतनं	चक्करतनं
३४४	२६	तूलपिचूनो	तूलपिचुनो
३४७	९	सब्बातुकं	सब्बोतुकं
३४८	१०	०पसोधनानि	०पसाधनानि
३५१	१७-१८	एत्तावता... निवत्तितब्बं	Omit
३५३	३	कालङ्कीरिया	कालङ्किरिया
३५३	१३	०अगोण०	०अजगोण०
३५४	१३	निसीददनत्थाय	निसीदनत्थाय
३५५	१०	दीघभणक०	दीघभाणक०
३५५	२१	अनुभावो	आनुभावो
३५७	—	नातीकिया०	नातिकिया०
३५८	१६	निसासं	निवासं
३५९	५	अन्तरमग्गे	अन्तरामग्गे
३५९	८	सुत्तं	सुतं
३६१	७	ममयन्ति	ममायन्ति
३६३	८	कत्तकम्यता	कत्तुकम्यता
३६३	२२	सत्तविज्जाय	खत्तविज्जाय
३६५	५	चतुत्थ	चतुत्थे
३७०	७	परिच्छत्त०	पारिच्छत्त०
३७२	४	पुप्फकम्भेन	पुप्फकम्मेन
३७३	७	असङ्ख्ययानि	असङ्ख्येय्यानि
३७४	२५	देसित	देसिता
३७९	१९	मरणमयेन	मरणभयेन
३८०	१५	०सन्नि ट्ठाना०	०सन्निट्ठाना०

३८३	२१	०कल्लाण०	०कल्याण०
३८७	१	झायी	झायी ति
३८७	६	चित्तत्रास०	चित्तुत्रास०
३८९	२४	आसगन्धा	आमगन्धा
३९०	५	बुद्धतं ति	बुद्धतन्ति
३९०	११	पोरोहच्चे	पोरोहिच्चे
३९४	१९	पालिय	पालियं
३९५	२४	ब्रह्मचरिय०	ब्रह्मचरिया०
४०४	४	खीत्तो	खित्तो
४०५	९	०वुद्ध०	०बुद्ध०
४०७	१२	भिक्खु	भिक्खू
४११	५	०सम्मुनो	०सम्भुनो
४१३	२२	०वाळ	०वाळे
४१५	७	नागो	नागा
४१५	१५	पमेस	पनेस
४१५	१७	यो	ये
४१६	११	दानवेघसा	दानवेघसा ति
४१८	१३	अरुणा,	अरुणा, आगु०,
४१९	६	नामन्वयेव	नामन्वयेन
४२१	१९	अतिञ्ञाय	अभिञ्ञाय
४२१	२२	फलसमापत्ति	फलसमापत्ति
४२२	११	अभिभनवट्ठानेसु	अभिनवट्ठानेसु

—:०:—

सुमंगलविलासिनी

(दीघनिकाय-अट्ठकथा)

नमो तस्स भगवतो अरहतो सम्मासम्बुद्धस्स

सुमंगलविलासिनी

(५) कूटदन्तसुत्तवण्णना

१. निदानवण्णना

१. एवं मे सुतं...पे...मगधेसू ति कूटदन्तसुत्तं। तत्रायं अपुब्ब- R. 294 B. 263
पदवण्णना। मगधेसू ति मगधा नाम जानपदिनो राजकुमारा।
तेसं निवासो एको पि जनपदो रूळ्हि सद्देन मगधा ति वुच्चति। तस्मिं
मगधेसु जनपदे। इतो परं पुरिमसुत्तद्वये वुत्तनयमेव। अम्बलट्ठिका
ब्रह्मजाले वुत्तसदिसाव। कूटदन्तो (दी०नि० १.१०९) ति तस्स 5
ब्राह्मणस्स नामं। उपक्खटो ति सज्जितो। वच्छतरसतानी ति
वच्छसतानि। उरब्भा ति तरुणमेण्डका वुच्चन्ति। एते ताव पाळियं
आगता येव। पाळियं पन अनागतानं पि अनेकेसं मिगपक्खीनं
सत्तसत्तसतानि सम्पिण्डितानेवा ति वेदितब्बानि। सब्बसत्तसतिकयागं
किरेस यजितुकामो होति। थूणूपनीतानी ति बन्धित्वा ठपनत्थाय 10
यूपसङ्खातं थूणं उपनीतानि।

६. तिविधं (दी०नि० १.११०) ति एत्थ विधा वुच्चति ठपना,
निट्ठपनं ति अत्थो। सोळसपरिक्खारं ति सोळसपरिवारं।

८. पटिवसन्ती ति यञ्ञानुभवनत्थाय पटिवसन्ति।

१४. भूतपुब्बं (दी०नि० १.११५) ति इदं भगवा पथवीगतं 15
निधिं उद्धरित्वा पुरतो रासिं करोन्तो विय भवपटिच्छन्नं पुब्बचरितं
दस्सेन्तो आह। महाविजितो ति सो किर सागरपरियन्तं महन्तं[1]
पथवीमण्डलं[1] विजिनि। इति महन्तं विजितमस्सा ति महाविजितो त्वेव R. 295
सङ्खं अगमासि। अड्ढो ति आदीसु यो कोचि अत्तनो सन्तकेन

१-१. महापठविमण्डलं—सी०, रो०।

विभवेन अड्ढो होति। अयं पन न केवलं अड्ढो येव, महद्धनो, महता अपरिमाणसङ्ख्येन धनेन समन्नागतो। पञ्चकामगुणवसेन महन्ता उळारा भोगा अस्सा ति महाभोगो। पिण्डपिण्डवसेन चेव सुवण्णमासकरजतमासकादिवसेन च जातरूपरजतस्स पहूतताय पहूतजातरूपरजतो, 5 अनेककोटिसङ्ख्येन जातरूपरजतेन समन्नागतो ति अत्थो। वित्ती ति तुट्ठि। वित्तिया उपकरणं वित्तूपकरणं तुट्ठिकारणं[1] ति अत्थो। पहूतं नानाविधालङ्कारसुवण्णरजतभाजनादिभेदं वित्तूपकरणमस्सा ति पहूतवित्तूपकरणो। सत्तरतनसङ्खातस्स निदहित्वा[2] ठपितधनस्स B; 264 सब्बपुब्बण्णापरण्णसङ्गहितस्स धञ्ञस्स च पहूतताय पहूतधनधञ्ञो। 10 अथवा[3] इदमस्स देवसिकं परिब्बयदानग्गहणादिवसेन परिवत्तनधनधञ्ञवसेन वुत्तं।

परिपुण्णकोसकोट्ठागारो ति कोसो वुच्चति भण्डागारं। निदहित्वा ठपितेन धनेन परिपुण्णकोसो, धञ्ञेन परिपुण्णकोट्ठागारो चा[4] ति अत्थो। अथवा चतुब्बिधो कोसो—हत्थी, अस्सा, रथा[5], पत्ती ति। कोट्ठागारं 15 तिविधं—धनकोट्ठागारं, वत्थकोट्ठागारं, धञ्ञकोट्ठागारं ति। तं सब्बं पि परिपुण्णमस्सा ति परिपुण्णकोसकोट्ठागारो।

उदपादी ति उप्पज्जि। अयं किर राजा एकदिवसं रतनावलोकनचारिकं[6] नाम निक्खन्तो। सो भण्डागारिकं पुच्छि—"तात, इदं एवं बहुधनं केन संघरितं'' ति? तुम्हाकं पितुपितामहादीहि[7] याव 20 सत्तमा कुलपरिवट्टा ति। इदं पन धनं संघरित्वा ते कुहिं गता ति? सब्बेव ते, देव, मरणवसं पत्ता ति। अत्तनो धनं अगहेत्वाव गता, ताता ति? देव, किं वदथ, धनं नामेतं पहाय गमनीयमेव, नो आदाय गमनीयं ति। अथ राजा निवत्तित्वा सिरिगब्भे निसिन्नो—'अधिगता

१. तुट्ठिकरणं—सी०।
२. निधेत्वा—सी०, रो०।
३. सी०, रो० पोत्थकेसु नत्थि।
४. च परिपुण्णकोट्ठागारो—सी०, रो०।
५. रथो—सी०।
६. रतनविलोकनचारिकं—स्या०; रतनविलोचनचरियं—सी०।
७. पितामहादीहि—सी०, रो०।

लो मे' ति आदीनि[1] चिन्तेसि । तेन वुत्तं—"एवं चेतसो परिवितक्को उदपादी" ति ।

१५. **ब्राह्मणं आमन्तेत्वा** ति कस्मा आमन्तेसि ? अयं किरेवं चिन्तेसि—'दानं देन्तेन नाम एकेन पण्डितेन सद्धिं मन्तेत्वा दातुं वट्टति, अनामन्तेत्वा कतकम्मम्हि पच्छानुतापं करोती' ति । तस्मा आमन्तेसि । अथ ब्राह्मणो चिन्तेसि—'अयं राजा महादानं दातुकामो, जनपदे चस्स बहू चोरा, ते अवूपसमेत्वा दानं देन्तस्स खीरदधितण्डुलादिके दानसम्भारे अहरन्तानं निप्पुरिसानि गेहानि चोरा विलुम्पिस्सन्ति जनपदो चोरभयेनेव कोलाहलो भविस्सति, ततो रञ्ञो दानं न चिरं पवत्तिस्सति, चित्तम्पिस्स एकग्गं न भविस्सति, हन्द, नं एतमत्थं सञ्ञापेमी' ति ततो तमत्थं सञ्ञापेन्तो[2] "भोतो, खो रञ्ञो" ति आदिमाह ।

R. 296 · 5 · 10

१६. तत्थ **सकण्टको** ति चोरकण्टकेहि सकण्टको । **पन्थदुहना** ति पन्थदुहा[3], पन्थघातका[4] ति अत्थो । **अकिच्चकारी अस्सा** ति अकत्तब्बकारी अधम्मकारी भवेय्य । **दस्सुखीलं** ति चोरखीलं । **वधेन वा** ति मारणेन वा कोट्टनेन वा । **बन्धनेना** ति अन्दुबन्धनादिना । **जानिया** ति हानिया; "सतं गण्हथ, सहस्सं गण्हथा" ति एवं पवत्तितदण्डेना ति अत्थो । **गरहाया** ति पञ्चसिखमुण्डकरणं, गोमयसिञ्चनं, गीवाय कुदण्डकबन्धनं ति एवमादीनि कत्वा गरहपापनेन । **पब्बाजनाया** ति रट्ठतो नीहरणेन । **समूहनिस्सामी** ति सम्मा हेतुना नयेन कारणेन ऊहनिस्सामि । **हतावसेसका** ति मतावसेसका । **उस्सहन्ती** ति उस्साहं करोन्ति । **अनुप्पदेतू** ति दिन्ने अप्पहोन्ते पुन अञ्ञं पि बीजं च भत्तं च कसिउपकरणभण्डं च[5] सब्बं देतू ति अत्थो । **पाभतं अनुप्पदेतू** (दी. नि. १.११६) ति सक्खिं अकत्वा पण्णे अनारोपेत्वा मूलच्छेज्जवसेन भण्डमूलं देतू ति अत्थो । भण्डमूलस्स हि पाभतं ति नामं । यथाह—

B. 265 · 15 · 20 · 25

१. आदिं—स्या०; आदि—सी०, रो० । २. ञापेन्तो—सी०, रो० ।
३. पन्थदोहा—सी०, रो० । ४. पन्थघाता ति—सी०, रो० ।
५. कसिपरिभण्डं—सी०, रो० ।

"अप्पकेन पि मेधावी, पाभतेन विचक्खणो।
समुट्ठापेति अत्तानं, अणु अग्गिं व सन्धमं" ति ॥

R. 297 (जा. १.४)

भत्तवेतनं ति देवसिकं भत्तं चेव मासिकादिपरिब्बयं च। तस्स तस्स
5 कुसलकम्मसूरभावानुरूपेन[1] ठानन्तरगामनिगमादिदानेन सद्धिं देतू ति
अत्थो। **सकम्मपसुता** ति कसिवणिज्जादीसु सकेसु कम्मेसु उय्युत्ता
ब्यावटा। **रासिको** ति धनधञ्ञानं रासिको। **खेमट्ठिता** ति खेमेन
ठिता अभया। **अकण्टका** ति चोरकण्टकरहिता। **मुदा मोदमाना** ति
मोदा मोदमाना। अयमेव वा पाठो। अञ्ञमञ्ञं पमुदितचित्ता ति
10 अधिप्पायो। **अपारुतघरा** ति चोरानं अभावेन द्वारानि असंवरित्वा[2]
विवटद्वारा ति अत्थो। **एतदवोचा** ति जनपदस्स सब्बाकारेन
इद्धफीतभावं ञत्वा एतं अवोच।

२. अनुमतिपक्खयञ्ञपरिक्खारवण्णना

१७. **तेन हि भवं राजा** ति ब्राह्मणो किर चिन्तेसि—"अयं राजा
महादानं दातुं अतिविय उस्साहजातो। सचे पन अत्तनो अनुयन्ता
15 खत्तियादयो अनामन्तेत्वा दस्सति, नास्स ते अत्तमना भविस्सन्ति; यथा
दानि ते[3] अत्तमना होन्ति, तथा करिस्सामी" ति। तस्मा "तेन हि,
भवं" ति आदिमाह। तत्थ **नेगमा** (दी० नि० १.११७) ति
B. 266 निगमवासिनो। **जानपदा** ति जनपदवासिनो। **आमन्तयतं** ति आमन्तेतु
जानापेतु। **यं मम अस्सा** ति यं तुम्हाकं अनुजाननं मम भवेय्य।
20 **अमच्चा** ति पियसहायका। **पारिसज्जा** ति सेसा आणत्तिकारका। **यजतं
भवं राजा** ति यजतु भवं। ते किर—"अयं राजा 'अहं इस्सरो' ति पसय्ह
दानं अदत्वा अम्हे आमन्तेसि। अहो तेन सुट्ठु कतं" ति अत्तमना
एवमाहंसु। अनामन्तिते पनस्स यञ्ञट्ठानं दस्सनाय पि न गच्छेय्युं।

१. कुलस्स ०—सी०, रो०। २. असंवरिता—सी०, रो०।
३. दानं ते—म०।

यञ्ञकालो महाराजा ति देय्यधम्मस्मिं हि असति महल्लककाले च एवरूपं दानं दातुं न सक्का, त्वं पन महाधनो चेव तरुणो च। एतेन[1] ते यञ्ञकालो ति दस्सेन्ता वदन्ति। **अनुमतिपक्खा** ति अनुमतिया पक्खा, अनुमतिदायका ति अत्थो। **परिक्खारा भवन्ती** ति परिवारा भवन्ति। "रथो सीलपरिक्खारो, झानक्खो चक्कवीरियो" 5 (सं०नि० ४.७) ति एत्थ पन अलङ्कारो परिक्खारो ति वुत्तो।

३. रञ्ञो अट्ठङ्गयञ्ञपरिक्खारवण्णना

१८. **अट्ठहङ्गेही** ति उभतो सुजातादीहि अट्ठहि[2] अङ्गेहि[2]। R. 298 **यससा** ति आणाठपनसमत्थताय। **सद्धो** ति दानस्स फलं अत्थी ति सद्दहति। **दायको** ति दानसूरो। न सद्धामत्तकेनेव तिट्ठति, 10 परिच्चजितुं पि सक्कोती ति अत्थो। **दानपती** ति यं दानं देति, तस्स पति हुत्वा देति, न दासो, न सहायो। यो हि अत्तना मधुरं भुञ्जति, परेसं अमधुरं देति, सो दानसङ्खातस्स देय्यधम्मस्स दासो हुत्वा देति। यो यं अत्तना भुञ्जति, तदेव देति, सो सहायो हुत्वा देति। यो पन अत्तना येन केनचि[3] यापेति, परेसं मधुरं देति, सो पति जेट्ठको सामी 15 हुत्वा देति। अयं तादिसो ति अत्थो।

समणब्राह्मणकपणद्धिकवणिब्बकयाचकानं ति एत्थ समितपापा समणा, बाहितपापा ब्राह्मणा। **कपणा** ति दुग्गता दलिद्दमनुस्सा। **अद्धिका** ति पथाविनो। **वणिब्बका** ति ये[4]—'इट्ठं दिन्नं, कन्तं, मनापं, कालेन अनवज्जं दिन्नं, ददं चित्तं पसादेय्य, गच्छतु भवं ब्रह्मलोकं' 20 ति आदिना नयेन दानस्स वण्णं थोमयमाना विचरन्ति। **याचका** ति ये—'पसतमत्तं देथ, सरावमत्तं देथा' ति आदीनि वत्वा याचमाना विचरन्ति। **ओपानभूतो** ति उदपानभूतो। सब्बेसं साधारणपरिभोगो[5],

१. तेन—स्या०। २. सी० रो० पोत्थकेसु नत्थि।
३. तेन—सी०। ४. येन—रो०।
५. परिभोगा—सी०।

B. 267 चतुमहापथे खतपोक्खरणी विय हुत्वा ति अत्थो। सुतजातस्सा ति एत्थ सुतमेव सुतजातं।

अतीतानागतपच्चुप्पन्ने अत्थे चिन्तेतुं ति एत्थ—'अतीते पुञ्ञस्स कतत्ता येव मे अयं सम्पत्ती'—ति, एवं चिन्तेन्तो अतीतमत्थं
5 चिन्तेतुं पटिबलो नाम होति। 'इदानि पुञ्ञं कत्वाव अनागते सक्का सम्पत्तिं पापुणितुं' ति चिन्तेन्तो अनागतमत्थं चिन्तेतुं पटिबलो नाम होति। 'इदं पुञ्ञकम्मं नाम सप्पुरिसानं आचिण्णं, मय्हं च भोगा
R. 299 पि संविज्जन्ति, दायकचित्तं पि अत्थि; हन्दाहं पुञ्ञानि करोमी' ति चिन्तेन्तो पच्चुप्पन्नमत्थं चिन्तेतुं पटिबलो नाम होती ति वेदितब्बो।

10 इति इमानी ति एवं यथा वुत्तानि एतानि। एतेहि किर अट्ठहङ्गेहि समन्नागतस्स दानं सब्बदिसाहि महाजनो उपसङ्कमति। 'अयं दुज्जातो कित्तकं कालं दस्सति, इदानि विप्पटिसारी हुत्वा उपच्छिन्दिस्सती' ति एवमादीनि चिन्तेत्वा न कोचि उपसङ्कमितब्बं[1] मञ्ञति। तस्मा एतानि अट्ठङ्गानि परिक्खारा भवन्ती ति वुत्तानि।

15
४. पुरोहितस्स चतुरङ्गयञ्ञपरिक्खारादिवण्णना

१९. सुजं पग्गण्हन्तानं (दी० नि० १.११८) ति महायागपटिग्गण्हनट्ठाने दानकटच्छुं पग्गण्हन्तानं। इमेहि चतूही ति एतेहि सुजातादीहि। एतेसु हि असति[2]—'एवं दुज्जातस्स संविधानेन पवत्तदानं कित्तकं काल पवत्तिस्सती' ति आदीनि वत्वा उपसङ्कमितारो न
20 होन्ति। गरहितब्बाभावतो पन उपसङ्कमन्ति येव। तस्मा इमानि पि परिक्खारा भवन्ती ति वुत्तानि।

२०. तिस्सो विधा देसेसी ति तीणि ठपनानि देसेसि। सो किर चिन्तेसि—'दानं ददमाना नाम तिण्णं ठानानं अञ्ञतरस्मिं चलन्ति; हन्दाहं इमं राजानं तेसु ठानेसु पठमतरञ्ञेव निच्चलं करोमी' ति।
25 तेनस्स तिस्सो विधा देसेसी ति। सो भोतो रञ्ञो ति इदं करणत्थे

१. अनुपसङ्कमितब्बं—सी०। २-२. हि सति—सी०; असति—स्या०।

सामिवचनं। भोता रञ्ञा ति वा पाठो। **विप्पटिसारो न करणीयो** ति भोगानं विगमहेतुको पच्छानुतापो न कत्तब्बो। पुब्बचेतना पन अचला पतिट्ठपेतब्बा[1]। एवञ्हि दानं महप्फलं होती ति दस्सेति। इतरेसु पि द्वीसु ठानेसु एसेव नयो। मुञ्चचेतना पि हि पच्छासमनुस्सरणचेतना च निच्चला व कातब्बा। तथा अकरोन्तस्स दानं न महप्फलं होति, नापि उळारेसु भोगेसु चित्तं नमति, महारोरुवं उपपन्नस्स सेट्ठिगहपतिनो विय। B. 268 5

२१. **दसहाकारेही** ति दसहि कारणेहि। तस्स किर एवं अहोसि—"सचायं राजा दुस्सीले दिस्वा—'नस्सति वत मे दानं, यस्स मे एवरूपा दुस्सीला भुञ्जन्ती" ति सीलवन्तेसु पि विप्पटिसारं उप्पादेस्सति, दानं न महप्फलं भविस्सति। विप्पटिसारो च नाम दायकानं पटिग्गाहकतोव उप्पज्जति[2]—"हन्दस्स पठममेव तं विप्पटिसारं विनोदेमी' ति। तस्मा दसहाकारेहि उपच्छिज्जितुं युत्तं पटिग्गाहकेसु पि[3] विप्पटिसारं विनोदेसी ति। **तेसं येव तेना** ति तेसं येव तेन पापेन अनिट्ठो विपाको भविस्सति, न अञ्ञेसं ति दस्सेति। **यजतं भवं** ति देतु भवं। **सज्जतं** ति विस्सज्जेतु। **अन्तरं** ति अब्भन्तरं। 10 R. 300 15

२२. **सोळसहि आकारेहि चित्तं सन्दस्सेसी** (दी० नि० १.११९) ति इध ब्राह्मणो रञ्ञो महादानानुमोदनं नाम आरद्धो। तत्थ **सन्दस्सेसी** ति—'इदं दानं दाता एवरूपं सम्पत्तिं लभती' ति दस्सेत्वा दस्सेत्वा कथेसि। **समादपेसी** ति तदत्थं[4] समादपेत्वा[4] कथेसि। **समुत्तेजेसी** ति विप्पटिसारविनोदनेनस्स[5] चित्तं वोदापेसि। **सम्पहंसेसी** ति 'सुन्दरं ते कतं, महाराज, दानं ददमानेना' ति थुतिं कत्वा[6] कथेसि। **वत्ता धम्मतो नत्थी** ति धम्मेन समेन कारणेन वत्ता नत्थि। 20

१. पतिट्ठापेतब्बा—सी०, रो०।
२. उप्पज्जिस्सति—सी०, रो०।
३. सी०, रो० पोत्थकेसु नत्थि।
४-४. तमत्थं तस्मा आदपेत्वा (अ.दापेत्वा—सी०) गाहापेत्वा गाहापेत्वा—सी०, रो०।
५. विप्पटिसारविनोदनेन तस्स—सी०,रो०।
६. कत्वा कत्वा—सी० रो०।

२३. **न रुक्खा छिज्जिंसु यूपत्थाय न दब्भो लूयिंसु बरिहिसत्थाया** (दी॰ नि॰ १.१२१) ति ये यूपनामके महाथम्भे उस्सापेत्वा—'असुकराजा असुकामच्चो[१] असुकब्राह्मणो एवरूपं नाम महायागं यजती' ति नामं लिखित्वा ठपेन्ति । यानि च दब्भतिणानि
5 लायित्वा वनमालासङ्खेपेन यञ्ञसालं परिक्खिपन्ति, भूमियं वा पत्थरन्ति[२], ते पि न रुक्खा छिज्जिंसु, न दब्भा लूयिंसु । किं पन गावो वा अजादयो वा हञ्ञिस्सन्ती ति दस्सेति । **दासा** ति अन्तोगेहदासादयो । **पेस्सा** ति ये पुब्बमेव धनं गहेत्वा कम्मं करोन्ति । **कम्मकरा** ति ये
R. 301 भत्तवेतनं गहेत्वा करोन्ति । **दण्डतज्जिता** नाम दण्डयट्ठिमुग्गरादीनि
B. 269 10 गहेत्वा—'कम्मं करोथ करोथा' ति एवं तज्जिता । **भयतज्जिता** नाम—'सचे कम्मं करोसि, कुसलं, नो चे करोसि, छिन्दिस्साम वा बन्धिस्साम वा मारेस्साम वा' ति एवं भयेन तज्जिता । एते पन न दण्डतज्जिता, न भयतज्जिता, न अस्सुमुखा रोदमाना परिकम्मानि अकंसु; अथ खो पियसमुदाचारेनेव समुदाचरियमाना अकंसु । न हि
15 तत्थ दासं वा दासा ति, पेस्सं वा पेस्सा ति, कम्मकरं वा कम्मकरा ति आलपन्ति । यथानामवसेनेव पन पियसमुदाचारेन आलपित्वा इत्थिपुरिसबलवन्तदुब्बलानं अनुरूपमेव कम्मं दस्सेत्वा—'इदञ्चिदञ्च करोथा' ति वदन्ति । ते पि अत्तनो रुचिवसेनेव करोन्ति । तेन वुत्तं—"ये इच्छिंसु, ते अकंसु; ये न इच्छिंसु, न ते अकंसु । यं इच्छिंसु, तं
20 अकंसु; यं न इच्छिंसु, न तं अकंसू" ति ।

सप्पितेलनवनीतदधिमधुफाणितेन चेव सो यञ्ञो निट्ठानमगमासी ति राजा किर बहिनगरस्स चतूसु द्वारेसु अन्तोनगरस्स च मज्झे ति पञ्चसु ठानेसु महादानसालायो कारापेत्वा[३] एकेकिस्साय[४] सालाय सतसहस्सं सतसहस्सं[५] कत्वा दिवसे दिवसे पञ्चसतसहस्सानि विस्सज्जेत्वा

१. रो॰ पोत्थके नत्थि ।
२. सन्थरन्ति—सी॰, रो॰ ।
३. कारेत्वा—सी॰, रो॰ ।
४. एकेकिस्सा—सी॰, रो॰ ।
५. रो॰ पोत्थके नत्थि ।

सूरियुग्गमनतो पट्ठाय तस्स तस्स कालस्स अनुरूपेहि सहत्थेन सुवण्णकटच्छुं गहेत्वा पणीतेहि सप्पितेलादिसम्मिस्सेहेव यागुखज्जक-भत्तब्यञ्जनपानकादीहि महाजनं सन्तप्पेसि । भाजनानि पूरेत्वा गण्हितुकामानं तथेव दापेसि । सायण्हसमये पन वत्थगन्धमालादीहि सम्पूजेसि । सप्पिआदीनं पन महाचाटियो पूरापेत्वा—'यो यं परिभुञ्जितुकामो, सो तं परिभुञ्जतू' ति अनेकसतेसु ठानेसु ठपापेसि । तं सन्धाय वुत्तं—"सप्पितेलनवनीतदधिमधुफाणितेन चेव सो यञ्ञो निट्ठानमगमासी" ति । 5

२४. **पहूतं सापतेय्यं आदाया** ति बहुं धनं गहेत्वा । ते किर चिन्तेसुं—'अयं राजा सप्पितेलादीनि जनपदतो अनाहरापेत्वा अत्तनो सन्तकमेव नीहरित्वा महादानं देति । अम्हेहि पन राजा न किञ्चि आहरापेती ति न युत्तं तुण्ही भवितुं । न हि रञ्ञो घरे धनं अक्खयधम्ममेव, अम्हेसु च अदेन्तेसु को अञ्ञो रञ्ञो दस्सति, हन्दस्स धनं उपसंहरामा' ति ते गामभागेन[1] च निगमभागेन[2] च नगरभागेन[3] च[4] सापतेय्यं संहरित्वा सकटानि पूरेत्वा रञ्ञो उपहरिंसु । तं सन्धाय—"पहूतं सापतेय्यं" ति आदिमाह । 10 R. 302 15 B. 270

२५. **पुरत्थिमेन यञ्ञवाटस्सा** ति पुरत्थिमतो नगरद्वारे दानसालाय पुरत्थिमभागे । यथा पुरत्थिमदिसतो आगच्छन्ता खत्तियानं दानसालाय यागुं पिवित्वा रञ्ञो दानसालाय भुञ्जित्वा नगरं पविसन्ति; एवरूपे ठाने पट्ठपेसुं । **दक्खिणेन यञ्ञवाटस्सा** ति दक्खिणतो नगरद्वारे दानसालाय वुत्तनयेनेव दक्खिणभागे पट्ठपेसुं[5] । पच्छिमुत्तरेसु पि एसेव नयो । 20

२६. **अहो यञ्ञो अहो यञ्ञसम्पदा** (दी०नि० १.१२२) ति ब्राह्मणा सप्पिआदीहि निट्ठानगमनं सुत्वा—'यं लोके मधुरं, तदेव

१. गामभङ्गेन—रो० । २. ० भङ्गेन—रो० ।
३. ० भङ्गेन—रो० । ४. एव च—सी०, रो० ।
५. ठपेंसु—सी० ।

समणो गोतमो कथेति, हन्दस्स यञ्ञं पसंसामा' ति तुट्ठचित्ता पसंसमाना एवमाहंसु । **तुण्हीभूतो व निसिन्नो होती** ति उपरि वत्तब्बमत्थं चिन्तयमानो निस्सद्दो व निसिन्नो होति । **अभिजानाति पन भवं गोतमो** ति इदं ब्राह्मणो परिहारेन पुच्छन्तो आह । इतरथा 5 हि—'किं पन त्वं, भो गोतम, तदा राजा अहोसि, उदाहु पुरोहितो ब्राह्मणो' ति एवं उजुकमेव पुच्छयमानो[1] अगारवो विय होति ।

५. महानिसंसतरयञ्ञवण्णना

२७. **अत्थि पन, भो गोतमा** (दी०नि० १.१२३) ति—'इदं ब्राह्मणो सकल-जबुदीपवासीनं उट्ठाय समुट्ठाय दानं नाम दातुं गरुकं सकलजनपदो 10 च अत्तनो कम्मानि अकरोन्तो नस्सिस्सति, अत्थि नु खो अम्हाकं पि इमम्हा यञ्ञा यञ्ञो अञ्ञो अप्पसमारम्भतरो चेव महप्फलतरो चा' ति एतमत्थं पुच्छन्तो आह । **निच्चदानानी** ति धुवदानानि निच्चभत्तानि । **अनुकुल-यञ्ञानी** ति—'अम्हाकं पितुपितामहादीहि[2] पवत्तितानी' ति कत्वा पच्छा दुग्गतपुरिसेहि पि वंसपरम्पराय पवत्तेतब्बानि यागानि । 51 एवरूपानि किर सीलवन्ते उद्दिस्स निबद्धदानानि तस्मिं कुले दलिद्दा पि न उपच्छिन्दन्ति ।

R. 303 तत्रिदं वत्थु[3]—अनाथपिण्डिकस्स किर घरे पञ्च निच्चभत्तसतानि दीयिंसु । दन्तमयसलाकानि[4] पञ्चसतानि अहेसुं । अथ तं कुलं अनुक्कमेन दालिद्दियेन अभिभूतं, एका तस्मिं कुले दारिका 20 एकसलाकतो उद्धं दातुं नासक्खि । सा पि पच्छा सेतवाहनरज्जं गन्त्वा खलं सोधेत्वा लद्धधञ्ञेन तं सलाकं अदासि । एको थेरो रञ्ञो B. 271 आरोचेसि । राजा तं आनेत्वा अग्गमहेसिट्ठाने ठपेसि । सा ततो पट्ठाय पुन पञ्च पि सलाकभत्तसतानि[5] पवत्तेसि ।

१. पुच्छियमाने—सी०, रो० ।
२. पितिपितामहादीहि—स्या०, रो० ।
३. वत्थुं—सी० ।
४. दन्तमयसलाकानं०—रो० ।
५. सलाकसतानि—रो० ।

दण्डप्पहारा ति—'पटिपाटिया तिट्ठथ तिट्ठथा' ति उजुं गन्त्वा गणहथ गण्हथा ति च आदीनि वत्वा दीयमाना दण्डप्पहारा पि गलग्गाहा पि दिस्सन्ति । अयं खो, ब्राह्मण, हेतु...पे...महानिसंसतरं चा ति । एत्थ यस्मा महायञ्ञे विय इमस्मिं सलाकभत्ते न बहूहि वेय्यावच्चकरेहि वा उपकरणेहि वा अत्थो अत्थि, तस्मा एतं[1] अप्पट्ठतरं । यस्मा चेत्थ न बहूनं कम्मच्छेदवसेन पीळासङ्खातो समारम्भो अत्थि, तस्मा अप्पसमारम्भतरं । यस्मा चेतं सङ्घस्स यिट्ठं परिच्चत्तं, तस्मा यञ्ञं ति वुत्तं । यस्मा पन छळङ्गसमन्नागताय दक्खिणाय महासमुद्दे उदकस्सेव न सुकरं पुञ्ञाभिसन्दस्स पमाणं कातुं, इदञ्च तथाविधं । तस्मा तं महप्फलतरं च महानिसंसतरं चा ति वेदितब्बं । इदं सुत्वा ब्राह्मणो चिन्तेसि—'इदम्पि निच्चभत्तं[2] उट्ठाय समुट्ठाय ददतो दिवसे दिवसे एकस्स कम्मं नस्सति । नवनवो उस्साहो च जनेतब्बो होति,[3] अत्थि नु खो इतो पि अञ्ञो यञ्ञो अप्पट्ठतरो च अप्पसमारम्भतरो चा' ति । तस्मा "अत्थि पन, भो गोतमा" ति आदिमाह । तत्थ यस्मा सलाकभत्ते किच्चपरियोसानं नत्थि, एकेन उट्ठाय समुट्ठाय अञ्ञं कम्मं अकत्वा संविधातब्बमेव । विहारदाने पन किच्चपरियोसानं अत्थि । पण्णसालं वा हि कारेतुं कोटिधनं विस्सज्जेत्वा महाविहारं वा,[4] एकवारं धनपरिच्चागं कत्वा कारितं सत्तट्ठवस्सानि पि वस्ससतं पि वस्ससहस्सम्पि गच्छति येव । केवलं जिण्णपतितट्ठाने[5] पटिसङ्खरणमत्तमेव कातब्बं होति । तस्मा इदं विहारदानं सलाकभत्ततो अप्पट्ठतरं[6] अप्पसमारम्भतरं च होति । यस्मा पनेत्थ सुत्तन्तपरियायेन यावदेव सीतस्स पटिघातया ति आदयो नवानिसंसा वुत्ता, खन्धपरियायेन—

> "सीतं उण्हं पटिहन्ति, ततो वाळमिगानि च ।
> सिरिंसपे च मकसे च, सिसिरे चा पि वुट्ठियो ॥

१. तं—स्या० । २. पिण्डभत्तं—रो० ।
३. वा होति—रो० । ४. ०कारेतुं—स्या० ।
५. चिण्णपतितट्ठाने—रो० । ६. च, अप्पसमारम्भतरं—स्या० ।

ततो वातातपो घोरो, सञ्जातो पटिहञ्ञति ।
लेणत्थं च सुखत्थं च, झायितुं च विपस्सितुं ॥
विहारदानं सङ्घस्स, अग्गं बुद्धेन वण्णितं ।
तस्मा हि पण्डितो पोसो, सम्पस्सं अत्थमत्तनो ।
5 विहारे कारये रम्मे, वासयेत्थ बहुस्सुते ॥
तस्मा अन्नं च पानं च, वत्थसेनासनानि च ।
ददेय उजुभूतेसु, विप्पसन्नेन चेतसा ॥
ते तस्स धम्मं देसेन्ति, सब्बदुक्खापनूदनं ।
यं सो धम्मं इधञ्ञाय, परिनिब्बाति अनासवो ति ॥
10 (चु० व० २४०)–

सत्तरसानिसंसा वुत्ता;
तस्मा एतं[1] सलाकभत्ततो महप्फलतरं च महानिसंसतरं चा ति वेदितब्बं । सङ्घस्स पन परिच्चत्तत्ता व यञ्ञो ति वुच्चति । इदं पि
B. 272 सुत्वा ब्राह्मणो चिन्तेसि—'धनपरिच्चागं कत्वा विहारदानं नाम दुक्करं,
15 अत्तनो सन्तका[2] हि काकणिका[2] पि परस्स दुप्परिच्चजा, हन्दाहं इतो पि अप्पट्ठतरं च[3] अप्पसमारम्भतरं[4] च[5] यञ्ञं पुच्छामी' ति । ततो तं पुच्छन्तो—"अत्थि पन भो" ति आदिमाह ।

२८-२९. तत्थ यस्मा सकिं परिच्चत्ते पि विहारे पुनप्पुनं छादनखण्डफुल्लप्पटिसङ्खरणादिवसेन किच्चं अत्थि येव, सरणं पन
20 एकभिक्खुस्स वा सन्तिके सङ्घस्स वा गणस्स वा सकिं गहितं गहितमेव होति, नत्थि तस्स[6] पुनप्पुनं कत्तब्बता, तस्मा तं विहारदानतो अप्पट्ठतरं च अप्पसमारम्भतरं च होति । यस्मा च[7] सरणगमनं नाम तिण्णं रतनानं जीवितपरिच्चागमयं पुञ्ञकम्मं[8] सग्गसम्पत्तिं[9] देति, तस्मा

१. एवं—सी० ।
२-२. सन्तककाकणिका पि—सी०; सन्तका काकणिका पि—रो० ।
३. सी०-रो० पोत्थकेसु नत्थि ।
४. समारम्भतरं—सी०, रो० ।
५. सी०-रो० पोत्थकेसु नत्थि ।
६. तत्थ—रो० ।
७. सी०-रो० पोत्थकेसु नत्थि ।
८. पुञ्ञं—सी०, रो० ।
९. सक्कसम्पत्ति—सी० ।

महप्फलतरं च महानिसंसतरं चा ति वेदितब्बं। तिण्णं पन रतनानं जीवितपरिच्चागवसेन यञ्ञो ति वुच्चति।

३०. इदं सुत्वा ब्राह्मणो चिन्तेसि—'अत्तनो जीवितं नाम परस्स परिच्चजितुं दुक्करं, अत्थि नु खो इतो पि अप्पट्ठतरो यञ्ञो' ति, ततो तं पुच्छन्तो पुन "अत्थि पन, भो गोतमा" (दी० नि० १.१२४) ति आदिमाह। तत्थ पाणातिपाता वेरमणी ति आदीसु वेरमणी नाम विरति। सा तिविधा होति—सम्पत्तविरति, समादानविरति सेतुघातविरती ति। तत्थ यो सिक्खापदानि अगहेत्वा पि केवलं अत्तनो जातिगोत्तकुलापदेसादीनि अनुस्सरित्वा—'न मे इदं पतिरूपं' ति पाणातिपातादीनि न करोति, सम्पत्तवत्थुं परिहरति। ततो आरका[1] विरमति। तस्स सा विरति सम्पत्तविरती ति वेदितब्बा।

R. 305

5

10

'अज्जतग्गे जीवितहेतु पि पाणं न हनामी' ति वा 'पाणातिपाता विरमामी' ति वा 'वेरमणिं समादियामी' ति वा एवं सिक्खापदानि गण्हन्तस्स पन विरति समादानविरती ति वेदितब्बा।

अरियसावकानं पन मग्गसम्पयुत्ता विरति सेतुघातविरति नाम। तत्थ पुरिमा द्वे विरतियो यं वोरोपनादिवसेन[2] वीतिक्कमितब्बं जीवितिन्द्रियादिवत्थु, तं आरम्मणं कत्वा पवत्तन्ति। पच्छिमा निब्बानारम्मणा व।

15

एत्थ च यो पञ्च सिक्खापदानि एकतो गण्हति, तस्स एकस्मिं भिन्ने सब्बानि भिन्नानि होन्ति। यो एकेकं गण्हति, सो यं वीतिक्कमति, तदेव भिज्जति। सेतुघातविरतिया पन भेदो नाम नत्थि। भवन्तरे पि हि अरियसावको जीवितहेतु पि नेव पाणं हनति न सुरं पिवति। सचे पिस्स सुरं च खीरं च मिस्सेत्वा मुखे पक्खिपन्ति, खीरमेव पविसति, न सुरा। यथा किं? कोञ्चसकुणानं[3] खीरमिस्सके

20

B. 273

१. स्या० पोत्थके नत्थि।
२. जीविताबोरोपनादिवसेन—सी०, रो०।
३. यथा किर कोञ्चसकुणानं—स्या०; यथा कोञ्चसकुणानं—रो०।

उदके खीरमेव पविसति, न उदकं। इदं योनिसिद्धं ति चे[1], इदं धम्मतासिद्धं ति च वेदितब्बं।

यस्मा पन सरणगमने दिट्ठिउजुककरणं नाम भारियं, सिक्खापद-समादाने पन विरतिमत्तकमेव; तस्मा एतं यथा वा[2] तथा वा[3]
5 गण्हन्तस्सा पि साधुकं गण्हन्तस्सा पि अप्पट्ठतरं च[4] अप्पसमारम्भतरं च। पञ्चसीलसदिसस्स पन दानस्स अभावतो[5] एत्थ महप्फलता महानिसंसता च वेदितब्बा। वुत्तं हेतं—

R. 306 "पञ्चिमानि, भिक्खवे, दानानि महादानानि अग्गञ्ञानि रत्तञ्ञानि वंसञ्ञानि पोराणानि असंकिण्णानि असंकिण्णपुब्बानि न सङ्कियन्ति
10 न सङ्कियिस्सन्ति अप्पटिकुट्ठानि समणेहि ब्राह्मणेहि विञ्ञूहि। कतमानि पञ्च? इध, भिक्खवे, अरियसावको पाणातिपातं पहाय पाणातिपाता पटिविरतो होति। पाणातिपाता पटिविरतो, भिक्खवे, अरियसावको अपरिमाणानं सत्तानं अभयं देति, अवेरं देति, अब्यापज्झं देति। अपरिमाणानं सत्तानं अभयं दत्वा अवेरं दत्वा अब्यापज्झं दत्वा अपरि-
15 माणस्स अभयस्स अवेरस्स अब्यापज्झस्स भागी होति। इदं[6], भिक्खवे, पठमं दानं महादानं...पे...विञ्ञूही ति। पुन च परं, भिक्खवे, अरियसावको अदिन्नादानं पहाय...पे...कामेसुमिच्छाचारं पहाय ...पे...मुसावादं पहाय...पे...सुरामेरयमज्जपमादट्ठानं पहाय...पे... इमानि खो, भिक्खवे, पञ्च दानानि महादानानि अग्गञ्ञानि...पे...
20 विञ्ञूही" (अं०नि० ३.३५) ति।

इदं च पन सीलपञ्चकं—"अत्तसिनेहं च जीवितसिनेहं[7] च परिच्चजित्वा रक्खिस्सामी" ति समादिन्नताय यञ्ञो ति वुच्चति। तत्थ किञ्चा पि पञ्चसीलतो सरणगमनमेव जेट्ठकं, इदं पन सरणगमने[8] येव पतिट्ठाय रक्खितसीलवसेन[9] महप्फलं ति वुत्तं।

१. चेव—स्या०।
२. सी०-रो० पोत्थकेसु नत्थि।
३. सी०-रो० पोत्थकेसु नत्थि।
४. सी०-रो० पोत्थकेसु नत्थि।
५. नाम अभावतो—सी०, रो०।
६. इदं पि—सी०।
७. जीवितं—सी०, रो०।
८. सरणे—सी०, रो०।
९. रक्खनसीलवसेन—रो०।

B. 274

३१-३२ इदं पि सुत्वा ब्राह्मणो चिन्तेसि—"पञ्चसीलं नाम रक्खितुं गरुकं[1], अत्थि नु खो अञ्ञं किञ्चि ईदिसमेव हुत्वा इतो अप्पट्ठतरं च महप्फलतरं चा ति। ततो तं पुच्छन्तो पुन पि—"अत्थि पन, भो गोतमा" (दी० नि० १.१२५) ति आदिमाह। अथस्स भगवा तिविधसीलपारिपूरियं ठितस्स पठमज्झानादीनं यञ्ञानं अप्पट्ठतरं च 5 महप्फलतरं च दस्सेतुकामो बुद्धुप्पादतो पट्ठाय देसनं आरभन्तो "इध ब्राह्मणा" ति आदिमाह।

तत्थ यस्मा हेट्ठा वुत्तेहि गुणेहि समन्नागतो पठमं झानं, पठमज्झानादीसु ठितो दुतियज्झानादीनि[2] निब्बत्तेन्तो न किलमति, तस्मा तानि अप्पट्ठानि अप्पसमारम्भानि। यस्मा पनेत्थ पठज्मझानं 10 एककप्पं ब्रह्मलोके आयुं देति, दुतियं अट्ठकप्पे[3], ततियं चतुसट्ठिकप्पे, चतुत्थं पञ्चकप्पसतानि तदेव आकासानञ्चायतनादिसमापत्तिवसेन भावितं वीसति, चत्तालीसं, सट्ठि, चतुरासीति च कप्पसहस्सानि आयुं देति; तस्मा महप्फलतरं[4] च महानिसंसतरं[4] च। नीवरणादीनं पन पच्चनीकानं धम्मानं परिच्चत्तत्ता तं यञ्ञं ति वेदितब्बं। 15

R. 307

विपस्सनाञाणं पि यस्मा चतुत्थज्झानपरियोसानेसु गुणेसु पतिट्ठाय निब्बत्तेन्तो न किलमति, तस्मा अप्पट्ठं अप्पसमारम्भं; विपस्सना-सुखसदिसस्स पन सुखस्स अभावा महप्फलं। पच्चनीककिलेसपरिच्चागतो यञ्ञो ति। मनोमयिद्धि पि यस्मा विपस्सनाञाणे पतिट्ठाय निब्बत्तेन्तो न किलमति, तस्मा अप्पट्ठा[5] अप्पसमारम्भा; अत्तनो सदिसरूप- 20 निम्मानसमत्थताय महप्फला। अत्तनो[6] पच्चनीककिलेसपरिच्चागतो[7] यञ्ञो। इद्धिविधञाणादीनि पि यस्मा मनोमयञाणादीसु पतिट्ठाय निब्बत्तेन्तो न किलमति, तस्मा अप्पट्ठानि अप्पसमारम्भानि। अत्तनो

१. गरु—रो०।
२. दुतियादीनि—सी०।
३. अट्ठकप्पे आयुं देति—रो०।
४-४. महप्फलं महानिसंसं—सी०।
५. सा अप्पट्ठा—सी०, रो०।
६. सी०, रो० पोत्थकेसु नत्थि।
७. न पच्चनीककिलेसपरिच्चागतो—रो०; अप्पच्चनीक—सी०।

अत्तनो पच्चनीककिलेसप्पहानतो यञ्ञो। इद्धिविधं पनेत्थ नानाविध-विकुब्बनदस्सनसमत्थताय। दिब्बसोतं देवमनुस्सानं सद्दसवनसमत्थताय; चेतोपरियञाणं परेसं सोळसविधचित्तजाननसमत्थाय; पुब्बेनिवासा-नुस्सतिञाणं इच्छितिच्छितट्ठानसमनुस्सरणसमत्थताय; दिब्बचक्खु
5 इच्छितिच्छितरुपदस्सनसमत्थताय; आसवक्खयञाणं अतिपणीत-लोकुत्तरमग्गसुखनिप्फादनसमत्थताय महप्फलं ति वेदितब्बं। यस्मा पन अरहत्ततो विसिट्ठतरो अञ्ञो यञ्ञो[1] नाम नत्थि, तस्मा अरहत्त-निकूटेनेव देसनं समापेन्तो—"अयं पि खो, ब्राह्मणा" ति आदिमाह।

उपासकत्तपटिवेदनवण्णना

B. 275 ३३-३७. एवं वुत्ते(दी०नि०१.१२६)ति एवं भगवता वुत्ते देसनाय
10 पसीदित्वा सरणं गन्तुकामो कूटदन्तो ब्राह्मणो—'एतं अभिक्कन्तं भो, गोतमा' ति आदिकं वचनं अवोच। उपवायतू ति उपगन्त्वा सरीरदरथं निब्बापेन्तो तनुसीतलो वातो वायतू[2] ति[2]। इदं च पन वत्वा ब्राह्मणो पुरिसं पेसेसि—'गच्छ, तात, यञ्ञावाटं पविसित्वा सब्बे ते पाणयो[3] बन्धना मोचेही" ति। सो "साधू" ति पटिस्सुणित्वा तथा कत्वा
R. 308 15 आगन्त्वा "मुत्ता भो, ते पाणयो" ति आरोचेसि। याव ब्राह्मणो तं पवत्तिं न सुणि, न ताव भगवा धम्मं देसेसि। कस्मा? ब्राह्मणस्स चित्ते आकुलभावो अत्थी ति। सुत्वा पनस्स "बहू वत मे पाणा मोचिता" ति चित्तचारो विप्पसीदति[4]। भगवा तस्स विप्पसन्नमनतं ञत्वा धम्म-देसनं आरभि। तं सन्धाय—"अथ खो भगवा" ति आदि वुत्तं। पुन
20 'कल्लचित्तं' ति आदि आनुपुब्बिकथानुभावेन विक्खम्भितनीवरणतं सन्धाय वुत्तं। सेसं उत्तानत्थमेवा ति।

इति सुमङ्गलविलासिनिया दीघनिकायट्ठकथायं
कूटदन्तसुत्तवण्णना निट्ठिता।

---

१. यागो—सी०।
२-२. वायतु—सी० रो०।
३. पाणो—सी०।
४. विप्पसीदि—सी० रो०।

(६) महालिसुत्तवण्णना

१. निदानवण्णना

B. 278; R. 309

१. एवं मे सुतं एकं समयं भगवा वेसालियं (दी० नि० १.१२८) ति महालिसुत्तं। तत्रायं अपुब्बपदवण्णना। वेसालियं ति पुनप्पुनं विसालभावूपगमनतो वेसाली ति लद्धनामके नगरे। महावने ति बहिनगरे हिमवन्तेन सद्धिं एकाबद्धं हुत्वा ठितं सयं जातवनं अत्थि, यं महन्तभावेनेव महावनं ति वुच्चति, तस्मिं महावने। कूटागारसालायं 5 ति तस्मिं वनसण्डे सङ्घारामं पतिट्ठपेसुं। तत्थ कण्णिकं योजेत्वा थम्भानं उपरि कूटागारसालासङ्खेपेन देवविमानसदिसं पासादं अकंसु। तं उपादाय सकलो पि सङ्घारामो कूटागारसाला ति पञ्ञायित्थ। भगवा तं वेसालिं उपनिस्साय तस्मिं सङ्घारामे विहरति। तेन वुत्तं—"वेसालियं विहरति महावने कूटागारसालायं" ति। कोसलका ति कोसलरट्ठ- 10 वासिनो। मागधका ति मगधरट्ठवासिनो। करणीयेना ति अवस्सं कत्तब्बकम्मेन। यं हि अकातुं पि वट्टति, तं किच्चं ति वुच्चन्ति;[१] यं अवस्सं कातब्बमेव, तं करणीयं नाम।

२. पटिसल्लीनो भगवा ति नानारम्मणचारतो पटिक्कम्म सल्लीनो निलीनो, एकीभावं उपगम्म एकत्तारम्मणे झानरतिं अनुभवतो ति 15 अत्थो। तत्थेव ति तस्मिं येव विहारे। एकमन्तं ति तस्मा[२] ठाना R. 310 अपक्कम्म तासु तासु रुक्खच्छायासु निसीदिंसु।

२. ओट्ठद्धलिच्छवीवत्थुवण्णना

३. ओट्ठद्धो ति अद्धोट्ठताय एवंलद्धनामो। महतिया लिच्छवी-परिसाया ति पुरेभत्तं बुद्धप्पमुखस्स भिक्खुसङ्घस्स दानं दत्वा भगवतो

१. वुच्चति—सी०, रो०। २. उस्मा—सी०, रो०।

सन्तिके उपोसथङ्गानि अधिट्ठहित्वा गन्धमालादीनि गाहापेत्वा उग्घोसनाय महतिं लिच्छविराजपरिसं सन्निपातापेत्वा[1] ताय नील-पीतादिवण्णवत्थाभरणविलेपनपटिमण्डिताय तावतिंसपरिससप्पटिभागाय
B. 277 महतिया लिच्छविपरिसाय सद्धिं उपसङ्कमि। **अकालो खो महाली**
5 (दी० नि० १.१२९) ति तस्स ओट्ठद्धस्स महाली ति मूलनामं, तेन मूलनाममत्तेन[2] नं थेरो महाली ति[3] आलपति। **एकमन्तं निसीदी** ति पतिरूपासु रुक्खच्छायासु ताय लिच्छविपरिसाय सद्धिं रतनत्तयस्स वण्णं कथयन्तो निसीदि।

४. **सीहो समणुद्देसो** ति आयस्मतो नागितस्स भागिनेय्यो
10 सत्तवस्सकाले पब्बजित्वा सासने युत्तपयुत्तो सीहो ति एवंनामको सामणेरो। सो किर तं महापरिसं दिस्वा—"अयं परिसा महती, सकलं विहारं पूरेत्वा निसिन्ना। अद्धा भगवा अज्ज इमिस्सा परिसाय महन्तेन उस्साहेन धम्मं देसेस्सति। यन्नूनाहं उपज्झायस्साचिक्खित्वा भगवतो महापरिसाय सन्निपतितभावं आरोचापेय्यं" ति चिन्तेत्वा येनायस्मा
15 नागितो तेनुपसङ्कमि। **भन्ते कस्सपा** ति थेरं गोत्तेन आलपति। **एसा जनता** ति जनसमूहो।

त्वञ्ञेव भगवतो आरोचेही ति सीहो किर भगवतो विस्सासिको। अयं हि थेरो थूलसरीरो, तेनस्स सरीरगरुताय उट्ठान-निसज्जादीसु आलसियभावो ईसकं[4] अप्पहीनो विय होति। अथायं
20 सामणेरो भगवतो कालेन कालं वत्तं करोति। तेन नं थेरो 'त्वं पि दसबलस्स विस्सासिको' ति वत्वा गच्छ त्वञ्ञेवारोचेही ति आह। **विहारपच्छायायं** ति विहारच्छायायं, कूटागारमहागेहच्छायाय फरितो-
R. 311 कासो ति अत्थो। सा किर कूटागारसाला दक्खिणुत्तरतो दीघा पाचीनमुखा, तेनस्सा पुरतो महती छाया पत्थटा होति, सीहो तत्थ
25 भगवतो आसनं पञ्ञपेसि।

१. सन्निपातेत्वा—सी०, रो०।
२. रो० पोत्थके नत्थि।
३. सी०, रो० पोत्थकेसु नत्थि।
४. ईसका—रो०।

५. अथ खो भगवा द्वारन्तरेहि चेव वातपानन्तरेहि च निक्खमित्वा विधावन्ताहि विप्फरन्तीहि छब्बण्णाहि बुद्धरस्मीहि[1] संसूचितनिक्खमनो वलाहकन्तरतो पुण्णचन्दो विय कूटागारसालतो निक्खमित्वा पञ्ञत्तवर-बुद्धासने निसीदि। तेन वुत्तं—"अथ खो भगवा विहारा निक्खम्म विहारपच्छायायं पञ्ञत्ते आसने निसीदी" ति। 5

६. पुरिमानि, भन्ते, दिवसानि पुरिमतरानी ति एत्थ हिय्यो दिवसं पुरिमं नाम, ततो परं पुरिमतरं। ततो पट्ठाय पन सब्बानि पुरिमानि चेव पुरिमतरानि च होन्ति। यदग्गे (दी० नि० १.१३०)ति मूलदिवसतो पट्ठाय यं दिवसं अग्गं परकोटिं कत्वा विहरामी ति अत्थो, याव विहासिं ति वुत्तं होति। इदानि तस्स परिमाणं दस्सेन्तो नचिरं तीणि वस्सानी ति आह। अथ वा यदग्गे ति यं दिवसं अग्गं कत्वा नचिरं तीणि वस्सानि विहरामी ति पि अत्थो। यं दिवसं आदिं कत्वा नचिरं विहासिं, तीणि येव वस्सानी ति वुत्तं होति। अयं किर भगवतो पत्तचीवरं गण्हन्तो तीणि संवच्छरानि भगवन्तं उपट्ठासि, तं सन्धाय एवं वदति। 15 B. 278 10

पियरूपानी ति पियजातिकानि सातजातिकानि। कामूपसंहितानी ति कामस्सादयुत्तानि। रजनीयानी ति रागजनकानि। नो च खो दिब्बानि सद्दानी ति कस्मा सुनक्खत्तो तानि न सुणाति? सो किर भगवन्तं उपसङ्कमित्वा दिब्बचक्खुपरिकम्मं याचि। तस्स भगवा आचिक्खि। सो यथानुसिट्ठं पटिपन्नो दिब्बचक्खुं उप्पादेत्वा देवतानं रूपानि[2] दिस्वा चिन्तेसि "इमस्मिं सरीरसण्ठाने सद्देन मधुरेन भवितब्बं, कथं नु खो नं सुणेय्यं" ति भगवन्तं उपसङ्कमित्वा दिब्बसोतपरिकम्मं पुच्छि। अयं च अतीते एकं सीलवन्तं भिक्खुं कण्णसक्खलियं पहरित्वा बधिरमकासि। तस्मा परिकम्मं करोन्तो पि अभब्बो दिब्बसोताधिगमाय[3]। तेनस्स न भगवा परिकम्मं कथेसि। सो 20 R. 312 25

१. बुद्धरंसीहि—स्या०। २. रूपं—सी०, रो०।
३. वा दिब्बसोताधिगमाय—रो०।

एत्तावता[१] भगवति आघातं बन्धित्वा चिन्तेसि—"अद्धा समणस्स गोतमस्स एवं होति—'अहं पि खत्तियो अयं पि खत्तियो, सचस्स[२] ञाणं वड्ढिस्ससि, अयं पि सब्बञ्ञू भविस्सती' ति उसूयाय मय्हं न कथेसी" ति। सो अनुक्कमेन गिहिभावं पत्वा तमत्थं महालि· लिच्छविनो कथेन्तो
5 एवमाह।

८-९. **एकंसभावितो** (दी० नि० १.१३०) ति एकंसाय एककोट्ठासाय भावितो, दिब्बानं वा रूपानं दस्सनत्थाय दिब्बानं वा सद्दानं सवनत्थाय भावितो ति अत्थो। **तिरियं** ति अनुदिसाय। **उभयंसभावितो** ति उभयंसाय उभयकोट्ठासाय भावितो ति अत्थो। **अयं**
10 **खो महालि हेतू** ति अयं दिब्बानं येव रूपानं दस्सनाय एकंसभावितो समाधि हेतु। इममत्थं सुत्वा सो लिच्छवी चिन्तेसि—"इदं दिब्बसोतेन
B. 279 सद्दसुणनं इमस्मिं सासने उत्तमत्थभूतं मञ्ञे इमस्स नून अत्थाय एते भिक्खू पञ्ञासं पि सट्ठि[३] पि वस्सानि अपण्णकं ब्रह्मचरियं चरन्ति, यन्नूनाहं दसबलं एतमत्थं पुच्छेय्यं" ति।

15 १४. ततो तमत्थं पुच्छन्तो "एतासं नून, भन्ते" (दी० नि० १.१३२) ति आदिमाह। **समाधिभावनानं** ति एत्थ समाधि येव समाधिभावना, उभयंसभावितानं समाधीनं ति अत्थो। अथ यस्मा सासनतो बाहिरा एता समाधिभावना, न अज्झत्तिका, तस्मा ता पटिक्खिपित्वा यदत्थं भिक्खू ब्रह्मचरियं चरन्ति, तं दस्सेन्तो[४] भगवा
20 "**न खो महाली**" ति आदिमाह।

३. उत्तरितरधम्मवण्णना

१५. **तिण्णं संयोजनानं** (दी० नि० १.१३३) ति सक्कायदिट्ठिआदीनं तिण्णं बन्धनानं। तानि हि वट्टदुक्खमये रथे सत्ते
R. 313 संयोजेन्ति, तस्मा संयोजनानी ति वुच्चन्ति। **सोतापन्नो होती** ति

१. तावतो—रो०। २. वा सचस्स—रो०।
३. सट्ठि—रो०। ४. ते दस्सेतुं—सी०।

मग्गसोतं आपन्नो होति। **अविनिपातधम्मो** ति चतूसु अपायेसु अपतनधम्मो। **नियतो** ति धम्मनियामेन नियतो। **सम्बोधिपरायणो** ति उपरिमग्गत्तयसङ्खाता सम्बोधि परं अयनं अस्स, अनेन[1] वा पत्तब्बा ति सम्बोधिपरायणो।

तनुत्ता ति परियुट्ठानमन्दताय च कदाचि करहचि उप्पत्तिया च तनुभावा। **ओरम्भागियानं** ति हेट्ठाभागियानं। ये हि बद्धो उपरि सुद्धावासभूमियं निब्बत्तितुं न सक्कोति। **ओपपातिको** ति सेसयोनि परिक्खेपवचनमेतं। तत्थ **परिनिब्बायी** ति तस्मिं उपरिभवे येव परिनिब्बानधम्मो। **अनावत्तिधम्मो** ति ततो ब्रह्मलोका पुन पटिसन्धिवसेन अनावत्तनधम्मो[2]। **चेतोविमुत्ती** ति चित्तविसुद्धिं[3], सब्बकिलेसबन्धनविमुत्तस्स अरहत्तफलचित्तस्सेतं अधिवचनं। **पञ्ञाविमुत्तिं** ति एत्था पि सब्बकिलेसबन्धनविमुत्ता अरहत्तफलपञ्ञा व पञ्ञाविमुत्ती ति वेदितब्बा।

दिट्ठेव धम्मे ति इमस्मिं येव अत्तभावे। **सयं** ति सामं। **अभिञ्ञा** ति अभिजानित्वा। **सच्छिकत्वा** ति पच्चक्खं कत्वा। अथ वा **अभिञ्ञा सच्छिकत्वा** ति अभिञ्ञाय 'अभि' विसिट्ठेन ञाणेन सच्छिकरित्वा ति पि अत्थो। **उपसम्पज्जा** ति पत्वा पटिलभित्वा। इदं सुत्वा लिच्छविराजा[4] चिन्तेसि—"अयं पन[5] धम्मो न सकुणेन विय उप्पतित्वा, ना पि गोधाय विय उरेन गन्त्वा सक्का पटिविज्झितुं, अद्धा पन इमं पटिविज्झन्तस्स पुब्बभागप्पटिपदाय भवितब्बं, पुच्छामि ताव नं" ति।

४. अरियअट्ठङ्गिकमग्गवण्णना

१६-१७. ततो भगवन्तं पुच्छन्तो "अत्थि पन भन्ते" ति आदिमाह। **अट्ठङ्गिको** ति पञ्चङ्गिकं तुरियं विय अट्ठङ्गिको गामो

१. सतेन—रो०। २. अवत्तनधम्मो—सी०; आवत्तनधम्मो—रो०।
३. चित्तविमुत्ति—सी०, रो०। ४. लिच्छवी—सी०, रो०। ५. वर—सी०, स्या०, रो०।

विय च अट्ठङ्गमत्तो येव हुत्वा अट्ठङ्गिको, न अङ्गतो अञ्ञो मग्गो नाम अत्थि। तेनेवाह—"सेय्यथिदं,सम्मादिट्ठि...पे०...सम्मासमाधी" ति। तत्थ सम्मादस्सनलक्खणा 'सम्मादिट्ठि'। सम्मा अभिनिरोपनलक्खणो 'सम्मासङ्कप्पो'। सम्मा परिग्गहणलक्खणा 'सम्मावाचा'। सम्मा समुट्ठापनलक्खणो 'सम्माकम्मन्तो'। सम्मा वोदापनलक्खणो 'सम्माआजीवो'। सम्मा पग्गहलक्खणो 'सम्मावायामो'। सम्मा उपट्ठानलक्खणा 'सम्मासति'। सम्मा समाधानलक्खणो 'सम्मासमाधि'।

(R. 314)

एतेसु[1] एकेकस्स तीणि[2] तीणि[2] किच्चानि होन्ति। सेय्यथिदं, सम्मादिट्ठि ताव अञ्ञेहि पि अत्तनो पच्चनीककिलेसेहि सद्धिं मिच्छादिट्ठिं पजहति, निरोधं आरम्मणं[3] करोति, सम्पयुत्तधम्मे च पस्सति, तप्पटिच्छादकमोहविधमनवसेन असम्मोहतो[4]। सम्मासङ्कप्पादयो पि तथेव मिच्छासङ्कप्पादीनि पजहन्ति[5], निरोधं च आरम्मणं करोन्ति, विसेसतो पनेत्थ सम्मासङ्कप्पो सहजातधम्मे अभिनिरोपेति। सम्मावाचा सम्मा परिग्गण्हति। सम्माकम्मन्तो सम्मा समुट्ठापेति। सम्माआजीवो सम्मा वोदापेति। सम्मावायामो सम्मा पग्गण्हति। सम्मासति सम्मा उपट्ठापेति। सम्मासमाधि सम्मा[6] पदहति[6]।

अपि चेसा सम्मादिट्ठि नाम पुब्बभागे नानाक्खणा नानारम्मणा होति, मग्गक्खणे[7] एकक्खणा एकारम्मणा। किच्चतो पन 'दुक्खे ञाणं' ति आदीनि चत्तारि नामानि लभति। सम्मासङ्कप्पादयो पि पुब्बभागे नानाक्खणा नानारम्मणा होन्ति। मग्गक्खणे एकक्खणा एकारम्मणा। तेसु सम्मासङ्कप्पो किच्चतो नेक्खम्मसङ्कप्पो ति आदीनि तीणि नामानि लभति। सम्मा वाचादयो तिस्सो विरतियो पि होन्ति, चेतनादयो पि होन्ति[8], मग्गक्खणे पन विरतियो व। सम्मावायामो सम्मासती ति इदं पि द्वयं किच्चतो सम्मप्पधानसतिपट्ठानवसेन चत्तारि नामानि लभति।

१. तेसु—सी०, स्या०, रो०।
२-२. तीणि—स्या०, रो०।
३. च आरम्मणं—सी०, रो०।
४. अपनीतसम्मोहतो—सी०।
५. च पजहन्ति—सी०, रो०।
६-६. समादहति—सी०, रो०।
७. मग्गकाले—सी०।
८. सी०,रो० पोत्थकेसु नत्थि।

सम्मासमाधि पन पुब्बभागे पि मग्गक्खणे पि सम्मासमाधियेव। इति B. 281
इमेसु अट्ठसु धम्मेसु भगवता निब्बानाधिगमाय पटिपन्नस्स योगिनो
बहुकारत्ता पठमं सम्मादिट्ठि देसिता। अयं हि "पञ्ञापज्जोतो
पञ्ञासत्थं" (ध०सं० २१) ति च वुत्ता। तस्मा एताय पुब्बभागे
विपस्सनाञाणसङ्खाताय सम्मादिट्ठिया अविज्जन्धकारं विधमित्वा 5
किलेसचोरे घातेन्तो खेमेन योगावचरो निब्बानं पापुणाति। तेन वुत्तं— R. 315
"निब्बानाधिगमाय पटिपन्नस्स योगिनो बहुकारत्ता पठमं सम्मादिट्ठि
देसिता" ति।

सम्मासङ्कप्पो पन तस्सा बहुकारो, तस्मा तदनन्तरं वुत्तो। यथा
हि हेरञ्ञिको हत्थेन परिवट्टेत्वा परिवट्टेत्वा चक्खुना कहापणं 10
ओलोकेन्तो—'अयं छेको, अयं कूटो' ति जानाति; एवं योगावचरो
पि पुब्बभागे वितक्केन वितक्केत्वा[1] विपस्सनापञ्ञाय ओलोकयमानो—
'इमे धम्मा कामावचरा, इमे धम्मा रूपावचरादयो' ति पजानाति।
यथा वा पन पुरिसेन कोटियं गहेत्वा परिवट्टेत्वा परिवट्टेत्वा दिन्नं
महारुक्खं तच्छको वासिया तच्छेत्वा कम्मे उपनेति, एवं वितक्केन 15
वितक्केत्वा वितक्केत्वा दिन्ने धम्मे योगावचरो पञ्ञाय—'इमे
कामावचरा, इमे रूपावचरा' ति आदिना नयेन परिच्छिन्दित्वा कम्मे
उपनेति। तेन वुत्तं—"सम्मासङ्कप्पो पन तस्सा बहुकारो, तस्मा
तदनन्तरं वुत्तो" ति।

स्वायं यथा सम्मादिट्ठिया एवं सम्मावाचाय पि उपकारको। 20
यथाह—"पुब्बे, खो विसाख[2], वितक्केत्वा विचारेत्वा पच्छा वाचं
भिन्दती" (म०नि० १.३७२) ति, तस्मा तदनन्तरं सम्मावाचा वुत्ता।

यस्मा पन—'इदञ्चिदञ्च करिस्सामा' ति पठमं वाचाय
संविदहित्वा लोके कम्मन्ते पयोजेन्ति; तस्मा वाचा[3] कायकम्मस्स
उपकारिका ति सम्मावाचाय अनन्तरं सम्माकम्मन्तो वुत्तो। चतुब्बिधं 25

१. वितक्केत्वा वितक्केत्वा—सी०। २. गहपति—सी०, स्या०, रो०।
३. सम्मावाचा—सी०, रो०।

पन वचीदुच्चरितं, तिविधं च कायदुच्चरितं पहाय उभयं सुचरितं पूरेन्तस्सेव यस्मा आजीवट्ठमकं सीलं पूरेति, न इतरस्स। तस्मा तदुभयानन्तरं सम्माआजीवो वुत्तो। एवं विसुद्धाजीवेन पन 'परिसुद्धो मे आजीवो' ति एत्तावता च[1] परितोसं कत्वा[2] सुत्तपमत्तेन विहरितुं 5 न युत्तं, अथ खो 'सब्बिरियापथेसु इदं वीरियं समारभितब्बं[3]' ति दस्सेतुं तदनन्तरं सम्मावायामो वुत्तो।

B. 282 ततो 'आरद्धवीरियेन पि कायादीसु चतूसु वत्थूसु सति सुपट्ठिता R. 316 कातब्बा' ति दस्सनत्थं तदनन्तरं सम्मासति देसिता। यस्मा पनेवं सुपट्ठिता सति समाधिस्सुपकारानुपकारानं धम्मानं गतियो समन्नेसित्वा 10 पहोति एकत्तारम्मणे चित्तं समाधातुं, तस्मा सम्मासतिया अनन्तरं सम्मासमाधि देसितो ति वेदितब्बो। **एतेसं धम्मानं सच्छिकिरियाया** ति (दी० नि० १.१३३) एतेसं सोतापत्तिफलादीनं पच्चक्ख-किरियत्थाय।

५. द्वे पब्बजितवत्थुवण्णना

१८. **एकमिदाहं** ति इदं कस्मा आरद्धं? अयं किर 15 राजा—'रूपं अत्ता' ति एवंलद्धिको। तेनस्स देसनाय चित्तं नाधिमुच्चति। अथ भगवता तस्स लद्धिया आविकरणत्थं एकं कारणं आहरितुं इदमारद्धं। तत्रायं सङ्खेपत्थो—"अहं एकं समयं घोसितारामे विहरामि। तत्र वसन्तं[4] मं ते द्वे पब्बजिता एवं पुच्छिंसु। अथाहं तेसं बुद्धुप्पादं दस्सेत्वा तन्तिधम्मं नाम कथेन्तो इदमवोचं—'आवुसो, सद्धा-20 सम्पन्नो नाम कुलपुत्तो एवरूपस्स सत्थु सासने पब्बजितो, एवं तिविधं सीलं पूरेत्वा पठमज्झानादीनि पत्वा ठितो 'तं जीवं' ति आदीनि वदेय्य। युत्तं नु खो एतमस्सा" ति? ततो तेहि युत्तं ति वुत्ते "अहं खो पनेतं, आवुसो, एवं जानामि, एवं पस्सामि, अथ च पनाहं न वदामी" ति तं वादं पटिक्खिपित्वा उत्तरि खीणासवं दस्सेत्वा "इमस्स एवं वत्तुं

१. सी०, स्या०, रो० पोत्थकेसु नत्थि। २. अकत्वा—सी०।
३. आरभितब्ब ति— सी०, स्या०, रो०। ४. सी०, स्या०, रो० पोत्थकेसु नत्थि।

न युत्तं'' ति अवोचं। ते मम वचनं सुत्वा अत्तमना अहेसुं ति। एवं वुत्ते सो पि अत्तमनो अहोसि। तेनाह—"इदमवोच भगवा अत्तमनो ओट्ठद्धो लिच्छवी भगवतो भासितं अभिनन्दी" (दी० नि० १.१३५) ति।

इति सुमङ्गलविलासिनिया दीघनिकायट्ठकथायं
महालिसुत्तवण्णना निट्ठिता।

---

(७) जालियसुत्तवण्णना

१. द्वेपब्बजितवत्थुवण्णना

R. 317
B. 283

१. एवं मे सुतं...पे०...कोसम्बियं (दी० नि० १.१३६) ति जालियसुत्तं। तत्रायं अपुब्बपदवण्णना। घोसितारामे ति घोसितेन सेट्ठिना कते आरामे। पुब्बे किर अल्लकप्परट्ठं[1] नाम अहोसि। ततो कोतूहलिको नाम दलिद्दो छातकभयेन सपुत्तदारो अवन्तिरट्ठं[2] गच्छन्तो 5 पुत्तं वहितुं असक्कोन्तो छड्डेत्वा अगमासि। माता निवत्तित्वा तं गहेत्वा गता। ते एकं गोपालकगामं पविसिंसु। गोपालकेन च तदा बहुपायासो पटियत्तो होति। ते ततो[3] पायासं लभित्वा भुञ्जिंसु। अथ सो पुरिसो बलवपायासं भुत्तो जीरापेतुं असक्कोन्तो रत्तिभागे कालं कत्वा तत्थेव सुनखिया कुच्छिस्मिं पटिसन्धिं गहेत्वा कुक्कुरो जातो। 10 सो गोपालकस्स पियो अहोसि[4]। गोपालको च पच्चेकबुद्धं उपट्ठहति। पच्चेकबुद्धो पि भत्तकिच्चपरियोसाने[5] कुक्कुरस्स एकेकं[6] पिण्डं देति। सो पच्चेकबुद्धे सिनेहं उप्पादेत्वा गोपालकेन सद्धिं पण्णसालं पि गच्छति। गोपालके असन्निहिते भत्तवेलायं सयमेव गन्त्वा कालारोचनत्थं पण्णसालद्वारे भुस्सति। अन्तरामग्गे पि चण्डमिगे[7] दिस्वा भुस्सित्वा 15 पलापेति। सो पच्चेकबुद्धे मुदुकेन चित्तेन कालंकत्वा देवलोके निब्बत्ति। तत्रस्स घोसकदेवपुत्तो त्वेव नामं अहोसि। सो देवलोकतो चवित्वा

R. 318

कोसम्बियं एकस्स[8] कुलस्स घरे[8] निब्बत्ति। तं अपुत्तको सेट्ठि तस्स मातापितूनं धनं दत्वा पुत्तं कत्वा अग्गहेसि। अथ अत्तनो पुत्ते जाते सत्तक्खत्तुं घातापेतुं उपक्कमि। सो पुञ्ञवन्तताय सत्तसु पि ठानेसु

१. अजितरट्ठं—सी०; अद्दिलरट्ठं—रो०। २. अनन्तररट्ठं—सी०, रो०।
३. तं—स्या०। ४ होति—रो०।
५. भत्तकिच्चकाले—सी०, स्या०, रो०। ६. सी०, रो० पोत्थकेसु नत्थि।
७. च चण्डमिगे—स्या०, रो०। ८-८. एकस्मिं कुलघरे—सी०।

मरणं अप्पत्वा अवसाने एकाय सेट्ठिधीताय वेय्यत्तियेन लद्धजीवितो अपरभागे पितुअच्चयेन सेट्ठिट्ठानं पत्वा घोसकसेट्ठि नाम जातो। अञ्ञे पि कोसम्बियं कुक्कुटसेट्ठि, पावारियसेट्ठी ति द्वे सेट्ठिनो अत्थि, इमिना सद्धिं तयो अहेसुं। B. 284

तेन च समयेन हिमवन्ततो पञ्चसततापसा सरीरसन्तप्पनत्थं 5 अन्तरन्तकोसम्बिं[1] आगच्छन्ति। तेसं एते[2] तयो सेट्ठी अत्तनो[3] अत्तनो[3] उय्यानेसु पण्णकुटियो कत्वा उपट्ठानं करोन्ति। अथेकदिवसं ते तापसा हिमवन्ततो आगच्छन्ता महाकन्तारे तसिता किलन्ता एकं महन्तं वटरुक्खं पत्वा तत्थ अधिवत्थाय देवताय सन्तिका सङ्गहं पच्चासिसन्ता निसीदिंसु। देवता सब्बालङ्कारविभूसितं हत्थं पसारेत्वा तेसं पानीय- 10 पानकादीनि[4] दत्वा किलमथं पटिविनोदेसि। एते[5] देवतायानुभावेन[5] विम्हिता पुच्छिंसु—"किं नु, खो देवते, कम्मं कत्वा तया अयं सम्पत्ति लद्धा" ति? देवता आह—"लोके बुद्धोनाम भगवा उप्पन्नो, सो एतरहि सावत्थियं विहरति। अनाथपिण्डिको गहपति तं उपट्ठहति। सो उपो-सथदिवसेसु अत्तनो भतकानं पकतिभत्तवेतनमेव दत्वा उपोसथं कारा- 15 पेसि[6]। अथाहं एकदिवसं मज्झन्हिके पातरासत्थाय आगतो कञ्चि भतककम्मं[7] अकरोन्तं दिस्वा—'अज्ज मनुस्सा कस्मा कम्मं न करोन्ती' ति पुच्छिं। तस्स मे तमत्थं आरोचेसुं। अथाहं एतदवोचं—'इदानि उपड्ढदिवसो गतो, सक्का नु खो उपड्ढुपोसथं कातुं', ति। ततो सेट्ठिस्स पटिवेदेत्वा सक्का कातुं ति आह[8]। स्वाहं उपड्ढदिवसं 20 उपड्ढुपोसथं[9] समादियित्वा तदहेव कालं कत्वा इमं सम्पत्तिं पटिलभिं" ति।

१. कोसम्बियं—सी०, रो०।
२. एते सी०, रो०।
३-३. अत्तनो—सी०, रो०।
४. पानीयनहानोदकादीनि—सी०।
५-५. देवतानुभावेन—स्या०।
६. कारोपेति—सी०, रो०।
७. भतिककम्मं—स्या०।
८. आहंसु—रो०।
९. उपोसथं—सी०।

अथ ते तापसा "बुद्धो किर उप्पन्नो" ति सञ्जातपीतिपामोज्जा ततोव सावत्थिं[1] गन्तुकामा हुत्वा पि–"बहुकारा नो उपट्ठाकसेट्ठिनो तेसम्पि
R. 319 इममत्थमारोचेस्सामा" ति कोसम्बिं गन्त्वा सेट्ठीहि कतसक्कारबहुमाना तदहेव मयं गच्छामा ति आहंसु। "किं, भन्ते, तुरितात्थ, ननु तुम्हे पुब्बे
5 चत्तारो पञ्च[2] मासे वसित्वा गच्छथा" ति च वुत्ते तं पवत्तिं आरोचेसुं। 'तेन, हि भन्ते, सहेव[3] गच्छामा' ति च वुत्ते "गच्छाम मयं, तुम्हे सणिकं आगच्छथा" ति सावत्थिं गन्त्वा भगवतो सन्तिके पब्बजित्वा अरहत्तं
B. 285 पापुणिंसु। ते पि सेट्ठिनो पञ्चसतपञ्चसतसकटपरिवारा सावत्थिं गन्त्वा दानादीनि दत्वा कोसम्बिं आगमनत्थाय भगवन्तं याचित्वा
10 पच्चागम्म तयो विहारे कारेसुं। तेसु कुक्कुटसेट्ठिना कतो कुक्कुटारामो नाम, पावारियसेट्ठिना कतो पावारिकम्बवनं नाम, घोसितसेट्ठिना कतो घोसितारामो नाम अहोसि। तं सन्धाय वुत्तं—"कोसम्बियं विहरति घोसितारामे" ति।

मुण्डियो ति इदं तस्स नामं। **जालियो** ति इदं पि इतरस्स नाममेव।
15 यस्मा पनस्स उपज्झायो दारुमयेन पत्तेन पिण्डाय चरति, तस्मा दारुपत्तिकन्तेवासी ति वुच्चति। **एतदवोचुं** ति उपारम्भाधिप्पायेन वादं आरोपेतुकामा हुत्वा एतदवोचुं। इति किर नेसं अहोसि, सचे समणो गोतमो "तं जीवं तं सरीरं" ति वक्खति, अथस्स मयं एतं वादं आरोपेस्साम—'भो गोतम, तुम्हाकं लद्धिया इधेव सत्तो भिज्जति, तेन वो
20 वादो उच्छेदवादो होती" ति। सचे पन "अञ्ञं जीवं अञ्ञं सरीरं" ति वक्खति, अथस्सेतं वादं आरोपेस्साम "तुम्हाकं वादे रूपं भिज्जति, न सत्तो भिज्जति। तेन वो वादे सत्तो सस्सतो आपज्जती" ति। अथ भगवा "इमे वादारोपनत्थाय पञ्हं पुच्छन्ति, मम सासने इमे द्वे अन्ते अनुपगम्म मज्झिमा पटिपदा[4] अत्थी ति न जानन्ति, हन्द नेसं पञ्हं
25 अविस्सज्जेत्वा तस्सायेव पटिपदाय आविभावत्थं धम्मं देसेमी" ति चिन्तेत्वा "**तेन हावुसो**" ति आदिमाह।

१. सावत्थियं—रो०।　　२. स्या० पोत्थके नत्थि।
३. सह—स्या०।　　४. नाम पटिपदा—सी०।

२. तत्थ कल्लं नु खो तस्सेतं वचनाया ति तस्सेतं[1] सद्धापब्बजितस्स तिविधं सीलं परिपूरेत्वा[2] पठमज्झानं पत्तस्स युत्तं नु खो एतं वत्तुं ति[3] अत्थो । तं सुत्वा परिब्बाजका पुथुज्जनो नाम यस्मा निब्बिचिकिच्छो न होती, तस्मा कदाचि एवं वदेय्या ति मञ्ञमाना—"कल्लं तस्सेतं वचनाया" ति आहंसु । अथ च पनाहं न वदामी ति अहं एतमेवं जानामि, नो च एवं वदामि, अथ खो कसिणपरिकम्मं कत्वा भावेन्तस्स पञ्ञाबलेन उप्पन्नं महग्गतचित्तमेतं ति सञ्ञं ठपेसिं । न कल्लं तस्सेतं ति इदं ते परिब्बाजका—"यस्मा खीणासवो विगतसम्मोहो तिण्णविचिकिच्छो, तस्मा न युत्तं तस्सेतं वत्तुं" ति मञ्ञमाना वदन्ति । सेसमेत्थ[4] उत्तानत्थमेवा ति ।

R. 320 5 B. 286 10

इति सुमङ्गलविलासिनिया दीघनिकायट्ठकथायं
जालियसुत्तवण्णना निट्ठिता ।

---

१. तस्सेवं—सी० ।
२. पूरेत्वा—स्या० ।
३. एतं वचनाय—सी० ।
४. सेससब्बत्थ—सी०, रो० ।

(८) महासीहनादसुत्तवण्णना

१. अचेलकस्सपवत्थुवण्णना

B. 287
R. 1

१. एवं मे सुतं...पे...उरुञ्ञायं विहरती (दी॰नि॰ १.३८१) ति महासीहनादसुत्तं[1]। तत्रायं अपुब्बपदवण्णना। उरुञ्ञायं ति उरुञ्ञा ति[2] तस्स रट्ठस्स पि नगरस्स पि एतदेव नामं। भगवा उरुञ्ञानगरं उपनिस्साय विहरति। कण्णकत्थले मिगदाये ति तस्स
5 नगरस्स अविदूरे कण्णकत्थलं नाम एको रमणीयो भूमिभागो अत्थि। सो मिगानं अभयत्थाय दिन्नत्ता "मिगदायो" ति वुच्चति, तस्मिं कण्णकत्थले मिगदाये। अचेलो ति नग्गपरिब्बाजको। कस्सपो ति तस्स नामं। तपस्सिं ति तपनिस्सितकं। लूखाजीविं ति अचेलक-मुत्ताचारादिवसेन लूखो आजीवो अस्सा ति लूखाजीवी, तं लूखाजीविं।
10 उपक्कोसती ति उपण्डेति। उपवदती ति हीळेति वम्भेति। धम्मस्स च अनुधम्मं ब्याकरोन्ती ति भोता गोतमेन वुत्तकारणस्स अनुकारणं कथेन्ति। सहधम्मिको वादानुवादो ति परेहि वुत्तकारणेन सकारणो हुत्वा "तुम्हाकं वादो वा[3] अनुवादो वा[4] विञ्ञूहि गरहितब्बं। कारणं कोचि अप्पमत्तको पि किं[5] न आगच्छति, इदं वुत्तं होति, किं
15 सब्बाकारेन पि तव वादे गारय्हं कारणं नत्थी" ति। अनब्भक्खातुकामा ति न अभूतेन वत्तुकामा।

२. एकच्चं तपस्सिं लूखाजीविं ति आदीसु इधेकच्चो—"अचेलकपब्बज्जादितपनिस्सितत्ता तपस्सी लूखेन जीवितं कप्पेस्सामी" ति तिणगोमयादिभक्खनादीहि नानप्पकारेहि अत्तानं किलमेति,

१. सीहनादसुत्तं—सी॰। २. उजुञ्ञा ति—सी॰ सब्बत्थ।
३. च—स्या॰, रो॰। ४. च—स्या॰, रो॰।
५. सी॰, रो॰ पोत्थकेसु नत्थि।

अप्पपुञ्ञताय च सुखेन जीवितवुत्तिमेव न लभति, सो तीणि दुच्चरितानि पूरेत्वा निरये निब्बत्तति ।

अपरो तादिसं तपनिस्सितो पि पुञ्ञवा होति, लभति लाभसक्कारं । सो "न दानि मया सदिसो अत्थी" ति अत्तानं उच्चे ठाने सम्भावेत्वा भिय्योसोमत्ताय लाभं उप्पादेस्सामी ति अनेसनवसेन 5 तीणि दुच्चरितानि पूरेत्वा निरये निब्बत्तति । इमे द्वे सन्धाय पठमनयो वुत्तो ।

अपरो तपनिस्सितको लूखाजीवी[1] अप्पपुञ्ञो होति, न लभति सुखेन जीवितवुत्तिं । सो "मयं पुब्बे पि अकतपुञ्ञताय सुखजीविका नुप्पज्जति, हन्द दानि पुञ्ञानि करोमी" ति तीणि सुचरितानि 10 B. 288 पूरेत्वा सग्गे निब्बत्तति ।

अपरो लूखाजीवी पुञ्ञवा होति, लभति सुखेन जीवितवुत्तिं । R. 2 सो--"मय्हं पुब्बे पि कतपुञ्ञताय सुखजीविका उप्पज्जती" ति चिन्तेत्वा अनेसनं पहाय तीणि सुचरितानि पूरेत्वा सग्गे निब्बत्तति । इमे द्वे सन्धाय दुतियनयो वुत्तो । 15

३. एको पन तपस्सी अप्पदुक्खविहारी होति बहिरकाचारयुत्तो तापसो वा छन्नपरिब्बाजको वा, अप्पपुञ्ञताय च मनापे पच्चये न लभति । सो अनेसनवसेन तीणि दुच्चरितानि पूरेत्वा[2] अत्तानं सुखे ठपेत्वा[3] निरये निब्बत्तति ।

अपरो पुञ्ञवा होति, सो--"न दानि मया सदिसो अत्थी" ति 20 मानं उप्पादेत्वा अनेसनवसेन लाभसक्कारं वा उप्पादेन्तो मिच्छादिट्ठिवसेन--"सुखो इमिस्सा परिब्बाजिकाय दहराय मुदुकाय लोमसाय सम्फस्सो" ति आदीनि चिन्तेत्वा कामेसु पातब्यतं वा आपज्जन्तो तीणि दुच्चरितानि पूरेत्वा निरये निब्बत्तति । इमे द्वे सन्धाय ततियनयो वुत्तो । 25

१. पि लूखाजीवी—स्या०, रो० । २. पूरेन्तो—सी० ।
३. कत्वा—सी० ।

अपरो पन अप्पदुक्खविहारी अप्पपुञ्ञो होति। सो—"अहं पुब्बे पि अकतपुञ्ञताय सुखेन जीविकं न लभामी" ति तीणि सुचरितानी पूरेत्वा सग्गे निब्बत्तति। अपरो पुञ्ञवा होति। सो—"पुब्बेपाहं[१] कतपुञ्ञताय सुखं लभामि, इदानि पुञ्ञानि[२] करिस्सामी" ति तीणि
5 सुचरितानि पूरेत्वा सग्गे निब्बत्तति। इमे द्वे सन्धाय चतुत्थनयो वुत्तो। इदं तित्थियवसेन आगतं, सासने पि पन लब्भति।

एकच्चो हि धुतङ्गसमादानवसेन लूखाजीवी होति, अप्पपुञ्ञताय वा सकलं पि गामं विचरित्वा उदरपूरं न लभति। सो—"पच्चये उप्पादेस्सामी" ति वेज्जकम्मादिवसेन वा अनेसनं कत्वा अरहत्तं वा
B. 288 10 पटिजानित्वा तीणि वा कुहनवत्थूनि पटिसेवित्वा निरये निब्बत्तति।

अपरो पुञ्ञवा[३] होति। सो—"पुब्बेपाहं कतपुञ्ञताय सुखं
R. 2 लभामि, इदानि पुञ्ञानि करिस्सामी" ति तीणि सुचरितानि पूरेत्वा सग्गे निब्बत्तति। इमे द्वे सन्धाय चतुत्थनयो वुत्तो। इदं तित्थियवसेन आगतं, सासने पि पन लब्भति।

15 एकच्चो हि धुतङ्गसमादानवसेन लूखाजीवी होति, अप्पपुञ्ञताय वा सकलं पि गामं विचरित्वा उदरपूरं न लभति। सो—"पच्चये उप्पादेस्सामी" ति वेज्जकम्मादिवसेन वा अनेसनं कत्वा अरहत्तं वा पटिजानित्वा तीणि वा कुहनवत्थूनि पटिसेवित्वा निरये निब्बत्तति।

B. 289 अपरो च तादिसोव पुञ्ञवा होति। सो ताय पुञ्ञसम्पत्तिया
20 मानं जनयित्वा उप्पन्नं लाभं थावरं कत्तुकामो अनेसनवसेन तीणि दुच्चरितानि पूरेत्वा निरये उप्पज्जति[४]।

अपरो समादिन्नधुतङ्गो अप्पपुञ्ञोव[५] होति, न लभति सुखेन जीवितवुत्तिं। सो—"पुब्बेपाहं अकतपुञ्ञताय किञ्चि न लभामि, सचे इदानि अनेसनं करिस्सं, आयतिं पि दुल्लभसुखो भविस्सामी"

१. पुब्बेपहं—सी०। २. पि पुञ्ञानेव—सी०।
३. तादिसो व—सी०। ४. निब्बत्तति—सी०।
५. ० च अप्पपुञ्ञो व—सी०, रो०।

ति तीणि सुचरितानि पूरेत्वा अरहत्तं पत्तुं असक्कोन्तो सग्गे निब्बत्तति ।

अपरो पुञ्ञवा होति, सो—"पुब्बेपाहं कतपुञ्ञताय एतरहि सुखितो । इदानि पि पुञ्ञं करिस्सामो" ति अनेसनं पहाय तीणि सुचरितानि पूरेत्वा अरहत्तं पत्तुं असक्कोन्तो सग्गे निब्बत्तति । R. 3 5

३. आगतिञ्चा ति—"असुकट्ठानतो नाम इमे आगता" ति एवं आगतिं च । गतिं चा ति इदानि गन्तब्बट्ठानं च । चुतिं चा ति ततो चवनं च । उपपत्तिं चा ति ततो चुतानं पुन उपपत्तिं च । किं सब्बतपं गरहिस्सामी ति—'केन कारणेन गरहिस्सामि, गरहितब्बमेव हि मयं गरहाम, पसंसितब्बं पसंसाम, न भण्डिकं करोन्तो 10 महारजको विय धोतं च अधोतं च एकतो करोमा'--ति दस्सेति । इदानि तमत्थं पकासेन्तो—"सन्ति कस्सप एके समणब्राह्मणा" ति आदिमाह ।

२. समनुयुञ्जनकथा

४. यं ते एकच्चं (दी० नि० १. १३९) ति पञ्चविधसीलं, तञ्हि[1] लोकेन कोचिना साधू ति वदति । पुन यं तं एकच्चं ति पञ्चविधं वेरं, 15 तं[2] न कोचि साधू ति वदति । पुन यं ते एकच्चं ति पञ्चद्वारे असंवरं, ते किर—"चक्खु नाम न निरुन्धितब्बं, चक्खुना मनापं रूपं दट्ठब्बं" ति वदन्ति । एस नयो सोतादीसु । पुन यं ते एकच्चं ति पञ्चद्वारे संवरं ।

एवं परेसं वादेन सह अत्तनो वादस्स समानासमानतं दस्सेत्वा 20 इदानि अत्तनो वादेन सह परेसं वादस्स समानासमानतं दस्सेन्तो "यं मयं" ति आदिमाह । तत्रा पि पञ्चसीलादिवसेनेव अत्थो वेदितब्बो ।

५. समनुयुञ्जन्तं ति समनुयुञ्जन्तु, एत्थ च लद्धिं पुच्छन्तो B. 290 समनुयुञ्जति नाम, कारणं पुच्छन्तो समनुगाहति नाम, उभयं पुच्छन्तो समनुभासति नाम । सत्थारा वा सत्थारं ति सत्थारा वा 25

१. हि एकच्चं—रो० । २. हि च—रो० ।

सद्धिं सत्थारं उपसंहरित्वा—"किं ते सत्था ते धम्मे सब्बसो पहाय वत्तति, उदाहु समणो गोतमो" ति । दुतियपदे पि एसेव नयो ।

इदानि तमत्थं योजेत्वा दस्सेन्तो—"ये इमेसं भवतं" ति आदिमाह । तत्थ अकुसला अकुसलसङ्खाता ति अकुसला चेव अकुसला ति च सङ्खाता ञाता, कोट्ठासं वा कत्वा ठपिता ति अत्थो । एस नयो सब्बपदेसु । अपि चेत्थ सावज्जा ति सदोसा । न अलमरिया ति निद्दोसट्ठेन अरिया भवितुं नालं असमत्था[1] ।

६. यं विञ्ञू समनुयुञ्जन्ता ति येन विञ्ञू अम्हे च अञ्ञे च पुच्छन्ता[2] एवं वदेय्युं, तं ठानं विज्जति, अत्थि तं कारणं ति अत्थो । यं वा पन भोन्तो परे गणाचरिया ति परे पन भोन्तो गणाचरिया यं[3] वा तं[3] वा अप्पमत्तकं पहाय वत्तन्ती ति अत्थो । अम्हेव तत्थ येभुय्येन पसंसेय्युं ति इदं भगवा सत्थारा सत्थारं समनुयुञ्जने पि आह,—सङ्घेन सङ्घं समनुयुञ्जने पि । कस्मा ? सङ्घपसंसाय पि सत्थुयेव पसंसासिद्धितो । पसीदमाना पि हि बुद्धसम्पत्तिया सङ्घे, सङ्घसम्पत्तिया च बुद्धे पसीदन्ति । तथा हि भगवतो सरीरसम्पत्तिं दिस्वा धम्मदेसनं वा[4] सुत्वा भवन्ति वत्तारो—"लाभा वत भो सावकानं ये एवरूपस्स सत्थु सन्तिकावचरा" ति, एवं बुद्धसम्पत्तिया सङ्घे पसीदन्ति । भिक्खूनं पनाचारगोचरं अभिक्कमपटिक्कमादीनि च दिस्वा भवन्ति वत्तारो—"सन्तिकावचरानं वत भो सावकानं अयं च उपसमगुणो सत्थु कीव रूपो भविस्सती" ति, एवं सङ्घसम्पत्तिया बुद्धे पसीदन्ति । इति या सत्थुपसंसा, सा[5] सङ्घस्स; या सङ्घस्स पसंसा, सा सत्थू ति सङ्घपसंसाय पि सत्थुयेव पसंसासिद्धितो । भगवा द्वीसु पि नयेसु—"अम्हेव तत्थ येभुय्येन पसंसेय्युं" ति आह । समणो गोतमो इमे धम्मे अनवसेसं पहाय वत्तति, यं वा पन भोन्तो परे गणाचरिया ति आदीसु पि[6] पनेत्थ अयमधिप्पायो । सम्पत्तसमादानसेतुघातवसेन हि तिस्सो विरतियो ।

१. समत्था—सी० । २. पुच्छन्तो—सी० ।
३-३. यथा वा तथा वा—स्या०, रो० । ४. च—सी० ।
५. सी० पोत्थके नत्थि । ६. सी० पोत्थके नत्थि ।

तासु सम्पत्तसमादानविरतिभत्तमेव अञ्ञेसं होति, सेतुघातविरति पन सब्बेन सब्बं नत्थि। पञ्चसु पन तदङ्गविक्खम्भनसमुच्छेदपटिपस्सद्धिनि-स्सरणप्पहानेसु अट्ठसमापत्तिवसेन चेव विपस्सनामत्तवसेन च तदङ्गविक्खम्भनप्पहानमत्तमेव अञ्ञेसं होति। इतरानि तीणि पहानानि सब्बेन सब्बं नत्थि। तथा सीलसंवरो[1], खन्तिसंवरो, ञाणसंवरो, 5 सतिसंवरो, वीरियसंवरो ति पञ्च संवरा, तेसु पञ्चसीलमत्तमेव अधिवासनखन्तिमत्तमेव च अञ्ञेसं होति, सेसं सब्बेन सब्बं नत्थि।

पञ्च खो पनिमे उपोसथुद्देसा, तेसु पञ्चसीलमत्तमेव अञ्ञेसं होति। पातिमोक्खसंवरसीलं सब्बेन सब्बं नत्थि। इति अकुसलप्पहाने च कुसलसमादाने च, तीसु विरतीसु, पञ्चसु पहानेसु, पञ्चसु संवरेसु, पञ्चसु 10 उद्देसेसु,[2]—"अहमेव च मय्हं च सावकसङ्घो लोके पञ्ञायति, मया हि सदिसो सत्था नाम, मय्हं सावकसङ्घेन सदिसो सङ्घो नाम नत्थी" ति भगवा सीहनादं नदति[3]।

३. अरियअट्ठङ्गिकमग्गवण्णना

१३. एवं सीहनादं नदित्वा तस्स सीहनादस्स अविपरीत-भावावबोधनत्थं—"अत्थि कस्सप मग्गो" (दी० नि० १.१४१) ति 15 आदिमाह। तत्थ **मग्गो** ति लोकुत्तरमग्गो। **पटिपदा** ति पुब्बभाग-पटिपदा। **कालवादी** ति आदीनि **ब्रह्मजाले** वण्णितानि। इदानि तं दुविधं मग्गं च पटिपदं च एकतो कत्वा दस्सेन्तो—"अयमेव अरियो ति आदिमाह। इदं पन सुत्वा अचेलो चिन्तेसि—"समणो गोतमो मय्हं येव मग्गो च पटिपदा च अत्थि, अञ्ञेसं नत्थी ति मञ्ञति, 20 हन्दस्साहं अम्हाकं पि मग्गं कथेमी" ति ततो अचेलकपटिपदं कथेसि। तेनाह—"एवं वुत्ते अचेलो कस्सपो भगवन्तं एतदवोच...पे०... R. 5 उदकोरोहनानुयोगमनुयुत्तो विहरती" ति।

१. हि सीलसंवरो—स्या०। २. उद्देसेसु च—सी०, रो०।
३. नदि—स्या०, रो०।

४. तपोपक्कमकथावण्णना

१४. तत्थ **तपोपक्कमा** ति तपारम्भा, तपकम्मानी ति अत्थो। **सामञ्ञसङ्खाता** ति समणकम्मसङ्खाता। **ब्रह्मञ्ञसङ्खाता** ति ब्राह्मणकम्मसङ्खाता। **अचेलको** ति निच्चोलो,[1] नग्गो ति अत्थो। **मुत्ताचारो** ति विसट्ठाचारो, उच्चारकम्मादीसु लोकियकुलपुत्ताचारेन B. 292 5 विरहितो ठितकोव उच्चारं करोति, पस्सावं करोति, खादति, भुञ्जति च। **हत्थापलेखनो** ति हत्थे पिण्डम्हि ठिते जिव्हाय हत्थं अपलिखति, उच्चारं वा कत्वा हत्थस्मिञ्ञेव दण्डकसञ्ञी हुत्वा हत्थेन अपलिखति। "भिक्खागहणत्थं एहि, भन्ते," ति वुत्तो न एती ति **न एहिभद्दन्तिको**। तेन हि तिट्ठ, भन्ते, हि वुत्तो पि न तिट्ठती ति 10 **नतिट्ठभद्दन्तिको**। तदुभयं पि किर सो—"एतस्स वचनं कतं भविस्सती" ति न करोति। **अभिहं** ति पुरेतरं गहेत्वा आहटं भिक्खं, **उद्दिस्सकतं** ति इमं तुम्हे उद्दिस्स कतं ति एवं आरोचितं भिक्खं। **न निमन्तनं** ति असुकं नाम कुलं वा वीथिं वा गामं वा पविसेय्याथा ति एवं निमन्तितभिक्खं पि न सादियति, न गण्हति। **न** 15 **कुम्भिमुखा** ति कुम्भितो उद्धरित्वा दिय्यमानं भिक्खं न गण्हति। **न कळोपिमुखा** ति **कळोपी** ति उक्खलि वा[2] पच्छि वा, ततो पि न गण्हति। कस्मा? कुम्भिकळोपियो मं निस्साय कटच्छुना पहारं लभन्ती ति। **न एळकमन्तरं** ति उम्मारं अन्तरं कत्वा दिय्यमानं न गण्हति। कस्मा? "अयं मं निस्साय अन्तरकरणं लभती" ति। 20 दण्डमुसलेसु पि एसेव नयो। **द्विन्नं** ति द्वीसु भुञ्जमानेसु एकस्मिं उट्ठाय देन्ते न गण्हति[3]। कस्मा? एकस्स[4] कबळन्तरायो होती ति। **न गब्भिनिया** ति आदीसु पन गब्भिनिया कुच्छियं दारको किलमति। 'पायन्तिया दारकस्स खीरन्तरायो होति, पुरिसन्तरगताय रतिअन्तरायो होती' ति न गण्हति। **संकित्तीसू** ति संकित्तेत्वा कतभत्तेसु, दुब्भिक्खसमये

१. निच्चेलो—सी०। २. सी० पोत्थके नत्थि।
३. गण्हाति—सी०, स्या०, रो०। ४. सी० पोत्थके नत्थि।

किर अचेलकसावका अचेलकानं अत्थाय ततो ततो तण्डुलादीनि समादपेत्वा[1] भत्तं पचन्ति। उक्कट्ठो अचेलको ततो पि न पटिग्गण्हति। **न यत्थ सा** ति यत्थ सुनखो—"पिण्डं लभिस्सामी" ति उपट्ठितो होति, तत्थ तस्स अदत्वा आहटं न गण्हति। कस्मा? एतस्स पिण्डन्तरायो होती ति। **सण्डसण्डचारिनी** ति समूहसमूहचारिनी, सचे हि अचेलकं दिस्वा—"इमस्स भिक्खं दस्सामा" ति मनुस्सा[2] भत्तगेहं पविसन्ति, तेसु च पविसन्तेसु कळोपिमुखादीसु निलीना मक्खिका उप्पतित्वा सण्डसण्डा चरन्ति, ततो आहटं भिक्खं न गण्हति। कस्मा? मं निस्साय मक्खिकानं गोचरन्तरायो जातो ति।   5   R. 6

थुसोदकं ति सब्बसस्ससम्भारेहि कतं सोवीरकं। एत्थ च सुरापानमेव सावज्जं, अयं पन सब्बेसु पि सावज्जसञ्ञी। **एकागारिको** ति यो एकस्मिं येव गेहे भिक्खं लभित्वा निवत्तति। **एकालोपिको** ति यो एकेनेव आलोपेन यापेति। **द्वागारिकादीसु** पि एसेव नयो।   10 B. 293

एकिस्सा पि दत्तिया ति एकाय दत्तिया। दत्ति नाम एका खुद्दकपाति होति, यत्थ अग्गभिक्खं पक्खिपित्वा ठपेन्ति। **एकाहिकं** ति एकदिवसन्तरिकं। **अद्धमासिकं** ति अद्धमासन्तरिकं। **परियायभत्तभोजनं** ति वारभत्तभोजनं, एकाहवारेन द्वीहवारेन सत्ताहवारेन अड्ढमासवारेना ति एवं दिवसवारेन आगतभत्तभोजनं।   15

१९. **साकभक्खो** ति अल्लसाकभक्खो। **सामाकभक्खो** ति सामाकतण्डुलभक्खो। **नीवारादीसु** नीवारो नाम अरञ्ञे सयंजाता वीहिजाति। **दद्दुलं** ति चम्मकारेहि चम्मं लिखित्वा छड्डितकसटं। **हटं** वुच्चति सिलेसो पि सेवालो पि। **कणं** ति कुण्डकं। **आचामो** ति भत्तउक्खलिकाय लग्गो झामकओदनो तं छड्डितट्ठानतोव गहेत्वा खादति, ओदनकञ्जियं ति पि वदन्ति। **पिञ्ञाकादयो** पाकटायेव। **पवत्तफलभोजी** ति पतितफलभोजी।   20   25

१. समादापेत्वा—सी०।   २. मानुसकानि—सी०।

सणानी ति साणवाकचोळानि । मसाणानी ति मिस्सकचोळानि । छवदुस्सानी ति मतसरीरतो छड्डितवत्थानि, एरकतिणादीनि वा गन्थेत्वा कतनिवासनानि । पंसुकूलानी ति पथवियं छड्डितनन्तकानि । हिरीटानी ति रुक्खतचवत्थानि[1] । अजिनं ति अजिनमिगचम्मं । अजि-
5 नक्खिपं ति तदेव मज्झे फालितकं । कुसचीरं ति कुसतिणानि गन्थेत्वा कतचीरं[2] । वाकचीरफलकचीरेसु पि एसेव नयो । केसकम्बलं ति मनुस्सकेसेहि कतकम्बलं । यं सन्धाय वुत्तं—"सेय्यथा पि भिक्खवे, यानि कानिचि तन्तावुतानि वत्थानि, केसकम्बलो तेसं पटिकिट्ठो अक्खायति । केसकम्बलो भिक्खवे, सीते सीतो, उण्हे उण्हो अप्पग्घो[3]
10 च[3] दुब्बण्णो च दुग्गन्धो दुक्खसम्फस्सो" ति ।

B. 294 वाळकम्बलं ति अस्सवालेहि कतकम्बलं । उलूकपक्खिकं ति उलूकपक्खानि गन्थेत्वा कतनिवासनं । उक्कुटिकप्पधानमनुयुत्तो ति उक्कुटिकवीरियं अनुयुत्तो, गच्छन्तो पि उक्कुटिकोव हुत्वा उप्पतित्वा उप्पतित्वा गच्छति । कण्टकापस्सयिको ति अयकण्टके वा पकतिकण्टके
15 वा भूमियं कोट्टेत्वा तत्थ चम्मं अत्थरित्वा ठानचङ्कमादीनि करोति ।
R. 7 सेय्यं ति सयन्तो पि तत्थेव सेय्यं कप्पेति । फलकसेय्यं ति रुक्खफलके सेय्यं । थण्डिलसेय्यं ति थण्डिले उच्चे भूमिठाने सेय्यं । एकपस्सयिको ति एकपस्सेनेव सयति । रजोजल्लधरो ति सरीरं तेलेन मक्खित्वा रजुट्ठानट्ठाने तिट्ठति । अथस्स सरीरे रजोजल्लं लग्गति, तं धारेति ।
20 यथासन्थतिको ति लद्धं आसनं अकोपेत्वा यदेव लभति, तत्थेव निसीदनसीलो । वेकटिको ति विकटखादनसीलो । विकटं ति गूथं वुच्चति । अपानको ति पटिक्खित्तसीतुदकपानो । सायं ततियमस्सा ति सायततियकं । पातो, मज्झन्हिके, सायं ति दिवसस्स तिक्खत्तुं पापं पवाहेस्सामी ति उदकोरोहनानुयोगं अनुयुत्तो विहरती ति ।

१. तिरीटकरुक्खतचवत्थानि—सी० । २. कतचीरकं—सी० ।
३-३. सी० पोत्थके नत्थि ।

५. ततोपक्कमनिरत्थकतावण्णना

१७. अथ भगवा सीलसम्पदादीहि विना तेसं तपोपक्कमानं निरत्थकतं दस्सेन्तो—"अचेलको चे पि कस्सप होती" ति आदिमाह। तत्थ आरका वा (दी० नि० १.१४२) ति दूरे येव। अवेरं ति दोसवेरविरहितं। अब्यापज्जं ति दोमनस्सब्यापज्जरहितं।

१८. दुक्करं, भो गोतमा (दी० नि० १४३) ति इदं कस्सपो 5 "मयं पुब्बे एत्तकमत्तं सामञ्ञं च ब्रह्मञ्ञं चा ति विचराम। तुम्हे पन अञ्ञं येव सामञ्ञं च ब्रह्मञ्ञं च वदथा" ति दीपेन्तो आह। पकति खो एसा ति पकतिकथा एसा। इमाय च कस्सप मत्ताया ति-"कस्सप यदि इमिना पमाणेन एवं परित्तकेन पटिपत्तिक्कमेन सामञ्ञं वा ब्रह्मञ्ञं वा दुक्करं सुदुक्करं नाम अभविस्स, ततो नेतं अभविस्स 10 कल्लं वचनाय दुक्करं सामञ्ञं" ति अयमेत्थ पदसम्बन्धेन सद्धिं अत्थो। एतेन नयेन सब्बत्थ पदसम्बन्धो वेदितब्बो।

१९. दुज्जानो (दी० नि० १४४) ति इदं पि सो "मयं पुब्बे B. 295 एत्तकेन समणो वा ब्राह्मणो वा होती ति विचराम, तुम्हे पन अञ्ञथा वदथा" ति इदं सन्धायाह। अथस्स भगवा तं पकतिवादं पटिक्खिपित्वा 15 सभावतोव दुज्जानभावं आविकरोन्तो पुनपि-"पकति खो" ति आदिमाह। तत्रा पि वुत्तनयेनेव पदसम्बन्धं कत्वा अत्थो वेदितब्बो।

६ सीलसमाधिपञ्ञासम्पदावण्णना

२०. कतमा पन सा भो गोतमा (दी० नि० १४६) ति कस्मा पुच्छति अयं किर पण्डितो भगवतो कथेन्तस्सेव कथं उग्गहेसि। अथ अत्तनो पटिपत्तिया निरत्थकतं विदित्वा समणो गोतमो—"तस्स 20 चायं सीलसम्पदा, चित्तसम्पदा, पञ्ञासम्पदा अभाविता होति असच्छि-कता, अथ खो सो आरकाव सामञ्ञा" ति आदिमाह। 'हन्द दानि नं ता सम्पत्तियो पुच्छामी ति सीलसम्पदादिविजाननत्थं पुच्छति। अथस्स भगवा बुद्धुप्पादं दस्सेत्वा तन्तिधम्मं कथेन्तो ता सम्पत्तियो दस्सेतुं-"इध कस्सपा" ति आदिमाह। इमाय च कस्सप सीलसम्पदाया ति 25

इदं अरहत्तफलमेव सन्धाय वुत्तं । अरहत्तफलपरियोसानं[1] हि भगवतो सासनं । तस्मा अरहत्तफलसम्पयुत्ताहि सीलचित्तपञ्ञासम्पदाहि अञ्ञे उत्तरितरा वा पणीततरा वा सीलादिसम्पदा, नत्थी ति आह ।

R. 8

७. सीहनादकथावण्णना

5 २२. एवं च पन वत्वा इदानि अनुत्तरं महासीहनादं नदन्तो— "सन्ति कस्सप एके समणब्राह्मणा"—(दी० नि० १.१४७) ति आदिमाह । तत्थ **अरियं** ति निरुपक्किलेसं परमविसुद्धं । **परमं** ति उत्तमं । पञ्चसीलानि हि आदिं कत्वा याव पातिमोक्खसंवरसीला[2] सीलमेव, लोकुत्तरमग्गफलसम्पयुत्तं पन परमसीलं नाम । **नाहं तत्था** 10 ति तत्थ सीले पि परमसीले पि अहं अत्तनो समसमं मम सीलसमेन सीलेन मया समं पुग्गलं न पस्सामी ति अत्थो । **अहमेव तत्थ भिय्यो** ति अहमेव तस्मिं सीले उत्तमो । कतमस्मिं ? **यदिदं अधिसीलं** ति यं एतं उत्तमं सीलं ति अत्थो । इति इमं पठमं सीहनादं नदति । **तपोजिगुच्छवादा** ति ये तपोजिगुच्छं वदन्ति । तत्थ तपती **तपो** । 15 किलेससन्तापकवीरियस्सेतं नामं । तदेव ते किलेसे जिगुच्छती ति **जिगुच्छा** । **अरिया परमा** ति एत्थ निद्दोसत्ता अरिया, अट्ठआरम्भवत्थुवसेन 'पि[3] उप्पन्ना विपस्सनावीरियसङ्खाता तपोजिगुच्छा तपोजिगुच्छाव, मग्गफलसम्पयुत्ता परमा नाम । **अधिजेगुच्छं** ति इध जिगुच्छभावो जेगुच्छं, उत्तमं जेगुच्छं अधिजेगुच्छं, तस्मा यदिदं अधिजेगुच्छं, तत्थ अहमेव भिय्यो 20 ति एवमेत्थ अत्थो दट्ठब्बो । पञ्ञाधिकारे पि कम्मस्सकतापञ्ञा च विपस्सनापञ्ञा च पञ्ञा नाम, मग्गफलसम्पयुत्ता परमा पञ्ञा नाम । **अधिपञ्ञं** ति[4] एत्थ लिङ्गविपल्लासो वेदितब्बो । अयं पनेत्थत्थो[4]–यायं अधिपञ्ञा नाम अहमेव तत्थ[5] भिय्यो ति विमुत्ताधिकारे तदङ्गविक्खम्भनविमुत्तियो विमुत्ति नाम,

B. 296

१. अरहत्तपरियोसानं हि—सी० । २. पातिमोक्खसीलं—सी० ।
३. पन—स्या०, रो० । ४-४. सी० पोत्थके नत्थि ।
५. एत्थ—सी०, स्या०, रो० ।

समुच्छेदपटिपस्सद्धिनिस्सरणविमुत्तियो पन परमा विमुत्ती ति वेदितब्बा। इधा पि च यदिदं अधिविमुत्ती ति या अयं अधिविमुत्ति, अहमेव तत्थ[1] भिय्यो ति अत्थो।

२३. सुञ्ञागारे (दी० नि० १.१४८) ति सुञ्ञे घरे, एककोव निसीदित्वा ति अधिप्पायो। परिसासु चा ति अट्ठसु परिसासु। 5 वुत्तं पि चेतं—"चत्तारिमानि सारिपुत्त, तथागतस्स वेसारज्जानि। येहि वेसारज्जेहि समन्नागतो तथागतो आसभं ठानं पटिजानाति, परिसासु, सीहनादं नदती" (म० नि० १.१०१) ति सुत्तं वित्थारेतब्बं।

पञ्हं च नं पुच्छन्ती ति पण्डिता देवमनुस्सा नं पञ्हं 10 अभिसङ्खरित्वा पुच्छन्ति। ब्याकरोती ति तङ्खणञ्ञेव विस्सज्जेसि[2]। चित्तं आराधेती ति पञ्हाविस्सज्जनेन महाजनस्स चित्तं परितोसेति येव। नो च खो सोतब्बं मञ्ञन्ती ति चित्तं आराधेत्वा कथेन्तस्स- R.9 पिस्स वचनं परे सोतब्बं न मञ्ञन्ती ति, एवं च वदेय्युं ति अत्थो। सोतब्बं चस्स मञ्ञन्ती ति देवा पि मनुस्सा पि महन्तेनेव उस्साहेन 15 सोतब्बं मञ्ञन्ति। पसीदन्ती ति सुपसन्ना कल्लचित्ता मुदुचित्ता होन्ति।

पसन्नाकारं करोन्ती ति न मुद्धप्पसन्नाव होन्ति, पणीतानि चीवरादीनि वेळुवनविहारादयो च महाविहारे परिच्चजन्ता पसन्नाकारं करोन्ति। तथत्ताया ति यं सो धम्मं देसेति तथा भावाय, धम्मानु- 20 धम्मपटिपत्तिपूरणत्थाय पटिपज्जन्ती ति[3] अत्थो। तथत्ताय च पटिपज्जन्ती ति तथभावाय पटिपज्जन्ति, तस्स हि भगवतो धम्मं B.297 सुत्वा केचि सरणेसु केचि पञ्चसु सीलेसु पतिट्ठहन्ति, अपरे निक्खमित्वा पब्बजन्ति। पटिपन्ना च आराधेन्ती ति तञ्च पन पटिपदं पटिपन्ना पूरेतुं[4] सक्कोन्ति[4], सब्बाकारेन पन पूरेन्ति, पटिपत्तिपूरणेन तस्स 25 भोतो गोतमस्स चित्तं आराधेन्ती ति वत्तब्बा।

१. एत्थ—सी०।
२. विस्सज्जेति—सी०।
३. पन पटिपज्जन्ती ति—सी०।
४-४. न पूरेतुं न सक्कोन्ति—सी०।

इमस्मिं पनोकासे ठत्वा सीहनादा समोधानेतब्बा। एकच्चं तपस्सिं निरये निब्बत्तं पस्सामीति हि भगवतो एको सीहनादो। अपरं सग्गे निब्बत्तं पस्सामी ति एको। अकुसलधम्मप्पहाने अहमेव सेट्ठो ति एको। कुसलधम्मसमादाने पि अहमेव सेट्ठो ति एको। अकुसलधम्मप्पहाने 5 मय्हमेव सावकसङ्घो सेट्ठो ति एको। कुसलधम्मसमादाने पि मय्हं येव सावकसङ्घो सेट्ठो ति एको। सीलेन मय्हं सदिसो नत्थी ति एको। वीरियेन मय्हं सदिसो नत्थी ति एको। पञ्ञाय...पे०...विमुत्तिया ...पे०...सीहनादं नदन्तो परिसमज्झे निसीदित्वा नदामी ति एको। विसारदो हुत्वा नदामी ति एको। पञ्हं मं पुच्छन्ती ति एको। पञ्हं 10 पुट्ठो विस्सज्जेमी ति एको। विस्सज्जनेन परस्स चित्तं आराधेमी ति एको। सुत्वा[1] सोतब्बं मञ्ञन्ती ति एको। सुत्वा मे पसीदन्ती ति एको। पसन्नाकारं करोन्ती ति एको। यं पटिपत्तिं देसेमि, तथत्ताय पटिपज्जन्ती ति एको। पटिपन्ना च मं आराधेन्ती ति एको। इति पुरिमानं दसन्नं एकेकस्स—"परिसासु च नदती" ति आदयो दस[2] दस[2] 15 परिवारा। एवं ते दस पुरिमानं दसन्नं परिवारवसेन सतं पुरिमा च दसाति दसाधिकं[3] सीहनादसतं होति। इतो अञ्ञस्मिं पन सुत्ते एत्तका R. 10 सीहनादा दुल्लभा, तेनिदं सुत्तं महासीहनादं ति वुच्चति। इति भगवा सीहनादं खो समणो गोतमो नदति, तं च खो सुञ्ञागारे नदती ति एवं वादानुवादं[4] पटिसेधेत्वा[5] इदानि परिसति[6] नदितपुब्बं[7] सीहनादं[7] 20 दस्सेन्तो "एकमिदाहं" ति आदिमाह।

८. अचेलककस्सपपब्बज्जाकथा

२४. तत्थ तत्र मं अञ्ञतरो तपब्रह्मचारी ति तत्र राजगहे गिज्झ-B. 298 कूटे पब्बते विहरन्तं मं अञ्ञतरो तपब्रह्मचारी निग्रोधो नाम परि-ब्बाजको। अधिजेगुच्छे ति विरियेन पापजिगुच्छनाधिकारे पञ्हं पुच्छि।

१ सी० पोत्थके नत्थि। २-२. दस—सी०।
३. दसुत्तरं—सी०। ४. वादानं वादं—सी०।
५. पटिसेधित्वा—सी०। ६. परिसति—सी०।
७-७. पुन सीहनादं—स्या०, रो०।

इदं यं तं भगवा गिज्झकूटे महाविहारे निसिन्नो उदुम्बरिकाय देविया उय्याने निसिन्नस्स निग्रोधस्स च परिब्बाजकस्स सन्धानस्स च उपासकस्स दिब्बाय सोतधातुया कथासल्लापं सुत्वा आकासेनागन्त्वा तेसं सन्तिके पञ्ञत्ते आसने निसीदित्वा निग्रोधेन अधिजेगुच्छे पुट्ठपञ्हं विस्सज्जेसि। तं सन्धाय वुत्तं। परं विय मत्ताया ति परमाय मत्ताय, अतिमहन्तेनेव 5 पमाणेना ति अत्थो। को हि भन्ते ति ठपेत्वा अन्धबालं दिट्ठिगतिकं अञ्ञो पण्डितजातिको "को नाम भगवतो धम्मं सुत्वा न अत्तमनो अस्सा" ति वदति। लभेय्याहं ति इदं सो—"चिरं वत मे अनिय्यानिकपक्खे योजेत्वा अत्ता किलमितो, सुक्खनदीतीरे नहायिस्सामी ति सम्परिवत्तेन्तेन विय थुसे कोट्टेन्तेन विय न कोचि अत्थो निप्फादितो, 10 हन्दाहं अत्तानं योगे योजेस्सामी" ति चिन्तेत्वा आह। अथ भगवा यो[1] अनेन[2] खन्धके तित्थियपरिवासो पञ्ञत्तो, यो अञ्ञतित्थियपुब्बो सामणेरभूमियं ठितो—"अहं भन्ते, इत्थन्नामो अञ्ञतित्थियपुब्बो इमस्मिं धम्मविनये आकङ्खामि उपसम्पदं, स्वाहं, भन्ते, सङ्घं चत्तारो मासे परिवासं याचामी" (म० व० ७४) ति आदिना नयेन समादि- 15 यित्वा परिवसति। तं सन्धाय—"यो, खो कस्सप, अञ्ञतित्थियपुब्बो" ति आदिमाह।

२५. तत्थ पब्बज्जन्ति वचनसिलिट्ठतावसेनेव वुत्तं, अपरिवसित्वा येव हि पब्बज्जं लभति। उपसम्पदत्थिकेन पन नातिकालेन गामप्पवेसनादीनि अट्ठ वत्तानि पूरेन्तेन परिवसितब्बं। आरद्धचित्ता ति 20 अट्ठवत्तपूरणेन तुट्ठचित्ता, अयमेत्थ सङ्खेपत्थो[3]। वित्थारतो पनेस तित्थियपरिवासो समन्तपासादिकाय विनयट्ठकथायं पब्बज्जखन्धकवण्णनाय वुत्तनयेन[4] वेदितब्बो। अपि च मेत्था ति अपि च मे एत्थ। पुग्गलवेमत्तता विदिता ति पुग्गलनानत्तं विदितं। अयं पुग्गलो परिवासारहो, अहं न परिवासारहो" ति इदं मय्हं पाकटं ति दस्सेति। ततो कस्सपो 25

१. खो—सी०। २. अनेन—सी०पोत्थके नत्थि।
३. सङ्खेपो—सी०। ४. वुत्तनयेनेव—स्या०, रो०।

चिन्तेसि—"अहो अच्छरियं बुद्धसासनं, यत्थ एवं पंसित्वा कोट्टेत्वा युत्तमेव गण्हन्ति, अयुत्तं छड्डेन्ती" ति, ततो सुट्ठुतरं पब्बज्जाय सञ्जातुस्साहो—"सचे भन्ते" ति आदिमाह।

R. 11
B. 299

अथ खो[1] भगवा तस्स तिब्बच्छन्दतं विदित्वा—"न कस्सपो
5 परिवासं अरहती" ति अञ्ञतरं भिक्खुं आमन्तेसि—"गच्छ भिक्खु कस्सपं नहापेत्वा पब्बाजेत्वा आनेही" ति। सो तथा कत्वा तं पब्बाजेत्वा भगवतो सन्तिकं अगमासि। भगवा तं गणमज्झे निसीदापेत्वा उपसम्पादेसि। तेन वुत्तं—"अलत्थ खो अचेलो कस्सपो भगवतो सन्तिके पब्बज्जं, अलत्थ उपसम्पदं" ति।

10 **अचिरूपसम्पन्नो** ति उपसम्पन्नो हुत्वा नचिरमेव। **वूपकट्ठो** ति वत्थुकामकिलेसकामेहि कायेन चेव चित्तेन च वूपकट्ठो। **अप्पमत्तो** ति कम्मट्ठाने सतिं अविजहन्तो। **आतापी** ति कायिकचेतसिकसङ्खातेन वीरियातापेन[2] आतापी[2]। **पहितत्ता** ति काये च जीविते च अनपेक्खताय पेसितचित्तो विस्सट्ठअत्तभावो। **यस्सत्थाया** ति यस्स अत्थाय। **कुलपुत्ता**
15 ति आचारकुलपुत्ता। **सम्मदेवा** ति हेतुनाव कारणेनेव। **तदनुत्तरं** ति तं अनुत्तरं। **ब्रह्मचरियपरियोसानं** ति मग्गब्रह्मचरियस्स परियोसानभूतं अरहत्तफलं। तस्स हि अत्थाय कुलपुत्ता पब्बजन्ति। **दिठेव धम्मे** ति इमस्मिं येव अत्तभावे। **सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा** ति अत्तनायेव[3] पञ्ञाय पच्चक्खं कत्वा, अपरप्पच्चयं कत्वा ति अत्थो। **उपसम्पज्ज**
20 **विहासी** ति पापुणित्वा सम्पादेत्वा[4] विहासि। एवं विहरन्तो च[5] खीणा जाति...पे०...अब्भञ्ञासी ति।

एवमस्स पच्चवेक्खणभूमिं दस्सेत्वा अरहत्तनिकूटेन देसनं निट्ठापेतुं "अञ्ञतरो खो पनायस्मा कस्सपो अरहतं अहोसी" ति वुत्तं। तत्थ **अञ्ञतरो** ति एको। **अरहतं** ति अरहन्तानं, भगवतो सावकानं

१. सी० पोत्थके नत्थि।
२-२. विरियेन आतापी—स्या०, रो०।
३. अत्तनो येव—सी०।
४. समादपेत्वा वा—सी०।
५. पि—स्या०, रो०।

अरहन्तानं अब्भन्तरो अहोसी ति अयमेत्थ अधिप्पायो। यं यं पन अन्तरन्तरा न वुत्तं, तं तं तत्थ तत्थ वुत्तत्ता[1] पाकटमेवा ति।

इति सुमङ्गलविलासिनिया दीघनिकायट्ठकथायं
महासीहनादसुत्तवण्णना निट्ठिता।

---

१. रो० पोत्थके नत्थि।

९. पोट्ठपादसुत्तवण्णना

१. पोट्ठपादपरिब्बाजकवत्थुवण्णना

B. 300
R. 12

१. **एवं मे सुत्तं...पे०...सावत्थियं** (दी० नि० १.१५०) ति पोट्ठपादसुत्तं। तत्रायं अपुब्बपदवण्णना। **सावत्थियं विहरति जेतवने अनाथपिण्डिकस्स आरामे** ति सावत्थिं उपनिस्साय यो जेतस्स कुमारस्स वने अनाथपिण्डिकेन गहपतिना आरामो कारितो, तत्थ 5 विहरति। **पोट्ठपादो परिब्बाजको** ति नामेन पोट्ठपादो नाम छन्नपरिब्बाजको। सो किर गिहिकाले ब्राह्मणमहासालो कामेसु आदीनवं दिस्वा चत्तालीसकोटिपरिमानं भोगक्खन्धं पहाय पब्बजित्वा तित्थियानं गणाचरियो जातो। समयं पवदन्ति एत्था ति **समयप्पवादको**। तस्मिं किर ठाने चङ्कीतारुक्खपोक्खरसातिप्पभुतयो 10 ब्राह्मणा निगण्ठअचेलकपपरिब्बाजकादयो च पब्बजिता सन्निपतित्वा अत्तनो अत्तनो समयं वदन्ति कथेन्ति दीपेन्ति, तस्मा सो आरामो **समयप्पवादको** ति वुच्चति। स्वेव च[1] तिन्दुकाचीरसङ्खाताय तिम्बरुक्खपन्तिया परिक्खत्तत्ता **तिन्दुकाचीरो**। यस्मा पनेत्थ पठमं एकाव साला अहोसि, पच्छा महापुञ्ञं परिब्बाजकं निस्साय बहू 15 साला कता। तस्मा तमेव एकं सालं उपादाय लद्धनामवसेन **एकसालको** ति वुच्चति। मल्लिकाय पन पसेनदिरञ्ञो देविया उय्यानभूतो सो पुप्फफलसम्पन्नो आरामो ति कत्वा **मल्लिकाय आरामो** ति तङ्खं गतो। तस्मिं समयप्पवादके तिन्दुकाचीरे एकसालके मल्लिकाय आरामे।

20 **पटिवसती** ति निवासफासुताय वसति। अथेकदिवसं भगवा पच्चूससमये सब्बञ्ञुतञ्ञाणं पत्थरित्वा लोकं परिग्गण्हन्तो

1. सी० पोत्थके नत्थि।

ञाणजालस्स अन्तोगतं परिब्बाजकं दिस्वा—"अयं पोट्ठपादो मय्हं ञाणजाले पञ्ञायति, किन्नु खो भविस्सती" ति उपपरिक्खन्तो अद्दस—"अहं अज्ज तत्थ गमिस्सामि, अथ मं पोट्ठपादो निरोधं च निरोधवुट्ठानं च पुच्छिस्सति। तस्साहं सब्बबुद्धानं ञाणेन संसन्दित्वा[1] तदुभयं कथेस्सामि, अथ सो कतिपाहच्चयेन चित्तं हत्थिसारिपुत्तं 5 गहेत्वा मम सन्तिकं आगमिस्सति, तेसमहं धम्मं देसेस्सामि, B. 301 देसनावसाने पोट्ठपादो मं सरणं गमिस्सति, चित्तो हत्थिसारिपुत्तो मम सन्तिके पब्बजित्वा अरहत्तं पापुणिस्सती" ति। ततो पातोव सरीरपटिजग्गनं कत्वा सुरत्तदुपट्टं निवासेत्वा विज्जुलतासदिसं कायबन्धनं बन्धित्वा युगन्धरपब्बतं परिक्खिपित्वा ठितमहामेघं विय मेघवण्णं 10 R. 13 पंसुकूलं एकंसवरगतं[2] कत्वा पच्चग्घं सेलमयपत्तं वामअंसकूटे लग्गेत्वा सावत्थिं पिण्डाय पविसिस्सामी ति सीहो विय हिमवन्तपादा विहारा निक्खमि। इममत्थं सन्धाय—"अथ खो भगवा" ति आदि वुत्तं।

२. एतदहोसी ति नगरद्वारसमीपं गन्त्वा अत्तनो रुचिवसेन सुरियं[3] ओलोकेत्वा अतिप्पगभावमेव[4] दिस्वा एतं अहोसि। यंनूनाहं 15 ति संसयपरिदीपनो विय निपातो। बुद्धानं च संसयो नाम नत्थि— "इदं करिस्साम, इदं न करिस्साम, इमस्स धम्मं देसेस्साम, इमस्स न देसेस्सामा" ति एवं परिवितक्कपुब्बभागो[5] पनेस सब्बबुद्धानं लब्भति। तेनाह—"यंनूनाहं" ति, यदि पनाहं ति अत्थो।

३. उन्नादिनिया ति उच्चं नदमानाय, एवं नदमानाय चस्सा 20 उद्धं गमनवसेन उच्चो, दिसासु पत्थटवसेन महा सद्दो ति उच्चासद्दमहासद्दाय। तेसं हि परिब्बाजकानं पातो व वुट्ठाय कत्तब्बं नाम चेतियवत्तं वा बोधिवत्तं वा आचरियुपज्झायवत्तं वा योनिसो मनसिकारो वा नत्थि। तेन ते पातो व वुट्ठाय बालातपे निसिन्ना—"इमस्स हत्थो

१. संसन्देत्वा—स्या०, रो०। २. एकंसं—सी०।
३. सूरियं—म०। ४. अतिप्पातभावमेव—स्या०, रो०।
५. परिवितक्कापुब्बभागे—सी०।

सोभनो, इमस्स पादो" ति एवं अञ्ञमञ्ञस्स हत्थपादादीनि वा आरब्भ, इत्थिपुरिसदारकदारिकादीनं वण्णे वा, अञ्ञं वा कामस्साद-भवस्सादादिवत्थु आरब्भ कथं समुट्ठापेत्वा[1] अनुपुब्बेन राजकथादिअनेक-विधं तिरच्छानकथं कथेन्ति। तेन वुत्तं—"उन्नादिनिया उच्चासद्दमहा-
5 सद्दाय अनेकविहितं तिरच्छानकथं कथेन्तिया" ति।

ततो पोट्ठपादो परिब्बाजको ते परिब्बाजके ओलोकेत्वा—"इमे परिब्बाजका अतिविय अञ्ञमञ्ञं अगारवा, मयं च समणस्स गोतमस्स पातुभावतो पट्ठाय सूरियुग्गमने खज्जोपनकुपमा जाता, लाभसक्कारो पि नो परिहीनो। सचे पनिमं ठानं समणो गोतमो वा गोतमस्स
10 सावको वा गिही उपट्ठाको वा[2] तस्स[2] आगच्छेय्य, अतिविय लज्जनीयं
B. 302 भविस्सति। परिसदोसो खो पन परिसजेट्ठकस्सेव उपरि आरोहती" ति इतोचितो च विलोकेन्तो भगवन्तं अद्दस। तेन वुत्तं—"अद्दसा खो पोट्ठपादो परिब्बाजको...पे०...तुण्ही अहेसु" ति।

४. तत्थ सण्ठपेसी ति सिक्खापेसि, वज्जमस्सा पटिच्छादेसि।
15 यथा सुसण्ठिता होति, तथा नं ठपेसि। यथा नाम परिसमज्झं पविसन्तो पुरिसो वज्जपटिच्छादनत्थं निवासनं सण्ठपेति, पारुपनं सण्ठपेति, रजोकिण्णट्ठानं पुञ्छति; एवमस्सा वज्जपटिच्छादनत्थं—'अप्पसद्दा भोन्तो' ति सिक्खापेन्तो यथा सुसण्ठिता होति, तथा नं ठपेसी ति अत्थो।
R. 14 अप्पसद्दकामो ति अप्पसद्दं इच्छति। एको निसीदति, एको तिट्ठति,
20 न गणसङ्गणिकाय यापेति। उपसङ्कमितब्बं मञ्ञेय्या ति इधागन्तब्बं मञ्ञेय्य।

कस्मा पनेस भगवतो उपसङ्कमनं पच्चासीसती ति[3]? अत्तनो वुद्धिं पत्थयमानो। परिब्बाजका किर बुद्धेसु वा बुद्धसावकेसु वा अत्तनो सन्तिकं आगतेसु—"अज्ज अम्हाकं सन्तिकं समणो गोतमो आगतो,
25 सारिपुत्तो आगतो, न खो पन ते यस्स वा तस्स वा सन्तिकं गच्छन्ति।

१. संठपेत्वा—सी०।　　२-२. पि वास्स—सी०।
३. पच्चसीसंती ति—सी०।

पस्सथ अम्हाकं उत्तमभावं'' ति अत्तनो उपट्ठाकानं सन्तिके अत्तानं उक्खिपन्ति, उच्चे ठाने ठपेन्ति। भगवतो पि उपट्ठाके गण्हितुं वायमन्ति। ते किर भगवतो उपट्ठाके दिस्वा एवं वदन्ति—"तुम्हाकं सत्था भवं गोतमो पि गोतमसावका पि[१] अम्हाकं सन्तिकं आगच्छन्ति, मयं अञ्ञमञ्ञं समग्गा। तुम्हे पन अम्हे अक्खीहि पि पस्सितुं न इच्छथ, सामीचिकम्मं न करोथ, किं वो अम्हेहि अपरद्धं'' ति। अथेकच्चे मनुस्सा—'बुद्धा पि एतेसं सन्तिकं[२] गच्छन्ति किं अम्हाकं' ति ततो पट्ठाय ते दिस्वा नप्पमज्जन्ति। तुण्ही अहेसुं ति पोट्ठपादं परिवारेत्वा निस्सद्दो निसीदिंसु।

५. स्वागतं भन्ते ति सुट्ठु आगमनं, भन्ते, भगवतो; भगवति हि नो आगते आनन्दो होति, गते सोको ति दीपेति। चिरस्सं खो, भन्ते (दी० नि० १.१५१) ति कस्मा आह? किं भगवा पुब्बे पि तत्थ गतपुब्बो ति, न गतपुब्बो। मनुस्सानं पन—'कुहिं गच्छन्ता, कुतो आगतत्थ, किं मग्गमूळ्हत्थ, चिरस्सं आगतत्था' ति एवमादयो पियसमुदाचारा होन्ति, तस्मा एवमाह। एवं च पन वत्वा न मानथद्धो हुत्वा निसीदि, उट्ठायासना[३] भगवतो पच्चुग्गमनकासि। भगवन्तं हि उपगतं दिस्वा आसनेन अनिमन्तेन्तो वा अपचित्तिं अकरोन्तो वा दुल्लभो। कस्मा? उच्चाकुलीनताय। अयं पि परिब्बाजको अत्तनो निसिन्नासनं पप्फोटेत्वा भगवन्तं आसनेन निमन्तेन्तो—"निसीदतु, भन्ते, भगवा इदमासनं पञ्ञत्तं'' ति आह। अन्तराकथा विप्पकता ति निसिन्नानं वो आदितो पट्ठाय याव ममागमनं, एतस्मिं अन्तरे का नाम कथा विप्पकता, ममागमनपच्चया कतमा कथा परियन्तं न गता, वदथ, याव नं परियन्तं नेत्वा देमी ति सब्बञ्ञुपवारणं पवारेसि। अथ परिब्बाजको—'निरत्थककथा एसा निस्सारा वट्टसन्निस्सिता, न तुम्हाकं पुरतो वत्तब्बतं अरहती' ति दीपेन्तो "तिट्ठतेसा, भन्ते'' ति आदिमाह।

१. सावको पि—स्या०, रो०। २. सन्तिके—स्या०, रो०।
३. उट्ठाय पन—सी०।

२. अभिसञ्ञानिरोधकथावण्णना

६. तिट्ठतेसा भन्ते ति सचे भगवा सोतुकामो भविस्सति, पच्छापेसा कथा न दुल्लभा भविस्सति, अम्हाकं पनिमाय कथाय अत्थो नत्थि। भगवतो पनागमनं लभित्वा मयं अञ्ञदेव सुकारणं पुच्छामा ति दीपेति। ततो तं पुच्छन्तो—"पुरिमानि, भन्ते" ति आदिमाह। तत्थ कोतूहलसालायं ति कोतूहलसाला[1] नाम पच्चेकसाला नत्थि। यत्थ पन नानातित्थिया समणब्राह्मणा नानाविधं कथं पवत्तेन्ति, सा बहूनं—"अयं किं वदति, अयं किं वदती" ति कोतूहलुप्पत्तिट्ठानतो कोतूहलसाला ति वुच्चति। अभिसञ्ञानिरोधे ति एत्थ अभी ति उपसग्गमत्तं। सञ्ञानिरोधे ति चित्तनिरोधे, खणिकनिरोधे कथा उप्पन्ना ति अत्थो। इदं पन तस्सा उप्पत्तिकारणं। यदा किर भगवा जातकं वा कथेति, सिक्खापदं वा पञ्ञपेति[2] तदा सकलजम्बुदीपे भगवतो कित्तिघोसो पत्थरति, तित्थिया तं सुत्वा—"भवं किर गोतमो पुब्बचरियं[3] कथेसि, मयं किं न सक्कोम तादिसं[4] किञ्चि कथेतुं' ति भगवतो पटिभागकिरियं करोन्ता एकं भवन्तरसमयं कथेन्ति—'भवं गोतमो सिक्खापदं पञ्ञापेसि, मयं किं न सक्कोम पञ्ञपेतुं' ति अत्तनो सावकानं किञ्चिदेव सिक्खापदं पञ्ञपेन्ति। तदा पन भगवा अट्ठविध-परिसमज्झे निसीदित्वा निरोधकथं कथेसि। तित्थिया तं सुत्वा—'भवं किर गोतमो निरोधं नाम कथेसि, मयं पि तं कथेस्सामा' ति सन्नि-पतित्वा कथयिंसु। तेन वुत्तं—"अभिसञ्ञानिरोधे कथा उदपादी" ति।

तत्रेकच्चे ति तेसु एकच्चे। पुरिमो चेत्थ य्वायं बाहिरे तित्थाय-तने पब्बजितो चित्तप्पवत्तियं दोसं दिस्वा अचित्तकभावो सन्तो ति समापत्तिं भावेत्वा इतो चुतो पञ्च कप्पसतानि असञ्ञीभवे ठत्वा पुन इध उप्पज्जति। तस्स सञ्ञुप्पादे च निरोधे च हेतुं अपस्सन्तो—अहेतू अप्पच्चया ति आह।

4116

१. कुतूहलसाला—सी॰ सब्बत्थ। २. पञ्ञापेति—सी॰ सब्बत्थ।
३. पुब्बचरितं—सी॰। ४. तादिसकं—सी॰।

दुतियो तं निसेधेत्वा मिगसिङ्गतापसस्स असञ्ञकभावं गहेत्वा—"उपेति पि अपेती ति" ति आह। मिगसिङ्गतापसो किर अत्तन्तपो[1] घोरतपो परमधितिन्द्रियो[2] अहोसि। तस्स सीलतेजेन सक्कविमानं उण्हं अहोसि। सक्को देवराजा 'सक्कट्ठानं नु खो तापसो पत्थेती' ति अलम्बुसं नाम देवकञ्ञं—'तापसस्स तपं भिन्दित्वा एही' ति पेसेसि। सा तत्थ गता। तापसो पठमदिवसे तं दिस्वा व[3] पलायित्वा पण्णसालं पाविसि। दुतियदिवसे कामच्छन्दनीवरणेन भग्गो तं हत्थे अग्गहेसि। सो तेन दिब्बफस्सेन[4] फुट्ठो विसञ्ञी हुत्वा तिण्णं संवच्छरानं अच्चयेन सञ्ञं पटिलभि। तं सो[5] दिट्ठिगतिको—"तिण्णं संवच्छरानं अच्चयेन निरोधा वुट्ठितो" ति मञ्ञमाने एवमाह।

तितियो तं निसेधेत्वा आथब्बणपयोगं सन्धाय "उपकड्ढन्ति पि अपकड्ढन्ति पी" ति आह। आथब्बणिका किर आथब्बणं[6] पयोजेत्वा सत्तं सीसच्छिन्नं विय हत्थच्छिन्नं विय मतं विय च कत्वा दस्सेन्ति। तस्स पुन पाकतिकभावं दिस्वा सो दिट्ठिगतिको—"निरोधा वुट्ठितो अयं" ति मञ्ञमानो एवमाह।

चतुत्थो तं निसेधेत्वा यक्खदासीनं मदनिद्दं सन्धाय "सन्ति हि भो देवता" ति आदिमाह। यक्खदासियो किर सब्बरत्तिं देवतूपहारं कुरुमाना नच्चित्वा गायित्वा अरुणोदये एकं सूरापातिं पवित्वा परिवत्तित्वा सुपित्वा दिवा वुट्ठहन्ति। तं दिस्वा सो दिट्ठिगतिको—"सुत्तकाले निरोधं समापन्ना, पबुद्धकाले निरोधा वुट्ठिता" ति मञ्ञमानो एवमाह।

अयं पन पोट्ठपादो परिब्बाजको पण्डितजातिको[7]। तेनस्स तं कथं सुत्वा विप्पटिसारो उप्पज्जि। "इमेसं कथा एलमूगकथा विय चत्तारो हि निरोधे एते पञ्ञपेन्ति, इमिना च निरोधेन नाम एकेन भवितब्बं,

R. 16 · B. 305 (margin; line numbers 5, 10, 15, 20)

१. तत्तपो—स्या०।
२. परिमारितिन्द्रियो—सी०।
३. दिस्वा—स्या०।
४. दिब्बसम्फस्सेन—सी०।
५. सो पि—सी०।
६. अथब्बणं—सी०।
७. पण्डितजातियो—सी०।

न बहुना। तेनापि एकेन अञ्ञेनेव भवितब्बं, सो पन अञ्ञेन ञातुं न सक्का अञ्ञत्र सब्बञ्ञुना। सचे भगवा इध अभविस्स 'अयं निरोधो अयं न निरोधो' ति दीपसहस्सं विय उज्जालेत्वा अज्जमेव पाकटं अकरिस्सा'' ति दसबलञ्ञेव अनुस्सरि। तस्मा ''तस्स मय्हं भन्ते'' ति आदिमाह। तत्थ **अहो नूना** ति अनुस्सरणत्थे निपातद्वयं, तेन तस्स भगवन्तं अनुस्सरन्तस्स एतदहोसि ''अहो नून भगवा अहो नून सुगतो'' ति। **यो इमेसं** ति एतेसं निरोधधम्मानं सुकुसलो निपुणो[1] छेको, सो भगवा अहो नून कथेय्य, सुगतो अहो नून कथेय्या ति अयमेत्थ अधिप्पायो। **पकतञ्ञू** ति चिण्णवसिताय पकतिं सभावं जानाती ति पकतञ्ञू। **कथं नु खो** ति इदं परिब्बाजको ''मयं भगवा न जानाम, तुम्हे जानाथ, कथेथ नो'' ति आयाचन्तो वदति। अथ भगवा कथेन्तो'' ''तत्र पोट्ठपादा'' ति आदिमाह।

३. अहेतुकसञ्ञुप्पादनिरोधकथावण्णना

७. तत्थ **तत्रा** (१.१५२) ति तेसु समणब्राह्मणेसु। **आदितोव तेसं अपरद्धं** ति तेसं आदिम्हि येव विरद्धं, घरमज्झे येव पक्खलिता ति दीपेति। **सहेतू सप्पच्चया** ति एत्थ हेतु पि पच्चयो पि कारणस्सेव नामं, सकारणा ति अत्थो। तं पन कारणं दस्सेन्तो ''सिक्खा एका'' ति आह। तत्थ **सिक्खा एका सञ्ञा उप्पज्जन्ती** ति सिक्खाय एकच्चा सञ्ञा जायन्ती ति अत्थो।

८. **का च सिक्खा ति भगवा अवोचा** ति कतमा च सा सिक्खा ति भगवा वित्थारेतुकम्यतापुच्छावसेन अवोच। अथ यस्मा अधिसीलसिक्खा अधिचित्तसिक्खा अधिपञ्ञासिक्खा ति तिस्सो सिक्खा होन्ति। तस्मा ता दस्सेन्तो भगवा सञ्ञाय सहेतुकं उप्पादनिरोधं दीपेतुं बुद्धुप्पादतो पभुति तन्तिधम्मं ठपेन्तो ''इध पोट्ठपाद, तथागतो लोके'' ति आदिमाह। तत्थ अधिसीलसिक्खा अधिचित्तसिक्खा ति द्वे एव सिक्खा सरूपेन आगता। ततिया पन ''अयं दुक्खनिरोधगामिनी

[1] सुट्ठु कुसलो निपुणो—सी०।

पटिपदा'' ति खो पोट्ठपाद मया एकं सिको धम्मो देसितो ति एत्थ सम्मादिट्ठिसम्मासङ्कप्पवसेन परियापन्नत्ता आगता ति वेदितब्बा। कामसञ्ञा ति पञ्चकामगुणिकरागो पि असमुप्पन्नकामचारो[1] पि। तत्थ पञ्चकामगुणिकरागो अनागामिमग्गेन समुग्घातं गच्छति, असमुप्पन्नकामचारो पन इमस्मिं ठाने वट्टति। तस्मा तस्स या पुरिमा 5 कामसञ्ञा ति तस्स पठमज्झानसमङ्गिनो या पुब्बे उप्पन्नपुब्बाय कामसञ्ञाय सदिसत्ता पुरिमा कामसञ्ञा ति वुच्चेय्य[2]। सा निरुज्झति, अनुप्पन्ना व नुप्पज्जती[3] ति अत्थो।

विवेकजपीतिसुखुमसच्चसञ्ञीयेव तस्मिं समये होती ति तस्मिं पठमज्झानसमये विवेकजपीतिसुखङ्गाता सुखुमसञ्ञा सच्चा 10 होति, भूता होती ति अत्थो। अथवा कामच्छन्दादिओळारिकङ्गप्पहानवसेन सुखुमा च सा भूतताय सच्चा च सञ्ञा ति सुखुमसच्चसञ्ञा, विवेकजेहि पीतिसुखेहि सम्पयुत्ता सुखुमसच्चसञ्ञा ति विवेकजपीतिसुखसुखुमसच्चसञ्ञा सा अस्स अत्थी ति विवेकजपीतिसुखुमसच्चसञ्ञी ति एवमेत्थ अत्थो दट्ठब्बो। एस 15 नयो सब्बत्थ। **एवम्पि सिक्खा** (दी० नि० १.१५३) ति एत्थ यस्मा पठमज्झानं समापज्जन्तो अधिट्ठहन्तो[4] वुट्ठहन्तो[5] च सिक्खति, तस्मा तं एवं सिक्खितब्बतो सिक्खा ति वुच्चति। तेन पि[6] सिक्खासङ्खातेन पठमज्झानेन एवं एका विवेकजपीतिसुखसुखुमसच्चसञ्ञा उप्पज्जति। एवं एका कामसञ्ञा[7] निरुज्झती ति अत्थो। 20 **अयं सिक्खा ति भगवा अवोचा** ति अयं[8] पठमज्झानसङ्खता एका सिक्खा ति, भगवा आह। एतेनुपायेन सब्बत्थ अत्थो दट्ठब्बो।

यस्मा पन अट्ठमसमापत्तिया[9] अङ्गतो सम्मसनं बुद्धानं येव होति, सावकेसु सारिपुत्तसदिसानं[10] पि नत्थि, कलापतो सम्मसनं येव पन

१. असुमुप्पन्नकामरागो—स्या०, रो०। २. पवुच्चेय—सी०।
३. च नुप्पज्जती ति—सी०, स्य०, रो०। ४. समापज्जनतो च अधिट्ठहन्तो च—स्या०।
५. स्या० पोत्थके नत्थि। ६. सी०, रो० पोत्थकेसु नत्थि।
७. कामसञ्ञा पि—सी०, रो०। ८. ० अयं—सी०, रो०।
९. अट्ठसमापत्तिया—सी०। १०. सारिपुत्तसदिसा—सी०।

सावकानं होति, इदं च सञ्ञा सञ्ञा ति, एवं अङ्गतो सम्मसनं
B. 307 उद्धटं। तस्मा आकिञ्चञ्ञायतनपरमं येव सञ्ञं दस्सेत्वा पुन
तदेव सञ्ञग्गं ति दस्सेतुं "यतो खो पोट्ठपाद...पे०...सञ्ञग्गं
फुसती" ति आह।

5 ९. तत्थ **यतो खो पोट्ठपाद भिक्खू** ति यो नाम पोट्ठपाद
R. 18 भिक्खु। **इध सकसञ्ञी होती** ति इध सासने सकसञ्ञी होति,
अयमेव वा पाठो। अत्तनो पठमज्झानसञ्ञाय सञ्ञवा होती ति अत्थो।
सो ततो अमुत्र ततो अमुत्रा ति सो भिक्खु ततो पठमज्झानतो
अमुत्र दुतियज्झाने, ततो पि अमुत्र ततियज्झाने ति एवं ताय ताय
10 झानसञ्ञाय सकसञ्ञी सकसञ्ञी हुत्वा अनुपुब्बेन सञ्ञग्गं
फुसति। **सञ्ञग्गं** ति आकिञ्चञ्ञायतनं वुच्चति। कस्मा? लोकियानं
किच्चकारकसमापत्तीनं अग्गत्ता। आकिञ्चञ्ञायतनसमापत्तियम्हि ठत्वा
नेवसञ्ञानासञ्ञायतनं पि निरोधं पि समापज्जन्ति। इति सा
लोकियानं किच्चकारकसमापत्तीनं[1] अग्गत्ता सञ्ञग्गं ति वुच्चति। तं
15 फुसति पापुणाती ति अत्थो। इदानि अभिसञ्ञानिरोधं दस्सेतुं "तस्स
सञ्ञग्गे ठितस्सा" ति आदिमाह। तत्थ **चेतेय्यं अभिसङ्खरेय्यं**
ति पदद्वये च झानं समापज्जन्तो चेतेति नाम, पुनप्पुनं कप्पेती ति
अत्थो। उपरिसमापत्तिअत्थाय निकन्तिं कुरुमानो अभिसङ्खरोति नाम।
इमा च मे सञ्ञा निरुज्झेय्युं ति इमा आकिञ्चञ्ञायतनसञ्ञा
20 निरुज्झेय्युं। **अञ्ञा च ओळारिका** ति अञ्ञा च ओळारिका
भवङ्गसञ्ञा उप्पज्जेय्युं। **सो व चेव चेतेति न अभिसङ्खरोती**
ति एत्थ कामञ्चेस चेतेन्तोव न चेतेति, अभिसङ्खरोन्तोव
नाभिसङ्खरोति। इमस्स भिक्खुनो आकिञ्चञ्ञायतनतो वुट्ठाय
नेवसञ्ञानासञ्ञायतनं समापज्जित्वा "एकं द्वे चित्तवारे ठस्सामी"
25 ति आभोगसमन्नाहारो नत्थि। उपरिनिरोधसमापत्तत्थाय एव पन
आभोगसमन्नाहारो अत्थि, स्वायमत्थो पुत्तधराचिक्खणेन दीपेतब्बो।

१. किच्चकरसमापत्तीनं—सी०।

पितुघरमज्झेन किर गन्त्वा पच्छाभागे पुत्तस्स घरं होति, ततो पणीतं भोजनं आदाय आसनसालं आगतं दहरं थेरो—"मनापो पिण्डपातो कुतो आभतो" ति पुच्छि। सो "असुकस्स घरतो" ति लद्धघरमेव आचिक्खि येन पनस्स पितुघरमज्झेन गतो पि आगतो पि तत्थ आभोगो पि नत्थि। तत्थ आसनसाला विय आकिञ्चञ्ञायतनसमापत्ति दट्ठब्बा, पितुगेहं विय नेवसञ्ञानासञ्ञायतनसमापत्ति, पुत्तगेहं विय निरोधसमापत्ति, आसनसालायठत्वा पितुघरं अमनसिकरित्वा[1] पुत्तघराचिक्खणं विय आकिञ्चञ्ञायतनतो वुट्ठाय नेवसञ्ञानासञ्ञायतनं समापज्जित्वा "एकं द्वे चित्तवारे ठस्सामी" ति पितुघरं[2] अमनसिकरित्वाव उपरिनिरोधसमापत्तत्थाय मनसिकारो[3]। एवमेस चेतेन्तोव न चेतेति, अभिसङ्खरोन्तोव नाभिसङ्खरोति। ता चेव सञ्ञा ति ता झानसञ्ञा निरुज्झन्ति। अञ्ञा चा ति अञ्ञा च ओळारिका भवङ्गसञ्ञा नुप्पज्जन्ति। सो निरोधं फुसती ति सो एवं पटिपन्नो भिक्खु सञ्ञावेदयितनिरोधं फुसति विन्दति पटिलभति।

अनुपुब्बाभिसञ्ञानिरोधसम्पजानसमापत्ति ति एत्थ अभी ति उपसग्गमत्तं, सम्पजानपदं निरोधपदेन अन्तरिकं कत्वा वुत्तं। अनुपटिपाटिया सम्पजानसञ्ञानिरोधसमापत्ती ति अयं पनेत्थत्थो। तत्रा पि सम्पजानसञ्ञानिरोधसमापत्ती ति सम्पजानन्तस्स अन्ते सञ्ञा निरोधसमापत्ति सम्पजानन्तस्स वा पण्डितस्स भिक्खुनो सञ्ञानिरोधसमापत्ती ति अयं विसेसत्थो।

इदानि इध ठत्वा निरोधसमापत्तिकथा कथेतब्बा। सा पनेसा सब्बाकारेन विसुद्धिमग्गे पञ्ञाभावनानिसंसाधिकारे कथिता, तस्मा तत्थ कथिततोव गहेतब्बा।

एवं भगवा पोट्ठपादस्स परिब्बाजकस्स निरोधकथं कथेत्वा—अथ नं तादिसाय कथाय अञ्ञत्थ अभावं पटिजानापेतुं "तं किं मञ्ञसी" ति

B. 308 / 5 / 10 / 15 R. 19 / 20 / 25

१. अमनसिकरित्वा व—स्या०, रो०। २. —सी०, रो० पोत्थकेसु नत्थि।
३. एव मनसिकारो—सी०, रो०।

आदिमाह । परिब्बाजको पि भगवा'' अज्ज तुम्हाकं कथं ठपेत्वा न मया एवरूपा कथा सुतपुब्बा'' ति पटिजानन्तो, "नो हेतं भन्ते" ति वत्वा पुन सक्कच्चं भगवतो कथाय उग्गहितभावं दस्सेन्तो "एवं खो अहं भन्ते" ति आदिमाह । अथस्स भगवा "सुउग्गहितं तया "ति
5 अनुजानन्तो "एवं पोट्ठपादा" ति आह ।

१०. अथ परिब्बाजको "भगवतो 'आकिञ्चञ्ञायतनं सञ्ञग्गं' ति वुत्तं । एतदेव नु खो सञ्ञग्गं उदाहु अवसेससमापत्तीसु पि सञ्ञग्गं अत्थी" ति चिन्तेत्वा तमत्थं पुच्छन्तो 'एकञ्ञेव नु खो'' ति आदिमाह । भगवापिस्स विस्सज्जेसि । तत्थ पुथुपी ति बहूनिपि । यथा
B. 309 10 यथा खो पोट्ठपाद निरोधं फुसती (दी० नि० १.१५५) ति पथवीकसिणादीसु येन येन कसिणेन पठमज्झानादीनं वा येन येन झानेन । इदं वुत्तं होति—सचे हि पथवीकसिणेन करणभूतेन पथवीकसिणसमापत्तिं एकवारं समापज्जन्तो पुरिमसञ्ञानिरोधं फुसति एकं सञ्ञग्गं, अथ द्वे वारे तयो वारे वारसतं वारसहस्सं वारसतसहस्सं वा समापज्जन्तो
15 पुरिमसञ्ञानिरोधं फुसति, सतसहस्सं । एसेव[1] नयो[1] सेसकसिणेसु । झानेसु पि सचे पठमज्झानेन कारणभूतेन एकवारं पुरिमसञ्ञानिरोधं फुसति एकं सञ्ञग्गं । अथ द्वे वारे तयो वारे वारसतं वारसहस्सं वारसतसहस्सं वा पुरिमसञ्ञानिरोधं[2] फुसति, सतसहस्सं सञ्ञग्गानि[3]। एस नयो सेसज्झानसमापतीसु पि ।

20 इति एकवारं समापज्जनवसेन वा सब्बं पि सञ्जाननलक्खणेत्वा सङ्गहेत्वा वा एकं सञ्ञग्गं होति, अपरापरं समापज्जनवसेन बहूनि ।

११. सञ्ञा नु खो भन्ते ति भन्ते निरोधसमापज्जनकस्स भिक्खुनो "सञ्ञा नु खो पठमं उप्पज्जती'' ति पुच्छति । तस्स भगवा "सञ्ञा खो, पोट्ठपादा'' ति ब्याकासि । तत्थ सञ्ञा ति झानसञ्ञा ।
25 ञाणं ति विपस्सनाञाणं । अपरो नयो, सञ्ञा ति विपस्सना सञ्ञा ।

१-१. सी०, म० पोत्थकेसु नत्थि । २. समापज्जनतो पुरिमसञ्ञानिरोधं—सी० । ३. सञ्ञग्गा—म० ।

ञाणं ति मग्गञाणं। अपरो नयो, सञ्ञा ति मग्गसञ्ञा। ञाणं ति फलञाणं। तिपिटकमहासिवत्थेरो पनाह— R. 20

किं इमे भिक्खू भणन्ति, पोट्ठपादो हेट्ठा भगवन्तं निरोधं पुच्छि। इदानि निरोधा वुट्ठानं पुच्छन्तो "भगवा निरोधा वुट्ठहन्तस्स किं पठमं अरहत्तफलसञ्ञा उप्पज्जति, उदाहु पच्चवेक्खणञाणं" ति वदति। 5 अथस्स भगवा यस्मा फलसञ्ञा पठमं उप्पज्जति, पच्छा पच्चवेक्खणञाणं। तस्मा "सञ्ञा खो पोट्ठपादा" ति आह। तत्थ सञ्ञुप्पादा ति अरहत्तफलसञ्ञाय उप्पादा, पच्छा "इदं अरहत्तफलं" ति एवं पच्चवेक्खणञाणुप्पादो होति। इदप्पच्चया किर मे ति फलसमाधिसञ्ञापच्चया किर मय्हं पच्चवेक्खणञाणं उप्पन्नं ति। 10

४. सञ्ञाअत्तकथावण्णना

१२. इदानि परिब्बाजको यथा नाम गामसूकरो गन्धोदकेन नहापेत्वा गन्धेहि अनुलिम्पित्वा मालादामं पिळन्धित्वा सिरिसयने आरोपितो पि सुखं न विन्दति, वेगेन गूथट्ठानमेव गन्त्वा सुखं विन्दति। B. 310 एवमेव भगवता सण्हसुखुमतिलक्खणब्भाहताय देसनाय नहापितविलित्तमण्डितो पि निरोधकथासिरिसयनं आरोपितो पि तत्थ सुखं न[1] 15 विन्दन्तो[1] गूथट्ठानसदिसं अत्तनो लद्धिं गहेत्वा तमेव पुच्छन्तो "सञ्ञा नु खो भन्ते, पुरिसस्स अत्ता" ति आदिमाह। अथस्सानुमतिं गहेत्वा ब्याकातुकामो भगवा—"कं पन त्वं" ति आदिमाह। ततो सो "अरूपी अत्ता" ति एवं लद्धिको समानो पि "भगवा देसनाय सुकुसलो, सो मे आदितोव लद्धिं मा विद्धंसेतू" ति चिन्तेत्वा अत्तनो लद्धिं 20 परिहरन्तो "ओळारिकं खो" ति आदिमाह। अथस्स भगवा तत्थ दोसं दस्सेन्तो "ओळारिको च हि ते" ति आदिमाह। तत्थ एवं सन्तं ति एवं सन्ते। भुम्मत्थे हि एतं उपयोगवचनं। एवं सन्तं अत्तानं पच्चागच्छतो तवा ति अयं वा[2] एत्थ[2] अत्थो। चतुन्नं खन्धानं[3]

१-१. अविन्दन्तो—सी०। २-२. चेत्थ—सी०।
३. च खन्धानं—स्या०, रो०।

एकुप्पादेक निरोधत्ता किञ्चा पि या सञ्ञा उप्पज्जति, साव[1] निरुज्झति । अपरापरं उपादाय पन "अञ्ञा च सञ्ञा उप्पज्जन्ति, अञ्ञा च[2] सञ्ञा निरुज्झन्ती" ति वुत्तं ।

१३. इदानि अञ्ञं लद्धिं दस्सेन्तो—मनोमयं खो अहं भन्ते,
5 ति आदिं वत्वा तत्रा पि दोसे दिन्ने यथा नाम उम्मत्तको यावस्स सञ्ञा नप्पतिट्ठा ति, ताव अञ्ञं गहेत्वा अञ्ञं विस्सज्जेति, सञ्ञापतिट्ठानकाले पन वत्तब्बमेव वदति । एवमेव अञ्ञं गहेत्वा अञ्ञं विस्सज्जेत्वा इदानि अत्तनो लद्धिं येव वदन्तो "अरुपी खो" ति आदिमाह । तत्रा पि यस्मा सो सञ्ञाय उप्पादनिरोधं इच्छति, अत्तानं
10 पन सस्सतं मञ्ञति । तस्मा तथेवस्स दोसं दस्सेन्तो भगवा एवं सन्तं
R. 21 पी ति आदिमाह । ततो परिब्बाजको मिच्छादस्सनेन अभिभूतत्ता भगवता वुच्चमानं पि तं नानत्तं अजानन्तो "सक्का[3] पनेतं, भन्ते, मया" ति आदिमाह । अथस्स भगवा यस्मा सो सञ्ञाय उप्पादनिरोधं पस्सन्तो पि सञ्ञामयं अत्तानं निच्चमेव मञ्ञति । तस्मा दुज्जानं
15 खो" ति आदिमाह ।

तत्थायं सङ्खेपत्थो—तव अञ्ञा दिट्ठि अञ्ञा खन्ति, अञ्ञा रुचि[4], अञ्ञथा येव ते दस्सनं पवत्तं, अञ्ञदेव च ते खमति चेव
B. 311 रुच्चति च, अञ्ञत्र च ते आयोगो, अञ्ञिस्सा येव पटिपत्तिया सुत्तपयुत्तता, अञ्ञत्थ च ते आचरियकं, अञ्ञस्मिं तित्थायतने
20 आचरियभावो । तेन तया एवं अञ्ञदिट्ठिकेन अञ्ञखन्तिकेन अञ्ञरुचिकेन अञ्ञत्रायोगेन अञ्ञत्राचरियकेन दुज्जानं एतं ति । अथ परिब्बाजको—"सञ्ञा वा पुरिसस्स अत्ता होतु, अञ्ञा वा सञ्ञा, तं सस्सतादि भावमस्स पुच्छिस्सं" ति पुन "किं पन भन्ते," ति आदिमाह ।

25 तत्थ लोको ति अत्तानं सन्धाय वदति । न हेतं पोट्ठपाद अत्थसंहितं ति पोट्ठपाद एतं दिट्ठिगतं न इधलोकपरलोकअत्थनिस्सितं, न

१. सा च—स्या० ।
२. व—सी० ।
३. ० च—स्या०, रो० ।
४. रुचियो—सी०, स्या०, रो० ।

अत्तत्थपरत्थनिस्सितं । न धम्मसंहितं ति न नवलोकुत्तरधम्मनिस्सितं । नादिब्रह्मचरियकं ति सिक्खत्तयसङ्खातस्स सासनब्रह्मचरियकस्स[1] न आदिमत्तं, अधिसीलसिक्खामत्तं पि न होति । न निब्बिदाया ति संसार वट्टे निब्बिन्दनत्थाय न संवत्तति । न विरागाया ति वट्टविरागत्थाय न संवत्तति । न निरोधाया ति वट्टस्स निरोधकरणत्थाय न संवत्तति । न 5 उपसमाया ति वट्टस्स वूपसमनत्थाय न संवत्तति । न अभिञ्ञाया ति वट्टाभिजाननाय पच्चक्खकिरियाय न संवत्तति । न सम्बोधाया ति वट्टसम्बुज्झनत्थाय न संवत्तति । न निब्बानाया ति अमतमहानिब्बानस्स पच्चक्खकिरियाय न संवत्तति ।

इदं दुक्खं ति आदीसु तण्हं ठपेत्वा तेभूमका पञ्चक्खन्धा दुक्खं ति, 10 तस्सेव दुक्खस्स पभवनतो सप्पच्चया तण्हा दुक्खसमुदयो ति । उभिन्नं अप्पवत्ति दुक्खनिरोधो ति, अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा ति मया ब्याकतं ति अत्थो । एवं च पन वत्वा भगवा "इमस्स परिब्बाजकस्स मग्गपातुभावो वा फलसच्छिकिरिया वा नत्थि, मय्हं च भिक्खाचारवेला" ति चिन्तेत्वा तुण्ही अहोसि । परिब्बाजको पि तं 15 आकारं ञत्वा भगवतो गमनकालं आरोचेन्तो विय "एवमेतं" ति आदिमाह ।

१७. वाचायसन्नितोदकेना (दी० नि० १.१५७) ति वचनपतोदेन । सञ्चुब्भरिमकंसू ति[2] सञ्चुब्भरितं निरन्तरं फुटं अकंसु, उपरि[3] विज्झिंसू ति वुत्तं होति । भूतं ति सभावतो विज्जमानं । तच्छं तथं 20 ति तस्सेव वेवचनं । धम्मट्ठितत्तं ति नवलोकुत्तरधम्मेसु ठितसभावं । धम्मनियामतं ति लोकुत्तरधम्मनियामतं । बुद्धानं हि चतुसच्चविनिमुत्ता कथा नाम नत्थि । तस्मा सा एदिसा होति । B. 312 R. 22

५. चित्तहत्थिसारिपुत्तपोट्ठपादवत्थुवण्णना

१८. चित्तो च हत्थिसारिपुत्तो ति सो किर सावत्थियं हत्थिआचरियस्स पुत्तो भगवतो सन्तिके पब्बजित्वा तीणि पिटकानि उग्गहेत्वा 25

१. सासनब्रह्मचरियस्स—सी० । २. सञ्जुम्भरिमकंसु ति—सी० ।
३. उपरि उपरि—सी० ।

सुखुमेसु अत्थन्तरेसु कुसलो अहोसि, पुब्बे कतपापकम्मवसेन पन सत्तवारे विब्भमित्वा गिहि जातो। कस्सपसम्मासम्बुद्धस्स किर सासने द्वे सहायका अहेसुं, अञ्ञमञ्ञं समग्गा एकतोव[1] सज्झायन्ति। तेसु एको अनभिरतो गिहिभावे चित्तं उप्पादेत्वा इतरस्स आरोचेसि। सो गिहिभावे 5 आदीनवं पब्बज्जाय आनिसंसं[2] दस्सेत्वा तं ओवदि। सो तं सुत्वा अभिरमित्वा पुनेकदिवसं तादिसे चित्ते उप्पन्ने तं एतदवोच "मय्हं आवुसो एवरूपं चित्तं उप्पज्जति—'इमाहं पत्तचीवरं तुय्हं दस्सामी' ति"। सो पत्तचीवरलोभेन तस्स गिहिभावे आनिसंसं दस्सेत्वा पब्बज्जाय आदीनवं कथेसि। अथस्स तं सुत्वाव गिहिभावतो चित्तं विरज्जित्वा 10 पब्बज्जायमेव अभिरमि। एवमेस तदा सीलवन्तस्स भिक्खुनो गिहिभावे आनिसंसकथाय कथितत्ता इदानि छ वारे विब्भमित्वा सत्तमे वारे पब्बजितो। महामोग्गल्लानस्स महाकोट्ठिकत्थेरस्स च अभिधम्मकथं कथेन्तानं अन्तरन्तरा कथं ओपाते ति[3]। अथ नं महाकोट्ठिकत्थेरो अपसादेति[4]। सो महासावकस्स कथिते पतिट्ठातुं असक्कन्तो विब्भ- 15 मित्वा गिहि जातो। पोट्ठपादस्स पनायं गिहिसहायको होति। तस्मा विब्भमित्वा द्वीहतीहच्चयेन पोट्ठपादस्स सन्तिकं गतो। अथ नं सो दिस्वा "सम्म किं तया कतं, एवरूपस्स नाम सत्थु सासना अप- सक्कन्तोसि[5] एहि पब्बजितुं इदानि ते वट्टती" ति तं गहेत्वा भगवतो सन्तिकं अगमासि। तेन वुत्तं "चित्तो च हत्थिसारिपुत्तो पोट्ठपादो च 20 परिब्बाजको" ति।

१९. अन्धा ति पञ्ञाचक्खुनो नत्थिताय अन्धा[6], तस्सेव अभावेन अचक्खुका। त्वं येव नेसं एको चक्खुमा ति सुभासितदुब्भासितजानन- भावमत्तेन पञ्ञाचक्खुना चक्खुमा। एकंसिका ति एककोट्ठासा। B. 313 पञ्ञत्ता (दी० नि० १.१५९) ति ठपिता। अनेकंसिका ति न

१. एकतो—सी०।
२. च आनिसंसं—सी०।
३. ओपातेसि—सी०, रो०।
४. अपसादेसि—सी०, रो०।
५. पक्खन्तोसि—रो०।
६. स्या० पोत्थके नत्थि।

एककोट्ठासा एकेनेव[1] कोट्ठासेन सस्सता ति वा असस्सता ति वा न वुत्ता ति अत्थो ।

६. एकंसिकधम्मवण्णना

२०. **सन्ति पोट्ठपादा** ति इदं भगवा कस्मा आरभि ? बाहिरकेहि पञ्ञापितनिट्ठाय अनिय्यानिकभावदस्सानत्थं । सब्बे हि तित्थिया यथा भगवा अमतं निब्बानं, एवं अत्तनो अत्तनो समये लोकथुपिकादिवसेन 5 निट्ठं पञ्ञपेन्ति, सा च न निय्यानिका । यथापञ्ञत्ता हुत्वा न निय्याति न गच्छति, अञ्ञदत्थु पण्डितेहि पटिक्खित्ता निवत्तति । तं दस्सेतुं भगवा एवमाह । तत्थ **एकन्तसुखं लोकं जानं पस्सं** ति पुरत्थिमाह दिसाय एकन्तसुखो लोको पच्छिमादीनं वा अञ्ञतराया ति एवं R. 23 जानन्ता एवं[2] पस्सन्ता विहरथ । दिट्ठपुब्बानि खो[3] तस्मिं लोके 10 मनुस्सानं सरीरसण्ठानादीनी ति । **अप्पाटिहीरकतं** ति अप्पाटिहीरकतं पटिहरणविरहितं, अनिय्यानिकं ति वुत्तं होति ।

२२. **जनपदकल्याणी** (दी० नि० १.१६०) ति जनपदेअञ्ञाहि इत्थीहि वण्णसण्ठानविलासाकप्पादीहि असदिसा ।

७. तयोअत्तपटिलाभवण्णना

२४. एवं भगवा परेसं निट्ठाय अनिय्यानिकत्तं दस्सेत्वा अत्तनो 15 निट्ठाय निय्यानिकभावं दस्सेतुं "तयो खो मे पोट्ठपादा" ति आदिमाह । तत्थ **अत्तपटिलाभो** (दी० नि० १.१६२) ति अत्तभावपटिलाभो, एत्थ च भगवा तीहि अत्तभावपटिलाभेहि तयो भवे दस्सेसि ओळारिकत्तभावपटिलाभेन अवीचितो पट्ठाय परनिम्मितवसवत्ति-परियोसानं कामभवं दस्सेसि । मनोमयअत्तभावपटिलाभेन पठमज्झान- 20 भूमितो पट्ठाय अकनिट्ठब्रह्मलोकपरियोसानं रूपभवं दस्सेसि । अरुपअत्त-भावपटिलाभेन आकासानञ्चायतनब्रह्मलोकतो पट्ठाय नेवसञ्ञानासञ्ञा-यतनब्रह्मलोकपरियोसानं अरुपभवं दस्सेसि । संकिलेसिका धम्मा

१. एकेन—स्या०, रो० । २. सी०, पोत्थके नत्थि ।
३. वो—सी० ।

नाम द्वादस अकुसलचित्तुप्पादा। वोदानिया धम्मा नाम समथविपस्सना।

B. 314 २५. पञ्ञापारिपूरिं वेपुल्लत्तं (दी० नि० १.१६३) ति मग्गपञ्ञाफलपञ्ञानं पारिपूरिं चेव विपुलभावं च। पामुज्जं ति 5 तरुणपीति। पीती ति बलवतुट्ठि। किं वुत्तं होति? यं अवोचुम्ह "सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरती" ति, तत्थ तस्स एवं विहरतो तं पामोज्जं चेव भविस्सति, पीति च नामकायपस्सद्धि च सति च सुपट्ठिता उत्तमञाणं च सुखो च विहारो। सब्बविहारेसु च "अयमेव विहारो सुखो" ति वत्तुं युत्तो उपसन्तो परममधुरो ति। 10 तत्थ पठमज्झाने पामोज्जादयो छ पि धम्मा लब्भन्ति, दुतियज्झाने दुब्बलपीतिसङ्खातं पामोज्जं निवत्तति, सेसा पञ्च लब्भन्ति। ततिये पीति[1] निवत्तति,, सेसा चत्तारो लब्भन्ति। तथा चतुत्थे। इमेसु चतूसु झानेसु सम्पसादनसुत्ते सुद्धविपस्सना पादकज्झानमेव कथितं। पासादिकसुत्ते चतूहि मग्गेहि सद्धिं विपस्सना कथिता। दसुत्तरसुत्ते 15 चतुत्थज्झानिकफलसमापत्ति कथिता। इमस्मिं पोट्ठपादसुत्ते पामोज्जं पीतिवेवचनमेव कत्वा दुतियज्झानिकफलसमापत्तिनाम कथिता ति वेदितब्बा[2]।

२९. अयं वा सो (दी० नि० १.१६४) ति एत्थ वा सद्दो विभावनत्थो होति। अयं सो ति एवं विभावेत्वा पकासेत्वा ब्याकरे- 20 य्याम। यथापरे "एकन्तसुखं अत्तानं सञ्जानाथा" ति पुट्ठा "नो" ति वदन्ति, न एवं वदामा ति अत्थो। सप्पाटिहीरकतं ति R. 24 सप्पाटिहरणं, निय्यानिकं ति अत्थो। मोघो होती ति तुच्छो होति, नत्थि सो तस्मिं समये ति अधिप्पायो। सच्चो होती ति भूतो होति, स्वेव तस्मिं समये सच्चो होती ति अत्थो। एत्थ पनायं चित्तो 25 अत्तनो असब्बञ्ञुताय तयो अत्तपटिलाभे कथेत्वा अत्तपटिलाभो नाम पञ्ञत्तिमत्तं एतं ति उद्धरितुं नासक्खि, अत्तपटिलाभो त्वेव

१. पीति पि—स्या०, रो०। २. वेदितब्बा ति—स्या०, रो०।

निय्यातेसि । अथस्स भगवा रूपादयो चेत्थ धम्मा, अत्तपटिलाभो ति पन नाममत्तमेतं, तेसु तेसु रुपादीसु सति एवरूपवोहारा होन्ती ति दस्सेतुकामो तस्सेव कथं गहेत्वा नामपञ्ञत्तिवसेन निय्यातनत्थं "यस्मिं चित्त समये" ति आदिमाह ।

३४. एवं च पन वत्वा पटिपुच्छित्वा विनयनत्थं पुन सचे तं[1] 5 चित्त एवं पुच्छेय्युं (दी० नि० १.१६६) ति आदिमाह । तत्थ यो मे अहोसि अतीतो अत्तपटिलाभो, स्वेव मे अत्तपटिलाभो, तस्मिं समये सच्चो अहोसि, मोघो अनागतो मोघो पच्चुप्पन्नो ति एत्थ ताव इमसत्थं दस्सेति—यस्मा ये ते अतीता धम्मा, ते एतरहि नत्थि, अहेसुन्ति पन सङ्ख्यं गता, तस्मा सोपि मे अत्तपटिलाभो तस्मिं येव समये सच्चो 10 अहोसि । अनागतपच्चुप्पन्नानं पन धम्मानं तदा, अभावा तस्मिं समये "मोघो अनागतो मोघो पच्चुप्पन्नो" ति, एवं अत्थतो नाममत्तमेव अत्तपटिलाभं पटिजानाति । अनागतपच्चुप्पन्नेसु पि एसेव नयो ।

B. 315

३६. अथ भगवा तस्स ब्याकरणेन सद्धिं अत्तनो ब्याकरणं संसन्दितुं "एवमेव खो चित्ता" ति आदीनि वत्वा पुन ओपम्मतो तमत्थं साधेन्तो 15 सेय्यथा पि चित्त गवा खीरं ति आदिमाह । तत्रायं सङ्खेपत्थो, यथा गवा खीरं खीरादीहि च दधिआदीनि भवन्ति, तत्थ यस्मिं समये खीरं होति, न तस्मिं समये दधी ति वा नवनीतादीसु वा अञ्ञतरं ति सङ्ख्यं निरुत्ति नामं वोहारं गच्छति । कस्मा ? ये धम्मे उपादाय दधी ति आदि वोहारा होन्ति, तेसं अभावा । अथ खो खीरं त्वेव तस्मिं 20 समये सङ्ख्यं गच्छति । कस्मा ? ये धम्मे उपादाय खीरं ति सङ्ख्या निरुत्ति नामं वोहारो होति, तेसं भावाति । एस नयो सब्बत्थ । इमा खो चित्ता ति ओळारिको अत्तपटिलाभो इति च मनोमयो अत्तपटिलाभो इति च अरूपो अत्तपटिलाभो इति च इमा खो चित्त लोकसमञ्ञा लोके समञ्ञामत्तकानि समनुजाननमत्तकानि[1] एतानि । तथा लोकनिरुत्ति- 25 मत्तकानि वचनपथमत्तकानि वोहारमत्तकानि नामपण्णत्तिमत्तकानि एतानी

१. पन तं—सी०, रो० ।

ति । एवं भगवा हेट्ठा तयो अत्तपटिलाभे कथेत्वा इदानि सब्बमेतं वोहारमत्तकं ति वदति । कस्मा ? यस्मा परमत्थतो सत्तो नाम नत्थि, सुञ्ञो तुच्छो[१] एस लोको ।

बुद्धानं पन द्वे कथा सम्मुतिकथा[२] च परमत्थकथा च । तत्थ सत्तो 5 पोसो देवो ब्रह्माति आदिका सम्मुतिकथा नाम । अनिच्चं दुक्खमनत्ता R. 25 खन्धा धातुयो आयतनानि सतिपट्ठाना सम्मप्पधाना ति आदिका परमत्थकथा नाम । तत्थ यो सम्मुतिदेसनाय सत्तो ति वा पोसो ति वा देवो ति वा ब्रह्मा ति वा वुत्ते विजानितुं पटिविज्झितुं निय्यातुं अरहत्तजयग्गाहं[३] गहेतुं सक्को ति, तस्स भगवा आदितोव सत्तो ति 10 वा पोसो ति वा देवो ति वा ब्रह्मा ति वा कथेति । यो परमत्थदेसनाय अनिच्चं ति वा दुक्खं ति वा ति आदीसु अञ्ञतरं सुत्वा विजानितुं B. 316 पटिविज्झितुं[४] निय्यातुं अरहत्तजयग्गाहं गहेतुं सक्कोति । तस्स अनिच्चं ति वा दुक्खं[५] ति वा[५] ति आदीसु अञ्ञतरमेव कथेति । तथा[६] सम्मुतिकथाय बुज्झनकसत्तस्सा पि न पठमं परमत्थकथं कथेति । 15 सम्मुतिकथाय पन बोधेत्वा पच्छा परमत्थकथं कथेति । परमत्थकथाय बुज्झनकसत्तस्सा पि न पठमं सम्मुतिकथं कथेति । परमत्तकथाय पन बोधेत्वा पच्छा सम्मुतिकथं कथेति । पकतिया पन पठममेव परमत्थकथं कथेन्तस्स देसना लूखाकारा होति, तस्मा बुद्धा पठमं सम्मुतिकथं कथेत्वा पच्छा परमत्थकथं कथेन्ति । सम्मुतिकथं कथेन्ता पि सच्चमेव सभावमेव 20 अमुसाव कथेन्ति । परमत्थकथं कथेन्ता पि सच्चमेव सभावमेव अमुसाव कथेन्ति ।

दुवे सच्चानि अक्खासि, सम्बुद्धो वदतं वरो ।
सम्मुतिं परमत्थं च, ततियं नूपलब्भति ।।
सङ्केतवचनं सच्चं, लोकसम्मुतिकारणं ।
25 परमत्थवचनं सच्चं, धम्मानं भूतलक्खणं ति ।।

१. समनजाननमत्तकानि—स्या० । २. सम्मतिकथा—स्या० ।
३. अरहत्तद्धजगाहं—स्या०, रो० । ४. पटिबुज्झितुं—सी० ।
५-५. सी० पोत्थके नत्थि । ६. तस्मा—स्या०, रो० ।

याहि तथागतो वोहरति अपरामसन्ति (दी० नि० १.१६७) याहि लोकसमञ्ञाहि लोकनिरुत्तीहि तथागतो तण्हामानदिट्ठिपरामासानं अभावा अपरामसन्तो वोहरती ति देसनं विनिवट्टेत्वा अरहत्तनिकूटेन निट्ठापेसि[1]। सेसं सब्बत्थ[2] उत्तानत्थमेवा ति।

इति सुमङ्गलविलासिनिया दीघनिकायट्ठकथायं
पोट्ठपादसुत्तवण्णना निट्ठिता।

---

१. देसनं निट्ठपेसि—सी०। २. सी० पोत्थके नत्थि।

(१०) सुभसुत्तवण्णना

१. सुभमाणवकवत्थुवण्णना

B. 317
R. 26

१. एवं मे सुतं...पे०...सावत्थियं (दी० नि० १.१६९) ति सुभसुत्तं। तत्रायं अनुत्तानपदवण्णना। अचिरपरिनिब्बुते भगवती अचिरं परिनिब्बुते भगवति, परिनिब्बानतो उद्धं मासमत्ते काले। निदानवण्णनायं वुत्तनयेनेव[1] भगवतो पत्तचीवरं आदाय आगन्त्वा खीरविरेचनं पिवित्वा 5 विहारे निसिन्नदिवसं सन्धायेतं वुत्तं। तोदेय्यपुत्तो ति तोदेय्यब्राह्मणस्स पुत्तो। सो किर सावत्थिया अविदूरे तुदिगामो नाम अत्थि, तस्स अधिपतित्ता तोदेय्यो ति सङ्ख्यं गतो। महद्धनो पन होति पञ्चचत्तालीसकोटिविभवो, परममच्छरी—"ददतो भोगानं अपरिक्खयो नाम नत्थी" ति चिन्तेत्वा कस्सचि किञ्चि न देति, पुत्तं[2] पि आह[2]—

10 "अञ्जनानं खयं दिस्वा, वम्मिकानं च सञ्चयं।
मधूनं च समाहारं, पण्डितो घरमावसे" ति ॥,

एवं अदानमेव सिक्खापेत्वा कायस्स भेदा तस्मिं येव घरे सुनखो हुत्वा निब्बत्तो। सुभो तं सुनखं अतिविय पियायति। अत्तनो भुञ्जनकभत्तं येव भोजेति, उक्खिपित्वा वरसयने सयापेति। अथ भगवा 15 एकदिवसं निक्खन्ते माणवे तं घरं पिण्डाय पाविसि। सुनखो भगवन्तं दिस्वा भुक्कारं करोन्तो भगवतो समीपं गतो। ततो नं भगवा अवोच "तोदेय्य त्वं पुब्बे पि मं भो, भो' ति परिभवित्वा सुनखो जातो, इदानि पि भुक्कारं कत्वा अवीचिं गमिस्ससी[3]" ति। सुनखो तं कथं सुत्वा विप्पटिसारी हुत्वा उद्धनन्तरे छारिकाय निपन्नो, मनुस्सा नं[4] 20 उक्खिपित्वा सयने सयापेतुं नासक्खिंसु।

१. वुत्तनयेन—सी०।
२-२. वुत्तं हि—सी०।
३. गमिस्सती ति—सी०।
४. सी०, स्या०, रो० पोत्थकेसु नत्थि।

सुभोआगन्त्वा "केनायं सुनखो सयनाआरोपितो" ति आह। मनुस्सा "न केनची" ति वत्वा तं पवत्तिं आरोचेसुं। माणवो सुत्वा "मम पिता ब्रह्मलोके निब्बत्तो, समणो पन गोतमो मे पितरं सुनखं करोति यं किञ्चि एस मुखारूळ्हं भासती" ति कुज्झित्वा भगवन्तं मुसावादेन चोदेतुकामो विहारं गन्त्वा तं पवत्तिं पुच्छि। भगवा तस्स 5 B. 318 तथेव वत्वा अविसंवादनत्थं आह—"अत्थि पन ते माणव, पितरा न अक्खातं धनं" ति। अत्थि भो[1] गोतम सतसहस्सग्घनिका सुवण्णमाला, सतसहस्सग्घनिका सुवण्णपादुका, सतसहस्सग्घनिका सुवण्णपाति, सतसहस्सं च कहापणं[2] ति। गच्छ तं सुनखं अप्पोदकं मधुपायासं भोजेत्वा सयनं[3] आरोपेत्वा ईसकं निद्दं ओक्कन्तकाले पुच्छ, सब्बं ते 10 आचिक्खिस्सति। अथ नं जानेय्यासि—"पिता मे एसो" ति, सो तथा अकासि। सुनखो सब्बं अचिक्खि[4], तदा नं—"पिता मे" ति ञत्वा भगवति पसन्नचित्तो गन्त्वा भगवन्तं-चुद्दस पञ्हे पुच्छित्वा विस्सज्जनपरियोसाने भगवन्तं सरणं गतो, तं सन्धाय वुत्तं "सुभो माणवो तोदेय्यपुत्तो" ति। **सावत्थियं पटिवसती** ति अत्तनो 15 भोगगामतो आगन्त्वा वसति।

२. **अञ्ञतरं माणवकं आमन्तेसी** (दी० नि० १,१६९) ति सत्थरि[5] परिनिब्बुते "आनन्दत्थेरो किरस्स पत्तचीवरं गहेत्वा आगतो, महाजनो तं दस्सनत्थाय[6] उपसङ्कमती" ति सुत्वा "विहारं खो पन गन्त्वा महाजनमज्झे न सक्का सुखेन पटिसन्थारं वा कातुं धम्मकथं 20 वा सोतुं गेहं आगतं येव नं दिस्वा सुखेन पटिसन्थारं करिस्सामि, एका च मे कङ्खा अत्थि, तं पि नं पुच्छिस्सामी" ति चिन्तेत्वा अञ्ञतरं माणवकं आमन्तेसि। **अप्पाबाधं** ति आदीसु **आबाधो** ति विसभागवेदना वुच्चति। या एकदेसे उप्पज्जित्वा चत्तारो इरियापथे अयपट्टेन

१. पन भो—स्या०, रो०। २. कहापणानं—सी०।
३. सयने—स्या०, रो०। ४. दस्सेसि—सी०।
५. सत्था—सी०। ६. दस्सनाय—सी०।

आबन्धित्वा विय गण्हति,[1] तस्सा अभावं पुच्छा ति वदति। अप्पातङ्को ति किच्छजीवितकरो रोगो वुच्चति, तस्सा पि अभावं पुच्छा ति वदति। गिलानस्सेव च उट्ठानं नाम गरुकं[2] होति, काये बलं न होति, तस्मा निग्गेलञ्ञभावं च बलं च पुच्छा ति वदति। फासुविहारं
5 ति गमनट्ठाननिसज्जसयनेसु चतूसु इरियापथेसु सुखविहारं पुच्छा ति वदति। अथस्स पुच्छितब्बाकारं दस्सेन्तो "सुभो" ति आदिमाह।

४. **कालं च समयं च उपादाया** ति कालं च समयं च पञ्ञाय गहेत्वा उपधारेत्वा ति अत्थो। सचे अम्हाकं स्वे गमनकालो भविस्सति,
B. 319 10 काये बलमत्ता चेव फरिस्सति, गमनपच्चया च अञ्ञो अफासुविहारो न भविस्सति। अथेतं कालं च गमनकारणसमवायसङ्खातं समयं च उपधारेत्वा—"अपि एव नाम स्वे आगच्छेय्यामा" ति वुत्तं होति।

५. **चेतकेन भिक्खुना** ति चेतिरट्ठे जातत्ता चेतको ति एवं लद्धनामेन। **सम्मोदनीयं कथं सारणीयं** ति भो, आनन्द, दसबलस्स
15 को नाम आबाधो[3] अहोसि, किं भगवा परिभुञ्जि। अपि च[4] सत्थु परिनिब्बानेन तुम्हाकं सोको उदपादि, सत्था नाम न केवलं तुम्हाकं येव परिनिब्बुतो, सदेवकस्स लोकस्स महाजानि, को दानि अञ्ञो मरणा मुच्चिस्सति, यत्र सो सदेवकस्स लोकस्स अग्गपुग्गलो परिनिब्बुतो, इदानि कं[5] अञ्ञं दिस्वा मच्चुराजा लज्जिस्सती ति
20 एवमादिना नयेन मरणपटिसंयुत्तं सम्मोदनीयं कथं सारणीयं वीतिसारेत्वा थेरस्स हिय्यो पीतभेसज्जानुरूपं आहारं दत्वा भत्तकिच्चा-
R. 28 वसाने एकमन्तं निसीदि। **उपट्ठाको सन्तिकावचरो** ति उपट्ठाको हुत्वा सन्तिकावचरो, न रन्धगवेसी। **समीपचारी** ति इदं पुरिमप-दस्सेव वेवचनं। **येसं सो भवं गोतमो** ति कस्मा पुच्छति? तस्स
25 किर एवं अहोसि "येसु धम्मेसु भवं गोतमो इमं लोकं पतिट्ठपेसि,

१. गण्हाति—स्या०, रो०। २. गरू—सी०।
३. रोगो—सी०, स्या०, रो०। ४. सी० पोत्थके नत्थि।
५. किं—सी०।

ते तस्स अच्चयेन नट्ठा नु खो, घरं ति नु खो, सचे घरं ति, आनन्दो जानिस्सति, हन्द नं पुच्छामी" ति, तस्मा पुच्छि।

६. अथस्स थेरो तीणि पिटकानि तीहि खन्धेहि सङ्गहेत्वा दस्सेन्तो "तिण्णं खो" ति आदिमाह। माणवो सङ्खित्तेन कथितं असल्लक्खेन्तो—"वित्थारतो पुच्छिस्सामी" ति चिन्तेत्वा "कतमेसं तिण्णं" ति आदिमाह। 5

२. सीलक्खन्धवण्णना

७-१०. ततो थेरेन अरियस्स सीलक्खन्धस्सा ति तेसु दस्सितेसु पुन-**कतमो पन सो भो आनन्द अरियो सीलक्खन्धो** (दी० नि० १.१७०) ति एकेकं पुच्छि। थेरोपिस्स बुद्धुप्पादं दस्सेत्वा तन्तिधम्मं देसेन्तो अनुक्कमेन भगवता वुत्तनयेनेव सब्बं विस्सज्जेसि। तत्थ **अत्थि चेवेत्थ** 10 B. 320 **उत्तरिकरणीयं** ति एत्थ भगवतो सासने न सीलमेव सारो, केवलं हेतं[1] पतिट्ठामत्तमेव होति। इतो उत्तरि पन अञ्ञं पि कत्तब्बं अत्थि येवा ति दस्सेसि[2]। **इतो बहिद्धा** ति बुद्धसासनतो बहिद्धा।

३. समाधिक्खन्धवण्णना

११. **कथं च माणव, भिक्खु इन्द्रियेसु गत्तद्वारो होती** (दी० नि० १.१७२) ति इदमायस्मा आनन्दो "कतमो पन सो भो आनन्द 15 अरियो समाधिक्खन्धो" ति एवं समाधिक्खन्धं पुट्ठो पि ये ते "सील-सम्पन्नो इन्द्रियेसु गुत्तद्वारो सतिसम्पजञ्ञेन समन्नागतो सन्तुट्ठो" ति एवं सीलानन्तरं इन्द्रियसंवरादयो सीलसमाधीनं अन्तरे उभिन्नं पि उपकारकधम्मा उद्दिट्ठा, ते निद्दिसित्वा समाधिक्खन्धं दस्सेतुकामो आरभि। एत्थ च रुपज्झानानेव आगतानि, न अरूपज्झानानि, आनेत्वा 20 पन दीपेतब्बानि। चतुत्थज्झानेन हि असङ्गहिता अरूपसमापत्ति नाम नत्थि येव।

१. केवलं च एतं—स्या०, रो०। २. दस्सेति—सी०।

२८-२९. **अत्थि चेवेत्थ उत्तरिकरणीयं** (दी० नि० १.१७७) ति एत्थ भगवतो[1] सासने न चित्तेकग्गतामत्तकेनेव परियोसानप्पत्ति नाम अत्थि, इतो पि उत्तरि पन अञ्ञं कत्तब्बं अत्थि येवा ति दस्सेति। **नत्थि चेवेत्थ उत्तरिकरणीयं** ति एत्थ भगवतो[2] सासने इतो उत्तरि[3] 5 कात्तब्बं नाम नत्थि येव, अरहत्तपरियोसानञ्हि भगवतो सासनं ति दस्सेति। सेसं सब्बत्थ उत्तानत्थमेवा ति।

इति सुमङ्गलविलासिनिया दीघनिकायट्ठकथायं
सुभसुत्तवण्णना निट्ठिता।

---

१. च भगवतो—सी०। २. च भगवतो—सी०।
३. उत्तरि—स्या०, रो०।

(११) केवट्टसुत्तवण्णना

१. केवट्टगहपतिपुत्तवत्थुवण्णना

R. 29
B. 321

१. एवं मे सुतं···पे०···नाळन्दायं (दी० नि० १.१८३) ति केवट्टसुत्तं। तत्रायं अपुब्बपदवण्णना[१]। पावारिकम्बवने ति पावारिकस्स अम्बवने। केवट्टो ति इदं तस्स गहपतिपुत्तस्स नामं। सो किर चत्तालीसकोटिधनो गहपतिमहासालो अतिविय सद्धो पसन्नो अहोसि। सो सद्धाधिकत्ता येव "सचे एको भिक्खु अड्ढमासन्तरेन वा मासन्तरेन 5 वा संवच्छरेन वा आकासे उप्पतित्वा विविधानि पाटिहारियानि दस्सेय्य, सब्बो जनो अतिविय पसीदेय्य। यन्नूनाहं भगवन्तं याचित्वा पाटिहारिय-करणत्थाय एकं भिक्खुं अनुजानापेय्यं" ति चिन्तेत्वा भगवन्तं उपसङ्क-मित्वा एवमाह।

तत्थ इद्धा ति समिद्धा फीता ति नानाभण्डउस्सन्नताय वुद्धिप्पत्ता। 10 आकिण्णमनुस्सा ति अंसकूटेन अंसकूटं पहरित्वा विय विचरन्तेहि मनुस्सेहि आकिण्णा। समादिसतू ति आणापेतु ठानन्तरे ठपेतु। उत्तरिमनुस्सधम्मा ति उत्तरिमनुस्सानं धम्मतो, दसकुसलसङ्खाततो वा मनुस्सधम्मतो उत्तरि। भिय्योसोमत्ताया ति पकतिया पि पज्जलित-पदीपो तेलस्नेहं[२] लभित्वा विय अतिरेकप्पमाणेन अभिप्पसीदिस्सति। न 15 खो अहं ति भगवा राजगहसेट्ठिवत्थुस्मिं सिक्खापदं पञ्ञपेसि[३], तस्मा "न खो अहं" ति आदिमाह।

२. न धंसेमी ति न गुणविनासनेन धंसेमि, सीलभेदं पापेत्वा अनुपुब्बेन उच्चट्ठानतो ओतारेन्तो नीचट्ठाने न[४] ठपेमि। अथ खो अहं[५]

१. अनुत्तान ०—सी०। २. तेलासेकं—सी०।
३. पञ्ञापेसि—स्या०, रो०। ४. सी० पोत्थके नत्थि।
५. सी० पोत्थके नत्थि।

बुद्धसासनस्स वुड्ढिं पच्चासीसन्तो[1] कथेमी ति दस्सेति। ततियं पि खो ति यावततियं बुद्धानं कथं पटिबाहित्वा कथेतुं विसहन्तो नाम नत्थि। अयं पन भगवता सद्धिं विस्सासिको विस्सासं वड्ढेत्वा[2] वल्लभो हुत्वा अत्थकामोस्मी ति तिक्खत्तुं कथेसि।

२. इद्धिपाटिहारियवण्णना

5 ३. अथ भगवा अयं उपासको मयि पटिबाहन्ते पि पुनप्पुनं याचतियेव। "हन्दस्स पाटिहारियकरणे आदीनवं दस्सेमी" ति चिन्तेत्वा "तीणि खो" ति आदिमाह। तत्थ अमाहं भिक्खुं ति अमुं अहं भिक्खुं। गन्धारी ति गन्धारेन नाम इसिना कता, गन्धाररट्ठे वा उप्पन्ना विज्जा। तत्थ किर बहू इसयो वसिंसु, तेसु एकेन कता विज्जा ति 10 अधिप्पायो। अट्टीयामी ति अट्टो पीळितो विय होमि। हरायामी ति लज्जामि। जिगुच्छामी ति गुथं दिस्वा विय जिगुच्छं उप्पादेमि।

B. 322

३. आदेसनापाटिहारियवण्णना

R. 30

५. परसत्तानं (दी० नि० १.१८५) ति अञ्ञेसं सत्तानं। दुतियं तस्सेव वेवचनं। आदिसती ति कथेति। चेतसिकं ति सोमनस्सदोमनस्सं अधिप्पेतं। एवं पि ते मनो ति एवं तव मनो सोमनस्सितो वा[3] 15 दोमनस्सितो वा कामवितक्कादिसम्पयुत्तो वा[4]। दुतियं तस्सेव वेवचनं। इति पि ते चित्तं ति इति तव चित्तं, इदञ्चिदञ्च अत्थं चिन्तयमानं पवत्तती[5] ति अत्थो। मणिका नाम विज्जा ति चिन्तामणी ति एवं लद्धनामा लोके एका विज्जा अत्थि। ताय परेसं चित्तं जानाती ति दीपेति।

४. अनुसासनीपाटिहारियवण्णना

20 ६. एवं वितक्केथा (दी० नि० १.१८५) ति नेक्खम्मवितक्कादयो[6] एवं पवत्तेन्ता वितक्केथ। मा एवं वितक्कयित्था ति एवं

१. पच्चासिसन्तो—सी०। २. वड्ढित्वा—सी०।
३. सी० पोत्थके नत्थि। ४. ति—सी०, रो०।
५. पवत्तन्ति—स्या०; पवत्तन्ती ति—रो०। ६. एवं नेक्खम्मवितक्कादयो—सी०, स्या०, रो०।

कामवितक्कादयो पवत्तेन्ता मा वितक्कयित्थ। एवं मनसि करोथा ति एवं अनिच्चसञ्ञमेव, दुक्खसञ्ञादीसु वा अञ्ञतरं मनसि करोथ। मा एवं ति निच्चं ति आदिना नयेन मा मनसि[1] करित्थ[1]। इदं ति इदं पञ्चकामगुणिकराणं[2] पजहथ। इदं उपसम्पज्जा ति इदं चतुमग्ग-फलप्पभेदं लोकुत्तरधम्ममेव उपसम्पज्ज पापुणित्वा निप्फादेत्वा विहरथ। 5 इति भगवा इद्धिविधं इद्धिपाटिहारियं ति दस्सेति, परस्स चित्तं ञत्वा कथनं आदेसनापाटिहारियं ति। सावकानं च बुद्धानं च सततं धम्म-देसना अनुसासनीपाटिहारियं ति।

तत्थ इद्धिपाटिहारियेन अनुसासनीपाटिहारियं महामोग्गल्लानस्स[3] आचिण्णं। आदेसनापाटिहारियेन अनुसासनीपाटिहारियं धम्म- 10 सेनापतिस्स। देवदत्ते सङ्घं भिन्दित्वा पञ्च भिक्खुसतानि गहेत्वा गयासीसे बुद्धलीलाय तेसं धम्मं देसन्ते हि[4] भगवतो पेसितेसु द्वीसु अग्गसावकेसु धम्मसेनापति तेसं चित्ताचारं[5] ञत्वा धम्मं देसेसि। थेरस्स धम्मदेसनं B. 323 सुत्वा पञ्चसता भिक्खू सोतापत्तिफले पतिट्ठहिंसु। अथ नेसं महा-मोग्गल्लानो विकुब्बनं दस्सेत्वा दस्सेत्वा[6] धम्मं देसेसि, तं सुत्वा सब्बे 15 अरहत्तफले पतिट्ठहिंसु। अथ द्वेपि महानागा पञ्च भिक्खुसतानि गहेत्वा वेहासं अब्भुग्गन्त्वा वेळुवनमेवागमिंसु। अनुसासनीपाटिहारियं पन बुद्धानं सततं धम्मदेसना। तेसु इद्धिपाटिहारियआदेसनापाटिहारियानि सउपारम्भानि सदोसानि, अद्धानं न तिट्ठन्ति, अद्धानं अतिट्ठनतो न निय्यन्ति। अनुसासनीपाटिहारियं अनुपारम्भं[7] निद्दोसं, अद्धानं तिट्ठति, 20 अद्धानं तिट्ठनतो निय्याति। तस्मा भगवा इद्धिपाटिहारियं च आदेसना-पाटिहारियं च गरहति, अनुसासनीपाटिहारियं येव पसंसति।

५. भूतनिरोधेसकवत्थुवण्णना

७. भूतपुब्बं (दी० नि० १.१८६) ति इदं कस्मा भगवता[8] आरद्धं। इद्धिपाटिहारियआदेसनापाटिहारियानं अनिय्यानिकभावदस्सनत्थं,

१-१. मनसि करित्थ—सी०।
२. पञ्चकामगुणिरागं—सी०।
३. महामोग्गल्लानत्थेरस्स—सी०।
४. पि—सी०।
५. चित्तवारं—स्या०, रो०।
६. स्या०, रो० पोत्थकेसु नत्थि।
७. 'येव अनुपारम्भं—रो०।
८. सी० पोत्थके नत्थि।

R. 31 अनुसासनीपाटिहारियस्सेव[1] निय्यानिकभावदस्सनत्थं। अपि च सब्बबुद्धानं महाभूतपरियेसको नामेको भिक्खु होति येव। यो महाभूते परियेसन्तो याव ब्रह्मलोका विचरित्वा विस्सज्जेतारं अलभित्वा आगम्म बुद्धमेव पुच्छित्वा निक्कङ्खो होति। तस्मा बुद्धानं महन्तभावप्पकास-
5 नत्थं, इदं च कारणं पटिच्छन्नं, अथ नं विवटं कत्वा देसेन्तो पि भगवा "भूतपुब्बं" ति आदिमाह।

तत्थ कत्थ नु खो ति किस्मिं ठाने किं आगम्म किं पत्तस्स ते अनवसेसा अप्पवत्तिवसेन निरुज्झन्ति। महाभूतकथा पनेसा सब्बाकारेन विसुद्धिमग्गे वुत्ता, तस्मा सा ततोव गहेतब्बा।

10 ८. **देवयानियो मग्गो** ति पाटियेक्को देवलोकगमनमग्गो नाम नत्थि। इद्धिविधञाणस्सेव पनेतं अधिवचनं। तेन हेस याव ब्रह्मलोका पि कायेन वसं वत्तेन्तो देवलोकं याति। तस्मा तं देवयानियो मग्गो ति वुत्तं। **येन चातुमहाराजिका** ति समीपे ठितं पि भगवन्तं अपुच्छित्वा धम्मताय चोदितो देवता महानुभावा ति मञ्ञमानो उपसङ्कमि।
B. 324 15 **मयं पि खो भिक्खु न जानामा** ति बुद्धविसये पञ्हं पुच्छिता देवता न जानन्ति, तेनेवमाहंसु। अथ खो सो भिक्खु "मम इमं पञ्हं न[2] कथेतुं[2] न लब्भा, सीघं कथेथा" ति ता देवता अज्झोत्थरति, पुनप्पुनं पुच्छति, ता अज्झोत्थरति नो अयं भिक्खु, हन्द नं हत्थतो मोचेस्सामा ति चिन्तेत्वा "अत्थि खो भिक्खु चत्तारो महाराजानो" ति आदिमाहंसु।
20 तत्थ **अभिक्कन्ततरा** ति अतिक्कम्म कन्ततरा। **पणीततरा** ति वण्णय-सइस्सरियादीहि उत्तमतरा एतेन नयेन सब्बवारेसु अत्थो वेदितब्बो।

अयं पन विसेसो—सक्को किर देवराजा चिन्तेसि "अयं पञ्हो बुद्धविसयो, न सक्का अञ्ञेन विस्सज्जितुं, अयं च भिक्खु अग्गिं पहाय खज्जोपनकं धमन्तो विय, भेरिं पहाय उदरं वादेन्तो विय च, लोके
25 अग्गपुग्गलं सम्मासम्बुद्धं पहाय देवता पुच्छन्तो विचरति, पेसेमि नं

१. च—रो०।
२-२. अकथेतुं—स्या०, रो०।

सत्थुसन्तिकं" ति। ततो पुनदेव सो[1] चिन्तेसि "सुदूरं पि गन्त्वा सत्थुसन्तिकेन[2] निक्कङ्खो भविस्सति। अत्थि चेव पुग्गलो नामेस, थोकं ताव आहिण्डन्तो किलमतु पच्छा जानिस्सती" ति। ततो तं अहं पि खो" ति आदिमाह। ब्रह्मयानियो पि देवयानियसदिसोव। देवयानियमग्गो ति वा ब्रह्मयानियमग्गो ति वा धम्मसेतू ति वा एकचित्तक्खणिकअप्पना ति वा सन्निट्ठानिकचेतना ति वा महग्गतचित्तं ति वा अभिञ्ञाञाणं ति वा सब्बमेतं इद्धिविधञाणस्सेव नामं।

R. 32

5

१३. पुब्बनिमित्तं (दी० नि० १.१८८) ति आगमनपुब्बभागे निमित्तं सुरियस्स उदयतो अरुणुग्गं विय। तस्मा इदानेव ब्रह्मा आगमिस्सति[3], एवं[4] मयं जानामा ति दीपयिंसु। पातुरहोसी ति पाकटो अहोसि। अथ खो[5] सो ब्रह्मा तेन भिक्खुना पुट्ठो अत्तनो अविसयभावं ञत्वा सचाहं[6] न जानामी ति वक्खामि, इमे मं परिभविस्सन्ति, अथ जानन्तो विय यं किञ्चि कथेस्सामि, अयं मे भिक्खु वेय्याकरणेन अनारद्धचित्तो वादं आरोपेस्सति। अहमस्मि भिक्खु ब्रह्मा ति आदीनि पन मे भणन्तस्स न कोचि वचनं सद्दहिस्सति। यन्नूनाहं विक्खेपं कत्वा इमं भिक्खुं सत्थुसन्तिकं येव पेसेय्यं ति चिन्तेत्वा "अहमस्मि भिक्खु ब्रह्मा" ति आदिमाह।

10

15

१५-१६. एकमन्तं अपनेत्वा (दी० नि० १.१८९) ति कस्मा एवमकासि? कुहकत्ता। बहिद्धा परियिट्ठि ति तेलत्थिको वालिकं निप्पीळियमानो विय याव ब्रह्मलोका बहिद्धा परियेसनं आपज्जति।

B. 325

20

१७. सकुणं ति काकं वा कुललं वा। न खो एसो भिक्खु पञ्हो एवं पुच्छितब्बो ति इदं भगवा यस्मा पदेसेनेस[7] पञ्हो पुच्छितब्बो, अयं च खो[8] भिक्खु अनुपादिन्नके पि गहेत्वा निप्पदेसतो पुच्छति, तस्मा पटिसेधेति। आचिण्णं किरेतं बुद्धानं, पुच्छामूळ्हस्स

१. सी० पोत्थके नत्थि। २. सन्तिकेन—सी०।
३. आगमिस्सती ति—सी०, स्या०, रो०। ४. एतं—सी०।
५. सी०पोत्थके नत्थि। ६. स्वाहं—सी०।
७. पदेसेनेव—स्या०, रो०। ८. सी० पोत्थके नत्थि।

जनस्स पुच्छाय दोसं दस्सेत्वा पुच्छं सिक्खापेत्वा पुच्छाविस्सज्जनं। कस्मा ? पुच्छितुं अजानित्वा परिपुच्छन्तो[१] दुविञ्ञापयो होती। पञ्हं सिक्खापेन्तो पन "कत्थ आपो चा" ति आदिमाह।

१८. तत्थ न गाधती ति न पतिट्ठाति। इमे चत्तारो 5 महाभूता किं आगम्म अप्पतिट्ठा भवन्ती ति अत्थो। उपदिन्नं येव सन्धाय पुच्छति[२]। दीघं च रस्सं चा ति सण्ठानवसेन उपादारूपं वुत्तं। अणुं थूलं ति खुद्दकं वा महन्तं वा। इमिना पि उपादारूपे वण्णमत्तमेव कथितं। सुभासुभं ति सुभं च असुभं च उपादारूपमेव कथितं। किं पन उपादारूपं सुभं ति असुभं ति अत्थि। नत्थि। 10 इट्ठानिट्ठारम्मणं पनेव कथितं। नामं च रूपं चा ति नामं च दीघादिभेदं रूपं च। उपरुज्झती ति निरुज्झति। किं आगम्म असेसमेतं नप्पवत्तती ति एवं पुच्छितब्बं सिया ति पुच्छं दस्सेत्वा इदानि विस्सज्जनं दस्सन्तो तत्र वेय्याकरणं भवती ति वत्वा— "विञ्ञाणं" ति आदिमाह।

R. 33 15 १९. तत्थ विञ्ञातब्बं ति विञ्ञाणं निब्बानस्सेतं[३] नामं। तदेतं निदस्सनाभावतो अनिदस्सनं। उप्पादन्तो वा वयन्तो वा ठितस्स अञ्ञथत्तन्तो वा एतस्स नत्थी ति अनन्तं। पभं ति[४] पन एतं किर तित्थस्स नामं। तं हि पपं ति एत्था ति पपं, पकारस्स पन भकारो कतो। सब्बतो पभमस्सा ति सब्बतोपभं। निब्बानस्स किर यथा 20 महासमुद्दस्स यतो यतो ओतरितुकामा होन्ति, तं तदेव तित्थं, अतित्थं नाम नत्थि। एवमेव अट्ठतिंसाय कम्मट्ठानेसु येन येन मुखेन निब्बानं ओतरितुकामा होन्ति, तं तदेव तित्थं। निब्बानस्स अतित्थं नाम B. 326 नत्थि[५]। तेन वुत्तं "सब्बतोपभं ति। एत्थ आपो चा ति एत्थ निब्बाने इदं निब्बानं आगम्म सब्बमेतं आपो ति आदिना नयेन वुत्तं 25 उपादिन्नक धम्मजातं निरुज्झति, अप्पवत्तं होती ति[६]।

१. हि परिपुच्छन्तो—स्या०, रो०; पुच्छन्तो—सी०। २. पुच्छा—सी०। ३. निब्बानस्स—सी०। ४. पपं ति पपं—स्या०; पपं ति—सी०। ५. कम्मट्ठानं नत्थि—सी०, स्या०, रो०। ६. सी० पोत्थके नत्थि।

इदानिस्स[१] निरुज्झनूपायं दस्सेन्तो विञ्ञाणस्स निरोधेन एत्थेतं उपरुज्झती" ति आह। तत्थ विञ्ञाणं ति चरिमकविञ्ञाणं पि अभिसङ्खारविञ्ञाणं पि, चरिमकविञ्ञाणस्सा पि हि निरोधेन एत्थेतं उपरुज्झति। विज्झातदीपसिखा विय अपण्णत्तिकभावं याति। अभिसङ्खारविञ्ञाणस्सा पि अनुप्पादनिरोधेन अनुप्पादवसेन[२] उपरुज्झति। 5 यथाह "सोतापत्तिमग्गञाणेन[३] अभिसङ्खारविञ्ञाणस्स निरोधेन ठपेत्वा सत्तभवे अनमतग्गे संसारे ये[४] उप्पज्जेय्युं नामं च रूपं च एत्थेते निरुज्झन्ती ति सब्बं चूळनिद्देसे[५] वुत्तनयेनेव वेदितब्बं। सेसं सब्बत्थ उत्तानमेवा ति।

इति सुमङ्गलविलासिनिया दीघनिकायट्ठकथायं
केवट्टसुत्तवण्णना निट्ठिता।

---

१. इदानि तस्स—सी०। २. अनुप्पादवसेनेव—सी०, स्या०, रो०।
३. सोतापत्तिमग्गविञ्ञाणेन—सी०। ४. सी० पोत्थके नत्थि।
५. महानिद्देसे—सी०, स्या०, रो०।

(१२) लोहिच्चसुत्तवण्णना

१. लोहिच्चब्राह्मणवत्थुवण्णना

B. 327
R. 34

१. एवं मे सुतं…पे०…कोसलेसू (दी० नि० १.१९१) ति लोहिच्चसुत्तं। तत्रायं अनुत्तानपदवण्णना। सालवतिका ति तस्स गामस्स नामं, सो किर वतिया विय समन्ततो सालपन्तिया परिक्खित्तो। तस्मा सालवतिका ति वुच्चति। लोहिच्चो ति तस्स ब्राह्मणस्स नामं।

5 २. पापकं ति परानुकम्पा विरहितत्ता लामकं, न पन उच्छेदसस्सतानं अञ्ञतरं उप्पन्नं होती ति जातं होति, न केवलं च चित्ते जातमत्तमेव। सो किर तस्स वसेन परिसमज्झे पि एवं भासति येव। किञ्हि परो परस्सा ति परो यो अनुसासीयति सो तस्स अनुसासकस्स किं करिस्सति। अत्तना पटिलद्धं कुसलं धम्मं अत्तनाव सक्कत्वा गरुं
10 कत्वा विहातब्बं ति वदति।

४. रोसिकं नहापितं आमन्तेसी ति रोसिका ति[१] एवं इत्थिलिङ्गवसेन लद्धनामं नहापितं आमन्तेसि। सो किर भगवतो आगमनं सुत्वा चिन्तेसि—"विहारं गन्त्वा दिट्ठं[२] नामं भारो, गेहं पन आणापेत्वा पस्सिस्सामि चेव यथासत्ति[३] च आगन्तुकभिक्खं दस्सामी" ति, तस्मा
15 एवं[४] न हापितं आमन्तेसि।

८. पिट्ठितो पिट्ठितो ति कथाफासुकत्थं पच्छतो पच्छतो अनुबन्धो होति। विवेचेतू ति विमोचेतु, तं[५] दिट्ठिगतं[५] विनोदेतू ति वदति। अयं किर उपासको लोहिच्चस्स ब्राह्मणस्स पियसहायको। तस्मा तस्स अत्थकामताय एवमाह। अप्पेव नाम सिया ति एत्थ पठमवचनेन[६] भगवा

१. मेसिका—सी०, रो०। २. दिट्ठब्बं—सी०; दट्ठब्बं—रो०।
३. यथासन्तं—सी०। ४. तं—सी०, स्या०, रो०।
५-५. दिट्ठिभाव—स्या०, रो०। ६. पन पठमवचनेन—सी०।

गज्जति, दुतियवचनेन अनुगज्जति। अयं किरेत्थ अधिप्पायो—रोसिके[1] एतदत्थमेव मया चत्तारि असङ्ख्येय्यानि कप्पसतसहस्सं च विविधानि दुक्करानि करोन्तेन पारमियो पूरिता। एतदत्थमेव[2] सब्बञ्ञुतञ्ञाणं पटिविद्धं, न मे लोहिच्चस्स[3] दिट्ठिगतं भिन्दितुं भारो ति, इममत्थं दस्सेन्तो पठमवचनेन भगवा गज्जति। केवलं रोसिके लोहिच्चस्स मम सन्तिके आगमनं वा निसज्जा वा अल्लापसल्लापो वा होतु, सचे पि[4] लोहिच्चसदिसानं सतसहस्सस्स कङ्खा होति, पटिबलो अहं विनोदेतुं लोहिच्चस्स पन एकस्स दिट्ठि-विनोदने मय्हं को भारो ति इममत्थं देस्सन्तो दुतियवचनेन भगवा अनुगज्जती ति वेदितब्बो।

२. लोहिच्चब्राह्मणानुयोगवण्णना

९. **समुदयसञ्जाती** (दी॰ नि॰ १.१९३) ति समुदयस्स सञ्जाति भोगुप्पादो, ततो उट्ठितं धनधञ्ञं ति अत्थो। ये तं **उपजीवन्ती** ति ये ञातिपरिजनदासकम्मकारादयो जना तं निस्साय जीवन्ति। **अन्तराय-करो** ति लाभन्तरायकरो। **हितानुकम्पी** ति एत्थ हितं ति वुड्ढि[5]। **अनुकम्पती** ति अनुकम्पी, इच्छती ति अत्थो, वुड्ढिं इच्छति वा नो वा ति वुत्तं होति। **निरयं वा** तिरच्छानयोनिं वा ति सचे सा मिच्छादिट्ठि सम्पज्जति, नियता होति, एकंसेन निरये निब्बत्तति, नो चे, तिरच्छा-नयोनियं निब्बत्तती ति अत्थो।

११-१२. इदानि यस्मा यथा अत्तनो लाभन्तरायेन सत्ता संविज्जन्ति न तथा परेसं, तस्मा सुट्ठुतरं ब्राह्मणं पवेचेतुकामो[6] "तं किं मञ्ञसी" ति दुतियं उपपत्तिमाह। **ये चिमे** (दी॰ नि॰ १.१९५) ति ये च इमे तथागतस्स धम्मदेसनं सुत्वा अरियभूमिं ओक्कमितुं असक्कोन्ता कुलपुत्ता **दिब्बा गब्भा** ति उपयोगत्थे पच्चत्तवचनं, दिब्बे गब्भे ति अत्थो।

१. भेसिके—सी॰, रो॰।
२. एतदत्थं—सी॰।
३. लोहिच्चस्स ब्राह्मणस्स—सी॰।
४. सचे पि—सी॰।
५. वड्ढि—सी॰।
६. संवेजेतुकामो—सी॰।

दिब्बा गब्भा ति च छन्नं देवलोकानमेतं अधिवचनं । परिपाचेन्ती ति देवलोकगामिनिं पटिपदं पूरयमाना दानं ददमाना सीलं रक्खमाना गन्ध-मालादीहि पूजं कुरुमाना भावनं भावयमाना पाचेन्ति विपाचेन्ति परिपाचेन्ति परिणामं गमेन्ति । दिब्बानं भवानं अभिनिब्बत्तिया ति 5 दिब्बभवा नाम देवानं विमानानि, तेसं निब्बत्तनत्थाया ति अत्थो । अथ वा दिब्बा गब्भा ति दानादयो पुञ्ञविसेसा । दिब्बा भवा ति देवलोके विपाकक्खन्धा, तेसं निब्बत्तनत्थाय तानि पुञ्ञानि करोन्ती ति अत्थो । तेसं अन्तरायकरो ति तेसं मग्गसम्पत्तिफलसम्पत्तिदिब्बभवविसेसानं अन्तरायकरो[1] । इति भगवा एत्तावता अनियमितेनेव ओपम्मविधिना B. 329 10 याव भवग्गा उग्गतं ब्राह्मणस्स मानं भिन्दित्वा इदानि चोदनारहे तयो सत्थारे दस्सेतुं "तयो खो मे लोहिच्चा" ति आदिमाह ।

३. तयो चोदनारहवण्णना

१३. तत्थ सा चोदना ति तयो[2] सत्थारे चोदेन्तस्स चोदना[3] । न अञ्ञा चित्तं उपट्ठपेन्ती ति अञ्ञाय आजाननत्थाय चित्तं न उपट्ठपेन्ति । वोक्कम्मा ति निरन्तरं तस्स सासने अकत्वा ततो 15 उक्कमित्वा वत्तन्ती ति[4] अत्थो । ओसक्कन्तिया वा उस्सक्केय्या ति पटिक्कमन्तिया उपगच्छेय्य, अनिच्छन्तिया इच्छेय्य, एकाय सम्पयोगं अनिच्छन्तिया एको इच्छेय्या ति वुत्तं होति । परम्मुखिं वा आलिङ्गेय्या ति दट्ठुं पि अनिच्छमानं परम्मुखिं ठितं पच्छतो गन्त्वा आलिङ्गेय्य । एवंसम्पदमिदं ति इमस्सा पि सत्थुनो "मम 20 इमे सावका" ति सासना वोक्कम्म वत्तमाने पि ते[5] लोभेन[6] अनुसासतो R. 36 इमं लोभधम्मं एवंसम्पदमेव ईदिसनेव वदामि । इति सो एवरूपो तव लोभधम्मो येन त्वं ओसक्कन्तिया उस्सक्कन्तो विय परम्मुखिं आलि-ङ्गन्तो विय अहोसी ति[7] पि तं[8] चोदनं अरहति । किञ्हि परो

१. अन्तरायकरो ति—सी० ।
२. सा चोदना—सी० ।
३. ते—सी० ।
४. पवत्तन्ती ति—सी० ।
५. सी०, स्या०, रो० पोत्थकेसु नत्थि ।
६. मोहेन—सी० ।
७. होसी ति—सी० ।
८. सी०, स्या०, रो० पोत्थकेसु नत्थि ।

परस्स करिस्सती ति येन धम्मेन परे अनुसासि[1], अत्तानमेव ताव तत्थ[2] सम्पादेहि, उजुं करोहि । किञ्हि परो[3] परस्स करिस्सती ति चोदनं अरहति ।

१५. निद्दायितब्बं (दी० नि० १.१९६) ति सस्सरूपकानि[4] तिणानि उप्पाटेत्वा परिसुद्धं कातब्बं । 5

१६. ततियचोदनाय किञ्हि परो परस्सा (दी० नि० १.१९७) ति अनुसासनं[5] असम्पटिच्छनकालतो पट्ठाय परो अनुसासितब्बो, परस्स अनुसासकस्स किं करिस्सती ति ननु तत्थ अप्पोस्सुक्कतं आपज्जित्वा अत्तना पटिविद्धधम्मं अत्तनाव मानेत्वा पूजेत्वा विहातब्बं ति एवं चोदनं अरहती ति अत्थो । 10

४. नचोदनारहसत्थुवण्णना

B. 330

१७. न चोदनारहो ति अयञ्हि यस्मा पठममेव अत्तानं पतिरूपे पतिट्ठापेत्वा सावकानं धम्मं देसेति । सावका चस्स अस्सवा हुत्वा यथानुसिट्ठं पटिपज्जन्ति, ताय च पटिपत्तिया महन्तं विसेसमधिगच्छन्ति । तस्मा न चोदनारहोति[6] ।

१८. नरकपपातं पपतन्तो (दी० नि० १.१९८) ति मया गहिताय दिट्ठिया अहं नरकपपातं पपतन्तो[7] । उद्धरित्वा थले पतिट्ठापितो ति तं दिट्ठिं भिन्दित्वा धम्मदेसनाहत्थेन अपायपतनतो[8] उद्धरित्वा सग्गमग्गथले ठपितोम्ही ति वदति । सेसमेत्थ उत्तानमेवाति । 15

इति सुमङ्गलविलासिनिया दीघनिकायट्ठकथायं
लोहिच्चसुत्तवण्णना निट्ठिता ।

---

१. अनुसाससि—सी० ।
२. चेत्थ—सी० ।
३. सी० पोत्थके नत्थि ।
४. सस्सदूसिकानि—सी० ।
५. अनुसासनि—सी० ।
६. चोदनारहो—सी०, स्या०, ।
७. पतन्तो—सी०, रो० ।
८. ० पपाततो—सी० ।

(१३) तेविज्जसुत्तवण्णना

१. निदानवण्णना

B. 331
R. 37

एवं मे सुतं...पे०...कोसलेसू (दी० नि० १.१९९) ति तेविज्जसुत्तं। तत्रायं अनुत्तानपदवण्णना। **मनसाकटं** ति तस्स गामस्स नामं। **उत्तरेन मनसाकटस्सा** ति मनसाकटतो अविदूरे उत्तरपस्से। **अम्बवने** ति तरुणअम्बरुक्खसण्डे, रमणीयो किर सो भूमिभागो, हेट्ठा 5 रजतपट्टसदिसा वालिका विप्पकिण्णा, उपरि मणिवितानं विय घनसाखापत्तं अम्बवनं। तस्मिं बुद्धानं अनुच्छविके पविवेकसुखे अम्बवने विहरती ति अत्थो।

२. **अभिञ्ञाता अभिञ्ञाता** ति कुलचारित्तादिसम्पत्तिया तत्थ तत्थ पञ्ञाता। **चङ्की** ति आदिनि तेसं नामानि। तत्थ **चङ्की** 10 ओपासादवासिको। **तारुक्खो** इच्छानङ्गलवासिको। **पोक्खरसाती** उक्कट्ठवासिको। **जाणुसोणी** सावत्थिवासिको। **तोदेय्यो** तुदिगामवासिको। **अञ्ञे चा** ति अञ्ञे च बहुजना। **अत्तनो अत्तनो** निवासट्ठानेहि आगन्त्वा मन्तसज्झायकरणत्थं तत्थ पटिवसन्ति। मनसाकटस्स किर रमणीयताय ते ब्राह्मणा तत्थ नदीतीरे गेहानि कारेत्वा परिक्खि-15 पापेत्वा अञ्ञेसं बहूनं पवेसनं निवारेत्वा अन्तरन्तरा तत्थ गन्त्वा[१] वसन्ति।

३. **वासेट्ठभारद्वाजानं** ति वासेट्ठस्स च पोक्खरसातिनो अन्तेवासिकस्स, भारद्वाजस्स च तारुक्खन्तेवासिकस्स। एते किर द्वे जातिसम्पन्ना तिण्णं वेदानं पारगू[२] अहेसुं। **जङ्घविहारं** ति अतिचिरनिसज्जपच्चया 20 किलमथविनोदनत्थाय जङ्घचारं[३]। ते किर दिवसं सज्झायं कत्वा

१. आगमत्वा—सी०। २. पारङ्गता—स्या०, रो०; पारगा—सी०।
३. जङ्घाचारं—सी०।

सायन्हे वुट्ठाय नहानीयसम्भारगन्धमालतेलधोतवत्थानि[1] गाहापेत्वा अत्तनो परिजनपरिवुता नहायितुकामा नदीतीरं गन्त्वा रजतपट्टवण्णे वालिकासण्डे अपरापरं चङ्कमिंसु। एकं[2] चङ्कमन्तं इतरो अनुचङ्कमि। पुन इतरं इतरो ति। तेन वुत्तं "अनुचङ्कमन्तानं अनुविचरन्तानं" ति। **मग्गामग्गे** ति मग्गे च अमग्गे च। कतमं[3] नु खो पटिपदं पूरेत्वा कतमेन मग्गेन सक्का सुखं ब्रह्मलोकं गन्तुं ति एवं मग्गामग्गं आरब्भ कथं समुट्ठापेसुं ति अत्थो। **अञ्जसायनो** ति उजुमग्गस्सेतं[4] वेवचनं, अञ्जसा व उजुकमेव एतेन आयं ति आगच्छन्ती ति अञ्जसायनो **निय्यानिको निय्याती** ति निय्यायन्तो निय्याति। गच्छन्तो गच्छती ति अत्थो। 5 B. 332 10

तक्करस्स ब्रह्मसहब्यताया ति यो तं मग्गं करोति पटिपज्जति, तस्स ब्रह्मुना सद्धिं सहभावाय, एकट्ठाने पातुभावाय गच्छती ति अत्थो। **स्वायं** ति यो अयं। **अक्खातो** ति कथितो दीपितो। **ब्राह्मणेन पोक्खरसातिना** ति अत्तनो आचरियं अपदिसति। इति वासेट्ठो सकमेव आचरियवादं थोमेत्वा पग्गण्हित्वा विचरति। भारद्वाजो पि सकमेवा ति। तेन वुत्तं "नेव खो असक्खि वासेट्ठो" ति आदि। 15 R. 38

ततो वासेट्ठो "उभिन्नं पि अम्हाकं कथा अनिय्यानिकाव, इमस्मिं च लोके मग्गकुसलो नाम भोता गोतमेन सदिसो नत्थि, भवं च गोतमा अविदूरे वसति, सो नो तुलं गहेत्वा निसिन्नवाणिजो विय कङ्खं छिन्दिस्सती" ति चिन्तेत्वा तमत्थं भारद्वाजस्स आरोचेत्वा उभो पि गन्त्वा अत्तनो कथं भगवतो आरोचेसुं। तेन वुत्तं "अथ खो वासेट्ठो ...पे०...स्वायं अक्खातो ब्राह्मणेन तारुक्खेना" ति। 20

६. **एत्थ भो गोतमा** (दी० नि० १.२००) ति एतस्मिं मग्गामग्गे। **विग्गहो विवादो** ति आदीसु पुब्बुप्पत्तिको विग्गहो। अपरभागे विवादो। दुविधो पि एसो[5] नानाआचरियानं वादतो नानावादो। 25

१. ० तेल ०—सी०, पोत्थके नत्थि। २. एवं रो; एतं—स्या०। ३. कतरं—रो०, स्या०। ४. उजुमग्गस्स—सी०। ५. सो—सी०, स्या०, रो०।

अथ किस्मिं पन वो ति त्वं पि अयमेव मग्गो ति अत्तनो आचरियवादमेव पग्गय्ह तिट्ठसि, भारद्वाजो पि अत्तनो आचरियवादमेव, एकस्सा पि एकस्मिं संसयो नत्थि । एवं सति किस्मिं वो विग्गहो ति पुच्छति ।

5 ७. **मग्गामग्गे भो गोतमा** ति मग्गे भो गोतम अमग्गे च, उजुमग्गे च अनुजुमग्गे चा ति अत्थो । एस किर एकब्राह्मणस्सापि मग्गं न मग्गो ति न वदति । यथा पन अत्तनो आचरियस्स मग्गो उजुमग्गो, B. 333 न एवं अञ्ञेसं अनुजाना ति, तस्मा तमेवत्थं दीपेन्तो "किञ्चापि भो गोतमा" ति आदिमाह ।

10 **सब्बानि तानी** ति लिङ्गविपल्लासेन वदति, सब्बे ते ति वुत्तं होति । **बहूनी** ति अट्ठ वा दस वा । **नानामग्गानी** ति महन्तामहन्तजङ्घमग्ग-सकटमग्गादिवसेन[1] नानाविधानि सामन्ता गामनदीतळाकखेत्तादीहि आगन्त्वा गामं पविसनमग्गानि ।

८. **निय्यन्ती** ति वासेट्ठ वदेसी" ति भगवा तिक्खत्तुं वचीभेदं 15 कत्वा पटिञ्ञं कारापेसि । कस्मा ? तित्थिया हि पटिजानित्वा पच्छा निग्गय्हमाना अवजानं ति । सो[2] तथा कातुं न सक्खिस्सती ति ।

११-१२. तेव **तेविज्जा** (दी० नि० १.२०२) ति ते तेविज्जा । वकारो आगमसन्धिमत्तं । **अन्धवेणी** ति अन्धपवेणी, एकेन चक्खुमता गहितयट्ठिया कोटिं एको अन्धो गण्हति, तं अन्धं अञ्ञो तं 20 अञ्ञो ति एवं पण्णास सट्ठि अन्धा पटिपाटिया घटिता अन्धवेणी ति वुच्चति । **परम्परसंसत्ता** ति अञ्ञमञ्ञं लग्गा[3], यट्ठिगाहकेन पि चक्खुमता विरहिता ति अत्थो । एको किर धुत्तो अन्धगणं दिस्वा "असुकस्मिं नाम गामे खज्जभोज्जं सुलभं" ति उस्साहेत्वा "तेन[4] हि[4] तत्थ नो सामि नेहि, इदं नाम ते देमा" ति वुत्ते, लञ्जं गहेत्वा 25 अन्तरामग्गे मग्गा ओक्कम्म महन्तं गच्छं अनुपरिगन्त्वा पुरिमस्स हत्थेन

१. महन्तामहन्तानि—स्या०, रो० । २. सी० पोत्थके नत्थि ।
३. संसत्ता—स्या०, रो० । ४-४. तेहि—सी० ।

पच्छिमस्स कच्छं गण्हापेत्वा किञ्चि कम्मं अत्थि, गच्छथ ताव तुम्हेति वत्वा पलायि, ते दिवसं पि गन्त्वा मग्गं अविन्दमाना कुहिं नो चक्खुमा कुहिं मग्गो ति परिदेवित्वा मग्गं अविन्दमाना तत्थेव मरिंसु। ते सन्धाय वुत्तं "परम्परसंसत्ता" ति। **पुरिमो पी** ति पुरिमेसु दससु ब्राह्मणेसु एको पि। **मज्झिमो पी** ति मज्झिमेसु आचरियपाचरियेसु एको पि। **पच्छिमो पी** ति इदानि तेविज्जेसु ब्राह्मणेसु[1] एको पि। **हस्सकञ्ञे वा** ति हसितब्बमेव। **लामकञ्ञे वा** ति लामकं येव। तदेतं अत्था-भावेन रित्ततं, रित्तकत्ता येव तुच्छकं। इदानि ब्रह्मलोको ताव तिट्ठतु, यो तेविज्जेहि न दिट्ठपुब्बोव। ये पि चन्दिमसूरिये तेविज्जा पस्सन्ति, तेसम्पि सहब्यताय मग्गं देसेतुं नप्पहोन्ती ति दस्सनत्थं "तं किं मञ्ञसी" ति आदिमाह।

R. 39 · 5 · 10

१३. तत्थ **यतो चन्दिमसूरिया उग्गच्छन्ती** ति यस्मिं काले उग्गच्छन्ति। **यत्थ च ओग्गच्छन्ती** ति यस्मिं काले अत्थमेन्ति, उग्गमनकाले च अत्थङ्गमनकाले च पस्सन्ती ति अत्थो। **आयाचन्ती** ति उदेहि भवं चन्द, उदेहि भवं सूरिया ति एवं आयाचन्ति। **थोमयन्ती** ति सोम्मो चन्दो, परिमण्डलो चन्दो, सप्पभो चन्दो ति आदीनि वदन्ता पसंसन्ति[2]। **पञ्जलिका** ति पग्गहितअञ्जलिका। **नमस्समाना** ति नमो नमो ति वदमाना।

B. 334 · 15

१४. **यं पस्सन्ती** ति एत्थ यं ति निपातमत्तं। **किं पन न किरा** ति एत्थ इध पन किं वत्तब्बं। यत्थ किर तेविज्जेहि ब्राह्मणेहि न ब्रह्मा सक्खिदिट्ठो ति एवमत्थो दट्ठब्बो[3]।

20

२. अचिरवतीनदीउपमाकथा

२५. **समतित्तिका** (दी० नि० १.२०६) ति समभरिता। **काक-पेय्या** ति यत्थ कत्थचि तीरे ठितेन काकेन सक्का पातुं ति काकपेय्या। **पारं तरितुकामो** ति नदिं अतिक्कमित्वा परतीरं गन्तुकामो। **अव्हेय्या**

१. सी० पोत्थके नत्थि। २. पसंसन्ती ति अत्थो—स्या०, रो०।
३. वेदितब्बो—सी०।

ति पक्कोसेय्य । **एहि पारापारं** ति अम्भो पारं अपारं एहि, अथ मं सहसाव गहेत्वा गमिस्ससि । अत्थि मे अच्चायिककम्मं ति अत्थो ।

२७. **ये धम्मा ब्राह्मणकारका** ति एत्थ पञ्चसीलदसकुसलकम्मपथभेदा धम्मा ब्राह्मणकारका ति[1] वेदितब्बा, तब्बिपरीता अब्राह्मणकारका[2] । **इन्दमव्हायामा** ति इन्दं अव्हायाम पक्कोसाम । एवं ब्राह्मणानं अव्हायनस्स निरत्थकतं दस्सेत्वा पुन पि भगवा अण्णवकुच्छियं सुरियो विय जलमानो पञ्चसतभिक्खुपरिवुतो अचिरवतिया तीरे निसिन्नो अपरं पि नदीउपमं येव आहरन्तो "सेय्यथापी" ति आदिमाह ।

२९. **कामगुणा** (दी० नि० १.२०७) ति कामयितब्बट्ठेन कामा, बन्धनट्ठेन गुणा "अनुजानामि भिक्खवे, अहतानं वत्थानं दिगुणं सङ्घाटिं" (म० व० ३०६) ति एत्थ हि पटलट्ठो गुणट्ठो । "अच्चेन्ति काला तरयन्ति रत्तियो, वयोगुणा अनुपुब्बं जहन्ती" (सं० नि० १.४) ति एत्थ रासट्ठो गुणट्ठो । "सतगुणा दक्खिणा पाटिकङ्खितब्बा" (म० नि० ३.३४१) ति एत्थ आनिसंसट्ठो गुणट्ठो । अन्तं अन्तगुणं" (खु० पा० ४) कयिरा मालागुणे बहू" (ध० प० २२) ति च एत्थ बन्धनट्ठो गुणट्ठो । इधा पि एसेव अधिप्पेतो । तेन वुत्तं "बन्धनट्ठेन गुणा" ति । **चक्खुविञ्ञेय्या** ति चक्खुविञ्ञाणेन पस्सितब्बा । एतेनुपायेन सोतविञ्ञेय्यादीसु पि अत्थो वेदितब्बो । **इट्ठा** ति परियिट्ठा वा होन्तु, मा वा, इट्ठारम्मणभूता ति अत्थो । **कन्ता** ति कामनीया । **मनापा** ति मनवड्ढनका । **पियरूपा** ति पियजातिका, **कामूपसञ्हिता** ति आरम्मणं कत्वा उप्पज्जमानेन कामेन उपसंहिता । **रजनीया** ति रञ्जनीया, रागुप्पत्तिकारणभूता ति अत्थो ।

गधिता ति गेधेन अभिभूता हुत्वा । **मुच्छिता** ति मुच्छाकारप्पत्ताय अधिमत्तकाय तण्हाय अभिभूता । **अज्झोपन्ना** ति अधिओपन्ना ओगाळ्हा, इदं सारं ति परिनिट्ठानप्पत्ता हुत्वा । **अनादीनवदस्साविनो** ति आदीनवं

१. ब्राह्मणकारकरणा ति—सी०, स्या०, रो० । २. अब्राह्मणकरणा—सी० ।

अपस्सन्ता। **अनिस्सरणपञ्ञा** ति इदमेत्थ निस्सरणं ति, एवं परि-जाननपञ्ञा विरहिता, पच्चवेक्खणपरिभोगविरहिता ति अत्थो।

३१. **आवरणा** (दी० नि० १.२०७) ति आदीसु आवरन्ती ति **आवरणा**। निवारेन्ती ति **नीवरणा**। ओनन्धन्ती ति **ओनाहना**। परियोनन्धन्ती ति **परियोनाहना**। कामच्छन्दादीनं वित्थारकथा 5 विसुद्धिमग्गतो गहेतब्बा।

३२. **आवुता निवुता ओनद्धा परियोनद्धा** (दी० नि० १.२०८) ति पदानि आवरणादीनं वसेन वुत्तानि। **सपरिग्गहो** ति इत्थिपरिग्गहेन सपरिग्गहो ति पुच्छति। **अपरिग्गहो भो गोतमा** ति आदीसु पि कामच्छन्दस्स अभावतो इत्थिपरिग्गहेन अपरिग्गहो। ब्यापादस्स 10 अभावतो केनचि सद्धिं वेरचित्तेन अवेरो। थिनमिद्धस्स अभावतो चित्तगेलञ्ञसङ्खातेन ब्यापज्जेन अब्यापज्जो। उद्धच्चकुक्कुच्चाभावतो उद्धच्चकुक्कुच्चादीहि संकिलेसेहि असंकिलिट्ठचित्तो सुपरिसुद्धमानसो। विचिकिच्छाय अभावतो चित्तं वसे वत्तेति। यथा च ब्राह्मणा चित्त-गतिका होन्ती ति चित्तस्स वसेन वत्तन्ति, न तादिसो ति वसवत्ती। 15

३४. **इध खो पना** ति इध ब्रह्मलोकमग्गे। **आसीदित्वा** ति B. 336 अमग्गमेव मग्गो ति उपगन्त्वा। **संसीदन्ती** ति समतलं ति सञ्ञाय पङ्कं ओतिण्णा विय अनुप्पविसन्ति। **संसीदित्वा विसारं पापुणन्ती** ति एवं पङ्के विय संसीदित्वा[1] विसारं[2] अङ्गमङ्गसंभञ्जनं पापुणन्ति। **सुक्खतरं मञ्ञे तरन्ती** ति मरीचिकाय वञ्चेत्वा काकपेय्या। नदी ति 20 सञ्ञाय तरिस्सामा ति हत्थेहि च पादेहि च वायममाना सुक्खतरणं[3] मञ्ञे तरन्ति। तस्मा यथा हत्थपादादीनं[4] संभञ्जनं परिभञ्जनं, एवं R. 41 अपायेसु संभञ्जनं परिभञ्जनं पापुणन्ति। इधेव च सुखं वा सातं वा न लभन्ति। **तस्मा इदं तेविज्जानं ब्राह्मणानं** ति तस्मा इदं ब्रह्मसहब्य-ताय मग्गदीपकं तेविज्जकं पावचनं तेविज्जानं ब्राह्मणानं। 25

१. निसीदित्वा—सी०। २. विसादं—सी०।
३. सुक्खतरं—सी०। ४. ते हत्थपादादीनं—सी०, स्या०।

तेविज्जाइरिणं ति तेविज्जाअरञ्ञं, **इरिणं** ति हि अगामकं महाअरञ्ञं वुच्चति। **तेविज्जाविवनं** ति पुप्फफलेहि अपरिभोगरुक्खेहि[1] सञ्छन्नं निरुदकं अरञ्ञं। यत्थ मग्गतो उक्कमित्वा परिवत्तितुं पि न सक्का होन्ति, तं सन्धायाह तेविज्जाविवनं[2] ति पि वुच्चती ति। **तेविज्जा-**
5 **ब्यसनं** ति तेविज्जानं पञ्चविधब्यसनसदिसमेतं। यथा हि ञातिरोग-भोगदिट्ठिसीलब्यसनप्पत्तस्स सुखं नाम नत्थि। एवं तेविज्जानं तेविज्जकं पावचनं आगम्म सुखं नाम नत्थी ति दस्सेति।

३७. **जातसंवद्धो** (दी० नि० १.२१०) ति जातो च वड्ढितो च, यो हि केवलं तत्थ जातो व होति, अञ्ञत्थ वड्ढितो, तस्स समन्ता
10 गाममग्गा न सब्बसो पच्चक्खा होन्ति। तस्मा जातसंवड्ढो ति आह। जातसंवड्ढो पि यो चिरं निक्खन्तो, तस्स न सब्बसो पच्चक्खा होन्ति। तस्मा "तावदेव अवसटं" ति आह, तङ्खणमेव निक्खन्तन्ति अत्थो। **दन्धायितत्तं** ति अयं नु खो मग्गो, अयं[3] न नु खो ति[3] कङ्खावसेन चिरायितत्तं। वित्थायितत्तं ति यथा सुखुमं अत्थजातं सहसा पुच्छितस्स
15 कस्सचि सरीरं थद्धभावं गण्हाति, एवं थद्धभावगहणं न त्वेवा ति इमिना सब्बञ्ञुतञ्ञाणस्स अप्पटिहतभावं दस्सेति। तस्स हि पुरिसस्स
B. 337 मारावट्टनादिवसेन सिया ञाणस्स पटिघातो। तेन सो दन्धायेय्य वा वित्थायेय्य वा। सब्बञ्ञुतञ्ञाणं पन अप्पटिहतं, न सक्का तस्स केनचि अन्तरायो कातुं ति दीपेति।

20 ३८. **उल्लुम्पतु भवं गोतमो** ति उद्धरतु भवं गोतमो। **ब्राह्मणिं पजं** ति ब्राह्मणदारकं, भवं गोतमो मम ब्राह्मणपुत्तं अपायमग्गतो

१. अनुपभोग ०—सी०।　　२. ० विपिनं ति पि—सी०।
३-३. अयं नु खो नो ति—स्या०।

उद्धरित्वा ब्रह्मलोकमग्गे पतिट्ठपेतू ति अत्थो। अथस्स भगवा बुद्धुप्पादं दस्सेत्वा सद्धिं पुब्बभागपटिपदाय मेत्ता विहारादि ब्रह्मलोकगामिमग्गं देसेतुकामो "तेन हि वासेट्ठा" ति आदिमाह। तत्थ "इध तथागतो" ति आदि सामञ्ञफले वित्थारितं। **मेत्तासहगतेना** ति आदीसु यं वत्तब्बं, तं सब्बं विसुद्धि मग्गे ब्रह्मविहारकम्मट्ठानकथायं वुत्तं। 5 **सेय्याथापि वासेट्ठ बलवा सङ्खधमो** ति आदि पन इध अपुब्बं। तत्थ R. 42 **बलवा** ति बलसम्पन्नो। **सङ्खधमो** सङ्खधम्मको। **अप्पकसिरेना** ति अकिच्छेन अदुक्खेन। दुब्बलो हि सङ्खधम्मो सङ्खं धमन्तो पि न सक्कोति चतस्सो दिसा सरेन विञ्ञापेतुं, नास्स सङ्खसद्दो सब्बतो फरति। बलवतो पन विप्फारिको होति, तस्मा बलवा ति आदिमाह। **मेत्ताय** 10 **चेतोविमुत्तिया** ति एत्थ **मेत्ता** ति वुत्ते उपचारो पि अप्पना पि वट्टति, चेतोविमुत्ती ति वुत्ते पन अप्पनाव वट्टति। **यं पमाणकतं कम्मं** ति पमाणकतं कम्मं नाम कामावचरं वुच्चति। अप्पमाणकतं कम्मं नाम रूपारूपावचरं। तञ्हि पमाणं अतिक्कमित्वा ओदिस्सकअनोदिस्सकदिसाफरणवसेन वड्ढेत्वा कतत्ता अप्पमाणकतं ति वुच्चति। **न तं तत्रा-** 15 **वसिस्सति न तं तत्रावतिट्ठती** ति तं कामावचरकम्मं तस्मिं रूपावचरा रूपावचरकम्मे न ओहीयति, न तिट्ठति। किं वुत्तं होति, तं कामावचरकम्मं तस्स रूपारूपावचरकम्मस्स अन्तरा लग्गितुं वा ठातुं वा रूपारूपावचरकम्मं फरित्वा परियादियित्वा अत्तनो ओकासं गहेत्वा पतिट्ठातुं न सक्कोति। अथ खो रूपावचरारूपावचरकम्ममेव[1] कामा- 20 वचरं महोघो विय परित्तं उदकं फरित्वा परियादियित्वा अत्तनो ओकासं गहेत्वा तिट्ठति। तस्स विपाकं पटिबाहित्वा सयमेव ब्रह्मसहब्यतं उपनेमी ति[2]। **एवं विहारी** ति एवं मेत्तादिविहारी।

१. रूपारूपवचरकम्ममेव—सी०। २. उपनेति—सी०।

B. 338 **४२. एते मयं भगवन्तं गोतमं** (दी० नि० १.२१२) ति इदं तेसं दुतियं सरणगमनं[१]। पठममेव हेते मज्झिमपण्णासके वासेट्ठसुत्तं सुत्वा सरणं गता। इमं पन तेविज्जसुत्तं सुत्वा दुतियं पि सरणं गता[२]। कतिपाहच्चयेन पब्बज्जित्वा अग्गञ्ञसुत्ते उपसम्पदं चेव अरहत्तं च 5 अलत्थु। सेसं सब्बत्थ उत्तानमेवा ति[३]।

इति सुमङ्गलविलासिनिया दीघनिकायट्ठकथायं
तेविज्जसुत्तवण्णना निट्ठिता।

निट्ठिता च तेरससुत्तपटिमण्डितस्स सीलक्खन्धवग्गस्स अत्थवण्णना ति
सीलक्खन्धवग्गट्ठकथा निट्ठिता।

—०—

१. सरणागमनं—सी०। २. गन्त्वा—सी०।
३. उत्तानत्थमेवा ति—सी०।

सुमङ्गलविलासिनी

२. महावग्गवण्णना

(१) महापदानसुत्तवण्णना

१. पुब्बेनिवासपटिसंयुत्तकथा

१. एवं मे सुतं...पे०...करेरिकुटिकायं (दी० नि० २.३) ति महापदानसुत्तं। तत्रायं अपुब्बपदवण्णना। करेरिकुटिकायं ति करेरी ति वरुणरुक्खस्स नामं। करेरिमण्डपो तस्सा कुटिकाय द्वारे ठितो, तस्मा "करेरिकुटिका" ति वुच्चति, यथा कोसम्बरुक्खस्स द्वारे ठितत्ता कोसम्बकुटिका ति। अन्तोजेतवने किर करेरिकुटि कोसम्बकुटि गन्धकुटि सलळागारं[1] ति चत्तारि महागेहानि। एकेकं सतसहस्स-परिच्चागेन निप्फन्नं। तेसु सलळागारं रञ्ञा पसेनदिना कारितं, सेसानि अनाथपिण्डिकेन[2] कारितानि[3]। इति भगवा अनाथपिण्डिकेन गहपतिना थम्भानं उपरि कारिताय देवविमानकप्पाय करेरिकुटिकायं विहरति। पच्छाभत्तं ति एकासनिकखलुपच्छाभत्तिकानं पातोव[4] भुत्तानं अन्तोमज्झन्हिकेपि[5] पच्छाभत्तमेव। इध पन पकतिभत्तस्स पच्छतो "पच्छाभत्तं" ति अधिप्पेतं। पिण्डपातपटिक्कन्तानं ति पिण्डपाततो पटिक्कन्तानं, भत्तकिच्चं निट्ठपेत्वा उट्ठितानं ति अत्थो।

B.Vol.2.1 R.Vol.2.407 5 10

करेरिमण्डलमाळे ति तस्सेव करेरिमण्डपस्स अविदूरे कताय निसीदनसालाय। सो किर करेरिमण्डपो गन्धकुटिकाय च सालाय च

15 B. 2

१. सललघरं—सी०, स्या०, रो०। २. ० गहपतिना—सी०, रो०।
३. सी०, रो० पोत्थकेसु नत्थि। ४. पातो—सी०, रो०।
५. ० मज्झन्तिकेपि—सी०, स्या०, रो०।

अन्तरे होति, तस्मा गन्धकुटी पि करेरिकुटिका पि साला पि—करेरिमण्डलमाळो—ति वुच्चति । पुब्बेनिवासपटिसंयुत्ता ति "एकं पि जातिं, द्वे पि जातियो" ति एवं विभत्तेन पुब्बेनिवुत्थक्खन्धसन्तान-सङ्खातेन पुब्बेनिवासेन सद्धिं योजेत्वा पवत्तिता । धम्मी ति 5 धम्मसंयुत्ता ।

उदपादी ति अहो अच्छरियं दसबलस्स पुब्बेनिवासञाणं । R. 408 पुब्बेनिवासं नाम के अनुस्सरन्ति, के नानुस्सरन्ती ति । तित्थिया अनुस्सरन्ति, सावका च पच्चेकबुद्धा च बुद्धा च अनुस्सरन्ति । कतरा तित्थिया अनुस्सरन्ति ? ये अग्गप्पत्तकम्मवादिनो, तेपि चत्तालीसं येव 10 कप्पे अनुस्सरन्ति, न[1] ततो परं[1] । सावका कप्पसतसहस्सं अनुस्सरन्ति । द्वे अग्गसावका असङ्ख्येय्यञ्चेव कप्पसतसहस्सं च । पच्चेकबुद्धा द्वे असङ्ख्येय्यानि कप्पसतसहस्सं च । बुद्धानं पन एत्तकं ति परिच्छेदो नत्थि, यावतकं आकङ्खन्ति, तावतकं अनुस्सरन्ति ।

तित्थिया[2] खन्धपटिपाटिया अनुस्सरन्ति, पटिपाटिं मुञ्चित्वा न 15 सक्कोन्ति । पटिपाटिया अनुस्सरन्ता पि असञ्ञभवं पत्वा खन्धप्पवत्तिं न पस्सन्ति, जाले पतिता[3] कुण्ठा विय, कूपे पतिता पङ्गुळा विय च होन्ति । ते तत्थ ठत्वा "एत्तकमेव, इतो परं नत्थी" ति दिट्ठिं गण्हन्ति । इति तित्थियानं पुब्बेनिवासानुस्सरणं अन्धानं यट्ठिकोटिगमनं विय होति । यथा हि अन्धा यट्ठिकोटिग्गाहके सतियेव गच्छन्ति, 20 असति तत्थेव निसीदन्ति, एवमेव तित्थिया खन्धपटिपाटियाव अनुस्सरितुं सक्कोन्ति, पटिपाटिं विस्सज्जेत्वा न सक्कोन्ति ।

सावका पि खन्धपटिपाटियाव अनुस्सरन्ति, असञ्ञभवं पत्वा खन्धप्पवत्तिं न पस्सन्ति । एवं सन्ते पि ते वट्टे संसरणकसत्तानं खन्धानं अभावकालो नाम नत्थि । असञ्ञभवे पन पञ्चकप्पसतानि पवत्तन्ती

१-१. सी०, रो० पोत्थकेसु नत्थि । २. ये अग्गप्पत्ता कम्मवादिनो तित्थया—सी०, रो० । ३. ० विय सकुणा, कुण्ठा विय, पङ्गुला विय—सी०, रो० ।

ति तत्तकं कालं अतिक्कमित्वा बुद्धेहि दिन्ननये ठत्वा परतो अनुस्सरन्ति; सेय्यथापि आयस्मा सोभितो। द्वे अग्गसावका पन पच्चेकबुद्धा च चुतिपटिसन्धिं ओलोकेत्वा[१] अनुस्सरन्ति। बुद्धानं चुतिपटिसन्धिकिच्चं नत्थि। यं यं ठानं पस्सितुकामा होन्ति, तं तदेव पस्सन्ति। तित्थिया च पुब्बेनिवासं अनुस्सरमाना अत्तना दिट्ठकतसुतमेव अनुस्सरन्ति, तथा सावका च पच्चेकबुद्धा च। बुद्धा पन अत्तना वा परेहि वा दिट्ठकतसुतं सब्बमेव अनुस्सरन्ति। B. 3 5 R. 409

तित्थियानं पुब्बेनिवासञाणं खज्जोपनकओभाससदिसं[२], सावकानं[३] पदीपोभाससदिसं, अग्गसावकानं ओसधितारकोभाससदिसं, पच्चेकबुद्धानं चन्दोभाससदिसं, बुद्धानं सरदसूरियमण्डलोभाससदिसं। तस्स एत्तकानि जातिसतानि जातिसहस्सानि जातिसतसहस्सानी ति वा एत्तकानि कप्पसतानि कप्पसहस्सानि कप्पसतसहस्सानी ति वा नत्थि, यं किञ्चि अनुस्सरन्तस्स नेव खलितं, न पटिघातं[४] होति, आवज्जनपटिबद्धमेव आकङ्खमनसिकारचित्तुप्पादपटिबद्धमेव होति। दुब्बलपत्तपुटेवेगक्खित्त-नाराचो[५] विय, सिनेरुकूटे विस्सट्ठइन्दवजिरं विय च असज्जमानमेव गच्छति। "अहो महन्तं भगवतो पुब्बेनिवासञाणं" ति एवं भगवन्तंयेव आरब्भ कथा[६] उप्पन्ना, जाता पवत्ता ति अत्थो। तं सब्बं पि सङ्खेपतो दस्सेतुं "इति पि पुब्बेनिवासो, इति पि पुब्बेनिवासो" ति एत्तकमेव पाळियं वुत्तं। तत्थ इतिपी ति एवं पि। 10 15

२. अस्सोसि खो...पे०...अथ भगवा अनुप्पत्तो ति एत्थ यं वत्तब्बं, तं ब्रह्मजालसुत्तवण्णनायं वुत्तमेव। अयमेव हि विसेसो—तत्थ सब्बञ्ञुतञ्ञाणेन अस्सोसि, इध दिब्बसोतेन; तत्थ च वण्णावण्णकथा विप्पकता, इध पुब्बेनिवासकथा। तस्मा भगवा—"इमे भिक्खू मम पुब्बेनिवासञाणं आरब्भ गुणं थोमेन्ति, पुब्बेनिवासञाणस्स पन मे निप्फत्ति 20

१. ० ओलोकेत्वा—सी०। २. ० किमि०—सी०।
३. ० पन—सी०। ४. पटिघातो—सी०, स्या०, रो०।
५. ० तत्तनाराचो—सी०। ६. सी० पोत्थके नत्थि।

न जानन्ति; हन्द नेसं तस्स निप्फत्तिं कथेत्वा दस्सामी" ति आगन्त्वा पकतिया पि बुद्धानं[१] निसीदित्वा धम्मदेसनत्थमेव ठपिते तङ्खणे भिक्खूहि पप्फोटेत्वा दिन्ने वरबुद्धासने निसीदित्वा "काय नुत्थ, भिक्खवे" ति
R. 410 पुच्छाय च "इध, भन्ते" ति आदिपटिवचनस्स च परियोसाने तेसं
5 पुब्बेनिवासपटिसंयुत्तं धम्मिं[२] कथं[२] कथेतुकामो **इच्छेय्याथ नो** ति आदि-माह। तत्थ **इच्छेय्याथ नो** ति इच्छेय्याथ नु। अथ नं पहट्ठमानसा भिक्खू याचमाना 'एतस्स' भगवा ति आदिमाहंसु। तत्थ **एतस्सा** ति एतस्स धम्मिकथाकरणस्स।

२. पुब्बबुद्धानं कथा

B. 4 ३. अथ भगवा तेसं याचनं गहेत्वा कथेतुकामो "तेन हि भिक्खवे,
10 सुणाथा" ति ते सोतावधारणसाधुकमनसिकारेसु नियोजेत्वा अञ्ञेसं असाधारणं छिन्नवट्टमकानुस्सरणं पकासेतुकामो **इतो सो भिक्खवे** ति आदिमाह। तत्थ **यं विपस्सी** ति यस्मिं कप्पे विपस्सी। अयं हि 'यं' ति सद्दो "यं मे, भन्ते, देवानं तावतिंसानं सम्मुखा सुतं सम्मुखा पटिग्गहितं, आरोचेमि तं, भन्ते, भगवतो" (दी॰ नि॰ २.१६५) ति
15 आदीसु पच्चत्तवचने दिस्सति। "यं तं अपुच्छिम्ह अकित्तयी नो, अञ्ञं तं पुच्छाम तदिङ्घ ब्रूहि" (सु॰ नि॰ ४०३) ति आदीसु उपयोगवचने। "अट्ठानमेतं, भिक्खवे, अनवकासो, यं एकिस्सा लोकधातुया" (अं॰ नि॰ १.२८) ति आदीसु करणवचने। इध पन भुम्मत्थे[३] ति दट्ठब्बो। तेन वुत्तं—"यस्मिं कप्पे" ति। **उदपादी** ति दससहस्सिलोकधातुं उन्नादेन्तो
20 उप्पज्जि।

भद्दकप्पे ति पञ्चबुद्धुप्पादपटिमण्डितत्ता सुन्दरकप्पे सारकप्पे ति[४] भगवा इमं कप्पं थोमेन्तो एवमाह। यतो पट्ठाय किर अम्हाकं भगवता अभिनीहारो कतो, एतस्मिं अन्तरे एककप्पे पि पञ्च बुद्धा निब्बत्ता नाम नत्थि। अम्हाकं भगवतो अभिनीहारस्स पुरतो पन तण्हङ्करो, मेधङ्करो,

१. बुद्धासने—सी॰, रो॰। २-२. धम्मकथं—सी॰, स्या॰, रो॰।
३. भुम्मे—सी॰, स्या॰। ४. ॰ इति—सी॰।

सरणङ्करो, दीपङ्करो ति चत्तारो बुद्धा एकस्मिं कप्पे निब्बत्तिंसु। तेसं ओरभागे एकं असङ्खेय्यं बुद्धसुञ्ञमेव अहोसि[1]।

असङ्खेय्यकप्पपरियोसाने पन कोण्डञ्ञो नाम बुद्धो एकोव एकस्मिं कप्पे उप्पन्नो। ततो पि असङ्खेय्यं बुद्धसुञ्ञमेव अहोसि। असङ्खेय्य-कप्पपरियोसाने मङ्गलो, सुमनो, रेवतो, सोभितो ति चत्तारो बुद्धा 5 एकस्मिं कप्पे उप्पन्ना। ततो पि असङ्खेय्यं बुद्धसुञ्ञमेव अहोसि। R. 411 असङ्खेय्यकप्पपरियोसाने पन इतो कप्पसतसहस्साधिकस्स असङ्खेय्यस्स उपरि अनोमदस्सी, पदुमो, नारदो ति तयो बुद्धा एकस्मिं कप्पे उप्पन्ना। ततो पि असङ्खेय्यं बुद्धसुञ्ञमेव अहोसि। असङ्खेय्यकप्पपरियोसाने पन इतो कप्पसतसहस्सानं उपरि पदुमुत्तरो भगवा एकोव एकस्मिं कप्पे 10 उप्पन्नो। तस्स ओरभागे[2] इतो तिंसकप्पसहस्सानं उपरि सुमेधो, सुजातो ति द्वे बुद्धा एकस्मिं कप्पे उप्पन्ना। ततो ओरभागे इतो अट्ठारसन्नं कप्पसहस्सानं उपरि पियदस्सी, अत्थदस्सी, धम्मदस्सी ति B. 5 तयो बुद्धा एकस्मिं कप्पे उप्पन्ना। अथ इतो चतुनवुतिकप्पे सिद्धत्थो नाम बुद्धो एकोव एकस्मिं कप्पे उप्पन्नो। इतो द्वेनवुतिकप्पे तिस्सो, 15 फुस्सो ति द्वे बुद्धा एकस्मिं कप्पे उप्पन्ना। इतो एकनवुतिकप्पे विपस्सी भगवा उप्पन्नो। इतो एकतिंसे कप्पे सिखी, वेस्सभू ति द्वे बुद्धा उप्पन्ना। इमस्मिं भद्दकप्पे ककुसन्धो, कोणागमनो, कस्सपो, गोतमो अम्हाकं सम्मासम्बुद्धो ति चत्तारो बुद्धा उप्पन्ना, मेत्तेय्यो उप्पज्जिस्सति। एवमयं कप्पो पञ्चबुद्धुप्पादपटिमण्डितत्ता सुन्दरकप्पो सारकप्पो ति 20 भगवा इमं कप्पं थोमेन्तो एवमाह।

किं पनेतं बुद्धानं येव पाकटं होति—'इमस्मिं कप्पे एत्तका बुद्धा उप्पन्ना वा उप्पज्जिस्सन्ती ति वा' ति, उदाहु अञ्ञेसं पि पाकटं होती ति? अञ्ञेसं पि पाकटं होति। केसं? सुद्धावासब्रह्मानं। कप्पसण्ठान-कालस्मिञ्हि एकमसङ्खेय्यं एकङ्गणं हुत्वा ठिते लोकसन्निवासे लोकस्स 25 सण्ठानत्थाय देवो वस्सितुं आरभति। आदितो व अन्तरट्ठके[3] हिमपातो

1. आसि—सी०। 2. ओरतो—सी०, स्या०, रो०।
3. अन्तरट्ठको—सी०।

विय होति। ततो तिलमत्ता[1] कणमत्ता तण्डुलमत्ता मुग्ग-मास-बदर-आमलक-एळालुक-कुम्भण्ड-अलाबुमत्ता उदकधारा हुत्वा अनुक्कमेन उसभद्वेउसभअड्ढगावुत-गावुत-द्वे-गावुतअड्ढयोजनयोजनद्वियोजन...पे०
R. 412 ...योजनसतयोजनसहस्सयोजनसतसहस्समत्ता हुत्वा कोटिसतसहस्स-
5 चक्कवाळब्भन्तरे[2] याव अविनट्ठब्रह्मलोका पूरेत्वा तिट्ठन्ति। अथ तं उदकं अनुपुब्बेन भस्सति। भस्सन्ते उदके पकतिदेवलोकट्ठानेसु देवलोका सण्ठहन्ति। तेसं सण्ठहनविधानं विसुद्धिमग्गे पुब्बेनिवासकथायं वुत्तमेव।

मनुस्सलोकसण्ठहनट्ठानं[3] पन पत्ते उदके धमकरणमुखे[4] पिहिते विय
10 वातवसेन तं उदकं सन्तिट्ठति। उदकपिट्ठे उप्पलिनिपण्णं विय पथवी सण्ठहति। महाबोधिपल्लङ्को विनस्समाने लोके पच्छा विनस्सति, सण्ठहमाने पठमं सण्ठहति। तत्थ पुब्बनिमित्तं हुत्वा एको पदुमिनिगच्छो उप्पज्जति। तस्स सचे तस्मिं कप्पे बुद्धो[5] निब्बत्तिस्सति[5], पुप्फं उप्पज्जति, नो चे, नुप्पज्जति। उप्पज्जमानञ्च सचे एको बुद्धो
15 निब्बत्तिस्सति, एकं उप्पज्जति। सचे द्वे, तयो, चत्तारो, पञ्च बुद्धा निब्बत्तिस्सन्ति, पञ्च उप्पज्जन्ति। तानि च खो एकस्मिं येव नाळे
B. 6 कण्णिकाबद्धानि हुत्वा। सुद्धावासब्रह्मानो "आयाम, मयं[6] मारिसा, पुब्बनिमित्तं पस्सिस्सामा[7]" ति महाबोधिपल्लङ्कट्ठानं आगच्छन्ति। बुद्धानं अनिब्बत्तनकप्पे पुप्फं न होति। ते पन अपुप्फितगच्छं[8]
20 दिस्वा—"अन्धकारो वत भो लोको भविस्सति, मता मता सत्ता अपाये पूरेस्सन्ति, छ देवलोका नव ब्रह्मलोका सुञ्ञा भविस्सन्ती" ति अनत्तमना होन्ति। पुप्फितकाले पन पुप्फं दिस्वा—"सब्बञ्ञुबोधिसत्तेसु मातुकुच्छिं ओक्कमन्तेसु निक्खमन्तेसु सम्बुज्झन्तेसु धम्मचक्कं पवत्तेन्तेसु यमकपाटिहारियं करोन्तेसु देवोरोहनं करोन्तेसु आयुसङ्खारं

१. सी०, स्या०, रो० पोत्थकेसु नत्थि। २. ० तरं—सी०।
३. मनुस्सलोकट्ठानं—सी०, स्या०, रो०। ४. धमकरकस्स मुखे—सी०, स्या०, रो०।
५-५. बुद्धा निब्बत्तिस्सन्ति—स्या०, रो०। ६. सी०, स्या०, रो० पोत्थकेसु नत्थि।
७. पस्सामा ति—सी०, स्या०, रो०। ८. अपुप्फकं—सी०, रो०।

ओस्सज्जन्तेसु[1] परिनिब्बायन्तेसु दससहस्सचक्कवाळकम्पनादीनि पाटिहारियानि दक्खिस्सामा'' ति च ''चत्तारो अपाया परिहायिस्सन्ति, छ देवलोका नव ब्रह्मलोका परिपुरेस्सन्ती'' ति च अत्तमना उदानं उदानेन्ता अत्तनो अत्तनो ब्रह्मलोकं गच्छन्ति। इमस्मिं भद्दकप्पे[2] पञ्च पदुमानि उप्पज्जिंसु। तेसं निमित्तानं आनुभावेन चत्तारो बुद्धा उप्पन्ना, 5 पञ्चमो उप्पज्जिस्सति। सुद्धावासब्रह्मानो पि तानि पदुमानि दिस्वा इममत्थं जानिंसु। तेन वुत्तं—''अञ्ञेसम्पि पाकटं होती'' ति।

३. आयुपरिच्छेदवण्णना

४. इति भगवा—इतो सो, भिक्खवे (दी० नि० २.४) ति R. 413 आदिना नयेन कप्पपरिच्छेदवसेन पुब्बेनिवासं दस्सेत्वा इदानि तेसं बुद्धानं जातिपरिच्छेदादिवसेन[3] दस्सेतुं ''विपस्सी भिक्खवे'' ति आदिमाह। 10 तत्थ आयुपरिच्छेदे **परित्तं लहुकं** ति उभयमेतं अप्पकस्सेव वेवचनं। यञ्हि अप्पकं, तं परित्तञ्चेव लहुकञ्च होति।

अप्पं वा भिय्यो ति वस्ससततो वा उपरि अप्पं, अञ्ञं वस्ससतं अपत्वा वीसं वा तिंसं वा चत्तालीसं वा पण्णासं वा सट्ठिं[4] वा वस्सानि जीवति। एवं दीघायुको पन अतिदुल्लभो। असुको किर एवं चिरं 15 जीवती ति तत्थ तत्थ गन्त्वा दट्ठब्बो होति। तत्थ विसाखा उपासिका वीसवस्ससतं जीवति[5], तथा पोक्खरसाति ब्राह्मणो ब्रह्मायु ब्राह्मणो सेलो ब्राह्मणो, बावरियब्राह्मणो, आनन्दत्थेरो, महाकस्सपत्थेरो ति। अनुरुद्धत्थेरो पन वस्ससतञ्चेव पण्णासञ्च वस्सानि, बाकुलत्थेरो वस्ससतञ्चेव सट्ठि च वस्सानि। अयं सब्बदीघायुको। सो पि द्वे 20 वस्ससतानि न जीवति[6]।

विपस्सी-आदयो पन सब्बे पि बोधिसत्ता मेत्तापुब्बभागेन सोमन- B. 7 स्ससहगतञाणसम्पयुत्तअसङ्खारिकचित्तेन मातुकुच्छिस्मिं पटिसन्धिं

१. विस्सज्जन्तेसु—सी०, रो०।
२. पन कप्पे—सी०, स्या०, रो०।
३. ० परिच्छेदादि—सी०, रो०।
४. सट्ठि—सी०, स्या०, रो०।
५. जीवि—सी०, रो०।
६. जीवि—सी०, रो०।

गण्हिसु । तेन चित्तेन गहिताय पटिसन्धिया असङ्ख्येय्यं आयु, इति सब्बे बुद्धा असङ्ख्येय्यायुका । ते कस्मा असङ्ख्येय्यं न अट्ठंसु ? उतुभोजनविपत्तिया[1] । उतुभोजनवसेन हि आयु हायति पि वड्ढति पि ।

तत्थ यदा राजानो अधम्मिका होन्ति, तदा उपराजानो सेनापति 5 सेट्ठि सकलनगरं सकलरट्ठं अधम्मिकमेव होति; अथ तेसं आरक्खदेवता, तासं देवतानं मित्ता भूमट्ठदेवता[2], तासं देवतानं मित्ता आकासट्ठकदेवता, आकासट्ठकदेवतानं मित्ता उण्हवलाहका देवता, तासं मित्ता अब्भवलाहका देवता, तासं मित्ता[3] सीतवलाहका देवता, तासं मित्ता वस्सवलाहका R. 414 देवता, तासं मित्ता चातुमहाराजिका देवता, तासं मित्ता तावतिंसा 10 देवता, तासं मित्ता यामा देवता ति एवमादि । एवं याव भवग्गा ठपेत्वा अरियसावके सब्बा देवब्रह्मपरिसा पि अधम्मिकाव होन्ति ।

तासं अधम्मिकताय विसमं चन्दिमसूरिया परिहरन्ति, वातो यथामग्गेन न वायति, अयथामग्गेन वायन्तो आकासट्ठकविमानानि खोभेति, विमानेसु खोभितेसु देवतानं कीळनत्थाय चित्तानि न 15 नमन्ति, देवतानं कीळनत्थाय चित्तेसु अनमन्तेसु सीतुण्हभेदो उतु यथाकालेन न सम्पज्जति, तस्मिं असम्पज्जन्ते न सम्मा देवो वस्सति । कदाचि वस्सति, कदाचि न वस्सति; कत्थचि वस्सति, कत्थचि न वस्सति । वस्सन्तो पि वप्पकाले अङ्कुरकाले नाळकाले पुप्फकाले खीरग्गहणादिकालेसु यथा यथा सस्सानं उपकारो न होति, तथा तथा 20 वस्सति च[4] विगच्छति च । तेन सस्सानि विसमपाकानि होन्ति, विगतगन्धवण्णरसादिसम्पन्नानि[5] । एकभाजने पक्खित्ततण्डुलेसु पि एकस्मिं पदेसे भत्तं उत्तण्डुलं होति, एकस्मिं अतिकिलिन्नं, एकस्मिं समपाकं[6] । तं परिभुत्तं कुच्छियं पि तीहाकारेहि पच्चति । तेन सत्ता बह्वाबाधा चेव होन्ति, अप्पायुका च । एवं ताव उतुभोजनवसेन आयु हायति ।

१, सी० पोत्थके नत्थि ।
२. भुम्मा देवता—सी०, स्या०, रो० ।
३. सी० पोत्थके नत्थि ।
४. चिरं—स्या० ।
५ ० सम्पत्तीनि—सी०, स्या० ।
६. संपाकं—स्या०, रो० ।

यदा पन राजानो धम्मिका होन्ति, तदा[1] उपराजानो पि धम्मिका होन्ती ति पुरिमनयेनेव याव ब्रह्मलोका सब्बे पि धम्मिका होन्ति। तेसं धम्मिकत्ता समं चन्दिमसूरिया परिहरन्ति। यथामग्गेन वातो वायति, यथामग्गेन वायन्तो आकासट्ठकविमानानि न खोभेति। तेसं[2] अखोभा[2] देवतानं कीळनत्थाय चित्तानि नमन्ति। एवं कालेन उतु सम्पज्जति, देवो सम्मा वस्सति। वप्पकालतो पट्ठाय सस्सानं उपकारं करोन्तो काले वस्सति, काले विगच्छति। तेन सस्सानि समपाकानि सुगन्धानि सुवण्णानि सुरसानि ओजवन्तानि होन्ति। तेहि सम्पादितं भोजनं परिभुत्तं पि सम्मा परिपाळं गच्छति। तेन सत्ता अरोगा दीघायुका होन्ति। एवं उतुभोजनवसेन आयु वड्ढति।

B. 8 | 5 | R. 415 | 10

तत्थ विपस्सी भगवा असीतिवस्ससहस्सायुककाले निब्बत्तो, सिखी[3] सत्ततिवस्ससहस्सायुककाले ति इदं अनुपुब्बेन परिहीनसदिसं कतं। न पन एवं परिहीनं, वड्ढित्वा वड्ढित्वा परिहीनं वेदितब्बं। कथं ? इमस्मिं ताव कप्पे ककुसन्धो भगवा चत्तालीसवस्ससहस्सायुककाले निब्बत्तो। आयुप्पमाणं पञ्च कोट्ठासे कत्वा चत्तारि ठत्वा पञ्चमे विज्जमानेयेव परिनिब्बुतो। तं आयु परिहायमानं दसवस्सकालं पत्वा पुन वड्ढमानं असङ्ख्येय्यं हुत्वा ततो परिहायमानं तिंसवस्ससहस्सकाले ठितं; तदा कोणागमनो भगवा निब्बत्तो। तस्मिं पि तथेव परिनिब्बुते तं आयु दसवस्सकालं पत्वा पुन वड्ढमानं असङ्ख्येय्यं हुत्वा परिहायित्वा वीसतिवस्ससहस्सकाले ठितं; तदा कस्सपो भगवा निब्बत्तो। तस्मिं पि तथेव परिनिब्बुते तं आयु दसवस्सकालं पत्वा पुन वड्ढमानं असङ्ख्येय्यं हुत्वा परिहायित्वा वस्ससतकालं पत्तं, अथ अम्हाकं सम्मासम्बुद्धो[4] निब्बत्तो। एवं अनुपुब्बेन परिहायित्वा[5] परिहायित्वा वड्ढित्वा वड्ढित्वा परिहीनं ति वेदितब्बं। तत्थ यं यं आयुपरिमाणेसु[6] मनुस्सेसु बुद्धा निब्बत्तन्ति, तेसं पि तं तदेव आयुपरिमाणं होती ति वेदितब्बं[7]।

15 | 20 | 25

१. ० सेनापति—स्या०, रो०।
२-२. एतेसं असंखोभे—सी०, रो०; असंखोभेन्तानं—स्या०।
३. सिखी भगवा—सी०, रो०।
४. स्या० पोत्थके नत्थि।
५-५. अपरिहायित्वा—सी०, स्या०।
६. आयुवुड्ढि ०—स्या०।
७. सी० पोत्थके नत्थि।

४. बोधिपरिच्छेदवण्णना

B. 9 ८. बोधिपरिच्छेदे पन **पाटलिया मूले** (दी० नि० २.५) ति पाटलिरुक्खस्स हेट्ठा । तस्सा पन पाटलिया खन्धो तं दिवसं पण्णासरतनो हुत्वा अब्भुग्गतो, साखा पण्णासरतनाति उब्बेधेन रतनसतं अहोसि । तं दिवसं च सा पाटलि कण्णिकाबद्धेहि विय पुप्फेहि मूलतो पट्ठाय एक-
5 सञ्छन्ना अहोसि, दिब्बगन्धं वायति । न केवलं च तदा अयमेव पुप्फिता, दससहस्सचक्कवाळे सब्बपाटलियो पुप्फिता । न केवलं च पाटलियो, दससहस्सचक्कवाळे सब्बरुक्खानं खन्धेसु खन्धपदुमानि, साखासु साखा-पदुमानि, लतासु लतापदुमानि, आकासे आकासपदुमानि पुप्फितानि,
R. 416 पथवितलं भिन्दित्वा पि महापदुमानि उट्ठितानि । महासमुद्दो पि पञ्च-
10 वण्णहि पदुमेहि नीलुप्पलरत्तुप्पलेहि च सञ्छन्नो अहोसि । सकलदस-सहस्सचक्कवाळं धजमालाकुलं तत्थ तत्थ निबद्धपुप्फदामविस्सट्ठमाला-गुळविप्पकिण्णं नानावण्णकुसुमसमुज्जलं नन्दनवनचित्तलतावनमिस्सकवन-फारुसकवनसदिसं अहोसि । पुरत्थिमचक्कवाळमुखवट्टियं उस्सितद्धजा पच्छिमचक्कवाळमुखवट्टिं[1] अभिहनन्ति । पच्छिमदक्खिणउत्तरचक्कवाळ-
15 मुखवट्टियं उस्सितद्धजा दक्खिणचक्कवाळमुखवट्टिं अभिहनन्ति । एवं अञ्ञमञ्ञसिरीसम्पत्तानि[2] चक्कवाळानि अहेसुं । **अभिसम्बुद्धो** ति सकलं बुद्धगुणविभवसिरिं पटिविज्झमानो चत्तारि सच्चानि अभिसम्बुद्धो ।

"सिखी, भिक्खवे, भगवा अरहं सम्मासम्बुद्धो पुण्डरीकस्स मूले अभिसम्बुद्धो" ति आदीसु पि इमिनाव नयेन पदवण्णना[3] वेदितब्बा ।
20 एत्थ पन **पुण्डरीको** ति सेतम्बरुक्खो । तस्सा पि तदेव परिमाणं । तं दिवसञ्च सो पि दिब्बगन्धेहि पुप्फेहि सुसञ्छन्नो अहोसि । न केवलं च पुप्फेहि, फलेहि पि सञ्छन्नो अहोसि । तस्स एकतो तरुणानि फलानि, एकतो मज्झिमानि फलानि[4], एकतो नातिपक्कानि फलानि, एकतो सुपक्कानि पक्खित्तदिब्बोजानि विय सुरसानि ओलम्बन्ति । यथा सो,

१. वट्टियं—स्या० । २. ० सम्पन्नानि—स्या०, रो० ।
३. वण्णना—सी०, स्या०, रो० । ४. सी०, रो० पोत्थकेसु नत्थि ।

एवं सकलदससहस्सचक्कवाळेसु[1] पुप्फुपगरुक्खा पुप्फेहि, फलूपगरुक्खा फलेहि पटिमण्डिता अहेसुं।

सालो ति सालरुक्खो। तस्सा पि तदेव परिमाणं, तथेव पुप्फ-सिरीविभवो वेदितब्बो। सिरीसरुक्खे पि एसेव नयो। उदुम्बररुक्खे पुप्फानि नाहेसुं, फलविभूति पनेत्थ अम्बे वुत्तनयाव, तथा निग्रोधे, 5 B. 10 तथा अस्सत्थे[2]। इति सब्बबुद्धानं एको व पल्लङ्को, रुक्खा पन अञ्ञे पि होन्ति। तेसु यस्स यस्स रुक्खस्स मूले चतुमग्गञाणसङ्खातबोधिं बुद्धा पटिविज्झन्ति, सो बोधी ति वुच्चति। अयं बोधिपरिच्छेदो नाम।

५. सावकयुगपरिच्छेदवण्णना

९. सावकयुगपरिच्छेदे पन खण्डतिस्सं ति खण्डो च तिस्सो च। तेसु खण्डो एकपितिको कनिट्ठभाता, तिस्सो पुरोहितपुत्तो। खण्डो 10 R. 417 पञ्ञापारमिया मत्थकं पत्तो, तिस्सो समाधिपारमिया मत्थकं[3] पत्तो[3]। अग्गं ति ठपेत्वा विपस्सिं भगवन्तं अवसेसेहि सद्धिं असदिसगुणताय उत्तमं। भद्दयुगं ति अग्गत्ता[4] येव भद्दयुगं। अभिभूसम्भवं ति अभिभू च सम्भवो च। तेसु अभिभू पञ्ञापारमिया मत्थकं पत्तो। सिखिना भगवता सद्धिं अरुणवतितो ब्रह्मलोकं गन्त्वा ब्रह्मपरिसाय विविधानि 15 पाटिहारियानि दस्सेन्तो धम्मं देसेत्वा दससहस्सिलोकधातुं[5] अन्धकारेन फरित्वा—"किं इदं" ति सञ्जातसंवेगानं ओभासं फरित्वा—"सब्बे मे रूपञ्च पस्सन्तु, सद्दञ्च सुणन्तू" ति अधिट्ठहित्वा—"आरम्भथा" ति गाथाद्वयं भणन्तो सद्दं सावेसि। सम्भवो समाधिपारमिया मत्थकं पत्तो अहोसि। 20

सोणुत्तरं ति सोणो च उत्तरो च। तेसुपि सोणो पञ्ञापारमिं पत्तो, उत्तरो समाधिपारमिं पत्तो अहोसि। विधुरसञ्जीवं (दी० नि० २.६) ति विधुरो च सञ्जीवो च। तेसु विधुरो पञ्ञापारमिं पत्तो

१. ० वाले—सी०, स्या०, रो०। २. ० ति—सी०, रो०; वा ति—स्या०। ३-३. सी०, स्या०, रो० पोत्थकेसु नत्थि। ४. अग्गप्पत्तता—सी०। ५. सी० पोत्थके नत्थि।

अहोसि, सञ्जीवो समाधिपारमिं पत्तो। समापज्जनबहुलो रत्तिट्ठान-
दिवाट्ठानकुटिलेणमण्डपादीसु समापत्तिबलेन झायन्तो[1] एकदिवसं अरञ्ञे
निरोधं समापज्जि। अथ नं वनकम्मिकादयो "मतो" ति सल्लक्खेत्वा
झापेसुं। सो यथापरिच्छेदेन समापत्तितो वुट्ठाय चीवरानि पप्फोटेत्वा
5 गामं पिण्डाय पाविसि। तदुपादायेव च नं "सञ्जीवो" ति सञ्जानिंसु।
भिय्योसुत्तरं ति भिय्योसो च उत्तरो च। तेसु भिय्योसो पञ्ञाय
उत्तरो, उत्तरो समाधिना अग्गो अहोसि। तिस्सभारद्वाजं ति तिस्सो
च भारद्वाजो च। तेसु तिस्सो पञ्ञापारमिं पत्तो, भारद्वाजो समाधि-
B. 11 पारमिं पत्तो अहोसि। सारिपुत्तमोग्गल्लानं ति सारिपुत्तो च मोग्ग-
10 ल्लानो च। तेसु सारिपुत्तो पञ्ञाविसये, मोग्गल्लानो समाधिविसये
अग्गो अहोसि[2]। अयं सावकयुगपरिच्छेदो नाम।

६. सावकसन्निपातपरिच्छेदवण्णना

R 418 १०. सावकसन्निपातपरिच्छेदे विपस्सिस्स भगवतो पठमसन्निपातो
चतुरङ्गिको अहोसि। सब्बे एहिभिक्खू, सब्बे इद्धिया निब्बत्तपत्तचीवरा,
सब्बे अनामन्तितताव आगता, इति[3] ते च खो पन्नरसे उपोसथदिवसे।
15 अथ सत्था बीजनिं गहेत्वा निसिन्नो उपोसथं ओसारेसि। दुतियततियेसुपि
एसेव नयो तथा सेसबुद्धानं सब्बसन्निपातेसु। यस्मा पन अम्हाकं
भगवतो पठमबोधियाव सन्निपातो[4] अहोसि, इदञ्च सुत्तं अपरभागे वुत्तं,
तस्मा "मय्हं, भिक्खवे, एतरहि एको सावकानं सन्निपातो" ति
अनिट्ठपेत्वा अहोसी ति वुत्तं।

20 तत्थ अड्ढतेळसानि भिक्खुसतानी (दी० नि० २.७) ति पुराण-
जटिलानं सहस्सं द्विन्नं अग्गसावकानं परिवारानि अड्ढतेय्यसतानी ति
अड्ढतेळसानि भिक्खुसतानि। तत्थ द्विन्नं अग्गसावकानं अभिनीहारतो
पट्ठाय वत्थुं कथेत्वा पब्बज्जा दीपेतब्बा। पब्बजितानं पन तेसं

१. यापेन्तो—सी०, रो०; वायमन्तो—स्या०।
२. सी० पोत्थके नत्थि।
३. सी०, रो० पोत्थकेसु नत्थि।
४. एको ०—सी०, रो०।

महामोग्गल्लानो सत्तमे दिवसे अरहत्तं पत्तो । धम्मसेनापति पन्नरसमे[१] दिवसे गिज्झकूटपब्बतमज्झे सूकरखतलेणपब्भारे भागिनेय्यस्स दीघनखपरिब्बाजकस्स सज्जिते धम्मयागे वेदनापरिग्गहसुत्तन्ते देसियमाने देसनं अनुबुज्झमानं[२] ञाणं पेसेत्वा सावकपारमिञाणं पत्तो । भगवा थेरस्स अरहत्तप्पत्तिं ञत्वा वेहासं अब्भुग्गन्त्वा वेळुवने येव पच्चुट्ठासि । 5 थेरो—"कुहिं[३] नु खो भगवा गतो" ति आवज्जन्तो वेळुवने पतिट्ठितभावं ञत्वा सयम्पि वेहासं अब्भुग्गन्त्वा वेळुवने येव पच्चुट्ठासि[४] । अथ भगवा पातिमोक्खं ओसारेसि । तं सन्निपातं सन्धाय भगवा—"अड्ढतेळसानि भिक्खुसतानी" ति आह । अयं सावकसन्निपातपरिच्छेदो नाम ।

७. उपट्ठाकपरिच्छेदवण्णना

११. उपट्ठाकपरिच्छेदे पन आनन्दो (दी० नि० २.७) ति निबद्धु- 10 B. 12 पट्ठाकभावं सन्धाय वुत्तं । भगवतो हि पठमबोधियं अनिबद्धा[५] उपट्ठाका अहेसुं[५] । एकदा नागसमालो पत्तचीवरं गहेत्वा विचरि, एकदा नागितो, एकदा उपवानो, एकदा सुनक्खत्तो, एकदा चुन्दो समणुद्देसो, एकदा सागतो, एकदा मेघियो । तत्थ एकदा भगवा नागसमालत्थेरेन सद्धिं R. 419 अद्धानमग्गपटिपन्नो द्वेधापथं पत्तो । थेरो मग्गा ओक्कम्म—"भगवा, 15 अहं इमिना मग्गेन गच्छामी" ति आह । अथ नं भगवा—"एहि भिक्खु, इमिना मग्गेन गच्छामा" ति आह । सो—"हन्द, भगवा, तुम्हाकं पत्तचीवरं गण्हथ, अहं इमिना मग्गेन गच्छामी" ति वत्वा पत्तचीवरं छमायं ठपेतुं आरद्धो । अथ नं भगवा—"आहर, भिक्खू" ति वत्वा पत्तचीवरं गहेत्वा गतो । तस्स पि भिक्खुनो इतरेन मग्गेन गच्छतो 20 चोरा पत्तचीवरञ्चेव हरिंसु, सीसञ्च भिन्दिंसु । सो—"भगवा, इदानि मे पटिसरणं, न अञ्ञो ति चिन्तेत्वा लोहितेन गळितेन[६] भगवतो सन्तिकं अगमासि । "किमिदं भिक्खू" ति च वुत्ते तं पवत्तिं आरोचेसि ।

१. पन्नरस—सी०, रो० । २. अनुबद्धमानं—सी०, रो० ।
३. कहं—सी०, रो० । ४. पतिट्ठासि—सी०, रो० ।
५-५. निबद्धा उपट्ठाका नाहेसुं—सी०, रो० । ६. गळन्तेन—सी० ।

अथ नं भगवा—"मा चिन्तयि, भिक्खु, एतं[1] येव ते कारणं सल्लक्खेत्वा निवारयिम्हा" ति वत्वा नं[2] समस्सासेसि ।

एकदा पन भगवा मेघियत्थेरेन सद्धिं पाचीनवंसमिगदाये जन्तुगामं अगमासि । तत्रापि मेघियो जन्तुगामे पिण्डाय चरित्वा नदीतीरे पासा-
5 दिकं अम्बवनं दिस्वा—"भगवा तुम्हाकं पत्तचीवरं गण्हथ, अहं तस्मिं अम्बवने समणधम्मं करोमी" ति वत्वा भगवता तिक्खत्तुं निवारियमानो पि गन्त्वा अकुसलवितक्केहि उपद्दुतो[3] अन्वासत्तो[4] पच्चागन्त्वा तं पवत्तिं आरोचेसि । तम्पि भगवा—"इदमेव ते कारणं सल्लक्खेत्वा निवारयिम्हा" ति वत्वा अनुपुब्बेन सावत्थिं अगमासि । तत्थ गन्धकुटि-
10 परिवेणे पञ्ञत्तवरबुद्धासने निसिन्नो भिक्खुसंघपरिवुतो भिक्खू आमन्तेसि—"भिक्खवे, इदानिम्हि महल्लको, 'एकच्चे भिक्खू इमिना मग्गेन गच्छामा' ति वुत्ते अञ्ञेन गच्छन्ति, एकच्चे मय्हं पत्तचीवरं भूमियं निक्खिपन्ति, मय्हं निबद्धुपट्ठाकं एकं[5] भिक्खुं जानाथा" ति भिक्खूनं धम्मसंवेगो उदपादि । अथायस्मा सारिपुत्तो उट्ठायासना[6]
B. 13 15 भगवन्तं वन्दित्वा—"अहं, भन्ते, तुम्हेयेव पत्थयमानो सतसहस्सकप्पाधिकं असङ्ख्येय्यं पारमियो पूरयिं[7], ननु मादिसो महापञ्ञो उपट्ठाको
R. 420 नाम वट्टति, अहं उपट्ठहिस्सामी" ति आह । तं भगवा—"अलं सारिपुत्त, यस्सं दिसायं त्वं विहरसि, असुञ्ञायेव[8] मे सा दिसा[8], तव ओवादो बुद्धानं ओवादसदिसो, न मे तया उपट्ठाककिच्चं अत्थी" ति
20 पटिक्खिपि । एतेनेवुपायेन महामोग्गल्लानं आदिं कत्वा असीतिमहासावका उट्ठहिंसु । ते[9] सब्बे पि भगवा पटिक्खिपि ।

१. एतं कारणा येव ते निवारयिम्हा ति वत्वा०—सी०; एतं कारणं येव०–रो०; एतं कारणं येव तं निवारयिम्हा ति०—स्या० ।
२. सी०, रो० पोत्थकेसु नत्थि ।
३. सी०, रो० पोत्थकेसु नत्थि ।
४. अन्वासन्नो—रो०; अज्झापन्नो—स्या० ।
५. सी०, स्या० पोत्थकेसु नत्थि ।
६. उट्ठाय—सी०, रो० ।
७. पूरेसिं—सी० ।
८-८. असुञ्ञामेवा सा दिसा—सी०, रो०; असुञ्ञा येव सा दिसा—स्या० ।
९. सी० पोत्थके नत्थि ।

B. 14

R. 421

आनन्दत्थेरो पन तुण्ही येव निसीदि। अथ नं भिक्खू एवमाहंसु—"आवुसो, आनन्द[1], भिक्खुसंघो उपट्ठाकट्ठानं याचति, त्वं पि याचाही" ति। सो आह—"याचित्वा लद्धुपट्ठानं[2] नाम आवुसो कीदिसं होति, किं मं सत्था न पस्सति, सचे रोचिस्सति, आनन्दो मं उपट्ठातू ति वक्खती" ति। अथ भगवा—"न, भिक्खवे, आनन्दो अञ्ञेन उस्साहेतब्बो,सयमेव जानित्वा मं उपट्ठहिस्सती" ति आहा। ततो भिक्खू—"उट्ठेहि, आवुसो आनन्द, उट्ठेहि आवुसो आनन्द, दसबलं उपट्ठाकट्ठानं याचाही" ति आहंसु। थेरो उट्ठहित्वा चत्तारो पटिक्खेपे, चतस्सो च आयाचना ति अट्ठ वरे याचि। 5

चत्तारो पटिक्खेपा नाम—"सचे मे[3], भन्ते, भगवा अत्तना लद्धं पणीतं चीवरं न दस्सति, पिण्डपातं न दस्सति, एकगन्धकुटियं वसितुं न दस्सति, निमन्तनं गहेत्वा न गमिस्सति, एवाहं भगवन्तं उपट्ठहिस्सामी" ति वत्वा—"किं पनेत्थ, आनन्द, आदीनवं पस्ससी[4]" ति वुत्तो[5]—"सचाहं, भन्ते, इमानि वत्थूनि लभिस्सामि, भविस्सन्ति[6] वत्तारो—'आनन्दो दसबलेन लद्धं पणीतं चीवरं परिभुञ्जति, पिण्डपातं परिभुञ्जति, एकगन्धकुटियं वसति, एकतो[7] निमन्तनं गच्छति, एतं लाभं लभन्तो तथागतं उपट्ठाति, को एवं उपट्ठहतो भारो' ति" इमे चत्तारो पटिक्खेपे याचि। 10 15

चतस्सो आयाचना नाम—"सचे, भन्ते, भगवा मया गहितनिमन्तनं गमिस्सति, सचाहं तिरोरट्ठा तिरोजनपदा भगवन्तं दट्ठुं आगतं परिसं आगतक्खणे एव भगवन्तं दस्सेतुं लच्छामि, यदा मे कङ्खा उप्पज्जति, तस्मिं येव खणे भगवन्तं उपसङ्कमितुं लच्छामि, यं[8] भगवा मय्हं परम्मुखा धम्मं देसेति[9], तं आगन्त्वा मय्हं कथेस्सति, एवाहं 20

१. सी॰ पोत्थके नत्थि।
२. लद्धट्ठानं—सी॰, रो॰।
३. स्या॰ पोत्थके नत्थि।
४. अद्दसा ति—सी॰, स्या॰, रो॰।
५. वुत्ते—सी॰, स्या॰, रो॰।
६. ॰ च ॰—सी॰, रो॰; ॰ मे ॰—स्या॰।
७. एकं—सी॰, रो॰।
८. तथा ॰—सी॰।
९. देसेसि—सी॰।

B. 14 भगवन्तं उपट्ठहिस्सामी" ति वत्वा—"कं पनेत्थ, आनन्द आनिसंसं
R. 421 पस्ससी" ति वुत्ते—"इध, भन्ते, सद्धा कुलपुत्ता भगवतो ओकासं
अलभन्ता मं एवं वदन्ति—'स्वे, भन्ते आनन्द, भगवता सद्धिं अम्हाकं
घरे भिक्खं गण्हेय्याथा' ति, सचे भन्ते[1] भगवा तत्थ न गमिस्सति,
5 इच्छितक्खणेयेव परिसं दस्सेतुं, कङ्खञ्च विनोदेतुं ओकासं न लच्छामि,
भविस्सन्ति वत्तारो—'किं आनन्दो दसबलं उपट्ठाति, एत्तकम्पिस्स
अनुग्गहं भगवा न करोती' ति। भगवतो च परम्मुखा मं पुच्छि-
स्सन्ति—'अयं, आवुसो आनन्द, गाथा, इदं सुत्तं, इदं जातकं, कत्थ
देसितं' ति। सचाहं तं न सम्पादयिस्सामि, भविस्सन्ति वत्तारो—
10 'एत्तकम्पि, आवुसो, न जानासि, कस्मा त्वं छाया विय भगवन्तं
अविजहन्तो दीघरत्तं विचरसी[2]' ति। तेनाहं परम्मुखा देसितस्सपि
धम्मस्स पुन कथनं इच्छामी ति इमा चतस्सो आयाचना याचि।
भगवापिस्स अदासि।

एवं इमे अट्ठ वरे गहेत्वा निबद्धुपट्ठाको अहोसि। तस्सेव ठानन्तर-
15 स्सत्थाय कप्पसतसहस्सं पुरितानं पारमीनं फलं पापुणी ति इमस्स[3]
निबद्धुपट्ठाकभावं सन्धाय—"मय्हं, भिक्खवे, एतरहि आनन्दो भिक्खु
उपट्ठाको अग्गुपट्ठाको" ति आह। अयं उपट्ठाकपरिच्छेदो नाम।

१२. पितिपरिच्छेदो उत्तानत्थो येव।

विहारं पाविसी (दी० नि० २.८) ति कस्मा विहारं पाविसि ?
20 भगवा किर एत्तकं कथेत्वा चिन्तेसि—"न ताव मया सत्तन्नं बुद्धानं
वंसो निरन्तरं मत्थकं पापेत्वा कथितो, अज्ज मयि पन विहारं पविट्ठे
इमे भिक्खू भिय्योसोमत्ताय पुब्बेनिवासञाणं आरब्भ वण्णं कथयिस्सन्ति।
अथाहं आगन्त्वा निरन्तरं बुद्धवंसं कथेत्वा मत्थकं पापेत्वा दस्सामी"
ति भिक्खूनं कथावारस्स ओकासं दत्वा उट्ठायासना विहारं पाविसि।

१. सी०, रो० पोत्थकेसु नत्थि।
२. विचरि—सी०।
३. इममस्स—सी०; इमं अस्स—रो०; तं इमस्स—स्या०।

यञ्चेतं भगवा तन्ति कथेसि, तत्थ कप्पपरिच्छेदो, जातिपरिच्छेदो गोत्तपरिच्छेदो, आयुपरिच्छेदो, बोधिपरिच्छेदो, सावकयुगपरिच्छेदो, सावकसन्निपातपरिच्छेदो, उपट्ठाकपरिच्छेदो[1], पितिपरिच्छेदो ति नविमे[2] वारा आगता, सम्बहुलवारो अनागतो, आनेत्वा पन दीपेतब्बो । 5

८. सम्बहुलवारकथा

B. 15 R. 422

सब्बबोधिसत्तानं हि एकस्मिं कुलवंसानुरूपे पुत्ते जाते निक्खमित्वा पब्बजितब्बं ति अयमेव वंसो, अयं पवेणी । कस्मा ? सब्बञ्ञुबोधिसत्तानं हि मातुकुच्छिं ओक्कमनतो पट्ठाय पुब्बे वुत्तप्पकारानि अनेकानि पाटिहारियानि होन्ति । तत्र नेसं यदि नेव जातनगरं, न पिता, न माता, न भरिया, न पुत्तो पञ्ञायेय्य, "इमस्स नेव जातनगरं, न 10 पिता, न भरिया, न पुत्तो पञ्ञायति, देवो वा सक्को वा मारो वा ब्रह्मा वा एस मञ्ञे, देवानं च ईदिसं पाटिहारियं अनच्छरियं" ति मञ्ञमानो जनो नेव सोतब्बं, न सद्धातब्बं मञ्ञेय्य । ततो अभिसमयो न भवेय्य, अभिसमये असति निरत्थकोव बुद्धुप्पादो, अनिय्यानिकं सासनं होति । तस्मा सब्बबोधिसत्तानं—"एकस्मिं कुलवंसानुरूपे 15 पुत्ते जाते निक्खमित्वा पब्बजितब्बं" ति अयमेव वंसो अयं पवेणी । तस्मा पुत्तादीनं वसेन सम्बहुलवारो आनेत्वा दीपेतब्बो ।

९. सम्बहुलपरिच्छेदवण्णना

तत्थ—

समवत्तक्खन्धो अतुलो, सुप्पबुद्धो च उत्तरो ।

सत्थवाहो विजितसेनो, राहुलो भवति सत्तमो ति ।। 20

एते ताव सत्तन्नम्पि बोधिसत्तानं[3] अनुक्कमेनेव सत्त पुत्ता वेदितब्बा ।

१. उपट्ठाकभिक्खु०—सी० । २. नवेवावारा—सी०, रो० ।
३. बुद्धानं—सी०, स्या०, रो० ।

तत्थ राहुलभद्दे ताव जाते पण्णं आहरित्वा महापुरिसस्स हत्थे ठपयिंसु। अथस्स तावदेव सकलसरीरं खोभेत्वा पुत्तसिनेहो अट्ठासि। सो चिन्तेसि—"एकस्मिं ताव जाते एवरूपो पुत्तसिनेहो, परोसहस्सं किर मे पुत्ता भविस्सन्ति, तेसु एकेकस्मिं जाते इदं सिनेहबन्धनं एवं वड्ढन्तं 5 दुब्भेज्जं[1] भविस्सति, 'राहु[2] जातो,' 'बन्धनं जातं' ति" आह। तं दिवसमेव च रज्जं पहाय निक्खन्तो एस नयो सब्बेसं पुत्तुप्पत्तियं ति। अयं पुत्तपरिच्छेदो।

B. 16

सुतना[3] सब्बकामा च, सुचित्ता अथ रोचिनी[4]।
रुचग्गती[5] सुनन्दा च, बिम्बा भवति सत्तमा ति॥

10 एता तेसं सत्तन्नम्पि पुत्तानं मातरो अहेसुं। बिम्बादेवी पन राहुलकुमारे जाते राहुलमाता ति पञ्ञायित्थ। अयं भरियपरिच्छेदो।

R. 423

विपस्सी ककुसन्धो ति इमे पन द्वे बोधिसत्ता पयुत्तआजञ्ञरथमारुय्ह[6] महाभिनिक्खमनं निक्खमिंसु। सिखी कोणागमनो ति इमे द्वे हत्थिक्खन्धवरगता हुत्वा निक्खमिंसु। वेस्सभू[7] सुवण्णसिविकाय 15 निसीदित्वा निक्खमि। कस्सपो उपरिपासादे महातले निसिन्नोव आनापानचतुत्थज्झानं निब्बत्तेत्वा झाना वुट्ठाय तं[8] झानं पादकं कत्वा[8]—"पासादो उग्गन्त्वा[9] बोधिमण्डे ओतरतू" ति अधिट्ठासि। पासादो आकासेन गन्त्वा बोधिमण्डे ओतरि। महापुरिसो पि ततो ओतरित्वा भूमियं ठत्वा—"पासादो यथाठाने येव पतिट्ठातू" ति 20 चिन्तेसि। सो यथाठाने पतिट्ठासि। महापुरिसो पि सत्त दिवसानि पधानमनुयुञ्जित्वा बोधिपल्लङ्के निसीदित्वा सब्बञ्ञुतं[10] पटिविज्झि। अम्हाकं पन बोधिसत्तो कन्थकं अस्सवरमारुय्ह[11] निक्खन्तो ति। अयं यानपरिच्छेदो।

१. दुब्भिज्जं—सी०, स्या०। २. राहुलो—सी०, स्या०, रो०।
३. सुधना—सी०, रो०। ४. रोचनी—सी०, स्या०, रो०।
५. रुच्चगन्ती—सी; रुच्चतिनी—स्या०। ६. छयुत्तं०—सी०, रो०,।
७. ०बोधिसत्तो—स्या०। ८-८. सी०, पोत्थके नत्थि।
९. गन्त्वा—सी०, स्या०, रो०। १०. सब्बञ्ञुतञाणं—स्या०।
११. हय० —सी०।

विपस्सिस्स पन भगवतो योजनप्पमाणे पदेसे विहारो पतिट्ठासि,[1] सिखिस्स तिगावुते, वेस्सभुस्स अड्ढयोजने, ककुसन्धस्स गावुते, कोणागमनस्स अड्ढगावुते, कस्सपस्स वीसतिउसभे। अम्हाकं भगवतो पकतिमानेन सोळसकरीसे, राजमानेन अट्ठकरीसे पदेसे विहारो पतिट्ठितो ति। अयं विहारपरिच्छेदो। विपस्सिस्स पन भगवतो एकरतनायामा 5 विदत्थिवित्थारा अट्ठङ्गुलुब्बेधा सुवण्णिट्ठका कारेत्वा चूळसेन छादेत्वा विहारट्ठानं किणिंसु। सिखिस्स सुवण्णयट्ठिफालेहि[2] छादेत्वा किणिंसु। वेस्सभुस्स सुवण्णहत्थिपादानि कारेत्वा तेसं चूळसेन छादेत्वा किणिंसु। ककुसन्धस्स वुत्तनयेनेव सुवण्णिट्ठकाहि छादेत्वा किणिंसु। कोणागमनस्स वुत्तनयेनेव सुवण्णकच्छपेहि छादेत्वा किणिंसु। कस्सपस्स सुवण्णकट्टी- 10 B. 17 हियेव छादेत्वा किणिंसु। अम्हाकं भगवतो सलक्खणानं कहापणानं चूळसेन छादेत्वा किणिंसु। अयं विहारभूमिग्गहणधनपरिच्छेदो।

तत्थ विपस्सिस्स भगवतो तथा भूमिं किणित्वा विहारं कत्वा R. 424 दिन्नुपट्ठाको पुनब्बसुमित्तो नाम अहोसि, सिखिस्स[3] सिरिवड्ढनो नाम, वेस्सभुस्स सोत्थियो नाम, ककुसन्धस्स अच्चुतो नाम, कोणागमनस्स 15 उग्गो नाम कस्सपस्स सुमनो नाम, अम्हाकं भगवतो सुदत्तो नाम। सब्बे चेते गहपतिमहासाला सेट्ठिनो अहेसुं ति। अयं उपट्ठाकपरिच्छेदो नाम।

अपरानि चत्तारि अविजहितट्ठानानि नाम होन्ति। सब्बबुद्धानं हि बोधिपल्लङ्को अविजहितो, एकस्मिं येव ठाने होती। धम्मचक्कप्पवत्तनं 20 इसिपतने मिगदाये अविजहितमेव होति। देवोरोहनकाले सङ्कस्सनगरद्वारे पठमपदगण्ठिका[4] अविजहिताव होति। जेतवने गन्धकुटिया चत्तारि मञ्चपादट्ठानानि अविजहितानेव होन्ति। विहारो पन खुद्दको पि महन्तो पि होति। विहारो पि न विजहितो येव[5] नगरं पन विजहति।

१. पतिट्ठितो—स्या०।
२. सुवण्णिट्ठिकाकपालेहि—सी०, रो०।
३. ० भगवतो—स्या०।
४. ० गण्ठी—सी०, रो०; गण्डिता—स्या०।
५. विजहति—सी०, स्या०, रो०।

यदा नगरं पाचीनतो होति, तदा विहारो पच्छिमतो; यदा नगरं दक्खिणतो, तदा विहारो उत्तरतो; यदा नगरं पच्छिमतो, तदा विहारो पाचीनतो; यदा नगरं उत्तरतो, तदा विहारो दक्खिणतो । इदानि पन नगरं उत्तरतो, विहारो दक्खिणतो ।

5 सब्बबुद्धानं च आयुवेमत्तं, पमाणवेमत्तं, कुलवेमत्तं, पधानवेमत्तं, रस्मिवेमत्तं ति पञ्च वेमत्तानि होन्ति । **आयुवेमत्तं** नाम केचि दीघायुका होन्ति, केचि अप्पायुका । तथा हि दीपङ्करस्स वस्ससतसहस्सं आयुप्पमाणं अहोसि, अम्हाकं भगवतो वस्ससतं आयुप्पमाणं[1] । **पमाणवेमत्तं** नाम केचि दीघा होन्ति केचि रस्सा । तथा हि दीपङ्करो 10 असीतिहत्थो अहोसि, सुमनो नवुतिहत्थो, अम्हाकं भगवा अट्ठारसहत्थो ।

B. 18 **कुलवेमत्तं** नाम केचि खत्तियकुले निब्बत्तं ति, केचि ब्राह्मणकुले । **पधानवेमत्तं** नाम केसञ्चि पधानं इत्तरकालमेव होति, यथा कस्सपस्स भगवतो । केसञ्चि अद्धनियं, यथा अम्हाकं भगवतो ।

15 **रस्मिवेमत्तं** नाम मङ्गलस्स भगवतो सरीररस्मि दससहस्सिलोक- R. 425 धातुप्पमाणा अहोसि । अम्हाकं भगवतो समन्ता ब्याममत्ता । तत्र रस्मिवेमत्तं अज्झासयप्पटिबद्धं । यो यत्तकं इच्छति, तस्स तत्तकं सरीरप्पभा फरति । मङ्गलस्स पन निच्चम्पि दससहस्सिलोकधातुं फरतू ति अज्झासयो अहोसि । पटिविद्धगुणेसु पन कस्सचि वेमत्तं नाम 20 नत्थि ।

अपरं अम्हाकं येव भगवतो सहजातपरिच्छेदं च नक्खत्तपरिच्छेदं च दीपेसुं । सब्बञ्ञुबोधिसत्तेन किर सद्धिं राहुलमाता, आनन्दत्थेरो, छन्नो, कन्थको[2] निधिकुम्भो, महाबोधि, काळुदायी ति इमानि सत्त सहजातानि । महापुरिसो च उत्तरासाळ्हनक्खत्तेनेव मातुकुच्छिं ओक्कमि, 25 महाभिनिक्खमनं निक्खमि, धम्मचक्कं पवत्तेसि, यमकपाटिहारियं

१. सी०, स्या०, रो० पोत्थकेसु नत्थि । २. कण्डको—म० ।

अकासि । विसाखानक्खत्तेन जातो च अभिसम्बुद्धो च परिनिब्बुतो च । माघनक्खत्तेनस्स[1] सावक सन्निपातो च अहोसि, आयुसङ्खारोस्सज्जनञ्च अस्सयुजनक्खत्तेन देवोरोहनं ति एत्तकं आहरित्वा दीपेतब्बं । अयं सम्बहुलपरिच्छेदो नाम ।

१३. इदानि अथ खो तेसं भिक्खूनं (दी.नि. २.८) ति आदीसु ते भिक्खू–"आवुसो, पुब्बेनिवासस्स नाम अयं गति, यदिदं चुतितो पट्ठाय पटिसन्धिआरोहनं । यं पन इदं पटिसन्धितो पट्ठाय पच्छामुखं ञाणं पेसेत्वा चुतिं गन्तब्बं, इदं अतिगरुकं[2] । आकासे पदं दस्सेन्तो विय भगवा कथेसी" ति[3] अतिविम्हयजाता हुत्वा—"अच्छरियं, आवुसो," ति आदीनि वत्वा पुन अपरम्पि कारणं दस्सेन्तो[4]—"यत्र हि नाम तथागतो" ति आदिमाहंसु ।

तत्थ यत्र हि नामा ति अच्छरियत्थे निपातो । यो नाम तथागतो ति अत्थो । छिन्नपपञ्चे ति एत्थ पपञ्चा नाम तण्हा मानो दिट्ठी ति इमे तयो किलेसा । छिन्नवटुमे ति एत्थ वटुमं ति कुसलाकुसलकम्मवट्टं वुच्चति । परियादिन्नवट्टे ति तस्सेव वेवचनं, परियादिन्नसब्बकम्मवट्टे ति अत्थो । सब्बदुक्खवीतिवत्ते ति सब्बं विपाकवट्टसङ्खातं दुक्खं वीतिवत्ते । अनुस्सरिस्सती ति इदं यत्रा ति निपातवसेन अनागतवचनं। अत्थो पनेत्थ अतीतवसेन वेदितब्बो । भगवा हि ते बुद्धे अनुस्सरि, न इदानि अनुस्सरिस्सति । एवंसीला ति मग्गसीलेन फलसीलेन लोकियलोकुत्तरसीलेन एवंसीला । एवंधम्मा ति एत्थ समाधिपक्खा धम्मा अधिप्पेता, मग्गसमाधिना फलसमाधिना लोकियलोकुत्तरसमाधिना । एवंसमाधिनो ति[5] अत्थो । एवंपञ्ञा ति मग्गपञ्ञादिवसेनेव एवंपञ्ञा । एवंविहारी ति एत्थ पन हेट्ठा समाधिपक्खानं धम्मानं गहितत्ता विहारो गहितो व । पुन कस्मा गहितमेव गण्हाती ति चे । न इदं

5 10 15 B. 19 R. 426 20

१. ० चस्स—सी ।
२. गरुकं—सी० ।
३. कथेती ति—सी०, स्या०, रो० ।
४. ० दस्सेन्ता—स्या० ।
५. एवं समाधिना—सी ।

गहितमेव, इदञ्हि निरोधसमापत्ति दीपनत्थं वुत्तं । तस्मा एवं निरोधसमापत्तिविहारी ते भगवन्तो अहेसुं ति एवमेत्थ अत्थो दट्ठब्बो ।

एवंविमुत्ता ति एत्थ विक्खम्भनविमुत्ति, तदङ्गविमुत्ति, समुच्छेद-
5 विमुत्ति, पटिप्पस्सद्धिविमुत्ति, निस्सरणविमुत्ती ति पञ्चविधा विमुत्ति । तत्थ अट्ठ समापत्तियो सयं विक्खम्भितेहि नीवरणादीहि विमुत्तत्ता विक्खम्भनविमुत्ती ति सङ्ख्यं गच्छन्ति । अनिच्चानुपस्सनादिका सत्तानुपस्सना सयं तस्स तस्स पच्चनीकङ्गवसेन परिच्चत्ताहि निच्चसञ्ञादीहि विमुत्तत्ता तदङ्गविमुत्ती ति सङ्ख्यं गच्छन्ति । चत्तारो
10 अरियमग्गा सयं समुच्छिन्नेहि किलेसेहि विमुत्तत्ता समुच्छेदविमुत्ती ति सङ्ख्यं गच्छन्ति । चत्तारि सामञ्ञफलानि मग्गानुभावेन किलेसानं पटिप्पस्सद्धन्ते उप्पन्नत्ता पटिप्पस्सद्धिविमुत्ती ति सङ्ख्यं गच्छन्ति । निब्बानं सब्बकिलेसेहि निस्सटत्ता अपगतत्ता दूरे ठितत्ता निस्सर-णविमुत्ती ति सङ्ख्यं गच्छति[1] । इति इमासं पञ्चन्नं विमुत्तीनं वसेन—
15 "एवं विमुत्ता" ति एत्थ अत्थो दट्ठब्बो ।

१४. पटिसल्लाना वुट्ठितो (दी० नि० २.९) ति एकीभावा वुट्ठितो ।

१६. इतो सो, भिक्खवे—ति को[2] अनुसन्धि ? इदञ्हि सुत्तं—"तथागतस्सेवेसा, भिक्खवे, धम्मधातु सुप्पटिविद्धा" ति च "देवतापि
20 तथागतस्स एतमत्थं आरोचेसुं" ति च इमेहि द्वीहि पदेहि आबद्धं । तत्थ देवतारोचनपदं सुत्तन्तपरियोसाने देवचारिककोलाहलं दस्सेन्तो विचारेस्सति । धम्मधातुपदानुसन्धिवसेन पन अयं देसना आरद्धा । तत्थ खत्तियो जातिया ति आदीनि एकादसपदानि निदानकण्डे वुत्तनयेनेव वेदितब्बानि ।

R. 427
B. 20

१०. बोधिसत्तधम्मतावण्णना

25 १७. अथ खो भिक्खवे विपस्सी बोधिसत्तो(दी०नि० २.११)ति आदीसु पन विपस्सी ति तस्स नामं । तञ्च खो विविधे अत्थे पस्सनकुसलताय

१. गतं—सी०, रो० । २. का—स्या० ।

लद्धं । बोधिसत्तो ति पण्डितसत्तो बुज्झनकसत्तो । बोधिसङ्खातेसु वा चतूसु मग्गेसु सत्तो आसत्तो लग्गमानसो ति बोधिसत्तो । सतो सम्पजानो ति एत्थ सतो ति सति येव । सम्पजानो ति ञाणं । सतिं सूपट्ठितं कत्वा ञाणेन परिच्छिन्दित्वा मातुकुच्छिं ओक्कमी ति अत्थो । ओक्कमी ति इमिना चस्स ओक्कन्तभावो पाळियं दस्सितो, न 5 ओक्कमनक्कमो । सो पन यस्मा अट्ठकथं आरुळ्हो, तस्मा एवं वेदितब्बो—

"सब्बबोधिसत्ता हि समतिंस पारमियो पूरेत्वा, पञ्च महा-परिच्चागे परिच्चजित्वा, ञातत्थचरिय लोकत्थचरिय-बुद्धचरियानं कोटिं पत्वा, वेस्सन्तरसदिसे ततिये अत्तभावे ठत्वा, सत्त महादानानि 10 दत्वा, सत्तक्खत्तुं पथविं कम्पेत्वा, कालं कत्वा, दुतियचित्तवारे तुसितभवने[1] निब्बत्तन्ति । विपस्सी बोधिसत्तो पि तथेव कत्वा तुसितपुरे निब्बत्तित्वा सट्ठिसतसहस्साधिका सत्तपञ्ञास वस्सकोटियो तत्थ अट्ठासि । अञ्ञदा पन दीघायुकदेवलोके निब्बत्ता बोधिसत्ता न यावतायुकं तिट्ठन्ति । कस्मा ? तत्थ पारमीनं दुप्पूरणीयत्ता । ते 15 अधिमुत्तिकालकिरियं कत्वा मनुस्सपथे येव निब्बत्तन्ति । पारमीनं[2] पूरेन्तो पन यथा इदानि एकेन अत्तभावेन सब्बञ्ञुतं उपनेतुं सक्कोन्ति, एवं सब्बसो पूरितत्ता तदा विपस्सी बोधिसत्तो तत्थ यावतायुकं अट्ठासि । देवतानं पन—"मनुस्सानं गणनावसेन इदानि सत्तहि दिवसेहि चुति भविस्सती" ति पञ्च पुब्बनिमित्तानि उप्पज्जन्ति— 20 माला मिलायन्ति, वत्थानि किलिस्सन्ति, कच्छेहि सेदा मुच्चन्ति, काये दुब्बण्णियं ओक्कमति, देवो देवासने न सण्ठाति ।

तत्थ माला ति पटिसन्धिग्गहणदिवसे पिळन्धनमाला । ता किर R. 428 B. 21 सट्ठिसतसहस्साधिका सत्तपण्णास वस्सकोटियो अमिलायित्वा तदा मिलायन्ति । वत्थेसु पि एसेव नयो । एत्तकं पन कालं देवानं नेव सीतं न 25 उण्हं होती । तस्मिं काले सरीरा बिन्दुबिन्दुवसेन सेदा मुच्चन्ति । एत्तकं

१. तुसितपुरे—सी०, रो० । २. पारमियो—स्या० ।

च कालं तेसं सरीरे खण्डिच्चपालिच्चादिवसेन विवण्णता न पञ्ञायति। देवधीता सोळसवस्सुद्देसिका विय खायन्ति। देवपुत्ता वीसतिवस्सुद्देसिका विय खायन्ति। मरणकाले पन तेसं किलन्तरुपो अत्तभावो होती। एत्तकं च तेसं कालं देवलोके उक्कण्ठिता नाम नत्थि। मरणकाले पन 5 निस्ससन्ति विजम्भन्ति, सके आसने नाभिरमन्ति। इमानि पन[1] पुब्बनिमित्तानि यथा लोके महापुञ्ञानं राजराजमहामत्तादीनं येव उक्कापातभूमिचालचन्दग्गाहादीनि निमित्तानि पञ्ञायन्ति, न सब्बेसं; एवं[2] महेसक्खदेवतानं येव पञ्ञायन्ति, न सब्बेसं। यथा च मनुस्सेसु पुब्बनिमित्तानि नक्खत्तपाठकादयो व जानन्ति, न सब्बे; एवं तानि पि 10 न सब्बदेवता जानन्ति, पण्डिता एव पन जानन्ति। तत्थ ये मन्देन कुसलकम्मेन निब्बत्ता देवपुत्ता, ते तेसु उप्पन्नेसु—"इदानि को जानाति, 'कुहिं निब्बत्तेस्सामा' ति" भायन्ति। ये महापुञ्ञा, ते "अम्हेहि दिन्नं दानं, रक्खितं सीलं भावितं भावनं आगम्म उपरि देवलोकेसु सम्पत्तिं अनुभविस्सामा" ति न भायन्ति। विपस्सी बोधिसत्तो पि 15 तानि पुब्बनिमित्तानि दिस्वा "इदानि अनन्तरे अत्तभावे बुद्धो भविस्सामी" ति न भायति[3]। अथस्स तेसु निमित्तेसु पातुभूतेसु दससहस्सचक्कवाळदेवता सन्निपतित्वा—"मारिस, तुम्हेहि दस पारमियो पूरेन्तेहि न सक्कसम्पत्ति, न मारसम्पत्तिं, न ब्रह्मसम्पत्ति, न चक्कवत्तिसम्पत्तिं पत्थेन्तेहि पूरिता, लोकनित्थरणत्थाय पन बुद्धत्तं पत्थयमानेहि 20 पूरिता। सो वो[4], इदानि कालो, मारिस, बुद्धत्ताय, समयो, मारिस, बुद्धत्ताया' ति याचन्ति"।

अथ महासत्तो तासं देवतानं पटिञ्ञं अदत्वा व कालदीपदेसकुलजनेत्तिआयुपरिच्छेदवसेन पञ्चमहाविलोकनं नाम विलोकेसि। तत्थ R. 429 "कालो नु खो, न कालो" ति पठमं कालं विलोकेसि। तत्थ वस्ससत- 25 सहस्सतो उद्धं वड्ढितआयुकालो कालो नाम न होति। कस्मा? तदा B. 22 हि सत्तानं जातिजरामरणानि न पञ्ञायन्ति। बुद्धानं च धम्मदेसना

१. ० पञ्च—स्या०। २. एवमेवं—सी०, स्या०, रो०।
३. भायि—सी०, स्या०, रो०। ४. ते—स्या०।

नाम तिलक्खणमुत्ता[1] नत्थि। ते तेसं—"अनिच्चं दुक्खमनत्ता" ति कथेन्तानं—'किं नामेतं कथेन्ती" ति नेव सोतुं, न सद्दहितुं मञ्ञन्ति। ततो अभिसमयो न होति। तस्मिं असति अनिय्यानिकं सासनं होति। तस्मा सो अकालो। वस्ससततो ऊनआयुकालो पि कालो न होति। कस्मा? तदा हि सत्ता उस्सन्नकिलेसा होन्ति। उस्सन्नकिलेसानं च दिन्नो ओवादो ओवादट्ठाने न तिट्ठति, उदके दण्डराजि विय खिप्पं विगच्छति। तस्मा सो पि अकालो व। वस्ससतसहस्सतो पट्ठाय हेट्ठा, वस्ससततो पट्ठाय उद्धं आयुकालो कालो नाम। तदा च असीतिवस्ससहस्सायुका मनुस्सा। अथ महासत्तो—"निब्बत्तितब्बकालो" ति कालं पस्सि।

ततो दीपं विलोकेन्तो सपरिवारे चत्तारो दीपे ओलोकेत्वा—"तीसु दीपेसु बुद्धा न निब्बत्तन्ति, जम्बुदीपे येव निब्बत्तन्ती" ति दीपं पस्सि।

ततो—"जम्बुदीपो[2] नाम महा, दसयोजनसहस्सपरिमाणो, कतरस्मिं नु खो पदेसे बुद्धा निब्बत्तन्ती" ति देसं विलोकेन्तो[3] मज्झिमदेसं पस्सि। मज्झिमदेसो नाम—"पुरत्थिमाय दिसाय गजङ्गलं नाम निगमो" (म० व० २१६) ति आदिना नयेन विनये वुत्तो व। सो आयामतो तीणि योजनसतानि, वित्थारतो अड्ढतेय्यानि, परिक्खेपतो नवयोजनसतानी ति। एतस्मिं हि पदेसे बुद्धा पच्चेकबुद्धा अग्गसावका असीति महासावका चक्कवत्तिराजानो[4] अञ्ञे च महेसक्खा खत्तियब्राह्मणगहपतिमहासाला उप्पज्जन्ति। "इदञ्चेत्थ[5] बन्धुमती नाम नगरं। तत्थ मया निब्बत्तितब्बं" ति निट्ठं अगमासि।

ततो कुलं विलोकेन्तो[6]—"बुद्धा नाम लोकसम्मते कुले निब्बत्तन्ति। इदानि च खत्तियकुलं लोकसम्मतं, तत्थ निब्बत्तिस्सामि, बन्धुमा नाम मे राजा पिता भविस्सती" ति कुलं पस्सि।

१. ० विनिमुत्ता—स्या०, रो०। २. दीपो—सी०।
३. ओलोकेन्तो—स्या०। ४. ० राजा—सी०, रो०।
५. इदमेत्थ—सी०। ६. अनु ०—स्या०।

R. 430 ततो मातरं विलोकेन्तो—"बुद्धमाता नाम लोला सुराधुत्ता न होति, कप्पसतसहस्सं पूरितपारमी, जातितो पट्ठाय अखण्डपञ्चसीला

B. 23 होति। अयञ्च बन्धुमती नाम देवी ईदिसा,[१] अयं मे माता भविस्सति। "कित्तकं पनस्सा आयू" ति आवज्जन्तो "दसन्नं मासानं उपरि सत्त

5 दिवसानी" ति पस्सि। इति इमं[२] पञ्चमहाविलोकनं विलोकेत्वा "कालो, मे मारिसा, बुद्धभावाया" ति देवतानं सङ्गहं करोन्तो पटिञ्ञं दत्वा—"गच्छथ, तुम्हे" ति ता देवता उय्योजेत्वा तुसितदेवताहि परिवुतो[३] तुसितपुरे नन्दनवनं पाविसि। सब्बदेवलोकेसु हि नन्दनवनं अत्थि येव। तत्र नं देवता—'इतो[४] चुतो सुगतिं गच्छा[४] ति पुब्बेकतकुसलकम्मोकासं

10 सारयमाना विचरन्ति। सो एवं देवताहि कुसलं सारयमानाहि परिवुतो तत्थ विचरन्तो येव चवि।

एवं चुतो च 'चवामी' ति जानाति, चुतिचित्तं न जानाति। पटिसन्धिं गहेत्वा पि जानाति, पटिसन्धिचित्तमेव न जानाति। "इमस्मिं मे ठाने पटिसन्धिं गहिता' ति एवं पन जानाति। केचि पन थेरा—

15 "आवज्जन-परियायो नाम लद्धुं वट्टति, दुतियततियचित्तवारे एव[५] जानिस्सती" ति वदन्ति। तिपिटकमहासीवत्थेरो पन आह[६]—"महासत्तानं पटिसन्धि न अञ्ञेसं पटिसन्धिसदिसा, कोटिप्पत्तं पन[७] तेसं सतिसम्पजञ्ञं। यस्मा पन तेनेव चित्तेन तं चित्तं ञातुं न सक्का, तस्मा चुतिचित्तं न जानाति। चुतिक्खणे पि[८] 'चवामी' ति जानाति[९]।

20 पटिसन्धिचित्तं न जानाति। 'असुकस्मिं मे ठाने पटिसन्धि गहिता' ति जानाति, तस्मिं काले दससहस्सिलोकधातु कम्पती" ति। एवं सतो सम्पजानो मातुकुच्छिं ओक्कमन्तो पन एकूनवीसतिया पटिसन्धिचित्तेसु मेत्तापुब्बभागस्स सोमनस्ससहगतञाणसम्पयुत्तअसङ्खारिककुसलचित्तस्स

१. एदिसा—सी०, रो०। २. इमानि—सी०, रो०; इदं—स्या०।
३. परिवारितो—सी०, रो०। ४-४. द्विवारं आगतं—सी०।
५. एवं—सी०, रो०। ६. सी०, रो० पोत्थकेसु नत्थि।
७. सी०, रो० पोत्थकेसु नत्थि। ८. एव—स्या०।
९. न जानाति—सी०, रो०।

सदिसमहाविपाकचित्तेन पटिसन्धि गण्हि। महासीवत्थेरो पन उपेक्खा-सहगतेना ति आह। यथा च अम्हाकं भगवा, एवं सो पि आसाळ्ही-पुण्णमायं उत्तरासाळ्हनक्खत्तेनेव पटिसन्धि अग्गहेसि। R. 431

तदा किर पुरे पुण्णमाय सत्तमदिवसतो पट्ठाय विगतसुरापानं मालागन्धादिविभूतिसम्पन्नं नक्खत्तकीळं अनुभवमाना बोधिसत्तमाता सत्तमे दिवसे पातो वुट्ठाय गन्धोदकेन नहायित्वा सब्बालङ्कारविभूसिता वरभोजनं भुञ्जित्वा उपोसथङ्गानि अधिट्ठाय सिरिगब्भं पविसित्वा सिरिसयने निपन्ना निद्दं ओक्कममाना इदं[1] सुपिनं अद्दस—"चत्तारो किर नं महाराजानो सयनेनेव सद्धिं उक्खिपित्वा अनोतत्तदहं नेत्वा नहापेत्वा दिब्बवत्थं[2] निवासेत्वा दिब्बगन्धेहि विलिम्पेत्वा दिब्बपुप्फानि पिळन्धित्वा, ततो अविदूरे रजतपब्बतो, तस्स अन्तो कनकविमानं अत्थि, तस्मिं पाचीनतो सीसं कत्वा निपज्जापेसुं। अथ बोधिसत्तो सेतवरवारणो हुत्वा ततो अविदूरे एको सुवण्णपब्बतो, तत्थ चरित्वा ततो ओरुय्ह रजतपब्बतं अभिरुहित्वा कनकविमानं पविसित्वा मातरं पदक्खिणं कत्वा दक्खिणपस्सं फालेत्वा कुच्छिं पविट्ठसदिसो अहोसि"। 5 B. 24 10 15

अथ पबुद्धा देवी तं सुपिनं रञ्ञो आरोचेसि। राजा विभाताय रत्तिया चतुसट्ठिमत्ते ब्राह्मणपामोक्खे पक्कोसापेत्वा हरितूपलित्ताय लाजादीहि कतमङ्गलसक्काराय भूमिया महारहानि आसनानि पञ्ञपेत्वा तत्थ निसिन्नानं ब्राह्मणानं सप्पिमधुसक्कराभिसङ्खतस्स वरपायासस्स सुवण्णरजतपातियो पूरेत्वा सुवण्णरजतपातीहेव पटिकुज्जित्वा अदासि। अञ्ञेहि च अहतवत्थकपिलगावीदानादीहि नेसं सन्तप्पेसि। अथ नेसं सब्बकामसन्तप्पितानं तं सुपिनं आरोचेत्वा—"किं भविस्सती" ति पुच्छि। ब्राह्मणा आहंसु—"मा चिन्तयि, महाराज, देविया ते कुच्छिम्हि गब्भो पतिट्ठितो, सो च खो पुरिसगब्भो[3] न इत्थिगब्भो, पुत्तो ते भविस्सति। सो सचे अगारं अज्झावसिस्सति, राजा भविस्सति 20 25

१. इमं—स्या०, रो०। २. ० वत्थेहि—स्या०।
३. महा ०—सी०।

चक्कवत्ती[1]। सचे अगारा निक्खम्म पब्बजिस्सति, बुद्धो भविस्सति लोके विवट्टच्छदो" ति। अयं ताव—"मातुकुच्छि ओक्कमी" ति एत्थ वण्णनाक्कमो।

R. 432 **अयमेत्थ धम्मता** ति अयं एत्थ मातुकुच्छिओक्कमने धम्मता, अयं 5 सभावो, अयं नियामो ति वुत्तं होति। **नियामो** च नामेस कम्मनियामो, उतुनियामो, बीजनियामो, चित्तनियामो, धम्मनियामो ति पञ्चविधो। तत्थ कुसलस्स इट्ठविपाकदानं, अकुसलस्स अनिट्ठविपाकदानं ति अयं **कम्मनियामो**। तस्स दीपनत्थं—"न अन्तलिक्खे" (ध.प.२९) ति गाथाय वत्थुनि[2] वत्तब्बानि। अपि च एका किर इत्थी सामिकेन सद्धिं भण्डित्वा B. 25 10 उब्बन्धित्वा मरितुकामा रज्जुपासे[3] गीवं पवेसेसि। अञ्ञतरो पुरिसो वासिं निसेन्तो[4] तं इत्थिकम्मं[5] दिस्वा रज्जुं छिन्दितुकामो—"मा भायि, मा भायी" ति तं समस्सासेन्तो उपधावि। रज्जु आसीविसो हुत्वा अट्ठासि। सो भीतो[6] पलायि। इतरा तत्थेव मरि। एवमादीनि चेत्थ वत्थूनि दस्सेतब्बानि।

15 तेसु तेसु जनपदेसु तस्मिं तस्मिं काले एकप्पहारेनेव रुक्खानं पुप्फ-फलगहणादीनि, वातस्स वायनं अवायनं, आतपस्स तिक्खता मन्दता, देवस्स वस्सनं अवस्सनं, पदुमानं दिवा विकसनं रत्तिं मिलायनं ति एवमादि **उतुनियामो**।

यं पनेतं सालिबीजतो सालिफलमेव, मधुरतो मधुरसं येव, तित्ततो 20 तित्तरसं येव फलं होति, अयं **बीजनियामो**।

पुरिमा पुरिमा चित्तचेतसिका धम्मा पच्छिमानं पच्छिमानं चित्त-चेतसिकानं धम्मानं उपनिस्सयपच्चयेन पच्चयो ति एवं यदेतं चक्खु-विञ्ञाणादीनं अनन्तरा सम्पटिच्छनादीनं निब्बत्तनं, अयं **चित्तनियामो**।

१. ० धम्मिको धम्मराजा—स्या०। २. ० च—सी०, रो०।
३. ० पासेहि—सी०, रो०। ४. निसेधेन्तो—स्या०।
५. सी०, स्या०, रो० पोत्थकेसु नत्थि। ६. ० हुत्वा—स्या०।

या पनेसा बोधिसत्तानं मातुकुच्छिओक्कमनादीसु दससहस्सिलोकधातु-कम्पनादीनं पवत्ति, अयं **धम्मनियामो** नाम। तेसु इध धम्मनियामो अधिप्पेतो। तस्मा तमेवत्थं दस्सेन्तो **धम्मता एसा भिक्खवे** ति आदि-माह।

तत्थ **कुच्छि ओक्कमती** (दी० नि० २.११) ति एत्थ कुच्छि 5 ओक्कन्तो होती ति अयमेवत्थो। ओक्कन्ते हि तस्मिं एवं होति, न R. 433 ओक्कममाने। **अप्पमाणो** ति वुड्ढिप्पमानो, विपुलो ति अत्थो। **उळारो** (दी० नि० २.११) ति तस्सेव वेवचनं। "उळारानि उळारानि खादनीयानि खादन्ती" (म० नि० १.२९२) ति आदीसु हि मधुरं उळारं ति वुत्तं। "उळाराय खलु भवं वच्छायनो समणं गोतमं 10 पसंसाय पसंसती" (म०नि० १.२२६) ति आदीसु सेट्ठं उळारं ति वुत्तं। इध पन विपुलं अधिप्पेतं। **देवानं देवानुभावं** ति एत्थ देवानं अयमानुभावो निवत्थवत्थस्स पभा द्वादसयोजनानि फरति, तथा सरीरस्स, तथा अलङ्कारस्स, तथा विमानस्स, तं अतिक्कमित्वा ति अत्थो। 15

लोकन्तरिका ति तिण्णं तिण्णं चक्कवाळानं अन्तरा एकेको[1] B. 26 लोकन्तरिको[1] होति। तिण्णं सकटचक्कानं वा तिण्णं पत्तानं वा अञ्ञमञ्ञं आहच्च ठपितानं मज्झे ओकासो विय। सो पन लोकन्तरि-कनिरयो परिमाणतो[2] अट्ठयोजनसहस्सो होति। **अघा** ति निच्चविवटा। **असंवुता** ति हेट्ठा पि अप्पतिट्ठा। **अन्धकारा** ति तमभूता। **अन्धकार-** 20 **तिमिसा** ति चक्खुविञ्ञाणुप्पत्तिनिवारणतो अन्धभावकरणतिमिसेन समन्नागता। तत्थ किर चक्खुविञ्ञाणं न जायति। **एवंमहिद्धिका** ति चन्दिमसूरिया किर एकप्पहारेनेव तीसु दीपेसु अञ्ञायन्ति, एवं महिद्धिका। एकेकाय दिसाय नव नव योजनसतसहस्सानि अन्धकारं विधमित्वा आलोकं दस्सेन्ति, **एवंमहानुभावा**। **आभाय नानुभोन्ती** 25

१-१. एकेका लोकन्तरिका—सी०, रो०; ० लोकन्तरिके—स्या०। २. वित्थारतो—स्या०।

ति अत्तनो पभाय नप्पहोन्ति । ते किर चक्कवाळपब्बतस्स वेमज्झेन विचरन्ति, चक्कवाळपब्बतञ्च अतिक्कम्म लोकन्तरिकनिरया[१] । तस्मा ते तत्थ आभाय नप्पहोन्ति ।

येपि तत्थ सत्ता ति ये पि तस्मिं[२] लोकन्तरिकमहानिरये सत्ता 5 उप्पन्ना । किं पन कम्मं कत्वा तत्थ उप्पज्जन्ती ति । भारियं दारुणं मातापितूनं धम्मिकसमणब्राह्मणानञ्च उपरि अपराधं, अञ्ञञ्च दिवसे दिवसे पाणवधादिसाहसिककम्मं कत्वा उप्पज्जन्ति, तम्बपण्णिदीपे अभय-चोरनागचोरादयो विय । तेसं अत्तभावो ति गावुतिको होति, वग्गुलीनं विय दीघनखा होन्ति । ते रुक्खे वग्गुलियो विय नखेहि चक्कवाळपब्बते[३] R. 434 10 लग्गन्ति । यदा संसप्पन्ता अञ्ञमञ्ञस्स हत्थपासं गता होन्ति, अथ "भक्खो नो लद्धो" ति मञ्ञमाना तत्थ वावटा विपरिवत्तित्वा लोक-सन्धारकउदके पतन्ति । वाते पहरन्ते पि मधुकफलानि विय छिज्जित्वा उदके पतन्ति । पतितमत्ताव अच्चन्तखारे उदके पिट्ठपिण्डि[४] विय विलीयन्ति ।

15 अञ्ञे पि किर भो सन्ति सत्ता ति भो यथा मयं महादुक्खं अनुभवाम, एवं अञ्ञे किर सत्ता पि इमं दुक्खमनुभवनत्थाय इधूपपन्ना ति तं दिवसं पस्सन्ति । अयं पन ओभासो एकयागुपानमत्तम्पि न तिट्ठति, अच्छरासङ्घाटमत्तमेव विज्जोभासो विय निच्छरित्वा—किं इदं'' ति भणन्तानं येव अन्तरधायति । सङ्कम्पती ति समन्ततो 20 कम्पति । इतरद्वयं पुरिमपदस्सेव वेवचनं । पुन अप्पमाणो चा ति आदि निगमनत्थं वुत्तं ।

B. 27 चत्तारो नं देवपुत्ता चातुद्दिसं रक्खाय उपगच्छन्ती (दी० नि० २.१२) ति एत्थ चत्तारो ति चतुन्नं महाराजानं वसेन वुत्तं । दस-सहस्सचक्कवाळेसु पन चत्तारो चत्तारो कत्वा चत्तालीससहस्सानि 25 होन्ति । तत्थ इमस्मिं चक्कवाळे महाराजानो खग्गहत्था बोधिसत्तस्स

१. निरयो—सी०, स्या०, रो० ।
२. तत्थ—सी०, स्या०, रो० ।
३. ० पादे—सी०, रो० ।
४. ० पिण्डं—सी०, स्या०, रो० ।

आरक्खत्थाय उपगन्त्वा सिरिगब्भं पविट्ठा[1]। इतरे गब्भद्वारतो पट्ठाय अवरुद्धके पंसुपिसाचकादियक्खगणे पटिक्कमापेत्वा[2] याव चक्कवाळा आरक्खं गण्हिंसु।

किमत्थाय पनायं रक्खा? ननु पटिसन्धिक्खणे कललकालतो पट्ठाय सचे पि कोटिसतसहस्समारा कोटिसतसहस्ससिनेरुं उक्खिपित्वा बोधि- 5
सत्तस्स वा बोधिसत्तमातुया वा अन्तरायकरणत्थं आगच्छेय्युं, सब्बे अन्तराव अन्तरधायेय्युं। वुत्तम्पि चेतं भगवता रुहिरुप्पादवत्थुस्मि—
"अट्ठानमेतं, भिक्खवे, अनवकासो, यं परूपक्कमेन तथागतं जीविता वोरोपेय्य। अनुपक्कमेन, भिक्खवे, तथागता परिनिब्बायन्ति। गच्छथ,
तुम्हे भिक्खवे, यथाविहारं, अरक्खिया, भिक्खवे तथागता" (चु० व० 10
२९४) ति। एवमेव[3], तेन[3] परूपक्कमेन न तेसं जीवितन्तरायो अत्थि।
सन्ति खो पन अमनुस्सा विरूपा दुद्दसिका भेरवरूपा मिगपक्खिनो, येसं R. 435
रूपं वा दिस्वा सद्दं वा सुत्वा बोधिसत्तमातु भयं वा सन्तासो वा उप्पज्जेय्य, तेसं निवारणत्थाय रक्खं अग्गहेसुं। अपिच बोधिसत्तस्स
पुञ्ञतेजेन सञ्जातगारवा अत्तनो गारवचोदिता पि ते एवमकंसु। 15

किं पन ते अन्तोगब्भं पविसित्वा ठिता चत्तारो महाराजानो बोधिसत्तस्स मातुया अत्तानं दस्सेन्ति, न दस्सेन्ती ति? नहानमण्डन-
भोजनादिसरीरकिच्चकाले न दस्सेन्ति, सिरिगब्भं पविसित्वा वरसयने निपन्नकाले पन दस्सेन्ति। तत्थ किञ्चा पि अमनुस्सदस्सनं नाम
मनुस्सानं सप्पटिभयं होति, बोधिसत्तस्स माता पन अत्तनो चेव पुत्तस्स 20
च पुञ्ञानुभावेन ते दिस्वा न भायति, पकतिअन्तेपुरपालकेसु विय अस्सा एतेसु चित्तं उप्पज्जति।

पकतिया सीलवती ति सभावेनेव सीलसम्पन्ना। अनुप्पन्ने किर बुद्धे मनुस्सा तापसपरिब्बाजकानं सन्तिके वन्दित्वा उक्कुटिकं निसीदित्वा
सीलं गण्हन्ति। बोधिसत्तमाता पि[4] कालदेवलस्स इसिनो सन्तिके सीलं 25 B. 28

१. पविसित्वा—स्या०। २. पटिक्कमापेन्ता—सी०।
३-३. एवमेतेन—सी०। ४. अम्हाकं ०—स्या०।

गण्हाति। बोधिसत्ते पन कुच्छिगते अञ्ञस्स पादमूले निसीदितुं नाम न सक्का, समानासने निसीदित्वा गहितसीलम्पि आवज्जनकरणमत्तं[१] होति। तस्मा सयमेव सीलं अग्गहेसी ति वुत्तं होति।

पुरिसेसू ति बोधिसत्तस्स पितरं आदिं कत्वा केसुचि[२] मनुस्सेसु 5 पुरिसाधिप्पायचित्तं नुप्पज्जति। बोधिसत्तमातुरूपं पन कुसला सिप्पिका पोत्थकम्मादीसु पि कातुं न सक्कोन्ति। तं दिस्वा पुरिसस्स रागो नुप्पज्जती ति न सक्का वत्तुं। सचे पन तं रत्तचित्तो उपसङ्कमितुकामो होति, पादा न वहन्ति दिब्बसङ्खलिका विय बज्झन्ति। तस्मा—"अनतिक्कमनीया" ति आदि वुत्तं।

10 **पञ्चन्नं कामगुणानं** ति पुब्बे कामगुणूपसञ्हितं ति इमिना पुरिसाधिप्पायवसेन वत्थुपरिक्खेपो कतो[३], इध आरम्मणप्पटिलाभो दस्सितो। तदा किर देविया एवरूपो पुत्तो कुच्छि[४] उपपन्नो ति सुत्वा R. 436 समन्ततो राजानो महग्घआभरणतूरियादिवसेन पञ्चद्वारारम्मणवत्थुभूतं पण्णाकारं पेसेन्ति। बोधिसत्तस्स च बोधिसत्तमातु[५] च कतकम्मस्स 15 उस्सन्नत्ता लाभसक्कारस्स पमाणपरिच्छेदो नत्थि[६]।

अकिलन्तकाया ति यथा अञ्ञा इत्थियो गब्भभारेन किलमन्ति, हत्थपादा उद्धुमातत्तादीनि, पापुणन्ति एवं तस्सा कोचि किलमथो नाहोसि। **तिरोकुच्छिगतं** ति अन्तोकुच्छिगतं। **पस्सती** ति कललादिकालं अतिक्कमित्वा सञ्जातअङ्गपच्चङ्ग 20 अहीनिन्द्रियभावं उपगतं येव पस्सति। किमत्थं पस्सति। सुखवासत्थं येव[७]। यथेव हि माता पुत्तेन सद्धिं निपन्ना[८] वा निसिन्ना वा—"हत्थं वास्स पादं वा ओलम्बन्तं उक्खिपित्वा सण्ठपेस्सामी" ति सुखवासत्थं

१. आवञ्ञाकरणमत्तं—सी०, रो०; अवमञ्ञा—स्या०।
२. केचि—सी०।
३. कथितो—सी०, रो०।
४. कुच्छिम्हि—स्या०, रो०।
५. ० मातुया—सी०, रो०।
६. नाम ०—सी०, रो०।
७. सी०, स्या०, रो०, पोत्थकेसु नत्थि।
८. सी०, पोत्थके नत्थि।

पुत्तं ओलोकेति, एवं बोधिसत्तमाता पि यं तं मातु उट्ठानगमनपरिवत्तन-निसज्जादीसु उण्हसीतलोणिकतित्तककटुकाहारअज्झोहरणकालेसु च गब्भस्स दुक्खं उप्पज्जति । "अत्थि नु खो मे तं पुत्तस्सा[1]" ति सुखवासत्थं ओलोकयमाना[2] पल्लङ्कं आभुजित्वा निसिन्नं बोधिसत्तं पस्सति । यथा हि अञ्ञे अन्तोकुच्छि गता पक्कासयं अवत्थरित्वा 5 आमासयं उक्खिपित्वा उदरपटलं पिट्ठितो कत्वा पिट्ठिकण्डकं निस्साय उक्कुटिकं द्वीसु मुट्ठीसु हनुकं ठपेत्वा देवे वस्सन्ते रुक्खसुसिरे मक्कटा B. 29 विय निसीदन्ति, न एवं बोधिसत्तो । बोधिसत्तो पन पिट्ठिकण्डकं पिट्ठितो कत्वा धम्मासने धम्मकथिको विय पल्लङ्कं आभुजित्वा पुरत्थाभिमुखो[3] निसीदति । पुब्बे कतकम्मं पनस्सा वत्थुं सोधेति, सुद्धे वत्थुम्हि 10 सुखुमच्छविलक्खणं निब्बत्तति । अथ नं कुच्छितचो पटिच्छादेतुं[4] न सक्कोति, ओलोकेन्तिया बहिठितो विय पञ्ञायति । तमत्थं उपमाय विभावेन्तो भगवा सेय्यथापी ति आदिमाह । बोधिसत्तो पन अन्तो-कुच्छिगतो मातरं न[5] पस्सति । न हि अन्तोकुच्छि यं चक्खुविञ्ञाणं उप्पज्जति । 15

कालं करोती (दी० नि० २.१३) ति न विजातभावपच्चया, आयुपरिक्खयेनेव । बोधिसत्तेन वसितट्ठानञ्हि चेति यकुटिसदिसं होति, अञ्ञेसं अपरिभोगारहं । न च सक्का बोधिसत्तमातरं अपनेत्वा अञ्ञं R. 437 अग्गमहेसिट्ठाने ठपेतुं ति तत्तकंयेव बोधिसत्तमातु आयुप्पमाणं होति । तस्मा तदा कालं करोति । कतरस्मिं पन वये कालं करोती ति ? 20 मज्झिमवये । पठमवयस्मिञ्हि सत्तानं अत्तभावे छन्दरागो बलवा होति । तेन तदा सञ्जातगब्भा इत्थी गब्भं अनुरक्खितुं न सक्कोति, गब्भो बह्वाबाधो होति । मज्झिमवयस्स पन द्वे कोट्ठासे अतिक्कम्म ततिये कोट्ठासे वत्थु विसदं होति । विसदे[6] वत्थुम्हि निब्बत्तदारका अरोगा होन्ति,

१. पुत्तस्सा पि—सी०, रो० । २. बोधिसत्तं०—सी०, स्या०, रो० ।
३. पुरत्थिमाभिमुखो—सी०, रो० । ४. बोधिसत्तं ०—सी० ।
५. सी० पोत्थके नत्थि । ६. विसुद्धे—स्या० ।

तस्मा बोधिसत्तमाता पि पठमवये सम्पत्तिं अनुभवित्वा मज्झिमवयस्स ततिये कोट्ठासे विजायित्वा कालं करोती ति अयमेत्थ धम्मता।

नव वा दस वा ति एत्थ वा सद्दस्स[1] विकप्पनवसेन सत्त वा अट्ठ वा एकादस वा द्वादस वा ति एवमादीनं सङ्गहो वेदितब्बो। तत्थ सत्तमा-
5 सज्जातो जीवति, सीतुण्हक्खमो पन न होति। अट्ठमासजातो न जीवति, अवसेसा जीवन्ति।

२७. देवा पठमं पटिग्गण्हन्ती ति खीणासवा सुद्धावासब्राह्मणो पटिग्गण्हन्ति। कथं पटिग्गण्हन्ति[2] ? "सुतिवेसं गण्हित्वा" ति एके। तं पन पटिक्खिपित्वा इदं वुत्तं—'तदा बोधिसत्तमाता सुवण्णखचितं
10 वत्थं निवासेत्वा मच्छक्खिसदिसं दुकूलपटं याव पादन्ता पारुपित्वा अट्ठासि। अथस्सा सल्लहुकगब्भवुट्ठानं अहोसि, धमकरणतो उदकनिक्ख-मनसदिसं। अथ ते पकतिब्रह्मवेसेनेव उपसङ्कमित्वा पठमं
B. 30 सुवण्णजालेन पटिग्गहेसुं। तेसं हत्थतो चत्तारो महाराजानो अजिनप्पवेणिया पटिग्गहेसुं। ततो मनुस्सा दुकूलचुम्बटकेन पटिग्गहेसुं'।
15 तेन वुत्तं--"देवा पठमं पटिग्गण्हन्ति, पच्छा मनुस्सा" ति।

चत्तारो नं देवपुत्ता ति चत्तारो महाराजानो। पटिग्गहेत्वा ति अजिनप्पवेणिया पटिग्गहेत्वा। महेसक्खो ति महातेजो महायसो लक्खणसम्पन्नो।

विसदोव निक्खमती ति यथा अञ्ञे सत्ता योनिमग्गे लग्गन्ता
R. 438 20 भग्गविभग्गा[3] निक्खमन्ति, न एवं निक्खमति, अलग्गो हुत्वा निक्खमती ति अत्थो उदेना ति उदकेन। केन चि असुचिना ति यथा अञ्ञे सत्ता कम्मजवातेहि उद्धंपादा अधोसिरा योनिमग्गे पक्खित्ता सतपोरिसं नरकपपातं पतन्ता विय, ताळच्छिद्देन निक्कड्ढियमाना हत्थी विय महादुक्खं अनुभवन्ता नानाअसुचिमक्खिताव निक्खमन्ति, न एवं
25 बोधिसत्तो। बोधिसत्तञ्हि कम्मजवाता उद्धपादं अधोसिरं कातुं न

१. वा-सद्दो—सी०, स्या०, रो०। २. स्या०, रो०, पोत्थकेसु नत्थि।
३. सग्गविसग्गा–सी०।

सक्कोन्ति । सो धम्मासनतो ओतरन्तो धम्मकथिको विय, निस्सेणितो ओतरन्तो पुरिसो विय च द्वे हत्थे च द्वे पादे च पसारेत्वा ठितकोव मातुकुच्छिसम्भवेन केनचि असुचिना अमक्खितोव निक्खमति ।

उदकस्स धारा ति उदकवट्टियो । तासु सीता सुवण्णकटाहे पतति उण्हा रजतकटाहे[१] । इदञ्च[२] पथवितले केनचि असुचिना असम्मिस्सं तेसं पानीयपरिभोजनीयउदकञ्चेव अञ्ञेहि असाधारणं कीळाउदकञ्च दस्सेतुं वुत्तं । अञ्ञस्स पन सुवण्णरजतघटेहि आहरियमानउदकस्स चेव हंसवत्तकादिपोक्खरणीगतस्स च उदकस्स परिच्छेदो नत्थि । 5

सम्पतिजातो (दी० नि० २.१४) ति मुहुत्तजातो । पाळियं पन मातुकुच्छितो निक्खन्तमत्तो विय दस्सितो, न एवं दट्ठब्बं । निक्खन्तमत्तञ्हि नं पठमं ब्रह्मानो सुवण्णजालेन पटिग्गण्हिंसु, तेसं हत्थतो चत्तारो महाराजानो अजिनप्पवेणिया, तेसं हत्थतो मनुस्सा दुकूलचुम्बटकेन । मनुस्सानं हत्थतो मुच्चित्वा पथवियं पतिट्ठितो । सेतम्हि छत्ते अनुधारियमानो ति दिब्बसेतच्छत्ते अनुधारियमानम्हि[३] । एत्थ च छत्तस्स परिवारानि खग्गादीनि पञ्च राजककुधभण्डानि पि आगतानेव । पाळियं पन राजगमने राजा विय छत्तमेव वुत्तं । तेसु छत्तमेव पञ्ञायति, न छत्तग्गाहको[४] । तथा खग्गतालवण्टमोरहत्थकवाळबीजनीउण्हीसमत्तायेव[५] पञ्ञायन्ति, न तेसं गाहका । सब्बानि किर तानि अदिस्समानरूपा देवता गण्हिंसु । वुत्तं चेतं— 10 15 B. 31

"अनेकसाखञ्च सहस्समण्डलं,
छत्तं मरू धारयुमन्तलिक्खे ।
सुवण्णदण्डा विपतन्ति चामरा,
न दिस्सरे चामरछत्तगाहका" 20 R. 439

(सु० नि० ३७६) ति ॥

१. ० पतति—सी०, रो० । २. सी० पोत्थके नत्थि ।
३. धारियमानम्हि—सी०, स्या०, रो० । ४. छत्तग्गाहका—सी०, रो० ।
५. ० पट्टायेव—सी०, रो०; ० पटायेव—स्या० ।

सब्बा च दिसा ति इदं सत्तपदवीतिहारूपरि ठितस्स विय सब्बदिसानुविलोकनं वुत्तं, न खो पनेवं[1] दट्ठब्बं। महासत्तो हि मनुस्सानं हत्थतो मुच्चित्वा पठवियं[2] पतिट्ठितो[2] पुरत्थिमं दिसं ओलोकेसि। अनेकानि चक्कवाळसहस्सानि एकङ्गणानि अहेसुं। तत्थ देवमनुस्सा 5 गन्धमालादीहि पूजयमाना—"महापुरिस, इध तुम्हेहि सदिसो पि नत्थि, कुतो उत्तरितरो" ति आहंसु। एवं चतस्सो दिसा, चतस्सो अनुदिसा, हेट्ठा, उपरी ति दस दिसा अनुविलोकेत्वा अत्तना[3] सदिसं अदिस्वा—"अयं उत्तरा दिसा" ति उत्तराभिमुखो सत्तपदवीतिहारेन अगमासी ति एवमेत्थ अत्थो वेदितब्बो। **आसभिं** ति उत्तमं। **अग्गो** 10 ति गुणेहि सब्बपठमो। इतरानि द्वे पदानि एतस्सेव वेवचनानि। **अयमन्तिमा जाति, नत्थि दानि पुनब्भवो** ति पदद्वयेन इमस्मिं अत्तभावे पत्तब्बं अरहत्तं ब्याकासि।

एत्थ च समेहि पादेहि पथविया पतिट्ठानं चतुरिद्धिपादपटिलाभस्स पुब्बनिमित्तं, उत्तराभिमुखभावो महाजनं अज्झोत्थरित्वा अभिभवित्वा 15 गमनस्स पुब्बनिमित्तं, सत्तपदगमनं सत्तबोज्झङ्गरतनपटिलाभस्स पुब्बनिमित्तं, दिब्बसेतच्छत्तधारणं विमुत्तिवरछत्तपटिलाभस्स[4] पुब्बनिमित्तं, पञ्चराजककुधभण्डानं पटिलाभो पञ्चहि विमुत्तीहि विमुच्चनस्स पुब्बनिमित्तं, सब्बदिसानुविलोकनं अनावरणञाणपटिलाभस्स पुब्बनिमित्तं, आसभिवाचाभासनं अप्पटिवत्तियधम्मचक्कप्पवत्तनस्स पुब्बनिमित्तं, 20 "अयमन्तिमा जाती" ति सीहनादो अनुपादिसेसाय निब्बानधातुया परिनिब्बानस्स पुब्बनिमित्तं ति वेदितब्बं। इमे वारा पाळियं आगता। सम्बहुलवारो पन नागतो, आहरित्वा दीपेतब्बो। B. 32 R. 440

महापुरिसस्स हि जातदिवसे दससहस्सिलोकधातु कम्पि। दससहस्सिलोकधातुम्हि देवता एकचक्कवाळे सन्निपतिंसु। पठमं देवा 25 पटिग्गण्हिंसु, पच्छा मनुस्सा। तन्तिबद्धा वीणा चम्मबद्धा भेरियो च

१. पनेतं एवं—सी०, रो०। २-२. सी० पोत्थके नत्थि।
३. अत्तनो—सी०, स्या०, रो०। ४. ० वर ०—सी० रो० पोत्थकेसु नत्थि।

केनचि अवादिता सयमेव वज्जिंसु । मनुस्सानं अन्दुबन्धनादीनि[1] खण्डाखण्डं[2] छिज्जिंसु । सब्बरोगा वूपसमिंसु[3], अम्बिलेन धोततम्बमलं विय विगच्छिंसु । जच्चन्धा रूपानि पस्सिंसु । जच्चबधिरा सद्दं सुणिंसु । पीठसप्पी जवसम्पन्ना अहेसुं । जातिजळानम्पि एळमूगानं सति पतिट्ठासि । विदेसपक्खन्दा नावा सुपट्टनं पापुणिंसु । आकासट्ठकभूमट्ठ- 5 करतनानि सकतेजोभासितानि अहेसुं । वेरिनो मेत्तचित्तं पटिलभिंसु । अवीचिम्हि अग्गि निब्बायि । लोकन्तरेसु आलोको उदपादि । नदीसु[4] जलं नप्पवत्तति । महासमुद्दे मधुरसं[5] उदकं अहोसि । वातो न वायि । आकासपब्बतरुक्खगता सकुणा भस्सित्वा पथविगता अहेसुं । चन्दो अतिविरोचि । सूरियो न उण्हो, न सीतलो, निम्मलो उतुसम्पन्नो 10 अहोसि । देवता अत्तनो अत्तनो विमानद्वारे ठत्वा अप्फोटनसेळन- चेलुक्खेपादीहि महाकीळकं[6] कीळिंसु । चातुद्दीपिकमहामेघो वस्सि । महाजनं नेव खुदा न पिपासा पीळेसि । द्वारकवाटानि सयमेव विवरिंसु । पुप्फूपगफलूपगा रुक्खा पुप्फफलानि गण्हिंसु । दससहस्सि- लोकधातु एकद्धजमाला अहोसि । 15

तत्रा पि[7] दससहस्सिलोकधातुकम्पो[8] सब्बञ्ञुतञ्ञाणपटिलाभस्स पुब्बनिमित्तं, देवतानं एकचक्कवाळे सन्निपातो धम्मचक्कप्पवत्तनकाले एकप्पहारेनेव सन्निपतित्वा धम्मं पटिग्गण्हनस्स पुब्बनिमित्तं, पठमं देवतानं पटिग्गहणं चतुन्नं रूपावचरज्झानानं पटिलाभस्स पुब्बनिमित्तं, पच्छा मनुस्सानं पटिग्गहणं चतुन्नं अरूपावचरज्झानानं पटिलाभस्स 20 R. 441 पुब्बनिमित्तं, तन्तिबद्धवीणानं सयं वज्जनं अनुपुब्बविहारपटिलाभस्स पुब्बनिमित्तं, चम्मबद्धभेरीनं वज्जनं महतिया धम्मभेरिया अनुस्सा- वनस्स पुब्बनिमित्तं, अन्दुबन्धनादीनं छेदो अस्मिमानसमुच्छेदस्स

१. अत्तबन्धनादीनि—स्या० ।
२. खण्डखण्डानि— सी०, रो० ।
३. सी०, रो० पोत्थकेसु नत्थि ।
४. नदी—स्या० ।
५. मधुरं—स्या० ।
६. महाकीळं—सी०, रो०; महाकीळनं—स्या० ।
७. तत्रापिस्स—सी०, स्या०, रो० ।
८. ० कम्पा—सी० ।

पुब्बनिमित्तं, महाजनस्स रोगविगमो चतुसच्चपटिलाभस्स पुब्बनिमित्तं, जच्चन्धानं रूपदस्सनं दिब्बचक्खुपटिलाभस्स पुब्बनिमित्तं, बधिरानं सद्दस्सवनं दिब्बसोतधातुपटिलाभस्स पुब्बनिमित्तं, पीठसप्पीनं जव-
B. 33 सम्पदा चतुरिद्धिपादपटिलाभस्स पुब्बनिमित्तं, जळानं सतिपतिट्ठानं
5 चतुसतिपट्ठानपटिलाभस्स पुब्बनिमित्तं, विदेसपक्खन्दनावानं[१] सुपट्टन-सम्पापुणनं चतुपटिसम्भिदाधिगमस्स पुब्बनिमित्तं, रतनानं सकतेजोभासितत्तं[२] यं लोकस्स धम्मोभासं दस्सेस्सति, तस्स पुब्बनिमित्तं।

वेरीनं मेत्तचित्तपटिलाभो चतुब्रह्मविहारपटिलाभस्स पुब्बनिमित्तं, अवीचिम्हि अग्गिनिब्बायनं[३] एकादसअग्गिनिब्बायनस्स पुब्बनिमित्तं, लोकन्त-
10 रिकालोको अविज्जन्धकारं विधमित्वा ञाणालोकदस्सनस्स पुब्बनिमित्तं, महासमुद्दस्स[४] मधुरता निब्बानरसेन एकरसभावस्स पुब्बनिमित्तं वातस्स अवायनं द्वासट्ठिदिट्ठिगतभिन्दनस्स पुब्बनिमित्तं, सकुणानं पथविगमनं महाजनस्स ओवादं सुत्वा पाणेहि सरणगमनस्स पुब्बनिमित्तं, चन्दस्स अतिविरोचनं बहुजनकन्तताय पुब्बनिमित्तं, सूरियस्स उण्हसीतविवज्जन-
15 उतुसुखता कायिकचेतसिकसुखुप्पत्तिया पुब्बनिमित्तं, देवतानं विमानद्वारेसु ठत्वा[५] अप्फोटनादीहि कीळनं बुद्धभावं पत्वा उदानं उदानस्स पुब्बनिमित्तं, चातुद्दीपिकमहामेघवस्सनं महतो धम्ममेघवस्सनस्स पुब्बनिमित्तं, खुदापीळनस्स अभावो कायगतासतिअमतपटिलाभस्स
R. 442 पुब्बनिमित्तं, पिपासापीळनस्स अभावो विमुत्तिसुखेन सुखितभावस्स
20 पुब्बनिमित्तं, द्वारकवाटानं सयमेव विवरणं अट्ठङ्गिकमग्गद्वारविवरणस्स पुब्बनिमित्तं, रुक्खानं पुप्फफलग्गहणं विमुत्तिपुप्फेहि पुप्फितस्स च सामञ्ञफलभारभरितभावस्स च पुब्बनिमित्तं, दससहस्सिलोकधातुया

१. विदेसपक्खन्तानं नावानं—सी०, रो०। २. सकतेजोभासभासनं—सी०; सकतेजभावोभासितत्तं—स्या०।
३. अग्गिनिब्बापनं—सी०, स्या०।
४. नदीसु तोयस्स अप्पवत्तनं चतुवेसारज्ज पटिलाभस्स पुब्बनिमित्तं—सी०, स्या०, रो० पोत्थकेसु अधिको पाठो।
५. सी० पोत्थके नत्थि।

एकद्धजमालिता अरियद्धजमालमालिताय पुब्बनिमित्तं ति वेदितब्बं। अयं सम्बहुलवारो नाम।

एत्थ पञ्हं पुच्छन्ति—"यदा महापुरिसो पथवियं पतिट्ठहित्वा उत्तराभिमुखो पदसा गन्त्वा आसभिं वाचं अभासि[1], तदा किं पथविया गतो, उदाहु आकासेन; दिस्समानो गतो, उदाहु अदिस्समानो; अचेलको 5 गतो, उदाहु अलङ्कतपटियत्तो; दहरो हुत्वा गतो, उदाहु महल्लको; B. 34 पच्छापि किं तादिसोव अहोसि, उदाहु पन बालदारको" ति ? अयं पन पञ्हो हेट्ठालोहपासादे समुट्ठितो[2] तिपिटकचूळाभयत्थेरेन विस्सज्जितो व। थेरो किर एत्थ नियतिपुब्बेकतकम्मइस्सरनिम्मानवादवसेन तं तं बहुं वत्वा अवसाने एवं ब्याकरि—"महापुरिसो पथविया गतो, 10 महाजनस्स पन आकासेन गच्छन्तो विय अहोसि। दिस्समानो गतो, महाजनस्स पन अदिस्समानो विय अहोसि। अचेलको गतो, महाजनस्स पन अलङ्कतपटियत्तो विय उपट्ठासि। दहरोव गतो, महाजनस्स पन सोळसवस्सुद्देसिको विय अहोसि। पच्छा पन बालदारकोव अहोसि, न तादिसो' ति। परिसा चस्स—"बुद्धेन विय हुत्वा भो[3] थेरेन पञ्हो 15 कथितो" ति अत्तमना[4] अहोसि। लोकन्तरिकवारो वुत्तनयो एव।

इमा च पन आदितो पट्ठाय कथिता सब्बधम्मता सब्बबोधिसत्तानं होन्ती ति[5] वेदितब्बा।

११. द्वत्तिंसमहापुरिसलक्खणवण्णना

१८. अद्दस खो (दी० नि० २.१४) ति दुकूलचुम्बटके निपज्जापेत्वा आनीतं अद्दस। महापुरिसस्सा ति जातिगोत्तकुलपदेसादिवसेन 20 महन्तस्स पुरिसस्स। द्वे गतियो ति द्वे निट्ठा, द्वे निप्फत्तियो। अयञ्हि गतिसद्दो—"पञ्च खो इमा, सारिपुत्त, गतियो" (म० नि० १.१०४) ति एत्थ निरयादिभेदाय सत्तेहि गन्तब्बगतिया

१. भासि—सी०। २. सी०, रो० पोत्थकेसु नत्थि।
३. सुन्दरो—स्या०। ४. अत्तमनो—सी०।
५. होती ति—सी०।

R. 443 वत्तति। "इमेसं खो, अहं भिक्खूनं सीलवन्तानं कल्याणधम्मानं नेव जानामि[1] आगतिं वा गतिं वा" (म० नि० १.४०८) ति एत्थ अज्झासये। "निब्बानं अरहतो गती" (परि० २६४) ति एत्थ पटिस्सरणे। "अपिच त्याहं ब्रह्मे गतिञ्च पजानामि, जुतिञ्च 5 पजानामि एवंमहिद्धिको बको ब्रह्मा" (म० नि० १.४०१) ति एत्थ निप्फत्तियं वत्तति। स्वायमिधापि निप्फत्तियं वत्तती ति वेदितब्बो। **अनञ्ञा** ति अञ्ञा गति निप्फत्ति नाम नत्थि।

धम्मिको ति दसकुसलधम्मसमन्नागतो अगतिगमनविरहितो। **धम्मराजा** ति इदं पुरिमपदस्सेव वेवचनं। धम्मेन वा लद्धरज्जता B. 35 10 धम्मराजा। **चातुरन्तो** ति पुरत्थिमसमुद्दादीनं चतुन्नं समुद्दानं वसेन चतुनन्ताय[2] पथविया इस्सरो। **विजितावी** ति विजितसङ्गामो। जनपदो अस्मिं थावरियं थिरभावं पत्तो ति **जनपदत्थावरियप्पत्तो**। चण्डस्स हि रञ्ञो बलिदण्डादीहि लोकं पीळयतो मनुस्सा मज्झिमजनपदं छड्डेत्वा पब्बतसमुद्दतीरादीनि निस्साय पच्चन्ते वासं कप्पेन्ति। अतिमुदुकस्स 15 रञ्ञो[3] चोरेहि साहसिकधनविलोपपीळिता मनुस्सा पच्चन्तं पहाय जनपदमज्झे वासं कप्पेन्ति। इति एवरूपे राजिनि जनपदो थिरभावं न पापुणाति। इमस्मिं पन कुमारे रज्जं कारयमाने एतस्स जनपदो पासाणपिट्ठियं ठपेत्वा अयोपट्टेन परिक्खित्तो विय थिरो भविस्सती ति दस्सेन्तो—"जनपदत्थावरियप्पत्तो" ति आहंसु।

20 **सत्तरतनसमन्नागतो** ति एत्थ रतिजननट्ठेन रतनं। अपिच—

"चित्तीकतं महग्घञ्च, अतुलं दुल्लभदस्सनं।
अनोमसत्तपरिभोगं, रतनं तेन वुच्चति[4] ॥"

चक्करतनस्स च निब्बत्तकालतो पट्ठाय अञ्ञं देवट्ठानं नाम न होति। सब्बे गन्धपुप्फादीहि तस्सेव पूजञ्च अभिवादनादीनि च करोन्ति 25 ति चित्तीकतट्ठेन रतनं। चक्करतनस्स च एत्तकं नाम धनं अग्घती ति

१. पजानामि—स्या०, रो०। २. चातुरन्ताय—सी०, स्या०, रो०।
३. सी०, स्या०, रो० पोत्थकेसु नत्थि। ४. पवुच्चति—सी०।

अग्घो नत्थि । इति महग्घट्ठेना पि रतनं । चक्करतनञ्च अञ्ञे हि लोके R. 444
विज्जमानरतनेहि असदिसं ति अतुलट्ठेना पि रतनं । यस्मा च पन
यस्मिं कप्पे बुद्धा उप्पज्जन्ति, तस्मिं येव चक्कवत्तिनो[1] उप्पज्जन्ति,
बुद्धा च कदाचि करहचि उप्पज्जन्ति, तस्मा दुल्लभदस्सनट्ठेना पि रतनं ।
तदेतं जातिरूपकुलइस्सरियादीहि अनोमस्स उळारसत्तस्सेव उप्पज्जति, 5
न अञ्ञस्सा ति अनोमसत्तपरिभोगट्ठेनापि रतनं । यथा चक्करतनं, एवं
सेसानिपीति इमेहि सत्तहि रतनेहि परिवारभावेन चेव सब्बभोगू-
पकरणभावेन[2] च समन्नागतो ति सत्तरतनसमन्नागतो ।

इदानि तेसं सरूपतो दस्सनत्थं **तस्सिमानी** ति आदि वुत्तं । तत्थ
चक्करतनं ति आदीसु अयं सङ्खेपाधिप्पायो, द्वे सहस्सदीपपरिवारानं 10
चतुन्नं महादीपानं सिरिविभवं गहेत्वा दातुं समत्थं चक्करतनं पातु-
भवति । तथा पुरेभत्तमेव सागरपरियन्तं पथविं अनुसंयायनसमत्थं[3]
वेहासङ्गमं हत्थिरतनं, तादिसमेव अस्सरतनं; चतुरङ्गसमन्नागते
अन्धकारे योजनप्पमाणं अन्धकारं विधमित्वा आलोकदस्सनसमत्थं B. 36
मणिरतनं, छब्बिधदोसविवज्जितं मनापचारि इत्थिरतनं, योजनप्पमाणे 15
अन्तोपथविगतं निधिं दस्सनसमत्थं गहपतिरतनं, अग्गमहेसिया
कुच्छिम्हि निब्बत्तित्वा सकलरज्जमनुसासनसमत्थं जेट्ठपुत्तसङ्खातं
परिणायकरतनं पातुभवति ।

परोसहस्सं (दी० नि० २.१५) ति अतिरेकसहस्सं । **सूरा** ति
अभीरुका । **वीरङ्गरूपा** ति वीरानं अङ्गं वीरङ्गं, वीरियस्सेतं नामं । 20
वीरङ्गं रूपमेतेसं ति वीरङ्गरूपा, वीरियजातिका वीरियसभावा
वीरियमया अकिलासुनो अहेसुं[4] । दिवसं पि युज्झन्ता न किलमन्ती ति
वुत्तं होति । **सागरपरियन्तं** ति चक्कवाळपब्बतं सीमं कत्वा ठितस-
मुद्दपरियन्तं । **अदण्डेना** ति ये कतापराधे सत्ते सतम्पि सहस्सम्पि

१. ० पच्चेकबुद्धा कदाचि०—सी० । २. परिभोग०—सी० ।
३. अनुसंसरणसमत्थं—सी०; अनुपरियायनसमत्थं—स्या० । ४. अहेसुं—सी०, रो० पोत्थकेसु नत्थि ।

गण्हन्ति, ते धनदण्डेन रज्जं कारेन्ति । ये छेज्जभेज्जं अनुसासन्ति, ते सत्थदण्डेन । अयं पन दुविधम्पि दण्डं[1] पहाय अदण्डेन अज्झावसति ।
R 445 **असत्थेना** ति ये एकतोधारादिना सत्थेन परं विहेसन्ति, ते सत्थेन रज्जं कारेन्ति नाम । अयं पन सत्थेन खुद्दमक्खिकायपि पिवनमत्तं
5 लोहितं कस्सचि अनुप्पादेत्वा धम्मेनेव–"एहि खो महाराजा" ति एवं पटिराजूहि सम्पटिच्छितागमनो वुत्तप्पकारं पथविं अभिविजिनित्वा[2] अज्झावसति, अभिभवित्वा सामी हुत्वा वसती ति अत्थो ।

एवं एकं निप्फत्तिं कथेत्वा दुतियं कथेतुं **सचे खो पना** ति आदि वुत्तं । तत्थ रागदोसमोहमानदिट्ठिकिलेसतण्हासङ्खातं छदनं आवरणं
10 विवटं विद्धंसितं[3] विवटकं एतेना ति **विवटच्छदो** । "विवट्टच्छदा" ति पि पाठो, अयमेव अत्थो ।

२०. एवं दुतियं निप्फत्तिं कथेत्वा तासं निमित्तभूतानि लक्खणानि सस्सेतुं **अयञ्हि देव कुमारो** ति आदि वुत्तं । तत्थ **सुप्पतिट्ठितपादो** (दी० नि० २.१५) ति यथा अञ्ञेसं भूमियं पादं
15 ठपेन्तानं अग्गपादतलं[4] वा पण्हि वा पस्सं वा पठमं फुसति, वेमज्झे वा पन छिद्दं होति, उक्खिपन्तानं अग्गतलादीसु एककोट्ठासोव पठमं उट्ठहति, न एवमस्स । अस्स पन सुवण्णपादुकतलमिव[5] एकप्पहारेनेव सकलं पादतलं भूमिं फुसति, एकप्पहारेनेव भूमितो उट्ठहति । तस्मा अयं सुप्पतिट्ठितपादो ।

B. 37 20 **चक्कानी** ति द्वीसु पादतलेसु द्वे चक्कानि । तेसं अरा च नेमि च नाभि च पळियं वुत्ता व । **सब्बाकारपरिपूरानी** ति इमिना पन अयं विसेसो वेदितब्बो । तेसं किर चक्कानं पादतलस्स मज्झे नाभि दिस्सति, नाभिपरिच्छिन्ना वट्टलेखा दिस्सति, नाभिमुखपरिक्खेपपट्टो दिस्सति, पनाळिमुखं दिस्सति अरा दिस्सन्ति, अरेसु वट्टिलेखा दिस्सन्ति, नेमिमणिका[6]

१. तं दण्डं -सी०, स्या०, रो० । २. अभिविज्जियाति—सी०, रो० ।
३. विद्धस्तं—सी० । ४. अग्गतलं—सी०, स्या०, रो० ।
५. सुवण्ण पाणिकातलामिय—सी०, रो० । ६. नेमि दिस्सति ०—सी०, स्या०, रो० ।

दिस्सन्ति, । इदं ताव पाळियं आगतमेव । सम्बहुलवारो पन अनागतो । सो एवं दट्ठब्बो–सत्ति सिरिवच्छो नन्दि सोवत्तिको वटंसको वड्ढमानकं मच्छयुगळं भद्दपीठं अङ्कुसको पासादो तोरणं सेतच्छत्तं खग्गो तालवण्टं[1] मोरहत्थको वाळबीजनी उण्हीसं मणिपत्तो सुमनदामं नीलुप्पलं रत्तुप्पलं सेतुप्पलं पदुमं पुण्डरीकं पुण्णघटो पुण्णपाति समुद्दो चक्कवाळो हिमवा सिनेरु चन्दिमसूरिया नक्खत्तानि चत्तारो महादीपा द्विपरित्तदीपसहस्सानि अन्तमसो चक्कवत्तिरञ्ञो परिसं उपादाय सब्बो चक्कलक्खणस्सेव परिवारो ।

आयतपण्ही ति दीघपण्हि, परिपुण्णपण्ही ति अत्थो । यथा हि अञ्ञेसं अग्गपादो दीघो होति, पण्हिमत्थके जङ्घा पतिट्ठाति, पण्हि तच्छेत्वा ठपिता विय होति, न एवं महापुरिसस्स । महापुरिसस्स पन चतूसु कोट्ठासेसु द्वे कोट्ठासा अग्गपादो होति, ततिये कोट्ठासे जङ्घा पतिट्ठाति, चतुत्थकोट्ठासे आरग्गेन वट्टेत्वा ठपिता विय रत्तकम्बलगेण्डुकसदिसा पण्हि होति ।

दीघङ्गुली ति यथा अञ्ञेसं काचि अङ्गुलियो दीघा होन्ति, काचि रस्सा, न एवं महापुरिसस्स । महापुरिसस्स पन मक्कटस्सेव दीघा हत्थपादङ्गुलियो मूले थूला, अनुपुब्बेन गन्त्वा अग्गे तनुका, निय्यासतेलेन मद्दित्वा वट्टितहरितालवट्टिसदिसा होन्ति । तेन वुत्तं—"दीघङ्गुली" ति ।

मुदुतलुनहत्थपादो ति सप्पिमण्डे ओसारेत्वा ठपितं सतवारविहतकप्पासपटलं विय मुदु । यथा च इदानि जातमत्तस्स, एवं वुड्ढकाले पि मुदुतलुना[2] येव भविस्सन्ति । मुदुतलुना हत्थपादा एतस्सा ति मुदुतलुनहत्थपादो ।

जालहत्थपादो ति न चम्मेन पटिबद्धअङ्गुलन्तरो[3] । एदिसो हि फणहत्थको पुरिसदोसेन उपहतो पब्बज्जं न पटिलभति[4] । महापुरिसस्स

१. तालवण्टकं—सी०, रो० ।
२. सी० पोत्थके नत्थि ।
३. परिनद्ध०—सी०, रो० ।
४. लभति—सी०, स्या०, रो० ।

B. 38 पन चतस्सो हत्थङ्गुलियो पञ्चपि पादङ्गुलियो एकप्पमाणा होन्ति । तासं एकप्पमाणताय यवलक्खणं[1] अञ्ञमञ्ञं पटिविज्झित्वा तिट्ठति । अथस्स हत्थपादा कुसलेन वड्ढकिना योजितजालवातपानसदिसा होन्ति । तेन वुत्तं—"जालहत्थपादो" ति ।

5 उद्धं पतिट्ठितगोप्फकत्ता उस्सङ्खा पादा अस्सा ति उस्सङ्खपादो । अञ्ञेसञ्हि पिट्ठिपादे गोप्फका होन्ति, तेन तेसं पादा आणिबद्धा विय बद्धा होन्ति, न यथासुखं परिवट्टन्ति, गच्छन्तानं पादतलानि पि न दिस्सन्ति । महापुरिसस्स पन आरुहित्वा उपरि गोप्फका पतिट्ठहन्ति, तेनस्स नाभितो पट्ठाय उपरिमकायो नावाय ठपितसुवण्णपटिमा विय R. 447 10 निच्चलो होति, अधोकायो[2] व इञ्जति, सुखेन पादा परिवट्टन्ति, पुरतो पि पच्छतो पि उभयपस्सेसु पि ठत्वा पस्सन्तानं पादतलानि पञ्ञायन्ति, न हत्थीनं विय पच्छतोयेव ।

एणिजङ्घो ति एणिमिगसदिसजङ्घो मंसुस्सदेन परिपुण्णजङ्घो, न एकतो बद्धपिण्डिकमंसो, समन्ततो समसण्ठितेन मंसेन परिक्खित्ताहि 15 सुवट्टिताहि सालिगब्भय[3]वगब्भ[3]सदिसाहि जङ्घाहि समन्नागतो ति अत्थो ।

अनोनमन्तो ति अनमन्तो, एतेनस्स अखुज्जअवामनभावो दीपितो । अवसेसजना हि खुज्जा वा होन्ति वामना वा । खुज्जानं उपरिमकायो अपरिपुण्णो होति, वामनानं हेट्ठिमकायो । ते अपरिपुण्णकायत्ता न 20 सक्कोन्ति अनोनमन्ता जण्णुकानि परिमज्जितुं । महापुरिसो पन परिपुण्णउभयकायत्ता सक्कोति ।

कोसोहितवत्थगुय्हो ति उसभवारणादीनं विय सुवण्णपदुमकण्णिक-सदिसेहि[4] कोसेहि ओहितं[4] पटिच्छन्नं वत्थगुय्हं अस्सा ति कोसोहित-वत्थगुय्हो । वत्थगुय्हं ति वत्थेन गुहितब्बं अङ्गजातं वुच्चति ।

१. जाललक्खणं—सी०, रो० । २. अधरकायो—सी० ।
३-३. सी० पोत्थके नत्थि । ४-४. ० सदिसं कोसोहितं—सी० ।

सुवण्णवण्णो ति जातिहिङ्गुलकेन मज्जित्वा[1] दीपिदाठाय घंसित्वा गेरुकपरिकम्मं कत्वा ठपितघनसुवण्णरूपसदिसो[2] ति अत्थो। एतेनस्स घनसिनिद्धसण्हसरीरतं दस्सेत्वा छविवण्णदस्सनत्थं कञ्चनसन्निभत्तचो ति वुत्तं। पुरिमस्स वा वेवचनमेतं।

रजोजल्लं ति रजो वा मलं वा। **न उपलिम्पती** ति न लग्गति 5 B. 39 पदुमपलासतो उदकबिन्दु विय विवट्टति। हत्थधोवनादीनि पन उतुग्गहणत्थाय चेव दायकानं पुञ्ञफलत्थाय च बुद्धा करोन्ति, वत्तसीसेना पि च करोन्तियेव। सेनासनं पविसन्तेन हि भिक्खुना पादे धोवित्वा पविसितब्बं ति वुत्तमेतं।

उद्धग्गलोमो ति आवट्टरियोसाने उद्धग्गानि हुत्वा मुखसोभं 10 उल्लोकयमानानि विय ठितानि लोमानि अस्सा ति उद्धग्गलोमो।

ब्रह्मुजुगत्तो ति ब्रह्मा विय उजुगत्तो, उजुमेव उग्गतदीघसरीरो भविस्सति। येभुय्येन हि सत्ता खन्धे कटियं जाणूसू ति तीसु ठानेसु R. 448 नमन्ति। ते कटियं नमन्ता पच्छतो नमन्ति, इतरेसु द्वीसु ठानेसु पुरतो। दीघसरीरा पन एके[3] पस्सवङ्का होन्ति, एके मुखं उन्नमेत्वा 15 नक्खत्तानि गणयन्ता विय चरन्ति, एके अप्पमंसलोहिता सूलसदिसा होन्ति, एके पुरतो पब्भारा होन्ति, पवेधमाना गच्छन्ति। अयं पन उजुमेव उग्गन्त्वा दीघप्पमाणो देवनगरे उस्सितसुवण्णतोरणं विय भविस्सती ति दीपेन्ति। यथा चेतं, एवं यं यं जातमत्तस्स सब्बसो अपरिपुण्णं महापुरिसलक्खणं होति, तं तं आयतिं तथाभावितं सन्धाय 20 वुत्तं ति वेदितब्बं।

सत्तुस्सदो ति द्वे हत्थपिट्ठियो द्वे पादपिट्ठियो द्वे अंसकूटानि खन्धो ति इमेसु सत्तसु ठानेसु परिपुण्णो मंसुस्सदो अस्सा ति सत्तुस्सदो। अञ्ञेसं पन हत्थपादपिट्ठादीसु सिराजालं पञ्ञायति, अंसकूटक्खन्धेसु अट्ठिकोटियो। ते मनुस्सा पेता विय खायन्ति, न तथा 25

१. मद्दित्वा—सी०। २. कनक—सी०।
३. एकेन—सी०।

महापुरिसो । महापुरिसो पन सत्तसु ठानेसु परिपुण्णमंसुस्सदत्ता निगूळ्हसिराजालेहि हत्थपिट्ठादीहि वट्टेत्वा सुट्ठपितसुवण्णाळिङ्गसदिसेन खन्धेन सिलारूपकं विय खायति, चित्तकम्मरूपकं विय च खायति ।

सीहस्स पुब्बद्धं विय कायो अस्सा ति सीहपुब्बद्धकायो । सीहस्स
5 हि पुरत्थिमकायो व परिपुण्णो होति, पच्छिमकायो अपरिपुण्णो । महापुरिसस्स पन सीहस्स पुब्बद्धकायो विय सब्बो कायो परिपुण्णो ।
B. 40 सोपि सीहस्सेव तत्थ तत्थ विनतुन्नतादिवसेन दुस्सण्ठितविसण्ठितो न होति, दीघयुत्तुट्ठाने पन दीघो, रस्सथूलकिसपुथुलअनुवट्टितयुत्तट्ठानेसु तथाविधोव होति । वुत्तञ्हेतं भगवता[1]—

10 "मनापियेव, खो भिक्खवे, कम्मविपाके पच्चुपट्ठिते येहि अङ्गेहि दीघेहि सोभति, तानि अङ्गानि दीघानि सण्ठन्ति[2] । येहि अङ्गेहि रस्सेहि सोभति, तानि अङ्गानि रस्सानि सण्ठन्ति । येहि अङ्गेहि थूलेहि सोभति, तानि अङ्गानि थूलानि सण्ठन्ति । येहि अङ्गेहि किसेहि
R. 449 सोभति, तानि अङ्गानि पुथुलानि सण्ठन्ति । येहि अङ्गेहि वट्टेहि
15 सोभति, तानि अङ्गानि वट्टानि सण्ठन्ती" ति ।

इति नानाचित्तेन पुञ्ञचित्तेन चित्तितो, दसहि पारमीहि सज्जितो महापुरिसस्स अत्तभावो, लोके सब्बसिप्पिनो वा सब्बइद्धिमन्तो वा पतिरूपकम्पि कातुं न सक्कोन्ति ।

चितन्तरंसो ति अन्तरंसं वुच्चति द्विन्नं कोट्टानं[3] अन्तरं । तं
20 चितं परिपुण्णं अन्तरंसं अस्सा ति चितन्तरंसो । अञ्ञेसञ्हि तं ठानं निन्नं होति, द्वे पिट्ठिकोट्टा पाटियेक्का पञ्ञायन्ति । महापुरिसस्स पन कटितो पट्ठाय मंसपटलं याव खन्धा उग्गम्म समुस्सितसुवण्णफलकं विय पिट्ठिं छादेत्वा पतिट्ठितं ।

निग्रोधपरिमण्डलो ति निग्रोधो विय परिमण्डलो । यथा पञ्ञा-
25 सहत्थताय वा सतहत्थताय वा समक्खन्धसाखो निग्रोधो दीघतो पि

१. सी०, स्या०, रो० पोत्थकेसु नत्थि । २. सण्ठहन्ति—सी०, स्या०, रो० ।
३. कोट्टासानं—सी०, रो० ।

वित्थारतो पि एकप्पमाणोव होति, एवं कायतो पि ब्यामतो पि एकप्पमाणो। यथा अञ्ञेसं कायो वा दीघो होति ब्यामो वा, न एवं विसमप्पमाणो ति अत्थो। तेनेव **यावतक्वस्स कायो** (दी० नि० २.१६) ति आदि वुत्तं। तत्थ यावतको अस्सा ति **यावतक्वस्स**।

समवट्टक्खन्धो ति समवट्टितक्खन्धो। यथा एके कोञ्चा विय च 5 बका विय च वराहा[1] विय च दीघगला वङ्कगला पुथुलगला च होन्ति। B. 41 कथनकाले सिराजालं पञ्ञायति, मन्दो सरो निक्खमति, न एवं महापुरिसस्स। महापुरिसस्स पन सुवट्टितसुवण्णाळिङ्गसदिसो खन्धो होति, कथनकाले सिराजालं न पञ्ञायति, मेघस्स विय गज्जितो सरो महा होति। 10

रसग्गसग्गी ति एत्थ रसं गसन्ति हरन्ती[2] ति रसग्गसा। रसहरणीनमेतं अधिवचनं। ता अग्गा अस्सा ति रसग्गसग्गी। महापुरिसस्स किर सत्तरसहरणीसहस्सानि[3] उद्धग्गानि हुत्वा गीवायमेव पटिमुक्कानि। तिलफलमत्तो पि आहारो जिव्हग्गे[4] ठपितो सब्बकायं अनुफरति। तेनेव महापधानं पदहन्तस्स एकतण्डुलादीहि पि कळाय- 15 यूसपसतमत्तेना पि कायस्स यापनं अहोसि। अञ्ञेसं पन तथा अभावा न सकलं कायं ओजा फरति। तेन ते बव्हाबाधा होन्ति।

सीहस्सेव हनु अस्सा ति **सीहहनु**। तत्थ सीहस्स हेट्ठिमहनुमेव R. 450 परिपुण्णं होति, न उपरिमं। महापुरिसस्स पन सीहस्स हेट्ठिमं विय द्वे पि परिपुण्णानि द्वादसिया पक्खस्स चन्दसदिसानि होन्ति। अथ 20 नेमित्तका हनुकपरियन्तं ओलोकेन्ताव इमेसु हनुकेसु हेट्ठिमे वीसति उपरिमे वीसती ति चत्तालीसदन्ता समा अविरळा[5] पतिट्ठहिस्सन्ती ति सल्लक्खेत्वा अयञ्हि देव, कुमारो चत्तालीसदन्तो होती ति आदिमाहंसु। तत्रायमत्थो—अञ्ञेसञ्हि परिपुण्णदन्तानम्पि द्वत्तिंस दन्ता[6]

१. वराहका विय च होन्ति—सी०। २. सी०, स्या०, रो० पोत्थकेसु नत्थि।
३. ० सतानि—सी०। ४. जिह्वग्ग—सी०।
५. अविवरा—सी०, रो०। ६. दन्तानि—सी०।

होन्ति । इमस्स पन चत्तालीसं भविस्सन्ति । अञ्ञेसञ्च केचि दन्ता उच्चा, केचि नीचा ति विसमा होन्ति । इमस्स पन अयपट्टकेन[1] छिन्नसङ्खपटलं विय समा भविस्सन्ति । अञ्ञेसं कुम्भिलानं विय दन्ता विरळा होन्ति, मच्छमंसानि खादन्तानं दन्तन्तरं पूरेन्ति[2] । इमस्स पन
5 कनकफलकायं समुस्सितवजिरपन्ति विय अविरळा[3] तूलिकाय दस्सित-परिच्छेदा विय दन्ता भविस्सन्ति । अञ्ञेसञ्च पूतिदन्ता उट्ठहन्ति । तेन काचि दाठा काळा पि विवण्णा पि होन्ति । अयं पन सुट्ठु सुक्कदाठो ओसधितारकम्पि अतिक्कम्म विरोचमानाय पभाय समन्नागतदाठो भविस्सति ।

10 पहूतजिव्हो ति पुथुलजिव्हो । अञ्ञेसं जिव्हा थूला पि होन्ति किसा पि रस्सा पि थद्धा पि विसमा पि, महापुरिसस्स पन जिव्हा मुदु दीघा पुथुला वण्णसम्पन्ना होति । सो हि एतं लक्खणं परियेसितुं आगतानं कङ्खाविनोदनत्थं मुदुकत्ता तं जिव्हं कथिनसूचिं विय वट्टेत्वा उभो नासिकसोतानि परामसति[4], दीघत्ता उभो कण्णसोतानि परामसति,
15 पुथुलत्ता केसन्तपरियोसानं केवलम्पि नलाटं पटिच्छादेति । एवमस्स मुदुदीघपुथुलभावं पकासेन्तो तेसं कङ्खं विनोदेति । एवं तिलक्खणसम्पन्नं जिव्हं सन्धाय "पहूतजिव्हो" ति वुत्तं ।

ब्रह्मस्सरो ति अञ्ञे छिन्नस्सरा पि भिन्नस्सरा पि काकस्सरा पि होन्ति, अयं पन महाब्रह्मुनो सरसदिसेन सरेन समन्नागतो भविस्सति ।
20 महाब्रह्मुनो हि पित्तसेम्हेहि अपलिबुद्धत्ता सरो विसदो होति । महापुरिसेना पि कतकम्मं तस्स वत्थुं सोधेति । वत्थुनो सुद्धत्ता नाभितो पट्ठाय समुट्ठहन्तो सरो विसदो अट्ठङ्गसमन्नागतोव समुट्ठाति । करवीको विय भणती ति करवीकभाणी, मत्तकरवीकरुतमञ्जुघोसो ति अत्थो ।

अभिनीलनेत्तो ति न सकलनीलनेत्तो, नीलयुत्तट्ठाने पनस्स
25 उमापुप्फसदिसेन अतिविसुद्धेन नीलवण्णेन समन्नागतानि नेत्तानि होन्ति,

P. 42 (margin, line 14); R. 451 (margin, line 21)

१. अयोपट्टछिन्न—सी०, रो० ।　　२. पूरति—सी०, स्या० ।
३. अविरळानि—सी० ।　　४. परिमसति—सी०, स्या०, रो० ।

पीतयुत्तट्ठाने कणिकारपुप्फसदिसेन पीतवण्णेन, लोहितयुत्तट्ठाने बन्धुजीवकपुप्फसदिसेन लोहितवण्णेन, सेतयुत्तट्ठाने ओसधितारकसदिसेन सेतवण्णेन, काळयुत्तट्ठाने अद्दारिट्ठकसदिसेन काळवण्णेन समन्नागतानि । सुवण्णविमाने उग्घाटितमणिसीहपञ्जरसदिसानि खायन्ति । 5

गोपखुमो ति एत्थ पखुमं ति सकलचक्खुभण्डं[1] अधिप्पेतं । तं काळवच्छकस्स बहलधातुकं होति, रत्तवच्छकस्स विप्पसन्नं, तंमुहुत्तजाततरुणरत्तवच्छकसदिसचक्खुभण्डो ति अत्थो । अञ्ञेसञ्हि चक्खुभण्डा अपरिपुण्णा होन्ति, हत्थिमूसिकादीनं[2] अक्खिसदिसेहि विनिग्गतेहि पि गम्भीरेहिपि अक्खीहि समन्नागता होन्ति । महापुरिसस्स पन धोवित्वा 10 मज्जित्वा ठपितमणिगुळिका विय मुदुसिनिद्धनीलसुखुमपखुमाचितानि अक्खीनि ।

उण्णा ति उण्णलोमं । भमुकन्तरे ति द्विन्नं भमुकानं वेमज्झे नासिकमत्थकेयेव जाता, उग्गन्त्वा पन नलाटवेमज्झे जाता । ओदाता ति परिसुद्धा, ओसधितारकसमानवण्णो । मुदू ति सप्पिमण्डे ओसारेत्वा[3] 15 ठपितसतवारविहतकप्पासपटलसदिसा । तूलसन्निभा ति सिम्बलितूललतानूलसमाना, अयमस्स ओदाततायं उपमा । सा पनेसा कोटियं गहेत्वा आकड्ढियमाना उपड्ढबाहुप्पमाणा होति, विस्सट्ठा दक्खिणावट्टवसेन B. 43 आवट्टित्वा उद्धग्गा हुत्वा सन्तिट्ठति । सुवण्णफलकमज्झे ठपितरजतपुब्बुळकं विय, सुवण्णघटतो निक्खममाना खीरधारा विय, अरुणप्पभारञ्जिते 20 गगनप्पदेसे ओसधितारका विय च अतिमनोहराय सिरिया विरोचति ।

उण्हीससीसो ति इदं परिपुण्णनलाटतञ्च परिपुण्णसीसतं चाति द्वे R. 452 अत्थवसे पटिच्च वुत्तं । महापुरिसस्स हि दक्खिणकण्णचूळिकतो पट्ठाय

१. ० गण्ड—सी० । २. ० मूसिककाकादीनं—सी०, रो० ।
३. ओसादेत्वा—सी०, रो० ।

मंसपटल उट्ठहित्वा सकलनलाटं छादयमानं पूरयमानं गन्त्वा वामकण्ण-चूळिकायं पतिट्ठितं, तं[1] रञ्ञो[2] बन्धउण्हीसपट्टो विय विरोचति। महापुरिसस्स किर इमं लक्खणं दिस्वा राजूनं उण्हीसपट्टं अकंसु। अयं ताव एको अत्थो। अञ्ञे पन जना अपरिपुण्णसीसा होन्ति, केचि कपिसीसा[3], केचि फलसीसा, केचि अट्ठिसीसा, केचि हत्थिसीसा, केचि तुम्बसीसा, केचि पब्भारसीसा। महापुरिसस्स पन आरग्गेन वट्टेत्वा ठपितं विय सुपरिपुण्णं उदकपुब्बुळसदिसं सीसं होति। तत्थ पुरिमनये उण्हीसवेठितसीसो विया ति उण्हीससीसो। दुतियनये उण्हीसं विय सब्बत्थ परिमण्डलसीसो ति उण्हीससीसो।

१२. विपस्सीकथा

२२. **सब्बकामेही** ति इदं लक्खणानि परिग्गण्हापेत्वा पच्छा कतं विय वुत्तं, न पनेवं दट्ठब्बं। पठमं हि ते[4] नेमित्तके सन्तप्पेत्वा पच्छा लक्खणपरिग्गण्हनं कतं ति वेदितब्बं। तस्स वित्थारो गब्भोक्कन्तियं वुत्तोयेव। **पायेन्ती** ति थञ्ञं पायेन्ति। तस्स[5] किर निद्दोसेन मधुरेन खीरेन समन्नागता सट्ठि धातियो उपट्ठापेसि, तथा[6] सेसा पि तेसु तेसु कम्मेसु कुसला सट्ठिसट्ठियेव। तासं पेसनकारके सट्ठि पुरिसे, तस्स तस्स कताकतभावं सल्लक्खणे सट्ठि अमच्चे उपट्ठापेसि। एवं चत्तारि[7] सट्ठियो इत्थीनं, द्वे सट्ठियो पुरिसानं ति छ सट्ठियो उपट्ठकानं येव अहेसुं। **सेतच्छत्तं** ति दिब्बसेतच्छत्तं। कुलदत्तियं पन सिरिगब्भेयेव तिट्ठति। **मा नं सीतं वा** ति अदिसु मा अभिभवी ति अत्थो वेदितब्बो। **स्वास्सुदं** ति सो अस्सुदं। **अङ्केनेव अङ्कं** ति अञ्ञस्स बाहुनाव अञ्ञस्स बाहुं। अञ्ञस्स च अंसकूटेनेव अञ्ञस्स अंसकूटं। **परिहरियती** ति नीयति, सम्पापियती ति अत्थो।

B. 44

१. सी०, स्या०, रो० पोत्थकेसु नत्थि। २. रञ्ञा—सी०, रो०।
३. कप्पसीसा—सी०, रो०। ४. सी०, स्या०, रो० पोत्थकेसु नत्थि।
५. स्या० पोत्थके नत्थि। ६. ० तथा—सी०, स्या०।
७. चत्तारो—सी०, रो०।

मञ्जुस्सरो (दी० नि० १.१७) ति अखरस्सरो। वग्गुस्सरो ति छेकनिपुणस्सरो। मधुरस्सरो ति सातस्सरो। पेमनियस्सरो ति पेमजनकस्सरो। तत्रिदं करवीकानं मधुरस्सरताय—करवीकसकुणे किर मधुररसं अम्बपक्कं मुखतुण्डकेन[1] पहरित्वा पग्घरितरसं पिवित्वा पक्खेन तालं दत्वा विकूजमाने चतुप्पदा मत्ता विय लळितुं आरभन्ति। 5 गोचरपसुता पि चतुप्पदा मुखगतानि तिणानि छड्डेत्वा तं सद्दं सुणन्ति। वाळमिगा खुद्दकमिगे अनुबन्धमाना उक्खित्तं पादं अनिक्खिपित्वाव तिट्ठन्ति। अनुबद्धमिगा च मरणभयं जहित्वा तिट्ठन्ति। आकासे पक्खन्दा पक्खिनो पि पक्खे पसारेत्वा[2] तं[3] सद्दं सुणमानाव तिट्ठन्ति[3]। उदके मच्छा पि कण्णपटलं पप्फोटेत्वा तं सद्दं सुणमानाव तिट्ठन्ति। 10 एवं मधुरस्सरा करवीका।

असन्धिमित्ता पि धम्मासोकस्स देवी—"अत्थि, नु खो भन्ते, बुद्धस्सरेन[4] सदिसो कस्सचि सरो" ति संघं पुच्छि। अत्थी करवीकसकुणस्सा ति। कुहिं, भन्ते, ते सकुणा ति? हिमवन्ते ति। सा राजानं आह—"देव, अहं[5] करवीकसकुणं पस्सितुकामाम्ही" ति। राजा— 15 "इमस्मिं पञ्जरे निसीदित्वा करवीको आगच्छतू" ति सुवण्णपञ्जरं विस्सज्जेसि। पञ्जरो गन्त्वा एकस्स करवीकस्स पुरतो अट्ठासि। सो—"राजाणाय आगतो पञ्जरो, न सक्का न गन्तुं" ति तत्थ निसीदि। पञ्जरो आगन्त्वा रञ्ञो पुरतो अट्ठासि। न करवीकसद्दं कारापेतुं सक्कोन्ति। अथ राजा—"कथं, भणे, इमे सद्दं न करोन्ती" ति आह। 20 ञातके अदिस्वा देवा ति। अथ नं राजा आदासेहि परिक्खिपापेसि। सो अत्तनो छायं दिस्वा—"ञातका मे आगता" ति मञ्ञमानो पक्खेन तालं दत्वा मधुरस्सरेन मणिवंसं धममानो विय विरवि। सकलनगरे मनुस्सा मत्ता विय लळिंसु[6]। असन्धिमित्ता चिन्तेसि—"इमस्स ताव

R. 453

१. सी०, रो० पोत्थकेसु नत्थि। २. ० तिट्ठन्ति—सी०, रो०।
३-३. सी०, रो० पोत्थकेसु नत्थि। ४. बुद्धसद्देन—सी०, स्या०, रो०।
५. सी०, स्या०, रो० पोत्थकेसु नत्थि। ६. अहेसुं—सी०।

तिरच्छानगतस्स एवं मधुरो सद्दो, कीदिसो नु खो सब्बञ्ञुतञ्ञाण-
सिरिपत्तस्स भगवतो सद्दो[१] अहोसी" ति पीतिं उप्पादेत्वा तं पीतिं
अविजहित्वा सत्तहि जङ्घसतेहि सद्धिं सोतापत्तिफले पतिट्ठासि। एवं
B. 45 मधुरो किर करवीकसद्दो ति। ततो पन सतभागेन सहस्सभागेन च
5 मधुरतरो विपस्सिस्स कुमारस्स सद्दो अहोसी ति वेदितब्बो[२]।

कम्मविपाकजं ति न भावनामयं। कम्मविपाकवसेन पन देवतानं
R. 454 चक्खुसदिसमेव मंसचक्खु अहोसि, येन निमित्तं कत्वा तिलवाहे पक्खित्तं
एकतिलम्पि अयं सो ति उद्धरित्वा दातुं सक्कोति।

विपस्सी ति एत्थ अयं वचनत्थो। अन्तरन्तरा निमीलजनितन्ध-
10 कारविरहेन[३] विसुद्धं पस्सति;विवटेहि च अक्खीहि पस्सती ति विपस्सी;
दुतियवारे विच्चेय विचेय्य[४] पस्सती ति विपस्सी; विचिनित्वा
विचिनित्वा[५] पस्सती ति अत्थो।

अत्थे पनायती ति अत्थे जानाति पस्सति, नयति वा पवत्तेती ति
अत्थो। एकदिवसं किर विनिच्छयट्ठाने निसीदित्वा अत्थे अनुसासन्तस्स
15 रञ्ञो अलङ्कतपटियत्तं महापुरिसं आनेत्वा हत्थे ठपयिंसु। तस्स तं
अङ्केकत्वा उपलाळयमानस्सेव अमच्चा सामिकं अस्सामिकं अकंसु।
बोधिसत्तो अनत्तमनसद्दं निच्छारेसि। राजा—"किमेतं[६], उपधारेथा"
ति आह। उपधारियमाना अञ्ञं अदिस्वा—"अड्डस्स[७] दुब्बिनिच्छितत्ता
एवं कतं भविस्सती" ति पुन सामिकंयेव सामिकं कत्वा "ञत्वा नु खो
20 कुमारो एवं करोती" ति वीमंसन्ता पुन सामिकं अस्सामिकं अकंसु।
पुनपि बोधिसत्तो तथेव सद्दं निच्छारेसि। अथ राजा—"जानाति
महापुरिसो" ति ततो पट्ठाय अप्पमत्तो अहोसि। इदं सन्धाय वुत्तं—
विचेय्य विचेय्य कुमारो अत्थे[८] पनायती" ति।

१. सरो—स्या०। २. सी० पोत्थके नत्थि।
३. निमेस ०—सी; निम्मिस ०—स्या०। ४. सी०, रो० पोत्थकेसु नत्थि।
५. सी०, रो० पोत्थकेसु नत्थि। ६. ० किमेतं—सी०।
७. अत्थस्स—सी०, रो०; अट्टस्स—स्या०। ८. अट्टे—स्या०।

वस्सिकं ति आदीसु यत्थ सुखं होति वस्सकाले वसितुं, अयं वस्सिको। इतरेसु पि एसेव नयो। अयं पनेत्थ वचनत्थो—वस्सावासो[1] वस्सं[1], वस्सं अरहती ति वस्सिको। इतरेसु पि एसेव नयो।

तत्थ वस्सिको पासादो नातिउच्चो होति, नातिनीचो, द्वारवातपानानिपिस्स नातिबहूनि नातितनूनि[2], भूमत्थरणपच्चत्थरणखज्जभोज्जानिपेत्थ मिस्सकानेव वट्टन्ति। हेमन्तिके थम्भापि भित्तियोपि नीचा होन्ति, द्वारवातपानानि तनुकानि सुखुमच्छिद्दानि, उण्हप्पवेसनत्थाय भित्तिनियूहानि नीहरियन्ति[3]। भूमत्थरणपच्चत्थरणनिवासनपारुपनानि पनेत्थ उण्हविरियानि कम्बलादीनि वट्टन्ति। खज्जभोज्जं सिनिद्धं कटुकसन्निस्सितं निरुदकसन्निस्सितञ्च[4]। गिम्हिके थम्भापि भित्तियोपि उच्चा होन्ति, द्वारवातपानानि पनेत्थ बहूनि विपुलजातानि होन्ति, भूमत्थरणादीनि दुकूलमयानि वट्टन्ति। खज्जभोज्जानि मधुररससन्निस्सितभरितानि[5]। वातपानसमीपेसु चेत्थ नव चाटियो ठपेत्वा उदकस्स पूरेत्वा नीलुप्पलादीहि सञ्छादेन्ति। तेसु तेसु पदेसेसु उदकयन्तानि करोन्ति, येहि देवे वस्सन्ते विय उदकधारा निक्खमन्ति।

5 B. 46 10 R. 455 15

निप्पुरिसेही ति पुरिसविरहितेहि। न केवलञ्चेत्थ तूरियानेव निप्पुरिसानि, सब्बट्ठानानिपि निप्पुरिसानेव, दोवारिका पि इत्थियोव, नहापनादिपरिकम्मकरा पि इत्थियोव। राजा किर—"तथारूपं इस्सरियसुखसम्पत्तिं[6] अनुभवमानस्स पुरिसं दिस्वा पुरिसासङ्का[7] उप्पज्जति, सा मे पुत्तस्स मा अहोसी" ति सब्बकिच्चेसु इत्थियोव ठपेसी ति।

20

पठमभाणवारवण्णना निट्ठिता।

१-१. वस्से वासो वस्सो—सी०।
२. ० तनुकानि—स्या०।
३. हरियन्ति—सी०।
४. सी० पोत्थके नत्थि।
५. मधुररससीतविरियानि—सी०, स्या०, रो०।
६. सी०, रो० पोत्थकेसु नत्थि।
७. परिसङ्का—सी०; पुरिसङ्का—रो०

१३. जिण्णपुरिसवण्णना

२५. दुतियभाणवारे **गोपानसिवङ्कं** (दी० नि० २.१८) ति गोपानसी विय वङ्कं। **भोग्गं** ति खन्धे, कटियं, जाणूसू ति तीसु ठानेसु भोग्गवङ्कं[1]। **दण्डपरायनं** ति दण्डगतिकं दण्डपटिसरणं। **आतुरं** ति जरातुरं। **गतयोब्बनं** ति अतिक्कन्तयोब्बनं पच्छिमवये ठितं। **दिस्वा** ति अड्ढयोजनप्पमाणेन बलकायेन परिवुतो सुसंविहितारक्खोपि गच्छन्तो यदा रथो पुरतो होति, पच्छा[2] बलकायो, तादिसे ओकासे सुद्धावास-खीणासवब्रह्मे हि अत्तनो आनुभावेन रथस्स पुरतोव दस्सितं, तं पुरिसं पस्सित्वा। सुद्धावासा किर—"महापुरिसो पङ्के गजो विय पञ्चसु कामगुणेसु लग्गो, सतिं मस्स उप्पादेस्सामा" ति तं दस्सेसुं। एवं दस्सितञ्च तं बोधिसत्तो चेव पस्सति सारथि च। ब्रह्मानो हि बोधिसत्तस्स अप्पमादत्थं सारथिस्स च कथासल्लापत्थं तं दस्सेसुं। **किं पनेसो** ति एसो जिण्णो ति किं वुत्तं होति, "नाहं, भो इतो पुब्बे एवरूपं अद्दसं" ति पुच्छि।

तेन ही ति यदि मय्हम्पि एवरूपेहि केसेहि एवरूपेन च कायेन भवितब्बं, तेन हि सम्म सारथि। **अलं दानज्ज उय्यानभूमिया** ति "—अज्ज उय्यानभूमिं पस्सिस्सामा" ति गच्छाम, अलं ताय उय्यान-भूमिया ति संविग्गहदयो संवेगानुरूपमाह। **अन्तेपुरं गतो** ति इत्थिजनं विस्सज्जेत्वा सिरिगब्भे एककोव निसिन्नो। **यत्र हि नामा** ति याय जातिया सति जरा पञ्ञायति, सा जाति धिरत्थु धिक्कता अत्थु, जिगुच्छामेतं जातिं ति, जातिया मूलं खणन्तो निसीदि, पठमेन सल्लेन हदये विद्धो विय।

सारथिं आमन्तापेत्वा ति राजा किर नेमित्तकेहि कथितकालतो पट्ठाय ओहितसोतो[3] विचरति[3]। सो "कुमारो उय्यानं गच्छन्तो अन्तरामग्गे निवत्तो" ति सुत्वा सारथिं आमन्तापेसि। **माहेव खो** ति

१. आभग्गवङ्कं—सी०; आभोग्गवङ्कं—रो०; भग्गवङ्कं—स्या०। २. पच्छतो—स्या०। ३-३. ० सोतो व चरति—सी०, रो०।

आदीसु रज्जं कारेतु[1], मा पब्बजतु, ब्राह्मणानं वचनं मा सच्चं होतू ति एवं चिन्तेसी ति अत्थो।

१४. आबाधिकपुरिसवण्णना

२९. अद्दस खो (दी० नि० २.१९) ति पुब्बे वुत्तनयेनेव सुद्धावासेहि दस्सितं अद्दस। आबाधिकं ति इरियापथभञ्जनकेन विसभागबाधेन आबाधिकं। दुक्खितं ति रोगदुक्खेन दुक्खितं। बाळ्हगिलानं ति अधिमत्तगिलानं। पलिपन्नं ति निमुग्गं। जरा पञ्ञायिस्सति ब्याधि पञ्ञायिस्सती ति इधा पि याय जातिया सति इदं द्वयं पञ्ञायति, धिक्कता[2] सा जाति, अजातं खेमं ति जातिया मूलं खणन्तो निसीदि, दुतियेन सल्लेन विद्धो विय। 5

१५. कालङ्कतपुरिसवण्णना

३२. विलातं ति सिविकं। पेतं ति इतो पटिगतं। कालङ्कतं ति कतकालं, यत्तकं तेन कालं जीवितब्बं, तं सब्बं कत्वा निट्ठपेत्वा मतं ति अत्थो। इमम्पिस्स पुरिमनयेनेव ब्रह्मानो दस्सेसुं। यत्र हि नामा ति इधापि याय जातिया सति इदं तयं पञ्ञायति, धिक्कता सा जाति, अजातं खेमं ति जातिया मूलं खणन्तो निसीदि, ततियेन सल्लेन विद्धो विय। 10 15

१६. पब्बजितवण्णना

B. 48

३५. भण्डुं (दी० नि० २.२३) ति मुण्डं। इमम्मिस्स पुरिमनयेनेव ब्रह्मानो दस्सेसुं। साधु धम्मचरिया ति आदीसु अयं देव धम्मचरणभावो साधू ति चिन्तेत्वा पब्बजितो ति एवं एकमेकस्स पदस्स योजना वेदितब्बा। सब्बानि चेतानि दसकुसलकम्मपथवेवचनानेव। अवसाने पन अविहिंसा ति करुणाय पुब्बभागो। अनुकम्पा ति मेत्ताय पुब्बभागो। तेनही ति उय्योजनत्थे निपातो। पब्बजितम्हिस्स दिस्वा चित्तं 20

[1] मा न कारेतु—सी०, रो०। [2] धिरत्थु—सी०, स्या०, रो०।

पब्बज्जाय निन्नं जातं। अथ तेन सद्धिं कथेतुकामो हुत्वा सारथिं उय्योजेन्तो **तेन ही** ति आदिमाह।

१७. बोधिसत्तपब्बज्जावण्णना

R. 457 ३६. **अथ खो भिक्खवे** (दी० नि० २.२४) ति—"पब्बजितस्स साधु धम्मचरिया" ति आदीनि च अञ्ञञ्च बहुं महाजनकायेन[1] रक्खियमानस्स पुत्तदारसम्बाधे घरे वसतो आदीनवपटिसंयुत्तञ्चेव मिगभूतेन चेतसा यथासुखं वने वसतो पब्बजितस्स विवेकानिसंसपटिसंयुत्तञ्च[2] धम्मिं[3] कथं[3] सुत्वा पब्बजितुकामो हुत्वा—"अथ खो भिक्खवे, विपस्सी कुमारो सारथिं आमन्तेसि"।

इमानि चत्तारि दिस्वा पब्बजितं नाम सब्बबोधिसत्तानं वंसोव तन्तियेव पवेणी येव। अञ्ञे पि बोधिसत्ता यथा अयं विपस्सी कुमारो, एवं चिरस्सं चिरस्सं पस्सन्ति। अम्हाकं पन बोधिसत्तो चत्तारि पि एकदिवसञ्ञेव दिस्वा महाभिनिक्खमनं निक्खमित्वा अनोमानदीतीरे पब्बजितो। तेनेव राजगहं पत्वा तत्थ रञ्ञा बिम्बिसारेन—"किमत्थं, पण्डित, पब्बजितोसी ति" पुट्ठो आह—

"जिण्णञ्च दिस्वा दुखितञ्च ब्याधितं,
मतञ्च दिस्वा गतमायुसङ्खयं।
कासायवत्थं पब्बजितञ्च दिस्वा,
तस्मा अहं पब्बजितोम्हि राजा" ति॥

१८. महाजनकायअनुपब्बज्जावण्णना

३७ **सुत्वान तेसं** (दी० नि० २.२५) ति तेसं चतुरासीतिया पाणसहस्सानं सुत्वा एतदहोसि। **ओरको** ति ऊनको[4] लामको। B. 49 **अनुपब्बजिंसू** ति अनुपब्बजितानि। कस्मा पनेत्थ यथा परतो खण्डतिस्सानं अनुपब्बज्जाय—"बन्धुमतिया राजधानिया निक्खमित्वा" ति वुत्तं, एवं न वुत्तं ति? निक्खमित्वा सुतत्ता। एते किर सब्बे पि

१. महाबलकायेन—सी०, रो०। २. विवेकादिपटिसंयुत्तं च—सी०, रो०।
३-३. धम्मकथं—सी०, स्या०। ४. औनको—स्या०।

विपस्सिस्स कुमारस्स उपट्ठाकपरिसाव। ते पातोव उपट्ठानं आगन्त्वा कुमारं आदिस्वा पातरासत्थाय गन्त्वा भुत्तपातरासा आगम्म "कुहिं कुमारो" ति पुच्छित्वा "उय्यानभूमिं गतो" ति सुत्वा "तत्थेव नं दक्खिस्साम" ति निक्खमन्ता[1] निवत्तमानं सारथिं दिस्वा—"कुमारो पब्बजितो" ति चस्स वचनं सुत्वा सुतट्ठानेयेव सब्बाभरणानि ओमुञ्चित्वा अन्तरापणतो कासावपीतानि वत्थानि आहरापेत्वा केसमस्सुं ओहारेत्वा पब्बजिंसु। इति नगरतो निक्खमित्वा बहिनगरे सुतत्ता एत्थ—"बन्धुमतिया राजधानिया निक्खमित्वा" ति न वुत्तं। B. 80 5

चारिकं चरती ति गतगतट्ठाने महामण्डपं कत्वा दानं सज्जेत्वा आगम्म स्वातनाय निमन्तितो जनस्स आयाचितभिक्खमेव पटिग्गण्हन्तो चत्तारो मासे चारिकं चरि[2]। R. 458 10

आकिण्णो ति इमिना गणेन परिवुतो। अयं पन वितक्को बोधिसत्तस्स कदा उप्पन्नो ति? स्वे विसाखपुण्णमा भविस्सती ति चातुद्दसीदिवसे। तदा किर सो—"यथेव मं इमे पुब्बे गिहिभूतं परिवारेत्वा चरन्ति, इदानि पि तथेव, किं इमिना गणेना" ति गणसङ्गणिकाय उक्कण्ठित्वा "अज्जेव गच्छामी" ति चिन्तेत्वा पुन "अज्ज अवेला, सचे इदानि गमिस्सामि, सब्बेव इमे जानिस्सन्ति, स्वेव गमिस्सामी" ति चिन्तेसि। तं दिवसं च उरुवेलगामसदिसे गामे गामवासिनो स्वातनाय निमन्तयिंसु। ते चतुरासीतिसहस्सानम्पि तेसं पब्बजितानं महापुरिसस्स च पायासमेव पटियादयिंसु। अथ महापुरिसो पुनदिवसे तस्मिं येव गामे तेहि पब्बजितेहि सद्धिं भत्तकिच्चं कत्वा वसनट्ठानमेव अगमासि। तत्थ ते पब्बजिता महापुरिसस्स वत्तं दस्सेत्वा अत्तनो अत्तनो रत्तिट्ठानदिवाट्ठानानि पविट्ठा। बोधिसत्तो पि पण्णसालं पविसित्वा निसिन्नो। 15 20

१. ० निक्खन्ता—सी०, स्या०, रो०। २. चरति सी०, रो०।

"ठिते मज्झन्हिके[1] काले, सन्निसीवेसु[2] पक्खिसु।
सणतेव ब्रहारञ्ञं, तं भयं पटिभाति मं"
(सं० नि० १.८) ति ॥

B. 50 एवरूपे अविवेकारामानं[3] भयकाले सब्बसत्तानं सदरथकाले
5 येव—"अयं कालो" ति निक्खमित्वा पण्णसालाय द्वारं पिदहित्वा बोधिमण्डाभिमुखो पायासि। अञ्ञदा पि च तस्मिं ठाने विचरन्तो बोधिमण्डं पस्सति, निसीदितुं पनस्स चित्तं न नमितपुब्बं। तं दिवसं पनस्स ञाणं परिपाकगतं, तस्मा अलङ्कतं बोधिमण्डं दिस्वा आरोहनत्थाय चित्तं उप्पन्नं। सो दक्खिणदिसाभागेन उपगम्म पदक्खिणं कत्वा
10 पुरत्थिमदिसाभागे चुद्दसहत्थं पल्लङ्कं पञ्ञपेत्वा चतुरङ्गवीरियं अधिट्ठहित्वा—"याव बुद्धो न होमि, न ताव इतो वुट्ठहामी" ति पटिञ्ञं कत्वा निसीदि। इदमस्स[4] वूपकासं सन्धाय—"एकोव गणम्हा वूपकट्ठो विहसी" ति वुत्तं।

R. 459 अञ्ञेनेव तानी ति ते किर सायं बोधिसत्तस्स उपट्ठानं आगन्त्वा
15 पण्णसालं परिवारेत्वा निसिन्ना "अतिविकालो जातो, उपधारेथा" ति वत्वा पण्णसालं विवरित्वा तं अपस्सन्तापि "कुहिं गतो" ति[5] नानुबन्धिंसु, "गणवासे निब्बिन्नो एको विहरितुकामो मञ्ञे महापुरिसो, बुद्धभूतंयेव नं पस्सिस्सामा" ति वत्वा[6] अन्तोजम्बुदीपाभिमुखा चारिकं पक्कन्ता।

१९. बोधिसत्त-ञाणपटिवेधवण्णना

20 ३९. वासूपगतस्सा (दी० नि० २.२५) ति बोधिमण्डे एकरत्तिवासं उपगतस्स। रहोगतस्सा ति रहसि गतस्स। पटिसल्लीनस्सा ति एकीभाववसेन निलीनस्स। किच्छं ति दुक्खं। चवति च उपपज्जति चा ति इदं द्वयं पन अपरापरं चुतिपटिसन्धिं सन्धाय

१. मज्झन्तिके—सी०, स्या०, रो०। २. सन्निसिन्नेसु—सी०, स्या०, रो०।
३. पविवेकारामानं—सी०, स्या०, रो०। ४. इममस्स—सी०, स्या०।
५. ० कुहिं गतो—सी०, स्या०। ६. सी०, स्या०, रो० पोत्थकेसु नत्थि।

वुत्तं। जरामरणस्सा ति एत्थ यस्मा पब्बजन्तो जिण्णब्याधिमत्तेयेव दिस्वा पब्बजितो, तस्मास्स जरामरणमेव उपट्ठाति। तेनेवाह—"जरामरणस्सा" ति। इति जरामरणं मूलं कत्वा अभिनिविट्ठस्स भवग्गतो ओतरन्तस्स विय–"अथ, खो भिक्खवे, विपस्सिस्स बोधिसत्तस्स एतदहोसि"। 5

योनिसोमनसिकारा ति उपायमनसिकारा पथमनसिकारा। अनिच्चादीनि हि अनिच्चादितोव मनसिकरोतो योनिसोमनसिकारो नाम होति। अयञ्च—"किस्मिं नु खो सति जातिआदीनि होन्ति, किस्मिं असति न होन्ती" ति उदयब्बयानुपस्सनावसेन पवत्तत्ता तेसं अञ्ञतरो। तस्मास्स इतो योनिसोमनसिकारा इमिना उपायमनसि- 10 B. 51 कारेन अहु पञ्ञाय अभिसमयो, (दी० नि० २.२६) बोधिसत्तस्स पञ्ञाय यस्मिं सति जरामरणं होति, तेन जरामरणकारणेन सद्धिं समागमो अहोसि। किं पन तन्ति? जाति तेनाह—"जातिया खो सति जरामरणं होती" ति। या चायं जरामरणस्स कारणपरिग्गहिका पञ्ञा, ताय सद्धिं बोधिसत्तस्स समागमो अहोसी ति अयमेत्थ अत्थो। 15 एतेनुपायेन सब्बपदानि वेदितब्बानि।

नामरूपे खो सति विञ्ञाणं ति एत्थ पन सङ्खारेसु सति विञ्ञाणं ति च, अविज्जाय सति सङ्खारा ति च वत्तब्बं भवेय्य, तदुभयम्पि न गहितं। कस्मा[1]? अविज्जासङ्खारा हि अतीतो भवो तेहि सद्धिं अयं विपस्सना न घटियति। महापुरिसो हि पच्चुप्पन्नवसेन 20 अभिनिविट्ठो ति। ननु च अविज्जासङ्खारेहि अदिट्ठेहि न सक्का बुद्धेन भवितुं ति। सच्चं न सक्का, इमिना पन ते भवउपादानतण्हावसेनेव दिट्ठा ति। इमस्मिं ठाने वित्थारतो पटिच्चसमुप्पादकथा कथेतब्बा। R. 400 सा पनेसा विसुद्धिमग्गे कथिताव।

४०. पच्चुदावत्तती (दी० नि० २.२७) ति पटिनिवत्तति। कतमं 25 पनेत्थ विञ्ञाणं पच्चुदावत्तती ति? पटिसन्धिविञ्ञाणं पि

१. तस्मा—सी०, स्या०।

विपस्सनाञाणं[1] पि। तत्थ पटिसन्धिविञ्ञाणं पच्चयतो पटिनिवत्तति, विपस्सनाञाणं आरम्मणतो। उभयम्पि नामरूपं नातिक्कमति, नामरूपतो परं न गच्छति। एत्तावता जायेथ वा ति आदीसु विञ्ञाणे नामरूपस्स पच्चये होन्ते, नामरूपे च विञ्ञाणस्स पच्चये होन्ते, द्वीसुपि अञ्ञमञ्ञ-
5 पच्चयेसु होन्तेसु एत्तकेन जायेथ वा...पे०...उपपज्जेथ वा, इतो हि परं किं अञ्ञं जायेय्य वा...पे०...उपपज्जेय्य वा। ननु एतदेव जायति च...पे०...उपपज्जति चा ति? एवं सद्धिं अपरापरचुतिपटिसन्धीहि पञ्च पदानि दस्सेत्वा पुन तं एत्तावता ति वुत्तमत्थं निय्यातेन्तो—"यदिदं नामरूपपच्चया विञ्ञाणं, विञ्ञाणपच्चया नामरूपं" ति वत्वा
10 ततो परं अनुलोमपच्चयाकारवसेन विञ्ञाणपच्चया नामरूपमूलं[2] आयतिम्पि जातिजरामरणं[3] दस्सेतुं नामरूपपच्चया सळायतनं ति आदिमाह। तत्थ केवलस्स दुक्खक्खन्धस्स समुदयो होती ति सकलस्स जातिजरामरणसोकपरिदेवदुक्खदोमनस्सुपायासादिभेदस्स दुक्खरासिस्स निब्बत्ति होति। इति महापुरिसो सकलस्स वट्टदुक्खस्स निब्बत्तिं अद्दस।

B. 52 15 **४१. समुदयो समुदयो ति खो ति** निब्बत्ति निब्बत्ती ति खो। पुब्बे अननुस्सुतेसू ति न अनुस्सुतेसु अस्सुतपुब्बेसु। **चक्खुं उदपादी** ति आदीसु उदयदस्सनपञ्ञावेसा। दस्सनट्ठेन चक्खु, ञातकरणट्ठेन ञाणं, पजाननट्ठेन पञ्ञा, निब्बिज्झित्वा पटिविज्झित्वा उप्पन्नट्ठेन विज्जा, ओभासट्ठेन च आलोको ति वुत्ता। यथाह—"चक्खुं उदपादी
20 ति दस्सनट्ठेन। ञाणं उदपादी ति ञातट्ठेन[4]। पञ्ञा उदपादी ति पजाननट्ठेन। विज्जा उदपादी ति पटिवेधट्ठेन। आलोको उदपादी ति ओभासट्ठेन। चक्खुधम्मो दस्सनट्ठो अत्थो, ञाणधम्मो ञातट्ठो अत्थो, पञ्ञाधम्मो पजाननट्ठो अत्थो, विज्जाधम्मो पटिवेधट्ठो अत्थो, आलोको
R. 461 धम्मो ओभासट्ठो अत्थो" (पटि० ४१४) ति। एत्तकेहि पदेहि किं

१ विपस्सनाविञ्ञाणं—सी०, स्या०, रो०।
२. ० मूलकं—सी०, रो०।
३. सी०, रो० पोत्थकेसु नत्थि।
४. ञाणट्ठेन—सी०, रो०।

कथितं ति ? इमस्मिं सति इदं होती ति पच्चयसञ्जाननमत्तं कथितं । अथवा वीथि पटिपन्ना तरुणविपस्सना कथिता ति ।

४३. अधिगतो खो म्यायं (दी० नि० २.२८) ति अधिगतो खो मे अयं । मग्गो ति विपस्सनामग्गो । बोधाया ति चतुसच्चबुज्झनत्थाय, निब्बानबुज्झनत्थाय एव वा । अपिच बुज्झती ति बोधि, अरियमग्गस्सेतं नामं, तदत्थाया ति पि वुत्तं होति । विपस्सनामग्गमूलको हि अरियमग्गो ति । इदानि तं मग्गं निय्यातेन्तो—"यदिदं नामरूपनिरोधा ति आदिमाह । एत्थ च विञ्ञाणनिरोधो ति आदीहि पञ्चत्तपदेहि निब्बानमेव कथितं । इति महापुरिसो सकलस्स वट्टदुक्खस्स अनिब्बत्तिनिरोधं अद्दस । 10

४४. निरोधो निरोधो ति खो (दी० नि० २.२९) ति अनिब्बत्ति अनिब्बत्ती ति खो । चक्खुं ति आदीनि वुत्तत्थानेव । इध पन सब्बेहेव एतेहि पदेहि—"इमस्मिं असति इदं न होती" ति निरोधसञ्जाननमत्तमेव कथितं, अथवा वुट्ठानगामिनी बलवविपस्सना कथिता ति ।

४५. अपरेन समयेना ति एवं पच्चयञ्च पच्चयनिरोधञ्च विदित्वा 15 ततो अपरभागे । उपादानक्खन्धेसू ति उपादानस्स पच्चयभूतेसु खन्धेसु । उदयब्बयानुपस्सी ति तमेव पठमं दिट्ठं उदयञ्च वयञ्च अनुपस्समानो । विहासी ति सिखापत्तं वुट्ठानगामिनिविपस्सनं वहन्तो[1] विहरि । इदं कस्मा वुत्तं ? सब्बेयेव हि पूरितपरमिनो बोधिसत्ता पच्छिमभवे पुत्तस्स जातदिवसे महाभिनिक्खमनं निक्खमित्वा 20 B. 53 पब्बजित्वा पधानमनुयुञ्जित्वा बोधिपल्लङ्कमारुय्ह मारबलं विधमित्वा पठमयामे पुब्बेनिवासं अनुस्सरन्ति, दुतिययामे दिब्बचक्खुं विसोधेन्ति, ततिययामे पच्चयाकारं सम्मसित्वा आनापानचतुत्थज्झानतो वुट्ठाय पञ्चसु खन्धेसु अभिनिविसित्वा उदयब्बयवसेन समपञ्ञास लक्खणानि दिस्वा याव गोत्रभुञाणा विपस्सनं वड्ढेत्वा अरियमग्गेन सकले बुद्धगुणे 25 पटिविज्झन्ति । अयम्पि महापुरिसो पूरितपारमी[2] । सो यथावुत्तं

१. वड्ढेन्तो—सी०, स्या०, रो० । १. पूरितपारमियो—सी० ।

सब्बं अनुक्कमं कत्वा पच्छिमयामे आनापानचतुत्थज्झानतो वुट्ठाय पञ्चसु खन्धेसु अभिनिविसित्वा वुत्तप्पकारं उदयब्बयविपस्सनं आरभि। तं दस्सेतुं इदं वुत्तं।

R. 462 **तत्थ इति रूपं ति** इदं रूपं, एत्तकं रूपं, इतो उद्धं रूपं नत्थी ति
5 रूप्पनसभावञ्चेव[1] भूतुपादायभेदञ्च आदिं कत्वा लक्खणरसपच्चुपट्ठान-पदट्ठानवसेन अनवसेसरूपपरिग्गहो वुत्तो। **इति रूपस्स समुदयो ति** इमिना एवं परिग्गहितस्स रूपस्स समुदयदस्सनं वुत्तं। तत्थ **इती ति** एवं समुदयो होती ति अत्थो। तस्स वित्थारो—"अविज्जासमुदया रूपसमुदयो, तण्हासमुदया रूपसमुदयो कम्मसमुदयो रूपसमुदयो,
10 आहारसमुदयो रूपसमुदयो ति, निब्बत्तिलक्खणं पस्सन्तो पि रूपक्खन्धस्स उदयं पस्सती" ति एवं वेदितब्बो। अत्थङ्गमेपि "अविज्जानिरोधा रूपनिरोधो...पे...विपरिणामलक्खणं पस्सन्तोपि रूपक्खन्धस्स निरोधं पस्सती" (पटि० ६१) ति अयमस्स वित्थारो।

इति वेदना ति आदीसुपि अयं वेदना, एत्तका वेदना, इतो उद्धं
15 वेदना नत्थि। अयं सञ्ञा, इमे सङ्खारा, इदं विञ्ञाणं, एत्तकं विञ्ञाणं, इतो उद्धं विञ्ञाणं नत्थी ति वेदयितसञ्जाननअभिसङ्खरण-विजाननसभावञ्चेव सुखादिरूपसञ्ञादि फस्सादि चक्खुविञ्ञाणादि भेदञ्च आदिं कत्वा लक्खणरसपच्चुपट्ठानपदट्ठानवसेन अनवसेसवेदना सञ्ञासङ्खारविञ्ञाणपरिग्गहो वुत्तो। **इति वेदनाय समुदयो ति**
20 आदीहि पन एवं परिग्गहितानं वेदनासञ्ञासङ्खारविञ्ञाणानं समुदय-दस्सनं वुत्तं। तत्रापि **इती ति** एवं समुदयो होती ति अत्थो। तेसं पि वित्थारो—"अविज्जासमुदया वेदनासमुदयो" (पटि० ६१) ति रूपे वुत्तनयेनेव वेदितब्बो। अयं पन विसेसो—तीसु खन्धेसु "आहार-समुदया" ति अवत्वा "फस्ससमुदया" ति वत्तब्बं। विञ्ञाणक्खन्धे
B. 54 25 "नामरूपसमुदया" ति अत्थङ्गमपदम्पि तेसं येव वसेन योजेतब्बं। अयमेत्थ सङ्खेपो, वित्थारो पन उदयब्बयविनिच्छयोसब्बाकारपरिपूरो

१. रूप्पनसभावा चेव—सी०।

विसुद्धिमग्गे वुत्तो। तस्स पञ्चसु उपादानक्खन्धेसु उदयब्बयानुपस्सिनो विहरतो ति तस्स विपस्सिस्स बोधिसत्तस्स इमेसु रूपादीसु पञ्चसु उपादानक्खन्धेसु समपञ्ञासलक्खणवसेन उदयब्बयानुपस्सिनो विहरतो यथानुक्कमेन वड्ढिते विपस्सनाञाणे अनुप्पादनिरोधेन निरुज्झमानेहि आसवसङ्खातेहि किलेसेहि अनुपादाय अग्गहेत्वाव चित्तं विमुच्चति[1], 5 तदेतं मग्गक्खणे विमुच्चति नाम, फलक्खणे विमुत्तं नाम मग्गक्खणे वा विमुत्तञ्चेव[2] विमुच्चति च, फलक्खणे विमुत्तमेव। R. 463

एत्तावता च महापुरिसो सब्बबन्धना विप्पमुत्तो सूरियरस्मि सम्फुट्ठमिव पदुमं सुविकसितचित्तसन्तानो चत्तारि मग्गञाणानि, चत्तारि फलञाणानि, चतस्सो पटिसम्भिदा, चतुयोनिपरिच्छेदकञाणं, पञ्चगति- 10 परिच्छेदकञाणं, छ असाधारणञाणानि सकले च बुद्धगुणे हत्थगते कत्वा परिपुण्णसङ्कप्पो बोधिपल्लङ्के निसिन्नोव—

"अनेकजातिसंसारं, सन्धाविस्सं अनिब्बिसं।
गहकारं[3] गवेसन्तो, दुक्खा जाति पुनप्पुनं॥
गहकारक दिट्ठोसि, पुन गेहं न काहसि। 15
सब्बा ते फासुका भग्गा, गहकूटं विसङ्खतं।
विसङ्खारगतं चित्तं, तण्हानं खयमज्झगा"

(ध० प० ३२) ति॥

"अयोधनहतस्सेव, जलतो जातवेदसो।
अनुपुब्बूपसन्तस्स, यथा न ञायते गति। 20
एवं सम्माविमुत्तानं, कामबन्धोघतारिनं।
पञ्ञापेतुं गति नत्थि, पत्तानं अचलं सुखं"

(उदा० १७७) ति॥

एवं मनसि करोन्तो सरदे सूरियो विय, पुण्णचन्दो विय विरोचित्था ति। 25

दुतियभाणवारकथा निट्ठिता।

१. विमुच्चि—सी०, रो०। २. विमुत्तमेव—सी०।
३. गहकारकं—सी०, रो०।

२०. ब्रह्मयाचनकथावण्णना

B. 55 ४६. ततियभाणवारे यंनूनाहं धम्मं देसेय्यं ति यदि पनाहं धम्मं देसेय्यं। अयं पन वितक्को कदा उप्पन्नो ति? बुद्धभूतस्स अट्ठमे सत्ताहे। सो किर बुद्धो हुत्वा सत्ताहं बोधिपल्लङ्के निसीदि, सत्ताहं[1] बोधिपल्लङ्कं ओलोकेन्तो अट्ठासि, सत्ताहं रतनचङ्कमे चङ्कमि, 10 सत्ताहं रतनगब्भे धम्मं विचिनन्तो निसीदि, सत्ताहं अजपालनिग्रोधे निसीदि, सत्ताहं मुचलिन्दे निसीदि, सत्ताहं राजायतने निसीदि। ततो वुट्ठाय अट्ठमे सत्ताहे पुन अगन्त्वा अजपालनिग्रोधे निसिन्नमत्तस्सेव R. 464 सब्बबुद्धानं आचिण्णसमाचिण्णा अयञ्चेव इतो अनन्तरो च वितक्को उप्पन्नो ति।

15 तत्थ अधिगतो ति पटिविद्धो। धम्मो ति चतुसच्चधम्मो। गम्भीरो ति उत्तानभावपटिक्खेपवचनमेतं। दुद्दसो ति गम्भीरत्ताव दुद्दसो दुक्खेन दट्ठब्बो, न सक्का सुखेन दट्ठुं। दुद्दसत्ताव दुरनुबोधो दुक्खेन अवबुज्झितब्बो, न सक्का सुखेन अवबुज्झितुं। सन्तो ति निब्बुतो। पणीतो ति अतप्पको। इदं द्वयं लोकुत्तरमेव सन्धाय वुत्तं। 20 अतक्कावचरो ति तक्केन अवचरितब्बो ओगाहितब्बो न होति, ञाणेनेव अवचरितब्बो। निपुणो ति सण्हो। पण्डितवेदनीयो ति सम्मापटिपदं पटिपन्नेहि पण्डितेहि वेदितब्बो। आलयरामा ति सत्ता पञ्चसु कामगुणेसु अल्लीयन्ति, तस्मा ते आलया ति वुच्चन्ति। अट्ठसततण्हाविचरितानि आलयं ति, तस्मा आलया ति वुच्चन्ति। 25 तेहि आलयेहि रमन्ती ति आलयरामा। आलयेसु रता ति आलयरता। आलयेसु सुट्ठु मुदिता ति आलयसम्मुदिता। यथेव[2] हि[2] सुसज्जितं पुप्फफलभरितरुक्खादिसम्पन्नं उय्यानं पविट्ठो राजा ताय ताय सम्पत्तिया रमति, पमुदितो[3] आमोदितो[3] होति, न उक्कण्ठति, सायं[4] निक्खमितुं न इच्छति, एवमिमेहि पि कामालयतण्हालयेहि

१. ततो वुट्ठाय०—सी०, रो०। २-२. यथाहि—सी०, रो०। ३-३. सम्मुदितो सुमोदितपमोदितो—सी०, रो०; सम्मुदितो आमोदितो पमोदित—स्या०। ४. ० पि—सी०, स्या०, रो०।

सत्ता रमन्ति, संसारवट्टे पमुदिता[1] अनुक्कण्ठिता वसन्ति । तेन नेसं भगवा दुविधम्पि आलयं उय्यानभूमिं विय दस्सेन्तो—"आलयरामा" ति आदिमाह ।

यदिदं ति निपातो । तस्स ठानं सन्धाय—"यं इदं" ति, पटिच्चसमुप्पादं सन्धाय—"यो अयं" ति एवमत्थो दट्ठब्बो । 5 इदप्पच्चयतापटिच्चसमुप्पादो ति इमेसं पच्चया इदप्पच्चया, इदप्पच्चया एव इदप्पच्चयता, इदप्पच्चयता च सा पटिच्चसमुप्पादो चा ति इदप्पच्चयतापटिच्चसमुप्पादो । सङ्खारादिपच्चयानं अविज्जादीनं एतं B. 56 अधिवचनं । सब्बसङ्खारसमथो ति आदि सब्बं निब्बानमेव । यस्मा हि तं आगम्म सब्बसङ्खारविप्फन्दितानि सम्मन्ति वूपसम्मन्ति तस्मा— 10 "सब्बसङ्खारसमथो" ति वुच्चति । यस्मा च तं आगम्म सब्बे उपधयो पटिनिस्सट्ठा होन्ति, सब्बा तण्हा खीयन्ति, सब्बे किलेसरागा विरज्जन्ति, R. 465 सब्बं दुक्खं निरुज्झति, तस्मा "सब्बूपधिपटिनिस्सग्गो तण्हाक्खयो विरागो निरोधो" ति वुच्चति । सा पनेसा तण्हा भवेन भवं, फलेन वा सद्धिं कम्मं विनति संसिब्बती ति कत्वा वानं ति वुच्चति । ततो 15 वानतो निक्खन्तं ति निब्बानं । सो ममस्स किलमथो ति या अजानन्तानं देसना नाम, सो मम किलमथो अस्स, सा मम विहेसा अस्सा ति अत्थो । कायकिलमथो चेव कायविहेसा च अस्सा ति वुत्तं होति, चित्ते पन उभयम्पेतं बुद्धानं नत्थि ।

४७. अपिस्सू (दी० नि० २.३०) ति अनुब्रूहनत्थे निपातो । सो 20 —"न केवलं एतदहोसि, इमा पि गाथा पटिभंसू" ति दीपेति । विपस्सिं ति आदीसु विपस्सिस्स भगवतो अरहतो सम्मासम्बुद्धस्सा ति अत्थो । अनच्छरिया ति अनुअच्छरिया । पटिभंसू ति पटिभानसङ्खातस्स ञाणस्स गोचरा अहेसुं, परिवितक्कयितब्बतं पापुणिंसु । किच्छेना ति दुक्खेन, न दुक्खाय पटिपदाय । 25

[1] सम्मुदिता—सी०, स्या०, रो० ।

बुद्धानञ्हि चत्तारो पि मग्गा सुखपटिपदाव होन्ति। पारमीपूरणकाले पन सरागसदोससमोहस्सेव सतो आगतागतानं[1] याचकानं अलङ्कतपटियत्तं सीसं छिन्दित्वा गललोहितं नीहरित्वा सुअञ्जितानि अक्खीनि उप्पाटेत्वा कुलवंसपदीपकं पुत्तं मनापचारिनिं भरियं ति एवमादीनि
5 देन्तस्स अञ्ञानि च खन्तिवादिसदिसेसु अत्तभावेसु छेज्जभेज्जादीनि पापुणन्तस्स आगमनीयपटिपदं सन्धायेतं वुत्तं। हलं ति एत्थ हकारो निपातमत्तो। अलं ति अत्थो। पकासितुं ति देसेतुं। एवं किच्छेन अधिगतस्स धम्मस्स अलं देसेतुं; को[2] अत्थो देसितेना ति वुत्तं होति। रागदोसपरेतेही ति रागदोसफुट्ठेहि रागदोसानुगतेहि वा।

10 पटिसोतगामिं ति निच्चादीनं पटिसोतं अनिच्चं दुक्खमनत्तासुभं ति एवं गतं चतुसच्चधम्मं। रागरत्ता ति कामरागेन भवरागेन दिट्ठिरागेन च रत्ता। न दक्खन्ती ति अनिच्चं दुक्खमनत्ता असुभं ति
B. 57 इमिना सभावेन न पस्सिस्सन्ति। ते अपस्सन्ते को सक्खिस्सति एवं गाहापेतुं? तमोखन्धेन आवुटा ति अविज्जारासिना अज्झोत्थटा।

15 अप्पोस्सुक्कताया ति निरुस्सुक्कभावेन, अदेसेतुकामताया ति
R. 466 अत्थो। कस्मा पनस्स एवं चित्तं नमि? ननु एस—"मुत्तो मोचेस्सामी, तिण्णो तारेस्सामि।

"किं मे अञ्ञातवेसेन, धम्मं सच्छिकतेनिध।
सब्बञ्ञुतं पापुणित्वा, सन्तारेस्सं[3] सदेवकं[4]," ति॥

20 पत्थनं कत्वा पारमियो पूरेत्वा सब्बञ्ञुतं पत्तो ति सच्चमेतं। पच्चवेक्खणानुभावेन पनस्स एवं चित्तं नमि। तस्स हि सब्बञ्ञुतं पत्वा सत्तानं किलेसगहनतं धम्मस्स च गम्भीरतं पच्चवेक्खन्तस्स सत्तानं किलेसगहनता च धम्मगम्भीरता च सब्बाकारेन पाकटा जाता। अथस्स "—इमे सत्ता कञ्जिकपुण्णलाबु विय तक्कभरितचाटि विय

१. आगतानं—सी०, स्या०, रो०।
२. परियत्तं देसितुं—स्या०; परियत्तं देसितुं०—सी०, रो०।
३. तारयिस्सं—सी०, रो०।
४. सदेवके—सी०, रो०।

वसातेलपीतपिलोतिका विय अञ्जनमक्खितहत्था[1] विय किलेसभरिता अतिसंकिलिट्ठा रागरत्ता दोसदुट्ठा मोहमूळ्हा, ते किं नाम पटिविज्झिस्सन्ती'' ति चिन्तयतो किलेसगहनपच्चवेक्खणानुभावेना पि एवं चित्तं नमि।

''अयञ्च धम्मो पथवीसन्धारकउदकक्खन्धो विय गम्भीरो, पब्बतेन पटिच्छादेत्वा ठपितो सासपो विय दुद्दसो, सतधा भिन्नस्स वालस्स कोटिया[2] कोटिं[3] पटिपादनं विय दुरनुबोधो[3]। ननु मया हि इमं धम्मं पटिविज्झितुं वायमन्तेन अदिन्नं दानं नाम नत्थि, अरक्खितं सीलं नाम नत्थि, अपरिपूरिता कोचि पारमी नाम नत्थि? तस्स मे निरुस्साहं विय मारबलं विधमन्तस्सापि पथवी न कम्पित्थ, पठमयामे पुब्बेनिवासं अनुस्सरन्तस्सा पि न कम्पित्थ, मज्झिमयामे दिब्बचक्खुं विसोधेन्तस्सा पि न कम्पित्थ, पच्छिमयामे पन पटिच्चसमुप्पादं पटिविज्झन्तस्सेव मे दससहस्सिलोकधातु कम्पित्थ, इति मादिसेनापि तिक्खञाणेन किच्छेनेवायं धम्मो पटिविद्धो तं लोकियमहाजना कथं पटिविज्झिस्सन्ती' ति धम्मगम्भीरतापच्चवेक्खणानुभावेनापि एवं चित्तं नमी ति वेदितब्बं।

B. 58
R. 467

अपिच ब्रह्मुना याचिते देसेतुकामतायपिस्स एवं चित्तं नमि। जानाति हि भगवा—''मम अप्पोस्सुक्कताय चित्ते नममाने मं महाब्रह्मा धम्मदेसनं[4] याचिस्सति, इमे च सत्ता ब्रह्मगरुका, ते 'सत्था किर धम्मं न देसेतुकामो अहोसि, अथ नं महाब्रह्मा याचित्वा देसापेसि, सन्तो वत भो धम्मो, पणीतो वत भो धम्मो' ति मञ्ञमाना सुस्सूसिस्सन्ती'' ति। इमम्पिस्स कारणं पटिच्च अप्पोस्सुक्कताय चित्तं नमि, नो धम्मदेसनायाति वेदितब्बं।

४८. अञ्ञतरस्सा (दी० नि० २.३०) ति एत्थ किञ्चापि ''अञ्ञतरो'' ति वुत्तं, अथ खो इमस्मिं चक्कवाळे जेट्ठकमहाब्रह्मा[5]

1. ० हत्थो—सी०, स्या०, रो०।
2. ० विय अनु—सी०, रो०।
2-3. सी०, रो० पोत्थकेसु नत्थि।
4. धम्मदेसनाय—सी०, स्या०।
5. जेट्ठ ०—सी०।

एसो ति वेदितब्बो। **नस्सति वत भो लोको** ति सो किर इमं सद्दं तथा निच्छारेसि, यथा दससहस्सिलोकधातुब्रह्मानो सुत्वा सब्बे सन्निपतिंसु। **यत्र हि नामा** ति यस्मिं नाम लोके। **पुरतो पातुरहोसी** ति तेहि दसहि ब्रह्मसहस्सेहि सद्धिं पातुरहोसि।
5 **अप्परजक्खजातिका** ति पञ्ञामये अक्खिम्हि अप्पं परित्तं रागदोसमोहरजं एतेसं, एवं सभावा ति अप्परजक्खजातिका। **अस्सवनता** ति अस्सवनताय। **भविस्सन्ती** ति पुरिमबुद्धेसु दसपुञ्ञकिरियवत्थुवसेन[1] कताधिकारा परिपाकगता पदुमानि विय सूरियरस्मिसम्फस्सं, धम्मदेसनं येव आकङ्खमाना चतुप्पदिकगाथावसाने अरियभूमिं
10 ओक्कमनारहा न एको, न द्वे, अनेकसतसहस्सा धम्मस्स अञ्ञातारो भविस्सन्ती ति दस्सेति।

५१. **अज्झेसनं** (दी० नि० २.५१) ति एवं तिक्खत्तुं याचनं। **बुद्धचक्खुना** ति इन्द्रियपरोपरियत्तञाणेन[2] च आसयानुसयञाणेन च। इमेसञ्हि द्विन्नं ञाणानं "बुद्धचक्खू" ति नामं, सब्बञ्ञुतञ्ञाणस्स
15 "समन्तचक्खू" ति, तिण्णं मग्गञाणानं "धम्मचक्खू" ति। **अप्परजक्खे** ति आदीसु येसं वुत्तनयेनेव पञ्ञाचक्खुम्हि रागादिरजं अप्पं, ते **अप्परजक्खा**। येसं तं महन्तं, ते **महारजक्खा**। येसं सद्धादीनि इन्द्रियानि तिक्खानि, ते **तिक्खिन्द्रिया**। येसं तानि मुदूनि, ते **मुदिन्द्रिया**। येसं तेयेव सद्धादयो आकारा सुन्दरा, ते **स्वाकारा**।
20 ये कथितकारणं सल्लक्खेन्ति, सुखेन सक्का होन्ति विञ्ञापेतुं, ते **सुविञ्ञापया**। ये परलोकञ्चेव वज्जञ्च भयतो पस्सन्ति, ते **परलोकवज्जभयदस्साविनो** नाम।

B. 59
R. 468
अयं पनेत्थ पाळि—"सद्धो पुग्गलो अप्परजक्खो, अस्सद्धो पुग्गलो महारजक्खो। आरद्धवीरियो ...पे०... कुसीतो ...पे०...
25 उपट्ठितस्सति ...पे०... मुट्ठस्सति...पे०... समाहितो ...पे०..., असमाहितो ...पे०... पञ्ञवा ...पे०... दुप्पञ्ञो पुग्गलो

१. सी०, रो०, पोत्थकेसु नत्थि। २. ० परियञाणेन—सी०, रो०।

महारजक्खो। तथा सद्धो पुग्गलो तिक्खिन्द्रियो ...पे०... पञ्ञवा पुग्गलो परलोकवज्जभयदस्सावी, दुप्पञ्ञो पुग्गलो न परलोकवज्ज-भयदस्सावी। लोको ति खन्धलोको, धातुलोको, आयतनलोको, सम्पत्तिभवलोको, विपत्तिभवलोको, सम्पत्तिसम्भवलोको, विपत्तिसम्भव-लोको। एको लोको—सब्बे सत्ता आहारट्ठितिका। द्वे लोका—नामञ्च रूपञ्च। 5 तयो लोका—तिस्सो वेदना। चत्तारो लोका—चत्तारो आहारा। पञ्च लोका—पञ्चुपादानक्खन्धा। छ लोका—छ अज्झत्तिकानि आयतनानि। सत्त लोका—सत्त विञ्ञाणट्ठितियो। अट्ठ लोका—अट्ठ लोकधम्मा। नव लोका—नव सत्तावासा। दस लोका—दसायतनानि। द्वादस लोका—द्वादसायतनानि। अट्ठारस लोका—अट्ठारस धातुयो। वज्जं ति सब्बे 10 किलेसा वज्जा, सब्बे दुच्चरिता वज्जा, सब्बे अभिसङ्खारा वज्जा, सब्बे भवगामिकम्मा वज्जा। इति इमस्मिञ्च लोके इमस्मिञ्च वज्जे तिब्बा भयसञ्ञा पच्चुपट्ठिता होति, सेय्यथापि उक्खित्तासिके वधके। इमेहि पञ्ञासाय आकारेहि इमानि पञ्चिन्द्रियानि जानाति पस्सति अञ्ञाति पटिविज्झति, इदं तथागतस्स इन्द्रियपरोपरियत्ते ञाणं'' 15 (पटि० १३४-३७) ति।

B. 60

उप्पलिनियं ति उप्पलवने। इतरेसु पि एसेव नयो। अन्तोनिमुग्गपोसीनी ति यानि अञ्ञानिपि पदुमानि अन्तोनिमुग्गानेव पोसयन्ति। उदकं अच्चुग्गम्मठितानी ति उदकं अतिक्कमित्वा ठितानि। तत्थ यानि अच्चुग्गम्मठितानि, तानि सूरियरस्मिसम्फस्सं 20 आगमयमानानि ठितानि अज्ज[1] पुप्फनकानि। यानि समोदकं ठितानि, तानि स्वे पुप्फनकानि। यानि उदकानुग्गतानि अन्तोउदकपोसिनि[2], तानि ततियदिवसे पुप्फनकानि। उदका पन अनुग्गतानि अञ्ञानिपि सरोजउप्पलादीनि[3] नाम अत्थि, यानि नेव पुप्फिस्सन्ति, मच्छकच्छप- R. 469 भक्खानेव भविस्सन्ति, तानि पाळिं[4] नारुळ्हानि। आहरित्वा पन 25

१. तानि ०—स्या०। २. अन्तोनिमुग्गपोसिनी—सी०, स्या०, रो०।
३. सरोग ०—सी०; सरोगानि—स्या०।
४. पालिया—सी०, रो०।

दीपेतब्बानी ति दीपितानि। यथेव हि तानि चतुब्बिधानि पुप्फानि, एवमेव उग्घटितञ्ञू, विपञ्चितञ्ञू नेय्यो[1], पदपरमो ति चत्तारो पुग्गला।

B. 60 तत्थ "यस्स पुग्गलस्स सह उदाहटवेलाय धम्माभिसमयो होति, 5 अयं वुच्चति पुग्गलो उग्घटितञ्ञू। यस्स पुग्गलस्स संखित्तेन भासितस्स वित्थारेन अत्थे विभजियमाने धम्माभिसमयो होति, अयं वुच्चति पुग्गलो विपञ्चितञ्ञू। यस्स पुग्गलस्स उद्देसतो परिपुच्छतो योनिसोमनसिकरोतो कल्याणमित्ते सेवतो भजतो पयिरुपासतो अनुपुब्बेन धम्माभिसमयो होति, अयं वुच्चति पुग्गलो नेय्यो। यस्स पुग्गलस्स 10 बहुम्पि सुणतो बहुम्पि भणतो बहुम्पि गण्हतो बहुम्पि धारयतो बहुम्पि वाचयतो न ताय जातिया धम्माभिसमयो होति, अयं वुच्चति पुग्गलो पदपरमो" (पु० प० ६४)।

तत्थ भगवा उप्पलवनादिसदिसं दससहस्सिलोकधातुं ओलोकेन्तो— "अज्ज पुप्फनकानि विय उग्घटितञ्ञू, स्वे पुप्फनकानि विय विपञ्चि- 15 तञ्ञू, ततियदिवसे पुप्फनकानि विय नेय्यो, मच्छकच्छपभक्खानि[2] विय पदपरमो" ति अद्दस। पस्सन्तो च—"एत्तका अप्परजक्खा, एत्तका महारजक्खा। तत्रा पि एत्तका उग्घटितञ्ञू" ति एवं सब्बाकारतो अद्दस। तत्थ तिण्णं पुग्गलानं इमस्मिं येव अत्तभावे भगवतो धम्मदेसना अत्थं[3] साधेति, पदपरमानं अनागते[4] वासनत्थाय[4] होति।

20 अथ भगवा इमेसं चतुन्नं पुग्गलानं अत्थावहं धम्मदेसनं विदित्वा देसेतुकम्यतं उप्पादेत्वा पुन ते सब्बेसु पि तीसु भवेसु सब्बे सत्ते भब्बाभब्बवसेन द्वे कोट्ठासे अकासि। ये सन्धाय वुत्तं—"ये ते सत्ता कम्मावरणेन समन्नागता, विपाकावरणेन समन्नागता, किलेसावरणेन समन्नागता, अस्सद्धा अच्छन्दिका दुप्पञ्ञा अभब्बा नियामं ओक्कमितुं कुसलेसु

१. ञेय्या—सी०। २. ० पुप्फानि—सी०, रो०।
३. अरहत्तं—सी०; अरहन्तं—रो०। ४-४. अनागतत्थाय वासना—सी०, स्या०, रो०।

धम्मेसु सम्मत्तं, इमे ते सत्ता अभब्बा। कतमे सत्ता भब्बा ? ये ते सत्ता न कम्मावरणेन...पे०...इमे ते सत्ता भब्बा" (विभं० ४०५) ति।

तत्थ सब्बे पि अभब्बपुग्गले पहाय भब्बपुग्गलेयेव ञाणेन परिग्गहेत्वा—"एत्तका रागचरिता, एत्तका दोसमोहवितक्कसद्धाबुद्धिचरिता" ति छ कोट्ठासे अकासि। एवं कत्वा—"धम्मं देसेस्सामी" ति चिन्तेसि। ब्रह्मा तं ञत्वा सोमनस्सजातो भगवन्तं गाथाहि अज्झभासि। इदं सन्धाय—अथ, खो सो भिक्खवे, महाब्रह्मा" ति आदि वुत्तं। R. 470 5 B. 61

५२. तत्थ अज्झभासी (दी० नि० २.५२) ति अधिअभासि, अधिकिच्चआरब्भ अभासी ति अत्थो। 10

सेले यथा पब्बतमुद्धनिट्ठितो ति सेलमये एकग्घने पब्बतमुद्धनि यथाठितोव, न हि तत्थ ठितस्स दस्सनत्थं गीवुक्खिपनपसारणादिकिच्चं अत्थि। तथूपमं ति तप्पटिभागं सेलपब्बतूपमं। अयं पनेत्थ सङ्खेपत्थो, यथा सेलपब्बतमुद्धनि यथाठितोव चक्खुमा पुरिसो समन्ततो जनतं पस्सेय्य, तथा त्वं पि सुमेध, सुन्दरपञ्ञ-सब्बञ्ञुतञ्ञाणेन समन्तचक्खु भगवा धम्ममयं पञ्ञामयं पासादमारुय्ह सयं अपेतसोको सोकावतिण्णं जातिजराभिभूतं जनतं अपेक्खस्सु, उपधारय उपपरिक्ख। 15

अयमेत्थ अधिप्पायो—यथा हि पब्बतपादे समन्ता महन्तं खेत्तं कत्वा तत्थ केदारपाळीसु कुटिकायो कत्वा रत्तिं अग्गिं जालेय्युं। चतुरङ्गसमन्नागतञ्च अन्धकारं अस्स। अथस्स पब्बतस्स मत्थके ठत्वा चक्खुमतो पुरिसस्स भूमिं ओलोकयतो नेव खेत्तं, न केदारपाळियो, न कुटियो, न तत्थ सयितमनुस्सा पञ्ञायेय्युं[1], कुटिकासु पन अग्गिजालमत्तमेव पञ्ञायेय्य। एवं धम्मपासादमारुय्ह सत्तनिकायं[2] ओलोकयतो तथागतस्स ये ते अकतकल्याणा सत्ता, ते एकविहारे दक्खिणजाणुपस्से निसिन्ना पि बुद्धचक्खुस्स आपाथं नागच्छन्ति, रत्तिं खित्तसरा विय होन्ति। ये पन कतकल्याणा वेनेय्यपुग्गला, ते तस्स दूरे ठिता पि 20 25

१. पञ्ञायेय्युं—सी०। २. सत्तकायं—सी०, रो०।

आपाथं आगच्छन्ति, सो[1] अग्गि विय हिमवन्तपब्बतो विय च। वुत्तं पि चेतं—

"दूरे सन्तो पकासेन्ति, हिमवन्तो व पब्बतो।
असन्तेत्थ न दिस्सन्ति, रत्तिं खित्ता यथा सरा"
(ध० प० ४५) ति॥

R. 471 उट्ठेही ति भगवतो धम्मदेसनत्थं चारिकचरणं याचन्तो भणति। वीरा ति आदीसु भगवा वीरियवन्तताय वीरो, देवपुत्तमच्चुकिलेसमारानं B. 62 विजितत्ता विजितसङ्गामो, जातिकन्तरादिनित्थरणत्थाय वेनेय्यसत्थवाहनसमत्थताय सत्थवाहो, कामच्छन्दइणस्स अभावतो अणणो ति वेदितब्बो।

अपारुता ति विवटा। अमतस्स द्वारा ति अरियमग्गो। सो हि अमतसङ्खातस्स निब्बानस्स द्वारं। सो मया विवरित्वा ठपितो ति दस्सेति। पमुञ्चन्तु सद्धं ति सब्बे अत्तनो सद्धं पमुञ्चन्तु विस्सज्जेन्तु। पच्छिमपदद्वये अयमत्थो। अहञ्हि अत्तनो पगुणं सुप्पवत्तितम्पि इमं पणीतं उत्तमं धम्मं कायवाचाकिलमथसञ्ञी हुत्वा न भासिं, इदानि पन सब्बे जना सद्धाभाजनं उपनेन्तु[2], पूरेस्सामि तेसं सङ्कप्पं ति।

२१. अग्गसावकयुगवण्णना

५४. बोधिरुक्खमूले (दी० नि० २.३२) ति बोधिरुक्खस्स अविदूरे अजपालनिग्रोधे अन्तरहितो ति अत्थो। खेमे मिगदाये ति इसिपतनं तेन समयेन खेमं नाम उय्यानं होति, मिगानं पन अभयवासत्थाय दिन्नत्ता मिगदायो ति वुच्चति। तं सन्धाय वुत्तं—"खेमे मिगदाये" ति। यथा च विपस्सी भगवा, एवं अञ्ञेपि बुद्धा पठमं धम्मदेसनत्थाय गच्छन्ता आकासेन गन्त्वा तत्थेव ओतरन्ति। अम्हाकं पन भगवा उपकस्स आजीवकस्स उपनिस्सयं दिस्वा—"उपको इमं अद्धानं पटिपन्नो, सो मं दिस्वा सल्लपित्वा गमिस्सति। अथ पुन निब्बिन्दन्तो[3] आगम्म

१. ते—सी०, स्या०, रो०। २. उपनेतु—सी०, स्या०।
३. निब्बिण्णो—सी०, स्या०, रो०।

अरहत्तं सच्छिकरिस्सती'' ति वत्वा अट्ठारसयोजनमग्गं पदसाव अगमासि। दायपालं आमन्तेसी ति दिस्वाव पुनप्पुनं ओलोकेत्वा—''अय्यो नो, भन्ते, आगतो'' ति वत्वा उपगतं आमन्तेसि।

५७. अनुपुब्बिं कथं (दी० नि० २.३३) ति दानकथं[1], दानानन्तरं सीलं, सीलानन्तरं सग्गं, सग्गानन्तरं मग्गं ति एवं अनुपटिपाटिकथं कथेसि। तत्थ दानकथं ति इदं दानं नाम सुखानं निदानं, सम्पत्तीनं मूलं, भोगानं पतिट्ठा, विसमगतस्स ताणं लेणं गति परायणं, इधलोक-परलोकेसु दानसदिसो अवस्सयो पतिट्ठा आरम्मणं ताणं लेणं गति परायणं नत्थि। इदञ्हि अवस्सयट्ठेन रतनमयसीहासनसदिसं, पतिट्ठानट्ठेन महापथवीसदिसं, आरम्मणट्ठेन आलम्बनरज्जुसदिसं। इदञ्हि दुक्खनित्थ-रणट्ठेन नावा, समस्सासनट्ठेन सङ्गामसूरो, भयपलित्ताणट्ठेन सुसङ्खतनगरं, मच्छेरमलादीहि अनुपलित्तट्ठेन पदुमं, तेसं निदहनट्ठेन अग्गि, दुरासदट्ठेन आसीविसो, असन्तासट्ठेन सीहो, बलवन्तट्ठेन हत्थी, अभिमङ्गलसम्मतट्ठेन सेतउसभो, खेमन्तभूमिसम्पापनट्ठेन वलाहकअस्सराजा। दानञ्हि लोके सक्कसम्पत्तिं[2] मारसम्पत्तिं ब्रह्मसम्पत्तिं चक्कवत्तिसम्पत्तिं सावकपारमिञाणं पच्चेकबोधिञाणं अभिसम्बोधिञाणं देती ति एवमादिदानगुणपटिसंयुत्तं[3] कथं।

R. 472 B. 63

यस्मा पन दानं ददन्तो सीलं समादातुं सक्कोति, तस्मा तदनन्तरं सीलकथं कथेसि[4]। सीलकथं ति सीलं नामेतं अवस्सयो पतिट्ठा आरम्मणं ताणं लेणं गति परायणं। इधलोकपरलोकसम्पत्तीनञ्हि सीलसदिसो अवस्सयो[5] पतिट्ठा आरम्मणं ताणं लेणं गति परायणं नत्थि, सीलसदिसो अलङ्कारो नत्थि, सीलपुप्फसदिसं पुप्फं नत्थि, सीलगन्धसदिसो गन्धो नत्थि, सीलालङ्कारेन हि अलङ्कतं सीलकुसुमपिळन्धनं सीलगन्धानुलित्तं सदेवको पि लोको ओलोकेन्तो तित्तिं न गच्छती ति एवमादिसीलगुण-पटिसंयुत्तं कथं।

१. सी०, स्या०, रो० पोत्थकेसु नत्थि। २. ० देति—सी०, स्या०, रो०।
३. एवमादिना ०—सी०, रो०। ४. कथेति—सी०।
५. ० सीलसदिसा पतिट्ठा—सी०।

इदं पन सीलं निस्साय अयं सग्गो लब्भती ति दस्सेतुं सीलानन्तरं सग्गकथं कथेसि। सग्गकथं ति अयं सग्गो नाम इट्ठो कन्तो मनापो, निच्चमेत्थ कीळा, निच्चं[1] सम्पत्तियो लब्भन्ति, चातुमहाराजिका देवा नवुतिवस्ससतसहस्सानि दिब्बसुखं दिब्बसम्पत्तिं पटिलभन्ति, तावतिंसा 5 तिस्सो च वस्सकोटियो सट्ठिं च वस्ससतसहस्सानी ति एवमादिसग्गगुण-पटिसंयुत्तं कथं। सग्गसम्पत्तिं कथयन्तानञ्हि बुद्धानं मुखं नप्पहोति। वुत्तम्पि चेतं—"अनेकपरियायेन खो अहं, भिक्खवे, सग्गकथं कथेय्यं" ति आदि।

एवं सग्गकथाय पलोभेत्वा पुन हत्थिं अलङ्करित्वा तस्स सोण्डं R. 473 10 छिन्दन्तो विय—"अयम्पि सग्गो अनिच्चो अद्धुवो, न एत्थ छन्दरागो कातब्बो" ति दस्सनत्थं—"अप्पस्सादा कामा बहुदुक्खा बहुपायासा, आदीनवो एत्थ भिय्यो" (म० नि० १.१७५) ति आदिना नयेन B. 64 कामानं आदीनवं ओकारं संकिलेसं कथेसि। तत्थ आदीनवो ति दोसो। ओकारो ति अवकारो लामकभावो। संकिलेसो ति तेहि 15 सत्तानं संसारे संकिलिस्सनं[2]। यथाह—"किलिस्सन्ती वत भो सत्ता" (म० नि० २.३४९) ति। एवं कामादीनवेन तज्जेत्वा नेक्खम्मे आनिसंसं पकासेसि, पब्बज्जाय गुणं पकासेसी ति अत्थो। सेसं अम्बट्ठ-सुत्तवण्णनायं वुत्तनयञ्चेव उत्तानत्थञ्च।

७७. अलत्थुं ति कथं अलत्थुं? एहिभिक्खुभावेन। भगवा किर 20 तेसं इद्धिमयपत्तचीवरस्सूपनिस्सयं ओलोकेन्तो अनेकासु जातीसु चीवर-दानादीनि दिस्वा एथ भिक्खवो ति आदिमाह। ते तावदेव भण्डू कासायवसना अट्ठहि भिक्खुपरिक्खारेहि सरीरपटिमुक्केहेव[3] वस्ससति-कत्थेरा विय भगवन्तं नमस्समानाव निसीदिंसु।

सन्दस्सेसी ति आदीसु इधलोकत्थं[4] सन्दस्सेसि, परलोकत्थं 25 सन्दस्सेसि। इधलोकत्थं दस्सेन्तो अनिच्चं ति दस्सेसि, दुक्खं ति दस्सेसि,

१. दिब्ब ०—स्या०।
२. किलेसनं—सी०, रो०।
३. सरीरपरिमुत्तेहेव—रो०।
४. इधलोकपरलोकत्थं दस्सेसि—सी०, रो०।

अनत्ता ति दस्सेसि, खन्धे दस्सेसि, धातुयो दस्सेसि, आयतनानि दस्सेसि, पटिच्चसमुप्पादं दस्सेसि, रूपक्खन्धस्स उदयं दस्सेन्तो पञ्च लक्खणानि दस्सेसि, तथा वेदनाक्खन्धादीनं, तथा वयं दस्सेन्ता पि उदयब्बयवसेन पञ्ञासलक्खणानि दस्सेसि, परलोकत्थं दस्सेन्तो निरयं दस्सेसि, तिरच्छानयोनिं, पेत्तिविसयं, असुरकायं, तिण्णं कुसलानं 5 पिपाकं, छन्नं देवलोकानं, नवन्नं ब्रह्मलोकानं सम्पत्ति दस्सेसि।

समादपेसी ति चतुपारिसुद्धिसीलतेरसधुतङ्गदसकथावत्थुआदिके कल्याणधम्मे गण्हापेसि।

समुत्तेजेसी ति सुट्ठु उत्तेजेसि, अब्भुस्साहेसि। इधलोकत्थञ्चेव परलोकत्थञ्च तासेत्वा[1] तासेत्वा[1] अधिगतं विय कत्वा कथेसि। द्वत्तिस- 10 कम्मकारणपञ्चवीसतिमहाभयप्पभेदम्हि इधलोकत्थं बुद्धे भगवति तासेत्वा तासेत्वा कथयन्ते पच्छाबाहुं,गाळ्हबन्धनं बन्धित्वा चातुमहापथे पहारसतेन ताळेत्वा दक्खिणद्वारेन निय्यमानो विय आघातनभण्डिकाय R. 474 ठपितसीसो विय सूले उत्तासितो विय मत्तहत्थिना मद्दियमानो विय B. 65 च संविग्गो[2] होति। परलोकत्थञ्च कथयन्ते निरयादीसु निब्बत्तो 15 विय देवलोकसम्पत्तिं अनुभवमानो विय च होति।

सम्पहंसेसी ति पटिलद्धगुणेन चोदेसि, महानिसंसं कत्वा कथेसी ति अत्थो।

सङ्खारानं आदीनवं ति हेट्ठा पठममग्गाधिगमत्थं कामानं आदीनवं कथेसि, इध पन उपरिमग्गाधिगमत्थं—"अनिच्चा, भिक्खवे, 20 सङ्खारा अद्धुवा अनस्सासिका, यावञ्चिदं, भिक्खवे, अलमेव सब्बसङ्खारेसु निब्बिन्दितुं अलं विरज्जितुं अलं विमुच्चितुं" (अ० नि० ३.२३०) ति आदिना नयेन सङ्खारानं आदीनवञ्च लामकभावञ्च तप्पच्चयञ्च किलमथं पकासेसि। यथा च तत्थ नेक्खम्मे, एवमिध—"सन्तमिदं, भिक्खवे, निब्बानं नाम पणीतं ताणं लेणं" ति आदिना नयेन निब्बाने 25 आनिसंसं पकासेसि।

१-१. तापेत्वा तापेत्वा—सी०, रो०। २. सत्तो—सी०, रो०; उत्तासन्तो—स्या०।

२२. महाजनकायपब्बज्जावण्णना

५९. **महाजनकायो** (दी० नि० २.३४) ति तेसं येव द्विन्नं कुमारानं उपट्ठाकजनकायो।

६०. **भगवन्तं सरणं गच्छाम धम्मञ्चा** (दी० नि० २.३५) ति संघस्स अपरिपुण्णत्ता द्वेवाचिकमेव सरणमगमंसु।

5 ६१. **अलत्थुं** (दी० नि० २.३६) ति पुब्बे वुत्तनयेनेव एहिभिक्खुभावेनेव अलत्थुं। इतो अनन्तरे पब्बजितवारे पि एसेव नयो।

२३. चारिकाअनुजाननवण्णना

६५. **परिवितक्को उदपादी** (दी०नि० २.३७) ति कदा उदपादि? सम्बोधितो सत्त संवच्छरानि सत्त मासे सत्त दिवसे अतिक्कमित्वा उदपादि। 10 भगवा किर पितुसङ्गहं करोन्तो विहासि। राजापि चिन्तेसि—"मय्हं जेट्ठपुत्तो निक्खमित्वा बुद्धो जातो, दुतियपुत्तो मे निक्खमित्वा अग्गसावको जातो, पुरोहितपुत्तो दुतियअग्गसावको,[१] इमे च अवसेसा भिक्खू B.66 गिहिकाले पि मय्हं पुत्तमेव परिवारेत्वा विचरिंसु। इमे[२] सब्बे[२] इदानि पि मय्हं येव भारो[३] अहमेव च ने चतूहि पच्चयेहि उपट्ठहिस्सामि, 15 अञ्ञेसं ओकासं न दस्सामी" ति विहारद्वारकोट्ठकतो पट्ठाय याव राजगेहद्वारा उभयतो खदिरपाकारं कारापेत्वा किलञ्जेहि छादापेत्वा वत्थेहि पटिच्छादापेत्वा[४] उपरि च छादापेत्वा सुवण्णतारकविचित्तं समोलम्बिततालक्खन्धमत्तं विविधपुप्फदामवितानं कारापेत्वा[५] हेट्ठा R.475 भूमियं[६] चित्तत्थरणेहि[७] सन्थरापेत्वा अन्तो उभोसु पस्सेसु मालावच्छके 20 पुण्णघटे, सकलमग्गवासत्थाय च गन्धन्तरे पुप्फानि[८] पुप्फन्तरे[८] गन्धे च ठपापेत्वा भगवतो कालं आरोचापेसि।

१ दुतियसावको—सी०, स्या०, रो०। २-२. इमेहि पुब्बे पि—सी०; इमेहि पुब्बेहि—रो०; इमे पुब्बे—स्या०।
३. भारा—सी०, स्या०, रो०।
४. पटिछादेत्वा—सी०, रो०। ५. कारेत्वा—सी०, रो०।
६. भूमि—सी०, रो०। ७. विचित्र०—सी०; विचित्त०—रो०।
८-८. सी०, रो० पोत्थकेसु नत्थि।

भगवा भिक्खुसंघपरिवुतो अन्तोसाणियाव राजगेहं गन्त्वा भत्तकिच्चं कत्वा विहारं पच्चागच्छति। अञ्ञो कोचि दट्ठुम्पि न लभति, कुतो पन भिक्खं वा दातुं, पूजं का कातुं, धम्मं वा सोतुं। नागरा चिन्तेसुं—"अज्ज सत्थु लोके उप्पन्नस्स सत्तमासाधिकानि सत्त- संवच्छरानि, मयञ्च दट्ठुम्पि न लभाम, पगेव भिक्खं वा दातुं, पूजं वा 5 कातुं, धम्मं वा सोतुं। राजा—'मय्हमेव बुद्धो, मय्हमेव धम्मो, मय्हमेव संघो' ति ममायित्वा सयमेव उपट्ठहि। सत्था च उप्पज्जमानो सदेवकस्स लोकस्स अत्थाय हिताय उप्पन्नो। न हि रञ्ञोयेव निरयो[1] उण्हो अस्स, अञ्ञेसं नीलुप्पलवनसदिसो। तस्मा राजानं वदाम। सचे नो सत्थारं देति, इच्चेतं कुसलं; नो चे देति, रञ्ञा सद्धिं 10 युज्झित्वा पि संघं गहेत्वा दानादीनि पुञ्ञानि करोम। न सक्का खो पन सुद्धनागरेहेव एवं कातुं, एकं जेट्ठपुरिसम्पि[2] गण्हामा" ति।

ते सेनापतिं उपसङ्कमित्वा तस्सेतमत्थं आरोचेत्वा—"सामि, किं अम्हाकं पक्खो होसि[3], उदाहु रञ्ञो" ति आहंसु। सो—"अहं तुम्हाकं पक्खो होमि, अपि च खो पन पठमदिवसो मय्हं दातब्बो" 15 ति[4]। ते सम्पटिच्छिंसु। सो राजानं उपसङ्कमित्वा—"नागरा, देव, तुम्हाकं कुपिता" ति आह। किमत्थं ताता ति? सत्थारं किर तुम्हेयेव उपट्ठहथ, अम्हे न लभामा ति। सचे इदानि पि लभन्ति, न कुप्पन्ति, अलभन्ता तुम्हेहि सद्धिं युज्झितुकामा देवा ति। युज्झामि[5], तात, नाहं भिक्खुसंघं देमी ति। देव तुम्हाकं दासा तुम्हेहि सद्धिं 20 युज्झामा[6] ति वदन्ति, तुम्हे कं गण्हित्वा[7] युज्झिस्सथा ति? ननु त्वं सेनापती ति? नागरेहि विना न समत्थो अहं देवा ति। ततो राजा— B. 67 "बलवन्तो नागरा, सेनापति पि तेसञ्ञेव पक्खो" ति ञत्वा अञ्ञानि पि सत्तमासाधिकानि सत्तसंवच्छरानि मय्हं भिक्खुसंघं ददन्तू" ति

१. नरको—सी०, रो०। २. जेट्ठकपुरिसं पि—सी०, स्या०, रो०।
३. होति—स्या०। ४. ० पच्छा तुम्हाकं वारो ति—स्या०।
५. युज्झिस्सामि—सी०। ६. युज्झिस्सामा ति—सी०।
७. गहेत्वा—सी०।

R. 476 आह । नागरा न सम्पटिच्छिंसु । राजा—"छ[१] वस्सानि, पञ्च, चत्तारि, तीणि, द्वे, एकवस्सं" ति हापेसि । एवं हापेन्ते पि न सम्पटिच्छिंसु[१] । अञ्ञे सत्त दिवसे याचि । नागरा—"अतिक्कखळं दानि रञ्ञा सद्धिं कातुं न वट्टती" ति अनुजानिंसु ।

5 राजा सत्तमासाधिकानं सत्तन्नं संवच्छरानं सज्जितं दानमुखं सत्तन्नमेव दिवसानं विस्सज्जेत्वा[२] छ दिवसे[३] केसञ्चि अपस्सन्तानञ्ञेव दानं दत्वा सत्तमे दिवसे नागरे पक्कोसापेत्वा—"सक्खिस्सथ, तात, एवरूपं दानं दातुं" ति आह । तेपि—"ननु अम्हे येव निस्साय तं देवस्स उप्पन्नं" ति वत्वा—"सक्खिस्सामा" ति आहंसु । राजा
10 पिट्ठिहत्थेन अस्सुनि पुञ्छमानो भगवन्तं वन्दित्वा—"भन्ते, अहं अट्ठसट्ठिभिक्खुसतसहस्सं अञ्ञस्स वारं[४] अकत्वा यावजीवं चतूहि पच्चयेहि उपट्ठहिस्सामी ति चिन्तेसिं । नागरा न दानि मे अनुञ्ञाता । नागरा 'हि भयं दानं दातुं न लभामा' ति कुप्पन्ति । भगवा[५] स्वे पट्ठाय तेसं अनुग्गहं करोथा" ति आह ।

15 अथ दुतियदिवसे सेनापति महादानं सज्जेत्वा—"अज्ज यथा अञ्ञो कोचि एकभिक्खम्पि न देति, एवं रक्खथा" ति समन्ता पुरिसे ठपेसि । तं दिवसं सेट्ठिभरिया रोदमाना धीतरं आह—"सचे, अम्म, तव पिता जीवेय्य, अज्जाहं पठमं[६] दसबलं भोजेय्यं" ति । सा तं आह—"अम्म, मा चिन्तयि, अहं तथा करिस्सामि, यथा बुद्धप्पमुखो
20 भिक्खुसंघो पठमं अम्हाकं भिक्खं परिभुञ्जिस्सती" ति । ततो सतसहस्सग्घनिकाय सुवण्णपातिया[७] निरुदकपायासस्स[८] पूरेत्वा सप्पिमधुसक्करादीहि अभिसङ्खरित्वा अञ्ञाय[९] पातिया पटिकुज्जित्वा तं

१-१. छ वस्सानि, पञ्च वस्सानी ति हापेत्वा हापेन्ते पि न सम्पटिच्छिंसु—सी०; छ वस्सानि, पञ्च वस्सानी ति एवं हापेत्वा अञ्ञे सत्त दिवसे याचि—रो० ।
२. सञ्जेत्वा—सी०, रो० ।
३. दिवसं—सी०, रो० ।
४. अञ्ञेसं भारं—सी०, रो० ।
५. सी०, स्या०, रो० पोत्थकेसु नत्थि ।
६. पठमतरं—सी० ।
७. कंसपातिया—सी०; पातिया—रो० ।
८. ० पायासं—सी०, रो० ।
९. तं अञ्ञिस्सा—सी०, स्या०, रो० ।

सुमनमालागुळेहि[1] परिक्खिपित्वा मालागुळसदिसं कत्वा भगवतो गामं पविसनवेलाय सयमेव उक्खिपित्वा दासिगणपरिवुता[2] नगरा[3] निक्खमि। अन्तरामग्गे सेनापतिउपट्ठाका—"अम्म, मा इतो अगमा[4]" ति वदन्ति। महापुञ्ञा नाम मनापकथा होन्ति, न च तेसं पुनप्पुनं भणन्तानं कथा पटिक्खिपितुं सक्का होति। सा—"चूळपिता 5 महापिता मातुला किस्स तुम्हे गन्तुं न देथा" ति आह। सेनापतिना—"अञ्ञस्स[5] कस्सचि खादनीयभोजनीयं दातुं मा देथा" R. 477 ति ठपितम्ह अम्मा ति। किं पन मे हत्थे खादनीयं भोजनीयं पस्सथा ति? मालागुळं पस्सामा ति। किं तुम्हाकं सेनापति मालागुळ- B. 68 पूजम्पि कातुं न देती ति? देति, अम्मा ति। तेन हि, अपेथ, अपेथा 10 ति भगवन्तं उपसङ्कमित्वा मालागुळं गण्हापेथ[6] भगवा ति आह। भगवा एकं सेनापतिस्सुपट्ठाकं ओलोकेत्वा मालागुळं गण्हापेसि। सा भगवन्तं वन्दित्वा—"भगवा भवाभवे निब्बत्तियं मे सति परितस्सन- जीवितं नाम मा होतु, अयं सुमनमाला विय निब्बत्तनिब्बत्तट्ठाने पियाव[7] होमि, नामेन च सुमना येवा" ति पत्थनं कत्वा सत्थारा—"सुखिनी 15 होही" ति वुत्ता वन्दित्वा पदक्खिणं कत्वा पक्कामि।

भगवा सेनापतिस्स गेहं गन्त्वा पञ्ञत्तासने निसीदि। सेनापति यागुं गहेत्वा उपगञ्छि। सत्था पत्तं पिदहि। निसिन्नो, भन्ते, भिक्खु- संघो ति। अत्थि नो एको अन्तरा[8] पिण्डपातो लद्धो ति? सो[9] मालं[10] अपनेत्वा पिण्डपातं अद्दस। चूळुपट्ठाको आह—"सामि, माला ति मं 20 वत्वा मातुगामो वञ्चेसी" ति। पायासो भगवन्तं आदिं कत्वा सब्बेसं भिक्खूनं पहोति। सेनापति पि अत्तनो देय्य धम्मं अदासि। सत्था भत्तकिच्चं कत्वा मङ्गलं वत्वा पक्कामि। सेनापति—"का नाम सा

१. ० गुणेहि—सी०, स्या०, रो०। २. धातिगण ०—सी०, स्या०, रो०।
३. घरा ०—सी०, स्या०, रो०। ४. अगमासी ति—स्या०, रो०।
५. न अञ्ञस्स—सी०। ६. गण्हथ—सी०।
७. मनापा—स्या०। ८. अन्तरा मग्गे—सी०, रो०।
९. सी०, स्या०, रो० पोत्थकेसु नत्थि। १०. मालागुळं—सी०, स्या०।

पिण्डपातमदासी" ति पुच्छि। सेट्ठिधीता, सामी ति। सप्पञ्ञा सा इत्थी, एवरूपाय घरे वसन्तिया पुरिसस्स सग्गसम्पत्ति नाम न दुल्लभा ति तं आनेत्वा जेट्ठिकट्ठाने ठपेसि।

पुनदिवसे नागरा दानमदंसु, पुनदिवसे राजा ति[1] एकन्तरिकाय 5 दानं दातुं आरभिंसु। राजा पि चरपुरिसे ठपेत्वा नागरेहि दिन्नदानतो अतिरेकतरं देति, नागरा पि तथेव कत्वा रञ्ञा दिन्नदानतो अतिरेकतरं। राजगेहे नाटकित्थियो दहरसामणेरे वदन्ति—"गण्हथ, ताता, न गहपतिकानं गत्तवत्थादीसु[2] पुञ्छित्वा बाळदारकानं खेळसिङ्घाणिकादिधोवनहत्थेहि कतं, सुचिं पणीतं कतं" ति। पुनदिवसे 10 नागरा पि ददमाना वदन्ति—"गण्हथ, ताता, न नगरगामनिगमादीसु R. 478 सङ्कड्ढित तण्डुलखीरदधिसप्पिआदीहि, न अञ्ञेसं जङ्घसीसपिट्ठिआदीनि भञ्जित्वा आहरापितेहि कतं, जातिसप्पिखीरादीहियेव कतं" ति। एवं[3] सत्तसु संवच्छरेसु सत्तसु मासेसु सत्तसु दिवसेसु च अतिक्कन्तेसु[3] अथ भगवतो अयं वितक्को उदपादि। तेन वुत्तं—"सम्बोधितो सत्त 15 संवच्छरानि सत्त मासानि सत्त दिवसानि अतिक्कमित्वा उदपादी" ति।

B. 69 ६९. **अञ्ञतरो महाब्रह्मा** (दी० नि० २.३७) ति धम्मदेसनं आयाचितब्रह्मा व।

७०. **चतुरासीति आवाससहस्सानी** (दी० नि० २.३९) ति 20 चतुरासीति विहारसहस्सानि। ते सब्बे पि द्वादससहस्सभिक्खुगणहनका[4] महाविहारा अभयगिरि-चेतियपब्बत-चित्तलपब्बत-महाविहारसदिसाव अहेसुं।

७१. **खन्ती परमं तपो** (दी० नि० २.३९) ति अधिवासनखन्ति नाम परमं तपो। **तितिक्खा** ति खन्तिया एव वेवचनं। तितिक्खा

१. ० एवं—सी०, स्या०, रो०। २. भत्थंवत्थादीसु—सी०; भत्तंवत्थादीसु—रो०।
३-३. एवं सत्त दिवसा गता—सी०, रो०।
४. सी०, पोत्थके नत्थि।

सञ्ञाता अधिवासनखन्ति उत्तमं तपो ति अत्थो। **निब्बानं परमं** ति सब्बाकारेन पन निब्बानं परमं ति वदन्ति बुद्धा। **न हि पब्बजितो परूपघाती** ति यो अधिवासनखन्तिविरहितत्ता परं उपघातेति[1] बाधेति हिंसति,[2] सो पब्बजितो नाम न होति। चतुत्थपादो पन तस्सेव वेवचनं। "न हि पब्बजितो" ति एतस्स हि न समणो होती ति वेवचनं। परूपघाती ति एतस्स परं विहेठयन्तो ति वेवचनं। अथवा परूपघाती ति सीलूपघाती। सीलञ्हि उत्तमट्ठेन परं ति वुच्चति। यो च समणो परं यं कञ्चि सत्तं विहेठयन्तो परूपघाती होति, अत्तनो सीलं विनासको, सो पब्बजितो नाम न होती ति अत्थो। अथवा यो अधिवासनखन्तिया अभावतो[3] परूपघाति होति, परं अन्तमसो डंसमकसम्पि सञ्चिच्च[4] जीविता वोरोपेति, सो न हि पब्बजितो। किं कारणा? मलस्स अपब्बजितत्ता। "पब्बाजयमत्तनो मलं, तस्मा पब्बजितो ति वुच्चती" (ध० प० ५४) ति इदं हि पब्बजितलक्खणं। यो पि न हेव खो उपघातेति, न मारेति, अपिच दण्डादीहि विहेठेति, सो परं विहेठयन्तो समणो न होति। किं कारणा? विहेसाय असमितत्ता। "समितत्ता[5] हि पापानं, समणो ति पवुच्चती" (ध० प० ४२) ति इदञ्हि समणलक्खणं।

दुतियगाथाय **सब्बपापस्सा** ति सब्बाकुसलस्स। **अकरणं** ति अनुप्पादनं। **कुसलस्सा** ति चतुभूमिककुसलस्स। **उपसम्पदा** ति पटिलाभो। **सचित्तपरियोदपनं** ति अत्तनो चित्तजोतनं। तं पन अरहत्तेन होति। इति सीलसंवरेन सब्बपापं पहाय समथविपस्सनाहि कुसलं सम्पादेत्वा अरहत्तफलेन चित्तं परियोदापेतब्बं ति एतं बुद्धानं सासनं ओवादो अनुसिट्ठी ति।

ततियगाथाय **अनूपवादो** ति वाचाय कस्सचि अनुपवदनं। **अनूपघातो** ति कायेन उपघातस्स अकरणं। **पातिमोक्खे** ति यं तं

१. घातेति उपघातेति—सी०, रो०। २. विहिंसति—सी०, रो०।
३. अभावा—सी०, रो०। ४. सी०, रो० पोत्थकेसु नत्थि।
५. सी०, रो० पोत्थकेसु नत्थि।

5 10 15 R. 479 20 B. 70

पअतिमोक्खं, अतिपमोक्खं, उत्तमसीलं, पाति वा अगतिविसेसेहि[१] मोक्खेति दुग्गतिभयेहि, यो वा नं पाति, तं मोक्खेती ति "पातिमोक्खं" ति वुच्चति। तस्मिं पातिमोक्खे च संवरो। मत्तञ्ञुता ति पटिग्गहण-परिभोगवसेन पमाणञ्ञुता। पन्तञ्च सयनासनं ति सयनासनञ्च 5 सङ्घट्टनविरहितं[२] ति अत्थो। तत्थ द्वीहियेव पच्चयेहि चतुपच्चयसन्तोसो दीपितो होती ति वेदितब्बो। एतं बुद्धानसासनं ति एतं परस्स अनुपवदनं अनुपघातनं पातिमोक्खसंवरो पटिग्गहणपरिभोगेसु मत्तञ्ञुता अट्ठसमापत्तिवसिभावाय विवित्तसेनासनसेवनञ्च बुद्धानं सासनं ओवादो अनुसिट्ठी ति। इमा पन सब्बबुद्धानं पातिमोक्खुद्देसगाथा होन्ती ति 10 वेदितब्बा।

२४. देवतारोचनवण्णना

७२. एत्तावता च इमिना विपस्सिस्स भगवतो अपदानानुसारेन[३] वित्थारकथनेन—"तथागतस्सेवेसा, भिक्खवे, धम्मधातु सुप्पटिविद्धा" ति एवं वुत्ताय धम्मधातुया सुप्पटिविद्धभावं पकासेत्वा इदानि— "देवता पि तथागस्स एतमत्थं आरोचेसुं" ति वुत्तं देवतारोचनं 15 पकासेतुं एकमिदाहं ति आदिमाह।

तत्थ सुभगवने (दी० नि० २.३९) ति एवंनामके वने। सालराजमूले ति वनप्पतिजेट्ठकस्स[४] मूले। कामच्छन्दं विराजेत्वा ति अनागामिमग्गेन मूलसमुग्घातवसेन विराजेत्वा। यथा च विपस्सिस्स, R. 480 एवं सेसबुद्धानम्पि सासने वुत्थब्रह्मचरिया देवता आरोचयिंसु। पाळि 20 पन विपस्सिस्स चेव अम्हाकञ्च भगवतो वसेन आगता।

तत्थ अत्तनो सम्पत्तिया न हायन्ति, न विहायन्ती ति अविहा। न कञ्चि सत्तं तपन्ती ति अतप्पा। सुन्दरदस्सना अभिरूपा पासादिका ति सुदस्सा। सुट्ठु पस्सन्ति, सुन्दरमेतेसं वा दस्सनं ति सुदस्सी।

१. सुगतिभयेहि—सी०, रो०।
२. संसट्ठविरहितं—सी०; संघट्टविरहितं—रो०।
३. अपदानानुसरणवित्थारकथनेन—सी०, रो०।
४. वनस्सपतिजेट्ठकस्स—सी०।

सब्बेहेव च सगुणेहि भवसम्पत्तिया च जेट्ठा, नत्थेत्थ कनिट्ठा ति अकनिट्ठा।

B. 71

इध ठत्वा भाणवारा समोधानेतब्बा। इमस्मिञ्हि सुत्ते विपस्सिस्स भगवतो अपदानवसेन तयो भाणवारा वुत्ता। यथा च विपस्सिस्स, एवं सिखीआदीनम्पि अपदानवसेन वुत्ताव। पाळियं पन सङ्खित्ता। 5 इति सत्तन्नं बुद्धानं वसेन अम्हाकं भगवता एकवीसति भाणवारा कथिता। तथा अविहेहि, तथा अतप्पेहि, तथा सुदस्सेहि, तथा सुदस्सीहि, तथा अकनिट्ठेही ति सब्बम्पि छब्बीसतिभाणवारसतं होति। तेपिटके बुद्धवचने अञ्ञं सुत्तं छब्बीसतिभाणवारसतपरिमाणं नाम नत्थि, सुत्तन्तराजा नाम अयं सुत्तन्तो ति वेदितब्बो। इतो परं 10 अनुसन्धिद्वयम्पि निय्यातेन्तो इति खो भिक्खवे ति आदिमाह। तं सब्बं उत्तानमेवा ति[1]।

इति सुमङ्गलविलासिनिया दीघनिकायट्ठकथाय
महापदानसुत्तवण्णना निट्ठिता।

—०—

१. उत्तानत्थमेवा ति—सी०, स्या०, रो०।

(२) महानिदानसुत्तवण्णना

१. निदानवण्णना

R. 481 १. एवं मे सुतं ...पे०... कुरूसू (दी० नि० २.४४) ति महानिदानसुत्तं। तत्रायं अनुत्तानपदवण्णना। कुरूसु विहरती ति कुरू नाम जानपदिनो राजकुमारा। तेसं निवासो एको पि जनपदो रुळ्हीसद्देन "कुरू"[१] ति वुच्चति। तस्मिं कुरूसु जनपदे[२]। अट्ठकथा-
5 चरिया पनाहु—मन्धातुकाले तीसु दीपेसु मनुस्सा "जम्बुदीपो नाम बुद्धपच्चेकबुद्धमहासावकचक्कवत्तिप्पभुतीनं उत्तममनुस्सानं उप्पत्तिभूमि उत्तमदीपो अतिरमणीयो" ति सुत्वा रञ्ञा मन्धातुचक्कवत्तिना चक्करतनं पुरक्खत्वा चत्तारो दीपे अनुसंयायन्तेन[३] सद्धिं आगमंसु। ततो राजा परिणायकरतनं पुच्छि—"अत्थि नु खो मनुस्सलोकतो
10 रमणीयतरं ठानं" ति। कस्मा देव एवं भणसि? किं न पस्ससि चन्दिमसूरियानं आनुभावं, ननु एतेसं ठानं इतो रमणीयतरं ति? राजा चक्करतनं पुरक्खत्वा[४] तत्थ अगमासि। चत्तारो महाराजानो— "मन्धातुमहाराजा आगतो" ति सुत्वाव—"महिद्धिको महानुभावो राजा, न सक्का युद्धेन पटिबाहितुं" ति सकं रज्जं निय्यातेसुं। सो तं गहेत्वा
15 पुन पुच्छि—"अत्थि नु खो इतो रमणीयतरं ठानं" ति?

अथस्स तावतिंसभवनं कथयिंसु। "तावतिंसभवनं, देव इतो रमणीयतरं। तत्थ सक्कस्स देवरञ्ञो इमे चत्तारो महाराजानो परिचारका दोवारिकभूमियं तिट्ठन्ति। सक्को देवराजा महिद्धिको महानुभावो। तस्सिमानि उपभोगट्ठानानि—योजनसहस्सुब्बेधो
20 वेजयन्तो पासादो, पञ्चयोजनसतुब्बेधा सुधम्मा देवसभा, दियड्ढयोजनसतिको

१. कुरूसू—सी०, स्या०। २. जनपदेसु—सी०।
३. अनुसंसरन्तेन—सी०, अनुपरिसंयायन्तेन—स्या०, रो०। ४. पुरक्खित्वा—स्या०।

वेजयन्तरथो तथा एरावणो हत्थी दिब्बरुक्खसहस्सप्पटिमण्डितं नन्दनवनं, चित्तलतावनं, फारुसकवनं, मिस्सकवनं, योजनसतुब्बेधो परिच्छत्तको कोविळारो, तस्स हेट्ठा सट्ठियोजनायामा[1] पञ्ञासयोजनवित्थता[2] पञ्चदसयोजनुब्बेधा जयकुसुमपुप्फवण्णा पण्डुकम्बलसिला, यस्सा मुदुताय सक्कस्स निसीदतो उपड्ढकायो अनुपविसती" ति । R. 482 5

तं सुत्वा राजा तत्थ गन्तुकामो चक्करतनं अब्भुक्किरि । तं आकासे पतिट्ठासि[3] सद्धिं चतुरङ्गिनिया सेनाय । अथ द्विन्नं देवलोकानं वेमज्झतो चक्करतनं ओतरित्वा पथवियं पतिट्ठासि सद्धिं परिणायकरतनपमुखाय चतुरङ्गिनिया सेनाय । राजा एककोव तावतिंसभवनं अगमासि । सक्को—"मन्धाता आगतो" ति सुत्वाव तस्स पच्चुग्गमनं कत्वा—"स्वागतं, ते महाराज, सकं ते महाराज, अनुसास महाराजा" ति वत्वा सद्धिं नाटकेहि रज्जं द्वे भागे कत्वा एकं भागमदासि । रञ्ञो तावतिंसभवने पतिट्ठितमत्तस्सेव मनुस्सभावो विगच्छि, देवभावो पातुरहोसि । तस्स किर सक्केन सद्धिं पण्डुकम्बलसिलायं निसिन्नस्स अक्खिनिमिसमत्तेन[4] नानत्तं पञ्ञायति । तं असल्लक्खेन्ता देवा सक्कस्स च तस्स च नानत्ते मुय्हन्ति । सो तत्थ दिब्बसम्पत्तिं अनुभवमानो याव छत्तिंस सक्का उप्पज्जित्वा चुता, ताव रज्जं[5] कारेत्वा अतित्तोव कामेहि ततो चवित्वा अत्तनो उय्याने पतिट्ठितो[6] वातातपेन फुट्ठगत्तो कालमकासि । चक्करतने पन पुन पथवियं पतिट्ठिते परिणायकरतनं सुवण्णपट्टे मन्धातु उपाहनं लिखापेत्वा इदं मन्धातु रज्जं ति रज्जमनुसासि । तेपि तीहि दीपेहि आगतमनुस्सा पुन गन्तुं असक्कोन्ता परिणायकरतनं उपसङ्कमित्वा—"देव, मयं रञ्ञो आनुभावेन आगता, इदानि गन्तुं न सक्कोम, वसनट्ठानं नो देही" ति B. 73 10 15 20

१. सट्ठियोजनासना—सी० । २. ० वित्थारा—सी०, रो० ।
३. उट्ठहि—सी०, रो०; उट्ठासि—स्या० । ४. ० निमेसनमत्तेन—सी०, स्या० ।
५. सक्क-रज्जं—सी०, रो० । ६. पतितो—सी०, रो० ।

याचिंसु। सो तेसं एकमेकं जनपदमदासि। तत्थ पुब्बविदेहतो आगतमनुस्सेहि आवसितपदेसो तायेव पुरिमसञ्ञाय—"विदेहरट्ठं" ति नामं लभि। अपरगोयानतो आगतमनुस्सेहि आवसितपदेसो "अपरन्तजनपदो" ति नामं लभि। उत्तरकुरुतो आगतमनुस्सेहि
R. 483 5 आवसितपदेसो "कुरुरट्ठं" ति नामं लभि। बहुके पन गामनिगमादयो उपादाय बहुवचनेन वोहरियति। तेन वुत्तं—"कुरूसु विहरती" ति।

कम्मासधम्मं नाम कुरूनं निगमो ति कम्मासधम्मं ति एत्थ केचि ध-कारस्स द-कारेन अत्थं वण्णयन्ति। कम्मासो एत्थ दमितो ति
10 कम्मासदम्मो[1]। कम्मासो ति कम्मासपादो पोरिसादो वुच्चति। तस्स किर पादे खाणुकेन विद्धट्ठाने वणो रुहन्तो चित्तदारुसदिसो हुत्वा रुहि। तस्मा कम्मासपादो ति पञ्ञायित्थ। सो च तस्मिं ओकासे
B. 74 दमितो पोरिसादभावतो पटिसेधितो। केन? महासत्तेन। कतरस्मिं जातके ति? महासुतसोमजातके ति एके। इमे पन थेरा जयद्दिसजातके
15 ति वदन्ति। तदा हि महासत्तेन कम्मासपादो दमितो। यथाह—

"पुत्तो यदा होमि जयद्दिसस्स,
पञ्चालरट्ठधिपतिस्स अत्रजो।
चजित्वान[2] पाणं पितरं पमोचयिं,
कम्मासपादम्पि चहं पसादयिं" ति॥

20 केचि पन ध-कारेनेव अत्थं वण्णयन्ति। कुरुरट्ठवासीनं किर कुरुवत्तधम्मो[3]। तस्मिं कम्मासो जातो, तस्मा तं ठानं कम्मासो एत्थ धम्मो जातो ति कम्मासधम्मं ति वुच्चति। तत्थ निविट्ठनिगमस्सापि एतदेव नामं। भुम्मवचनेन कस्मा न वुत्तं ति। अवसनोकासतो। भगवतो किर तस्मिं निगमे वसनोकासो कोचि विहारो नाम[4] नाहोसि।
25 निगमतो पन अपक्कम्म अञ्ञतरस्मिं उदकसम्पन्ने रमणीये भूमिभागे

१. कम्मासदम्मं—सी०, रो०। २. चत्वान—स्या०; चजित्थ—सी०।
३. कुरुधम्मो—स्या०। ४. सी०, रो० पोत्थकेसु नत्थि।

महावनसण्डो अहोसि। तत्थ भगवा विहासि, तं निगमं गोचरगामं कत्वा। तस्मा एवमेत्थ अत्थो वेदितब्बो—"कुरूसु विहरति कम्मासधम्मं नाम कुरूनं निगमो, तं गोचरगामं कत्वा" ति।

आयस्मा ति पियवचनमेतं, गारववचनमेतं[1]। आनन्दो ति तस्स थेरस्स नामं। एकमन्तं ति भावनपुंसकनिद्देसो—"विसमं चन्दिमसूरिया परिवत्तन्ती" (अं० नि० २.७९) ति आदीसु विय। तस्मा यथा निसिन्नो एकमन्तं निसिन्नो होति, तथा निसीदी ति एवमेत्थ अत्थो दट्ठब्बो। भुम्मत्थे वा एतं उपयोगवचनं निसीदी ति उपाविसि। R. 484 पण्डिता हि गरुट्ठानियं उपसङ्कमित्वा आसनकुसलताय एकमन्तं[2] निसीदन्ति। अयञ्च तेसं अञ्ञतरो, तस्मा एकमन्तं निसीदि।

कथं निसिन्नो खो पन एकमन्तं निसिन्नो होति ति? छ निसज्जदोसे वज्जेत्वा। सेय्यथिदं—अतिदूरं, अच्चासन्नं, उपरिवातं, उन्नतप्पदेसं, अतिसम्मुखं, अतिपच्छा ति। अतिदूरे निसिन्नो हि सचे कथेतुकामो होति, उच्चासद्देन कथेतब्बं होति। अच्चासन्ने निसिन्नो सङ्घट्टनं करोति। उपरिवाते निसिन्नो सरीरगन्धेन बाधति। उन्नतप्पदेसे निसिन्नो अगारवं पकासेति। B. 75 अतिसम्मुखा निसिन्नो सचे दट्ठुकामो होति, चक्खुना चक्खुं आहच्च दट्ठब्बं होति। अतिपच्छा निसिन्नो सचे दट्ठुकामो होति, गीवं परिवत्तेत्वा दट्ठब्बं होति। तस्मा अयम्पि तिक्खत्तुं भगवन्तं पदक्खिणं कत्वा सक्कच्चं वन्दित्वा एते छ निसज्जदोसे वज्जेत्वा[3] दक्खिणजाणुमण्डलस्स अभिमुखट्ठाने छब्बण्णानं बुद्धरस्मिनं अन्तो पविसित्वा पसन्नलाखारसं विगाहन्तो विय सुवण्णपटं पारुपन्तो विय रत्तुप्पलमालावितानमज्झं पविसन्तो विय च धम्मभण्डागारिको आयस्मा आनन्दो निसीदि। तेन वुत्तं—"एकमन्तं निसीदी" ति।

१. गरुवचनमेतं—सी०, स्या०, रो०। २. एकमन्ते—सी०, स्या०, रो०।
३. वज्जेन्तो—सी०, रो०।

काय पन वेलाय, केन कारणेन अयमायस्मा भगवन्तं उपसङ्कमन्तो ति[१] ? सायन्हवेलायं, पच्चयाकारपञ्हपुच्छनकारणेन । तं दिवसं किरायमायस्मा कुलसङ्गहत्थाय घरद्वारे घरद्वारे सहस्सभण्डिकं निक्खिपन्तो विय कम्मासधम्मगामं[२] पिण्डाय चरित्वा पिण्डपातपटि-
5 क्कन्तो सत्थु वत्तं दस्सेत्वा सत्थरि गन्धकुटिं पविट्ठे सत्थारं वन्दित्वा अत्तनो दिवाट्ठानं गन्त्वा अन्तेवासिकेसु वत्तं दस्सेत्वा पटिक्कन्तेसु दिवाट्ठानं पटिसम्मज्जित्वा चम्मक्खण्डं पञ्ञपेत्वा उदकतुम्बतो उदकं[३] गहेत्वा[३] उदकेन हत्थपादे सीतले कत्वा पल्लङ्कं आभुजित्वा निसिन्नो सोतापत्तिफलसमापत्तिं समापज्जि[४] । अथ परिच्छिन्नकालवसेन
10 समापत्तितो वुट्ठाय पच्चयाकारे ञाणं ओतारेसि । सो—"अविज्जा-पच्चया सङ्खारा" ति आदितो पट्ठाय अन्तं, अन्ततो पट्ठाय आदिं, उभयन्ततो पट्ठाय मज्झं, मज्झतो पट्ठाय उभो अन्ते पापेन्तो तिक्खत्तुं द्वादसपदं पच्चयाकारं सम्मसि । तस्सेवं सम्मसन्तस्स पच्चयाकारो
R. 485 विभूतो[५] हुत्वा उत्तानकुत्तानको विय उपट्ठासि ।

15 ततो चिन्तेसि—"अयं पच्चयाकारो सब्बबुद्धेहि—'गम्भीरो चेव गम्भीरावभासो चा' ति कथितो, मय्हं खो पन पदेसञाणे ठितस्स सावकस्स सतो उत्तानो विभूतो पाकटो हुत्वा उपट्ठाति, मय्हं येव नु खो एस उत्तानको हुत्वा उपट्ठाति, उदाहु अञ्ञेसम्पी" ति ? अथस्स एतदहोसि—"हन्दाहं इमं पञ्हं गहेत्वा भगवन्तं पुच्छामि । अद्धा मे
20 भगवा इमं अत्थुप्पत्तिं कत्वा सालिन्दं सिनेरुं उक्खिपन्तो विय एकं सुत्तन्तकथं कथेत्वा दस्सेस्सति[६] । बुद्धानञ्हि विनयपञ्ञत्तिं, भुम्मन्तरं, पच्चयाकारं, समयन्तरं ति इमानि चत्तारि ठानानि पत्वा गज्जितं
B. 76 महन्तं होति, ञाणं अनुपविसति, बुद्धञाणस्स महन्तभावो पञ्ञायति, देसना गम्भीरा होति तिलक्खणब्भाहता[७] सुञ्ञतपटिसंयुत्ता'' ति ।

१. उपसङ्कन्तो ति—सी०, स्या०, रो० । २. कम्मासबम्मं—सी० ।
३-३. सी०, रो० पोत्थकेसु नत्थि । ४. समापज्जित्वा—सी०, रो० ।
५. अतिविभूतो—स्या० । ६. दस्सेति—सी० ।
७. तिलक्खणहता—सी०, स्या०, रो० ।

सो किञ्चा पि पकतियाव एकदिवसे सतवारम्पि सहस्सवारम्पि भगवन्तं उपसङ्कमन्तो न अहेतुअकारणेन उपसङ्कमति, तं दिवसं पन इमं पञ्हं गहेत्वा—"इमं बुद्धगन्धहत्थिं आपज्ज[1] ञाणकोञ्चनादं सोस्सामि,[2] बुद्धसीहं आपज्ज ञाणसीहनादं सोस्सामि, बुद्धसिन्धवं आपज्ज ञाणपदविक्कमं पस्सिस्सामी" ति चिन्तेत्वा दिवाट्ठाना 5 उट्ठाय चम्मक्खण्डं पप्फोटेत्वा आदाय सायन्हसमये भगवन्तं उपसङ्कमि। तेन वुत्तं—"सायन्हवेलायं पच्चयाकारपञ्हपुच्छनकारणेन उपसङ्कमन्तो" ति।

याव गम्भीरो ति एत्थ यावसद्दो पमाणातिक्कमे, अतिक्कम्म पमाणं गम्भीरो, अतिगम्भीरो ति अत्थो। गम्भीरावभासो ति 10 गम्भीरोव हुत्वा अवभासति, दिस्सती ति अत्थो। एकञ्हि उत्तानमेव गम्भीरावभासं होति पूतिपण्णादिवसेन काळवण्णपुराणउदकं विय। तञ्हि जाणुप्पमाणम्पि सतपोरिसं विय दिस्सति। एकं गम्भीरं उत्तानावभासं होति मणिगङ्गाय विप्पसन्नउदकं विय। तञ्हि सतपोरिसम्पि जाणुप्पमाणं विय खायति। एकं उत्तानं उत्तानावभासं होति 15 चाटिआदीसु उदकं विय। एकं गम्भीरं गम्भीरावभासं होति सिनेरुपादकमहासमुद्दे उदकं विय[3]। एवं उदकमेव चत्तारि नामानि लभति। पटिच्चसमुप्पादे पनेतं नत्थि। अयञ्हि गम्भीरो चेव गम्भीरावभासो चा ति एकमेव नामं लभति। एवरूपो समानोपि अथ च पन मे उत्तानकुत्तानको विय खायति, यदिदं[4]—'अच्छरियं, भन्ते, अब्भुतं भन्ते' 20 ति। एवं अत्तनो विम्हयं पकासेन्तो पञ्हं पुच्छित्वा[5] तुण्हीभूतो निसीदि।

R. 486

भगवा तस्स वचनं सुत्वा—"आनन्दो भवग्गगहणाय हत्थं पसारेन्तो विय, सिनेरुं छिन्दित्वा[6] मिञ्जं नीहरितुं वायममानो विय, विना नावाय महासमुद्दं तरितुकामो विय, पथविं परिवत्तेत्वा पथवोजं 25

१. आसज्ज—स्या०, रो०।
२. सी०, रो० पोत्थकेसु नत्थि।
३. ० दिस्सति—स्या०।
४. तदिदं—सी०, रो०।
५. पुच्छि—सी०।
६. भिन्दित्वा—स्या०।

गहेतुं वायममानो विय बुद्धविसयपञ्हं अत्तनो उत्तानं वदति । हन्दस्स, गम्भीरभावं आचिक्खिस्सामी'[1] ति चिन्तेत्वा मा हेवं ति आदिमाह ।

तत्थ मा हेवं ति ह-कारो निपातमत्तं । एवं मा भणी ति अत्थो । मा हेवं ति च इदं वचनं भगवा आयस्मन्तं आनन्दं उस्सादेन्तो पि
5 भणति अपसादेन्तो पि ।

२. उस्सादनावण्णना

B. 77 तत्थ उस्सादेन्तो—आनन्द, त्वं महापञ्ञो विसदञाणो, तेन ते गम्भीरो पि पटिच्चसमुप्पादो उत्तानको विय खायति । अञ्ञेसं पनेस उत्तानको ति न सल्लक्खेतब्बो, गम्भीरोयेव च गम्भीरावभासो च । तत्थ चतस्सो उपमा वदन्ति । छमासे सुभोजनरसपुट्ठस्स किर कत-
10 योगस्स महामल्लस्स समज्जसमये कतमल्लपासाणपरिचयस्स[2] युद्धभूमिं गच्छन्तस्स अन्तरा मल्लपासाणं दस्सेसुं । सो—किं एतं ति आह । मल्लपासाणो ति । आहरथ नं ति । उक्खिपितुं न सक्कोमा ति वुत्ते सयं गन्त्वा कुहिं इमस्स भारियट्ठानट्ठि वत्वा द्वीहि हत्थेहि द्वे पासाणे उक्खिपित्वा कीळागुळं विय खिपित्वा अगमासि । तत्थ मल्लस्स
15 मल्लपासाणो लहुको पि न अञ्ञेसं लहुको ति वत्तब्बो । छमासे सुभोजनरसपुट्ठो मल्लो विय हि कप्पसतसहस्सं अभिनीहारसम्पन्नो आयस्मा आनन्दो । यथा मल्लस्स महाबलताय मल्लपासाणो लहुको,
R. 487 एवं थेरस्स महापञ्ञताय पटिच्चसमुप्पादो उत्तानो । सो अञ्ञेसं उत्तानो ति न वत्तब्बो ।

20 महासमुद्दे च तिमिनाम मच्छो द्वियोजनसतिको तिमिङ्गलो तियोजनसतिको, तिमिपिङ्गलो चतुयोजनसतिको तिमिरपिङ्गलो पञ्चयोजनसतिको, आनन्दो तिमिनन्दो अज्झारोहो महातिमी ति इमे चत्तारो योजनसहस्सिका । तत्थ तिमिरपिङ्गलेनेव दीपेन्ति । तस्स किर दक्खिणकण्णं चालेन्तस्स पञ्चयोजनसते पदेसे उदकं चलति । तथा
25 वामकण्णं । तथा नङ्गुट्ठं, तथा सीसं । द्वे पन कण्णे चालेत्वा नङ्गुट्ठेन

१. आचिक्खामी ति—स्या० । २. कतमलने पुञ्ञस्स—सी०, रो० ।

उदकं पहरित्वा सीसं अपरापरं कत्वा कीळितुं आरद्धस्स सत्तट्ठयोजन-
सते पदेसे भाजने पक्खिपित्वा उद्धने आरोपितं विय उदकं पक्कुथति,
तियोजनसतमत्ते पदेसे उदकं पिट्ठिं छादेतुं न सक्कोति। सो एवं
वदेय्य—"अयं महासमुद्दो गम्भीरो गम्भीरो ति वदन्ति कुतस्स
गम्भीरता, मयं पिट्ठिपटिच्छादनमत्तम्पि उदकं न लभामा" ति। तत्थ 5
कायुपपन्नस्स तिमिरपिङ्गलस्स महासमुद्दो उत्तानो ति, अञ्ञेसं खुद्दक-
मच्छानं उत्तानो ति न वत्तब्बो। एवमेव ञाणुपपन्नस्स थेरस्स पटिच्च-
समुप्पादो उत्तानो ति, अञ्ञेसम्पि उत्तानो ति न वत्तब्बो।

सुपण्णराजा च दियड्ढयोजनसतिको। तस्स दक्खिणपक्खो पञ्ञास- B. 78
योजनिको होति तथा वामपक्खो[1], पिञ्छवट्टि सट्ठियोजनिका, गीवा 10
तिंसयोजनिका, मुखं नवयोजनं, पादा द्वादसयोजनिका। तस्मिं
सुपण्णवातं दस्सेतुं आरद्धे सत्तट्ठयोजनसतं ठानं नप्पहोति। सो एवं
वदेय्य—"अयं आकासो अनन्तो अनन्तो ति वदन्ति, कुतस्स[2] अनन्तता,
मयं पक्खवातप्पसारणोकासम्पि[3] न लभामा" ति। तत्थ कायुपपन्नस्स
सुपण्णरञ्ञो आकासो परित्तो ति, अञ्ञेसं खुद्दकपक्खीनं परित्तो ति न 15
वत्तब्बो। एवमेव ञाणुपपन्नस्स थेरस्स पटिच्चसमुप्पादो उत्तानो ति,
अञ्ञेसम्पि उत्तानो ति न वत्तब्बो।

राहुअसुरिन्दो पन पादन्ततो याव केसन्ता योजनानं चत्तारि
सहस्सानि अट्ठ च[4] सतानि होति। तस्स द्विन्नं बाहानं अन्तरं द्वादस-
योजनसतिकं। बहलत्तेव छयोजनसतिकं। हत्थपादतलानि तियोजन- 20 R. 488
सतिकानि, तथा मुखं। एकेकं अङ्गुलिपब्बं पञ्ञासयोजनं, तथा
भमुकन्तरं, नलाटं तियोजनसतिकं, सीसं नवयोजनसतिकं। तस्स
महासमुद्दं ओतिण्णस्स[5] गम्भीरं उदकं जाणुप्पमाणं होति। सो एवं
वदेय्य—"अयं महासमुद्दो गम्भीरो गम्भीरो ति वदन्ति, कुतस्स

१. ० पि – सी०, रो०। २. कुत्रस्स—सी०, रो०।
३. ० पहारणोकासो—सी०, रो०। ४. ० योजन—सी०, रो०।
५. ० योजनसहस्समत्ते ठाने गम्भीरोदकं—
—सी०, रो०।

गम्भीरता, मयं जाणुप्पटिच्छादनमत्तम्पि उदकं न लभामा" ति । तत्थ कायुपपन्नस्स राहुनो महासमुद्दो उत्तानो ति, अञ्ञेसं उत्तानो ति न वत्तब्बो । एवमेव ञाणुपपन्नस्स थेरस्स पटिच्चसमुप्पादो उत्तानो ति, अञ्ञेसम्पि उत्तानो ति न वत्तब्बो । एतमत्थं सन्धाय भगवा—"मा
5 हेवं, आनन्द, अवच, मा हेवं, आनन्द अवचा" ति आह ।

थेरस्स हि चतूहि कारणेहि गम्भीरो पि पटिच्चसमुप्पादो उत्तानो ति उपट्ठाति । कतमेहि चतूहि ? पुब्बूपनिस्सयसम्पत्तिया, तित्थवासेन, सोतापन्नताय, बहुस्सुतभावेना ति ।

३. पुब्बूपनिस्सयसम्पत्तिकथा

10 इतो किर सतसहस्सिमे कप्पे पदुमुत्तरो नाम सत्था लोके उप्पज्जि । तस्स हंसवती नाम नगरं अहोसि, आनन्दो नाम राजा
B. 79 पिता, सुमेधा नाम देवी माता, बोधिसत्तो उत्तरकुमारो नाम अहोसि । सो पुत्तस्स जातदिवसे महाभिनिक्खमनं निक्खम्म पब्बजित्वा पधानमनुयुञ्जन्तो[1] अनुक्कमेन सब्बञ्ञुतं पत्वा—"अनेकजातिसंसारं" ति
15 उदानं उदानेत्वा सत्ताहं बोधिपल्लङ्के वीतिनामेत्वा पथवियं ठपेस्सामी ति पादं अभिनीहरि । अथ पथविं भिन्दित्वा महन्तं पदुमं उट्ठासि । तस्स धुरपत्तानि नवुतिहत्थानि, केसरं तिंसहत्थं, कण्णिका द्वादसहत्था, नवघटप्पमाणो रेणु अहोसि ।

सत्था पन उब्बेधतो अट्ठपण्णासहत्थुब्बेधो अहोसि । तस्स
20 उभिन्नं बाहानमन्तरं अट्ठारसहत्थं, नलाटं पञ्चहत्थं, हत्थपादा एकादसहत्था । तस्स एकादसहत्थेन पादेन द्वादसहत्थाय कण्णिकाय अक्कन्तमत्ताय नवघटप्पमाणो रेणु उट्ठाय अट्ठपण्णासहत्थं पदेसं उग्गन्त्वा ओकिण्णमनोसिलाचुण्णं विय पच्चोकिण्णो । तदुपादाय भगवा
R. 489 पदुमुत्तरोत्वेव पञ्ञायित्थ । तस्स देविलो[2] च सुजातो च द्वे
25 अग्गसावका अहेसुं । अमिता च असमा च द्वे अग्गसाविका । सुमनो

१. ० मनुयुत्तो—सी०, रो० । २. देवलो—सी०, रो० ।

नाम उपट्ठाको। पदुमुत्तरो भगवा पितुसङ्गहं कुरुमानो भिक्खुसत-सहस्सपरिवारो हंसवतिया राजधानिया वसति।

कनिट्ठमाता पनस्स सुमनकुमारो नाम। तस्स राजा हंसवतितो वीसतियोजनसते ठाने भोगगामं अदासि। सो कदाचि[१] आगन्त्वा पितरञ्च सत्थारञ्च पस्सति। अथेकदिवसं पच्चन्तो कुपितो। सुमनो[२] 5 रञ्ञो पेसेसि—"पच्चन्तो कुपितो" ति। राजा "मया त्वं तत्थ कस्मा ठपितो" ति पटिपेसेसि। सो निक्खम्म[३] चोरे वूपसमेत्वा—"उपसन्तो, देव, जनपदो" ति रञ्ञो पेसेसि। राजा तुट्ठो—"सीघं मम पुत्तो आगच्छतू" ति आह। तस्स सहस्समत्ता अमच्चा होन्ति। सो तेहि सद्धिं अन्तरामग्गे मन्तेसि—"मय्हं पिता तुट्ठो, सचे मे वरं 10 देति, किं गण्हामी" ति। अथ नं एकच्चे "हत्थिं गण्हथ, अस्सं गण्हथ, रथं गण्हथ, जनपदं गण्हथ, सत्तरतनानि गण्हथा" ति आहंसु। अपरे—"तुम्हे पथविस्सरस्स पुत्ता, तुम्हाकं[४] धनं दुल्लभं, लद्धम्पि चेतं सब्बं पहाय गमनीयं, पुञ्ञमेव एकं आदाय गमनीयं; तस्मा ते[५], देवे, वरं ददमाने तेमासं पदुमुत्तरं भगवन्तं उपट्ठातुं वरं गण्हथा" ति। 15

सो—"तुम्हे मय्हं कल्याणमित्ता,[६] न ममेतं चित्तं अत्थि, तुम्हेहि पन उप्पादितं, एवं करिस्सामी" ति गन्त्वा पितरं वन्दित्वा पितरापि B. 80 आलिङ्गित्वा तस्स[७] मत्थके चुम्बित्वा—"वरं ते पुत्त, देमी" ति वुत्ते "साधु महाराज, इच्छामहं महाराज भगवन्तं तेमासं चतूहि पच्चयेहि उपट्ठहन्तो जीवितं अवञ्झं कातुं। इममेव[८] वरं देही" ति आह। 20 "न सक्का तात, अञ्ञवरेही" ति वुत्ते[९] "देव,[१०] खत्तियानं नाम द्वे कथा नत्थि, एतमेव[११] देहि, न मे[१२] अञ्ञेनत्थो" ति। तात बुद्धानं

१. ० कदाचि—सी०, रो०। २. सी० पोत्थके नत्थि।
३. सी०, रो० पोत्थकेसु नत्थि। ४ न तुम्हाकं—सी०, रो०।
५. सी०, रो० पोत्थकेसु नत्थि। ६. ० नाम—सी०।
७. सी०, रो० पोत्थकेसु नत्थि। ८. इमं मे—सी०, रो०।
९. सी०, स्या०, रो० पोत्थकेसु नत्थि। १०. सी०, रो० पोत्थकेसु नत्थि।
११. ० मे—सी०, स्या०, रो०। १२. मम—सी०।

नाम चित्तं दुज्जानं, सचे भगवा न इच्छिस्सति, मया दिन्ने पि किं भविस्सती ति ? सो[१]—"साधु, देव, अहं भगवतो चित्तं जानिस्सामी" ति विहारं गतो।

तेन च समयेन भत्तकिच्चं निट्ठपेत्वा भगवा गन्धकुटिं पविट्ठो 5 होति। सो मण्डलमाळे सन्निसिन्नानं भिक्खूनं सन्तिकं अगमासि। ते तं आहंसु—"राजपुत्त, कस्मा आगतोसी" ति ? भगवन्तं दस्सनाय, R. 490 दस्सेथ मे भगवन्तं ति। न मयं, राजपुत्त, इच्छितिच्छितक्खणे सत्थारं दट्ठुं लभामा ति। को पन, भन्ते, लभती ति ? सुमनत्थेरो नाम राजपुत्ता ति। "सो कुहिं, भन्ते, थेरो" ति, थेरस्स निसिन्नट्ठानं 10 पुच्छित्वा गन्त्वा वन्दित्वा—"इच्छामहं, भन्ते, भगवन्तं पस्सितुं, दस्सेथ मे" ति आह। थेरो—"एहि राजपुत्ता" ति तं गहेत्वा तं गन्धकुटिपरिवेणे ठपेत्वा गन्धकुटिं अभिरुहि। अथ नं भगवा—"सुमन, कस्मा आगतोसी" ति आह। राजपुत्तो, भन्ते, भगवन्तं दस्सनाय आगतो ति। तेन हि भिक्खु आसनं पञ्ञापेही ति। थेरो आसनं 15 पञ्ञापेसि। निसीदि भगवा पञ्ञत्ते आसने। राजपुत्तो भगवन्तं वन्दित्वा पटिसन्थारं अकासि। कदा आगतोसि राजपुत्ता ति ? भन्ते, तुम्हेसु गन्धकुटिं पविट्ठेसु। भिक्खू पन—"न मयं इच्छितिच्छितक्खणे भगवन्तं दट्ठुं लभामा" ति मं थेरस्स सन्तिकं पाहेसुं। थेरो पन एकवचनेन दस्सेसि। थेरो, भन्ते, तुम्हाकं सासने वल्लभो मञ्ञेति। 20 आम राजकुमार, वल्लभो एस भिक्खु मय्हं सासने ति। भन्ते, बुद्धानं सासने किं कत्वा वल्लभो[२] होती ति[२] ? दानं दत्वा सीलं समादियित्वा उपोसथकम्मं कत्वा कुमारा ति। भगवा अहं थेरो विय बुद्धसासने वल्लभो होतुकामो। तेमासं मे वस्सावासं अधिवासेथा ति। भगवा—"अत्थि नु खो तत्थ गतेन अत्थो" ति ओलोकेत्वा अत्थी ति दिस्वा B. 81 52 "सुञ्ञागारे, खो राजकुमार तथागता अभिरमन्ती" ति आह। कुमारो अञ्ञातं भगवा, अञ्ञातं सुगता" ति वत्वा "अहं, भन्ते,

१. सी०, रो० पोत्थकेसु नत्थि। २-२. वल्लभा होन्ती ति—सी०, स्या०, रो०।

पुरिमतरं गन्त्वा विहारं कारेमि, मया पेसिते भिक्खुसतसहस्सेन सद्धिं आगच्छथा" ति पटिञ्ञं गहेत्वा पितुसन्तिकं गन्त्वा "दिन्ना मे, देव, भगवता पटिञ्ञा, मया पहिते भगवन्तं पेसेय्याथा" ति पितरं वन्दित्वा निक्खमित्वा योजने योजने विहारं कारेत्वा वीसयोजनसतं अद्धानं गन्त्वा अत्तनो नगरे विहारट्ठानं विचिनन्तो सोभनं नाम कुटुम्बिकस्स 5 उय्यानं दिस्वा सतसहस्सेन किणित्वा सतसहस्सं विस्सज्जेत्वा विहारं कारेसि। तत्थ भगवतो गन्धकुटिं सेसभिक्खूनञ्च रत्तिट्ठानदिवाट्ठानट्ठाय कुटिलेणमण्डपे कारापेत्वा पाकारपरिक्खेपे कत्वा द्वारकोट्ठकञ्च निट्ठपेत्वा R. 491 पितुसन्तिकं पेसेसि—"निट्ठितं मय्हं किच्चं, सत्थारं पहिणथा" ति।

राजा भगवन्तं भोजेत्वा—"भगवा सुमनस्स किच्चं निट्ठितं। 10 तुम्हाकं गमनं पच्चासीसती" ति आह। भगवा सतसहस्सभिक्खुपरिवारो योजने योजने विहारेसु वसमानो अगमासि। कुमारो "सत्था आगतो"[1] ति सुत्वा योजनं पच्चुग्गन्त्वा मालादीहि[2] पूजयमानो विहारं पवेसेत्वा—

"सतसहस्सेन मे कीतं, सतसहस्सेन मापितं।
सोभनं नाम उय्यानं, पटिग्गण्ह महामुनी" ति— 15

विहारं निय्यातेसि। सो वस्सूपनायिकदिवसे दानं दत्वा अत्तनो पुत्तदारे च अमच्चे च पक्कोसापेत्वा आह—"अयं सत्था अम्हाकं सन्तिकं दूरतो आगतो, बुद्धा च नाम धम्मगरुनो न आमिसगरुका। तस्मा अहं तेमासं द्वे साटके निवासेत्वा दस सीलानि समादियित्वा इधेव वसिस्सामि। तुम्हे खीणासवसतसहस्सस्स इमिनाव नीहारेन 20 तेमासं दानं ददेय्याथा" ति।

सो सुमनत्थेरस्स वसनट्ठानसभागेयेव ठाने वसन्तो यं थेरो भगवतो वत्तं करोति, तं सब्बं दिस्वा "इमस्मिं ठाने एकन्तवल्लभो एस थेरो, एतस्सेव मे ठानन्तरं पत्थेतुं वट्टती" ति चिन्तेत्वा उपकट्ठाय पवारणाय गामं पविसित्वा सत्ताहं महादानं दत्वा सत्तमे दिवसे भिक्खुसतसहस्सस्स 25 पादमूले तिचीवरं ठपेत्वा भगवन्तं वन्दित्वा—"भन्ते, यदेतं मया मग्गे B. 82

१. आगच्छती—सी०, रो०। २. गन्धमालादीहि—सी०, स्या०, रो०।

योजनन्तरिकं योजनन्तरिकं विहारं कारापनतो पट्ठाय पुञ्ञं कतं, तं नेव सक्कसम्पत्तिं न मारसम्पत्तिं, न ब्रह्मसम्पत्तिं पत्थयन्तेन, बुद्धस्स पन उपट्ठाकभावं पत्थयन्तेन कतं। तस्मा अहम्पि भगवा अनागते सुमनत्थेरो विय बुद्धस्स उपट्ठाको भवेय्यं'' ति पञ्चपतिट्ठितेन निपतित्वा वन्दि।

5 भगवा—"महन्तं कुलपुत्तस्स चित्तं, समिज्झिस्सति[1] नु खो नो" ति ओलोकेन्तो—"अनागते इतो सतसहस्सिमे कप्पे गोतमो नाम बुद्धो उप्पज्जिस्सति, तस्सेव उपट्ठाको भविस्सती ति ञत्वा—

R. 492

"इच्छितं पत्थितं तुय्हं, सब्बमेव समिज्झतु।
सब्बे पूरेन्तु सङ्कप्पा, चन्दो पन्नरसो यथा" ति—

10 आह। कुमारो तं सुत्वा—"बुद्धा नाम अद्वेज्झकथा होन्ती'' ति दुतियदिवसेयेव तस्स भगवतो पत्तचीवरं गहेत्वा पिट्ठितो पिट्ठितो गच्छन्तो विय अहोसि। सो तस्मिं बुद्धुप्पादे वस्ससतसहस्सं दानं दत्वा सग्गे निब्बत्तित्वा कस्सपबुद्धकाले पि पिण्डाय चरतो थेरस्स पत्तग्गहणत्थं उत्तरिसाटकं दत्वा पूजमकासि। पुन सग्गे निब्बत्तित्वा ततो चुतो 15 बाराणसिराजा हुत्वा अट्ठन्नं पच्चेकबुद्धानं पण्णसालायो कारेत्वा मणिआधारके उपट्ठपेत्वा चतूहि पच्चयेहि दसवस्ससहस्सानि उपट्ठानं अकासि। एतानि पाकटट्ठानानि।

कप्पसतसहस्सं पन दानं ददमानो व अम्हाकं बोधिसत्तेन सद्धिं तुसितपुरे निब्बत्तित्वा ततो चुतो अमितोदनसक्कस्स गेहे पटिसन्धिं 20 गहेत्वा अनुपुब्बेन कताभिनिक्खमनो[2] सम्मासम्बोधिं पत्वा पठमगमनेन कपिलवत्थुं आगन्त्वा ततो निक्खमन्ते भगवति भगवतो परिवारत्थं राजकुमारेसु पब्बजितेसु भद्दियादीहि सद्धिं निक्खमित्वा भगवतो सन्तिके पब्बजित्वा नचिरस्सेव आयस्मतो पुण्णस्स मन्ताणिपुत्तस्स सन्तिके धम्मकथं सुत्वा सोतापत्तिफले पतिट्ठहि। एवमेस आयस्मा पुब्बूप- 25 निस्सयसम्पन्नो। तस्सिमाय पुब्बूपनिस्सयसम्पत्तिया गम्भीरो पि पटिच्चसमुप्पादो उत्तानको विय उपट्ठासि।

१. इज्झिस्सति—सी०, स्या०, रो०। २. ० निक्खमने—स्या०।

४. तित्थवासादिवण्णना

तित्थवासो ति पुनप्पुनं गरूनं सन्तिके उग्गहणसवनपरिपुच्छन- B. 83
धारणानि वुच्चन्ति। सो थेरस्स अतिविय परिसुद्धो। तेनापिस्सायं
गम्भीरो पि पटिच्चसमुप्पादो उत्तानको विय हुत्वा उपट्ठासि[1]।

सोतापन्नानञ्च नाम पच्चयाकारो उत्तानकोव हुत्वा उपट्ठाति, अयञ्च
आयस्मा सोतापन्नो। बहुस्सुतानञ्च चतुहत्थे ओवरके पदीपे जलमाने 5
मञ्चपीठं विय नामरूपपरिच्छेदो[2] पाकटो होति[2], अयञ्च आयस्मा R. 493
बहुस्सुतानं अग्गो होति। बाहुस्सच्चानुभावेनपिस्स गम्भीरो पि
पच्चयाकारो उत्तानको विय हुत्वा उपट्ठासि।

५. पटिच्चसमुप्पादगम्भीरता

तत्थ अत्थगम्भीरताय, धम्मगम्भीरताय, देसनागम्भीरताय,
पटिवेधगम्भीरताया ति चतूहि आकारेहि पटिच्चसमुप्पादो गम्भीरो 10
नाम।

तत्थ जरामरणस्स जातिपच्चयसम्भूतसमुदागतट्ठो गम्भीरो
...पे०...सङ्खारानं अविज्जापच्चयसम्भूतसमुदागतट्ठो गम्भीरो ति अयं
अत्थगम्भीरता।

अविज्जाय सङ्खारानं पच्चयट्ठो गम्भीरो...पे०...जातिया 15
जरामरणस्स पच्चयट्ठो गम्भीरो ति अयं **धम्मगम्भीरता**।

कत्थचि सुत्ते पटिच्चसमुप्पादो अनुलोमतो देसियति, कत्थचि
पटिलोमतो, कत्थचि अनुलोमपटिलोमतो, कत्थचि मज्झतो पट्ठाय
अनुलोमतो वा पटिलोमतो वा अनुलोमपटिलोमतो वा, कत्थचि
तिसन्धि चतुसङ्खेपो, कत्थचि द्विसन्धि तिसङ्खेपो, कत्थचि एकसन्धि 20
द्विसङ्खेपो ति अयं **देसनागम्भीरता**।

१. उपट्ठाति—सी०। २-२. ०परिच्छेदा पाकटा होन्ति—सी०, स्या०।

अविज्जाय पन अञ्ञाणअदस्सनसच्चापटिवेधट्ठो[1] गम्भीरो, सङ्खारानं अभिसङ्खरणायूहनसरागविरागट्ठो, विञ्ञाणस्स सुञ्ञतअब्यापारअसङ्कन्तिपटिसन्धिपातुभावट्ठो, नामरूपस्स एकुप्पादविनिब्भोगाविनिब्भोगनमनरुप्पनट्ठो, सळायतनस्स अधिपतिलोकद्वारक्खेत्तविसयि-
B. 84 5 भावट्ठो, फस्सस्स फुसनसङ्घट्टनसङ्गतिसन्निपातट्ठो, वेदनाय आरम्मणरसानुभवनसुखदुक्खमज्झत्तभावनिज्जीववेदयितट्ठो, तण्हाय अभिनन्दितअज्झोसानसरिता[2] लतातण्हानदी तण्हासमुद्ददुप्पूरणट्ठो, उपादानस्स आदानग्गहणाभिनिवेसपरामासदुरतिक्कमट्ठो, भवस्स आयूहनाभिसङ्खरणयोनिगतिट्ठितिनिवासेसु खिपनट्ठो, जातिया जातिसञ्जातिओक्कन्ति-
10 निब्बत्तिपातुभावट्ठो, जरामरणस्स खयवयभेदविपरिणामट्ठो गम्भीरो ति। एवं यो[3] अविज्जादीनं सभावो, येन पटिवेधेन अविज्जादयो[4] सरसलक्खणतो पटिविद्धा होन्ति; सो गम्भीरो ति अयं पटिवेधगम्भीरता ति वेदितब्बा। सा[5] सब्बापि[5] थेरस्स उत्तानका विय उपट्ठासि। तेन भगवा आयस्मन्तं आनन्दं उस्सादेन्तो—"मा हेवं"
R. 494 15 ति आदिमाह। अयञ्चेत्थ अधिप्पायो—आनन्द, त्वं महापञ्ञो विसदञाणो, तेन ते गम्भीरो पि पटिच्चसमुप्पादो उत्तानको विय खायति। तस्मा—"मय्हमेव नु खो एस उत्तानको हुत्वा उपट्ठाति, उदाहु अञ्ञेसम्पि" ति मा एवं अवचा ति।

६. अपसादनावण्णना

यं पन वुत्तं—"अपसादेन्तो" ति, तत्थ अयं अधिप्पायो। आनन्द,
20 "अथ च पन मे उत्तानकुत्तानको विय खायती" ति मा हेवं[6] अवच। यदि हि ते एस उत्तानकुत्तानको विय खायति, कस्मा त्वं अत्तनो धम्मताय सोतापन्नो नाहोसि, मया दिन्ननयेव ठत्वा सोतापत्तिमग्गं पटिविज्झसि[7]। आनन्द, इदं निब्बानमेव गम्भीरं, पच्चयाकारो पन तव

१. ० सच्चासंपटिवेधत्थो—सी०, रो०।
२. ० समोसरितता—सी०, रो०।
३. ० यो—सी०, रो०।
४. ०धम्मा—सी०, स्या०, रो०।
५-५. सो सब्बो पि—स्या०।
६. ० त्वं—सी०, रो०।
७. पटिविज्झि—सी०, रो०।

उत्तानको जातो, अथ कस्मा ओळारिकं कामरागसंयोजनं पटिघसंयोजनं, ओळारिकं कामरागानुसयं पटिघानुसयं ति इमे चत्तारो किलेसे समुग्घाटेत्वा सकदागामिफलं न सच्छिकरोसि ? तेयेव अणुसहगते चत्तारो किलेसे समुग्घाटेत्वा अनागामिफलं न सच्छिकरोसि ? रूपरागादीनि पञ्च संयोजनानि, भवरागानुसयं मानानुसयं अविज्जानुसयं ति इमे अट्ठ 5 किलेसे समुग्घाटेत्वा अरहत्तं न सच्छिकरोसि ?

कस्मा च सतसहस्सकप्पाधिकं एकं असङ्ख्येय्यं पूरितपारमिनो B. 85 सारिपुत्तमोग्गल्लाना विय सावकपारमिञाणं नप्पटिविज्झसि ? सत-सहस्सकप्पाधिकानि द्वे असङ्ख्येय्यानि पूरितपारमिनो पच्चेकबुद्धा विय च पच्चेकबोधिञाणं नप्पटिविज्झसि ? यदि वा ते सब्बथाव एस 10 उत्तानको हुत्वा उपट्ठाति, अथ कस्मा सतसहस्सकप्पाधिकानि चत्तारि अट्ठ सोळस वा असङ्ख्येय्यानि पूरितपारमिनो बुद्धा[1] विय सब्बञ्ञुत-ञ्ञाणं न सच्छिकरोसि ? किं अनत्थिकोसि एतेहि विसेसाधिगमेहि, पस्स यावञ्च ते अपरद्धं, त्वं नाम सावको पदेसञाणे ठितो अतिगम्भीरं पच्चयाकारं—"उत्तानको मे उपट्ठाती" ति वदसि[2]। तस्स ते इदं 15 वचनं बुद्धानं कथाय पच्चनीकं होति। न तादिसेन नाम भिक्खुना बुद्धानं कथाय पच्चनीकं कथेतब्बं ति युत्तमेतं।

ननु मय्हं, आनन्द, इदं पच्चयाकारं पटिविज्झितुं वायमन्तस्सेव सतसहस्सकप्पाधिकानि चत्तारि असङ्ख्येय्यानि अतिक्कन्तानि ? पच्चयाकारं पटिविज्झनत्थाय च पन मे अदिन्नं दानं नाम नत्थि, 20 R. 495 अपूरितपारमी नाम नत्थि। पच्चयाकारं पटिविज्झिस्सामी ति पन मे निरुस्साहं विय मारबलं विधमन्तस्स अयं महापथवी द्वङ्गुलमत्तम्पि न कम्पि[3] तथा पठमयामे पुब्बेनिवासं, मज्झिमयामे दिब्बचक्खुं सम्पा-देन्तस्स। पच्छिमयामे पन मे बलवपच्चूससमये—"अविज्जा सङ्खारानं नवहि आकारेहि पच्चयो होती" ति दिट्ठमत्तेव दससहस्सिलोकधातु 25

१. सम्मा सम्बुद्धा विय—सी०, रो०। २. वदेसि—सी०, रो०।
३. कम्पित्थ—सी०, रो०।

अयदण्डकेन आकोटितकंसतालं विय विरवसतं विरवसहस्सं मुञ्चमाना[1] वाताहते पदुमिनिपण्णे उदकबिन्दु विय कम्पित्थ। एवं गम्भीरो चायं, आनन्द, पटिच्चसमुप्पादो, गम्भीरावभासो च। एतस्स आनन्द, धम्मस्स अननुबोधा ...पे०... नातिवत्तती ति।

5 **एतस्स धम्मस्सा** (दी० नि० २.४४) ति एतस्स पच्चयधम्मस्स। **अननुबोधा** ति ञातपरिञ्ञावसेन अननुबुज्झना। **अप्पटिवेधा** ति तीरणप्पहानपरिञ्ञावसेन अप्पटिविज्झना। **तन्ताकुलकजाता** ति तन्तं विय आकुलकजाता[2]। यथा नाम दुन्निक्खित्तं मुसिकच्छिन्नं पेसकारानं तन्तं तहिं तहिं आकुलं होति, इदं अग्गं इदं मूलं ति 10 अग्गेन वा अग्गं मूलेन वा मूलं समानेतुं दुक्करं होति; एवमेव सत्ता इमस्मिं पच्चयाकारे खलिता आकुला ब्याकुला होन्ति, न सक्कोन्ति तंपच्चयाकारं उजुं कातुं। तत्थ तन्तं पच्चत्तपुरिसकारे ठत्वा B. 86 सक्कापि भवेय्य उजुं कातुं, ठपेत्वा पन द्वे बोधिसत्ते अञ्ञे सत्ता अत्तनो धम्मताय पच्चयाकारं उजुं कातुं समत्था नाम नत्थि। 15 यथा पन आकुलं तन्तं कञ्जियं दत्वा कोच्छेन पहतं तत्थ तत्थ गुळकजातं होति; गण्ठिबद्धं, एवमिमे सत्ता पच्चयेसु पक्खलित्वा पच्चये उजुं कातुं असक्कोन्ता द्वासट्ठिदिट्ठिगतवसेन आकुलकजाता[3] होन्ति, गण्ठिबद्धा। ये हि केचि दिट्ठिगतनिस्सिता,[4] सब्बे पच्चयाकारं उजुं कातुं असक्कोन्तायेव।

20 **कुलागण्ठिकजाता** ति कुलागण्ठिकं वुच्चति पेसकारकञ्जियसुत्तं। कुला नाम सकुणिका। तस्सा कुलावको ति पि एके। यथा हि तदुभयम्पि आकुलं अग्गेन वा अग्गं मूलेन वा मूलं समानेतुं दुक्करं ति R. 496 पुरिमनयेनेव योजेतब्बं। **मुञ्जपब्बजभूता** ति मुञ्जतिणं विय पब्बजतिणं विय च भूता[5]। यथा तानि तिणानि कोट्टेत्वा कतरज्जु 25 जिण्णकाले कत्थचि पतितं गहेत्वा तेसं तिणानं इदं अग्गं, इदं मूलं ति

१. कुरुमाना—सी०, रो०। २. आकुलजाता—सी०, रो०।
३. गुलकजाता—सी०, रो०। ४. दिट्ठियो निस्सिता—सी०, रो०।
५. ० तादिसी जाता—सी०, रो०।

अग्गेन वा अग्गं मूलेन वा मूलं समानेतुं दुक्करं ति। तम्पि पच्चत्तपुरिसकारे ठत्वा सक्का भवेय्य उजुं कातुं, ठपेत्वा पन द्वे बोधिसत्ते अञ्ञे सत्ता अत्तनो धम्मताय पच्चयाकारं उजुं कातुं समत्था नाम नत्थि। एवमयं पजा पच्चयाकारे उजुं कातुं असक्कोन्ती दिट्ठिगतवसेन गण्ठिकजाता हुत्वा अपायं दुग्गतिं विनिपातं संसारं 5 नातिवत्तति।

तत्थ अपायो ति निरयतिरच्छानयोनिपेत्तिविसयअसुरकाया। सब्बे पि हि ते वड्ढिसङ्खातस्स अयस्स अभावतो—"अपायो" ति वुच्चन्ति। तथा दुक्खस्स गतिभावतो दुग्गति। सुखसमुस्सयतो विनिपतितत्ता विनिपातो। इतरो पन— 10

"खन्धानञ्च पटिपाटि, धातुआयतनान च।
अब्बोच्छिन्नं वत्तमाना, संसारो ति पवुच्चती' ति॥

तं सब्बम्पि नातिवत्तति नातिक्कमति। अथ खो चुतितो पटिसन्धिं, पटिसन्धितो चुतिं ति एवं पुनप्पुनं चुतिपटिसन्धियो गण्हन्ता तीसु भवेसु चतूसु योनीसु पञ्चसु गतीसु सत्तसु विञ्ञाणट्ठितीसु 15 नवसु सत्तावासेसु महासमुद्दे वातुक्खित्तनावा विय यन्तेसु युत्तगोणो विय च परिब्भमतियेव। इति सब्बम्पेतं भगवा आयस्मन्तं आनन्दं B. 87 अपसादेन्तो आहा ति वेदितब्बं।

७. पटिच्चसमुप्पादवण्णना

२. इदानि यस्मा इदं सुत्तं—"गम्भीरो, चायं, आनन्द पटिच्च-समुप्पादो" ति च "तन्ताकुलकजाता" ति च द्वीहि येव पदेहि आबद्धं, 20 तस्मा—"गम्भीरो चायं, आनन्द, पटिच्चसमुप्पादो" ति इमिना ताव अनुसन्धिना पच्चयाकारस्स गम्भीरभावदस्सनत्थं देसनं आरभन्तो अत्थि इदप्पच्चया जरामरणं ति आदिमाह। तत्रायमत्थो— इमस्स जरामरणस्स पच्चयो इदप्पच्चयो, तस्मा इदप्पच्चया अत्थि जरामरणं। अत्थि नु खो जरामरणस्स पच्चयो,यम्हा पच्चया जरामरणं 25 भवेय्या ति एवं पुट्ठेन सता, आनन्द, पण्डितेन पुग्गलेन यथा—"तं R. 497 जीवं तं सरीरं" ति वुत्ते ठपनीयत्ता पञ्हस्स तुण्ही भवितब्बं होति,

"अब्याकतमेतं तथागतेना" ति वा वत्तब्बं होति, एवं अप्पटिपज्जित्वा, यथा—"चक्खु सस्सतं असस्सतं" ति वुत्ते असस्सतं ति एकंसेनेव[1] वत्तब्बं होति, एवं एकंसेनेव अत्थीतिस्स वचनीयं। पुन किं पच्चया जरामरणं, को नाम सो पच्चयो, यतो जरामरणं होती ति वुत्ते
5 जातिपच्चया जरामरणं ति इच्चस्स वचनीयं, एवं वत्तब्बं भवेय्या ति अत्थो। एस नयो सब्बपदेसु।

नामरूपपच्चया फस्सो ति इदं पन यस्मा सळायतनपच्चया ति वुत्ते चक्खुसम्फस्सादीनं छन्नं विपाकसम्फस्सानंयेव गहणं होति, इध च "सळायतनपच्चया" ति इमिना पदेन गहितम्पि अगहितम्पि पच्च-
10 युप्पन्नविसेसं फस्सस्स च सळायतनतो अतिरित्तं अञ्ञम्पि विसेसपच्चयं दस्सेतुकामो, तस्मा वुच्चन्ति वेदितब्बं। इमिना पन वारेन भगवता किं कथितं ति? पच्चयानं निदानं कथितं। इदञ्हि सुत्तं पच्चये निज्जटे निग्गुम्मे कत्वा कथितत्ता **महानिदानं** ति वुच्चति।

४. इदानि तेसं तेसं पच्चयानं तथं अवितथं अनञ्ञथं पच्चयभावं
15 दस्सेतुं **जातिपच्चया जरामरणं ति इति खो पनेतं वुत्तं** (दी० नि० २.४५) ति आदिमाह। तत्थ **परियायेना** ति कारणेन। **सब्बेनसब्बं सब्बथासब्बं** ति निपातद्वयमेतं। तस्सत्थो—"सब्बाकारेन सब्बा सब्बेन B. 88 सभावेन सब्बा जाति नाम यदि न भवेय्या" ति। भवादीसुपि इमिनाव नयेन अत्थो वेदितब्बो। **कस्सचि** ति अनियमवचनमेतं, देवादीसु
20 यस्स कस्सचि। **किम्हिची** ति इदम्पि अनियमवचनमेव, कामभवादीसु नवसु भवेसु यत्थ कत्थचि। **सेय्यथिदं** ति अनियमितनिक्खित्तअत्थविभ-जनत्थे निपातो। तस्सत्थो—"यं वुत्तं 'कस्सचि किम्हिची' ति, तस्स ते अत्थं विभजिस्सामी" ति। अथ नं विभजन्तो—"देवानं वा देवत्ताया" ति आदिमाह। तत्थ **देवानं वा देवत्ताया** ति या अयं देवानं
25 देवभावाय खन्धजाति, याय खन्धजातिया देवा "देवा" ति वुच्चन्ति। R. 498 सचे हि जाति सब्बेनसब्बं नाभविस्सा ति इमिना नयेन सब्बपदेसु अत्थो

1. एकन्तेनेव—सी०।

वेदितब्बो। एत्थ च देवा ति उपपत्तिदेवा। गन्धब्बा ति मूलखन्धादीसु अधिवत्थदेवताव। यक्खा ति अमनुस्सा। भूता ति ये केचि निब्बत्तसत्ता। पक्खिनो ति ये केचि अट्ठिपक्खा वा चम्मपक्खा वा लोमपक्खा वा। सिरींसपा ति ये केचि भूमियं सरन्ता गच्छन्ति। तेसं तेसं ति तेसं तेसं देवगन्धब्बादीनं। तदत्थाया ति देवगन्धब्बादि- 5 भावाय। जातिनिरोधा ति जातिविगमा, जातिअभावा ति अत्थो।

R. 499

हेतूतिआदीनि सब्बानि पि[1] कारणवेवचनानि एव। कारणञ्हि यस्मा अत्तनो फलत्थाय हिनोति पवत्तति, तस्मा "हेतू" ति वुच्चति। यस्मा तं फलं निदेति—"हन्द[2], नं गण्हथा" ति अप्पेति विय तस्मा निदानं। यस्मा फलं ततो समुदेति उप्पज्जति, तञ्च पटिच्च एति 10 पवत्तति, तस्मा समुदयो ति च पच्चयो ति च वुच्चति। एस नयो सब्बत्थ। अपिच अदिदं जातो ति एत्थ यदिदं ति निपातो। तस्स सब्बपदेसु लिङ्गानुरूपतो अत्थो वेदितब्बो। इध पन—"या एसा जाती" ति अयमस्स अत्थो। जरामरणस्स हि जाति उपनिस्सयकोटिया पच्चयो होति। 15

५. भवपदे—किम्हिचो (दी० नि० २.४६) ति इमिना ओका-सपरिग्गहो कतो। तत्थ हेट्ठा अवीचिपरियन्तं कत्वा उपरि परनिम्मितवसवत्तदेवे अन्तोकरित्वा कामभवो वेदितब्बो। अयं नयो उपपत्तिभवे। इध पन कम्मभवे[3] युज्जति। सो हि जातिया उपनिस्सयकोटियाव पच्चयो होति। उपादानपदादीसुपि—किम्हिची 20 ति इमिना ओकासपरिग्गहोव कतो ति वेदितब्बो।

B. 89

६. उपादानपच्चया भवो ति एत्थ कामुपादानं तिण्णम्पि कम्मभवानं तिण्णञ्च उपपत्तिभवानं पच्चयो, तथा सेसानिपीति उपादानपच्चया चतुवीसतिभवा वेदितब्बा। निप्परियायेनेत्थ द्वादस कम्मभवा लब्भन्ति। तेसं उपादानानि सहजातकोटियापि उपनिस्सयकोटियापि पच्चयो। 25

१. सी०, रो० पोत्थकेसु नत्थि। २. इदं—सी०, रो०।
३. कम्मभवो—स्या०।

७. **रूपतण्हा** ति रूपारम्मणे तण्हा। एस नयो सद्दतण्हादीसु। सा पनेसा तण्हा उपादानस्स सहजातकोटियापि उपनिस्सयकोटियापि पच्चयो होति।

R. 499 ८. **एस पच्चयो तण्हाय, यदिदं वेदना** (दी० नि० २.४७)
5 ति एत्थ विपाकवेदना तण्हाय उपनिस्सयकोटिया पच्चयो होति, अञ्ञा अञ्ञथापी ति।

९. एत्तावता पन भगवा वट्टमूलभूतं पुरिमतण्हं दस्सेत्वा इदानि देसनं, पिट्ठियं पहरित्वा केसेसु वा गहेत्वा विरवन्तं विरवन्तं मग्गतो ओक्कमेन्तो विय नवहि पदेहि समुदाचारतण्हं दस्सेन्तो–"इति खो
10 पनेतं, आनन्द, वेदनं पटिच्च तण्हा" ति आदिमाह। तत्थ **तण्हा ति** द्वे तण्हा एसनतण्हा च, एसिततण्हा च। याय तण्हाय अजपथसङ्कुपथादीनि पटिपज्जित्वा भोगे एसति गवेसति, अयं **एसनतण्हा** नाम। या तेसु एसितेसु गवेसितेसु पटिलद्धेसु तण्हा, अयं **एसिततण्हा** नाम। तदुभयम्पि समुदाचारतण्हाय एव अधिवचनं। तस्मा दुविधापेसा
15 वेदनं पटिच्च तण्हा नाम। **परियेसना** नाम[1] रूपादिआरम्मणपरियेसना। सा हि तण्हाय सति होति। **लाभो ति** रूपादिआरम्मणपटिलाभो। सो हि परियेसनाय सति होति। **विनिच्छयो** पन ञाणतण्हादिट्ठिवितक्कवसेन चतुब्बिधो। तत्थ—"सुखविनिच्छयं जञ्ञा, सुखविनिच्छयं ञत्वा अज्झत्तं सुखमनुयुञ्जेय्या" (म० नि० ३.३१३) ति अयं **ञाणविनि-**
20 **च्छयो**। विनिच्छयो ति द्वे विनिच्छया—तण्हाविनिच्छयो च दिट्ठिविनिच्छयो चा (म० नि० ३.२२३) ति। एवं आगतानि अट्ठसततण्हाविचरितानि[2] **तण्हाविनिच्छयो**। द्वासट्ठि दिट्ठियो **दिट्ठिविनिच्छयो**। "छन्दो, खो देवानमिन्द, वितक्कनिदानो" (दी० नि० २.२०७) ति इमस्मिं पन सुत्ते इध विनिच्छयो ति वुत्तो
25 वितक्कोयेव आगतो। लाभं लभित्वा हि इट्ठानिट्ठं सुन्दरासुन्दरञ्च

१. स्या० पोत्थके नत्थि। २. ०विपरितानि—स्या०।

वितक्केनेव विनिच्छिनाति[1]–एत्तकं मे रूपारम्मणत्थाय भविस्सति, एत्तकं सद्दादिआरम्मणत्थाय, एत्तकं मय्हं भविस्सति, एत्तकं परस्सं, एत्तकं परिभुञ्जिस्सामि, एत्तकं निदहिस्सामी ति। तेन वुत्तं–"लाभं पटिच्च विनिच्छयो' ति। B. 90

छन्दरागो ति एवं अकुसलवितक्केन वितक्कितवत्थुस्मिं दुब्बलरागो च बलवरागो च उप्पज्जति, इदञ्हि इध तण्हा। छन्दोति दुब्बलरागस्साधिवचनं। अज्झोसानं ति अहं ममं ति बलवसन्निट्ठानं। परिग्गहो ति तण्हादिट्ठिवसेन परिग्गहणकरणं। मच्छरियं ति परेहि साधारणभावस्स असहनता। तेनेवस्स पोराणा एवं वचनत्थं वदन्ति—"इदं अच्छरियं मय्हमेव होतु, मा अञ्ञेसं अच्छरियं होतू ति पवत्तत्ता मच्छरियं ति वुच्चती" ति। आरक्खो ति द्वारपिदहन, मञ्जुसगोपनादिवसेन सुट्ठु रक्खणं। अधिकरोती ति अधिकरणं, कारणस्सेतं नामं। आरक्खाधिकरणं ति भावनपुंसकं, आरक्खहेतू ति अत्थो। दण्डादानादीसु परनिसेधनत्थं दण्डस्स आदानं दण्डादानं। एकतो धारादिनो सत्थस्स आदानं सत्थादानं। कलहो ति कायकलहो पि वाचाकलहो पि। पुरिमो पुरिमो विरोधो विग्गहो। पच्छिमो पच्छिमो विवादो। तुवंतुवं ति अगारवचनं तुवंतुवं। 5 R. 500 10 15

१०. इदानि पटिलोमनयेना पि तंसमुदाचारतण्हं दस्सेतुं पुन—"आरक्खाधिकरणं" ति आरभन्तो देसनं निवत्तेसि। तत्थ कामतण्हा ति पञ्चकामगुणिकरागवसेन उप्पन्ना रूपादितण्हा। भवतण्हा ति सस्सतदिट्ठिसहगतो रागो। विभवतण्हा ति उच्छेददिट्ठिसहगतो रागो। इमे द्वे धम्मा ति वट्टमूलतण्हा च समुदाचारतण्हा चाति इमे द्वे धम्मा। द्वयेना ति तण्हालक्खणवसेन एकभावं गता पि वट्टमूलसमुदाचारवसेन द्वीहि कोट्ठासेहि वेदनाय एकसमोसरणा भवन्ति, वेदनापच्चयेन एकपच्चया ति अत्थो। तिविधञ्हि समोसरणं–ओसरणसमोसरणं, सहजातसमोसरणं, पच्चयसमोसरणञ्च। तत्थ—"अथ खो सब्बानि तानि 20 25

[1] विनिच्छिनन्ति—सी०, स्या०, रो०।

B. 90 कामसमोसरणानि[1] भवन्ती" ति इदं ओसरणसमोसरणं नाम। "छन्दमूलका, आवुसो, एते धम्मा फस्ससमुदया वेदना समोसरणा" (अं० नि० ३.४२१) ति इदं सहजातसमोसरणं नाम। "द्वयेन वेदनाय एकसमोसरणा" ति इदं पन पच्चयसमोसरणं ति वेदितब्बं।

B. 91 5 १९. चक्खुसम्फस्सो ति आदयो सब्बे विपाकफस्सायेव। तेसु[2] ठपेत्वा चत्तारो लोकुत्तरविपाकफस्से अवसेसा द्वत्तिंसफस्सा होन्ति। यदिदं फस्सो (दी० नि० २.४९) ति एत्थ पन फस्सो बहुधा वेदनाय पच्चयो होति।

R. 500 २०. येहि आनन्द आकारेही (दी० नि० २.५०) ति आदीसु 10 आकारा वुच्चन्ति वेदनादीनं अञ्ञमञ्ञं असदिससभावो। तेयेव साधुकं दस्सियमाना तं तं लीनमत्थं गमेन्ती ति लिङ्गानि। तस्स तस्स R. 501 सञ्जाननहेतुतो निमित्तानि। तथा तथा उद्दिसितब्बतो उद्देसा। तस्मा अयमेत्थ अत्थो—"आनन्द, येहि आकारेहि...पे०...येहि उद्देसेहि नामकायस्स नामसमूहस्स पञ्ञत्ति होति, या एसा च वेदनाय वेदयिता- 15 कारे वेदयितलिङ्गे वेदयितनिमित्ते वेदना ति उद्देसे सति, सञ्ञाय सञ्जाननाकारे सञ्जाननलिङ्गे सञ्जाननिमित्ते सञ्ञा ति उद्देसे सति, सङ्खारानं चेतनाकारे चेतनालिङ्गे चेतनानिमित्ते चेतना ति उद्देसे सति, विञ्ञाणस्स विजाननाकारे विजाननलिङ्गे विजाननिमित्ते विञ्ञाणं ति उद्देसे सति—'अयं नामकायो' ति नामकायस्स पञ्ञत्ति होति। तेसु 20 नामकायपञ्ञत्तिहेतूसु वेदनादीसु आकारादीसु असति अपि नु खो रूपकाये अधिवचनसम्फस्सो पञ्ञायेथ, य्वायं चत्तारो खन्धे वत्थुं कत्वा मनोद्वारे अधिवचनसम्फस्सवेवचनो मनोसम्फस्सो उप्पज्जति, अपि नु खो सो रूपकाये पञ्ञायेथ, पञ्च पसादे वत्थुं कत्वा कत्वा उप्पज्जेय्या" ति। अथ आयस्मा आनन्दो अम्बरुक्खे असति जम्बुरुक्खतो अम्ब- 25 पक्कस्स उप्पत्तिं विय रूपकायतो तस्स उप्पत्तिं असम्पटिच्छन्तो नो हेतं भन्ते ति आह[3]।

१. समोसरणानि—सी०, रो०। २. ते—सी०, रो०।
३. आदिमाह—सी०, रो०।

दुतियपञ्हे रूप्पनाकाररूप्पनलिङ्गरुप्पननिमित्तवसेन रूपं ति उद्देसवसेन च आकारादीनं अत्थो वेदितब्बो। पटिघसम्फस्सो ति सप्पटिघं रूपक्खन्धं वत्थुं कत्वा उप्पज्जनकसम्फस्सो। इधापि थेरो जम्बुरुक्खे असति अम्बरुक्खतो। जम्बुपक्कस्स उप्पत्तिं विय नामकायतो तस्स उप्पत्तिं असम्पटिच्छन्तो "नो हेतं भन्ते" ति आह। 5

ततियपञ्हो उभयवसेनेव वुत्तो। तत्र थेरो आकासे अम्बजम्बुपक्कानं उप्पत्तिं विय नामरूपाभावे द्विन्नम्पि फस्सानं उप्पत्तिं असम्पटिच्छन्तो "नो हेतं भन्ते" ति आह। B. 92

एवं द्विन्नं फस्सानं विसुं विसुं पच्चयं दस्सेत्वा इदानि द्विन्नम्पि तेसं अविसेसतो नामरूपपच्चयतं दस्सेतुं—"येहि आनन्द आकारेही" 10 ति चतुत्थं पञ्हं आरभि। यदिदं नामरूपं ति यं इदं नामरूपं। यं इदं छसुपि द्वारेसु नामरूपं, एसेव हेतु एसेव पच्चयो ति अत्थो। चक्खुद्वारादीसु हि चक्खादीनि चेव रूपारम्मणादीनि च रूपं, सम्पयुत्तका खन्धा नामं ति एवं पञ्चविधोपि सो फस्सो नामरूपपच्चयाव फस्सो। R. 502 मनोद्वारे पि हदयवत्थुञ्चेव यञ्च रूपं आरम्मणं होति, इदं रूपं। 15 सम्पयुत्तधम्मा चेव यञ्च अरूपं आरम्मणं होति, इदं अरूपं नाम[1]। एवं मनोसम्फस्सो पि नामरूपपच्चया फस्सो ति वेदितब्बो। नामरूपं पनस्स बहुधा पच्चयो होति।

२१. न ओक्कमिस्सथा ति पविसित्वा पवत्तमानं[2] विय पटिसन्धिवसेन न वत्तिस्सथ। समुच्चिस्सथा ति पटिसन्धिविञ्ञाणे 20 असति अपि नु खो सुद्धं अवसेसं नामरूपं अन्तोमातुकुच्छिस्मिं कललादिभावेन समुच्चितं मिस्सकभूतं हुत्वा वत्तिस्सथ। ओक्कमित्वा वोक्कमिस्सथा तिपटिसन्धि वसेन ओक्कमित्वा चुतिवसेन वोक्कमिस्सथ, निरुज्झिस्सथा ति अत्थो। सो पनस्स निरोधो न तस्सेव चित्तस्सनिरोधेन, न ततो दुतियततियानं निरोधेन होति। पटिसन्धिचित्तेन हि सद्धिं 25 समुट्ठितानि समतिंस कम्मजरूपानि निब्बत्तन्ति। तेसु पन ठितेसु येव

1. सी०, स्या०, रो० पोत्थकेसु नत्थि। 2. वत्तमानं—स्या०।

सोळस भवङ्गचित्तानि उप्पज्जित्वा निरुज्झन्ति। एतस्मिं अन्तरे गहितपटिसन्धिकस्स दारकस्स वा मातुया वा पनस्स अन्तरायो नत्थि। अयञ्हि अनोकासो नाम। सचे पन पटिसन्धिचित्तेन सद्धिं समुट्ठित-रूपानि सत्तरसमस्स भवङ्गस्स पच्चयं दातुं सक्कोन्ति, पवत्ति पवत्तति,
5 पवेणी घटियति। सचे पन न सक्कोन्ति, पवत्ति नप्पवत्तति, पवेणी न घटियति, वोक्कमति नाम होति। तं सन्धाय "ओक्कमित्वा वोक्कमिस्सथा" ति वुत्तं।

इत्थत्ताया ति इत्थभावाय, एवं पटिपुण्णपञ्चक्खन्धभावाया ति अत्थो। दहरस्सेव सतो ति मन्दस्स बालस्सेव सन्तस्स।
B. 93 10 वोच्छिज्जिस्सथा ति उपच्छिज्जिस्सथ वुड्ढिं विरूळ्हिं वेपुल्लं ति विञ्ञाणे उपच्छिन्ने सुद्धं नाम रूपमेव उट्ठहित्वा पठमवयवसेन वुड्ढिं, मज्झिमवयवसेन विरूळ्हिं, पच्छिमवयवसेन वेपुल्लं अपि नु खो आपज्जिस्सथा ति। दसवस्सवीसतिवस्सवस्ससतवस्ससहस्ससम्पापनेन वा अपि नु खो वुड्ढिं विरूळ्हिं वेपुल्लं आपज्जिस्सथा ति अत्थो।

15 तस्मातिहानन्द (दी० नि० २.५१) ति यस्मा मातुकुच्छियं
R. 503 पटिसन्धिग्गहणे पि कुच्छिवासे पि कुच्छितो निक्खमने पि, पवत्तियं दसवस्सादिकाले पि विञ्ञाणमेवस्स पच्चयो, तस्मा एसेव हेतु एस पच्चयो नामरूपस्स, यदिदं विञ्ञाणं। यथा हि राजा अत्तनो परिसं निग्गण्हन्तो एवं वदेय्य—"त्वं उपराजा, त्वं सेनापती ति केन कतो
20 ननु मया कतो, सचे हि मयि अकरोन्ते त्वं अत्तनो धम्मताय उपराजा वा सेनापति वा भवेय्यासि, जानेय्याम वो बलं" ति; एवमेव विञ्ञाणं नामरूपस्स पच्चयो होति। अत्थतो एवं नामरूपं वदति विय "त्वं नामं, त्वं रूपं, त्वं नामरूपं नामा ति केन कतं, ननु मया कतं, सचे हि मयि पुरेचारिके हुत्वा मातुकुच्छिस्मिं पटिसन्धिं अगण्हन्ते त्वं नामं
25 वा रूपं वा नामरूपं वा भवेय्यासि, जानेय्याम वो बलं" ति। वं पनेतं विञ्ञाणं नामरूपस्स बहुधा पच्चयो होति।

२२. दुक्खसमुदयसम्भवो (दी० नि० २.५२) ति दुक्खरासि-सम्भवो। यदिदं नामरूपं ति यं इदं नामरूपं, एसेव हेतु एस

पच्चयो। यथा हि राजपुरिसा राजानं निग्गण्हन्तो[1] एवं वदेय्युं—"त्वं राजा ति केन कतो, ननु मया कतो, सचे हि मयि उपराजट्ठाने, मयि सेनापतिट्ठाने अतिट्ठन्ते त्वं एककोव राजा भवेय्यासि, पस्सेय्याम ते राजभावं" ति; एवमेव नामरूपम्पि अत्थतो एवं विञ्ञाणं वदति विय "त्वं पटिसन्धिविञ्ञाणं ति केन कतं, ननु अम्हेहि कतं, सचे हि त्वं तयो खन्धे हदयवत्थुञ्च अनिस्साय पटिसन्धिविञ्ञाणं नाम भवेय्यासि, पस्सेय्याम ते पटिसन्धिविञ्ञाणभावं" ति। तञ्च पनेतं नामरूपं विञ्ञाणस्स बहुधा पच्चयो होति। 5

एत्तावता खो ति विञ्ञाणे नामरूपस्स पच्चये होन्ते, नामरूपे विञ्ञाणस्स पच्चये होन्ते, द्वीसु अञ्ञमञ्ञपच्चयवसेन पवत्तेसु एत्तकेन जायेथ वा ...पे०... उपपज्जेथ वा, जातिआदयो पञ्ञायेय्युं अपरापरं वा चुतिपटिसन्धियो ति। **अधिवचनपथो** ति "सिरिवड्ढको धनवड्ढको" ति आदिकस्स अत्थं अदिस्वा वचनमत्तमेव अधिकिच्च पवत्तस्स वोहारस्स पथो। **निरुत्तिपथो** ति सरती ति सतो, सम्पजानाती ति सम्पजानो ति आदिकस्स कारणापदेसवसेन पवत्तस्स वोहारस्स पथो। 10 B. 19 15 R. 504

पञ्ञत्तिपथो ति—"पण्डितो ब्यत्तो मेधावी निपुणो कतपरप्पवादो" ति आदिकस्स नानप्पकारतो ञापनवसेन पवत्तस्स वोहारस्स पथो। इति तीहि पदेहि अधिवचनादीनं वत्थुभूता खन्धाव कथिता। **पञ्ञावचरं** ति पञ्ञाय अवचरितब्बं जानितब्बं। **वट्टं वत्तती** ति संसारवट्टं वत्तति। **इत्थत्तं** ति इत्थंभावो, खन्धपञ्चकस्सेतं नामं। **पञ्ञापनाया** ति नामपञ्ञत्तत्थाय। "वेदना सञ्ञा" ति आदिना नामपञ्ञत्तत्थाय, खन्धपञ्चकम्पि एत्तावता पञ्ञायती ति अत्थो। **यदिदं नामरूपं सह विञ्ञाणेना** ति यं इदं नामरूपं सह विञ्ञाणेन अञ्ञमञ्ञपच्चयताय पवत्तति, एत्तावता ति वुत्तं होति। इदञ्हेत्थ निय्यातितवचनं[2]। 20 25

1. निग्गण्हन्तं—स्या०। 2. निय्यातनवचनं—सी०, रो०; निय्यातवचनं—स्या०।

८. अत्तपञ्ञत्तिवण्णना

२३. इति भगवा—"गम्भीरो चायं, आनन्द पटिच्चसमुप्पादो, गम्भीरावभासो चा" ति पदस्स अनुसन्धिं दस्सेत्वा इदानि "तन्ताकुलकजाता" ति पदस्स अनुसन्धिं दस्सेन्तो "कित्तावता चा" ति आदिकं देसनं आरभि। तत्थ **रूपिं वा हि आनन्द परित्तं अत्तानं** ति आदीसु 5 यो अवड्ढितं कसिणनिमित्तं अत्ता ति गण्हाति, सो रूपिं परित्तं पञ्ञपेति। यो पन नानाकसिणलाभी होति, सो तं कदाचि नीलो, कदाचि पीतको ति पञ्ञपेति। यो वड्ढितं कसिणनिमित्तं अत्ता ति गण्हाति, सो रूपिं अनन्तं पञ्ञपेति। यो वा पन अवड्ढितं कसिणनिमित्तं उग्घाटेत्वा निमित्तफुट्ठोकासं वा तत्थ पवत्ते चत्तारो खन्धे वा तेसु 10 विञ्ञाणमत्तमेव वा अत्ता ति गण्हाति, सो अरूपिं परित्तं पञ्ञपेति। यो वड्ढितं निमित्तं उग्घाटेत्वा निमित्तफुट्ठोकासं वा तत्थ पवत्ते चत्तारो खन्धे वा तेसु विञ्ञाणमत्तमेव वा अत्ता ति गण्हाति, सो अरूपिं अनन्तं पञ्ञपेति।

B. 95 २४. **तत्रानन्दा** ति एत्थ तत्रा ति तेसु चतूसु दिट्ठिगतिकेसु। 15 **एतरहि वा** ति इदानेव, न इतो परं। उच्छेदवसेनेतं वुत्तं। **तत्थभाविं वा** ति तत्थ वा परलोके भाविं। सस्सतवसेनेतं वुत्तं। **अतथं वा पन सन्तं** ति अतथसभावं। **तथत्ताया** ति तथभावाय। **उपकप्पेस्सामी** ति सम्पादेस्सामि। इमिना विवादं दस्सेति, उच्छेदवादी हि R. 505 "सस्सतवादिनो अत्तानं अतथं अनुच्छेदसभावम्पि समानं तथत्ताय 20 उच्छेदसभावाय[१] उपकप्पेस्सामि, सस्सतवादञ्च जानापेत्वा उच्छेदवादमेव नं गाहेस्सामी[२]" ति चिन्तेति। सस्सतवादीपि "उच्छेदवादिनो अत्तानं अतथं असस्सतसभावम्पि समानं तथत्ताय सस्सतभावाय उपकप्पेस्सामि, उच्छेदवादञ्च जानापेत्वा सस्सतवादमेव नं गाहेस्सामी" ति चिन्तेति।

एवं सन्तं खो ति एवं समानं रूपिं परित्तं अत्तानं पञ्ञपेन्तं[३] ति 25 अत्थो। **रूपिं** ति रूपकसिणलाभिं। **परित्तत्तानुदिट्ठि अनुसेती** ति

१. उच्छेदभावाय—सी०, रो०। २. गाहापेस्सामी ति—सी०, रो०।
३. पञ्ञापेन्ति—सी०, रो०; पञ्ञापयन्तन्ति स्या०।

परित्तो अत्ता ति अयं दिट्ठि अनुसेति। सा पन न वल्लि विय च लता विय च अनुसेति। अप्पहीनट्ठेन[1] अनुसेती ति वेदितब्बो[2]। इच्चालं वचनाया ति तं पुग्गलं एवरूपा दिट्ठि अनुसेती ति वत्तुं युत्तं। एस नयो सब्बत्थ।

अरूपिं ति एत्थ पन अरूपकसिणलभिं, अरूपक्खन्धगोचरं वा ति एवमत्थो दट्ठब्बो। एत्तावता लाभिनो चत्तारो, तेसं अन्तेवासिका चत्तारो, तक्किका चत्तारो, तेसं अन्तेवासिका चत्तारो ति अत्ततो[3] सोळस दिट्ठिगतिका दस्सिता होन्ति। 5

९. नअत्तपञ्ञत्तिवण्णना

२५. एवं ये अत्तानं पञ्ञपेन्ति, ते दस्सेत्वा इदानि ये न पञ्ञपेन्ति, ते दस्सेतुं—"कित्तावता च आनन्दा" ति आदिमाह। 10
के पन न पञ्ञपेन्ति ? सब्बे ताव अरियपुग्गला न पञ्ञपेन्ति। ये च बहुस्सुता तिपिटकधरा द्विपिटकधरा एकपिटकधरा, अन्तमसो एकनिकायम्पि साधुकं विनिच्छिनित्वा उग्गहितधम्मकथिकोपि आरद्ध-विपस्सकोपि पुग्गलो, ते[4] न पञ्ञपेन्ति येव। एतेसञ्हि पटिभागकसिणे पटिभागकसिणमिच्चेव ञाणं[5] होति। अरूपक्खन्धेसु च अरूपक्खन्धा 15
इच्चेव।

१०. अत्तसमनुपस्सनावण्णना

२७. एवं ये न पञ्ञपेन्ति, ते दस्सेत्वा इदानि ये ते पञ्ञपेन्ति, B 96
ते यस्मा दिट्ठिवसेन समनुपस्सित्वा पञ्ञपेन्ति, सा[6] च नेसं समनुपस्सना वीसतिवत्थुकाय सक्कायदिट्ठिया अप्पहीनत्ता होति, तस्मा तं वीसतिवत्थुकं सक्कायदिट्ठिं दस्सेतुं पुन कित्तावता च आनन्दा 20
(दी० नि० २.५३) ति आदिमाह।

१. अप्पहीनट्ठे सी०। २. वेदितब्बं—सी०, रो०।
३. अत्थतो—सी०, स्या०, रो०। ४. सी० पोत्थके नत्थि।
५. सञ्ञा—स्या०। ६. मा हि—सी०, रो०।

तत्थ **वेदनं वा ही** ति इमिना वेदनाक्खन्धवत्थुका सक्कायदिट्ठि कथिता[१]। **अप्पटिसंवेदनो मे अत्ता** ति इमिना रूपक्खन्धवत्थुका। **अत्ता मे वेदियति, वेदनाधम्मो हि मे अत्ता** ति इमिना सञ्ञासङ्खार-
R. 506 विञ्ञाणक्खन्धवत्थुका। इदञ्हि खन्धत्तयं वेदनासम्पयुत्तत्ता वेदियति।
5 एतस्स च वेदनाधम्मो अविप्पयुत्तसभावो।

२८. इदानि तत्थ दोसं दस्सेन्तो—"तत्रानन्दा" ति आदिमाह। तत्थ **तत्रा** ति तेसु तीसु दिट्ठिगतिकेसु। **यस्मिं आनन्द समये** ति आदि यो यो यं यं वेदनं अत्ता ति समनुपस्सति, तस्स तस्स अत्तनो कदाचि भावं कदाचि अभावं ति एवमादिदोसदस्सनत्थं वुत्तं।

10 २९. अनिच्चादीसु हुत्वा अभावतो **अनिच्चा**। तेहि तेहि कारणेहि सङ्गम्म समागम्म कता ति **सङ्खता**। तं तं पच्चयं पटिच्च सम्मा कारणनेव उप्पन्ना ति **पटिच्चसमुप्पन्ना**। **खयो** ति आदि सब्बं भङ्गस्स वेवचनं। यञ्हि भिज्जति, तं खियति पि वयति पि विरज्झति पि निरुज्झति पि, तस्मा **खयधम्मा** ति आदि वुत्तं।

15 **ब्यगा मे** ति विअगाति ब्यगा, विगतो निरुद्धो मे अत्ता ति अत्थो। किं पन एकस्सेव तीसु पि कालेसु—"एसो मे अत्ता" ति होती ति, किं पन न भविस्सति? दिट्ठिगतिकस्स हि थुसरासिम्हि निक्खित्तखाणुकस्सेव निच्चलता नाम नत्थि, वनमक्कटो विय अञ्ञं गण्हाति, अञ्ञं मुञ्चति। **अनिच्चसुखदुक्खवोकिण्णं** (दी॰ नि॰ २.५४)
20 ति विसेसेन तं तं वेदनं अत्ता ति समनुपस्सन्तो अनिच्चञ्चेव सुखञ्च दुक्खञ्च अत्तानं समनुपस्सति अविसेसेन वेदनं अत्ता ति
B. 97 समनुपस्सन्तो वोकिण्णं उप्पादवयधम्मं अत्तानं समनुपस्सति। वेदना हि तिविधा चेव उप्पादवयधम्मा च, तञ्चेस अत्ता ति समनुपस्सति। इच्चस्स अनिच्चो चेव अत्ता आपज्जति, एकक्खणे
25 च बहूनं वेदनानं उप्पादो। तं खो पनेस अनिच्चं अत्तानं अनुजानाति[२], न एकक्खणे बहूनं वेदनानं उप्पत्ति अत्थि। इममत्थं सन्धाय—

१. वुत्ता—सी॰, रो॰। २. अनुजानामी ति—सी॰।

"तस्मातिहानन्द, एतेनपेतं नक्खमति 'वेदना मे अत्ता' ति समनुपस्सितु'' ति वुत्तं ।

३०. **यत्थ पनावुसो** ति यत्थ सुद्धरूपक्खन्धे सब्बसो वेदयितं नत्थि । **अपि नु खो तत्था** ति अपि नु खो तस्मिं वेदनाविरहिते तालवण्टे वा वातपाने वा अस्मी ति एवं अहंकारो उप्पज्जेय्या ति 5 अत्थो । **तस्मातिहानन्दा** ति यस्मा सुद्धरूपक्खन्धो उट्ठाय अहमस्मी ति न वदति, तस्मा एतेनपि एतं नक्खमती ति अत्थो । **अपि नु खो तत्थ अयमहमस्मी ति सिया** ति अपि नु खो तेसु वेदनाधम्मेसु तीसु R. 507 खन्धेसु एकधम्मोपि अयं नाम अहमस्मी ति एवं वत्तब्बो सिया । अथ वा वेदनानिरोधा सहेव वेदनाय निरुद्धेसु तेसु तीसु खन्धेसु अपि नु 10 खो अयमहमस्मी ति वा अहमस्मी ति वा उप्पज्जेय्या ति अत्थो । अथायस्मा आनन्दो ससविसाणस्स तिखिणभावं विय तं असम्पटिच्छन्तो **नो हेतं भन्ते** ति आह ।

एत्तावता किं कथितं होति ? वट्टकथा कथिता होति । भगवा हि वट्टकथं कथेन्तो कत्थचि अविज्जासीसेन कथेसि, कत्थचि तण्हासीसेन, 15 कत्थचि दिट्ठिसीसेन । तत्थ "पुरिमा, भिक्खवे, कोटि नप्पञ्ञायति अविज्जाय, इतो पुब्बे अविज्जा नाहोसि, अथ पच्छा समभवी[1] (अ० नि० ४.१८९) ति, एवञ्चिदं, भिक्खवे, वुच्चति । अथ च पन पञ्ञायति इदप्पच्चया अविज्जा'' ति एवं अविज्जासीसेन कथिता । "पुरिमा, भिक्खवे, कोटि नप्पञ्ञायति भवतण्हाय, इतो पुब्बे भवतण्हा 20 नाहोसि, अथ पच्छा समभवी (अं० नि० ४.१९२) ति, एवञ्चिदं, भिक्खवे, वुच्चति । अथ च पन पञ्ञायति इदप्पच्चया भवतण्हा'' ति एवं तण्हासीसेन कथिता । "पुरिमा, भिक्खवे, कोटि नप्पञ्ञायति भवदिट्ठिया, इतो पुब्बे भवदिट्ठि नाहोसि, अथ पच्छा समभवी ति, एवञ्चिदं, भिक्खवे, वुच्चति । अथ च पन पञ्ञायति इदप्पच्चया 25 भवदिट्ठी'' ति दिट्ठिसीसेन[2] कथिता । इधापि दिट्ठिसीसेनेव कथिता ।

१. संभवि–सी०, रो० । २. एवं ०—सी०, स्या०, रो० ।

B. 98 दिट्ठिगतिको हि सुखादिवेदनं अत्ता ति गहेत्वा अहंकार-ममंकार-परामासवसेन सब्बभवयोनिगतिविञ्ञाणट्ठितिसत्तावासेसु ततो ततो चवित्वा तत्थ तत्थ उप्पज्जन्ता महासमुद्दे वातुक्खित्तनावा विय सततं समितं परिब्भमति, वट्टतो सीसं उक्खिपितुं येव न सक्कोति ।

5 ३२. इति भगवापच्चयाकारमूळ्हस्स दिट्ठिगतिकस्स एत्तकेन कथामग्गेन वट्टं कथेत्वा इदानि विवट्टं कथेन्तो **यतो खो पन आनन्द भिक्खू** ति आदिमाह ।

तञ्च पन विवट्टकथं भगवा देसनासुकुसलत्ता विस्सट्ठकम्मट्ठानं नवकम्मादिवसेन विक्खित्तपुग्गलं अनामसित्वा कारकस्स सतिपट्ठान 10 विहारिनो पुग्गलस्स वसेन आरभन्तो **नेव वेदनं अत्तानं समनुपस्सी** ति आदिमाह । एवरूपो हि भिक्खु—"यं किञ्चि रूपं अतीतानागतपच्चु- R. 508 प्पन्नं अज्झत्तं वा बहिद्धा वा ओळारिकं वा सुखुमं वा हीनं वा पणीतं वा यं दूरे वा सन्तिके वा, सब्बं रूपं अनिच्चतो ववत्थपेति, एकं सम्मसनं दुक्खतो ववत्थपेति, एकं सम्मसनं अनत्ततो ववत्थपेति, एकं 15 सम्मसनं" ति आदिना नयेन वुत्तस्स सम्मसनञाणस्स वसेन सब्बधम्मेसु पवत्तत्ता नेव वेदनं अत्ता ति समनुपस्सति, न अञ्ञं[१] । सो एवं असमनुपस्सन्तो न किञ्चि लोके उपादियती ति खन्धलोकादिभेदे लोके रूपादीसु धम्मेसु किञ्चि एक धम्मम्पि अत्ता ति वा अत्तनियं ति वा न उपादियति ।

20 **अनुपादियं न परितस्सती** ति अनुपादियन्तो तण्हादिट्ठिमानपरितस्सनाया पि न परितस्सति । **अपरितस्सं** ति अपरितस्समानो । **पच्चत्तञ्ञेव परिनिब्बायती** ति अत्तनाव किलेसपरिनिब्बानेन परिनिब्बायति । एवं परिनिब्बुतस्स पनस्स पच्चवेक्खणापवत्तिदस्सनत्थं **खीणा जाती** ति आदि वुत्तं ।

१. अञ्ञं धम्मं—सी०, रो०;
अञ्ञो धम्मे—स्या० ।

इति सा दिट्ठी ति या तथाविमुत्तस्स अरहत्तो दिट्ठि, सा एवं दिट्ठि। "इतिस्स दिट्ठी" ति पि पाठो। यो तथाविमुत्तो अरहा, एवमस्स दिट्ठी ति अत्थो। **तदकल्लं** ति तं न युत्तं। कस्मा? एवं हि सति —"अरहा न किञ्चि जानाती" ति वुत्तं भवेय्य, एवं जत्वा विमुत्तञ्च अरहन्तं "न किञ्चि जानाती" ति वत्तुं न युत्तं। तेनेव चतुन्नम्पि नयानं 5 B. 99 अवसाने—"तं किस्स हेतु" ति आदिमाह।

तत्थ **यावता आनन्द अधिवचनं** ति यत्तको अधिवचनसङ्खातो वोहारो अत्थि। **यावता अधिवचनपथो** ति यत्तको अधिवचनस्सपथो, खन्धा आयतनानि धातुयो वा अत्थि, एस नयो सब्बत्थ। **पञ्ञावचरं** ति पञ्ञाय अवचरितब्बं खन्धपञ्चकं। **तदभिञ्ञा** ति तं 10 अभिजानित्वा। एत्तकेन भगवता किं दस्सितं? तन्ताकुलपदस्सेव अनुसन्धि दस्सितो[1]।

११. सत्तविञ्ञाणट्ठितिवण्णना

३३. इदानि यो[2]—"न पञ्ञपेती" ति वुत्तो, सो यस्मा गच्छन्तो गच्छन्तो उभतोभागविमुत्तो नाम होति। यो च—"न समनुपस्सती" ति वुत्तो, सो यस्मा गच्छन्तो गच्छन्तो पञ्ञाविमुत्तो नाम होति। 15 तस्मा तेसं हेट्ठा वुत्तानं द्विन्नं भिक्खूनं निगमनञ्च नामञ्च दस्सेतुं **सत्त खो इमानन्द विञ्ञाणट्ठितियो** (दी॰ नि॰ २.५५) ति आदिमाह।

तत्थ **सत्ता** ति पटिसन्धिवसेन वुत्ता। आरम्मणवसेन सङ्गीतिसुत्ते वुत्ता[3] चतस्सो आगमिस्सन्ति। **विञ्ञाणं** तिट्ठति एत्था ति 20 **विञ्ञाणट्ठिति**, विञ्ञाणपतिट्ठानस्सेतं अधिवचनं। **द्वे च आयतनानी** ति द्वे निवासट्ठानानि। निवासट्ठानञ्हि इधायतनं ति अधिप्पेतं। R. 509 तेनेव वक्खति—"असञ्ञसत्तायतनं नेवसञ्ञानासञ्ञायतनमेव दुतियं" ति। यस्मा पनेतं सब्बं गहितं ति वट्टपरियादानत्थं। वट्टं हि न

१. दस्सिता—स्या॰। २. यो सो—सी॰, रो॰।
३. सी॰, रो॰ पोत्थकेसु नत्थि।

सुद्धविञ्ञाणट्ठितिवसेन सुद्धायतनवसेन वा परियादानं गच्छति, भवयोनिगतिसत्तावासवसेन पन गच्छति, तस्मा सब्बमेतं गहितं ।

इदानि अनुक्कमेन तमत्थं विभजन्तो **कतमा सत्ता** ति आदिमाह । तत्थ **सेय्यथापी** ति निदस्सनत्थे निपातो, यथा मनुस्सा ति अत्थो ।
5 अपरिमाणेसु हि चक्कवाळेसु अपरिमाणानं मनुस्सानं वण्णसण्ठानादिवसेन द्वेपि एकसदिसा नत्थि । ये पि हि कत्थचि यमकभातरो वण्णेन वा सण्ठानेन वा एकसदिसा होन्ति, तेसम्पि आलोकितविलोकितकथितह-
B. 100 सितगमनठानादीहि विसेसो होति येव । तस्मा **नानत्तकाया** ति वुत्ता । पटिसन्धिसञ्ञा पन नेसं तिहेतुकापि द्विहेतुकापि अहेतुकापि होन्ति[1],
10 तस्मा **नानत्तसञ्ञिनो** ति वुत्ता । **एकच्चे च देवा** ति छ कामावचरदेवा । तेसु हि केसञ्चि कायो नीलो होति, केसञ्चि पीतकादिवण्णो । सञ्ञा पन नेसं द्विहेतुकापि तिहेतुकापि होन्ति, अहेतुका नत्थि । **एकच्चे च विनिपातिका** ति चतुअपायविनिमुत्ता उत्तरमाता यक्खिनी, पियङ्करमाता, फुस्समित्ता[2] धम्मगुत्ता ति एवमादिका अञ्ञे च
15 वेमानिका पेता । एतेसञ्हि पीतओदातकाळमङ्गुरच्छविसामवण्णा-दिवसेन चेव किसथूलरस्सदीघवसेन च कायो नाना होति, मनुस्सानं विय द्विहेतुकतिहेतुकअहेतुकवसेन सञ्ञापि । ते पन देवा विय न महेसक्खा, कपणमनुस्सा विय अप्पेसक्खा, दुल्लभघासच्छादना दुक्खपीळिता विहरन्ति । एकच्चे काळपक्खे दुक्खिता जुण्हपक्खे
20 सुखिता होन्ति, तस्मा सुखसमुस्सयतो विनिपतितत्ता **विनिपातिका** ति वुत्ता । ये पनेत्थ तिहेतुका तेसं धम्माभिसमयोपि होति । पियङ्करमाता हि यक्खिनी पच्चूससमये अनुरुद्धत्थेरस्स धम्मं सज्झायतो सुत्वा—

R. 510 "मा सद्दमकरि पियङ्कर, भिक्खु धम्मपदानि भासति ।
25 अपि[3] धम्मपदं विजानिय, पटिपज्जेम हिताय नो सिया ।

१. होति—सी०, रो० । २. पुण्णवसुमित्ता—सी०, रो० ।
३. अपि च—सी०, रो० ।

पाणेसु च संयमामसे, सम्पजानमुसा न भणामसे।
सिक्खेम सुसीलयमत्तनो, अपि मुच्चेम पिसाचयोनिया''
(सं० नि० १.२११) ति—

P. 511

एवं पुत्तकं सञ्ञापेत्वा तं दिवसं सोतापत्तिफलं पत्ता। उत्तरमाता पन भगवतो धम्मं सुत्वाव सोतापन्ना जाता। 5

ब्रह्मकायिका ति ब्रह्मपारिसज्जब्रह्मपुरोहितमहाब्रह्मानो। पठमाभिनिब्बत्ता ति ते सब्बेपि पठमेन झानेन अभिनिब्बत्ता। तेसु ब्रह्मपारिसज्जा पन परित्तेन अभिनिब्बत्ता, तेसं कप्पस्स ततियो भागो आयुप्पमाणं। ब्रह्मपुरोहिता मज्झिमेन, तेसं उपड्ढकप्पो आयुप्पमाणं, कायो च तेसं विप्फारिकतरो होति। महाब्रह्मानो पणीतेन, तेसं 10 कप्पो आयुप्पमाणं, कायो पन तेसं अतिविप्फारिको होति। इति ते कायस्स नानत्ता, पठमज्झानवसेन सञ्ञाय एकत्ता नानत्तकाया एकत्तसञ्ञिनो ति वेदितब्बा।

यथा च ते, एवं चतूसु अपायेसु सत्ता। निरयेसु हि केसञ्चि B. 101 गावुतं, केसञ्चि अड्ढयोजनं, केसञ्चि योजनं अत्तभावो होति, देवदत्तस्स 15 पन योजनसतिको जातो। तिरच्छानेसुपि केचि खुद्दका, केचि महन्ता। पेत्तिविसयेपि[1] केचि सट्ठिहत्था, केचि सत्ततिहत्था, केचि असीतिहत्था होन्ति, केचि सुवण्णा, केचि दुब्बण्णा होन्ति, तथा कालकञ्चिका[2] असुरा। अपिचेत्थ दीघपिट्ठिकपेता नाम सट्ठियोजनिकापि होन्ति। सञ्ञा पन सब्बेसम्पि अकुसलविपाकअहेतुकाव होन्ति[3]। इति आपायि- 20 कापि नानत्तकाया एकत्तसञ्ञिनोत्वेव सङ्ख्यं गच्छन्ति।

आभस्सरा ति दण्डउक्काय अच्चि विय एतेसं सरीरतो आभा छिज्जित्वा छिज्जित्वा पतन्ती विय सरति विस्सरती ति आभस्सरा। तेसु पञ्चकनयेन दुतियततियज्झानद्वयं परित्तं भावेत्वा उपपन्ना परित्ताभा नाम होन्ति, तेसं द्वे कप्पा आयुप्पमाणं। मज्झिमं भावेत्वा उपपन्ना 25

१. पेत्तिविसयेसू पि—सी०, रो०। २. कालकञ्जा—सी०, रो०।
३. होति—सी०, रो०।

अप्पमाणाभा नाम होन्ति, तेसं चत्तारो कप्पा आयुप्पमाणं। पणीतं
R. 511 भावेत्वा उपपन्ना आभस्सरा नाम होन्ति, तेसं अट्ठ कप्पा आयुप्पमाणं।
इध पन उक्कट्ठपरिच्छेदवसेन सब्बेपि ते गहिता। सब्बेसञ्हि तेसं कायो
एकविप्फारोव होति, सञ्ञा पन अवितक्कविचारमत्ता वा अवितक्क-
5 अविचारा वा ति नाना।

सुभकिण्हा ति सुभेन ओकिण्णा विकिण्णा, सुभेन सरीरप्पभावण्णेन
एकग्घना ति अत्थो। एतेसञ्हि आभस्सरानं विय न छिज्जित्वा
छिज्जित्वा पभा गच्छति। पञ्चकनये पन परित्तमज्झिमपणीतस्स
चतुत्थज्झानस्स वसेन सोळसद्वत्तिंसचतुसट्ठिकप्पायुका 'परित्तसुभअप्प-
10 माणसुभसुभकिण्हा नाम हुत्वा निब्बत्तन्ति। इति सब्बेपि ते एकत्तकाया
चेव चतुत्थज्झानसञ्ञाय एकत्तसञ्ञिनो चा ति वेदितब्बा।
वेहप्फलापि चतुत्थविञ्ञाणट्ठितिमेव भजन्ति। असञ्ञसत्ता
विञ्ञाणाभावा एत्थ सङ्गहं न गच्छन्ति, सत्तावासेसु गच्छन्ति।

सुद्धावासा[1] विवट्टपक्खे ठिता न सब्बकालिका, कप्पसतसहस्सम्पि
15 असङ्ख्येय्यम्पि बुद्धसुञ्ञे लोके नुप्पज्जन्ति। सोळसकप्पसहस्सब्भन्तरे
बुद्धेसु उप्पन्नेसुयेव[2] उप्पज्जन्ति। धम्मचक्कप्पवत्तस्स भगवतो खन्ध-
वारट्ठानसदिसा होन्ति। तस्मा नेव विञ्ञाणट्ठितिं न सत्तावासं भजन्ति।
B. 102 महासीवत्थेरो पन—"न खो पन सो सारिपुत्त सत्तावासो सुलभरूपो यो
मया अनिवुत्थपुब्बो[3] इमिना दीघेन अद्धुना अञ्ञत्र सुद्धावासेहि देवेहि"
20 ति इमिना सुत्तेन सुद्धावासापि चतुत्थविञ्ञाणट्ठितिं चतुत्थसत्तावासंयेव
भजन्ती ति वदति। तं अप्पटिबाहियत्ता सुत्तस्स अनुञ्ञातं।

सब्बसो रूपसञ्ञानं ति आदीनं अत्थो विसुद्धिमग्गे वुत्तो।
नेवसञ्ञानासञ्ञायतनं पन यथेव सञ्ञाय, एवं विञ्ञाणस्सपि सुखुमत्ता
नेव विञ्ञाणं नाविञ्ञाणं। तस्मा विञ्ञाणट्ठितीसु अवत्वा आयतनेसु
25 वुत्तं।

१. सुद्धावासा पि—सी०, रो०। २. उप्पज्जन्तेसु येव—सी०, रो०।
३. अनवुत्थपुब्बो—सी०, रो०।

३४. तत्रा ति तासु विञ्ञाणट्ठितीसु। तञ्च पजानाती ति तञ्च विञ्ञाणट्ठितिं पजानाति। तस्सा च समुदयं ति "अविज्जासमुदया रूपसमुदयो" ति आदिना नयेन तस्सा समुदयञ्च पजानाति। तस्सा च अत्थङ्गमं ति—"अविज्जानिरोधा रूपनिरोधो" ति आदिना नयेन तस्सा अत्थङ्गमञ्च पजानाति। अस्सादं ति यं रूपं पटिच्च...पे०... यं विञ्ञाणं पटिच्च उप्पज्जति सुखं सोमनस्सं, अयं विञ्ञाणस्स अस्सादो ति, एवं तस्सा अस्सादञ्च पजानाति। आदीनवं ति यं रूपं ...पे०...यं विञ्ञाणं अनिच्चं दुक्खं विपरिणामधम्मं, अयं विञ्ञाणस्स आदीनवो ति, एवं तस्सा आदीनवञ्च पजानाति। निस्सरणं ति यो रूपस्मिं ...पे०...यो विञ्ञाणे छन्दरागविनयो, छन्दरागप्पहानं, इदं विञ्ञाणस्स[1] निस्सरणं ति एवं तस्सा निस्सरणञ्च पजानाति। कल्लं नु तेना ति युत्तं नु तेन भिक्खुना तं विञ्ञाणट्ठितिं तण्हामानदिट्ठीनं वसेन अहं ति वा ममं ति वा अभिनन्दितुं ति एतेनुपायेन सब्बत्थ[2] वेदितब्बो। यत्थ पन रूपं नत्थि, तत्थ चतुन्नं खन्धानं वसेन, यत्थ विञ्ञाणं नत्थि, तत्थ एकस्स खन्धस्स वसेन समुदयो योजेतब्बो[3]। आहारससुदया आहारनिरोधा ति इदञ्चेत्थ पदं योजेतब्बं[4]।

R. 512 — 5 — 10 — 15

यतो खो आनन्द भिक्खू ति यदा खो आनन्द, भिक्खु। अनुपादा विमुत्तो ति चतूहि उपादानेहि अग्गहेत्वा विमुत्तो। पञ्ञाविमुत्तो ति पञ्ञाय विमुत्तो। अट्ठ विमोक्खे असच्छिकत्वा पञ्ञाबलेनेव नामकायस्स च रूपकायस्स च अप्पवत्तिं कत्वा विमुत्तो ति अत्थो। सो सुक्खविपस्सको च पठमज्झानादीसु अञ्ञतरस्मिं ठत्वा अरहत्तं पत्तो चा ति पञ्चविधो[5]। वुत्तम्पि चेतं—"कतमो च पुग्गलो पञ्ञाविमुत्तो? इधेकच्चो पुग्गलो न हेव खो अट्ठ विमोक्खे कायेन फुसित्वा विहरति, पञ्ञाय चस्स दिस्वा आसवा परिक्खीणा होन्ति, अयं वुच्चति पुग्गलो पञ्ञाविमुत्तो" (पु० प० २३) ति।

20 — B 103 — 25

१. विञ्ञाणस्मा—सी०। २. ० अत्थो—सी०, रो०।
३. वेदितब्बा—सी०, रो०। ४. न योजेतब्बं—सी०, रो०।
५. ० होति—सी०, रो०।

१२. अट्ठविमोक्खवण्णना

३५. एवं एकस्स भिक्खुनो निगमनञ्च नामञ्च दस्सेत्वा इतरस्स दस्सेतुं **अट्ठ खो इमे** (दी० नि० २.५६) ति आदिमाह। तत्थ **विमोक्खो** ति केनट्ठेन विमोक्खो ? अधिमुच्चनट्ठेन। को पनायं अधि-मुच्चनट्ठो नाम ? पच्चनीकधम्मेहि च सुट्ठु मुच्चनट्ठो, आरम्मणे च 5 अभिरतिवसेन सुट्ठु मुच्चनट्ठो, पितुअङ्के विस्सट्ठङ्गपच्चङ्गस्स दारकस्स सयनं विय अनिग्गहितभावेन निरासङ्कता आरम्मणे पवत्ती ति वुत्तं होति। अयं पनत्थो पच्छिमे विमोक्खे नत्थि, पुरिमेसु सब्बेसु अत्थि।

R. 513 **रूपी रूपानि पस्सती** ति एत्थ अज्झत्तं केसादीसु नीलकसिणादीसु 10 नीलकसिणादिवसेन उप्पादितं रूपज्झानं रूपं, तदस्सत्थी ति रूपी। **बहिद्धा रूपानि पस्सती** ति बहिद्धापि नीलकसिणादीनि रूपानि झानचक्खुना पस्सति। इमिना अज्झत्तबहिद्धावत्थुकेसु कसिणेसु उत्पादितज्झानस्स पुग्गलस्स चत्तारि रूपावचरज्झानानि दस्सितानि। **अज्झत्तं अरूपसञ्ञी** ति अज्झत्तं न रूपसञ्ञी, अत्तनो केसादीसु 15 अनुप्पादितरूपावचरज्झानो ति अत्थो। इमिना बहिद्धा परिकम्मं कत्वा बहिद्धाव उप्पादितज्झानस्स पुग्गलस्स रूपावचरज्झानानि दस्सितानि।

सुभन्त्वेव अधिमुत्तो होती ति इमिना सुविसुद्धेसु नीलादीसु वण्णकसिणेसु झानानि दस्सितानि। तत्थ किञ्चापि अन्तोअप्पनायं सुभं 20 ति आभोगो नत्थि, यो पन विसुद्धं सुभं कसिणमारम्मणं करित्वा विहरति, सो यस्मा सुभं ति अधिमुत्तो होती ति वत्तब्बतं आपज्जति। तस्मा एवं देसना कता। पटिसम्भिदामग्गे पन—"कथं सुभन्त्वेव अधिमुत्तो होती ति विमोक्खो ? इध भिक्खु मेत्तासहगतेन चेतसा एकं दिसं फरित्वा विहरति...पे०...मेत्ताय भावितत्ता सत्ता अप्पटिकूला होन्ति। 25 करुणा, मुदिता, उपेक्खासहगतेन चेतसा एकं दिसं फरित्वा विहरति B. 104 ...पे०... उपेक्खाय भावितत्ता सत्ता अप्पटिकूला होन्ति। एवं सुभं त्वेव अधिमुत्तो होती ति विमोक्खो" (पटि० म० २ ७८) ति वुत्तं।

सब्बसो रूपसञ्ञानं ति आदीसु यं वत्तब्बं, तं सब्बं विसुद्धिमग्गे वुत्तमेव। **अयं अट्ठमो विमोक्खो** ति अयं चतुन्नं खन्धानं सब्बसो विसुद्धत्ता विमुत्तत्ता अट्ठमो उत्तमो विमोक्खो नाम।

३६. **अनुलोमं** ति आदितो पट्ठाय याव परियोसाना। **पटिलोमं** ति परियोसानतो पट्ठाय याव आदितो। **अनुलोमपटिलोमं** ति इदं 5 अतिपगुणत्ता समापत्तीनं अट्ठत्वाव इतो चितो च सञ्चरणवसेन वुत्तं। **यत्थिच्छकं** ति ओकासपरिदीपनं, यत्थ यत्थ ओकासे इच्छति। **यदिच्छकं** ति समापत्तिदीपनं, यं यं समापत्तिं इच्छति। **यावतिच्छकं** ति अद्धानपरिच्छेददीपनं, यावतकं अद्धानं इच्छति। **समापज्जती** ति R. 514 तं तं समापत्तिं पविसति। **वुट्ठाती** ति ततो वुट्ठाय तिट्ठति। 10

उभतोभागविमुत्तो (दी० नि० २.५७) ति द्वीहि भागेहि विमुत्तो—अरूपसमापत्तिया रूपकायतो विमुत्तो, मग्गेन नामकायतो विमुत्तो ति। वुत्तम्पि चेतं—

"अच्ची यथा वातवेगेन खित्ता,
अत्थं पलेति न उपेति सङ्खं[1]। 15
एवं मुनी नामकाया विमुत्तो,
अत्थं पलेति न उपेति[2] सङ्खं" ति॥
(सु० नि० ४३०)

सो पनेस उभतोभागविमुत्तो आकासानञ्चायतनादीसु अञ्ञतरतो वुट्ठाय अरहत्तं पत्तो च अनागामी हुत्वा निरोधा वुट्ठाय अरहत्तं पत्तो चा 20 ति पञ्चविधो[3]। केचि पन—"यस्मा रूपावचरचतुत्थज्झानम्पि दुवङ्गिकं उपेक्खासहगतं, अरूपावचरज्झानम्पि तादिसमेव। तस्मा रूपावचरचतुत्थज्झानतो वुट्ठाय अरहत्तं पत्तोपि उभतोभागविमुत्तो" ति।

१. सङ्ख्यं—सी०, स्या०। २. फलेति०—सी०; पलेति—रो०।
३. ० होति—सी०, रो०।

अयं पन उभतोभागविमुत्तपञ्हो हेट्ठा लोहपासादे समुट्ठहित्वा तिपिटकचूळसुमनत्थेरस्स वण्णनं निस्साय चिरेन विनिच्छयं पत्तो। B. 105 गिरिविहारे किर थेरस्स अन्तेवासिको एकस्स पिण्डपातिकस्स मुखतो तं पञ्हं सुत्वा आह—"आवुसो, हेट्ठालोहपासादे अम्हाकं आचरियस्स धम्मं 5 वण्णयतो न केनचि सुतपुब्बं" ति। किं पन, भन्ते, थेरो अवचा ति? रूपावचरचतुत्थज्झानं किञ्चापि दुवङ्गिकं उपेक्खासहगतं, किलेसे[1] विक्खम्भेति, किलेसानं पन आसन्नपक्खे विरुहनट्ठाने समुदाचरति। इमे हि किलेसा नाम पञ्चवोकारभवे नीलादीसु अञ्ञतरं आरम्मणं उपनिस्साय समुदाचरन्ति, रूपावचरज्झानञ्च तं आरम्मणं न 10 समतिक्कमति। तस्मा सब्बसो रूपं निवत्तेत्वा अरूपज्झानवसेन किलेसे विक्खम्भेत्वा अरहत्तं पत्तोव उभतोभागविमुत्तो ति[2], इदं आवुसो थेरो अवच। इदञ्च पन वत्वा इदं सुत्तं आहरि—"कतमो च पुग्गलो R. 515 उभतोभागविमुत्तो। इधेकच्चो पुग्गलो अट्ठविमोक्खे कायेन फुसित्वा विहरति, पञ्ञाय चस्स दिस्सा आसवा परिक्खीणा होन्ति, अयं वुच्चति 15 पुग्गलो उभतोभागविमुत्तो (पु० प० २३) ति।

इमाय च आनन्द उभतोभागविमुत्तिया ति आनन्द इतो उभतोभागविमुत्तितो। सेसं सब्बत्थ उत्तानमेवा ति।

इति सुमङ्गलविलासिनिया दीघनिकाय-अट्ठकथायं
महानिदानसुत्तवण्णना निट्ठिता।

—०—

१. ० च—सी०, रो०। २. सी०, रो० पोत्थकेसु नत्थि।

(३) महापरिनिब्बानसुत्तवण्णना

१. निदानवण्णना

B. 106
R. 516

१. एवं मे सुतं ति महापरिनिब्बानसुत्तं। तत्रायमनुपुब्बपद-वण्णना। गिज्झकूटे (दी० नि० २.५८) ति गिज्झा[1] तस्स कूटेसु वसिंसु, गिज्झसदिसं वा तस्स कूटं अत्थी ति गिज्झकूटो, तस्मिं गिज्झकूटे। अभियातुकामो ति अभिभवनत्थाय यातुकामो। वज्जी ति वज्जिराजानो। एवंमहिद्धिके ति एवं महतिया राजिद्धिया 5 समन्नागते। एतेन नेसं समग्गभावं कथेसि। एवंमहानुभावे ति एवं महन्तेन आनुभावेन समन्नागते। एतेन नेसं हत्थिसिप्पादीसु कतसिक्खतं कथेसि। यं सन्धाय वुत्तं—"सिक्खिता वतिमे लिच्छवि-कुमारका, सुसिक्खिता वतिमे लिच्छविकुमारका, यत्र हि नाम सुखुमेन ताळच्छिग्गलेन असनं अतिपातयिस्सन्ति पोङ्खानुपोङ्खं अविराधितं" 10 (सं० नि० ४.३८७) ति।

उच्छेच्छामी ति उच्छिन्दिस्सामि[2]। विनासेस्सामी ति नासेस्सामि, अदस्सनं पापेस्सामि[3]। अनयब्यसनं ति एत्थ न अयो ति अनयो, अवड्ढिया एतं नामं। हितञ्च सुखञ्च वियस्सति विक्खिपती ति ब्यसनं, ञातिपारिजुञ्ञादीनं एतं नामं। आपादेस्सामी 15 ति पापयिस्सामि।

इति किर सो ठाननिसज्जादीसु इमं युद्धकथमेव कथेति, गमनसज्जा होथा ति एवं बलकायं आणापेति। कस्मा? गङ्गायं किर एकं पट्टनगामं निस्साय अड्ढयोजनं अजातसत्तुनो आणा, अड्ढयोजनं

१. गिज्झा वा—सी०, रो०।   २. उपच्छिन्दिस्सामि—सी०, रो०।
३. नयिस्सामि—सी०, रो०; पापयिस्सामि—स्या०।

लिच्छवीनं। एत्थ पन आणापवत्तिट्ठानं होती ति अत्थो। तत्रापि च पब्बतपादतो महग्घभण्डं ओतरति। तं सुत्वा—"अज्ज यामि, स्वे यामी" ति अजातसत्तुनो संविदहन्तस्सेव लिच्छविराजानो समग्गा सम्मोदमाना पुरेतरं गन्त्वा सब्बं[1] गण्हन्ति। अजातसत्तु पच्छा
R. 517 5 आगन्त्वा तं पवत्तिं ञत्वा कुज्झित्वा गच्छति। ते पुनसंवच्छरेपि तथेव करोन्ति। अथ सो बलवाघातजातो तदा एवमकासि।

ततो चिन्तेसि—"गणेन सद्धिं युद्धं नाम भारियं, एकोपि मोघप्पहारो नाम नत्थि, एकेन खो पन पण्डितेन सद्धिं मन्तेत्वा करोन्तो निप्पराधो होति, पण्डितो च सत्थारा सदिसो नत्थि[2], सत्था च
B. 107 10 अविदूरे धुरविहारे वसति, हन्दाहं पेसेत्वा पुच्छामि। सचे मे गतेन कोचि अत्थो भविस्सति, सत्था तुण्ही भविस्सति, अनत्थे पन सति किं रञ्ञो तत्थ गमनेना ति वक्खती" ति। सो वस्सकारब्राह्मणं पेसेसि। ब्राह्मणो गन्त्वा भगवतो एतमत्थं[3] आरोचेसि। तेन वुत्तं—"अथ खो राजा ...पे०... आपादेस्सामी" ति।

२. राजअपरिहानियधम्मवण्णना

15 ४. **भगवन्तं बीजयमानो** (दी० नि० २.५९) ति थेरो वत्तसीसे ठत्वा भगवन्तं बीजति। भगवतो पन सीतं वा उण्हं वा नत्थि। भगवा ब्राह्मणस्स वचनं सुत्वा तेन सद्धिं अमन्तेत्वा थेरेन सद्धिं मन्तेतुकामो **किन्ति ते आनन्द सुतं** ति आदिमाह। **अभिण्हं सन्निपाता** ति दिवसस्स तिक्खत्तुं सन्निपतन्तापि अन्तरन्तरा
20 सन्निपतन्तापि अभिण्ह सन्निपाता व[4]। **सन्निपातबहुला** ति हिय्योपि सन्निपतिम्हा, पुरिमदिवसम्पि सन्निपतिम्हा, पुन अज्ज किमत्थं सन्निपतिता होमा ति वोसानं अनापज्जन्ता सन्निपातबहुला नाम होन्ति।

यावकीवञ्चा ति यत्तकं कालं। **वुद्धियेव, आनन्द, वज्जीनं**
25 **पाटिकङ्खा, नो परिहानी** ति अभिण्हं असन्निपतन्ता हि दिसाविदिसासु

१. महग्घभण्डं—स्या०। २. नाम ०—सी०, रो०।
३. तमत्थं—सी०, रो०। ४. नाम—सी०, रो०।

आगतं सासनं न सुणन्ति । ततो—"असुकगामसीमा वा निगमसीमा वा आकुला, असुकट्ठाने चोरा वा परियुट्ठिता" ति न जानन्ति । चोरापि "पमत्ता राजानो" ति ञत्वा गामनिगमादीनि पहरन्ता जनपदं नासेन्ति । एवं राजूनं परिहानि होति । अभिण्हं सन्निपतन्ता पन तं तं पवत्तिं[1] सुणन्ति । ततो बलं पेसेत्वा अमित्तमद्दनं करोन्ति । 5 चोरापि—"अप्पमत्ता राजानो, न सक्का अम्हेहि वग्गबन्धेहि विचरितुं" ति भिज्जित्वा पलायन्ति । एवं राजूनं वुद्धि होति । तेन वुत्तं— "वुद्धियेव, आनन्द, वज्जीनं पाटिकङ्खा, नो परिहानी" ति । तत्थ पाटिकङ्खा ति इच्छितब्बा, अवस्सं भविस्सती ति एवं दट्ठब्बा ति अत्थो । 10

समग्गा ति आदीसु सन्निपातभेरिया निग्गताय—"अज्ज मे किच्चं अत्थि, मङ्गलं अत्थी" ति विक्खेपं[2] करोन्ता न समग्गा सन्निपतन्ति नाम । भेरिसद्दं पन सुत्वाव भुञ्जन्ता पि अलङ्करियमानापि[3] वत्थानि निवासेन्तापि अड्ढभुत्ता वा अड्ढालङ्कता वा वत्थं निवासयमाना वा सन्निपतन्ता समग्गा सन्निपतन्ति नाम । सन्निपतिता पन चिन्तेत्वा 15 मन्तेत्वा कत्तब्बं कत्वा एकतोव अवुट्ठहन्ता न समग्गा वुट्ठहन्ति नाम । एवं वुट्ठितेसु हि ये पठमं गच्छन्ति, तेसं एवं होति—"अम्हेहि बाहिरकथाव सुता, इदानि विनिच्छयकथा भविस्सती" ति । एकतो वुट्ठहन्ता पन समग्गा वुट्ठहन्ति नाम । अपिच—"असुकट्ठानेसु गामसीमा वा निगमसीमा वा आकुला, चोरा परियुट्ठिता" ति सुत्वा—"को 20 गन्त्वा इमं अमित्तमद्दनं करिस्सती" ति वुत्ते—"अहं पठमं, अहं पठमं" ति वत्वा गच्छन्ता पि समग्गा वुट्ठहन्ति नाम । एकस्स पन कम्मन्ते ओसीदमाने सेसा राजानो पुत्तभातरो पेसेत्वा तस्स कम्मन्तं उपत्थम्भयमानापि, आगन्तुकराजानं—"असुकस्स गेहं गच्छतु, असुकस्स गेहं गच्छतू" ति अवत्वा सब्बे एकतो सङ्गण्हन्तापि, एकस्स 25 मङ्गले वा रोगे वा अञ्ञस्मिं वा पन तादिसे सुखदुक्खे उप्पन्ने सब्बे

R. 518 — B 108

१. पवुत्ति—स्या० । २. निक्खेपं—सी०, रो० ।
३. अलङ्करुमाना पि—सी०, रो० ।

तत्थ सहायभावं गच्छन्तापि समग्गा वज्जिकरणीयानि करोन्ति नाम ।

अपञ्ञत्तं ति आदीसु पुब्बे अकतं सुङ्कं वा बलिं वा दण्डं वा आहरापेन्ता अपञ्ञत्तं न[1] पञ्ञपेन्ति नाम । पोराणपवेणिया आगतमेव
5 पन अनाहरापेन्ता पञ्ञत्तं न[2] समुच्छिन्दन्ति नाम । चोरो ति गहेत्वा दस्सिते अविचिनित्वाव[3] छेज्जभेज्जं अनुसासेन्ता पोराणं वज्जिधम्मं समादाय न वत्तन्ति नाम । तेसं अपञ्ञत्तं पञ्ञपेन्तानं अभिनवसुङ्कादीहि पीळिता मनुस्सा—"अतिउपद्दुतम्ह, को इमेसं विजिते वसिस्सती" ति पच्चन्तं पविसित्वा चोरा वा चोरसहाया वा
10 हुत्वा जनपदं पहरन्ति । पञ्ञत्तं समुच्छिन्दन्तानं पवेणीआगतानि सुङ्कादीनि अगण्हन्तानं[4] कोसो परिहायति । ततो हत्थिअस्सबलकाय-ओरोधादयो यथानिबद्धं वट्टं अलभमाना थामेन बलेन परिहायन्ति । ते नेव युद्धक्खमा होन्ति, न पारिचरियक्खमा । पोराणं वज्जिधम्मं समादाय अवत्तन्तानं विजिते मनुस्सा—"अम्हाकं पुत्तं पितरं भातरं
R. 519 15 अचोरं येव चोरो ति कत्वा छिन्दिंसु भिन्दिंसू" ति कुज्झित्वा पच्चन्तं पविसित्वा चोरा वा चोरसहाया वा हुत्वा जनपदं पहरन्ति, एवं राजूनं परिहानि होति । पञ्ञत्तं[5] पञ्ञपेन्तानं[5] पन "पवेणीआगतमेव राजानो करोन्ती" ति मनुस्सा हट्ठतुट्ठा कसिवाणिज्जादिके कम्मन्ते सम्पादेन्ति ।
B. 109 पञ्ञत्तं असमुच्छिन्दन्तानं पवेणीआगतानि सुङ्कादीनि गण्हन्तानं
20 कोसो वड्ढति । ततो हत्थिअस्स-बलकाय-ओरोधादयो यथानिबद्धं वट्टं लभमाना थामबलसम्पन्ना युद्धक्खमा चेव पारिचरियक्खमा च होन्ति ।

पोराणं वज्जिधम्मं ति एत्थ पुब्बे किर वज्जिराजानो "अयं चोरो" ति आनेत्वा दस्सिते "गण्हथ नं चोरं" ति अवत्वा विनिच्छय-
25 महामत्तानं देन्ति । ते विनिच्छिनित्वा सचे अचोरो होति,

१. सी०, रो० पोत्थकेसु नत्थि । २. सी० पोत्थके नत्थि ।
३. अविनिच्छिनित्वा—सी०, रो० । ४. अगण्हतं—सी०, रो० ।
५-५. अपञ्ञत्तं न पञ्ञपेन्तानं—सी०, रो० ।

विस्सज्जेन्ति । सचे चोरो,[1] अत्तना किञ्चि अवत्वा वोहारिकानं देन्ति । तेपि[2] अचोरो चे, विस्सज्जेन्ति । चोरो चे, सुत्तधरानं[3] देन्ति[3] । तेपि विनिच्छिनित्वा अचोरो चे, विस्सज्जेन्ति । चोरो चे अट्ठकुलिकानं देन्ति । तेपि तथेव कत्वा सेनापतिस्स, सेनापति उपराजस्स, उपराजा रञ्ञो, राजा विनिच्छिनित्वा अचोरो चे, विस्सज्जेति । सचे पन चोरो होति, पवेणीपोत्थकं वाचापेति । तत्थ—"येन इदं नाम कतं, तस्स अयं नाम दण्डो" ति लिखितं । राजा तस्स किरियं तेन समानेत्वा तदनुच्छविकं दण्डं करोति । इति एतं[4] पोराणं वज्जिधम्मं समादाय वत्तन्तानं मनुस्सा न उज्झायन्ति । "राजानो पोराणपवेणिया कम्मं करोन्ति, एतेसं दोसो नत्थि, अम्हाकंयेव दोसो" ति अप्पमत्ता कम्मन्ते करोन्ति । एवं राजूनं वुद्धि होति । तेन वुत्तं—"वुद्धियेव, आनन्द, वज्जीनं पटिकङ्खा, नो परिहानी" ति ।

सक्करोन्ती ति यंकिञ्चि तेसं[5] सक्कारं करोन्ता सुन्दरमेव करोन्ति । गरुं करोन्ती ति गरुभावं पच्चुपट्ठपेत्वाव करोन्ति । मानेन्ती ति मनेन पियायन्ति । पूजेन्ती ति निपच्चकारं दस्सेन्ति । सोतब्बं मञ्ञन्ती ति दिवसस्स द्वे तयो वारे उपट्ठानं गन्त्वा तेसं कथं सोतब्बं सद्धातब्बं मञ्ञन्ति । तत्थ ये एवं महल्लकानं राजूनं सक्कारादीनि न करोन्ति, ओवादत्थाय च नेसं उपट्ठानं न गच्छन्ति । ते तेहि विस्सट्ठा अनोवदियमाना कीळापसुता रज्जतो परिहायन्ति । ये पन तथा पटिपज्जन्ति, तेसं महल्लकराजानो—"इदं कातब्बं, इदं न कातब्बं" ति पोराणं पवेणिं आचिक्खन्ति । सङ्गामं पत्वापि—"एवं पविसितब्बं, एवं निक्खमितब्बं" ति उपायं दस्सेन्ति । ते तेहि ओवदियमाना यथाओवादं पटिपज्जन्ता सक्कोन्ति राजप्पवेणिं सन्धारेतुं । तेन वुत्तं—"वुद्धियेव, आनन्द, वज्जीनं पाटिकङ्खा, नो परिहानी" ति ।

B. 110 (margin); 5; 10; 15; 20 R. 520

१. ० होति—सी०, रो० ।
२. ० विनिच्छिनित्वा—सी०, रो० ।
३-३. सुत्तधरा नाम होन्ति, तेसं देन्ति—सी०, रो० ।
४. एवं—सी०, रो० ।
५. ते—सी०, रो० ।

B. 110 **कुलित्थियो** ति कुलघरणियो । **कुलकुमारियो** ति अनिविद्धा तासं धीतरो । **ओक्कस्स पसय्हा** ति एत्थ "ओक्कस्सा" ति वा "पसय्हा" ति वा पसय्हाकारस्सेवेतं नामं । "उक्कस्सा" तिपि पठन्ति । तत्थ **ओक्कस्सा** ति अवकस्सित्वा आकड्ढित्वा । **पसय्हा** ति अभिभवित्वा अज्झोत्थरित्वा
5 ति अयं वचनत्थो । एवञ्हि करोन्तानं विजिते मनुस्सा—"अम्हाकं गेहे पुत्तमातरोपि, खेळसिङ्घाणिकादीनि मुखेन अपनेत्वा संवड्ढितधीतरोपि इमे राजानो बलक्कारेन गहेत्वा अत्तनो घरे वासेन्ती" ति कुपिता पच्चन्तं पविसित्वा चोरा वा चोरसहाया वा हुत्वा जनपदं पहरन्ति । एवं अकरोन्तानं पन विजिते मनुस्सा अप्पोस्सुक्का सकानि कम्मानि
10 करोन्ता राजकोसं वड्ढेन्ति । एवमेत्थ वुद्धिहानियो वेदितब्बा ।

वज्जीनं वज्जिचेतियानी ति वज्जिराजूनं वज्जिरट्ठे चित्तीकतट्ठेन चेतियानी ति लद्धनामानि यक्खट्ठानानि । **अब्भन्तरानी** ति अन्तोनगरे ठितानि । **बाहिरानी** ति बहिनगरे ठितानि । **दिन्नपुब्बं** ति पुब्बे दिन्नं । **कतपुब्बं** ति पुब्बे कतं । **नो परिहापेस्सन्ती** ति
15 अपरिहापेत्वा यथापवत्तमेव करिस्सन्ति धम्मिकं बलिं परिहापेन्तानञ्हि देवता आरक्खं सुसंविहितं न करोन्ति । अनुप्पन्नं दुक्खं जनेतुं[1] असक्कोन्तापि उप्पन्नं काससीसरोगादिं वड्ढेन्ति, सङ्गामे पत्ते सहाया न होन्ति । अपरिहापेन्तानं पन आरक्खं सुसंविहितं करोन्ति । अनुप्पन्नं सुखं उप्पादेतुं असक्कोन्तापि उप्पन्नं काससीसरोगादिं हनन्ति,[2]
20 सङ्गामसीसे सहाया होन्ती ति एवमेत्थ वुद्धिहानियो वेदितब्बा ।

धम्मिका रक्खावरणगुत्ती ति एत्थ रक्खा एव यथा अनिच्छितं न गच्छति, एवं आवरणतो आवरणं । यथा इच्छितं न विनस्सति,[3] एवं गोपायनतो गुत्ति । तत्थ बलकायेन परिवारेत्वा रक्खणं पब्बजितानं धम्मिका
R. 521 रक्खावरणगुत्ति नाम न होति । यथा पन विहारस्स उपवने रुक्खे न
25 छिन्दन्ति, वाजिका[4] वज्झं न करोन्ति,[4] पोक्खरणीसु मच्छे न गण्हन्ति ।

१. उप्पादेतुं—स्या० । २. हरन्ति—सी०, रो० ।
३. नस्सति—स्या० । ४-४. वागुराहि मिगं न गण्हन्ति—स्या० ।

एवं करणं धम्मिका रक्खावरणगुत्ति नाम। किन्ति अनागता चा ति इमिना पन नेसं एवं पच्चुपट्ठितचित्तसन्तानो ति चित्तप्पवत्तिं पुच्छति।

तत्थ ये अनागतानं अरहन्तानं आगमनं न इच्छन्ति, ते अस्सद्धा होन्ति अप्पसन्ना। पब्बजिते च सम्पत्ते पच्चुग्गमनं न करोन्ति, गन्त्वा न पस्सन्ति, पटिसन्थारं न करोन्ति, पञ्हं न पुच्छन्ति, धम्मं न सुणन्ति, दानं न देन्ति, अनुमोदनं न सुणन्ति, निवासनट्ठानं न संविदहन्ति। अथ नेसं अवण्णो अब्भुग्गच्छति "असुको नाम राजा अस्सद्धो अप्पसन्नो, पब्बजिते सम्पत्ते पच्चुग्गमनं न करोति...पे०... निवासनट्ठानं न संविदहती" ति। तं सुत्वा पब्बजिता तस्स नगरद्वारेन न गच्छन्ति, गच्छन्तापि नगरं न पविसन्ति। एवं अनागतानं अरहन्तानं अनागमनमेव होति। आगतानम्पि फासुविहारे असति येपि अजानित्वा आगता, ते—"वसिस्सामा ति ताव चिन्तेत्वा आगतम्हा, इमेसं पन राजूनं इमिना नीहारेन को वसिस्सती" ति निक्खमित्वा गच्छन्ति। एवं अनागतेसु अनागच्छन्तेसु, आगतेसु दुक्खं विहरन्तेसु सो देसो पब्बजितानं अनावासो होति। ततो देवतारक्खा न होति, देवतारक्खाय असति अमनुस्सा ओकासं लभन्ति। अमनुस्सा उस्सन्ना अनुप्पन्नं ब्याधिं उप्पादेन्ति। सीलवन्तानं दस्सनपञ्हापुच्छनादिवत्थुकस्स पुञ्ञस्स अनागमो होति। विपरियायेन पन[1] यथावुत्तकण्हपक्खविपरीतस्स सुक्कपक्खस्स सम्भवो होती ति एवमेत्थ वुड्ढिहानियो वेदितब्बा।

B. 111

५. एकमिदाहं (दी० नि० २.६०) ति इदं भगवा पुब्बे वज्जीनं इमस्स वज्जिसत्तकस्स देसितभावप्पकासनत्थमाह। तत्थ सारन्ददे चेतिये ति एवंनामके विहारे। अनुप्पन्ने किर बुद्धे तत्थ सारन्ददस्स यक्खस्स निवासनट्ठानं चेतियं अहोसि। अथेत्थ भगवतो विहारं कारापेसुं। सो सारन्ददे चेतिये कतत्ता सारन्ददचेतियन्त्वेव सङ्ख्यं गतो।

१. च—स्या०।

R. 522 **अकरणीया** ति अकातब्बा, अग्गहेतब्बा ति अत्थो। **यदिदं** ति निपातमत्तं। **युद्धस्सा** ति करणत्थे सामिवचनं। अभिमुखयुद्धेन गहेतुं न सक्का ति अत्थो। **अञ्ञत्र उपलापनाया** ति ठपेत्वा उपलापनं। उपलापना नाम—"अलं विवादेन, इदानि समग्गा होमा" ति हत्थि-
5 अस्सरथहिरञ्ञसुवण्णादीनि पेसेत्वा सङ्गहकरणं। एवञ्हि सङ्गहं कत्वा केवलं विस्सासेन सक्का गण्हितुं ति अत्थो।

अञ्ञत्र मिथुभेदाया ति ठपेत्वा मिथुभेदं। इमिना अञ्ञमञ्ञभेदं B. 112 कत्वा पि सक्का एते गहेतुं ति दस्सेति। इदं ब्राह्मणो भगवतो कथाय नयं लभित्वा आह।

10 किं पन भगवा ब्राह्मणस्स इमाय कथाय नयलाभं न जानाती ति? आम, जानाति। जानन्तो कस्मा कथेसी ति[1]? अनुकम्पाय। एवं किरस्स अहोसि—"मया अकथिते पि कतिपाहेन गन्त्वा सब्बे गण्हिस्सति, कथिते पन समग्गे भिन्दन्तो तीहि संवच्छरेहि गण्हिस्सति। एत्तकम्पि जीवितमेव वरं। एत्तकञ्हि जीवन्ता अत्तनो पतिट्ठानभूतं पुञ्ञं
15 करिस्सन्ती" ति।

अभिनन्दित्वा ति चित्तेन अभिनन्दित्वा। **अनुमोदित्वा** ति "यावसुभासितञ्चिदं भोता गोतमेना" ति वाचाय अनुमोदित्वा। **पक्कामी** ति रञ्ञो सन्तिकं गतो। ततो तं राजा—"किं आचरिय, भगवा अवचा" ति पुच्छि। सो—"यथा भो समणस्स गोतमस्स
20 वचनं न सक्का वज्जी केनचि गहेतुं, अपिच उपलापनाय वा मिथुभेदेन वा सक्का" ति आह। ततो नं राजा—"उपलापनाय अम्हाकं हत्थिअस्सादयो नस्सिस्सन्ति, भेदेनेव ते गहेस्सामी, किं करोमा" ति पुच्छि।

तेन हि महाराजा तुम्हे वज्जिं आरब्भ परिसति कथं समुट्ठापेथ।
25 ततो अहं—"किं ते महाराज तेहि, अत्तनो सन्तकेहि कसिवाणिज्जादीनि कत्वा जीवन्तु एते राजानो" ति वत्वा पक्कमिस्सामि। ततो तुम्हे—

1. सी०, स्या० पोत्थकेसु नत्थि।

"किन्नु खो भो एस ब्राह्मणो वज्जिं आरब्भ पवत्तं कथं पटिबाहती" ति वदेय्याथ, दिवसभागे चाहं तेसं पण्णाकारं पेसेस्सामि। तम्पि गाहापेत्वा तुम्हेपि मम दोसं आरोपेत्वा बन्धनतालनादीनि अकत्वाव केवलं खुरमुण्डं मं कत्वा नगरा नीहरापेथ। अथाहं—"मया ते नगरे पाकारो[1] परिखा च कारिता। अहं किर[2] दुब्बलट्ठानञ्च उत्तानगम्भीर- 5 ट्ठानञ्च जानामि, न चिरस्सेव दानि उजुं करिस्सामी" ति वक्खामि। R. 523 तं सुत्वा तुम्हे—"गच्छतू" ति वदेय्याथा ति। राजा सब्बं अकासि।

लिच्छवी तस्स निक्खमनं सुत्वा—"सठो ब्राह्मणो, मा तस्स गङ्गं उत्तरितुं अदत्था" ति आहंसु। तत्र[3] एकच्चेहि—"अम्हे आरब्भ कथितत्ता किर सो एवं कतो"[4] ति[4] वुत्ते "तेन हि, भणे, एतू" ति 10 भणिंसु। सो गन्त्वा लिच्छवी दिस्वा "किं आगतत्था" ति पुच्छितो तं पवत्तिं आरोचेसि। लिच्छविनो—"अप्पमत्तकेन नाम एवं गरूं दण्डं कातुं न युत्तं" ति वत्वा—"किं ते तत्र ठानन्तरं" ति पुच्छिंसु। B. 113 "विनिच्छयामच्चोहमस्मी" ति। तदेव ते ट्ठानन्तरं होतू ति[5]। सो सुट्ठुतरं[6] विनिच्छयं करोति। राजकुमारा तस्स सन्तिके सिप्पं 15 उग्गण्हन्ति।

सो पतिट्ठितगुणो हुत्वा एकदिवसं एकं लिच्छविं गहेत्वा एकमन्तं गन्त्वा—दारका[7] कसन्ती ति पुच्छि। आम, कसन्ति। द्वे गोणे योजेत्वा ति? आम, द्वे गोणे योजेत्वा ति। एत्तकं वत्वा निवत्तो। ततो तं अञ्ञो—"किं आचरियो आहा" ति पुच्छित्वा तेन वुत्तं 20 असद्दहन्तो "न मे एस यथाभूतं कथेती" ति तेन सद्धिं भिज्जि। ब्राह्मणो अञ्ञस्मिं[8] दिवसे एकं लिच्छविं एकमन्तं नेत्वा—"केन ब्यञ्जनेन भुत्तोसी" ति पुच्छित्वा निवत्तो। तम्पि अञ्ञो पुच्छित्वा असद्दहन्तो तथेव भिज्जि। ब्राह्मणो अपरम्पि दिवसं एकं लिच्छविं

१. पाकारे—सी०, रो०। २. थिर—रो०।
३. ततो—सी०, रो०। ४-४ करोती ति—सी०, रो०।
५. ० भणिसु—सी०, रो०। ६. सुट्ठु—सी०, रो०।
७. केदारं—सी०, रो०। ८. अञ्ञम्पि—सी०, स्या०, रो०।

एकमन्तं नेत्वा—"अतिदुग्गतोसि किरा" ति पुच्छि। को एवमाहा ति पुच्छितो[१] असुको नाम लिच्छवी ति। अपरम्पि एकमन्तं नेत्वा —"त्वं किर भीरुकजातिको" ति पुच्छि। को एवमाहा ति ? असुको नाम लिच्छवी ति। एवं अञ्ञेन अकथितमेव अञ्ञस्स कथेन्तो तीहि
5 संवच्छरेहि ते राजानो अञ्ञमञ्ञं भिन्दित्वा यथा द्वे एकमग्गेन न गच्छन्ति, तथा कत्वा सन्निपातभेरिं चरापेसि। लिच्छविनो—"इस्सरा सन्निपतन्तु, सूरा सन्निपतन्तू" ति वत्वा न सन्निपतिंसु।

ब्राह्मणो—"अयं दानि कालो, सीघं आगच्छतू" ति रञ्ञो सासनं पेसेसि। राजा सुत्वाव बलभेरिं चरापेत्वा निक्खमि। वेसालिका सुत्वा[२]—
10 "रञ्ञो गङ्गं उत्तरितुं न दस्सामा" ति भेरिं चरापेसुं। तम्पि सुत्वा—
R. 524 "गच्छन्तु सूरराजानो" ति आदीनि वत्वा न सन्निपतिंसु। "नगरप्पवेसनं न दस्साम, द्वारानि पिदहित्वा ठस्सामा" ति भेरिं चरापेसुं। एकोपि न सन्निपति। यथाविवटेहेव द्वारेहि पविसित्वा सब्बे अनयब्यसनं पापेत्वा गतो।

३. भिक्खुअपरिहानियधम्मवण्णना

15 ६. **अथ खो भगवा अचिरपक्कन्ते** (दी० नि० २.११) ति आदिम्हि **सन्निपातेत्वा** ति दूरविहारेसु इद्धिमन्ते पेसेत्वा सन्तिकविहारेसु सयं गन्त्वा—"सन्निपतथ, आयस्मन्तो; भगवा वो सन्निपातं इच्छती"
B. 114 ति सन्निपातेत्वा। **अपरिहानिये** ति अपरिहानिकरे, वुड्ढिहेतुभूते ति अत्थो। **धम्मे देसेस्सामी** ति चन्दसहस्सं सूरियसहस्सं उट्ठपेन्तो विय
20 चतुकुट्टके गेहे अन्तो तेलदीपसहस्सं[३] उज्जालेन्तो विय पाकटे कत्वा कथयिस्सामी ति। तत्थ **अभिण्हं सन्निपाता** इदं विज्जसत्तके वुत्तसदिसमेव। इधापि च अभिण्हं असन्निपतिता दिसासु आगतसासनं न सुणन्ति। ततो—"असुकविहारसीमा आकुला, उपोसथपवारणा ठिता, असुकस्मिं ठाने भिक्खू वेज्जकम्मदूतकम्मादीनि करोन्ति, विञ्ञत्तिबहुला

१. सी०, रो० पोत्थकेसु नत्थि। २. स्या० पोत्थके नत्थि।
३. दीपसहस्सं—सी०, रो०।

पुप्फदानादीहि जीविकं कप्पेन्ती" ति आदीनि न जानन्ति। पापभिक्खूपि "पमत्तो भिक्खुसंघो" ति ञत्वा रासिभूता सासनं ओसक्कापेन्ति। अभिण्हं सन्निपतिता पन तं तं पवत्तिं सुणन्ति। ततो भिक्खुसंघं पेसेत्वा सीमं उजुं करोन्ति, उपोसथपवारणादयो पवत्तापेन्ति, मिच्छाजीवानं उस्सन्नट्ठाने अरियवंसके पेसेत्वा अरियवंसं कथापेन्ति, पापभिक्खूनं विनयधरेहि निग्गहं कारापेन्ति। पापभिक्खूपि "अप्पमत्तो भिक्खुसंघो,[1] न सक्का अम्हेहि वग्गबन्धेन विचरितुं" ति भिज्जित्वा पलायन्ति। एवमेत्थ हानिवुद्धियो वेदितब्बा। समग्गा ति आदीसु चेतियपटिजग्गनत्थं वा बोधिगेहउपोसथागारच्छादनत्थं वा कतिकवत्तं वा ठपेतुकामताय ओवादं वा दातुकामताय—"संघो सन्निपततू" ति भेरिया वा घण्डिया वा आकोटिताय—"मय्हं चीवरकम्मं अत्थि, मय्हं पत्तो पचितब्बो, मय्हं नवकम्मं अत्थी" ति विक्खेपं करोन्ता न समग्गा सन्निपतन्ति नाम। सब्बं पन तं कम्मं ठपेत्वा—"अहं पुरिमतरं, अहं पुरिमतरं" ति एकप्पहारेनेव सन्निपतन्ता समग्गा सन्निपतन्ति नाम। सन्निपतिता पन चिन्तेत्वा मन्तेत्वा कत्तब्बं कत्वा एकतो अवुट्ठहन्ता समग्गा न वुट्ठहन्ति नाम। एवं वुट्ठितेसु हि ये पठमं गच्छन्ति, तेसं एवं होति——"अम्हेहि बाहिरकथाव सुता, इदानि विनिच्छयकथा भविस्सती ति। एकप्पहारेनेव वुट्ठहन्ता पन समग्गा वुट्ठहन्ति नाम। अपिच—"असुकट्ठानो विहारसीमा आकुला, उपोसथपवारणा ठिता, असुकट्ठाने वेज्जकम्मादिकारका पापभिक्खू उस्सन्ना" ति सुत्वा—"को गन्त्वा तेसं निग्गहं करिस्सती" ति वुत्ते—"अहं पठमं, अहं पठमं" ति वत्वा गच्छन्तापि समग्गा वुट्ठहन्ति नाम।

आगन्तुकं पन दिस्वा—"इमं परिवेणं याहि, एतं परिवेणं याहि, अयं[2] को" ति अवत्वा सब्बे वत्तं करोन्तापि, जिण्णपत्तचीवरकं दिस्वा तस्स भिक्खाचारवत्तेन पत्तचीवरं परियेसमानापि, गिलानस्स गिलानभेसज्जं परियेसमानापि, गिलानमेव अनाथं—"असुकपरिवेणं याहि,

[1] संघो—सी, स्या०, रो०। [2] मयं को—सी०; मयं के—रो०।

असुकपरिवेणं याही" ति अवत्वा अत्तनो अत्तनो परिवेणे पटिजग्गन्तापि, एको ओलियमानको[1] गन्थो होति, पञ्ञवन्तं भिक्खुं सङ्गण्हित्वा तेन तं गन्थं उक्खिपापेन्तापि समग्गा संघकरणीयानि करोन्ति नाम।

अपञ्ञत्तं ति आदीसु नवं अधम्मिकं कतिकवत्तं वा सिक्खापदं
5 वा बन्धन्ता अपञ्ञत्तं पञ्ञपेन्ति नाम, पुराणसन्थतवत्थुस्मिं सावत्थियं भिक्खू विय। उद्धम्मं उब्बिनयं सासनं दीपेन्ता पञ्ञत्तं समुच्छिन्दन्ति नाम, वस्ससतपरिनिब्बुते भगवति वेसालिका वज्जिपुत्तका विय। खुद्दानुखुद्दका पन आपत्तियो सञ्चिच्च वीतिक्कमन्ता यथापञ्ञत्तेसु सिक्खापदेसु समादाय न वत्तन्ति नाम, अस्सजिपुनब्बसुका विय। नवं
10 पन कतिकवत्तं वा सिक्खापदं वा अबन्धन्ता, धम्मविनयतो सासनं दीपेन्ता, खुद्दानुखुद्दकानि सिक्खापदानि असमूहनन्ता अपञ्ञत्तं न पञ्ञपेन्ति, पञ्ञत्तं न समुच्छिन्दन्ति, यथापञ्ञत्तेसु सिक्खापदेसु समादाय वत्तन्ति नाम, आयस्मा उपसेनो विय, आयस्मा यसो काकण्डकपुत्तो विय च।

15 "सुणातु, मे आवुसो संघो, सन्तम्हाकं सिक्खापदानि गिहिगतानि, गिहिनोपि जानन्ति, 'इदं वो समणानं सक्यपुत्तियानं कप्पति, इदं वा न कप्पती" ति। सचे हि मयं खुद्दानुखुद्दकानि सिक्खापदानि
R. 526 समूहनिस्साम, भविस्सन्ति वत्तारो—'धूमकालिकं समणेन गोतमेन सावकानं सिक्खापदं पञ्ञत्तं, याविमेसं सत्था अट्ठासि, ताविमे
20 सिक्खापदेसु सिक्खिंसु। यतो[2] इमेसं सत्था परिनिब्बुतो, न दानिमे
B. 116 सिक्खापदेसु सिक्खन्ती' ति। यदि संघस्स पत्तकल्लं, संघो अपञ्ञत्तं न पञ्ञपेय्य, पञ्ञत्तं न समुच्छिन्देय्य, यथापञ्ञत्तेसु सिक्खापदेसु समादाय वत्तेय्या" (चु० व० ४१०) ति इमं तन्तिं ठपयन्तो आयस्मा महाकस्सपोविय च। वुद्धियेवा ति सीलादीहि गुणेहि वुड्ढियेव, नो
25 परिहानि।

थेरा ति थिरभावप्पत्ता थेरकारकेहि गुणेहि समन्नागता। बहू रत्तियो जानन्ती ति रत्तञ्ञू। चिरं पब्बजितानं एतेसं ति

१. ओहीय मानको—सी०, रो०। २. यदा—रो०।

चिरपब्बजिता। संघस्स पितुट्ठाने ठिता ति संघपितरो। पितुट्ठाने ठितत्ता संघं परिनेन्ति पुब्बङ्गमा हुत्वा तीसु सिक्खासु[1] पवत्तेन्ती ति संघपरिणायका।

ये तेसं सक्कारादीनि न करोन्ति, ओवादत्थाय द्वे तयो वारे उपट्ठानं न गच्छन्ति, तेपि तेसं ओवादं न देन्ति, पवेणीकथं न कथेन्ति, सारभूतं धम्मपरियायं न सिक्खापेन्ति। ते तेहि विस्सट्ठा[2] सीलादीहि धम्मक्खन्धेहि सत्तहि च अरियधनेही ति एवमादीहि गुणेहि परिहायन्ति। ये पन तेसं सक्कारादीनि करोन्ति, उपट्ठानं गच्छन्ति, तेपि तेसं ओवादं देन्ति। "एवं ते अभिक्कमितब्बं, एवं ते पटिक्कमितब्बं, एवं ते आलोकितब्बं, एवं ते विलोकितब्बं, एवं ते समिञ्जितब्बं, एवं ते पसारितब्बं, एवं ते सङ्घाटिपत्तचीवरं धारेतब्बं" ति पवेणीकथं कथेन्ति, सारभूतं धम्मपरियायं सिक्खापेन्ति, तेरसहि धुतङ्गेहि दसहि कथावत्थूहि अनुसासन्ति। ते तेसं ओवादे ठत्वा सीलादीहि गुणेहि वड्ढमाना सामञ्ञत्थं अनुपापुणन्ति। एवमेत्थ हानिवुद्धियो वेदितब्बा।

पुनब्भवदानं पुनब्भवो, पुनब्भवो सीलमस्सा ति पोनोब्भविका, पुनब्भवदायिका ति अत्थो, तस्मा पोनोब्भविकाय। न वसं गच्छन्ती ति एत्थ ये चतुन्नं पच्चयानं कारणा उपट्ठाकानं पदानुपदिका हुत्वा गामतो गामं विचरन्ति, ते तस्सा तण्हाय वसं गच्छन्ति नाम, इतरे न गच्छन्ति नाम। तत्थ हानिवुद्धियो पाकटा येव। R. 527

आरञ्ञकेसू ति पञ्चधनुसतिकपच्छिमेसु। सापेक्खा ति सतण्हा सालया। गामन्तसेनासनेसु हि झानं अप्पेत्वा पि ततो वुट्ठितमत्तोव इत्थिपुरिसदारिकादिसद्दं सुणाति, येनस्स[3] अधिगतविसेसोपि हायतियेव। अरञ्ञे पन निद्दायित्वा पटिबुद्धमत्तो सीहब्यग्घमोरादीनं सद्दं सुणाति, येन आरञ्ञकं[4] पीतिं लभित्वा तमेव सम्मसन्तो अग्गप्फले पतिट्ठाति। इति भगवा गामन्तसेनासने झानं अप्पेत्वा निसिन्नभिक्खुनो अरञ्ञे B. 117

१. सिक्खापदेसु—सी०, रो०।
२. विसंसट्ठा—सी०।
३. तेनस्स—सी०, रो०।
४. आरञ्ञको—सी०, रो०।

निद्दायन्तमेव[१] पसंसति । तस्मा तमेव अत्थवसं पटिच्च—"आरञ्ञकेसु सेनासनेसु सापेक्खा भविस्सन्ती" ति आह ।

पच्चत्तञ्ञेव सतिं उपट्ठपेस्सन्ती ति अत्तनाव[२] अत्तनो अब्भन्तरे सतिं उपट्ठपेस्सन्ति । **पेसला** ति पियसीला । इधापि
5 सब्रह्मचारीनं आगमनं अनिच्छन्ता नेवासिका अस्सद्धा होन्ति अप्पसन्ना । सम्पत्तभिक्खूनं पच्चुग्गमनपत्तचीवरप्पटिग्गहणआसनपञ्ञापनतालवण्टग्गहणादीनि न करोन्ति । अथ नेसं अवण्णो उग्गच्छति—"असुकविहारवासिनो भिक्खू अस्सद्धा अप्पसन्ना विहारं पविट्ठानं वत्तपटिवत्तं न करोन्ती" ति । तं सुत्वा पब्बजिता विहारद्वारेन गच्छन्तापि विहारं
10 न पविसन्ति । एवं अनागतानं अनागमनमेव होति । आगतानं पन फासुविहारे असति येपि अजानित्वा आगता, ते—"वसिस्सामा ति ताव चिन्तेत्वा आगताम्ह, इमेसं पन नेवासिकानं इमिना नीहारेन को वसिस्सती" ति निक्खमित्वा गच्छन्ति । एवं सो विहारो अञ्ञेसं भिक्खूनं अनावासोव होति । ततो नेवसिका सीलवन्तानं दस्सनं
15 अलभन्ता कङ्खाविनोदनं वा आचारसिक्खापकं[३] वा मधुरधम्मस्सवनं वा न लभन्ति । तेसं नेव अग्गहितधम्मग्गहणं, न गहितसज्झायकरणं होति । इति नेसं हानियेव होति, न वुद्धि ।

ये पन सब्रह्मचारीनं आगमनं इच्छन्ति, ते सद्धा होन्ति पसन्ना, आगतानं सब्रह्मचारीनं पच्चुग्गमनादीनि कत्वा सेनासनं पञ्ञपेत्वा
20 देन्ति । ते गहेत्वा भिक्खाचारं पविसन्ति, कङ्खं विनोदेन्ति, मधुरधम्मस्सवनं लभन्ति । अथ नेसं कित्तिसद्दो उग्गच्छति—"असुकविहारभिक्खू एवं सद्धा पसन्ना वत्तसम्पन्ना सङ्गाहका" ति । तं सुत्वा भिक्खू
R. 528 दूरतो पि एन्ति । तेसं नेवासिका वत्तं करोन्ति, समीपं आगन्त्वा वुड्ढतरं आगन्तुकं वन्दित्वा निसीदन्ति, नवकतरस्स सन्तिके आसनं
25 गहेत्वा निसीदन्ति । निसीदित्वा—"इमस्मिं विहारे वसिस्सथ

१. निद्दायमानमेव—सी०, रो० । २. अत्ततो—सी०, रो० ।
३. ० सिक्खापनकं—सी०, रो० ।

गमिस्सथा" ति पुच्छन्ति । 'गमिस्सामी' ति वुत्ते—"सप्पायं सेनासनं, सुलभा भिक्खा" ति आदीनि वत्वा गन्तुं न देन्ति । विनयधरो चे होति, तस्स सन्तिके विनयं सज्झायन्ति । सुत्तन्तादिधरो चे, तस्स सन्तिके तं तं धम्मं सज्झायन्ति । आगन्तुकानं थेरानं ओवादे ठत्वा सह पटिसम्भिदाहि अरहत्तं पापुणन्ति । आगन्तुका "एकं द्वे दिवसानि वसिस्सामा ति आगताम्ह, इमेसं पन सुखसंवासताय दसद्वादसवस्सानि वसिस्सामा"[1] ति वत्तारो होन्ति । एवमेत्थ हानिवुद्धियो वेदितब्बा । 5 B. 118

७. दुतियसत्तके कम्मं आरामो एतेसं ति **कम्मारामा** (दी० नि० २.६२) ति । कम्मे रता ति **कम्मरता** । **कम्मारामतमनुयुत्ता** ति युत्ता पयुत्ता अनुयुत्ता । तत्थ कम्मं ति इतिकातब्बकम्मं वुच्चति; सेय्यथिदं—चीवरविचारणं, चीवरकरणं, उपत्थम्भनं, सूचिघरं, पत्तत्थविकं, अंसबद्धकं[2], कायबन्धनं, धमकरणं, आधारकं,[3] पादकथलिकं, सम्मज्जनीआदीनं करणं ति । एकच्चो हि एतानि करोन्तो सकलदिवसं एतानेव करोति । तं सन्धायेस पटिक्खेपो । 10

यो पन एतेसं करणवेलायमेव एतानि करोति, उद्देसवेलायं उद्देसं गण्हाति, सज्झायवेलायं सज्झायति, चेतियङ्गणवत्तवेलायं चेतियङ्गणवत्तं करोति, मनसिकारवेलायं मनसिकारं करोति, न सो कम्मारामो नाम । 15

न भस्सारामा ति एत्थ यो इत्थिवण्णपुरिसवण्णादिवसेन आलापसल्लापं करोन्तो येव दिवसञ्च रत्तिञ्च वीतिनामेति, एवरूपे[4] भस्से परियन्तकारी न होति, अयं भस्सारामो नाम । यो पन रत्तिन्दिवं धम्मं कथेति, पञ्हं विस्सज्जेति, अयं अप्पभस्सोव भस्से परियन्तकारी येव । कस्मा ? "सन्निपतितानं, वो भिक्खवे, द्वयं करणीयं--धम्मी वा कथा, अरियो वा तुण्हीभावो"(म० नि० १.२१०) ति वुत्तत्ता । 20

१. वसिम्हा ति—स्या० ।
२. अंसवट्टकं—सी०, रो० ।
३. आधार—स्या० ।
४. एवरूपो—सी०, रो० ।

न निद्दारामा ति एत्थ यो गच्छन्तो पि निसिन्नो पि निपन्नो पि थिनमिद्धाभिभूतो निद्दायतियेव, अयं निद्दारामो नाम। यस्स पन
R. 529 करजकायगेलञ्ञेन चित्तं भवङ्गं ओतरति, नायं निद्दारामो। तेनेवाह— "अभिजानामहं अग्गिवेस्सन, गिम्हानं पच्छिमे मासे पच्छाभत्तं पिण्डपात-
5 प्पटिक्कन्तो चतुग्गुणं सङ्घाटिं पञ्ञपेत्वा दक्खिणेन पस्सेन सतो सम्पजानो निद्दं ओक्कमिता" (म० नि० १.३०७) ति।

न सङ्गणिकारामा ति एत्थ यो एकस्स दुतियो द्विन्नं ततियो तिण्णं चतुत्थो ति एवं संसट्ठोव विहरति, एकको अस्सादं न लभति, अयं सङ्गणिकारामो। यो पन चतूसु इरियापथेसु एकको अस्सादं लभति,
10 नायं सङ्गणिकारामो ति वेदितब्बो।

B. 119 **न पापिच्छा** ति एत्थ असन्तसम्भावनाय इच्छाय समन्नागता दुस्सीला पापिच्छा नाम। **न पापमित्तादीसु** पापा मित्ता एतेसं ति **पापमित्ता**। चतूसु इरियापथेसु सह अयनतो पापा सहाया एतेसं ति **पापसहाया**। तन्निन्नतप्पोणतप्पब्भारताय पापेसु सम्पवङ्काति **पाप-**
15 **सम्पवङ्का**। **ओरमत्तकेना** ति अवरमत्तकेन अप्पमत्तकेन। **अन्तरा** ति अरहत्तं अपत्वाव एत्थन्तरे। **वोसानं** ति परिनिट्ठितभावं[1]—"अलमेत्तावता" ति ओसक्कनं ठितकिच्चतं। इदं वुत्तं होति—"याव सीलपारिसुद्धिमत्तेन वा विपस्सनामत्तेन वा झानमत्तेन वा सोतापन्नभावमत्तेन वा सकदागामिभावमत्तेन वा अनागामि-
20 भावमत्तेन वा वोसानं न आपज्जिस्सन्ति, ताव वुद्धियेव भिक्खूनं पाटिकङ्खा, नो परिहानी" ति।

८. ततियसत्तके **सद्धा** (दी० नि० २.६३) ति सद्धासम्पन्ना। तत्थ आगमनीयसद्धा, अधिगमसद्धा, पसादसद्धा, ओकप्पनसद्धा ति चतुब्बिधा सद्धा। तत्थ **आगमनीयसद्धा** सब्बञ्ञुबोधिसत्तानं होति। **अधिगमसद्धा**
25 अरियपुग्गलानं। बुद्धो धम्मो संघो ति वुत्ते पन पसादो **पसादसद्धा**। ओकप्पेत्वा पकप्पेत्वा पन सद्दहनं **ओकप्पनसद्धा**। सा दुविधा पि

१. पधानठितभावं—स्या०।

इधाधिप्पेता। ताय हि सद्धाय समन्नागतो सद्धाविमुत्तो, वक्कलित्थेरसदिसो होति। तस्स हि चेतियङ्गणवत्तं वा, बोधियङ्गणवत्तं वा कतमेव होति। उपज्झायवत्तआचरियवत्तादीनि सब्बवत्तानि पूरेति। **हिरिमना** ति पाप-जिगुच्छनलक्खणाय हिरिया युत्तचित्ता। **ओत्तप्पी** ति पापतो भायन-लक्खणेन ओत्तप्पेन समन्नागता। 5

बहुस्सुता ति एत्थ पन परियत्तिबहुस्सुतो, पटिवेधबहुस्तो ति द्वे बहुस्सुता। **परियत्ती** ति तीणि पिटकानि। **पटिवेधो** ति सच्चप्पटिवेधो। इमस्मिं पन ठाने परियत्ति अधिप्पेता। सा येन बहु सुता, सो बहुस्सुतो। सो पनेस निस्सयमुच्चनको, परिसुपट्ठाको,[1] भिक्खुनोवादको, सब्बत्थकबहुस्सुतो ति चतुब्बिधो होति। तत्थ तयो बहुस्सुता समन्त- 10 पासादिकाय विनयट्ठकथाय ओवादवग्गे वुत्तनयेन गहेतब्बा। सब्बत्थक-बहुस्सुता पन आनन्दत्थेरसदिसा होन्ति। ते इध अधिप्पेता। R. 530

आरद्धवीरिया ति येसं कायिकञ्च चेतसिकञ्च वीरियं आरद्धं होति। तत्थ ये कायसङ्गणिकं विनोदेत्वा चतूसु इरियापथेसु अट्ठआरब्भवत्थुवसेन[2] एकका होन्ति, तेसं कायिकवीरियं आरद्धं नाम 15 होति। ये चित्तसङ्गणिकं विनोदेत्वा अट्ठसमापत्तिवसेन एकका होन्ति, गमने उप्पन्नकिलेस्स ठानं पापुणितुं न देन्ति, ठाने उप्पन्न-किलेसस्स निसज्जं, निसज्जाय उप्पन्नकिलेसस्स सयनं[3] पापुणितुं न देन्ति, उप्पन्नुप्पन्नट्ठानेयेव किलेसे निग्गण्हन्ति, तेसं चेतसिकवीरियं आरद्धं नाम होति। 20 B. 120

उपट्ठितस्सती ति चिरकतादीनं सरिता अनुस्सरिता[4] महागति-म्बयअभयत्थेरदीघभाणकअभयत्थेरतिपिटकचूळाभयत्थेराविय। महा-गतिम्बयअभयत्थेरो किर जातपञ्चमदिवसे मङ्गलपायासे तुण्डं पसारेन्तं वायसं दिस्वा हुं हुं ति सद्दमकासि। अथ सो थेरकाले—"कदा पट्ठाय, भन्ते, सरथा" ति भिक्खूहि पुच्छितो "जातपञ्चमदिवसे कतसद्दतो 25 पट्ठाय आवुसो" ति आह।

१. परिसुपट्ठापको—सी०, रो०। २. आरम्भवत्थुवसेन—सी०, रो०।
३. ०वा—स्या०। ४. अनुसरितारो—सी०, रो०।

दीघभाणकअभयत्थेरस्स[१] जातनवमदिवसे माता चुम्बिस्सामी ति ओनता तस्सा मोळि मुञ्चित्थ। ततो तुम्बमत्तानि सुमनपुप्फानि दारकस्स उरे पतित्वा दुक्खं जनयिंसु। सो थेरकाले—"कदा पट्ठाय, भन्ते, सरथा" ति पुच्छितो—"जातनवमदिवसतो पट्ठाया" ति आह।

5 तिपिटकचूळाभयत्थेरो—"अनुराधपुरे तीणि द्वारानि पिदहापेत्वा मनुस्सानं एकेन द्वारेन निक्खमनं कत्वा[२]—'त्वं किन्नामो, त्वं किन्नामो' ति पुच्छित्वा सायं पुन अपुच्छित्वाव तेसं नामानि सम्पटिच्छापेतुं—"सक्का आवुसो" ति आह। एवरूपे भिक्खू सन्धाय—"उपट्ठितस्सती" ति वुत्तं।

10 पञ्ञवन्तो ति पञ्चन्नं खन्धानं उदयब्बयपरिग्गाहिकाय पञ्ञाय R. 531 समन्नागता। अपिच द्वीहिपि एतेहि पदेहि विपस्सकानं भिक्खूनं विपस्सनासम्भारभूता सम्मासति चेव विपस्सनापञ्ञा च कथिता।

९. चतुत्थसत्तके सतियेव सम्बोज्झङ्गा सतिसम्बोज्झङ्गो (दी० नि० २.६४) ति। एस नयो सब्बत्थ। तत्थ उपट्ठानलक्खणो 15 सतिसम्बोज्झङ्गो, पविचयलक्खणो धम्मविचयसम्बोज्झङ्गो, पग्गहलक्खणो B. 121 वीरियसम्बोज्झङ्गो, फरणलक्खणो पीतिसम्बोज्झङ्गो, उपसमलक्खणो पस्सद्धिसम्बोज्झङ्गो, अविक्खेपलक्खणो समाधिसम्बोज्झङ्गो, पटिसङ्खान-लक्खणो उपेक्खासम्बोज्झङ्गो। भावेस्सन्ती ति सतिसम्बोज्झङ्गं चतूहि कारणेहि समुट्ठापेन्ता, छहि कारणेहि धम्मविचयसम्बोज्झङ्गं समुट्ठापेन्ता, 20 नवहि कारणेहि वीरियसम्बोज्झङ्गं समुट्ठापेन्ता, दसहि कारणेहि पीति-सम्बोज्झङ्गं समुट्ठापेन्ता, सत्तहि कारणेहि पस्सद्धिसम्बोज्झङ्गं समुट्ठापेन्ता, दसहि कारणेहि समाधिसम्बोज्झङ्गं समुट्ठापेन्ता, पञ्चहि कारणेहि उपेक्खासम्बोज्झङ्गं समुट्ठापेन्ता वड्ढेस्सन्ती ति अत्थो। इमिना विपस्सनामग्गफलसम्पयुत्ते लोकियलोकुत्तरमिस्सके सम्बोज्झङ्गे कथेसि।

25 १०. पञ्चमसत्तके अनिच्चसञ्ञा ति अनिच्चानुपस्सनाय सद्धिं उप्पन्नसञ्ञा। अनत्तसञ्ञादीसुपि एसेव नयो। इमा सत्त

१. ०थेरं—सी०, रो०। २. कारेत्वा—सी०, रो०।

लोकियविपस्सनापि होन्ति। "एतं सन्तं, एतं पणीतं, यदिदं सब्बसङ्खारसमथो विरागो निरोधो" (अं० नि० ४.६१) ति आगतवसेनेत्थ द्वे लोकुत्तरा पि होन्ती ति वेदितब्बा।

११. छक्के मेत्तं कायकम्मं ति मेत्तचित्तेन कत्तब्बं कायकम्मं। वचीकम्ममनोकम्मेसु पि एसेव नयो। इमानि पन भिक्खूनं वसेन आगतानि गिहीसुपि लब्भन्ति। भिक्खूनञ्हि मेत्तचित्तेन आभिसमाचारिकधम्मपूरणं मेत्तं कायकम्मं नाम। गिहीनं चेतियवन्दनत्थाय बोधिवन्दनत्थाय संघनिमन्तनत्थाय गमनं, गामं पिण्डाय पविट्ठं[1] भिक्खुं दिस्वा पच्चुग्गमनं, पत्तप्पटिग्गहणं, आसनपञ्ञापनं, अनुगमनं ति एवमादिकं मेत्तं कायकम्मं नाम।

भिक्खूनं मेत्तचित्तेन आचारपञ्ञत्तिसिक्खापदपञ्ञापनं, कम्मट्ठानकथनं, धम्मदेसना, तेपिटकम्पि बुद्धवचनं मेत्तं वचीकम्मं नाम। गिहीनं चेतियवन्दनत्थाय[2] गच्छाम, बोधिवन्दनत्थाय गच्छाम, धम्मस्सवनं करिस्साम[3], दीपमालपुप्फपूजं करिस्साम, तीणि सुचरितानि समादाय वत्तिस्साम, सलाकभत्तादीनि दस्साम, वस्सवासिकं दस्साम, अज्ज संघस्स चत्तारो पच्चये दस्साम, संघं निमन्तेत्वा खादनीयादीनि संविदहथ, आसनानि पञ्ञापेथ, पानीयं उपट्ठपेथ, संघं पच्चुग्गन्त्वा आनेथ, पञ्ञत्तासने निसीदापेथ, छन्दजाता उस्साहजाता वेय्यावच्चं करोथाति आदिकथनकाले मेत्तं वचीकम्मं नाम।

भिक्खूनं पातोव उट्ठाय सरीरप्पटिजग्गनं[4], चेतियङ्गणवत्तादीनि[5] च कत्वा[5] विवित्तासने निसीदित्वा इमस्मिं विहारे भिक्खू सुखी[6] होन्तु अवेरा अब्यापज्जा ति चिन्तनं मेत्तं मनोकम्मं नाम। गिहीनं 'अय्या सुखी होन्तु, अवेरा अब्यापज्जा' ति चिन्तनं मेत्तं मनोकम्मं नाम।

१. पविट्ठे—सी०, रो०।
२. वन्दनाय—सी०, रो०।
३. कारेस्साम—सी०, रो०।
४. ० कत्वा—सी०, रो०।
५-५. चेतियङ्गणं गन्त्वा वत्तादीनि कत्वा—सी०, रो०।
६. सुखिता—सी०, रो।

अवि चेव रहो चा ति सम्मुखा च परम्मुखा च। तत्थ नवकानं चीवरकम्मादीसु सहायभावगमनं सम्मुखा मेत्तं कायकम्मं नाम। थेरानं पन पादधोवनवन्दनबीजनदानादिभेदं[1] सब्बं सामीचिकम्मं सम्मुखा मेत्तं कायकम्मं नाम। उभयेहिपि दुन्निक्खित्तानं दारुभण्डादीनं तेसु
5 अवमञ्ञं[2] अकत्वा अत्तना दुन्निक्खित्तानं विय पटिसामनं परम्मुखा मेत्तं कायकम्मं नाम।

देवत्थेरो तिस्सत्थेरो ति एवं पग्गय्ह वचनं सम्मुखा मेत्तं वचीकम्मं नाम। विहारे असन्तं पन पटिपुच्छन्तस्स कुहिं अम्हाकं देवत्थेरो, कुहिं अम्हाकं तिस्सत्थेरो, कदा नु खो आगमिस्सती ति एवं ममायनवचनं
10 परम्मुखा मेत्तं वचीकम्मं नाम।

मेत्तासिनेहसिनिद्धानि पन नयनानि उम्मीलेत्वा पसन्नेन मुखेन ओलोकनं सम्मुखा मेत्तं मनोकम्मं नाम। 'देवत्थेरो तिस्सत्थेरो आरोगो होतु, अप्पाबाधो' ति समन्नाहरणं परम्मुखा मेत्तं मनोकम्मं नाम।

लाभा ति चीवरादयो लद्धपच्चया। **धम्मिका** ति कुहनादिभेदं
15 मिच्छाजीवं वज्जेत्वा धम्मेन समेन भिक्खाचारवत्तेन उप्पन्ना। **अन्तमसो पत्तपरियापन्नमत्तम्पी** ति पच्छिमकोटिया पत्ते परियापन्नं पत्तस्स
R. 533 अन्तोगतं द्वितिकटच्छुभिक्खामत्तम्पि। **अप्पटिविभत्तभोगी** ति एत्थ द्वे पटिविभत्ता नाम—आमिसप्पटिविभत्तञ्च, पुग्गलप्पटिविभत्तञ्च। तत्थ— "एत्तकं दस्सामि, एत्तकं न दस्सामी" ति एवं चित्तेन विभजनं
20 **आमिसप्पटिविभत्तं**[3] नाम। "असुकस्स दस्सामि, असुकस्स न दस्सामी" ति एवं चित्तेन विभजनं पन **पुग्गलप्पटिविभत्तं** नाम। तदुभयम्पि अकत्वा यो अप्पटिविभत्तं भुञ्जति, अयं **अप्पटिविभत्तभोगी** नाम।

B. 123 **सीलवन्तेहि सब्रह्मचारीहि साधारणभोगी** (दी० नि० २.६५) ति एत्थ साधारणभोगिनो इदं लक्खणं, यं यं पणीतं लभति, तं तं नेव

१. ० बीजनादिभेदं—सी०, रो०। २. अवञ्ञं—सी०, रो०।
३. आमिसप्पटिविभत्ति—सी०।

लाभेन लाभं निजिगीसनतामुखेन गिहीनं देति, न[1] अत्तना भुञ्जति[2], पटिग्गण्हन्तो च—संघेन साधारणं होतू" ति गहेत्वा घण्टिं पहरित्वा परिभुञ्जितब्बं संघसन्तकं विय पस्सति ।

इमं पन सारणीयधम्मं को पूरेति, को न पूरेती ति ? दुस्सीलो ताव न पूरेति । न हि तस्स सन्तकं सीलवन्ता गण्हन्ति । परिसुद्धसीलो पन वत्तं अखण्डेन्तो पूरेति । तत्रिदं वत्तं—यो हि ओदिस्सकं कत्वा मातु वा पितु वा आचरियुपज्झायादीनं वा देति, सो दातब्बं देति, सारणीयधम्मो पनस्स न होति, पलिबोधजग्गनं नाम होति । सारणीयधम्मो हि मुत्तपलिबोधस्सेव वट्टति । तेन पन ओदिस्सकं देन्तेन गिलानगिलानुपट्ठाकआगन्तुकगमिकानञ्चेव नावपब्बजितस्स च सङ्घाटिपत्तग्गहणं अजानन्तस्स दातब्बं । एतेसं दत्वा अवसेसं थेरासनतो पट्ठाय थोकं[3] अदत्वा यो यत्तकं गण्हाति, तस्स तत्तकं दातब्बं । अवसिट्ठे असति पुन पिण्डाय चरित्वा थेरासनतो पट्ठाय यं यं पणीतं, तं दत्वा सेसं परिभुञ्जितब्बं । सीलवन्तेही ति वचनतो दुस्सीलस्स अदातुम्पि वट्टति ।

अयं पन सारणीयधम्मो सुसिक्खिताय परिसाय सुपूरो होति, नो असिक्खिताय परिसाय । सुसिक्खिताय हि परिसाय यो अञ्ञतो लभति, सो न गण्हाति । अञ्ञतो अलभन्तो पि पमाणयुत्तमेव गण्हाति, नातिरेकं । अयं पन सारणीयधम्मो एवं पुनप्पुनं पिण्डाय चरित्वा लद्धं लद्धं देन्तस्सापि द्वादसहि वस्सेहि पूरति, न ततो ओरं । सचे हि द्वादसमे वस्से सारणीयधम्मपूरको पिण्डपातपूरं पत्तं, आसनसालायं ठपेत्वा नहायितुं गच्छति । संघत्थेरो च कस्सेसो पत्तो ति, "सारणीयधम्मपूरकस्सा" ति वुत्ते "आहरथ नं" ति सब्बं पिण्डपातं विचारेत्वा भुञ्जित्वा च रित्तं पत्तं ठपेति । अथ सो भिक्खु रित्तं पत्तं दिस्वा "मय्हं अनवसेसेत्वाव परिभुञ्जिंसू" ति दोमनस्सं उप्पादेति, सारणीयधम्मो भिज्जति, पुन द्वादसवस्सानि पूरेतब्बो होति । तित्थियपरिवाससदिसो

१. सी०, रो० पोत्थकेसु नत्थि । २. परिभुञ्जति—सी०, रो० ।
३. ० थोकं—सी०, रो० ।

B. 124 हेस, सकिं खण्डे जाते पुन पूरेतब्बोव। यो पन—"लाभा वत मे, सुलद्धं वत मे, यस्स मे पत्तगतं अनापुच्छाव सब्रह्मचारी परिभुञ्जन्ती" ति सोमनस्सं जनेति, तस्स पुण्णो[१] नाम होति।

एवं पूरितसारणीयधम्मस्स पन नेव इस्सा, न मच्छरियं होति।
5 सो[२] मनुस्सानं पियो होति, सुलभपच्चयो च, पत्तगतमस्स दिय्यमानम्पि न खीयति, भाजनीयभण्डट्ठाने अग्गभण्डं लभति, भये वा छातके वा सम्पत्ते देवता उस्सुक्कं आपज्जन्ति।

तत्रिमानि वत्थूनि—सेनगिरिवासी[३] तिस्सत्थेरो किर महागिरिगामं उपनिस्साय विहरति[४]। पञ्ञास महाथेरा नागदीपं चेतियवन्दनत्थाय
10 गच्छन्ता गिरिगामे पिण्डाय चरित्वा किञ्चि अलद्धा निक्खमिंसु। थेरो[५] पन[५] पविसन्तो ते दिस्वा पुच्छि—"लद्धं, भन्ते, ति? विचरिम्ह[६] आवुसो ति। सो तेसं[७] अलद्धभावं ञत्वा आह—"भन्ते यावाहं आगच्छामि, ताव इधेव होथा" ति। मयं, आवुसो, पञ्ञास जना पत्ततेमनमत्तम्पि न लभिम्हा ति। भन्ते, नेवासिका नाम पटिबला
15 होन्ति, अलभन्ता पि भिक्खाचारमग्गसभागं जानन्ती ति। थेरा आगमेसु[८]। थेरो गामं पाविसि। धुरगेहेयेव महाउपासिका खीरभत्तं सज्जेत्वा थेरं ओलोकयमाना ठिता। अथ थेरस्स द्वारं सम्पत्तस्सेव पत्तं पूरेत्वा अदासि। सो तं आदाय थेरानं सन्तिकं गन्त्वा गण्हथ, भन्ते ति, संघत्थेरं आह। थेरो—"अम्हेहि एत्तकेहि किञ्चि न लद्धं, अयं
20 सीघमेव गहेत्वा आगतो, किं नु खो" ति सेसानं मुखं ओलोकेसि। थेरो ओलोकनाकारेनेव ञत्वा "भन्ते, धम्मेन समेन लद्धपिण्डपातो[९], निक्कुक्कुच्चा गण्हथा" ति आदितो पट्ठाय सब्बेसं यावदत्थं दत्वा अत्तना पि यावदत्थं भुञ्जि।

१. पुण्णं—सी०, रो०। २. सी०, रो० पोत्थकेसु नत्थि। ३. सेनागिरिवासी—सी०, रो०। ४. वसति—सी०, रो०। ५-५. तिस्सत्थेरो—सी०, रो०। ६. चरिम्हा—सी०, रो०। ७. सी०, रो० पोत्थकेसु नत्थि। ८. आगमयिंसु—सी०, रो०। ९. ० पातं - स्या०।

अथ नं भत्तकिच्चावसाने थेरा पुच्छिंसु—"कदा, आवुसो, लोकुत्तरधम्मं पटिविज्झी" ति? नत्थि मे, भन्ते, लोकुत्तरधम्मो ति। झानलाभीसि, आवुसो ति? एतम्पि मे, भन्ते, नत्थी ति। ननु, आवुसो, पाटिहारियं ति? सारणीयधम्मो मे, भन्ते, पुरितो, तस्स मे धम्मस्स[1] पूरितकालतो पट्ठाय सचेपि भिक्खुसतसहस्सं होति, पत्तगतं न खीयती ति। ते सुत्वा—"साधु साधु सप्पुरिस, अनुच्छविकमिदं तुय्हं" ति आहंसु। इदं ताव—"पत्तगतं न खीयती" ति एत्थ वत्थु। R. 535 5

अयमेव पन थेरो चेतियपब्बते गिरिभण्डमहापूजाय दानट्ठानं गन्त्वा इमस्मिं ठाने किं वरभण्डं ति पुच्छि। द्वे साटका, भन्ते ति। एते मय्हं पापुणिस्सन्ती ति। तं सुत्वा अमच्चो रञ्ञो आरोचेसि—"एको दहरो एवं वदती" ति। दहरस्स एवं चित्तं, महाथेरानं पन सुखुमसाटका वट्टन्ती ति वत्वा महाथेरानं दस्सामी ति ठपेति[2]। तस्स भिक्खुसंघे पटिपाटिया ठिते देन्तस्स मत्थके ठपितापि ते साटका हत्थं नारोहन्ति। अञ्ञे आरोहन्ति। दहरस्स दानकाले पन हत्थं आरुळ्हा। सो तस्स हत्थे पातेत्वा[3] अमच्चस्स मुखं ओलोकेत्वा दहरं निसीदापेत्वा दानं दत्वा संघं विस्सज्जेत्वा दहरस्स सन्तिके निसीदित्वा—"भन्ते, इमं धम्मं कदा पटिविज्झित्था" ति आह। सो परियायेनापि असन्तं अवदन्तो—"नत्थि मय्हं महाराज लोकुत्तरधम्मो" ति आह। ननु, भन्ते, पुब्बे अवचुत्था ति। आम, महाराज, सारणीयधम्मपूरको अहं[4], तस्स मे धम्मस्स पूरितकालतो पट्ठाय भाजनीयभण्डट्ठाने[5] अग्गभण्डं पापुणाती ति। 'साधु साधु, भन्ते, अनुच्छविकमिदं तुय्हं[6]" ति वन्दित्वा[7] पक्कामि। इदं—"भाजनीयभण्डट्ठाने अग्गभण्डं पापुणाती" ति एत्थ वत्थु। 10 B. 125 15 20

१. सी०, रो० पोत्थकेसु नत्थि।
२. ठपेसि—सी०, रो०।
३. ठपेत्वा—सी०, रो०।
४. मया—स्या०।
५. भाजनीयट्ठाने—सी०, रो०।
६. तुम्हाकं—सी०, रो०।
७. वत्वा—स्या०।

ब्राह्मणतिस्सभये पन भातरगामवासिनो नागत्थेरिया अनारोचेत्वाव पलायिंसु। थेरी पच्चूससमये—"अतिविय अप्पनिग्घोसो गामो, उपधारेथ तावा" ति दहरभिक्खुनियो आह। ता गन्त्वा सब्बेसं गतभावं ञत्वा आगम्म थेरिया आरोचेसुं। सा सुत्वा "मा तुम्हे 5 तेसं गतभावं चिन्तयित्थ, अत्तनो उद्देसपरिपुच्छायोनिसोमनसिकारेसु येव करोथा" ति वत्वा भिक्खाचारवेलायं पारुपित्वा अत्तद्वादसमा गामद्वारे निग्रोधमूले[1] अट्ठासि। रुक्खे अधिवत्थादेवता द्वादसन्नम्पि R. 536 भिक्खुनीनं पिण्डपातं दत्वा "अय्ये, मा अञ्ञत्थ गच्छथ, निच्चं इधेव एथा" ति आह। थेरिया पन कनिट्ठभाता नागत्थेरो नाम अत्थि। 10 सो—"महन्तं भयं, न सक्का इध[2] यापेतुं, परतीरं गमिस्सामी" ति अत्तद्वादसमो व अत्तनो वसनट्ठाना निक्खन्तो थेरिं दिस्वा गमिस्सामी ति भातरगामं आगतो। थेरी—"थेरा आगता" ति सुत्वा तेसं सन्तिकं गन्त्वा किं अय्या ति पुच्छि। सो तं पवत्तिं आचिक्खि। सा—"अज्ज एकदिवसं विहारे येव वसित्वा स्वे गमिस्सथा" ति 15 आह। थेरा विहारं अगमंसु।

B. 126 थेरी पुनदिवसे रुक्खमूले पिण्डाय चरित्वा थेरं उपसङ्कमित्वा "इमं पिण्डपातं परिभुञ्जथा" ति आह। थेरो—"वट्टिस्सति थेरी" ति वत्वा तुण्ही अट्ठासि। धम्मिको तात पिण्डपातो, कुक्कुच्चं अकत्वा परिभुञ्जथा ति। वट्टिस्सति थेरी" ति। सा पत्तं गहेत्वा आकासे खिपि। 20 पत्तो अकासे अट्ठासि। थेरो—"सत्ततालमत्ते ठितम्पि भिक्खुनिमत्तमेव थेरी" ति वत्वा—"भयं नाम सब्बकालं न होति, भये वूपसन्ते अरियवंसं कथयमानो, भो पिण्डपातिक[3], भिक्खुनिभत्तं भुञ्जित्वा पीतिनामयित्था' ति चित्तेन अनुवदियमानो सन्थम्भेतुं न सक्खिस्सामि, अप्पमत्ता होथ थेरियो" ति मग्गं आरुहि।

25 रुक्खदेवता पि—"सचे थेरो थेरिया हत्थतो पिण्डपातं परिभुञ्जिस्सति, न नं निवत्तेस्सामि। सचे न परिभुञ्जिस्सति,

१. निग्रोधरुक्खमूले—सी०, रो०। २. सी०, रो० पोत्थकेसु नत्थि।
३. ० त्वं—सी०, रो०।

निवत्तेस्सामी'' ति चिन्तयमाना हुत्वा थेरस्स गमनं दिस्वा रुक्खा ओरुय्ह पत्तं, भन्ते, देथा ति पत्तं गहेत्वा थेरं रुक्खमूलं येव आनेत्वा आसनं पञ्ञपेत्वा पिण्डपातं दत्वा कतभत्तकिच्चं पटिञ्ञं कारेत्वा द्वादस भिक्खुनियो द्वादस भिक्खू च सत्तवस्सानि उपट्ठहि। इदं— ''देवता उस्सुक्कं आपज्जन्ती'' ति एत्थ वत्थु। तत्र हि थेरी 5 सारणीयधम्मपूरिका अहोसि।

अखण्डानी ति आदीसु यस्स सत्तसु आपत्तिक्खन्धेसु आदिम्हि वा अन्ते वा सिक्खापदं भिन्नं होति, तस्स सीलं परियन्ते छिन्नसाटको विय **खण्डं** नाम। यस्स पन वेमज्झे भिन्नं, तस्स मज्झे छिद्दसाटको विय **छिद्दं** नाम होति। यस्स पन पटिपाटिया द्वे तीणि भिन्नानि, तस्स 10 पिट्ठियं वा कुच्छियं वा उट्ठितेन विसभागवण्णेन काळरत्तादीनं अञ्ञतरवण्णा गावी विय **सबलं** नाम होति। यस्स पन अन्तरन्तरा[1] विसभागबिन्दुचित्रा गावी विय **कम्मासं** नाम होति। यस्स पन R. 537 सब्बेनसब्बं अभिन्नानि, तस्स तानि सीलानि **अखण्डानि अच्छिद्दानि असबलानि अकम्मासानि** नाम होन्ति। तानि पनेतानि तण्हा- 15 दासब्यतो मोचेत्वा भुजिस्सभावकरणतो **भुजिस्सानि**। बुद्धादीहि विञ्ञूहि पसत्थत्ता **विञ्ञुपसत्थानि**। तण्हादिट्ठीहि अपरामट्ठत्ता— ''इदं नाम त्वं आपन्नपुब्बो'' ति केनचि परामट्ठुं असक्कुणेय्यत्ता च **अपरामट्ठानि**। उपचारसमाधिं वा अप्पनासमाधिं वा संवत्तयन्ती ति **समाधिसंवत्तनिकानी** ति वुच्चन्ति। 20

सीलसामञ्ञगता विहरिस्सन्ती ति तेसु तेसु दिसाभागेसु B. 127 विहरन्तेहि भिक्खूहि सद्धिं समानभावूपगतसीला विहरिस्सन्ति। सोतापन्नादीनञ्हि सीलं समुद्दन्तरेपि देवलोकेपि वसन्तानं अञ्ञेसं सोतापन्नादीनं सीलेन समानमेव होति, नत्थि मग्गसीले नानत्तं। तं सन्धायेतं वुत्तं। 25

१. अन्तरन्तराभिन्नानि, तस्स अन्तरन्तरा —सी०, रो०।

यायं दिट्ठी ति मग्गसम्पयुत्ता सम्मादिट्ठि। **अरिया** ति निद्दोसा। **निय्याती** ति निय्यानिका। **तक्करस्सा** ति यो तथाकारी होति। **सब्बदुक्खक्खयाया** ति सब्बदुक्खक्खयत्थं। **दिट्ठिसामञ्ञगता** ति समानदिट्ठिभावं उपगता हुत्वा विहरिस्सन्ति। **वुद्धियेवा** ति एवं
5 विहरन्तानं वुद्धियेव भिक्खूनं पाटिकङ्खा, नो परिहानी ति।

१२. **एतदेव बहुलं** (दी० नि० २.६५) ति आसन्नपरिनिब्बानत्ता भिक्खू ओवदन्तो पुनप्पुनं एतंयेव धम्मिं कथं करोति। **इति सीलं** ति एवं सीलं, एत्तकं सीलं। एत्थ चतुपारिसुद्धिसीलं सीलं, चित्तेकग्गता समाधि, विपस्सनापञ्ञा पञ्ञा ति वेदितब्बा। **सीलपरिभावितो** ति
10 आदीसु यस्मिं सीले ठत्वाव मग्गसमाधिं फलसमाधिं निब्बत्तेन्ति। एसो तेन सीलेन परिभावितो महप्फलो होति, महानिसंसो। यम्हि समाधिम्हि ठत्वा मग्गपञ्ञं फलपञ्ञं निब्बत्तेन्ति, सा तेन समाधिना परिभाविता महप्फला होति, महानिसंसा। याय पञ्ञाय ठत्वा मग्गचित्तं फलचित्तं निब्बत्तेन्ति, तं ताय परिभावितं सम्मदेव
15 **आसवेहि विमुच्चति**।

यथाभिरन्तं ति बुद्धानं[1] अनभिरतिपरितस्सितं[2] नाम नत्थि, यथारुचि यथाअज्झासयं ति पन वुत्तं होति। **आयामा** ति एहियाम। "अयामा" तिपि पाठो, गच्छामा ति अत्थो।

R. 538 **आनन्दा** ति भगवा सन्तिकावचरत्ता थेरं आलपति। थेरो पन—
20 "गण्हथावुसो पत्तचीवरानि, भगवा असुकट्ठानं गन्तुकामो" ति भिक्खूनं आरोचेति।

११४-११५. **अम्बलट्ठिकागमनं** उत्तानमेव। **अथ खो आयस्मा सारिपुत्तो** (दी० नि० २.६६) ति आदि सम्पसादनीये वित्थारितं।

४. दुस्सीलआदीनववण्णना

B. 128 १८. पाटलिगमने[3] **आवसथागारं** (दी० नि० २.६८) ति
25 आगन्तुकानं आवसथगेहं पाटलिगामे किर निच्चकालं द्विन्नं राजूनं सहायका

१. बुद्धादीनं—स्या०। २. ० परितस्सना—सी०, रो०।
३. पाटलिगामगमने—सी०, रो०।

आगन्त्वा कुलानि गेहतो नीहरित्वा मासम्पि अड्ढमासम्पि वसन्ति। ते मनुस्सा निच्चुपद्दुता—"एतेसं आगतकाले वसनट्ठानं भविस्सती" ति नगरमज्झे महतिं सालं करित्वा तस्सा एकस्मिं पदेसे भण्डपटिसामनट्ठानं, एकस्मिं पदेसे निवासट्ठानं अकंसु। ते—"भगवा आगतो" ति सुत्वाव—"अम्हेहि गन्त्वा पि भगवा आनेतब्बो सिया, सो सयमेव अम्हाकं वसनट्ठानं सम्पत्तो, अज्ज भगवन्तं आवसथे मङ्गलं वदापेस्सामा" ति एतदत्थमेव उपसङ्कमन्ता। तस्मा एवमाहंसु। **येन आवसथागारं** ति ते किर—"बुद्धा नाम अरञ्ञज्झासया अरञ्ञारामा अन्तोगामे वसितुं इच्छेय्युं वा नो वा" ति भगवतो मनं अजानन्ता आवसथागारं अप्पटिजग्गित्वाव आगमंसु। इदानि भगवतो मनं ञत्वा पुरेतरं गन्त्वा पटिजग्गिस्सामा ति येनावसथागारं, तेनुपसङ्कमिंसु। **सब्बसन्थरिं** यथा सब्बं सन्थतं होति, एवं सन्थरिं।

१९. **दुस्सीलो** ति असीलो निस्सीलो। **सीलविपन्नो** ति विपन्नसीलो भिन्नसंवरो। **पमादाधिकरणं** ति पमादकारणा।

इदञ्च सुत्तं गहट्ठानं वसेन आगतं पब्बजितानम्पि पन लब्भतेव। गहट्ठो हि येन येन सिप्पट्ठानेन जीवितं कप्पेति—यदि कसिया, यदि वणिज्जाय। पाणातिपातादिवसेन पमत्तो तं तं यथाकालं[1] सम्पादेतुं न सक्कोति, अथस्स मूलम्पि विनस्सति। माघातकाले पाणातिपातं पन अदिन्नादानादीनि[2] च करोन्तो दण्डवसेन महतिं भोगजानिं निगच्छति। पब्बजितो दुस्सीलो च पमादकारणा सीलतो बुद्धवचनतो झानतो सत्तअरियधनतो च जानिं निगच्छति।

गहट्ठस्स—"असुको नाम असुककुले जातो दुस्सीलो पापधम्मो परिच्चत्तइधलोकपरलोको सलाकमत्तमत्तम्पि न देती" ति चतुपरिसमज्झे पापको कित्तिसद्दो अब्भुग्गच्छति। पब्बजितस्स वा—"असुको नाम नासक्खि सीलं रक्खितुं, न बुद्धवचनं उग्गहेतुं, वेज्जकम्मादीहि जीवति, छहि अगारवेहि समन्नागतो" ति एवं अब्भुग्गच्छति।

1. यथाकाले—सी०, रो०। 2. अदिन्नादानं च—स्या०।

अविसारदो ति गहट्ठो ताव—"अवस्सं बहूनं सन्निपातट्ठाने केचि मम कम्मं जानिस्सन्ति, अथ मं निग्गण्हिस्सन्ती" ति वा, "राजकुलस्स वा दस्सन्ती" ति सभयो उपसङ्कमति, मङ्कुभूतो पत्तक्खन्धो अधोमुखो अङ्गुलिकेन भूमिं कसन्तो निसीदति, विसारदो हुत्वा कथेतुं न 5 सक्कोति। पब्बजितो पि—"बहू भिक्खू सन्निपतिता, अवस्सं कोचि[1] मम कम्मं जानिस्सति,[2] अथ मे उपोसथम्पि पवारणम्पि ठपेत्वा सामञ्ञतो चावेत्वा निक्कड्ढिस्सन्ती" ति सभयो उपसङ्कमति, विसारदो हुत्वा कथेतुं न सक्कोति। एकच्चो पन दुस्सीलो पि दप्पितो विय विचरति। सोपि अज्झासयेन मङ्कु होतियेव।

10 **सम्मूळ्हो कालं करोती** ति तस्स हि मरणमञ्चे निपन्नस्स दुस्सीलकम्मे समादाय पवत्तितट्ठानं आपाथमागच्छति। सो उम्मीलेत्वा इधलोकं पस्सति, निमीलेत्वा परलोकं पस्सति, तस्स चत्तारो अपाया उपट्ठहन्ति, सत्तिसतेन सीसे पहरियमानो विय होति। सो—"वारेथ, वारेथा" ति विरवन्तो मरति। तेन वुत्तं—"सम्मूळ्हो कालं करोती" 15 ति। पञ्चमपदं उत्तानमेव।

२०. **आनिसंसकथा** वुत्तविपरियायेन वेदितब्बा।

२१. **बहुदेव रत्तिं धम्मिया कथाया** ति अञ्ञाय पाळिमुत्तकाय धम्मिकथाय चेव आवसथानुमोदनाय च आकासगङ्गं ओतारेन्तो विय योजनप्पमाणं महामधुं पीळेत्वा मधुपानं पायेन्तो विय बहुदेव रत्तिं 20 सन्दस्सेत्वा[3] सम्पहंसेत्वा उय्योजेसि। **अभिक्कन्ता** ति अतिक्कन्ता खीणा खयवयं उपेता। **सुञ्ञागारं** ति पाटियेक्कं सुञ्ञागारं नाम नत्थि। तत्थेव पन एकपस्से साणिपाकारेन परिक्खिपित्वा—"इध सत्था विस्समिस्सती" ति मञ्चकं पञ्ञपेसुं। भगवा—"चतूहिपि R. 540 इरियापथेहि परिभुत्तं एतेसं महप्फलं भविस्सती" ति तत्थ सीहसेय्यं 25 कप्पेसि। तं सन्धाय वुत्तं—"सुञ्ञागारं पाविसी" ति।

१. केचि—सी॰, रो॰। २. जानिस्सन्ति—सी॰, रो॰।
३. सम्पादेत्वा—स्या॰।

५. पाटलिपुत्तनगरमापनवण्णना

२२. सुनिधवस्सकारा (दी॰नि॰ २.७०)ति सुनिधो च वस्सकारो च द्वे ब्राह्मणा। मगधमहामत्ता ति मगधरञ्ञो महामत्ता महाअमच्चा, मगधरट्ठे वा महामत्ता महतिया इस्सरियमत्ताय समन्नागता ति मगधमहामत्ता। पाटलिगामे नगरं ति पाटलिगामं नगरं कत्वा मापेन्ति। वज्जीनं पटिबाहाया ति वज्जिराजकुलानं आयमुखपच्छिन्दनत्थं। सहस्सेवा ति एकेकवग्गवसेन सहस्सं सहस्सं हुत्वा। वत्थूनी ति घरवत्थूनि। चित्तानि नमन्ति निवेसनानि मापेतुं ति रञ्ञञ्च राजमहामत्तानञ्च निवेसनानि मापेतुं वत्थुविज्जापाठकानं चित्तानि नमन्ति। ते किर अत्तनो सिप्पानुभावेन हेट्ठा पथवियं तिसहत्थमत्ते ठाने—"इध नागग्गाहो, इध यक्खग्गाहो, इध भूतग्गाहो, पासाणो वा खाणुको वा अत्थी" ति पस्सन्ति। ते तदा सिप्पं जप्पित्वा देवताहि सद्धिं मन्तयमाना विय मापेन्ति। अथवा नेसं सरीरे देवता अधिमुच्चित्वा तत्थ तत्थ निवेसनानि मापेतुं चित्तं नामेन्ति। ता चतूसु कोणेसु खाणुके कोट्टेत्वा वत्थुम्हि गहितमत्ते पटिविगच्छन्ति। सद्धानं कुलानं सद्धा देवता तथा करोन्ति, अस्सद्धानं कुलानं अस्सद्धा देवताव। किं कारणा? सद्धानञ्हि एवं होति—"इध मनुस्सा निवेसनं[1] मापेत्वा पठमं भिक्खुसंघं निसीदापेत्वा मङ्गलं वड्ढापेस्सन्ति। अथ मयं सीलवन्तानं, दस्सनं, धम्मकथं पञ्हाविस्सज्जनं अनुमोदनञ्च सोतुं लभिस्साम, मनुस्सा दानं दत्वा अम्हाकं पत्तिं दस्सन्ती" ति।

तावतिंसेही ति यथा हि एकस्मिं कुले एकं पण्डितमनुस्सं, एकस्मिं वा विहारे एकं बहुस्सुतभिक्खुं उपादाय—"असुककुले मनुस्सा पण्डिता, असुकविहारे भिक्खू बहुस्सुता" ति सद्दो अब्भुग्गच्छति, एवमेव सक्कं देवराजानं विस्सकम्मञ्च देवपुत्तं उपादाय—"तावतिंसा पण्डिता" ति सद्दो अब्भुग्गतो। तेनाह—"तावतिंसेही" ति। तावतिंसेहि सद्धिं मन्तेत्वापि विय मापेन्ती ति अत्थो।

1. निवेसनानि—सी॰, रो॰।

यावता अरियं आयतनं ति यत्तकं अरियकमनुस्सानं ओसरणट्ठानं R. 541 नाम अत्थि। **यावता वणिप्पथो** ति यत्तकं वाणिजानं आभतभण्डस्स R. 131 रासिवसेनेव कयविक्कयट्ठानं नाम, वाणिजानं वसनट्ठानं वा अत्थि। **इदं अग्गनगरं** ति तेसं अरियायतनवणिप्पथानं इदं अग्गनगरं जेट्ठकं पामोक्खं 5 भविस्सती ति। **पुटभेदनं** ति भण्डपुटभेदनट्ठानं, भण्डभण्डिकानं मोचनट्ठानं ति वुत्तं होति। सकलजम्बुदीपे अलद्धभण्डम्पि हि इधेव लभिस्सन्ति, अञ्ञत्थ विक्कयेन अगच्छन्तम्पि च इधेव गमिस्सति। तस्मा इधेव पुटं भिन्दिस्सन्ती ति अत्थो। चतूसु हि द्वारेसु चत्तारि सभायं एकं ति एवं दिवसे दिवसे पञ्चसतसहस्सानि उट्ठहिस्सन्ती ति 10 दस्सेति।

अग्गितो वा ति आदीसु चकारत्थो वा-सद्दो। अग्गिना च उदकेन च मिथुभेदेन च[1] नस्सिस्सती ति अत्थो। एककोट्ठासो अग्गिना नस्सिस्सति, निब्बापेतुं न सक्खिस्सन्ति। एकं गङ्गा गहेत्वा गमिस्सति। एको—"इमिना अकथितं अमुस्स, अमुना अकथितं 15 इमस्सा" ति वदन्तानं पिसुणवाचानं वसेन भिन्नानं मनुस्सानं अञ्ञमञ्ञभेदेनेव नस्सिस्सती ति अत्थो। इति वत्वा भगवा पच्चूसकाले गङ्गाय तीरं गन्त्वा कतमुखधोवनो भिक्खाचारवेलं आगमयमानो निसीदि।

२३. सुनिधवस्सकारा पि—"अम्हाकं राजा समणस्स गोतमस्स 20 उपट्ठाको, सो अम्हे पुच्छिस्सति, 'सत्था किर पाटलिगामं अगमासि, तस्स सन्तिकं उपसङ्कमित्थ, न उपसङ्कमित्था' ति। उपसङ्कमिम्हा ति च वुत्ते—'निमन्तयित्थ, न निमन्तयित्था' ति च पुच्छिस्सति। न निमन्तयिम्हा ति च वुत्ते अम्हाकं दोसं आरोपेत्वा निग्गण्हिस्सति। इदञ्चापि मयं आगतट्ठाने[2] नगरं मापेम। समणस्स खो पन गोतमस्स 25 गतगतट्ठाने काळकण्णिसत्ता पटिक्कमन्ति। तं मयं नगरमङ्गलं

१. वा—स्या०। २. असुकट्ठाने—रो०।

वदापेस्सामा"[१] ति चिन्तेत्वा सत्थारं उपसङ्कमित्वा निमन्तयिंसु। तस्मा—"अथ खो सुनिधवस्सकारा" तिआदि वुत्तं।

पुब्बण्हसमयं ति पुब्बण्हकाले। **निवासेत्वा** ति गामप्पवेसन-नीहारेन निवासनं निवासेत्वा कायबन्धनं बन्धित्वा। **पत्तचीवरमादाया** ति पत्तञ्च चीवरञ्च आदियित्वा कायप्पटिबद्धं कत्वा। R. 542 5

सीलवन्तेत्था ति सीलवन्ते[२] एत्थ। **सञ्ञते** ति कायवाचामनेहि सञ्ञते।

तासं दक्खिणमादिसे ति संघस्स दिन्ने चत्तारो पच्चये तासं घरदेवतानं आदिसेय्य[३], पत्तिं ददेय्य। **पूजिता पूजयन्ती** ति—"इमे मनुस्सा अम्हाकं ञातकापि न होन्ति, एवम्पि नो पत्तिं देन्ती" ति अरक्खं सुसंविहितं करोथा ति सुट्ठु आरक्खं करोन्ति। **मानिता मानयन्ती** ति कालानुकालं बलिकम्मकरणेन मानिता। "एते मनुस्सा अम्हाकं ञातकापि न होन्ति, चतुमासछमासन्तरे नो बलिकम्मं करोन्ती" ति मानेन्ति, मानेन्तियो[४] उप्पन्नं परिस्सयं हरन्ति। B. 132 10

ततो नं ति ततो नं पण्डितजातिकं मनुस्सं। **ओरसं** ति उरे ठपेत्वा संवड्ढितं। यथा माता ओरसं पुत्तं अनुकम्पति, उप्पन्नपरिस्सय-हरणत्थमेव तस्स वायमति, एवं अनुकम्पन्ती ति अत्थो। **भद्रानि पस्सती** ति सुन्दरानि पस्सति। 15

२४. **उळुम्पं** (दी० नि० २.७२) ति पारगमनत्थाय आणियो कोट्टेत्वा कतं। **कुल्लं** ति वल्लिआदीहि बन्धित्वा कतं। 20

"ये तरन्ति अण्णवं" ति गाथाय **अण्णवं** ति सब्बन्तिमेन परिच्छेदेन योजनमत्तं गम्भीरस्स च पुथुलस्स च उदकट्ठानस्सेतं अधिवचनं। **सरं** ति इध नदी अधिप्पेता। इदं वुत्तं होति। ये गम्भीरवित्थतं तण्हासरं तरन्ति, ते अरियमग्गसङ्खातं सेतुं कत्वान।

१. वाचापेस्सामा ति—सी०, रो०। २. सीलवन्तो—सी०, रो०।
३. अपदिसेय्य—सी०, रो०। ४. सी०, रो० पोत्थकेसु नत्थि।

विसज्ज पल्ललानि अनामसित्वा उदकभरितानि निन्नट्ठानानि। अयं पन इदं अप्पमत्तकं[1] तरितुकामोपि कुल्लम्हि जनो पबन्धति। बुद्धा च बुद्धसावका च विनायेव कुल्लेन तिण्णा मेधाविनो जना ति।

पठमभाणवारवण्णना निट्ठिता

६. अरियसच्चकथावण्णना

२५. **कोटिगामो**—ति महापनादस्स पासादकोटियं कतगामो। 5 **अरियसच्चानं** ति अरियभावकरानं सच्चानं। **अननुबोधा** ति अबुज्झनेन अजाननेन। **अप्पटिवेधा** ति अप्पटिविज्झनेन। **सन्धावितं** ति भवतो R. 543 भवं गमनवसेन सन्धावितं। **संसरितं** ति पुनप्पुनं गमनागमनवसेन B. 133 संसरितं। **ममञ्चेव तुम्हाकञ्चा** ति मया च तुम्हेहि च। अथवा सन्धावितं संसरितं ति सन्धावनं संसरणं ममञ्चेव तुम्हाकञ्च अहोसी 10 ति एवमेत्थ अत्थो वेदितब्बो। **भवनेत्ति समूहता** ति भवतो भवं नयनसमत्था तण्हारज्जु सुट्ठु हता छिन्ना अप्पवत्तिकता।

७. अनावत्तिधम्मसम्बोधिपरायणवण्णना

२६. **नातिका** (दी० नि० २.७३) ति एकं तळाकं निस्साय द्विन्नं चूळपितुमहापितुपुत्तानं द्वे गामा। **नातिके** ति एकस्मिं ञातिगामके। **गिञ्जकावसथे** ति इट्ठकामये आवसथे।

15 १५७. **ओरम्भागियानं** ति हेट्ठाभागियानं, कामभवेयेव पटिसन्धिग्गाहापकानं ति अत्थो। ओरं ति लद्धनामेहि वा तीहि **मग्गेहि** पहातब्बानी ति पि ओरम्भागियानि। तत्थ कामच्छन्दो, ब्यापादो ति इमानि द्वे समापत्तिया वा अविक्खम्भितानि, मग्गेन वा असमुच्छिन्नानि निब्बत्तवसेन उद्धं भागं रूपभवञ्च अरूपभवञ्च गन्तुं न देन्ति। सक्काय- 20 दिट्ठिआदीनि तीणि तत्थ निब्बत्तम्पि आनेत्वा पुन इधेव निब्बत्तापेन्ती

[1] ० उदकं—सी०, रो०।

ति सब्बानि पि ओरम्भागियानेव। **अनावत्तिधम्मा** ति पटिसन्धिवसेन अनागमनसभावा।

रागदोसमोहानं तनुत्ता ति एत्थ कदाचि करहचि[1] उप्पत्तिया च, परियुट्ठानमन्दताय चा ति द्वेधापि तनुभावो वेदितब्बो। सकदागामिस्स हि पुथुज्जनानं विय अभिण्हं रागादयो नुप्पज्जन्ति, कदाचि करहचि उप्पज्जन्ति। उप्पज्जमाना च पुथुज्जनानं विय बहलबहला नुप्पज्जन्ति, मच्छिकपत्तं विय तनुकतनुका उप्पज्जन्ति। दीघभाणकतिपिटकमहासीवत्थेरो पनाह—"यस्मा सकदागामिस्स पुत्तधीतरो होन्ति, ओरोधा च होन्ति, तस्मा बहला[2] किलेसा। इदं पन भवतनुकवसेन कथितं" ति। तं अट्ठकथायं—"सोतापन्नस्स सत्तभवे ठपेत्वा अट्ठमे भवे भवतनुकं नत्थि। सकदागामिस्स द्वे भवे ठपेत्वा पञ्चसु भवेसु भवतनुकं नत्थि। अनागामिस्स रूपारूपभवे[3] ठपेत्वा कामभवे भवतनुकं नत्थि। खीणासवस्स किस्मिञ्चि भवे भवतनुकं नत्थी" ति वुत्तत्ता पटिक्खित्तं होति।

इमं लोकं ति इमं कामावचरलोकं सन्धाय वुत्तं। अयञ्चेत्थ अधिप्पायो। सचे हि मनुस्सेसु सकदागामिफलं पत्तो देवेसु निब्बत्तित्वा अरहत्तं सच्छिकरोति, इच्चेतं कुसलं। असक्कोन्तो पन अवस्सं मनुस्सलोकं आगन्त्वा सच्छिकरोति। देवेसु सकदागामिफलं पत्तो पि सचे मनुस्सेसु निब्बत्तित्वा अरहत्तं सच्छिकरोति, इच्चेतं कुसलं। असक्कोन्तो पन अवस्सं देवलोकं गन्त्वा सच्छिकरोती ति।

अविनिपातधम्मो ति एत्थ विनिपतनं विनिपातो, नास्स विनिपातो धम्मो ति अविनिपातधम्मो। चतूसु अपायेसु अविनिपातधम्मो चतूसु अपायेसु अविनिपातसभावो ति अत्थो। **नियतो** ति धम्मनियामेन नियतो। **सम्बोधिपरायणो** ति उपरिमग्गत्तयसङ्खाता सम्बोधि परं अयनं अस्स गति पटिसरणं अवस्सं पत्तब्बा ति सम्बोधिपरायणो।

१. सी० पोत्थके नत्थि। २. ० व—सी०।
३. ० भवं—सी०, रो०।

८. धम्मादासधम्मपरियायवण्णना

२८. **विहेसा** (दी० नि० २.७४) ति तेसं तेसं ञाणगतिं ञाणूपपत्तिं ञाणाभिसम्परायं ओलोकेन्तस्स कायकिलमथोव एस, आनन्द, तथागतस्सा ति दीपेति, चित्तविहेसा पन बुद्धानं नत्थि। **धम्मादासं** ति धम्ममयं आदासं। **येना** ति येन धम्मादासेन समन्नागतो। **खीणापायदुग्गतिविनिपातो** ति इदं निरयादीनं येव वेवचनवसेन वुत्तं। निरयादयो हि वड्ढिसङ्खाततो अयतो अपेतत्ता अपाया। दुक्खस्स गति पटिसरणं ति **दुग्गति**। ये[1] दुक्कटकारिनो, ते[2] एत्थ विवसा निपतन्ती ति **विनिपाता**।

अवेच्चप्पसादेना ति बुद्धगुणानं यथाभूततो ञातत्ता अचलेन अच्चुतेन पसादेन। उपरि पदद्वयेपि एसेव नयो। **इतिपि सो भगवा** ति आदीनं पन वित्थारो विसुद्धिमग्गे वुत्तो।

अरियकन्तेही ति अरियानं कन्तेहि पियेहि मनापेहि। पञ्च सीलानि हि अरियसावकानं कन्तानि होन्ति, भवन्तरेपि अविजहितब्बतो। तानि सन्धायेतं वुत्तं। सब्बो पि पनेत्थ संवरो लब्भति येव।

सोतापन्नोहमस्मी ति इदं देसनासीसमेव। सकदागामिआदयो पि पन सकदागामीहमस्मी ति आदिना नयेन ब्याकरोन्ति येवा ति। सब्बेसं पि हि सिक्खापदाविरोधेन युत्तट्ठाने ब्याकरणं अनुञ्ञातमेव होति।

९. अम्बपालीगणिकावत्थुवण्णना

B. 135 R. 545

३१. **वेसालियं विहरती** ति एत्थ तेन खो पन समयेन वेसाली इद्धा चेव होति फीता चाति आदिना खन्धके वुत्तनयेन वेसालिया सम्पन्नभावो वेदितब्बो। **अम्बपालिवने** ति अम्बपालिया गणिकाय उय्यानभूते अम्बवने। **सतो भिक्खवे** ति भगवा अम्बपालिदस्सने सतिपच्चुपट्ठानत्थं[3] विसेसतो इध सतिपट्ठानदेसनं आरभि। तत्थ सरती

१. सी० पोत्थके नत्थि। २. रो० पोत्थके नत्थि।
३. ० पच्चुपट्ठापनत्थं—सी०, रो०।

ति सतो। सम्पजानाती ति सम्पजानो। सतिया च सम्पजञ्ञेन च समन्नागतो हुत्वा विहरेय्या ति अत्थो। काये कायानुपस्सी ति आदीसु यं वत्तब्बं, तं महासतिपट्ठाने वक्खाम। R. 546

नीला ति इदं सब्बसङ्गाहकं। नीलवण्णा तिआदि तस्सेव विभागदस्सनं। तत्थ न तेसं पकतिवण्णो नीलो, नीलविलेपनविलित्तत्ता 5 पनेतं वुत्तं। नीलवत्था ति पटदुकूलकोसेय्यादीनिपि तेसं नीलानेव होन्ति। नीलालङ्कारा ति नीलमणीहि नीलपुप्फेहि अलङ्कता, रथापि तेसं नीलमणिखचिता नीलवत्थपरिक्खित्ता नीलद्धजा नीलवम्मिकेहि[1] नीलाभरणेहि नीलअस्सेहि युत्ता, पतोदलट्ठियो पि नीलायेवा ति। इमिना नयेन सब्बपदेसु अत्थो वेदितब्बो। परिवट्टेसी ति पहरि। किं जे 10 अम्बपाली ति जे ति आलपनवचनं, भो ति अम्बपालि, किं कारणा ति वुत्तं होति। "किञ्चा" ति पि पाठो, अयमेवेत्थ अत्थो। साहारं ति सजनपदं। अङ्गुलिं फोटेसुं ति अङ्गुलिं चालेसुं। अम्बकाया ति इत्थिकाय।

येसं ति करणत्थे सामिवचनं, येहि अदिट्ठा ति वुत्तं होति। 15 ओलोकेथा ति पस्सथ। अवलोकेथा ति पुनप्पुनं पस्सथ। उपसंहरथा ति उपनेथ। इमं लिच्छविपरिसं तुम्हाकं चित्तेन तावतिंससदिसं[2] उपसंहरथ उपनेथ अल्लीयापेथ। यथेव तावतिंसा अभिरूपा पासादिका नीलादिनानावण्णा, एवमिमे लिच्छविराजानोपी ति तावतिंसेहि समके कत्वा पस्सथा ति अत्थो। 20

कस्मा पन भगवा अनेकसतेहि सुत्तेहि चक्खादीनं रूपादीसु निमित्तग्गाहं पटिसेधेत्वा इध महन्तेन उस्साहेन निमित्तग्गाहे उय्योजेती ति[3]? हितकामताय। तत्र किर एकच्चे भिक्खू ओसन्नवीरिया, तेसं सम्पत्तिया पलोभेन्तो—"अप्पमादेन समणधम्मं करोन्तानं एवरूपा P. 1:6 इस्सरियसम्पत्ति सुलभा" ति समणधम्मे उस्साहजननत्थं आह। 25

१. नीलवम्मवम्मितेहि—सी०, रो०। २. तावतिंसपरिसं—सी०, रो०।
३. नियोजेती ति—सी०, रो०।

R. 546 अनिच्चलक्खणविभावनत्थञ्चा पि एवमाह । नचिरस्सेव हि सब्बेपि मे अजातसत्तुस्स वसेन विनासं पापुणिस्सन्ति । अथ नेसं रज्जसिरिसम्पत्तिं दिस्वा ठितभिक्खू—"तथारूपायपि नाम सिरिसम्पत्तिया विनासो पञ्ञायिस्सती" ति अनिच्चलक्खणं भावेत्वा सह पटिसम्भिदाहि अरहत्तं 5 पापुणिस्सन्ती ति अनिच्चलक्खणविभावनत्थं आह ।

अधिवासेतू (दी० नि० २.७७) ति अम्बपालिया निमन्तितभावं ञत्वा पि कस्मा निमन्तेन्ती ति ? असद्दहनताय चेव वत्तसीसेन च । सा हि धुत्ता इत्थी अनिमन्तेत्वा पि निमन्तेमी ति[1] वदेय्या ति तेसं चित्तं अहोसि, धम्मं सुत्वा गमनकाले च निमन्तेत्वा गमनं नाम मनुस्सानं 10 वत्तमेव ।

१०. वेळुवगामवस्सूपगमनवण्णना

३३. वेळुवगामको (दी० नि० २.७९) ति वेसालिया समीपे वेळुवगामो[2] । यथामित्तं ति आदीसु मित्ता मित्ताव । सन्दिट्ठा ति तत्थ तत्थ सङ्गम्म दिट्ठमत्ता नातिदळ्हमित्ता । सम्भत्ता ति सुट्ठु भत्ता सिनेहवन्तो दळ्हमित्ता । येसं येसं यत्थ यत्थ एवरूपा भिक्खू अत्थि, ते 15 ते तत्थ तत्थ वस्सं उपेथा ति अत्थो । कस्मा एवमाह ? तेसं फासुविहारत्थाय । तेसञ्हि वेळुवगामके सेनासनं नप्पहोति, भिक्खापि मन्दा । समन्ता वेसालिया पन बहूनि सेनासनानि, भिक्खा पि सुलभा, तस्मा एवमाह । अथ कस्मा—"यथासुखं गच्छथा" ति न विस्सज्जेसि ? तेसं अनुकम्पाय । एवं किरस्स अहोसि—"अहं दसमासमत्तं ठत्वा 20 परिनिब्बायिस्सामि । सचे इमे दूरं गच्छिस्सन्ति, मम[3] परिनिब्बानकाले दट्ठुं न सक्खिस्सन्ति । अथ नेसं—"सत्था परिनिब्बायन्तो अम्हाकं सतिमत्तम्पि न अदासि, सचे जानेय्याम, एवं न दूरे वसेय्यामा" ति विप्पटिसारो भवेय्य । वेसालिया समन्ता पन वसन्ता मासस्स अट्ठ वारे

१. निमन्तेसि ति—सी०, रो० । २. पावगामो—सी०, रो०; पाटलिगामो—स्या० ।
३. मं—सी०, स्या०, रो० ।

आगन्त्वा धम्मं सुणिस्सन्ति, सुगतोवादं लभिस्सन्ती" ति न विस्सज्जेसि ।

३४. खरो ति फरुसो । आबाधो ति विसभागरोगो । बाळ्हा ति बलवतियो । मारणन्तिका ति मरणन्तं[1] मरणसन्तिकं पापनसमत्था । सतो सम्पजानो अधिवासेसी ति सतिं सूपट्ठितं कत्वा ञाणेन 5 परिच्छिन्दित्वा अधिवासेसि । अविहञ्ञमानो ति वेदनानुवत्तनवसेन अपरापरं परिवत्तनं अकरोन्तो अपीळियमानो अदुक्खियमानोव B. 137 अधिवासेसि । अनामन्तेत्वा ति अजानापेत्वा । अनपलोकेत्वा ति न R. 547 अपलोकेत्वा ओवादानुसासनिं अदत्वा ति वुत्तं होति । वीरियेना ति पुब्बभागवीरियेन चेव फलसमापत्तिवीरियेन च । पटिपणामेत्वा ति 10 विक्खम्भेत्वा । जीवितसङ्खारं ति एत्थ जीवितम्पि जीवितसङ्खारो । येन जीवितं सङ्खरियति छिज्जमानं घटेत्वा ठपेयति, सो[2] फलसमापत्तिधम्मो पि जीवितसङ्खारो । सो इध अधिप्पेतो । अधिट्ठाया ति अधिट्ठहित्वा पवत्तेत्वा, जीवितट्ठपनसमत्थं फलसमापत्तिं समापज्जेय्यं ति अयमेत्थ सङ्खेपत्थो । 15

किं पन भगवा इतो पुब्बे फलसमापत्तिं न समापज्जती ति ? समापज्जति । सा पन खणिकसमापत्ति । खणिकसमापत्ति च अन्तोसमापत्तियंयेव वेदनं विक्खम्भोति, समापत्तितो वुट्ठितमत्तस्स कट्ठपातेन वा कठलपातेन वा छिन्नसेवालो विय उदकं पुन सरीरं वेदना अज्झोत्थरति । या पन रूपसत्तकं अरूपसत्तकञ्च निग्गुम्बं निज्जटं कत्वा 20 महाविपस्सनावसेन समापन्ना समापत्ति, सा सुट्ठु विक्खम्भेति । यथा नाम पुरिसेन पोक्खरणिं ओगाहेत्वा हत्थेहि च पादेहि च सुट्ठु अपब्यूळ्हो सेवालो चिरेन उदकं ओत्थरति; एवमेव ततो वुट्ठितस्स चिरेन वेदना उप्पज्जति । इति भगवा तं दिवसं महाबोधिपल्लङ्के अभिनवविपस्सनं पट्ठपेन्तो विय रूपसत्तकं अरूपसत्तकं निग्गुम्बं निज्जटं 25 कत्वा चुद्दसहाकारेहि सन्नेत्वा महाविपस्सनाय वेदनं विक्खम्भेत्वा—

१. सी०, रो० पोत्थकेसु नत्थि । २. यो—रो० ।

"दसमासे मा उप्पज्जित्था" ति समापत्ति समापज्जि। समापत्तिविक्खम्भिता वेदना दसमासे न उप्पज्जि येव।

गिलाना वुट्ठितो ति गिलानो हुत्वा पुन वुट्ठितो। **मधुरकजातो विया** ति सञ्जातगरुभावो सञ्जातथद्धभावो सूले उत्तासितपुरिसो विय[2]। **न पक्खायन्ती** ति नप्पकासन्ति, नानाकारतो[1] न उपट्ठहन्ति। **धम्मापि मं न पटिभन्ती** ति सतिपट्ठानादिधम्मा मय्हं पाकटा न होन्ती ति दीपेति। तन्तिधम्मा पन थेरस्स सुपगुणा। **न उदाहरती** ति पच्छिमं ओवादं न देति। तं सन्धाय वदति।

B. 138 R. 548 ३५. **अनन्तरं अबाहिरं** ति धम्मवसेन वा पुग्गलवसेन वा उभयं अकत्वा। "एत्तकं धम्मं परस्स न देसेस्सामी" ति हि चिन्तेन्तो धम्मं अब्भन्तरं[2] करोति नाम। "एत्तकं परस्स देसेस्सामी" ति चिन्तेन्तो धम्मं बाहिरं करोति नाम। "इमस्स पुग्गलस्स देसेस्सामी" ति चिन्तेन्तो पन पुग्गलं अब्भन्तरं करोति नाम। इमस्स न देसेस्सामी ति चिन्तेन्तो पुग्गलं बाहिरं करोति नाम। एवं अकत्वा देसितो ति अत्थो। **आचरियमुट्ठी** ति यथा बाहिरकानं आचरियमुट्ठि नाम होति। दहरकाले कस्सचि अकथेत्वा पच्छिमकाले मरणमञ्चे निपन्ना पियमनापस्स अन्तेवासिकस्स कथेन्ति, एवं तथागतस्स—"इदं महल्लककाले पच्छिमट्ठाने कथेस्सामी" ति मुट्ठिं कत्वा "परिहरिस्सामी[3]" ति ठपितं किञ्चि नत्थी ति दस्सेति।

अहं भिक्खुसंघं ति अहमेव भिक्खुसंघं परिहरिस्सामी ति वा **ममुद्देसिको** ति अहं उद्दिसितब्बट्ठेन उद्देसो अस्सा ति ममुद्देसिको। मंयेव उद्दिसित्वा[4] मम पच्चासीसमानो भिक्खुसंघो होतु, मम अच्चयेन वा मा अहेसुं, यं वा तं वा होतू ति इति वा यस्स[5] अस्सा ति अत्थो। **न एवं होती** ति बोधिपल्लङ्केयेव इस्सामच्छरियानं विहतत्ता एवं न

१. नानाकारणतो—सी०, रो०।
२. अन्तरं ०—सी०, रो०।
३. परिहरित्वा—सी०, स्या०, रो०।
४. उद्दिस्स—सी०, रो०।
५. पनस्स—सी०, रो०।

होति । स किं ति सो किं । आसीतिको ति असीतिसंवच्छरिको । इदं पच्छिमवयअनुप्पत्तभावदीपनत्थं वुत्तं । वेधमिस्सकेना ति बाहबन्धचक्कबन्धादिना पटिसङ्खरणेन वेधमिस्सकेन[1] । मञ्ञे ति जिण्णसकटं[2] विय वेधमिस्सकेन मञ्ञे यापेति । अरहत्तफलवेठनेन चतुइरियापथकप्पनं तथागतस्स होती ति दस्सेति । 5

इदानि तमत्थं पकासेन्तो **यस्मिं आनन्द समये** तिआदिमाह । तत्थ **सब्बनिमित्तानं** रूपनिमित्तादीनं । **एकच्चानं वेदनानं** ति लोकियानं वेदनानं । **तस्मातिहानन्दा** ति यस्मा इमिना फलसमापत्तिविहारेन फासु होति, तस्मा तुम्हेपि तदत्थाय एवं विहरथा ति दस्सेति । **अत्तदीपा** ति महासमुद्दगतदीपं विय अत्तानं दीपं पतिट्ठं 10 कत्वा विहरथ । **अत्तसरणा** ति अत्तगतिकाव होथ, मा अञ्ञगतिका । **धम्म-दीपधम्मसरणपदेसुपि** एसेव नयो । **तमतग्गे** ति तमअग्गे । मज्झे तकारो पदसन्धिवसेन वुत्तो । इदं वुत्तं होति—"इमे अग्गतमा ति[3] तमतग्गा" ति । एवं सब्बं तमयोगं छिन्दित्वा अतिविय अग्गे उत्तमभावे एते आनन्द मम भिक्खू भविस्सन्ति । तेसं अतिअग्गे 15 B. 139 R. 549 भविस्सन्ति, ये केचि सिक्खाकामा, सब्बेपि ते चतुसतिपट्ठानगोचराव भिक्खू अग्गे भविस्सन्ती ति अरहत्तनिकूटेन देसनं सङ्गण्हाति ।

दुतियभाणवारवण्णना निट्ठिता

११. निमित्तोभासकथावण्णना

३६. **वेसालिं पिण्डाय पाविसी** ति कदापाविसि ? उक्कचेलतो निक्खमित्वा वेसालिं[4] गतकाले । भगवा किर वुट्ठवस्सो वेळुवगामका निक्खमित्वा सावत्थिं गमिस्सामी ति आगतमग्गेनेव पटिनिवत्तन्तो 20 अनुपुब्बेन सावत्थिं पत्वा जेतवनं पाविसि । धम्मसेनापति भगवतो वत्तं

१. वेठमिस्सकेन—म० ; वेखमिस्सकेन—सी०, रो० ; वेळुमिस्सकेन—स्या० । २. जरासकटं—सी०, स्या०, रो० । ३. ० इमे अग्गतमा ति—सी०, स्या०, रो० । ४. वेसालियं—सी०, रो० ।

दस्सेत्वा दिवाट्ठानं गतो । सो[१] तत्थ अन्तेवासिकेसु वत्तं दस्सेत्वा पटिक्कन्तेसु दिवाट्ठानं सम्मज्जित्वा चम्मक्खण्डं पञ्ञपेत्वा पादे पक्खालेत्वा पल्लङ्कं आभुजित्वा फलसमापत्तिं पाविसि । अथस्स यथापरिच्छेदेन ततो वुट्ठितस्स अयं परिवितक्को उदपादि—"बुद्धा नु खो पठमं परिनिब्बायन्ति, अग्गसावका नु खो'' ति ? ततो—"अग्गसावका पठमं" ति ञत्वा अत्तनो आयुसङ्खारं ओलोकेसि । सो—"सत्ताहमेव मे आयुसङ्खारो पवत्तती'' ति ञत्वा—"कत्थ परिनिब्बायिस्सामी'' ति चिन्तेसि । ततो—"राहुलो तावतिंसेसु परिनिब्बुतो, अञ्ञासिकोण्डञ्ञत्थेरो छद्दन्तदहे, अहं कत्थ परिनिब्बायिस्सामी'' ति पुन चिन्तेन्तो मातरं आरब्भ सतिं उप्पादेसि ।—"मय्हं माता सत्तन्नं अरहन्तानं माता हुत्वापि बुद्धधम्मसंघेसु अप्पसन्ना । अत्थि नु खो तस्सा उपनिस्सयो, नत्थि नु खो'' ति आवज्जेत्वा सोतापत्तिमग्गस्स उपनिस्सयं दिस्वा—"कस्स देसनाय अभिसमयो भविस्सती'' ति ओलोकेन्तो—"ममेव धम्मदेसनाय भविस्सति, न अञ्ञस्स । सचे खो पनाहं अप्पोस्सुक्को भवेय्यं, भविस्सन्ति मे वत्तारो—'सारिपुत्तत्थेरो अवसेसजनानम्पि अवस्सयो होति । तथा हिस्स समचित्तसुत्तदेसनादिवसे कोटिसतसहस्सदेवता अरहत्तं पत्ता । तयो मग्गे पटिविद्धदेवतानं गणना नत्थि । अञ्ञेसु च ठानेसु अनेका अभिसमया दिस्सन्ति । थेरेव चित्तं पसादेत्वा सग्गे निब्बत्तानेव असीतिकुलसहस्सानि । सो दानि सकमातुमिच्छादस्सनमत्तम्पि हरितुं नासक्खी' ति । तस्मा मातरं मिच्छादस्सना मोचेत्वा जातोवरके येव परिनिब्बायिस्सामी" ति सन्निट्ठानं कत्वा—"अज्जेव भगवन्तं अनुजानापेत्वा निक्खमिस्सामी'' ति चुन्दत्थेरं आमन्तेसि । "आवुसो, चुन्द, अम्हाकं पञ्चसताय भिक्खुपरिसाय सञ्ञं देहि—'गण्हथावुसो पत्तचीवरानि, धम्मसेनापति नाळकगामं गन्तुकामो' ति" । थेरो तथा अकासि । भिक्खू सेनासनं संसामेत्वा पत्तचीवरमादाय थेरस्स सन्तिकं आगमंसु । थेरो सेनासनं संसामेत्वा दिवाट्ठानं सम्मज्जित्वा

B. 140 R. 550

१. सी०, रो० पोत्थकेसु नत्थि ।

दिवाट्ठानद्वारे ठत्वा दिवाट्ठानं ओलोकेन्तो—"इदं दानि पच्छिमदस्सनं, पुन आगमनं नत्थी" ति पञ्चसतभिक्खुपरिवुतो भगवन्तं उपसङ्कमित्वा वन्दित्वा एतदवोच—

"छिन्नो दानि भविस्सामि, लोकनाथ महामुनि।
गमनागमनं नत्थि, पच्छिमा वन्दना अयं॥ 5
जीवितं अप्पकं मय्हं, इतो सत्ताहमच्चये।
निक्खिपेय्यामहं देहं, भारवोरोपनं यथा॥
अनुजानातु मे भन्ते, भगवा, अनुजानातु सुगतो।
परिनिब्बानकालो मे, ओस्सट्ठो आयुसङ्खारो ति"॥

बुद्धा पन यस्मा "परिनिब्बाही" ति वुत्ते मरणसंवण्णनं संवण्णेन्ति 10 नाम, "मा परिनिब्बाही" ति वुत्ते वट्टस्स गुणं कथेन्ती ति[1] मिच्छादिट्ठिका[2] दोसं आरोपेस्सन्ति, तस्मा तदुभयम्पि न वदन्ति। तेन नं भगवा आह—"कत्थ परिनिब्बायिस्ससि सारिपुत्ता" ति[3]? "अत्थि, भन्ते, मगधेसु नाळकगामे जातोवरको, तत्थाहं परिनिब्बायिस्सामी" ति वुत्ते "यस्स दानि त्वं, सारिपुत्त, कालं मञ्ञसि, इदानि पन ते 15 जेट्ठकनिट्ठभातिकानं तादिसस्स भिक्खुनो दस्सनं दुल्लभं भविस्सती ति देसेहि तेसं धम्मं" ति आह।

थेरो—"सत्था मय्हं इद्धिविकुब्बनपुब्बङ्गमं धम्मदेसनं पच्चासीसती" ति ञत्वा भगवन्तं वन्दित्वा तालप्पमाणं अब्भुग्गन्त्वा पुन ओरुय्ह भगवन्तं वन्दित्वा सत्ततालप्पमाणे अन्तलिक्खे ठितो इद्धिवि- 20 B. 141 R. 551 कुब्बनं दस्सेत्वा धम्मं देसेसि। सकलनगरं सन्निपति। थेरो ओरुय्ह भगवन्तं वन्दित्वा "गमनकालो मे, भन्ते" ति आह। भगवा "धम्मसेनापतिं पटिपादेस्सामी" ति धम्मासना उट्ठाय गन्धकुटिअभिमुखो गन्त्वा मणिफलके[4] अट्ठासि। थेरो तिक्खत्तुं पदक्खिणं कत्वा चतूसु ठानेसु वन्दित्वा—"भगवा इतो कप्पसतसहस्साधिकस्स असङ्खेय्यस्स 25

१. नाम—सी०, रो०।
२. मा ०—सी०।
३. ० वत्वा—सी०, रो०।
४. मणिपल्लङ्के—सी०, रो०।

उपरि अनोमदस्सिसम्मासम्बुद्धस्स पादमूले निपतित्वा तुम्हाकं दस्सनं पत्थेसिं। सा मे पत्थना समिद्धा, दिट्ठा तुम्हे, तं पठमदस्सनं, इदं पच्छिमदस्सनं। पुन तुम्हाकं दस्सनं नत्थी" ति—वत्वा दसनख-समोधानसमुज्जलं अञ्जलिं पग्गय्ह याव दस्सनविसयो, ताव अभिमुखोव
5 पटिक्कमित्वा "इतो पट्ठाय चुतिपटिसन्धिवसेन किस्मिञ्चि ठाने गमनागमनं नाम[1] नत्थी" ति वन्दित्वा पक्कामि। उदकपरियन्तं कत्वा महाभूमिचालो अहोसि। भगवा परिवारेत्वा ठिते भिक्खू आह— "अनुगच्छथ, भिक्खवे, तुम्हाकं जेट्ठभातिकं" ति। भिक्खू याव द्वारकोट्ठका अगमंसु। थेरो—"तिट्ठथ, तुम्हे आवुसो, अप्पमत्ता होथा"
10 ति निवत्तापेत्वा[2] अत्तनो परिसायेव सद्धिं पक्कामि। मनुस्सा—"पुब्बे अय्यो पच्चागमनचारिकं चरति, इदं दानि गमनं न पुन पच्चागमनाया" ति परिदेवन्ता अनुबन्दिसु। तेपि "अप्पमत्ता होथ आवुसो, एवंभाविनो नाम सङ्खारा" ति निवत्तापेसि[3]।

अथ खो आयस्मा सारिपुत्तो अन्तरामग्गे सत्ताहं मनुस्सानं अनुग्गहं
15 करोन्तो सायं नाळकगामं पत्वा गामद्वारे निग्रोधरुक्खमूले अट्ठासि। अथ उपरेवतो नाम थेरस्स भागिनेय्यो बहिगामं गच्छन्तो थेरं दिस्वा उपसङ्कमित्वा वन्दित्वा अट्ठासि। थेरो तं आह—"अत्थि गेहे ते अय्यिका" ति? आम, भन्ते ति। गच्छ अम्हाकं इधागतभावं आरोचेहि। "कस्मा आगतो" ति च वुत्ते "अज्ज किर एकदिवसं
20 अन्तोगामे भविस्सति, जातोवरकं पटिजग्गथ, पञ्चन्नं[4] भिक्खुसतानं निवासनट्ठानं जानाथा" ति। सो गन्त्वा "अय्यिके, मय्हं मातुलो आगतो" ति आह। इदानि कुहिं ति? गामद्वारे ति। एककोव,
R. 552 अञ्ञो पि कोचि अत्थी ति? अत्थि पञ्चसता भिक्खू ति। किं कारणा आगतो ति? सो तं पवत्तिं आरोचेसि। ब्राह्मणी—"किं नु खो एत्तकानं
B. 142 25 वसनट्ठानं पटिजग्गापेति, दहरकाले पब्बजित्वा महल्लककाले गिहि

१. सी०, रो० पोत्थकेसु नत्थि। २. निवत्तेत्वा—सी०, रो०। ३. निवत्तेसि—सी०, रो०। ४. ० किर—सी०।

होतुकामो" ति चिन्तेन्ती ति जातोवरकं पटिजग्गापेत्वा पञ्चसतानं भिक्खूनं वसनट्ठानं कारेत्वा दण्डदीपिकायो जलेत्वा थेरस्स पाहेसि।

थेरो भिक्खूहि सद्धिं पासादं अभिरुहि अभिरुहित्वा[1] च जातोवरकं पविसित्वा निसीदि। निसज्जेव—"तुम्हाकं वसनट्ठानं गच्छथा" ति भिक्खू उय्योजेसि। तेसु गतमत्तेसु येव थेरस्स खरो आबाधो उप्पज्जि, 5 लोहितपक्खन्दिका मारणन्तिका वेदना वत्तन्ति, एकं भाजनं पविसति, एकं निक्खमति। ब्राह्मणी—"मम पुत्तस्स पवत्ति मय्हं न रुच्चती" ति अत्तनो वसनगब्भद्वारं निस्साय अट्ठासि। चत्तारो महाराजानो "धम्मसेनापति कुहिं विहरती" ति ओलोकेन्तो[2] "नाळकगामे जातोवरके परिनिब्बानमञ्चे निपन्नो, पच्छिमदस्सनं गमिस्सामा" ति आगम्म 10 वन्दित्वा अट्ठंसु। थेरो—के तुम्हे ति? महाराजानो, भन्ते ति। कस्मा आगतत्था ति? गिलानुपट्ठाका भविस्सामा ति। होतु, अत्थि गिलानुपट्ठाको, गच्छथ तुम्हे ति उय्योजेसि। तेसं गतावसाने तेनेव नयेन सक्को देवानमिन्दो, तस्मिं गते सुयामादयो महाब्रह्मा च आगमिंसु[3]। तेपि तथेव थेरो उय्योजेसि। 15

ब्राह्मणी देवतानं आगमनञ्च गमनञ्च दिस्वा—"के नु खो एते मम पुत्तं वन्दित्वा गच्छन्ती" ति थेरस्स गब्भद्वारं गन्त्वा—"तात, चुन्द, का पवत्ती" ति पुच्छि। सो तं पवत्तिं आचिक्खित्वा—"महाउपासिका, भन्ते आगता" ति आह। थेरो कस्मा अवेलाय आगतत्था ति पुच्छि। सा तुय्हं तात दस्सनत्थाया ति वत्वा "तात के पठमं आगता" ति 20 पुच्छि। चत्तारो महाराजानो, उपासिके ति। तात, त्वं चतूहि महाराजेहि महन्ततरो ति? आरामिकसदिसा एते उपासिके, अम्हाकं सत्थु पटिसन्धिग्गहणतो पट्ठाय खग्गहत्था हुत्वा आरक्खं अकंसू ति। तेस तात, गतावसाने को आगतो ति? सक्को देवानमिन्दो ति। देवराजतो पि त्वं तात, महन्ततरो ति? भण्डगाहकसामणेरसदिसो एस 25 R. 553

१. अभिरुह्य—सी०, रो०। २. ओलोकेन्ता—सी०, रो०।
३. ० च—सी०, स्या०, रो०।

उपासिके, अम्हाकं सत्थु तावतिंसतो ओतरणकाले पत्तचीवरं गहेत्वा ओतिण्णो ति। तस्स तात गतावसाने जोतमानो विय को आगतो ति? उपासिके तुय्हं भगवा च सत्था च महाब्रह्मा नाम एसो ति। मय्हं भगवतो महाब्रह्मतो पि त्वं तात महन्ततरो ति? आम उपासिके,
B. 143 5 एते[1] नाम किर अम्हाकं सत्थु जातदिवसे चत्तारो महाब्रह्मानो महापुरिसं सुवण्णजालेन पटिग्गण्हिंसू ति।

अथ ब्राह्मणिया—"पुत्तस्स ताव मे अयं आनुभावो, कीदिसो वत मय्हं पुत्तस्स भगवतो सत्थु आनुभावो भविस्सती" ति चिन्तयन्तिया सहसा पञ्चवण्णा पीति उप्पज्जित्वा सकलसरीरे फरि। थेरो—"उप्पन्नं
10 मे मातु पीतिसोमनस्सं, अयं दानि कालो धम्मदेसनाया" ति चिन्तेत्वा—"किं चिन्तेसि महाउपासिके" ति आह। सा—"पुत्तस्स ताव मे अयं गुणो, सत्थु पनस्स कीदिसो गुणो भविस्सती" ति इदं तात, चिन्तेमी ति आह। महाउपासिके, मय्हं सत्थु जातक्खणे महाभिनिक्खमने सम्बोधियं धम्मचक्कप्पवत्तने च दससहस्सिलोकधातु
15 कम्पित्थ, सीलेन समाधिना पञ्ञाय विमुत्तिया विमुत्तिञाणदस्सनेन समो नाम नत्थि, इतिपि सो भगवा ति वित्थारेत्वा बुद्धगुणप्पटिसंयुत्तं धम्मदेसनं कथेसि।

ब्राह्मणी पियपुत्तस्स धम्मदेसनापरियोसाने सोतापत्तिफले पतिट्ठाय पुत्तं आह—"तात, उपतिस्स, कस्मा एवमकासि, एवरूपं नाम अमतं
20 मय्हं एत्तकं कालं न अदासी" ति। थेरो—"दिन्नं दानि मे मातु रूपसारिया ब्राह्मणिया पोसावनिकमूलं, एत्तकेन वट्टिस्सती" ति चिन्तेत्वा "गच्छ महाउपासिके" ति ब्राह्मणिं उय्योजेत्वा "चुन्द कावेसा" ति आह। बलवपच्चूसकालो, भन्ते ति। तेन हि भिक्खुसंघं सन्निपातेही ति। सन्निपतितो, भन्ते, संघो ति। मं उक्खिपित्वा निसीदापेसि चुन्दा ति
25 उक्खिपित्वा निसीदापेसि। थेरो भिक्खू आमन्तेसि—"आवुसो चतुचत्तालीसं वो वस्सानि मया सद्धिं विचरन्तानं यं मे कायिकं वा वाचसिकं

१. एसो—सी०, रो०।

वा न रोचेथ, खमथ तं आवुसो ति । एत्तकं, भन्ते, अम्हाकं छाया विय तुम्हे अमुञ्चित्वा विचरन्तानं अरुच्चनकं नाम नत्थि, तुम्हे पन अम्हाकं खमथा ति । अथ थेरो अरुणसिखाय पञ्ञायमानाय महापथविं उन्नादयन्तो[1] अनुपादिसेसाय निब्बानधातुया परिनिब्बायि । बहू देवमनुस्सा थेरस्स परिनिब्बाने सक्कारं करिंसु । R. 554 5

आयस्मा चुन्दो थेरस्स पत्तचीवरञ्च धातुपरिस्सावनञ्च गहेत्वा जेतवनं गन्त्वा आनन्दत्थेरं गहेत्वा भगवन्तं उपसङ्कमि । भगवा धातुपरिस्सावनं गहेत्वा पञ्चहि गाथासतेहि थेरस्स गुणं कथेत्वा धातुचेतियं कारापेत्वा राजगहगमनत्थाय आनन्दत्थेरस्स सञ्ञं अदासि । थेरो भिक्खूनं आरोचेसि । भगवा महाभिक्खुसंघपरिवुतो राजगहं अगमासि । तत्थ गतकाले महामोग्गल्लानत्थेरो परिनिब्बायि । भगवा तस्स धातुयो गहेत्वा चेतियं कारापेत्वा राजगहतो निक्खमित्वा अनुपुब्बेन गङ्गाभिमुखो गन्त्वा उक्कचेलं अगमासि । तत्थ गङ्गातीरे भिक्खुसंघपरिवुतो निसीदित्वा तत्थ सारिपुत्तमोग्गल्लानानं परिनिब्बानप्पटिसंयुत्तं सुत्तं देसेत्वा उक्कचेलतो निक्खमित्वा वेसालिं अगमासि । एवं गते[2] अथ खो भगवा पुब्बण्हसमयं निवासेत्वा पत्तचीवरमादाय वेसालिं पिण्डाय पाविसी ति अयमेत्थ अनुपुब्बी कथा । B. 144 10 15

निसीदनं ति एत्थ चम्मक्खण्डं अधिप्पेतं । **उदेनचेतियं** ति उदेनयक्खस्स चेतियट्ठाने कतविहारो वुच्चति । **गोतमकादीसु**पि एसेव नयो । **भाविता** ति वड्ढिता । **बहुलीकता** ति पुनप्पुनं कता । **यानीकता** ति युत्तयानं विय कता । **वत्थुकता** ति पतिट्ठानट्ठेन वत्थु विय कता । **अनुट्ठिता** ति अधिट्ठिता[3] । **परिचिता** ति समन्ततो चिता सुवड्ढिता । **सुसमारद्धा** ति सुट्ठु समारद्धा । 20

इति अनियमेव कथेत्वा पुन नियमेत्वा दस्सेन्तो **तथागतस्स खो** तिआदिमाह । एत्थ च कप्पन्ति आयुकप्पं । तस्मिं तस्मिं काले यं 25

१. उन्नादेन्तो—सी०, रो० । २. गतो—सी०, रो० ।
३. अधितिट्ठिता—सी०, रो० ।

मनुस्सानं आयुप्पमाणं होति, तं परिपुण्णं करोन्तो तिट्ठेय्य । कप्पावसेसं वाति—"अप्पं वा भिय्यो" (दी० नि० २.५) ति वुत्तवस्ससततो अतिरेकं वा । महासीवत्थेरो पनाह—"बुद्धानं अट्ठाने गज्जितं नाम नत्थि । यथेव हि वेळुवगामके उप्पन्नं मारणन्तिकं वेदनं दस मासे
R. 555 5 विक्खम्भेति, एवं पुनप्पुनं तं समापत्तिं समापज्जित्वा दस दस मासे विक्खम्भेन्तो इमं भद्दकप्पमेव तिट्ठेय्य । कस्मा पन न ठितो ति ? उपादिन्नकसरीरं नाम खण्डिच्चादीहि अभिभुय्यति । बुद्धा च खण्डिच्चादिभावं अपत्वा पञ्चमे आयुकोट्ठासे बहुजनस्स पियमनापकाले-येव परिनिब्बायन्ति । बुद्धानुबुद्धेसु च महासावकेसु परिनिब्बुतेसु
B. 145 10 एककेनेव खाणुकेन वियट्ठातब्बं होति, दहरसामणेरपरिवारितेन[1] वा । ततो—'अहो बुद्धानं परिसा' ति हीळेतब्बतं आपज्जेय्य । तस्मा न ठितो'' ति । एवं वुत्ते पि सो[2] न रुच्चति[2] । "आयुकप्पो" ति इदमेव अट्ठकथायं नियमितं ।

३७. **यथा तं मारेन परियुट्ठितचित्तो** (दी० नि० २.८१) ति
15 एत्थ तन्ति निपातमत्तं । यथा मारेन परियुट्ठितचित्तो अज्झोत्थटचित्तो अञ्ञोपि कोचि पुथुज्जनो पटिविज्झितुं न सक्कुणेय्य, एवमेव नासक्खि पटिविज्झितुं ति अत्थो । किं[3] कारणा[3] ? मारो हि यस्स सब्बेन सब्बं द्वादस विपल्लासा अप्पहीना, तस्स चित्तं परियुट्ठाति । थेरस्स चत्तारो विपल्लासा अप्पहीना, तेनस्स मारो चित्तं परियुट्ठाति । सो पन
20 चित्तपरियुट्ठानं करोन्तो किं करोती ति ? भेरवं रूपारम्मणं वा दस्सेति, सद्दारम्मणं वा सावेति, ततो सत्ता तं दिस्वा वा सुत्वा वा सतिं विस्सज्जेत्वा विवटमुखा होन्ति । तेसं मुखेन हत्थं पवेसेत्वा हदयं मद्दति । ततो विसञ्ञाव हुत्वा तिट्ठन्ति । थेरस्स पनेस मुखेन हत्थं पवेसेतुं किं सक्खिस्सति ? भेरवारम्मणं पन दस्सेति । तं दिस्वा थेरो
25 निमित्तोभासं न पटिविज्जि । भगवा जानन्तोयेव—"किमत्थं यावततियं

१. परिवारेनवा जातो—सी० ।　　२-२. यो पन रुच्चति—सी०, रो० ।
३-३. सी०, रो० पोत्थकेसु नत्थि ।

आमन्तेसी ति ? परतो "तिट्ठतु, भन्ते, भगवा" ति याचिते "तुय्हेवेतं दुक्कटं, तुय्हेवेतं अपरद्धं" ति दोसारोपनेन सोकतनुकरणत्थं।

१२. मारयाचनकथावण्णना

३८. **मारो पापिमा** (दी० नि० २.८२) ति एत्थ **मारो** ति[1] सत्ते अनत्थे नियोजेन्तो मारेती ति **मारो पापिमा** ति तस्सेव वेवचनं। सो हि पापधम्मसमन्नागत्ता "पापिमा" ति वुच्चति। कण्हो, अन्तको, नमुचि, पमत्तबन्धू ति पि तस्सेव नामानि। **भासिता खो पनेसा** ति अयञ्हि भगवतो सम्बोधिपत्तिया अट्ठमे सत्ताहे बोधिमण्डेयेव आगन्त्वा—"भगवा यदत्थं तुम्हेहि पारमियो पूरिता, सो वो अत्थो अनुप्पत्तो, पटिविद्धं सब्बञ्ञुतञ्ञाणं, किं ते[2] लोकविचारणेना" ति वत्वा, यथा अज्ज, एवमेव "परिनिब्बातु, दानि भन्ते, भगवा" ति याचि। भगवा चस्स—"न तावाहं" ति आदीनि वत्वा पटिक्खिपि। तं सन्धाय "भासिता खो पनेसा भन्ते" तिआदिमाह।

तत्थ **वियत्ता** ति मग्गवसेन वियत्ता। तथेव विनीता तथा विसारदा। **बहुस्सुता** ति तेपिटकवसेन बहु सुतमेतेसं ति **बहुस्सुता**। तमेव धम्मं धारेन्ती ति **धम्मधरा**। अथवा परियत्तिबहुस्सुता चेव पटिवेधबहुस्सुता च। परियत्तिपटिवेधधम्मानं येव धारणतो धम्मधरा ति एवमेत्थ अत्थो दट्ठब्बो। **धम्मानुधम्मपटिपन्ना** ति अरियधम्मस्स अनुधम्मभूतं विपस्सनाधम्मं पटिपन्ना। **सामीचिप्पटिपन्ना** ति अनुच्छविकपटिपदं पटिपन्ना। **अनुधम्मचारिनो** ति अनुधम्मचरण-सीला। **सकं आचरियकं** ति अत्तनो आचरियवादं। **आचिक्खिस्सन्ती** ति आदीनि सब्बानि अञ्ञमञ्ञस्स वेवचनानि। **सहधम्मेना** ति सहेतुकेन सकारणेन वचनेन। **सप्पाटिहारियं** ति याव न[3] निय्यानिकं कत्वा धम्मं देसेस्सन्ति।

ब्रह्मचरियं ति सिक्खत्तयसङ्गहितं सकलं सासनब्रह्मचरियं। **इद्धं** ति समिद्धं झानस्सादवसेन। **फीतं** ति वुड्ढिप्पत्तं सब्बपालिफुल्लं

१. सी०, रो० पोत्थकेसु नत्थि। २. वो-सी०, रो०।
३. सी०, स्या०, रो० पोत्थकेसु नत्थि।

विय अभिञ्ञाय सम्पत्तिवसेन। वित्थारिकं ति वित्थतं तस्मिं तस्मिं दिसाभागे पतिट्ठितवसेन। बाहुजञ्ञं ति बहुजनेहि ञातं पटिविद्धं महाजनाभिसमयवसेन। पुथुभूतं ति सब्बाकारवसेन पुथुलभावप्पत्तं। कथं? याव देवमनुस्सेहि सुप्पकासितं ति यत्तका विञ्ञुजातिका
5 देवा चेव मनुस्सा च अत्थि सब्बेहि सुट्ठु पकासितं ति अत्थो।

अप्पोस्सुक्को (दी० नि० २.८४) ति निरालयो। त्वं हि पापिम, अट्ठमसत्ताहतो पट्ठाय—"परिनिब्बातु दानि, भन्ते, भगवा परिनिब्बातु, सुगतो" ति विरवन्तो आहिण्डित्थ। अज्ज दानि पट्ठाय विगतुस्साहो होहि; मा मय्हं परिनिब्बानत्थं वायामं करोही ति वदति।

१३. आयुसङ्खारओस्सज्जनवण्णना

10 ३९. सतो सम्पजानो आयुसङ्खारं ओस्सजी ति सतिं सूपट्ठितं कत्वा ञाणेन परिच्छिन्दित्वा आयुसङ्खारं विस्सज्जि, पजहि। तत्थ न भगवा हत्थेन लेड्डुं विय आयुसङ्खारं ओस्सजि, तेमासमत्तमेव पन
B. 147 समापत्तिं समापज्जित्वा ततो परं न समापज्जिस्सामी ति चित्तं उप्पादेसि। तं सन्धाय वुत्तं—"ओस्सजी" ति। "उस्सज्जी" ति पि
R. 557 15 पाठो। महाभूमिचालो ति महन्तो पथवीकम्पो। तदा किर दससहस्सी लोकधातु कम्पित्थ। भिंसनको ति भयजनको। देवदुन्दुभियो च फलिंसु ति देवभेरियो फलिंसु, देवो सुक्खगज्जितं गज्जि, अकालविज्जुलता निच्छरिंसु, खणिकवस्सं वस्सी ति वुत्तं होति। उदानं उदानेसी ति कस्मा उदानेसि? कोचि नाम वदेय्य—"भगवा पच्छतो पच्छतो
20 अनुबन्धित्वा—'परिनिब्बायथ, भन्ते, परिनिब्बायथ, भन्ते' ति उपद्दुतो भयेन आयुसङ्खारं विस्सज्जेसी" ति। "तस्सोकासो मा होतु, भीतस्स उदानं नाम नत्थी" ति एतस्स दीपनत्थं पीतिवेगविस्सट्ठं उदानं उदानेसि।

तत्थ सब्बेसं सोणसिङ्गालादीनम्पि पच्चक्खभावतो तुलितं परिच्छिन्नं ति तुलं। किं तं? कामावचरकम्मं। न तुलं, न वा
25 तुलं सदिसमस्स अञ्ञं लोकियं कम्मं अत्थी ति अतुलं। किं तं? महग्गतकम्मं। अथवा कामावचररूपावचरं तुलं, अरूपावचरं अतुलं। अप्पविपाकं वा तुलं, बहुविपाकं अतुलं। सम्भवं ति सम्भवस्स

हेतुभूतं, पिण्डकारकं रासिकारकं ति अत्थो। **भवसङ्खारं** ति पुनब्भव-सङ्खारणकं। **अवस्सजी** ति विस्सज्जेसि। **मुनी** ति बुद्धमुनि। **अज्झत्तरतो** ति नियकज्झत्तरतो। **समाहितो** ति उपचारप्पनासमाधि-वसेन समाहितो। **अभिन्दि कवचमिवा** ति कवचं विय अभिन्दि। **अत्तसम्भवं** ति अत्तनि सञ्जातं किलेसं। इदं वुत्तं होति—"सविपा-कट्ठेन सम्भवं, भवाभिसङ्खरणट्ठेन भवसङ्खारं ति च लद्धनामं तुलातुल-सङ्खातं लोकियकम्मञ्च ओस्सजि। सङ्गामसीसे महायोधो कवचं विय अत्तसम्भवं किलेसञ्च अज्झत्तरतो समाहितो हुत्वा अभिन्दी" ति। 5

अथवा **तुलं** ति तुलेन्तो तीरेन्तो। **अतुलञ्च सम्भवं** ति निब्बानञ्चेव सम्भवञ्च[1]। **भवसङ्खारं** ति भवगामिकम्मं। **अवस्सजि मुनी** ति "पञ्चक्खन्धा अनिच्चा, पञ्चन्नं खन्धानं निरोधो निब्बानं निच्चं" ति आदिना नयेन तुलयन्तो बुद्धमुनि भवे आदीनवं, निब्बाने च आनिसंसं दिस्वा तं खन्धानं मूलभूतं भवसङ्खारकम्मं—"कम्मक्खयाय संवत्तती" (म० नि० २.६३) ति एवं वुत्तेन कम्मक्खयकरेन अरियमग्गेन अवस्सजि। कथं? अज्झत्तरतो समाहितो अभिन्दि कवचमिव अत्तनि सम्भवं। सो हि विपस्सनावसेन अज्झत्तरतो समथ-वसेन समाहितो ति एवं पुब्बभागतो पट्ठाय समथविपस्सनाबलेन कवचमिव अत्तभावं परियोनन्धित्वा ठितं, अत्तनि सम्भवत्ता "अत्तसम्भवं" ति लद्धनामं सब्बकिलेसजालं अभिन्दि। किलेसाभावेन च कतकम्मं[2] अप्पटिसन्धिकत्ता अवसट्ठं नाम होती ति एवं किलेसप्पहानेन कम्मं पजहि, पहीनकिलेसस्स च भयं नाम नत्थि, तस्मा अभीतो व आयुसङ्खारं ओस्सजि, अभीतभावञापनत्थञ्च उदानं उदानेसी ति वेदितब्बो। 10 15 B. 148 R. 558 20

१४. महाभूमिचालवण्णना

४०-४१. **यं महावाता** (दी० नि० २.८५) ति येन समयेन यस्मिं वा समये महावाता वायन्ति, महावाता वायन्ता पि उक्खेपकवाता नाम 25

१. भवं च—सी०, स्या०, रो०। २. कम्मं—सी०, रो०।

उद्वहन्ति । ते वायन्ता सट्ठिसहस्साधिकनवयोजनसतसहस्सबहलं उदकसन्धारकं वातं उपच्छिन्दन्ति, ततो आकासे उदकं भस्सति, तस्मिं भस्सन्ते पथवी भस्सति । पुन वातो अत्तनो बलेन अन्तोधमकरणे विय उदकं आबन्धित्वा गण्हाति, ततो उदकं उग्गच्छति, तस्मिं उग्गच्छन्ते 5 पथवी उग्गच्छति । एवं उदकं कम्पितं पथविं कम्पेति । एतञ्च कम्पनं याव अज्जकालापि होतियेव, बहलभावेन पन न ओगच्छनुग्गच्छनं पञ्ञायति ।

महिद्धिको महानुभावो ति इज्झनस्स महन्तताय महिद्धिको, अनुभवितब्बस्स महन्तताय महानुभावो । **परित्ता** ति दुब्बला । 10 **अप्पमाणा** ति बलवा। **सो इमं पथविं कम्पेती** ति सो इद्धिं निब्बत्तेत्वा संवेजेन्तो महामोग्गल्लानो विय, वीमंसन्तो वा महानागत्थेरस्स भागिनेय्यो संघरक्खितसामणेरो विय पथविं कम्पेति । सो किरायस्मा खुरग्गेयेव अरहत्तं पत्वा चिन्तेसि—"अत्थि नु खो कोचि भिक्खु, येन पब्बजितदिवसेयेव अरहत्तं पत्वा वेजयन्तो पासादो कम्पितपुब्बो" ति ? 15 ततो—"नत्थि कोची" ति ञत्वा—"अहं कम्पेस्सामी" ति अभिञ्ञाबलेन वेजयन्तमत्थके ठत्वा पादेन पहरित्वा कम्पेतुं नासक्खि । अथ नं सक्कस्स नाटकित्थियो आहंसु—"पुत्त संघरक्खित, त्वं पूतिगन्धेनेव सीसेन वेजयन्तं कम्पेतुं इच्छसि, सुप्पतिट्ठितो तात पासादो, कथं कम्पेतुं सक्खिस्ससी" ति ? सामणेरो—"इमा देवता मया सद्धिं केळिं 20 करोन्ति, अहं खो पन आचरियं नालत्थं, कहं नु खो मे आचरियो सामुद्दिकमहानागत्थेरो" ति आवज्जेन्तो महासमुद्दे उदकलेणं मापेत्वा दिवाविहारं निसिन्नो ति ञत्वा तत्थ गन्त्वा थेरं वन्दित्वा अट्ठासि । ततो नं थेरो—"किं, तात संघरक्खित, असिक्खित्वाव युद्धं पविट्ठोसी" ति वत्वा "नासक्खि, तात, वेजयन्तं कम्पेतुं" ति पुच्छि । आचरियं, 25 भन्ते, नालत्थं ति । अथ नं थेरो—"तात तुम्हादिसे अकम्पेन्ते को अञ्ञो कम्पेस्सति । दिट्ठपुब्बं ते, तात, उदकपिट्ठे गोमयखण्डं पिलवन्तं, तात, कपल्लकपूवं पचन्ता अन्तन्तेन परिच्छिन्दन्ति, इमिना ओपम्मेन जानाही" ति आह । सो—"वट्टिस्सति, भन्ते, एत्तकेना" ति वत्वा

B. 149 R. 559

पासादेन पतिट्ठितोकासं उदकं होतू ति अधिट्ठाय वेजयन्ताभिमुखो अगमासि।

देवधीतरो तं दिस्वा—"एकवारं लज्जित्वा गतो, पुनपि सामणेरो एति, पुनपि एती" ति वदिंसु। सक्को देवराजा—"मा मय्हं पुत्तेन सद्धिं कथयित्थ, इदानि तेन आचरियो लद्धो, खणेन पासादं कम्पेस्सती" 5 ति आह। सामणेरो पि पादङ्गुट्ठेन पासादथूपिकं पहरि। पासादो चतूहि दिसाहि ओणमति। देवता—"पतिट्ठातुं देहि, तात, पासादस्स पतिट्ठातुं देहि, तात, पासादस्सा" ति विरविंसु। सामणेरो पासादं यथाठाने ठपेत्वा पासादमत्थके ठत्वा उदानं उदानेसि—

"अज्जेवाहं पब्बजितो, अज्ज पत्तासवक्खयं। 10
अज्ज कम्पेमि पासादं, अहो बुद्धस्सुळारता॥
अज्जेवाहं पब्बजितो, अज्ज पत्तासवक्खयं।
अज्ज कम्पेमि पासादं, अहो धम्मस्सुळारता"॥

इतो परेसु छसु पथवीकम्पेसु यं वत्तब्बं, तं महापदाने वुत्तमेव।

इति इमेसु अट्ठसु पथवीकम्पेसु पठमो धातुकोपेन, दुतियो इद्धानु- 15 भावेन, ततियचतुत्था पुञ्ञतेजेन, पञ्चमो ञाणतेजेन, छट्ठो साधुकारदान-वसेन, सत्तमो कारुञ्ञभावेन, अट्ठमो आरोदनेन। मातुकुच्छिं ओक्कमन्ते च ततो निक्खमन्ते च महासत्ते तस्स पुञ्ञतेजेन पथवी अकम्पित्थ। अभिसम्बोधियं ञाणतेजेन अभिहता[1] हुत्वा अकम्पित्थ। धम्मचक्कप्प- B. 150 वत्तने साधुकारभावसण्ठिता साधुकारं ददमाना अकम्पित्थ। आयु- 20 R. 560 सङ्खारोस्सज्जने कारुञ्ञसभावसण्ठिता चित्तसङ्खातं असहमाना अकम्पित्थ। परिनिब्बाने आरोदनवेगतुन्ना हुत्वा अकम्पित्थ। अयं पनत्थो पथवीदेवताय वसेन वेदितब्बो, महाभूतपथविया पनेतं नत्थि अचेतनत्ता ति।

इमे खो आनन्द, अट्ठ हेतू ति एत्थ इमे ति निद्दिट्ठनिदस्सनं। 25 एत्तावता च पनायस्मा आनन्दो—"अद्धा अज्ज भगवता आयुसङ्खारो

१. अभिभूता—सी०।

ओस्सट्ठो'' ति सल्लक्खेसि। भगवा पन सल्लक्खितभावं जानन्तो पि ओकासं अदत्वाव अञ्ञानिपि अट्ठकानि सम्पिण्डेन्तो—''अट्ठ खो इमा'' तिआदिमाह।

१५. अट्ठपरिसवण्णना

४२. तत्थ **अनेकसतं खत्तियपरिसं** (दी० नि० २.८६) ति
5 बिम्बिसारसमागमञातिसमागमलिच्छवीसमागमादिसदिसं। सा[1] पन[1] अञ्ञेसु चक्कवाळेसु पि लब्भतेयेव। **सल्लपितपुब्बं** ति आलापसल्लापो कतपुब्बो। **साकच्छा** ति धम्मसाकच्छा पि समापज्जितपुब्बा। **यादिसको तेसं वण्णो** ति ते ओदातापि होन्ति काळापि मङ्गुरच्छवीपि, सत्था सुवण्णवण्णोव। इदं पन सण्ठानं पटिच्च कथितं। सण्ठानम्पि च
10 केवलं तेसं पञ्ञायति येव, न पन भगवा मिलक्खुसदिसो होति, नापि आमुत्तमणि कुण्डलो, बुद्धवेसेनेव निसीदति। ते पन अत्तनो समानसण्ठानमेव पस्सन्ति। **यादिसको तेसं सरो** ति छिन्नस्सरा पि होन्ति गग्गरस्सरा पि काकस्सरापि,[2] सत्था ब्रह्मस्सरो व। इदं पन भासन्तरं सन्धाय कथितं। सचेपि हि सत्था राजासने निसिन्नो कथेति,—''अज्ज
15 राजा मधुरेन सरेन कथेती'' ति तेसं होति। कथेत्वा पक्कन्ते पन भगवति पुन राजानं आगतं दिस्वा—''को नु खो अयं'' ति वीमंसा उप्पज्जति। तत्थ **को नु खो अयं** ति इमस्मिं ठाने इदानेव मागधभासाय सीहळभासाय मधुरेनाकारेन कथेन्तो को नु खो अयं अन्तरहितो, किं देवो, उदाहु मनुस्सो ति एवं वीमंसन्ता पि न जानन्ती
B. 151 20 ति अत्थो। किमत्थं पनेवं अजानन्तानं धम्मं देसेती ति? वासनत्थाय। एवं सुतो पि हि धम्मो अनागते पच्चयो होति येवा ति अनागतं पटिच्च देसेति। **अनेकसतं ब्राह्मणपरिसं** तिआदीनम्पि सोणदण्डकूटदण्डसमा-
R. 561 गमादिवसेन चेव अञ्ञचक्कवाळवसेन च सम्भवो वेदितब्बो।

इमा पन अट्ठ परिसा भगवा किमत्थं आहरि? अभीतभावदस्स-
25 नत्थमेव। इमा किर आहरित्वा एवमाह—''आनन्द, इमापि अट्ठ

१-१. सी०, स्या०, रो० पोत्थकेसु नत्थि। २. ०खरस्सरा पि खण्डस्सरा पि—सी०,रो०।

परिसा उपसङ्कमित्वा धम्मं देसेन्तस्स तथागतस्स भयं वा सारज्जं वा नत्थि, मारं पन एककं दिस्वा तथागतो भायेय्या ति को एवं सञ्ञं उप्पादेतुमरहति । अमीतो, आनन्द, तथागतो अच्छम्भी, सतो सम्पजानो आयुसङ्खारं ओस्सजी" ति ।

१६. अट्ठअभिभायतनवण्णना

४३. **अभिभायतनानी** ति अभिभवनकारणानि । किं अभिभवन्ति ? 5 पच्चनीकधम्मेपि आरम्मणानि पि । तानि हि पटिपक्खभावेन पच्चनीकधम्मे अभिभवन्ति, पुग्गलस्स ञाणुत्तरियताय आरम्मणानि ।

अज्झत्तं रूपसञ्ञी ति आदीसु पन अज्झत्तरूपे परिकम्मवसेन अज्झत्तं रूपसञ्ञी नाम होति । अज्झत्तञ्हि नीलपरिकम्मं करोन्तो केसे वा पित्ते वा अक्खितारकाय वा करोति । पीतपरिकम्मं करोन्तो 10 मेदे वा छविया वा हत्थपादपिट्ठेसु[1] वा अक्खीनं पीतकट्ठाने वा करोति । लोहितपरिकम्मं करोन्तो मंसे वा लोहिते वा जिव्हाय वा अक्खीनं रत्तट्ठाने वा करोति । ओदातपरिकम्मं करोन्तो अट्ठिम्हि वा दन्ते वा नखे वा अक्खिनं सेतट्ठाने वा करोति । तं पन सुनीलं[2] सुपीतं[2] सुलोहितकं सुओदातकं न होति, अविसुद्धमेव होति । 15

एको बहिद्धा रूपानि पस्सती ति यस्सेवं परिकम्मं अज्झत्तं उप्पन्नं होति, निमित्तं पन बहिद्धा, सो एवं अज्झत्तं परिकम्मस्स बहिद्धा च अप्पनाय वसेन—"अज्झत्तं रूपसञ्ञी एको बहिद्धा रूपानि पस्सती" ति वुच्चति । **परित्तानी** ति अवड्ढितानि । **सुवण्णदुब्बण्णानी** ति सुवण्णानि वा होन्ति, दुब्बण्णानि वा । परित्तवसेनेव इदं अभिभायतनं 20 वुत्तं ति वेदितब्बं । **तानि अभिभुय्या** ति यथा नाम सम्पन्नगहणिको कटच्छुमत्तं भत्तं लभित्वा—"किं एत्थ भुञ्जितब्बं अत्थी" ति सङ्कड्ढित्वा B 152 एककबळमेव करोति, एवमेव ञाणुत्तरिको पुग्गलो विसदञाणो—"किं एत्थ परित्तके आरम्मणे समापज्जितब्बं अत्थि, नायं मम भारो" ति तानि रूपानि अभिभवित्वा समापज्जति, सह निमित्तुप्पादेनेवेत्थ अप्पनं पापेती 25

१. हत्थतलपादतलेसु वा—सी०, रो० । २-२. सुनीलकं सुपीतकं—सी०, रो० ।

R. 562 ति अत्थो। **जानामि पस्सामी** (दी॰ नि॰ २.८७) ति इमिना पनस्स आभोगो कथितो। सो च खो समापत्तितो वुट्ठितस्स, न अन्तोसमापत्तियं। **एवंसञ्ञी होती** ति आभोगसञ्ञायपि झानसञ्ञायपि एवंसञ्ञी होति। अभिभवनसञ्ञा हिस्स 5 अन्तोसमापत्तियम्पि अत्थि, आभोगसञ्ञा पन समापत्तितो वुट्ठितस्सेव।

अप्पमाणानी ति वड्ढितप्पमाणानि, महन्तानी ति अत्थो। **अभिभुय्या** ति एत्थ पन यथा महग्घसो पुरिसो एकं भत्तवड्ढितकं लभित्वा—"अञ्ञम्पि होतु, किं एते मय्हं करिस्सती" ति तं न महन्ततो पस्सति, 10 एवमेव ञाणुत्तरो पुग्गलो विसदञाणो "किं एत्थ समापज्जितब्बं, नयिदं अप्पमाणं, न मय्हं चित्तेकग्गताकरणे भारो अत्थी" तं तानि अभिभवित्वा समापज्जति, सह निमित्तुप्पादेनेवेत्थ अप्पनं पापेती ति अत्थो।

अज्झत्तं अरूपसञ्ञी ति अलाभिताय वा अनत्थिकताय वा 15 अज्झत्तरूपे परिकम्मसञ्ञाविरहितो।

एको बहिद्धा रूपानि पस्सती ति यस्स परिकम्मम्पि निमित्तम्पि बहिद्धाव उप्पन्नं, सो एवं बहिद्धा परिकम्मस्स चेव अप्पनाय च वसेन—"अज्झत्तं अरूपसञ्ञी एको बहिद्धा रूपानि पस्सती" ति वुच्चति। सेसमेत्थ चतुत्थाभिभायतने वुत्तनयमेव। इमेसु पन चतूसु 20 परित्तं वितक्कचरितवसेन आगतं, अप्पमाणं मोहचरितवसेन, सुवण्णं दोसचरितवसेन, दुब्बण्णं रागचरितवसेन। एतेसञ्हि एतानि सप्पायानि। सा च नेसं सप्पायता वित्थारतो विसुद्धिमग्गे चरितनिद्देसे वुत्ता।

पञ्चमअभिभायतनादीसु **नीलानी** ति सब्बसङ्गाहकसेन वुत्तं। 25 **नीलवण्णानी** ति वण्णवसेन। **नीलनिदस्सनानी** ति निदस्सनवसेन, अपञ्ञाय। मानविवरानि असम्भिन्नवण्णानि एकनीलानेव हुत्वा दिस्सन्ती ति वुत्तं होति। **नीलनिभासानी** ति इदं पन ओभासवसेन वुत्तं, नीलोभासानि नीलप्पभायुत्तानी ति अत्थो। एतेन नेसं

विसुद्धतं[1] दस्सेति। विसुद्धवण्णवसेनेव हि इमानि चत्तारि अभिभायतनानि वुत्तानि। उमापुप्फं ति एतञ्हि पुप्फं सिनिद्धं मुदु, दिस्समानम्पि नीलमेव होति। गिरिकण्णिकपुप्फादीनि पन दिस्समानानि सेतधातुकानेव होन्ति। तस्मा इदमेव गहितं, न तानि। बाराणसेय्यकं (दी० नि० २.८८) ति बाराणसिसम्भवं। तत्थ किर कप्पासोपि मुदु, सुत्तकन्तिकायोपि तन्तवायापि छेका, उदकम्पि सुचि सिनिद्धं। तस्मा तं वत्थं उभतोभागविमट्ठं होति; द्वीसुपि पस्सेसु मट्ठं मुदु सिनिद्धं खायति।

B. 153 R. 563 5

पीतानी तिआदीसुपि इमिनाव नयेन अत्थो वेदितब्बो। "नीलकसिणं उग्गण्हन्तो नीलस्मिं निमित्तं गण्हाति पुप्फस्मिं वा वत्थस्मिं वा वण्णधातुया वा" तिआदिकं पनेत्थ कसिणकरणञ्च परिकम्मं च अप्पनाविधानञ्च सब्बं विसुद्धिमग्गे वित्थारतो वुत्तमेव। इमानिपि अट्ठ अभिभायतनानि अभीतभावदस्सनत्थमेव आनीतानि। इमानि किर वत्वा एवमाह—"आनन्द, एवरूपा पि समापत्तियो समापज्जन्तस्स च वुट्ठहन्तस्स च तथागतस्स भयं वा सारज्जं वा नत्थि, मारं पन एककं दिस्वा तथागतो भायेय्या ति को एवं सञ्ञं उप्पादेतुमरहति। अभीतो, आनन्द, तथागतो अच्छम्भी, सतो सम्पजानो आयुसङ्खारं ओस्सजी" ति।

10 15

१७. अट्ठविमोक्खवण्णना

४४. विमोक्खकथा उत्तानत्थायेव। इमेपि अट्ठ विमोक्खा अभीतभावदस्सनत्थमेव आनीता। इमेपि किर वत्वा एवमाह—"आनन्द, एतापि समापत्तियो समापज्जन्तस्स च वुट्ठहन्तस्स च तथागतस्स भयं वा सारज्जं वा नत्थि ...पे०... ओस्सजी" ति।

20

४५. इदानिपि भगवा आनन्दस्स ओकासं अदत्वाव एकमिदाहं तिआदिना नयेन अपरम्पि देसनं आरभि। तत्थ पठमाभिसम्बुद्धो ति अभिसम्बुद्धो हुत्वा पठममेव अट्ठमे सत्ताहे।

25

[1] सुविसुद्धतं—सी०, रो०।

१७७. ओस्सट्ठो ति विस्सज्जितो परिच्छिन्नो । एवं किर वत्वा—"तेनायं दससहस्सी लोकधातु कम्पित्था" ति आह ।

१८. आनन्दयाचनकथा

४८. अलं (दी० नि० २.९०) ति पटिक्खेपवचनमेतं । **बोधिं** ति चतुमग्गञाणपटिवेधं । **सद्दहसि** त्वं ति एवं वुत्तभावं तथागतस्स
B. 154 5 सद्दहसी ति वदति । **तस्मातिहानन्दा** ति यस्मा इदं वचनं सद्दहसि, तस्मा तुय्हेवेतं दुक्करं ति दस्सेति ।

४९. एकमिदाहं (दी० नि० २.९१) ति इदं भगवा—"न केवलं अहं इधेव तं आमन्तेसिं, अञ्ञदापि आमन्तेत्वा ओळारिकं
R. 564 निमित्तं अकासिं, तम्पि तया न पटिविद्धं, तवेवायं अपराधो" ति एवं
10 सोकविनोदनत्थाय नानप्पकारतो थेरस्सेव दोसारोपनत्थं आरभि ।

५३. पियेहि मनापेही (दी० नि० २.९३) ति मातापिता-भातभगिनिआदिकेहि जातिया **नानाभावो**, मरणेन **विनाभावो**, भवेन **अञ्ञथाभावो** । **तं कुतेत्थ लब्भा** ति तं ति तस्मा । यस्मा सब्बेहेव पियेहि मनापेहि नानाभावो, तस्मा दस पारमियो पूरेत्वापि, सम्बोधिं
15 पत्वापि, धम्मचक्कं पवत्तेत्वापि, यमकपाटिहारियं दस्सेत्वापि, देवोरोहणं कत्वापि, यं तं जातं भूतं सङ्खतं पलोकधम्मं, तं वत तथागतस्सापि सरीरं मा पलुज्जी ति नेतं ठानं विज्जति, रोदन्तेनापि कन्दन्तेनापि न सक्का तं कारणं लद्धुं ति । **पुन पच्चावमिस्सती** ति यं चत्तं वन्तं, तं वत पुन पटिखादिस्सती ति अत्थो ।

20 **५४. यथयिदं ब्रह्मचरियं** (दी० नि० २.९४) ति यथा इदं सिक्खात्तयसङ्गहं सासनब्रह्मचरियं । **अद्धनियं** ति अद्धानक्खमं । **चिरट्ठितिकं** ति चिरप्पवत्तिवसेन चिरट्ठितिकं । **चत्तारो सतिपट्ठाना** ति आदि सब्बं लोकियलोकुत्तरवसेनेव कथितं । एतेसं पन बोधिपक्खियानं धम्मानं विनिच्छयो सब्बाकारेन विसुद्धिमग्गे पटिपदाञाणदस्सनविसुद्धि-
25 निद्देसे[1] वुत्तो । सेसमेत्थ उत्तानमेवा ति ।

ततियभाणवारवण्णना निट्ठिता

[1] सी०, रो० पोत्थकेसु नत्थि ।

१९. नागापलोकितवण्णना

५७. नागापलोकितं (दी० नि० २.९५) ति यथा हि महाजनस्स अट्ठीनि कोटिया कोटिं आहच्च ठितानि पच्चेकबुद्धानं, अङ्कुसकलग्गानि विय, न एवं बुद्धानं। बुद्धानं पन सङ्खलिकानि विय एकाबद्धानि हुत्वा ठितानि, तस्मा पच्छतो अपलोकनकाले न सक्का होति गीवं परिवत्तेतुं। यथा पन हत्थिनागो पच्छाभागं अपलोकेतुकामो सकलसरीरेनेव परिवत्तति, एवं परिवत्तितब्बं होति। भगवतो पन नगरद्वारे ठत्वा—"वेसालिं अपलोकेस्सामी" ति चित्ते उप्पन्नमत्ते—"भगवा अनेकानि कप्पकोटिसहस्सानि पारमियो पूरेन्तेहि तुम्हेहि न गीवं परिवत्तेत्वा अपलोकनकम्मं कतं" ति अयं पथवी कुलालचक्कं विय परिवत्तेत्वा भगवन्तं वेसालिनगराभिमुखं अकासि। तं सन्धायेतं वुत्तं।

B. 155 · 5 · 10 R. 565

ननु च न केवलं वेसालियाव, सावत्थिराजगहनाळन्दपाटलिगाम-कोटिगामनातिकगामकेसुपि ततो ततो निक्खन्तकाले तं तं सब्बं[1] पच्छिमदस्सनमेव, तत्थ तत्थ कस्मा नागापलोकितं नापलोकेसी ति? अनच्छरियत्ता। तत्थ तत्थ हि निवत्तेत्वा अपलोकेन्तस्सेतं न अच्छरियं होति, तस्मा नापलोकेसि। अपिच वेसालिराजानो आसन्नविनासा, तिण्णं वस्सानं उपरि विनस्सिस्सन्ति। ते तं नगरद्वारे नागपलोकितं नाम चेतियं कत्वा गन्धमालादीहि पूजेस्सन्ति, तं नेसं दीघरत्तं हिताय सुखाय भविस्सती ति तेसं अनुकम्पाय अपलोकेसि।

15

दुक्खस्सन्तकरो ति वट्टदुक्खस्स अन्तकरो। **चक्खुमा** ति पञ्चहि चक्खूहि चक्खुमा। **परिनिब्बुतो** ति किलेसपरिनिब्बानेन परिनिब्बुतो।

20

२०. चतुमहापदेसवण्णना

महापदेसे ति महाओकासे, महाअपदेसे वा। बुद्धादयो महन्ते महन्ते अपदिसित्वा वुत्तानि महाकारणानी ति अत्थो।

१. सी०, रो० पोत्थकेसु नत्थि।

६०. **नेव अतिनन्दितब्बं** ति हट्ठतुट्ठेहि साधुकारं दत्वा पुब्बेव न सोतब्बं, एवं कते हि पच्छा "इदं न समेती" ति वुच्चमानो[१]—"किं पुब्बेव अयं धम्मो, इदानि न धम्मो" ति वत्वा लद्धिं न विस्सज्जेति। **नप्पटिक्कोसितब्बं** ति—"किं एस बालो वदती" ति एवं पुब्बेव न
5 वत्तब्बं, एवं वुत्ते हि वत्तुं युत्तम्पि न वक्खति। तेनाह—"अनभिनन्दित्वा अप्पटिक्कोसित्वा" ति। **पदब्यञ्जनानी** ति पदसङ्खातानि
B. 156 ब्यञ्जनानि। **साधुकं उग्गहेत्वा** ति इमस्मिं ठाने पाळि वुत्ता, इमस्मिं ठाने अत्थो वुत्तो, इमस्मिं ठाने अनुसन्धि कथितो,[२] इमस्मिं ठाने पुब्बापरं कथितं ति सुट्ठु गहेत्वा। **सुत्ते ओसारेतब्बानी** ति
10 सुत्ते ओतारेतब्बानि। **विनये सन्दस्सेतब्बानी** ति विनये संसन्देतब्बानि।

एत्थ च **सुत्तं** ति विनयो। यथाह—"कत्थ पटिक्खित्तं? सावत्थियं सुत्तविभङ्गे" ति। **विनयो** ति खन्धको। यथाह—"विनयातिसारे" ति[३]। एवं विनयपिटकम्पि न परियादियति। उभतोविभङ्गा पन सुत्तं, खन्धकपरिवारा विनयो ति एवं विनयपिटकं परियादियति। अथवा सुत्तन्तपिटकं
R. 566 15 सुत्तं, विनयपिटकं विनया ति एवं द्वेयेव पिटकानि परियादियन्ति। सुत्तन्ताभिधम्मपटिकानि वा सुत्तं, विनयपिटकं विनयो ति एवम्पि तीणि पिटकानि न ताव परियादियन्ति। असुत्तनामकञ्हि बुद्धवचनं नाम अत्थि। सेय्यथिदं—जातकं, पटिसम्भिदा, निद्देसो, सुत्तनिपातो, धम्मपदं, उदानं, इतिवुत्तकं, विमानवत्थु, पेतवत्थु, थेरगाथा, थेरीगाथा,
20 अपदानं ति।

सुदिन्नत्थेरो पन—"असुत्तनामकं बुद्धवचनं[४] न अत्थी" ति तं सब्बं पटिपक्खिपित्वा—"तीणि पिटकानि सुत्तं, विनयो पन कारणं" ति आह। ततो तं कारणं दस्सेन्तो इदं सुत्तमाहरि—

१. ० पि—सी०। २. कथिता—सी०, रो०।
३. कोसम्बिया विनयातिसारे ति—सी०, स्या०, रो०। ४. ० नाम—सी०, रो०।

"ये खो त्वं[1], गोतमि, धम्मे जानेय्यासि, इमे धम्मा सरागाय संवत्तन्ति नो विरागाय, सञ्ञोगाय संवत्तन्ति नो विसञ्ञोगाय, आचयाय[2] संवत्तन्ति नो अपचयाय,[2] महिच्छताय संवत्तन्ति नो अप्पिच्छताय, असन्तुट्ठिया संवत्तन्ति नो सन्तुट्ठिया, सङ्गणिकाय संवत्तन्ति नो पविवेकाय, कोसज्जाय संवत्तन्ति नो वीरियारम्भाय, 5 दुब्भरताय संवत्तन्ति नो सुभरताय। एकंसेन, गोतमि, धारेय्यासि[3]— 'नेसो धम्मो, नेसो विनयो, नेतं सत्थुसासनं' ति। ये च खो त्वं, गोतमि, धम्मे जानेय्यासि, इमे धम्मा विरागाय संवत्तन्ति नो सरागाय, विसञ्ञोगाय संवत्तन्ति नो सञ्ञोगाय, अपचयाय संवत्तन्ति नो आचयाय, अप्पिच्छताय संवत्तन्ति नो महिच्छताय, सन्तुट्ठिया संवत्तन्ति 10 नो असन्तुट्ठिया, पविवेकाय संवत्तन्ति नो सङ्गणिकाय, वीरियारम्भाय B. 157 संवत्तन्ति नो कोसज्जाय, सुभरताय संवत्तन्ति नो दुब्भरताय। एकंसेन, गोतमि, धारेय्यासि—'एसो धम्मो, एसो विनयो, एतं सत्थुसासनं' (अं० नि० ३.३७४) ति"।

तस्मा सुत्ते ति तेपिटके बुद्धवचने ओतारेतब्बानि। विनये ति 15 एतस्मिं रागादिविनयकारणे संसन्देतब्बानी ति अयमेत्थ अत्थो। न चेव सुत्ते ओसरन्ती ति सुत्तपटिपाटिया कत्थचि अनागन्त्वा छल्लिं उट्ठपेत्वा गुळ्हवेस्सन्तर-गुळ्हउम्मग्ग-गुळ्हविनय-वेदल्लपिटकानं अञ्ञतरो आगतानि पञ्ञायन्ती ति अत्थो। एवं आगतानि हि रागादिविनये च न पञ्ञायमानानि छड्डेतब्बानि होन्ति। तेन वुत्तं—"इति हेतं, 20 भिक्खवे, छड्डेय्याथा" ति। एतेनुपायेन सब्बत्थ अत्थो वेदितब्बो।

इदं भिक्खवे चतुत्थं महापदेसं धारेय्याथा ति इदं[4] चतुत्थं R. 567 धम्मस्स पतिट्ठानोकासं धारेय्याथ। इमस्मिं पन ठाने इमं पकिण्णकं वेदितब्बं। सुत्ते चत्तारो महापदेसा, खन्धके चत्तारो महापदेसा, चत्तारि

१. ते—सी०, रो०।
२-२. सउपादानाय संवत्तन्ति नो अनुपादानाय—सी०, रो०।
३. जानेय्यासि—सी०, रो०।
४. ० भिक्खवे—स्या०।

पञ्हब्याकरणानि, सुत्तं, सुत्तानुलोमं, आचरियवादो, अत्तनोमति, तिस्सो सङ्गीतियो ति ।

तत्थ—"अयं धम्मो, अयं विनयो" ति धम्मविनिच्छये पत्ते इमे चत्तारो महापदेसा पमाणं । यं एत्थ समेति तदेव गहेतब्बं, इतरं
5 विरवन्तस्सपि[1] न गहेतब्बं ।

"इदं कप्पति, इदं न कप्पती" ति कप्पियाकप्पियविनिच्छये पत्ते—"यं, भिक्खवे, मया इदं न कप्पती ति अप्पटिक्खित्तं, तं चे अकप्पियं अनुलोमेति, कप्पियं पटिबाहति, तं वो न कप्पती" (म० व० २.६४) ति आदिना नयेन खन्धके वुत्ता चत्तारो महापदेसा
10 पमाणं । तेसं विनिच्छयकथा **समन्तपासादिकायं** वुत्ता । तत्थ वुत्तनयेन यं कप्पियं अनुलोमेति, तदेव कप्पियं, इतरं अकप्पियं ति एवं सन्निट्ठानं कातब्बं ।

एकंसब्याकरणीयो पञ्हो, विभज्जब्याकरणीयो पञ्हो, पटिपुच्छाब्याकरणीयो, ठपनीयो पञ्हो ति इमानि **चत्तारि पञ्हब्याकरणानि**
15 नाम । तत्थ "चक्खुं अनिच्चं" ति पुट्ठेन—"आम अनिच्चं" ति
B. 158 एकंसेनेव ब्याकातब्बं, एस नयो सोतादीसु । अयं **एकंसब्याकरणीयो** पञ्हो । "अनिच्चं नाम चक्खुं" ति पुट्ठेन[2]—"न चक्खुमेव, सोतम्पि अनिच्चं घानम्पि अनिच्चं" ति एवं विभजित्वा ब्याकातब्बं । अयं **विभज्जब्याकरणीयो** पञ्हो । "यथा चक्खु तथा सोतं, यथा सोतं तथा
20 चक्खुं" ति पुट्ठेन "केनट्ठेन पुच्छसी" ति पटिपुच्छित्वा "दस्सनट्ठेन पुच्छामी" ति वुत्ते "न ही ति ब्याकातब्बं, "अनिच्चट्ठेन पुच्छामी" ति वुत्ते "आमा" ति ब्याकातब्बं । अयं **पटिपुच्छाब्याकरणीयो** पञ्हो । "तं जीवं तं सरीरं" ति आदीनि पुट्ठेन पन "अब्याकतमेतं भगवता" ति ठपेतब्बो । एस पञ्हो न ब्याकातब्बो । अयं **ठपनीयो** पञ्हो ।
25 इति तेनाकारेन[3] पञ्हे सम्पत्ते इमानि चत्तारि पञ्हब्याकरणानि पमाणं । इमेसं वसेन सो पञ्हो ब्याकातब्बो ।

१. विरुज्झन्तस्सा पि—स्या० । २. ० पन—सी०, रो० ।
३. तेन नेनाकारेन—सी०, रो० ।

सुत्तादीसु पन सुत्तं नाम तिस्सो सङ्गीतियो आरुळ्हानि तीणि-
पिटकानि । सुत्तानुलोमं नाम अनुलोमकप्पियं । आचरियवादो नाम
अट्ठकथा । अत्तनोमति नाम नयग्गाहेन अनुबुद्धिया अत्तनो पटिभानं ।
तत्थ सुत्तं अप्पटिबाहियं, तं पटिबाहन्तेन बुद्धोव पटिबाहितो होति ।
अनुलोमकप्पियं पन सुत्तेन समेन्तमेव गहेतब्बं, न इतरं । आचरिय- 5
वादोपि सुत्तेन समेन्तोयेव गहेतब्बो, न इतरो । अत्तनोमति पन
सब्बदुब्बला । सापि सुत्तेन समेन्तायेव गहेतब्बा, न इतरा । R. 568
पञ्चसतिका, सत्तसतिका, सहस्सिका ति इमा पन तिस्सो सङ्गीतियो ।
सुत्तम्पि तासु आगतमेव पमाणं । इतरं गारय्हसुत्तं न गहेतब्बं । तत्थ
ओतरन्तानिपि हि पदब्यञ्जनानि न चेव सुत्ते ओतरन्ति, न च विनये 10
सन्दिस्सन्ती ति वेदितब्बानि ।

२१. कम्मारपुत्तचुन्दवत्थुवण्णना

६२. कम्मारपुत्तस्सा (दी० नि० २.९८) ति सुवण्णकारपुत्तस्स ।
सो किर अड्ढो महाकुटुम्बिको भगवतो पठमदस्सनेनेव सोतापन्नो हुत्वा
अत्तनो अम्बवने विहारं कारापेत्वा[1] निय्यातेसि । तं सन्धाय वुत्तं—
"अम्बवने" ति । 15

सूकरमद्दवं ति नातितरुणस्स नातिजिण्णस्स एकजेट्ठकसूकरस्स
पवत्तमंसं । तं किर मुदु चेव सिनिद्धञ्च होति, तं पटियादापेत्वा साधुकं
पचापेत्वा ति अत्थो । एके भणन्ति—"सूकरमद्दवं ति पन मुदुओदनस्स B. 159
पञ्चगोरसयूसपाचनविधानस्स नामेतं, यथा गवपानं नाम पाकनामं" ति ।
केचि भणन्ति—"सूकरमद्दवं नाम रसायनविधि । तं पन रसायनसत्थे 20
आगच्छति, तं चुन्देन—'भगवतो परिनिब्बानं न भवेय्या' ति रसायनं
पटियत्तं" ति । तत्थ पन द्विसहस्सदीपपरिवारेसु चतूसु महादीपेसु देवता
ओजं पक्खिपिंसु ।

नाहं तं ति इमं सीहनादं किमत्थं नदति ? परूपवादमोचनत्थं ।
अत्तना परिभुत्तावसेसं नेव भिक्खूनं, न मनुस्सानं दातुं अदासि, 25

१. कारेत्वा—सी०, रो० ।

आवाटे निखणापेत्वा विनासेसी ति हि वत्तुकामानं इदं सुत्वा वचनोकासो न भविस्सती ति परेसं उपवादमोचनत्थं सीहनादं नदती ति।

६३. **भुत्तस्स च सूकरमद्दवेना** (दी० नि० २.९९) ति भुत्तस्स उदपादि, न पन भुत्तपच्चया[1]। यदि हि अभुत्तस्स उप्पज्जिस्सथ, 5 अतिखरो भविस्सति[2]। सिनिद्धभोजनं भुत्तत्ता पनस्स[3] तनुवेदना अहोसि। तेनेव पदसा गन्तुं असक्खि। **विरेचमानो** ति अभिण्हं पवत्तलोहितविरेचनोव समानो। **अवोचा** ति अत्तना पत्थितट्ठाने परिनिब्बानत्थाय एवमाह। इमा पन धम्मसङ्गाहकत्थेरेहि ठपितगाथायो[4] ति वेदितब्बा।

२२. पानीयाहरणवण्णना

10 ६४. **इङ्घा** (दी० नि० २.९९) ति चोदनत्थे निपातो। R. 569 **अच्छोदका** ति पसन्नोदका। **सातोदका** ति मधुरोदका। **सीतोदका** ति तनुसीतलसलिला[5]। **सेतका** ति निक्कद्दमा। **सुप्पतित्था** ति सुन्दरतित्था।

२३. पुक्कुसमल्लपुत्तवत्थुवण्णना

६५ **पुक्कुसो** (दी० नि० २.१००) ति तस्स नामं। **मल्लपुत्तो** 15 ति मल्लराजपुत्तो। मल्ला किर वारेन रज्जं कारेन्ति। याव नेसं वारो न पापुणाति, ताव वणिज्जं करोन्ति। अयं पि वणिज्जमेव करोन्तो पञ्च सकटसतानि योजापेत्वा[6] धुरवाते वायन्ते पुरतो गच्छति, पच्छा वाते वायन्ते सत्थवाहं पुरतो पेसेत्वा सयं पच्छा गच्छति। तदा B. 160 पन पच्छा वातो वायि, तस्मा एस पुरतो सत्थवाहं पेसेत्वा सब्बरतन- 20 याने निसीदित्वा कुसिनारतो निक्खमित्वा "पावं गमिस्सामी" ति मग्गं पटिपज्जि। तेन वुत्तं—"कुसिनाराय पावं अद्धानमग्गप्पटिपन्नो होती" ति।

१. भुत्तपच्चयेन—सी०, रो०। २. अभविस्स—सी०, रो०।
३. पन—सी०, रो०। ४. ठपिता गाथा—सी०, रो०।
५. अनुसीतलसलिला—रो०। ६. योजेत्वा—स्या०।

आळारो ति तस्स नामं। दीघपिङ्गलो किरेसो, तेनस्स आळारो ति नामं अहोसि। **कालामो** ति गोत्तं। **यत्र हि नामा** ति यो नाम। **नेव दक्खती** ति न अद्दस। यत्रसद्दयुत्तत्ता पनेतं अनागतवसेन वुत्तं। एवरूपं हि ईदिसेसु ठानेसु सद्दलक्खणं।

६६. **निच्छरन्तीसू** (दी० नि० २.१०२) ति विचरन्तीसु। 5 **असनिया फलन्तिया** ति नवविधाय असनिया भिज्जमानाय विय महारवं खन्तिया। नवविधा हि असनियो—असञ्ञा, विचक्का, सतेरा, गग्गरा, कपिसीसा, मच्छविलोलिका, कुक्कुटका, दण्डमणिका, सुक्खासनी ति। तत्थ असञ्ञा असञ्ञं करोति। विचक्का एकं चक्कं करोति। सतेरा सतेरसदिसा हुत्वा पतति। गग्गरा गग्गरायमाना 10 पतति। कपिसीसा भमुकं उक्खिपेन्तो मक्कटो विय होति। मच्छविलोलिका विलोलितमच्छा विय होति। कुक्कुटका कुक्कुटसदिसा हुत्वा पतति। दण्डमणिका नङ्गलसदिसा हुत्वा पतति। सुक्खासनी पतितट्ठानं समुग्घाटेति।

देवे वस्सन्ते ति सुक्खगज्जितं गज्जित्वा अन्तरन्तरा वस्सन्ते। 15 **आतुमाय** ति आतुमं निस्साय विहरामि। **भुसागारे** ति खलसालायं। **एत्थेसो** ति एतस्मिं कारणे एसो महाजनकायो सन्निपतितो। **क्व अहोसी** ति कुहिं अहोसि। **सो तं भन्ते** ति सो त्वं भन्ते।

६७. **सिङ्गीवण्णं** (दी० नि० २.१०३) ति सिङ्गीसुवण्णवण्णं। **युगमट्ठं** ति मट्ठयुगं, सण्हसाटकयुगळं ति अत्थो। **धारणीयं** ति 20 R. 570 अन्तरन्तरा मया धारेतब्बं, परिदहितब्बं ति अत्थो। तं किर सो तथारूपे छणदिवसेयेव धारेत्वा सेसकाले निक्खिपति। एवं उत्तमं मङ्गलवत्थयुगं सन्धायाहा। **अनुकम्पं उपादाया** ति मयि अनुकम्पं पटिच्च। **अच्छादेही** ति उपचारवचनमेतं,—एकं मय्हं देहि, एकं आनन्दस्सा ति अत्थो। किं पन थेरो तं गण्ही ति? आम गण्हि। 25 कस्मा? मत्थकप्पत्तकिच्चत्ता। किञ्चा पि हेस एवरूपं लाभं पटिक्खिपित्वा उपट्ठाकट्ठानं पटिपन्नो। तं पनस्स उपट्ठाककिच्चं मत्थकं पत्तं।

तस्मा अग्गहेसि। ये चापि[1] एवं वदेय्युं—"अनाराधको मञ्ञे B. 161 आनन्दो, पञ्चवीसति वस्सानि उपट्ठहन्तेन न किञ्चि भगवतो सन्तिका तेन लद्धपुब्बं" ति। तेसं वचनोकासच्छेदनत्थम्पि अग्गहेसि। अपिच जानाति भगवा—"आनन्दो गहेत्वा पि अत्तना न धारेस्सति, मय्हं 5 येव पूजं करिस्सति। मल्लपुत्तेन पन आनन्दं पूजेन्तेन संघो पि पूजितो भविस्सति, एवमस्स महापुञ्ञरासि भविस्सती" ति थेरस्स एकं दापेसि। थेरोपि तेनेव कारणेन अग्गहेसी ति। **धम्मिया कथाया** ति वत्थानुमोदनकथाय।

६८. **भगवतो कायं उपनामितं** (दी० नि० २.१०४) ति 10 निवासनपारुपनवसेन अल्लीयापितं। भगवापि ततो एकं निवासेसि, एकं पारुपि। **हतच्चिकं विया** ति यथा हतच्चिको[2] अङ्गारो अन्तन्तेनेव जोतति, बहि पनस्स पभा नत्थि, एवं बहि पटिच्छन्नप्पभं[3] हुत्वा खायती ति अत्थो।

इमेसु खो आनन्द द्वीसुपि कालेसू ति कस्मा इमेसु द्वीसु कालेसु 15 एवं होति? आहारविसेसेन चेव बलवसोमनस्सेन च। एतेसु हि द्वीसु कालेसु सकलचक्कवाळे देवता आहारे ओजं पक्खिपन्ति, तं पणीत-भोजनं कुच्छि पविसित्वा पसन्नरूपं समुट्ठापेति। आहारसमुट्ठानरूपस्स पसन्नत्ता मनच्छट्ठानि इन्द्रियानि अतिविय विरोचन्ति। सम्बोधिदिवसे चस्स—"अनेककप्पकोटिसतसहस्ससञ्चितो वत मे किलेसरासि अज्ज 20 पहीनो" ति आवज्जन्तस्स बलवसोमनस्सं उप्पज्जति, चित्तं पसीदति, चित्ते पसन्ने लोहितं पसीदति, लोहिते पसन्ने मनच्छट्ठानि इन्द्रियानि R. 571 अतिविय विरोचन्ति। परिनिब्बानदिवसेपि—"अज्ज, दानाहं, अनेकेहि बुद्धसतसहस्सेहि पविट्ठं **अमतमहानिब्बानं** नाम नगरं पविसिस्सामी" ति आवज्जन्तस्स बलवसोमनस्सं उप्पज्जति, चित्तं पसीदति, चित्ते 25 पसन्ने लोहितं पसीदति, लोहिते पसन्ने मनच्छट्ठानि इन्द्रियानि

१. वापि—स्या०, रो०। २. वितच्चिको—सी०, रो०।
३. पच्छिन्नपभं—सी०, रो०।

अतिविय विरोचन्ति। इति आहारविसेसेन चेव बलवसोमनस्सेन च इमेसु द्वीसु कालेसु एवं होती ति वेदितब्बं। **उपवत्तने** ति पाचीनतो निवत्तनसालवने। **अन्तरेन यमकसालानं** ति यमकसालरुक्खानं मज्झे।

सिङ्गीवण्णं ति गाथा सङ्गीतिकाले ठपिता। 5

६९. **न्हत्वा च पिवित्वा चा** (दी० नि० २.१०५) ति एत्थ B.162 तदा किर भगवति नहायन्ते अन्तोनदियं मच्छकच्छपा च उभतोतीरेसु वनसण्डो च सब्बं सुवण्णवण्णमेव होति[1]। **अम्बवनं** ति तस्सायेव नदिया तीरे अम्बवनं। आयस्मन्तं **चुन्दकं** ति तस्मिं किर खणे आनन्दत्थेरो उदकसाटकं पीळेन्तो ओहीयि, चुन्दत्थेरो समीपे 10 अहोसि। तं भगवा आमन्तेसि।

गन्त्वान बुद्धो नदिकं ककुधं ति इमापि गाथा सङ्गीतिकालेयेव ठपिता। तत्थ **पवत्ता भगवा इध धम्मे** ति भगवा इध सासने धम्मे पवत्ता, चतुरासीति धम्मक्खन्धसहस्सानि पवत्तानी ति अत्थो। **पमुखे निसीदी** ति सत्थु पुरतोव निसीदि। एत्तावता च थेरो अनुप्पत्तो। 15 एवं अनुप्पत्तं अथ खो भगवा आयस्मन्तं आनन्दं आमन्तेसि।

७०. **अलाभा** (दी० नि० २.१०५) ति ये अञ्ञेसं दानानिसंस-सङ्खाता लाभा होन्ति, ते अलाभा। **दुल्लद्धं** ति पुञ्ञविसेसेन लद्धम्पि मनुस्सत्तं दुल्लद्धं। **यस्सते** ति यस्स तव। उत्तण्डुलं वा अतिकिलिन्नं वा को जानाति, कीदिसम्पि पच्छिमं पिण्डपातं परिभुञ्जित्वा तथागतो 20 परिनिब्बुतो, अद्धा ते[2] यं वा तं वा दिन्नं भविस्सती ति। **लाभा** ति दिट्ठधम्मिकसम्परायिकदानानिसंससङ्खाता लाभा। **सुलद्धं** ति तुय्हं मनुस्सत्तं सुलद्धं। **समसमफला** ति सब्बाकारेन समानफला।

ननु च यं सुजाताय दिन्नं पिण्डपातं भुञ्जित्वा तथागतो अभि-सम्बुद्धो, सो सरागसदोससमोहकाले परिभुत्तो, अयं पन चुन्देन दिन्नो 25

१. अहोसि—सी०, रो०। २. तेन—सी०, रो०।

वीतरागवीतदोसवीतमोहकाले परिभुत्तो, कस्मा एते समफला[1] ति ? परिनिब्बानसमताय च समापत्तिसमताय च अनुस्सरणसमताय च। R. 572 भगवा हि सुजाताय दिन्नं पिण्डपातं परिभुञ्जित्वा सउपादिसेसाय निब्बानधातुया परिनिब्बुतो, चुन्देन दिन्नं परिभुञ्जित्वा अनुपादि- 5 सेसाय निब्बानधातुय परिनिब्बुतो ति एवं **परिनिब्बानसमताय** पि समफला। अभिसम्बुज्झनदिवसे च चतुवीसतिकोटिसतसहस्ससङ्ख्या समापत्तियो समापज्जि, परिनिब्बानदिवसे पि सब्बा ता समापज्जी ति एवं **समापत्तिसमतायपि** समफला। सुजाता च अपरभागे अस्सोसि— "न[2] किरेसा रुक्खदेवता, बोधिसत्तो किरेस[3], तं किर पिण्डपातं B. 163 10 परिभुञ्जित्वा अनुत्तरं सम्मासम्बोधिं अभिसम्बुद्धो, सत्तसत्ताहं किरस्स तेन यापनं अहोसी" ति। तस्सा इदं सुत्वा—"लाभा वत मे" ति अनुस्सरन्तिया बलवपीतिसोमनस्सं उदपादि। चुन्दस्सापि अपरभागे— "अवसानपिण्डपातो किर मया दिन्नो, धम्मसीसं किर मे गहितं, मय्हं किर पिण्डपातं परिभुञ्जित्वा सत्था अनुपादिसेसाय निब्बानधातुया 15 परिनिब्बुतो" ति सुत्वा "लाभा वत मे" ति अनुस्सरतो बलवसोम- नस्सं उदपादी ति एवं **अनुस्सरणसमताय** पि समफला ति वेदितब्बा।

यससंवत्तनिकं ति परिवारसंवत्तनिकं। **आधिपतेय्यसंवत्तनिकं** ति जेट्ठकभावसंवत्तनिकं।

संयमतो ति सीलसंयमेन संयमन्तस्स, संवरे[4] ठितस्सा[4] ति 20 अत्थो। **वेरं न चीयती** ति पञ्चविधं वेरं न वड्ढति। **कुसलो च जहाति पापकं** ति कुसलो पन ञाणसम्पन्नो अरियमग्गेन अनवसेसं पापकं लामकं अकुसलं जहाति। **रागदोसमोहक्खया स निब्बुतो** ति सो इमं[5] पापकं जहित्वा रागादीनं खया किलेसनिब्बानेन निब्बुतो ति। इति

१. समसमफला ति—सी०, स्या०, रो०। २. न हि—स्या०।
३. सो तं किर—स्या०। ४-४. संवरं तस्सा ति—सी०, रो०।
५. एवं—सी०, रो०।

चुन्दस्स च दक्खिणं, अत्तनो च दक्खिणेय्यसम्पत्तिं सम्पस्समानो[1] उदानं उदानेसी ति ।

चतुत्थभाणवारवण्णना निट्ठिता

२४. यमकसालावण्णना

७१. **महता भिक्खुसंघेन सद्धिं** (दी० नि० २.१०६) ति इध भिक्खूनं गणनपरिच्छेदो नत्थि । वेळुवगामे वेदनाविक्खम्भनतो पट्ठाय हि—"न चिरेन भगवा परिनिब्बायिस्सती" ति सुत्वा ततो ततो आगतेसु भिक्खूसु एकभिक्खुपि पक्कन्तो नाम नत्थि । तस्मा गणनवीतिवत्तो संघो अहोसि । **उपवत्तनं मल्लानं सालवनं** ति यथेव हि कलम्बनदीतीरतो राजमातुविहारद्वारेन थूपारामं गन्तब्बं होति, एवं हिरञ्ञवतिया पारिमतीरतो सालवनुय्यानं । यथा अनुराधपुरस्स थूपारामो, एवं तं कुसिनारायं होति । यथा थूपारामतो दक्खिणद्वारेन नगरं पविसनमग्गो पाचीनमुखो गन्त्वा उत्तरेन निवत्तो[2], एवं उय्यानतो सालवनं[3] पाचीनमुखं गन्त्वा उत्तरेन निवत्तं[4] । तस्मा तं—"उपवत्तनं" ति वुच्चति । **अन्तरेन यमकसालानं उत्तरसीसकं** ति तस्स किर मञ्चकस्स एका सालपन्ति सीसभागे होति, एका पादभागे । तत्रापि एको तरुणसालो सीसभागस्स आसन्नो होति, एको पादभागस्स । अपिच **यमकसाला** नाम मूलखन्धविटपपत्तेहि अञ्ञमञ्ञं संसिब्बित्वा ठितसाला ति वुत्तं । **मञ्चकं पञ्ञपेही** ति तस्मिं किर उय्याने राजकुलस्स सयनमञ्चो अत्थि । तं सन्धाय[5] पञ्ञपेही ति आह । थेरो पि तंयेव पञ्ञपेत्वा अदासि ।

5 R. 573 10 B. 164 15

किलन्तोस्मि, आनन्द, निपज्जिस्सामी ति तथागतस्स हि— 20

१. पसस्समानो—सी०, रो० । २. निवत्तति—सी०, रो० ।
३. सालपन्ति—सी०, रो० । ४. निवत्ता—सी०, रो० ।
५. ० मञ्चकं—रो० ।

"गोचरि कळापो[1] गङ्गेय्यो, पिङ्गलो पब्बतेय्यको।
हेमवतो च तम्बो च, मन्दाकिनि उपोसथो।
छद्दन्तोयेव दसमो, एते नागानमुत्तमा" ति॥,

एत्थ यं दसन्नं गोचरिसङ्खातानं पकतिहत्थीनं बलं, तं एकस्स कळापस्सा ति। एवं दसगुणवड्ढिताय गणनाय पकतिहत्थीनं कोटि-सहस्सबलप्पमाणं बलं। तं सब्बम्पि चुन्दस्स पिण्डपातं परिभुत्तकालतो पट्ठाय चङ्गवारे पक्खित्तउदकं विय परिक्खयं गतं। पावानगरतो तीणि गावुतानि कुसिनारानगरं। एतस्मिं अन्तरे पञ्चवीसतिया ठानेसु निसीदित्वा महता उस्साहेन आगच्छन्तोपि सूरियस्स अत्थङ्गमित-वेलायं सञ्झासमये भगवा सालवनं पविट्ठो। एवं रोगो सब्बं आरोग्यं मद्दन्तो आगच्छति। एतमत्थं दस्सेन्तो विय सब्बलोकस्स संवेगकरं वाचं भासन्तो—"किलन्तोस्मि, आनन्द, निपज्जिस्सामी" ति आह।

कस्मा पन भगवा एवं महन्तेन उस्साहेन इधागतो, किं अञ्ञत्थ न सक्का परिनिब्बायितुं ति? परिनिब्बायितुं नाम न कत्थचि न सक्का। तीहि पन कारणेहि इधागतो। इदञ्हि भगवा एवं पस्सति—"मयि अञ्ञत्थ परिनिब्बायन्ते महासुदस्सनसुत्तस्स अत्थुप्पत्ति न भविस्सति, कुसिनारायं पन[2] परिनिब्बायन्ते यमहं देवलोके अनुभवि-तब्बं सम्पत्तिं मनुस्सलोकेयेव अनुभविं, तं द्वीहि भाणवारेहि मण्डेत्वा देसेस्सामि, तं मे सुत्वा बहू जना कुसलं कातब्बं मञ्ञिस्सन्ती" ति।

अपरम्पि पस्सति—"मं अञ्ञत्थ परिनिब्बायन्तं सुभद्दो न पस्सिस्सति, सो च बुद्धवेनेय्यो, न सावकवेनेय्यो; न तं सावका विनेतुं सक्कोन्ति। कुसिनारायं परिनिब्बायन्तं पन मं सो उपसङ्कमित्वा पञ्हं पुच्छिस्सति, पञ्हाविस्सज्जनपरियोसाने च सरणेसु पतिट्ठाय मम सन्तिके पब्बज्जञ्च उपसम्पदञ्च लभित्वा कम्मट्ठानं गहेत्वा मयि धरमाने-येव अरहत्तं पत्वा पच्छिमसावको[3] भविस्सती" ति।

१. कलम्बो च—सी०, रो०। २. सी० पोत्थके नत्थि।
३. ० नाम—सी०, रो०।

अपरम्पि पस्सति—"मयि अञ्ञत्थ परिनिब्बायन्ते धातुभाजनीये महाकलहो भविस्सति, लोहितं नदी विय सन्दिस्सति। कुसिनारायं परिनिब्बुते दोणब्राह्मणो तं विवादं वूपसमेत्वा धातुयो विभजिस्सती[1]" ति। इमेहि तीहि कारणेहि भगवा एवं महन्तेन उस्साहेन इधागतो ति वेदितब्बो। 5

सीहसेय्यं ति एत्थ कामभोगीसेय्या, पेतसेय्या, सीहसेय्या, तथागतसेय्या ति चतस्सो सेय्या।

तत्थ—"येभुय्येन, भिक्खवे, कामभोगी सत्ता वामेन पस्सेन सेन्ती" ति अयं **कामभोगीसेय्या**। तेसु हि येभुय्येन दक्खिणेन पस्सेन सयन्ता नाम नत्थि। 10

"येभुय्येन, भिक्खवे, पेता उत्ताना सेन्ती" ति अयं **पेतसेय्या**। अप्पमंसलोहितत्ता हि पेता अट्ठिसङ्घाटजटिता एकेन पस्सेन सयितुं न सक्कोन्ति, उत्तानाव सेन्ति।

"सीहो, भिक्खवे, मिगराजा दक्खिणेन पस्सेन सेय्यं कप्पेति ...पे०...अत्तमनो होती" (अं० नि० २.२५९) ति अयं **सीहसेय्या**। 15 तेजुस्सदत्ता हि सीहो मिगराजा द्वे पुरिमपादे एकस्मिं ठाने, पच्छिमपादे एकस्मिं ठाने ठपेत्वा नङ्गुट्ठं अन्तरसत्थिम्हि पक्खिपित्वा पुरिमपाद-पच्छिमपादनङ्गुट्ठानं ठितोकासं सल्लक्खेत्वा द्विन्नं पुरिमपादानं मत्थके सीसं ठपेत्वा सयति[2]। दिवसं सयित्वा पि पबुज्झमानो न उत्तसन्तो पबुज्झति, सीसं पन उक्खिपित्वा पुरिमपादादीनं ठितोकासं 20 सल्लक्खेति। सचे किञ्चि ठानं विजहित्वा ठितं होति,—"न यिदं तुय्हं जातिया सूरभावस्स च अनुरूपं" ति अनत्तमनो हुत्वा तत्थेव सयति, न गोचराय पक्कमति। अविजहित्वा ठिते पन—"तुय्हं जातिया च सूरभावस्स च अनुरूपमिदं" ति हट्ठतुट्ठो उट्ठाय सीह- R. 575 B. 166 विजम्भितं विजम्भित्वा केसरभारं विधुनित्वा तिक्खत्तुं सीहनादं 25 नदित्वा गोचराय पक्कमति।

१. विभजित्वा दस्सती—सी०, रो०। २. सत्त दिवसं पि सयित्वा—सी०, रो०।

"चतुत्थज्झानसेय्या पन तथागतस्स सेय्या ति वुच्चति" (अं० नि० २.२५९)। तासु इध सीहसेय्या आगता। अयञ्हि तेजुस्सदइरियापथत्ता उत्तमसेय्या नाम।

पादे पादं ति दक्खिणपादे वामपादं। **अच्चाधाया** ति अतिआधाय,
5 ईसकं अतिक्कम्म ठपेत्वा। गोप्फकेन हि गोप्फके, जाणुना वा जाणुम्हि सङ्घट्टियमाने अभिण्हं वेदना उप्पज्जति, चित्तं एकग्गं न होति, सेय्या अफासुका होति। यथा पन न सङ्घट्टेति, एवं अतिक्कम्म ठपिते वेदना नुप्पज्जति, चित्तं एकग्गं होति, सेय्या फासु होति। तस्मा एवं निपज्जि। अनुट्ठानसेय्यं उपगतत्ता पनेत्थ—"उट्ठानसञ्ञं मनसि
10 करित्वा" ति न वुत्तं। कायवसेन चेत्थ अनुट्ठानं वेदितब्बं, निद्दावसेन पन तं रत्तिं भगवतो भवङ्गस्स ओकासोयेव नाहोसि। पठमयामस्मिञ्हि मल्लानं धम्मदेसना अहोसि, मज्झिमयामे सुभद्दस्स पच्छिमयामे भिक्खुसंघं[1] ओवदि। बलवपच्चूसे परिनिब्बायि।

सब्बफालिफुल्ला ति सब्बे समन्ततो पुप्फिता मूलतो पट्ठाय याव
15 अग्गा एकच्छन्ना अहेसुं। न केवलञ्च यमकसालायेव, सब्बे पि रुक्खा सब्बफालिफुल्लाव अहेसुं। न केवलञ्हि तस्मिं येव उय्याने, सकलम्हिपि दससहस्सचक्कवाळे पुप्फूपगा पुप्फं गण्हिंसु, फलूपगा फलं गण्हिंसु, सब्बरुक्खानं खन्धेसु खन्धपदुमानि, साखासु साखापदुमानि, वल्लीसु वल्लिपदुमानि, आकासेसु आकासपदुमानि[2] पथवीतलं भिन्दित्वा
20 दण्डपदुमानि[3] पुप्फिंसु-। सब्बो महासमुद्दो पञ्चवण्णपदुमसञ्छन्नो अहोसि। तियोजनसहस्सवित्थतो हिमवा घनबद्धमोरपिञ्छकलापो विय, निरन्तरं मालादामगवच्छितो विय, सुट्ठु पीळेत्वा आबद्धपुप्फवटंसको विय, सुपूरितं पुप्फचङ्कोटकं विय च अतिरमणीयो अहोसि।

ते तथागतस्स सरीरं ओकिरन्ती ति ते यमकसाला भुम्मदेवताहि
25 सञ्चलितखन्धसाखविटपा तथागतस्स सरीरं अवकिरन्ति, सरीरस्स उपरि

१. भिक्खुं—सी०, रो०। २. उल्लोकपदुमानि—सी०, रो०।
३. दण्डकपदुमानि—सी०, रो०।

पुप्फानि विकिरन्ती ति अत्थो । अज्झोकिरन्ती ति अज्झोत्थरन्ता विय किरन्ति । अभिप्पकिरन्ती ति अभिण्हं पुनप्पुनं पकिरन्तियेव । दिब्बानी ति देवलोके नन्दपोक्खरणीसम्भवानि । तानि होन्ति सुवण्णवण्णानि पण्णच्छत्तप्पमाणपत्तानि, महातुम्बमत्तं रेणुं गण्हन्ति । न केवलञ्च मन्दारवपुप्फानेव, अञ्ञानिपि पन दिब्बानि पारिच्छत्तककोविळारपुप्फादीनि सुवण्णचङ्कोटकानि पूरेत्वा चक्कवाळमुखवट्टियम्पि तिदसपुरेपि ब्रह्मलोकेपि ठिताहि देवताहि पविट्ठानि, अन्तलिक्खा पतन्ति[1] । तथागतस्स सरीरं ति अन्तरा अविकिण्णानेव[2] आगन्त्वा[3] पत्तकिञ्जक्खरेणुचुण्णेहि तथागतस्स सरीरमेव ओकिरन्ति ।

B. 167 R. 576

दिब्बानिपि चन्दनचुण्णानी ति देवतानं उपकप्पनचन्दनचुण्णानि । न केवलञ्च देवतानंयेव, नागसुपण्णमनुस्सानम्पि उपकप्पनचन्दनचुण्णानि । न केवलञ्च चन्दनचुण्णानेव, काळानुसारिकलोहितचन्दनादिसब्बदिब्बगन्धजालचुण्णानि[4], हरितालअञ्जनसुवण्णरजतचुण्णानि सब्बदिब्बगन्धवासविकत्तियो सुवण्णरजतादिसमुग्गे पूरेत्वा[5] चक्कवाळमुखवट्टिआदीसु ठिताहि देवताहि पविट्ठानि अन्तरा अविप्पकिरित्वा तथागतस्सेव सरीरं ओकिरन्ति ।

दिब्बानिपि तूरियानी ति देवतानं उपकप्पनतूरियानि । न केवलञ्च तानियेव, सब्बानिपि तन्तिबद्धचम्मपरियोनद्धघनसुसिरभेदानि दससहस्सचक्कवाळेसु[6] देवनागसुपण्णमनुस्सानं तूरियानि एकचक्कवाळे सन्निपतित्वा अन्तलिक्खे वज्जन्ती ति वेदितब्बानि ।

दिब्बानिपि सङ्गीतानी ति वरुणवारणदेवता[7] किरनामेता दीघायुका देवता—"महापुरिसो मनुस्सपथे निब्बत्तित्वा बुद्धो भविस्सती" ति सुत्वा "पटिसन्धिग्गहणदिवसे नं गहेत्वा गमिस्सामा" ति मालं गन्थेतुमारभिंसु । ता गन्धमानाव—"महापुरिसो मातुकुच्छियं

१. पपतन्ति—सी०, रो० ।
२. अविप्पकिण्णानेव—सी०, रो० ।
३. ० आगन्त्वा—सी०, रो० ।
४. कालानुसारितगर ०—सी०, रो० ।
५. पूरेत्वा—सी०, रो० ।
६. ० चक्कवाले—सी०, रो० ।
७. वरवारणदेवता—सी०, रो० ।

निब्बत्तो'' ति[१] सुत्वा[१] "तुम्हे कस्स गन्थथा" ति वुत्ता न ताव निट्ठाति, "कुच्छितो निक्खमनदिवसे गण्हित्वा गमिस्सामा'' ति आहंसु। पुनपि "निक्खन्तो" ति सुत्वा "महाभिनिक्खमनदिवसे गमिस्सामा" ति । एकूनतिंसवस्सानि घरे वसित्वा "अज्ज महाभिनिक्खमनं
5 निक्खन्तो'' ति पि सुत्वा "अभिसम्बोधिदिवसे गमिस्सामा" ति । छब्बस्सानि पधानं कत्वा "अज्ज अभिसम्बुद्धो" ति पि सुत्वा "धम्मचक्कप्पवत्तनदिवसे गमिस्सामा" ति । सत्तसत्ताहानि बोधिमण्डे
R. 577 वीतिनामेत्वा इसिपतनं गन्त्वा धम्मचक्कं पवत्तितं"[२] ति पि सुत्वा "यमकपाटिहारियदिवसे गमिस्सामा" ति । "अज्ज यमकपाटिहारियं
B. 168 10 करी'' ति पि सुत्वा "देवोरोहणदिवसे गमिस्सामा'' ति । "अज्जदेवोरोहणं करी" ति पि सुत्वा "आयुसङ्खारोस्सज्जने गमिस्सामा" ति । "अज्ज आयुसङ्खारं ओस्सजी'' ति पि सुत्वा "न ताव निट्ठाति, परिनिब्बानदिवसे गमिस्सामा" ति । "अज्ज भगवा यमकसालानमन्तरे दक्खिणेन पस्सेन सतो सम्पजानो सीहसेय्यं उपगतो बलवपच्चूससमये
15 परिनिब्बायिस्सति। तुम्हे कस्स गन्थथा'' ति सुत्वा पन[३]—"किन्नामेतं, 'अज्जेव मातुकुच्छियं पटिसन्धिं गण्हि, अज्जेव मातुकुच्छितो निक्खमि, अज्जेव महाभिनिक्खमनं निक्खमि, अज्जेव बुद्धो अहोसि, अज्जेव धम्मचक्कं पवत्तयि, अज्जेव यमकपाटिहारियं अकासि, अज्जेव देवलोका ओतिण्णो, अज्जेव आयुसङ्खारं ओस्सजि, अज्जेव किर परिनिब्बा-
20 यिस्सती[४]'' ति । ननु नाम दुतियदिवसे यागुपानकालमत्तम्पि ठातब्बं अस्स । दस पारमियो पूरेत्वा बुद्धत्तं पत्तस्स नाम अननुच्छविकमेतं" ति अपरिनिट्ठिताव मालायो गहेत्वा आगम्म अन्तो चक्कवाळे ओकासं अलभमाना चक्कवाळमुखवट्टियं लम्बित्वा[५] चक्कवाळमुखवट्टियाव आधावन्तियो हत्थेन हत्थं गीवाय गीवं गहेत्वा तीणि रतनानि आरब्भ
25 द्वत्तिंस महापुरिसलक्खणानि छब्बण्णरस्मियो दस पारमियो अड्ढछट्ठानि

१-१. सी०, रो० पोत्थकेसु नत्थि । २. पवत्तयि—सी०, रो० ।
३. पुन—सी० । ४. परिनिब्बुतो—रो० ।
५. लभित्वा—सी०, रो० ।

जातकसतानि चुद्दस बुद्धञाणानि आरब्भ गायित्वा तस्स तस्स अवसाने "महायसो,[1] महायसो"[1] ति वदन्ति । इदमेतं पटिच्च वुत्तं— "दिब्बानिपि सङ्गीतानि अन्तलिक्खे वज्जन्ति तथागतस्स पूजाया" ति ।

७२. भगवा पन यमकसालानं अन्तरा दक्खिणेन पस्सेन निपन्नो येव पथवीतलतो याव चक्कवाळमुखवट्टिया, चक्कवाळमुखवट्टितो च 5 याव ब्रह्मलोका सन्निपतिताय परिसाय महन्तं उस्साहं[2] दिस्वा आयस्मतो आनन्दस्स आरोचेसि । तेन वुत्तं—"अथ खो भगवा आयस्मन्तं आनन्दं...पे०...तथागतस्स पूजाया" ति । एवं महासक्कारं दस्सेत्वा तेनापि अत्तनो असक्कतभावमेव दस्सन्तो न खो आनन्द एत्तावता (दी० नि० २.१०७) तिआदिमाह । 10

इदं वुत्तं होति—"आनन्द, मया दीपङ्करपादमूले निपन्नेन अट्ठ धम्मे समोधानेत्वा अभिनीहारं करोन्तेन न मालागन्धतुरियसंगीतानं अत्थाय R. 578 अभिनीहारो कतो, न एतदत्थाय पारमियो पूरिता । तस्मा न खो अहं एताय पूजाय पूजितो[3] नाम[4] होमी" ति ।

कस्मा पन भगवा अञ्ञत्थ एकं उमापुप्फमत्तम्पि गहेत्वा बुद्धगुणे 15 B. 169 आवज्जेत्वा कताय पूजाय बुद्धञाणेनापि अपरिच्छिन्नं विपाकं वण्णेत्वा इध एवं महन्तं[5] पूजं पटिक्खिपती ति ? परिसानुग्गहेन चेव सासनस्स च चिरट्ठितिकामताय । सचे हि भगवा एवं न पटिक्खिपेय्य, अनागते सीलस्स आगतट्ठाने[6] सीलं न परिपूरेस्सन्ति, समाधिस्स आगतट्ठाने समाधिं न परिपूरेस्सन्ति, विपस्सनाय आगतट्ठाने विपस्सनागब्भं न 20 गाहापेस्सन्ति । उपट्ठाके समादपेत्वा पूजंयेव कारेन्ता विहरिस्सन्ति[7] । आमिसपूजा च नामेसा सासनं एकदिवसम्पि एकयागुपानकालमत्तम्पि सन्धारेतुं न सक्कोति । महाविहारसदिसञ्हि विहारसहस्सं

१-१ सहाय हे, सहाय हे—रो०; पहायमहे पहायमहे—स्या० ।
२. उस्सवं—सी०, रो० ।
३. पूरितो—रो० ।
४. रो० पोत्थके नत्थि ।
५. महन्ति—सी०, स्या०, रो० ।
६. अगतट्ठाने—सी० ।
७. विचरिस्सन्ति—सी०, रो० ।

महाचेतियसदिसञ्च चेतियसहस्सम्पि सासनं धारेतुं न सक्कोन्ति[१]। येन कम्मं[२] कतं, तस्सेव होति। सम्मापटिपत्ति पन तथागतस्स अनुच्छविका पूजा। सा हि तेन पत्थिता चेव, सक्कोति सासनञ्च सन्धारेतुं, तस्मा तं दस्सेन्तो **यो खो आनन्दा** तिआदिमाह।

5 तत्थ **धम्मानुधम्मप्पटिपन्नो** ति नवविधस्स लोकुत्तरधम्मस्स अनुधम्मं पुब्बभागपटिपदं पटिपन्नो। सायेव पन पटिपदा अनुच्छविकत्ता "सामीची" ति वुच्चति। तं सामीचिं पटिपन्नो ति **सामीचिप्पटिपन्नो**। तमेव पुब्बभागपटिपदासङ्खातं अनुधम्मं चरति पूरेती ति **अनुधम्मचारी**।

10 **पुब्बभागपटिपदा** ति च सीलं आचारपञ्ञत्ति धुतङ्गसमादानं[३] याव गोत्रभुतो सम्मापटिपदा[४] वेदितब्बा। तस्मा यो भिक्खु छसु अगारवेसु पतिट्ठाय पञ्ञत्तिं अतिक्कमति, अनेसनाय जीविकं कप्पेति, अयं न धम्मानुधम्मप्पटिपन्नो[५]। यो पन सब्बं अत्तनो पञ्ञत्तं सिक्खापदं जिनवेलं जिनमरियादं जिनकाळसुत्तं अणुमत्तम्पि न वीतिक्कमति, अयं
15 धम्मानुधम्मप्पटिपन्नो नाम। भिक्खुनिया पि एसेव नयो।

यो उपासको पञ्च वेरानि दस अकुसलकम्मपथे समादाय वत्तति अप्पेति, अयं न धम्मानुधम्मपटिपन्नो। यो पन तीसु सरणेसु, पञ्चसु पि सीलेसु, दससु सीलेसु परिपूरकारी होति, मासस्स अट्ठ उपोसथे करोति,
R. 579 दानं देति, गन्धपूजं मालापूजं करोति, मातरं पितरं उपट्ठाति, धम्मिके
20 समणब्राह्मणे उपट्ठाति, अयं धम्मानुधम्मप्पटिपन्नो नाम। उपासिकायपि एसेव नयो।

B. 170 **परमाय पूजाया** ति उत्तमाय पूजाय। अयञ्हि निरामिसपूजा नाम सक्कोति मम सासनं सन्धारेतुं। याव हि इमा चतस्सो परिसा मं

१. सक्कोति—सी०, रो०।
२. सी०, स्या० पोत्थकेसु नत्थि।
३. ० समादानेन—सी०, रो०।
४. ० पटिपदा ति—सी०, रो०।
५. धम्मानुधम्मपटिपदं पटिपन्नो—सी०, रो०।

इमाय[1] पूजेस्सन्ति, ताव मम सासनं मज्झे नभस्स पुण्णचन्दो विय विरोचिस्सती ति दस्सेति ।

२५. उपवाणत्थेरवण्णना

७३. अपसारेसी ति अपनेसि । अपेही ति अपगच्छ । थेरो एकवचनेनेव तालवण्टं निक्खिपित्वा एकमन्तं अट्ठासि । उपट्ठाको तिआदि पठमबोधियं अनिबद्धुपट्ठाकभावं सन्धायाह । अयं, भन्ते, 5 आयस्मा उपवाणो ति एवं थेरेन वुत्ते आनन्दो उपवाणस्स सदोसभावं सल्लक्खेति । 'हन्दस्स निद्दोसभावं कथेस्सामी' ति भगवा येभुय्येन आनन्दा तिआदिमाह । तत्थ येभुय्येना ति इदं असञ्ञसत्तानञ्चेव अरूपदेवतानञ्च ओहीनभावं सन्धाय वुत्तं । अप्फुटो ति असम्फुट्ठो अभरितो वा । भगवतो किर आसन्नपदेसे वालग्गमत्ते ओकासे 10 सुखुमत्तभावं मापेत्वा दस दस महेसक्खा देवता अट्ठंसु, तासं परतो वीसति वीसति, तासं परतो तिंसति तिंसति, तासं परतो चत्तालीसं चत्तालीसं, तासं परतो पञ्ञासं पञ्ञासं, तासं परतो सट्ठि देवता अट्ठंसु । ता अञ्ञमञ्ञं हत्थेन वा पादेन वा वत्थेन वा न ब्याबाधेन्ति । "अपेहि मं,[2] मा घट्टेही" ति वत्तब्बाकारं नाम नत्थि । "ता खो पन 15 देवतायो दसपि हुत्वा वीसतिपि हुत्वा तिंसम्पि हुत्वा चत्तालीसम्पि हुत्वा पञ्ञासम्पि[3] हुत्वा आरग्गकोटिनितुदनमत्तेपि तिट्ठन्ति, न च अञ्ञमञ्ञं ब्याबाधेन्ती" (अं० नि० १.६२) ति वुत्तसदिसाव अहेसुं । ओवारेन्तो ति आवारेन्तो । थेरो किर पकतियापि महासरीरो हत्थिपोतकसदिसो । सो पंसुकूलचीवरं पारुपित्वा अतिमहा विय 20 अहोसि ।

तथागतं दस्सनाया ति भगवतो मुखं दट्ठुं अलभमाना एवं उज्झायिंसु । किं पन ता थेरं विनिविज्झ पस्सितुं न सक्कोन्ती ति ? आम, न सक्कोन्ति । देवता हि पुथुज्जने विनिविज्झ पस्सितुं

१. ० पूजाय—सी०, स्या०, रो० । २. सी०, रो० पोत्थकेसु नत्थि । ३. सट्ठिम्पि—सी०, रो० ।

R. 580 सक्कोन्ति, न खीणासवे। थेरस्स च महासक्खताय तेजुस्सदताय
B. 171 उपगन्तुम्पि न सक्कोन्ति। कस्मा पन थेरोव तेजुस्सदो, न अञ्ञे
अरहन्तो ति ? यस्मा कस्सपबुद्धस्स चेतिय आरक्खदेवता अहोसि।
विपस्सिम्हि किर सम्मासम्बुद्धे परिनिब्बुते एकग्घनसुवण्णक्खन्धसदिसस्स
5 धातुसरीरस्स एकमेव चेतियं अकंसु, दीघायुकबुद्धानञ्हि एकमेव
चेतियं होति। तं मनुस्सा रतनायामाहि विदत्थिवित्थताहि
द्वङ्गुलबहलाहि सुवण्णिट्ठिकाहि हरितालेन च मनोसिलाय च मत्तिकाकिच्चं
तिलतेलेनेव उदककिच्चं साधेत्वा योजनप्पमाणं उट्ठपेसुं। ततो भुम्मा
देवता योजनप्पमाणं, ततो आकासट्ठकदेवता, ततो उण्हवलाहकदेवता,
10 ततो अब्भवलाहकदेवता, ततो चातुमहाराजिका देवता, ततो तावतिंसा
देवता योजनप्पमाणं उट्ठपेसुं ति एवं सत्तयोजनिकं चेतियं अहोसि।
मनुस्सेसु मालागन्धवत्थादीनि गहेत्वा आगतेसु आरक्खदेवता गहेत्वा
तेसं[1] पस्सन्तानं येव चेतियं पूजेसि[2]।

तदा अयं थेरो ब्राह्मणमहासालो हुत्वा एकं पीतकं वत्थं आदाय
15 गतो। देवता तस्स हत्थतो वत्थं गहेत्वा चेतियं पूजेसि[3]। ब्राह्मणो
तं दिस्वा पसन्नचित्तो "अहम्पि अनागते एवरूपस्स बुद्धस्स चेतिये
आरक्खदेवता होमी" ति पत्थनं कत्वा ततो चुतो देवलोके निब्बत्ति।
तस्स देवलोके च मनुस्सलोके च संसरन्तस्सेव कस्सपो भगवा लोके
उप्पज्जित्वा परिनिब्बायि। तस्सापि एकमेव धातुसरीरं अहोसि।
20 तं गहेत्वा योजनिकं चेतियं कारेसुं। सो तत्थ आरक्खदेवता हुत्वा
सासने अन्तरहिते सग्गे निब्बत्तित्वा अम्हाकं भगवतो काले ततो
चुतो महाकुले पटिसन्धिं गहेत्वा निक्खम्म पब्बजित्वा अरहत्तं पत्तो।
इति चेतिये आरक्खदेवता हुत्वा आगतत्ता थेरो तेजुस्सदोति
वेदितब्बो।

25 देवता आनन्द उज्झायन्ती ति इति आनन्द, देवता उज्झायन्ति,
न मय्हं पुत्तस्स अञ्ञो कोचि दोसो अत्थी ति दस्सेति।

१. ० तेसं—सी०, रो०। २. पूजेन्ति—सी०, रो०।
३. पूजेसुं—सी०, रो०।

७४. **कथंभूता पन भन्ते** (दी० नि २.१०८) ति कस्मा आह? भगवा तुम्हे—"देवता उज्झायन्ती" ति वदथ, कथं भूता पन ता तुम्हे मनसि करोथ[1], किं तुम्हाकं परिनिब्बानं अधिवासेन्ती ति पुच्छति। अथ भगवा—"नाहं अधिवासनकारणं वदामी" ति तासं अनधिवासनभावं दस्सेन्तो **सन्तानन्दा** तिआदिमाह। B. 172 5

तत्थ **आकासे पथवीसञ्ञिनियो** ति आकासे पथविं मापेत्वा तत्थ पथवीसञ्ञिनियो। **कन्दन्ती** ति रोदन्ति। **छिन्नपपातं पपतन्ती** ति मज्झे छिन्ना विय हुत्वा यतो वा ततो वा पपतन्ति[2]। **आवट्टन्ती** ति आवट्टन्तियो पतितट्ठानमेव आगच्छन्ति। **विवट्टन्ती** ति पतितट्ठानतो परभागं वट्टमाना गच्छन्ति। अपिच द्वे पादे पसारेत्वा सकिं पुरतो सकिं पच्छतो सकिं वामतो सकिं दक्खिणतो संपरिवत्तमाना पि—"आवट्टन्ति विवट्टन्ती" ति वुच्चन्ति। **सन्तानन्द देवता पथवियं पथवीसञ्ञिनियो** ति पकतिपथवी किर देवता धारेतुं न सक्कोति। तत्थ हत्थको ब्रह्मा विय देवता ओसीदन्ति। तेनाह भगवा—"ओळारिकं हत्थक, अत्तभावं अभिनिम्मिनाही" (अं० नि० १.२५९) ति। तस्मा या देवता पथवियं पथविं मापेसुं, ता सन्धायेतं वुत्तं—"पथवियं पथवीसञ्ञिनियो" ति। **वीतरागा** ति पहीनदोमनस्सा सिलाथम्भसदिसा अनागामिखीणासवदेवता। R. 581 10 15

२६. चतुसंवेजनीयठानवण्णना

७५. **वस्संवुट्ठा** ति बुद्धकाले किर द्वीसु कालेसु भिक्खू सन्निपतन्ति उपकट्ठाय वस्सूपनायिकाय कम्मट्ठानग्गहणत्थं, वुट्ठवस्सा च गहितकम्मट्ठानानुयोगेन निब्बत्तितविसेसारोचनत्थं। यथा च बुद्धकाले, एवं तम्बपण्णिदीपेपि अपारगङ्गाय भिक्खू लोहपासादे सन्निपतिंसु, पारगङ्गाय भिक्खू तिस्समहाविहारे। तेसु अपारगङ्गाय भिक्खू सङ्कारछड्डकसम्मज्जनियो गहेत्वा आगन्त्वा महाविहारे सन्निपतित्वा चेतिये सुधाकम्मं कत्वा—"वुट्ठवस्सा आगन्त्वा लोहपासादे 20 25

१. करोन्ति—स्या०। २. पतन्ति—सी०, रो०।

सन्निपतथा'' ति वत्तं कत्वा फासुकट्ठानेसु वसित्वा वुट्ठवस्सा आगन्त्वा लोहपासादे पञ्चनिकायमण्डले, येसं पाळि पगुणा, ते पाळिं सज्झायन्ति। येसं अट्ठकथा पगुणा, ते अट्ठकथं सज्झायन्ति। यो पाळिं वा अट्ठकथं वा विराधेति, तं—"कस्स सन्तिके तया गहितं'' ति विचारेत्वा उजुं कत्वा गाहापेन्ति। पारगङ्गावासिनोपि तिस्समहाविहारे एवमेव करोन्ति। एवं द्वीसु कालेसु सन्निपतितेसु भिक्खूसु ये पुरे वस्सुपनायिकाय कम्मट्ठानं गहेत्वा गता विसेसारोचनत्थं आगच्छन्ति। एवरूपे सन्धाय पुब्बे भन्ते वस्सं वुट्ठा'' तिआदिमाह।

B. 173

मनोभावनीये ति मनसा भाविते सम्भाविते। ये वा मनो मनं भावेन्ति वड्ढेन्ति रागरजादीनि पवाहेन्ति, एवरूपे ति अत्थो। थेरो किर वत्तसम्पन्नो महल्लकं भिक्खुं दिस्वा थद्धो हुत्वा न निसीदति, पच्चुग्गमनं कत्वा हत्थतो छत्तञ्च पत्तचीवरञ्च गहेत्वा पीठं पप्फोटेत्वा देति। तत्थ निसिन्नस्स वत्तं कत्वा सेनासनं पटिजग्गित्वा देति। नवकं भिक्खुं दिस्वा तुण्हीभूतो न निसदिति, समीपे ठत्वा वत्तं करोति। सो ताय वत्तपटिपत्तिया अपरिहानिं पत्थयमानो एवमाह।

R. 582

अथ भगवा—"आनन्दो मनोभावनीयानं दस्सनं न लभिस्सामी'' ति चिन्तेति। "हन्दस्स, मनोभावनीयानं दस्सनट्ठानं आचिक्खिस्सामि, यत्थ वसन्तो इतो चितो च अनाहिण्डित्वाव लच्छति मनोभावनीये भिक्खू दस्सनाया ति चिन्तेत्वा **चत्तारिमानी** तिआदिमाह।

तत्थ **सद्धस्सा** बुद्धादीसु पसन्नचित्तस्स वत्तसम्पन्नस्स। यस्स पातो पट्ठाय चेतियङ्गणवत्तादीनि सब्बवत्तानि कतानेव पञ्ञायन्ति। **दस्सनीयानी** ति दस्सनारहानि दस्सनत्थाय गन्तब्बानि। **संवेजनीयानी** ति संवेगजनकानि। **ठानानी** ति कारणानि, पदेसट्ठानानेव वा। **ये हि केची** ति इदं चेतियचारिकाय सत्थकभावदस्सनत्थं वुत्तं। तत्थ **चेतियचारिकं आहिण्डन्ता** ति ये च ताव तत्थ तत्थ चेतियङ्गणं सम्मज्जन्ता, आसनानि धोवन्तो बोधिम्हि उदकं सिञ्चन्ता[1] आहिण्डन्ति,

१. आसिञ्चन्ता—सी०, रो०।

तेसु, वत्तब्बमेव नत्थि असुकविहारे "चेतियं वन्दिस्सामा" ति निक्खमित्वा पसन्नचित्ता अन्तरा कालं करोन्ता पि अनन्तरायेन सग्गे पतिट्ठहिस्सन्ति येवा ति दस्सेति।

२७. आनन्दपुच्छाकथावण्णना

७६. अदस्सनं आनन्दा (दी० नि० २.१०९) ति यदेतं मातुगामस्स अदस्सनं, अयमेत्थ उत्तमा पटिपत्ती ति दस्सेति। द्वारं पिदहित्वा सेनासने निसिन्नो हि भिक्खु आगन्त्वा द्वारे ठितम्पि मातुगामं याव न पस्सति, तावस्स एकंसेनेव न लोभो उप्पज्जति, न चित्तं चलति। दस्सने पन सतियेव तदुभयम्पि अस्स। तेनाह—"अदस्सनं आनन्दा" ति। दस्सने भगवा सति 'कथं' ति भिक्खं गहेत्वा उपगतट्ठानादीसु दस्सने सति कथं पटिपज्जितब्बं ति पुच्छति। अथ भगवा यस्मा खग्गं गहेत्वा—"सचे मया सद्धिं आलपसि, एत्थेव ते सीसं पातेस्सामी"[1] ति ठितपुरिसेन वा, "सचे मया सद्धिं आलपसि,[2] एत्थेव ते मंसं मुरुमुरापेत्वा[3] खादिस्सामी"[4] ति ठितयक्खिनिया वा आलपितुं वरं। एकस्सेव हि अत्तभावस्स तप्पच्चया विनासो होति, न अपायेसु अपरिच्छिन्नदुक्खानुभवनं। मातुगामेन पन आलापसल्लापे सति विस्सासो होति, विस्सासे सति ओतारो होति, ओतिण्णचित्तो सीलब्यसनं पत्वा अपायपूरको होति; तस्मा अनालापो ति आह। वुत्तम्पि चेतं—

> "सल्लपे असिहत्थेन, पिसाचेना पि सल्लपे।
> आसीविसम्पि आसीदे, येन दट्ठो न जीवति'।
> न त्वेव एको एकाय, मातुगामेन सल्लपे"
> (अं० नि० २.३३२) ति॥

आलपन्तेन पना ति सचे मातुगामो दिवसं वा पुच्छति, सीलं वा याचति, धम्मं वा सोतुकामो होति, पञ्हं वा पुच्छति, तथारूपं वा

१. पातेमी ति—सी०, रो०।
२. आलपति—सी०।
३. पटापटापेत्वा—सी०, रो०।
४. खादामी ति—सी०, रो०।

पनस्स पब्बजितेहि कत्तब्बकम्मं होति, एवरूपे काले अनालपन्तं "मूगो अयं, बधिरो अयं, भुत्वाव[1] बद्धमुखो[2] निसीदती" ति वदति, तस्मा अवस्सं आलपितब्बं होति। एवं आलपन्तेन पन कथं पटिपज्जितब्बं ति पुच्छति। अथ भगवा—"एथ तुम्हे, भिक्खवे, मातुमत्तीसु मातुचित्तं
5 उपट्ठपेथ, भगिनिमत्तीसु भगिनिचित्तं उपट्ठपेथ, धीतुमत्तीसु धीतुचित्तं-उपट्ठपेथा" ति इमं ओवादं सन्धाय सति आनन्द उपट्ठपेतब्बा ति आह।

७७. **अब्यावटा** ति अतन्तिबद्धा निरुस्सुक्का होथ। **सारत्थे घटथा**
B. 175 ति उत्तमत्थे अरहत्ते घटथ। **अनुयुञ्जथा** ति तदधिगमाय अनुयोगं
10 करोथ। **अप्पमत्ता** ति तत्थ अविप्पमुट्ठसती[3]। वीरियातापयोगेन **आतापिनो**। काये च जीविते च निरपेक्खताय **पहितत्ता** पेसितचित्ता **विहरथ**।

७८. **कथं पन भन्ते** ति तेहि खत्तियपण्डितादीहि कथं पटिपज्जितब्बं। अद्धा मं ते पटिपुच्छिस्सन्ति—"कथं, भन्ते, आनन्द तथागतस्स
15 सरीरे पटिपज्जितब्बं" ति; "तेसाहं कथं पटिवचनं देमी" ति पुच्छति। **अहतेन वत्थेना** ति नवेन कासिकवत्थेन। **विहतेन कप्पासेना** ति सुपोथितेन कप्पासेन। कासिकवत्थञ्हि सुखुमत्ता तेलं न गण्हाति, कप्पासो[4] पन गण्हाति[4]। तस्मा "विहतेन कप्पासेना" ति आह। **आयसाया** ति सोवण्णाय। सोवण्णञ्हि इध "अयसं" ति अधिप्पेतं।

२८. थूपारहपुग्गलवण्णना

20 ७९. **राजा चक्कवत्ती** (दी० नि० २.११०) ति एत्थ कस्मा भगवा अगारमज्झे वसित्वा कालङ्कतस्स रञ्ञो थूपारहतं अनुजानाति, न सीलवतो पुथुज्जनस्स भिक्खुस्सा ति? अनच्छरियत्ता। पुथुज्जन-
R. 584 भिक्खूनं हि थूपे अनुञ्ञायमाने तम्बपण्णिदीपे ताव थूपानं ओकासो न भवेय्य, तथा अञ्ञेसु ठानेसु। तस्मा "अनच्छरिया ते भविस्सन्ती"

१. ० भुत्वा—सी०। २. थद्धमुखो—सी०, रो०।
३. अविप्पवुट्ठसति—सी०, रो०। ४-४. रो० पोत्थके नत्थि।

ति नानुजानाति। राजा चक्कवत्ती एकोव निब्बत्तति, तेनस्स थूपो अच्छरियो होति। पुथुज्जनसीलवतो पन परिनिब्बुतभिक्खुनो विय महन्तम्पि सक्कारं कातुं वट्टति येव।

२९. आनन्दअच्छरियधम्मवण्णना

८०. **विहारं** (दी० नि० २.१११) ति इध मण्डलमालो विहारो ति अधिप्पेतो, तं पविसित्वा। **कपिसीसं** ति द्वारबाहकोटियं ठितं 5 अग्गळरुक्खं। **रोदमानो अट्ठासी** ति सो किरायस्मा चिन्तेसि— "सत्थारा मम संवेगजनकं वसनट्ठानं कथितं, चेतियचारिकाय सात्थकभावो कथितो, मातुगामे पटिपज्जितब्बपञ्हो विस्सज्जितो, अत्तनो सरीरे पटिपत्ति अक्खाता, चत्तारो थूपारहा कथिता, धुवं अज्ज भगवा परिनिब्बायिस्सती" ति, तस्सेवं चिन्तयतो बलवदोमनस्सं उप्पज्जि। 10 अथस्स एतदहोसि—"भगवतो सन्तिके रोदनं नाम अफासुकं, एकमन्तं गन्त्वा सोकं तनुकं करिस्सामी" ति, सो तथा अकासि। तेन वुत्तं— B. 176 "रोदमानो अट्ठासी" ति।

अहञ्च वतम्ही ति अलब्भ वत अम्हि, अहं वतम्ही ति पि पाठो। **यो मम अनुकम्पको** ति यो मं अनुकम्पति अनुसासति, स्वे दानि 15 पट्ठाय कस्स मुखधोवनं दस्सामि, कस्स पादे धोविस्सामि, कस्स सेनासनं पटिजग्गिस्सामि, कस्स पत्तचीवरं गहेत्वा विचरिस्सामी ति बहुं विलपि। **आमन्तेसी** ति भिक्खुसंघस्स अन्तरे थेरं अदिस्वा आमन्तेसि।

मेत्तेन कायकम्मेना ति मेत्तचित्तवसेन पवत्तितेन मुखधोवन- 20 दानादिकायकम्मेन। **हितेना** ति हितवुद्धिया कतेन। **सुखेना** ति सुखसोमनस्सेनेव कतेन, न दुक्खिना दुम्मनेन हुत्वा ति अत्थो। **अद्वयेना** ति द्वे कोट्ठासे कत्वा अकतेन। यथा हि एको सम्मुखाव करोति न परम्मुखा, एको परम्मुखाव करोति न सम्मुखा एवं विभागं अकत्वा कतेना ति वुत्तं होति। **अप्पमाणेना** ति पमाणविरहितेन। 25 चक्कवाळम्पि हि अतिसम्बाधं, भवग्गम्पि अतिनीचं, तया कतं कायकम्ममेव बहुं ति दस्सेति।

R. 585 **मेत्तेन वचीकम्मेना** ति मेत्तचित्तवसेन पवत्तितेन मुखधोवनकालारोचनादिना वचीकम्मेन। अपिच ओवादं सुत्वा—"साधु, भन्ते" ति वचनम्पि[1] मेत्तं वचीकम्ममेव। **मेत्तेन मनोकम्मेना** ति कालस्सेव सरीरपटिजग्गनं कत्वा विवित्तासने निसीदित्वा—"सत्था अरोगो होतु, अब्यापज्जो सुखी" ति एवं पवत्तितेन मनोकम्मेन। **कतपुञ्ञोसी** ति कप्पसतसहस्सं अभिनीहारसम्पन्नोसी ति दस्सेति। कतपुञ्ञोसी[2] ति च एत्तावता विस्सत्थो मा पमादमापज्जि, अथ खो पधानमनुयुञ्ज। एवञ्हि अनुयुत्तो खिप्पं होहिसि अनासवो, धम्मसङ्गीतिकाले अरहत्तं पापुणिस्ससि। न हि मादिसस्स कतपारिचरिया निप्फला नाम होती ति दस्सेति।

८१. एवञ्च पन वत्वा महापथविं पत्थरन्तो विय आकासं वित्थारेन्तो विय चक्कवाळगिरिं ओसारेन्तो[3] विय सिनेरुं उक्खिपेन्तो विय महाजम्बुं खन्धे गहेत्वा चालेन्तो विय आयस्मतो आनन्दस्स गुणकथं आरभन्तो, अथ खो भगवा भिक्खू आमन्तेसि। तत्थ "येपि ते, B. 177 भिक्खवे, एतरही" ति कस्मा न वुत्तं? अञ्ञस्स बुद्धस्स नत्थिताय। एतेनेव चेतं वेदितब्बं—"यथा चक्कवाळन्तरे पि अञ्ञो बुद्धो नत्थी" ति। **पण्डितो** ति ब्यत्तो। **मेधावी** ति खन्धधातुआयतनादीसु कुसलो।

८२. **भिक्खुपरिसा आनन्दं दस्सनाया** (दी० नि० २.११२) ति ये भगवन्तं पस्सितुकामा थेरं उपसङ्कमन्ति, ये च "आयस्मा किरानन्दो समन्तपासादिको अभिरूपो दस्सनीयो बहुस्सुतो संघसोभनो" ति थेरस्स गुणे सुत्वा आगच्छन्ति, ते सन्धाय "भिक्खुपरिसा आनन्दं दस्सनाय उपसङ्कमन्ती" ति वुत्तं। एस नयो सब्बत्थ। **अत्तमना** ति सवनेन नो दस्सनं समेती ति सकमना तुट्ठचित्ता। **धम्मं** ति "कच्चि, आवुसो, खमनीयं, कच्चि यापनीयं, कच्चि योनिसो मनसिकारेन[4] कम्मं करोथ,

१. वचनमत्तं पि—सी०, रो०। २. कतपुञ्ञोम्हि—सी०, स्या०, रो०।
३. ओप्पाटेन्तो—सी०, रो०; उस्सादेन्तो—स्या०। ४. मनसिकारे—सी०, स्या०।

आचरियुपज्झाये वत्तं पूरेथा'' ति एवरूपं पटिसन्थार धम्मं। तत्थ भिक्खुनीसु—''कच्चि, भगिनियो, अट्ठ गरुधम्मे समादाय वत्तथा'' ति इदं पि नानाकरणं होति। उपासकेसू आगतेसु[1] ''उपासक, न ते कच्चि सीसं वा अङ्गं वा रुज्जति, अरोगा ते पुत्तभातरो'' ति न एवं पटिसन्थारं करोति। एवं पन करोति—''कथं उपासका तीणि सरणानि 5 पञ्च सीलानि रक्खथ, मासस्स अट्ठ उपोसथे करोथ, मातापितूनं उपट्ठानवत्तं पूरेथ, धम्मिकसमणब्राह्मणे पटिजग्गथा'' ति। उपासिकासु पि एसेव नयो। R. 586

इदानि आनन्दत्थेरस्स चक्कवत्तिना सद्धिं उपमं[2] करोन्तो **चत्तारोमे भिक्खवे** तिआदिमाह। तत्थ **खत्तिया** ति अभिसित्ता च अनभिसित्ता च 10 खत्तियजातिका। ते किर—''राजा चक्कवत्ती नाम अभिरूपो दस्सदीयो पासादिको आकासेन विचरन्तो रज्जं अनुसासति धम्मिको धम्मराजा'' ति तस्स गुणकथं सुत्वा ''सवनेन दस्सनम्पि समं[3]'' ति अत्तमना होन्ति। **भासती** ति कथेन्तो[4]—''कथं, ताता, राजधम्मं पूरेथ, पवेणिं रक्खथा'' ति पटिसन्थारं करोति। ब्राह्मणेसु पन—''कथं आचरिया 15 मन्ते वाचेथ, कथं[5] अन्तेवासिका मन्ते गण्हन्ति, दक्खिणं वा वत्थानि वा कपिलं वा अलत्था''[6] ति[7] पटिसन्थारं करोति। गहपतीसु—''कथं ताता, न वो राजकुसलो दण्डेन वा बलिना वा पीळा अत्थि, सम्मा देवो धारं अनुपवेच्छति, सस्सानि सम्पज्जन्ती'' ति एवं पटिसन्थारं करोति। समणेसु—''कथं, भन्ते[8], पब्बजितपरिक्खारा सुलभा, समण- 20 धम्मे न पमज्जथा'' ति एवं पटिसन्थारं करोति। B. 178

३०. महासुदस्सनसुत्तदेसनावण्णना

८३. **खुद्दकनगरके** (दी० नि० २.११३) ति नगरपतिरूपके सम्बाधे खुद्दकनगरके। **उज्जङ्गलनगरके** ति विसमनगरके।

१. सी०, रो० पोत्थकेसु नत्थि।
२. ओपम्मं—स्या०।
३. समेन्तो—सी०; समेन्ते—स्या०।
४. सी०, स्या०, रो० पोत्थकेसु नत्थि।
५. स्या० पोत्थके नत्थि।
६. लभथा ति—सी०, स्या०, रो०।
७. ० एवं—सी०, स्या०, रो०।
८. ० कच्चि—सी०, स्या०, रो०।

साखानगरके ति यथा रुक्खानं साखा नाम खुद्दका होन्ति, एवमेव अञ्ञेसं महानगरानं साखासदिसे खुद्दकनगरके। **खत्तियमहासाला** ति खत्तियमहासारप्पत्ता महाखत्तिया। एस नयो सब्बत्थ।

तेसु **खत्तियमहासाला** नाम येसं कोटिसतम्पि कोटिसहस्सम्पि धनं 5 निखणित्वा ठपितं, दिवसपरिब्बयो[1] एकं कहापणसकटं निगच्छति, सायं द्वे पविसन्ति। **ब्राह्मणमहासाला** नाम येसं असीतिकोटिधनं निहितं होति, दिवसपरिब्बयो एको[2] कहापणकुम्भो[2] निगच्छति, सायं एकसकटं पविसति। **गहपतिमहासाला** नाम येसं चत्तालीसकोटिधनं निहितं होति, दिवसपरिब्बयो पञ्च कहापणम्बणानि निगच्छन्ति, सायं कुम्भो[3] 10 पविसति।

मा हेवं आनन्द अवचा ति आनन्द, मा एवं अवच, न इमं R. 587 "खुद्दकनगरं" ति वत्तब्बं। अहं हि इमस्सेव नगरस्स सम्पत्तिं कथेतुं —"अनेकवारं तिट्ठं निसीदं महन्तेन उस्साहेन, महन्तेन परक्कमेन इधागतो" ति वत्वा भूतपुब्बं तिआदिमाह। **सुभिक्खा** ति 15 खज्जभोज्जसम्पन्ना। **हत्थिसद्देना** ति एकस्मिं हत्थिम्हि सद्दं करोन्ते चतुरासीतिहत्थिसहस्सानि सद्दं करोन्ति, इति हत्थिसद्देन अविवित्ता, होति, तथा अस्ससद्देन। पुञ्ञवन्तो[4] पनेत्थ सत्ता चतुसिन्धवयुत्तेहि रथेहि अञ्ञमञ्ञं अनुबन्धमाना अन्तरवीथीसु विचरन्ति, इति रथसद्देन अविवित्ता होति। निच्चं पयोजितानेव पनेत्थ भेरिआदीनि तूरियानि, 20 इति भेरिसद्दादीहिपि अविवित्ता होति। तत्थ **सम्मसद्दो** ति कंसताळसद्दो। **पाणिताळसद्दो** ति पाणिना चतुरस्सअम्बणताळसद्दो[5]। कुटभेरिसद्दो ति पि वदन्ति।

B. 179 **अस्नाथ पिवथ खादथा** ति अस्नाथ[6] पिवथ खादथ। अयं पनेत्थ सङ्खेपो, भुञ्जथ भोति इमिना दसमेन सद्देन अविवित्ता होति

१. परिब्बायाय—सी०, रो०। २-२. एकं कहापणकुम्भं—स्या०।
३. तुम्बो—रो०। ४. पुञ्ञवन्ता—रो०।
५. पाणितालचतुरस्सरअम्बणतालसद्दो—सी०, रो०। ६. अस्सादेथ—सी०।

अनुपच्छिन्नसद्दा । यथा पन अञ्ञेसु नगरेसु "कचवरं छड्डेथ, कुदालं गण्हथ, पच्छिं गण्हथ, पवासं गमिस्साम, तण्डुलपुटं गण्हथ, भत्तपुटं गण्हथ, फलकावुधादीनि सज्जानि करोथा" ति एवरूपा सद्दा होन्ति, न यिध एवं अहोसी ति दस्सेति ।

"दसमेन सद्देना" ति च वत्वा "कुसावती, आनन्द, राजधानी 5 सत्तहि पाकारेहि परिक्खित्ता अहोसी" ति सब्बं **महासुदस्सनसुत्तं** निट्ठापेत्वा **गच्छ त्वं आनन्दा** तिआदिमाह । तत्थ **अभिक्कमथा** (दी० नि० २.११४) ति अभिमुखा कमथ, आगच्छथा ति अत्थो । किं पन ते भगवतो आगतभावं न जानन्ती ति ? जानन्ति । बुद्धानं गतगतट्ठानं[1] नाम महन्तं कोलाहलं होति, केनचिदेव[2] करणीयेन 10 निसिन्नत्ता न आगता । "ते आगन्त्वा भिक्खुसंघस्स ठाननिसज्जोकासं संविदहित्वा दस्सन्ती" ति तेसं सन्तिके अवेलायम्पि भगवा पेसेसि ।

३१. मल्लानं वन्दनावण्णना

८४. **अम्हाकं च नो** (दी० नि० २.११४) ति एत्थ नो कारो निपातमत्तं । **अघाविनो** ति उप्पन्नदुक्खा । **दुम्मना** ति अनत्तमना । **चेतोदुक्खसमप्पिता** ति दोमनस्ससमप्पिता । **कुलपरिवत्तसो कुल-** 15 **परिवत्तसो ठपेत्वा** ति एकेकं कुलपरिवत्तं कुलसङ्खेपं वीथिसभागेन चेव R. 588 रच्छासभागेन च विसुं विसुं ठपेत्वा ।

३२. सुभद्दपरिब्बाजकवत्थुवण्णना

८५. **सुभद्दो नाम परिब्बाजको** (दी० नि० २.११५) ति उदिच्चब्राह्मणमहासालकुला पब्बजितो छन्नपरिब्बाजको । **कङ्खाधम्मो** ति विमतिधम्मो । कस्मा पनस्स अज्ज एवं अहोसी ति ? तथाविध- 20 उपनिस्सयत्ता । पुब्बे किर पुञ्ञकरणकाले द्वे भातरो अहेसुं । ते एकतोव सस्सं अकंसु । तत्थ जेट्ठकस्स—"एकस्मिं सस्से नववारे अग्गसस्सदानं मया दातब्बं" ति अहोसि । सो वप्पकाले बीजग्गं नाम दत्वा गब्भकाले कनिट्ठेन सद्धिं मन्तेसि—"गब्भकाले गब्भं फालेत्वा B. 180

1. गतट्ठाने—सी०, रो० । 2. ० पन—सी० ।

दस्सामा'' ति कनिट्ठो—''तरुणसस्सं नासेतुकामोसी'' ति आह। जेट्ठो कनिट्ठस्स अननुवत्तनभावं ञत्वा खेत्तं विभजित्वा अत्तनो कोट्ठासतो गब्भं फालित्वा खीरं नीहरित्वा सप्पिनवनीतेन संयोजेत्वा अदासि, पुथुककाले पुथुकं कारेत्वा अदासि, लायनकाले[1] लायनग्गं, वेणिकरणे 5 वेणग्गं, कलापादीसु कलापग्गं, खलग्गं, खलभण्डग्गं, कोट्ठग्गं ति एवं एकसस्से नववारे अग्गदानं अदासि। कनिट्ठो पन उद्धरित्वा अदासि।

तेसु जेट्ठको अञ्ञासिकोण्डञ्ञत्थेरो जातो। भगवा—''कस्स नु खो अहं पठमं धम्मं देसेय्यं'' ति ओलोकेन्तो ''अञ्ञासिकोण्डञ्ञो एकस्मिं सस्से नव अग्गदानानि अदासि, इमं अग्गधम्मं तस्स देसेस्सामी'' 10 ति सब्बपठमं धम्मं देसेसि। सो अट्ठारसहि ब्रह्मकोटीहि सद्धिं सोतापत्तिफले पतिट्ठासि। कनिट्ठो पन ओहीयित्वा पच्छा दानस्स दिन्नत्ता सत्थु परिनिब्बानकाले एवं चिन्तेत्वा सत्थारं दट्ठुकामो अहोसि।

मा तथागतं विहेठेसी ति थेरो किर—''एते अञ्ञतित्थिया नाम 15 अत्तनो गहणमेव गण्हन्ति, तस्स विस्सज्जापनत्थाय भगवतो बहुं भासमानस्स कायवाचाविहेसा भविस्सति, पकतियापि च किलन्तोयेव भगवा'' ति मञ्ञमानो एवमाह। परिब्बाजको—''न मे अयं भिक्खु ओकासं करोति, अत्थिकेन पन अनुवत्तित्वा कारेतब्बो'' ति थेरं अनुवत्तन्तो दुतियम्पि ततियम्पि आह।

R. 589 20 ८६. अस्सोसि खो (दी॰ नि॰ २.११६) ति साणिद्वारे ठितस्स भासतो पकतिसोतेनेव अस्सोसि, सुत्वा च पन सुभद्दस्सेव अत्थाय महता उस्साहेन आगतत्ता अलं आनन्दा तिआदिमाह। तत्थ अलं ति पटिक्खेपत्थे निपातो। अञ्ञापेक्खोव ति अञ्ञातुकामोव हुत्वा। अब्भञ्ञिंसू ति यथा तेसं पटिञ्ञा, तथेव जानिंसु। इदं वुत्तं होति— 25 सचे नेसं सा पटिञ्ञा निय्यानिका, सब्बे अब्भञ्ञंसु, नो चे, न अब्भञ्ञंसु। तस्मा किं तेसं पटिञ्ञा निय्यानिका, अनिय्यानिका ति

१. लायने—सी॰, रो॰।

अयमेव तस्स पञ्हस्स अत्थो। अथ भगवा तेसं अनिय्यानिकभाव- B. 181
कथनेन अत्थाभावतो चेव ओकासाभावतो च "अलं" ति पटिक्खिपित्वा
धम्ममेव देसेसि। पठमयामस्मिञ्हि मल्लानं धम्मं देसेत्वा मज्झिमयामे
सुभद्दस्स, पच्छिमयामे भिक्खुसंघं ओवदित्वा बलवपच्चूसमये परिनिब्बा-
यिस्सामिच्चेव भगवा आगतो। 5

८७. **समणो पि तत्थ न उपलब्भती** (दी० नि० २.११६) ति
पठमो सोतापन्नसमणोपि तत्थ नत्थि, दुतियो सकदागामिसमणोपि,
ततियो अनागामिसमणोपि, चतुत्थो अरहत्तसमणोपि तत्थ नत्थी ति
अत्थो। "इमस्मिं खो" ति पुरिमदेसनाय अनियमतो वत्वा इदानि
अत्तनो सासनं नियमेन्तो आह। **सुञ्ञा परप्पवादा समणेभी** ति 10
चतुन्नं मग्गानं अत्थाय आरद्धविपस्सकेहि चतूहि, मग्गट्ठेहि चतूहि,
फलट्ठेहि चतूही ति द्वादसहि समणेहि सुञ्ञा परप्पवादा तुच्छा
रित्तका। **इमे च सुभद्दा** ति इमे द्वादस भिक्खू। **सम्मा विहरेय्युं**
ति एत्थ सोतापन्नो अत्तनो अधिगतट्ठानं अञ्ञस्स कथेत्वा तं
सोतापन्नं करोन्तो सम्मा विहरति नाम। एस नयो सकदागामि- 15
आदीसु। सोतापत्तिमग्गट्ठो अञ्ञम्पि सोतापत्तिमग्गट्ठं करोन्तो सम्मा
विहरति नाम। एस नयो सेसमग्गट्ठेसु। सोतापत्तिमग्गत्थाय
आरद्धविपस्सको अत्तनो पगुणं कम्मट्ठानं कथेत्वा अञ्ञम्पि सोतापत्ति-
मग्गत्थाय आरद्धविपस्सकं करोन्तो सम्मा विहरति नाम। एस नयो
सेसमग्गत्थाय आरद्धविपस्सकेसु। इदं सन्धायाह—"सम्मा विहरेय्युं" 20
ति। **असुञ्ञो लोको अरहन्तेहि अस्सा** ति नळवनं सरवनं विय
निरन्तरो अस्स।

एकूनतिंसो वयसा ति वयेन एकूनतिंसवस्सो हुत्वा। **यं पब्बजिं** R. 590
ति एत्थ यं ति निपातमत्तं। **किं कुसलानुएसी** ति "किं कुसलं"
ति अनुएसन्तो परियेसन्तो। तत्थ—"किं कुसलं" ति सब्बञ्ञुतञ्ञाणं 25
अधिप्पेतं, तं गवेसन्तो ति अत्थो। **यतो अहं** ति यतो पट्ठाय अहं
पब्बजितो, एत्थन्तरे समधिकानि पञ्ञास वस्सानि होन्ती ति दस्सेति।
ञायस्स धम्मस्सा ति अरियमग्गधम्मस्स। **पदे सवत्ती** ति पदेसे

विपस्सनामग्गे[१] पवत्तन्तो। इतो बहिद्धा ति मम सासनतो बहिद्धा।
B. 182 समणोपि नत्थी ति पदेसवत्तिविपस्सकोपि नत्थि, पठमसमणो
सोतापन्नोपि नत्थी ति वुत्तं होति।

ये एत्था ति ये तुम्हे एत्थ सासने सत्थारा सम्मुखा अन्तेवासिका-
5 भिसेकेन अभिसित्ता, तेसं वो लाभा तेसं वो सुलद्धं ति। बाहिरसमये किर
यं अन्तेवासिकं आचरियो—"इमं पब्बाजेहि, इमं ओवाद, इमं अनुसासा"
ति वदति, सो तेन अत्तनो ठाने ठपितो होति। तस्मा तस्स—"इमं
पब्बजेहि, इमं ओवद, इमं अनुसासा" ति[२] इमे लाभा होन्ति। थेरम्पि
सुभद्दो तमेव बाहिरसमयं गहेत्वा एवमाह।

10 अलत्थ खो (दी० नि० २.११८) ति कथं अलत्थ? थेरो किर
नं एकमन्तं नेत्वा उदकतुम्बतो पानीयेन सीसं तेमेत्वा तचपञ्चककम्म-
ट्ठानं कथेत्वा केसमस्सुं ओहारेत्वा कासायानि वत्थानि अच्छादापेत्वा
सरणानि दत्वा भगवतो सन्तिकं आनेसि। भगवा उपसम्पादेत्वा
कम्मट्ठानं आचिक्खि। सो तं गहेत्वा उय्यानस्स एकमन्ते चङ्कमं अधिट्ठाय
15 घटेन्तो वायमन्तो विपस्सनं[३] 'वड्ढेन्तो[३] सह पटिसम्भिदाहि अरहत्तं
पत्वा आगम्म भगवन्तं वन्दित्वा निसीदि। तं सन्धाय—"अचिरूप-
सम्पन्नो खो पना" तिआदि वुत्तं।

सो च भगवतो पच्छिमो सक्खिसावको अहोसी ति सङ्गीति-
कारकानं वचनं। तत्थ यो भगवति धरमाने पब्बजित्वा अपरभागे
20 उपसम्पदं लभित्वा कम्मट्ठानं गहेत्वा अरहत्तं पापुणाति, उपसम्पदम्पि
वा धरमानेयेव[४] लभित्वा[५] अपरभागे कम्मट्ठानं गहेत्वा अरहत्तं पापुणाति,
कम्मट्ठानम्पि वा धरमानेयेव गहेत्वा अपरभागे अरहत्तमेव पापुणाति,
सब्बोपि सो पच्छिमो सक्खिसावको। अयं पन धरमानेयेव भगवति
R. 591 पब्बजितो च उपसम्पन्नो च कम्मट्ठानञ्च गहेत्वा अरहत्तं पत्तो ति।

पञ्चमभाणवारवण्णना निट्ठिता।

१. ०मत्ते पि—सी०; ० मग्गे पि—स्या०। २. ० वदति—सी०।
३-३. मारं निसेधेन्तो—सी०, रो०। ४. भगवति ०—स्या०।
५. लभति—सी०, रो०।

३३. तथागतपच्छिमवाचावण्णना

८९. इदानि भिक्खुसंघस्स ओवादं आरभि, तं दस्सेतुं **अथ खो भगवा** (दी० नि० २.११८) तिआदि वुत्तं। तत्थ[1] **देसितो पञ्ञत्तो** ति धम्मो पि देसितो चेव पञ्ञत्तो च, विनयो पि देसितो चेव पञ्ञत्तो च। पञ्ञत्तो च नाम ठपितो पट्ठपितो ति अत्थो। **सो वो ममच्चयेना** ति सो धम्मविनयो तुम्हाकं ममच्चयेन सत्था। मया हि वो ठितेनेव— "इदं लहुकं, इदं गरुकं, इदं सतेकिच्छं, इदं अतेकिच्छं, इदं लोकवज्जं, इदं पण्णत्तिवज्जं, अयं आपत्ति पुग्गलस्स सन्तिके वुट्ठाति, अयं आपत्ति गणस्स सन्तिके वुट्ठाति, अयं संघस्स सन्तिके वुट्ठाती" ति सत्तापत्तिक्खन्धवसेन ओतिण्णे वत्थुस्मिं सखन्धकपरिवारो उभतोविभङ्गो[2] विनयो नाम देसितो। तं सकलम्पि विनयपिटकं मयि परिनिब्बुते तुम्हाकं सत्थुकिच्चं साधेस्सति।

B. 183

ठितेनेव च मया—"इमे चत्तारो सतिपट्ठाना, चत्तारो सम्मप्पधाना, चत्तारो इद्धिपादा, पञ्च इन्द्रियानि, पञ्च बलानि, सत्त बोज्झङ्गा, अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो" ति तेन तेनाकारेन इमे धम्मे विभजित्वा विभजित्वा सुत्तन्तपिटकं देसितं। तं सकलम्पि सुत्तन्तपिटकं मयि परिनिब्बुते तुम्हाकं सत्थुकिच्चं साधेस्सति। ठितेनेव च मया—"इमे पञ्चक्खन्धा, द्वादसायतनानि, अट्ठारस धातुयो, चत्तारि सच्चानि, बावीसतिन्द्रियानि, नव हेतू, चत्तारो आहारा, सत्त फस्सा, सत्त वेदना, सत्त सञ्ञा, सत्त सञ्चेतना, सत्त चित्तानि। तत्रापि 'एत्तका धम्मा कामावचरा, एत्तका रूपावचरा, एत्तका अरूपावचरा, एत्तका परियापन्ना, एत्तका अपरियापन्ना, एत्तका लोकिया, एत्तका लोकुत्तरा' ति" इमे धम्मे विभजित्वा विभजित्वा[3] चतुवीसतिसमन्तपट्ठानअनन्तनयमहापट्ठानपटिमण्डितं अभिधम्मपिटकं देसितं। तं सकलम्पि अभिधम्मपिटकं मयि परिनिब्बुते तुम्हाकं सत्थुकिच्चं साधेस्सति।

१. सी०, रो० पोत्थकेसु नत्थि। २. ० मया—सी०, रो०।
३. सी० पोत्थके नत्थि।

इति सब्बम्पेतं अभिसम्बोधितो याव परिनिब्बाना पञ्चचत्तालीस-
वस्सानि भासितं लपितं—"तीणि पिटकानि, पञ्च निकाया, नवङ्गानि,
चतुरासी ति धम्मक्खन्धसहस्सानी" ति एवं महापभेदं होति। इति
R. 592 इमानि चतुरासी ति धम्मक्खन्धसहस्सानि तिट्ठन्ति, अहं एकोव
5 परिनिब्बायामि। अहञ्च खो पन दानि एककोव[१] ओवदामि
अनुसासामि, मयि परिनिब्बुते इमानि चतुरासी ति धम्मक्खन्धसहस्सानि[२]
तुम्हे ओवदिस्सन्ति अनुसासिस्सन्ती ति एवं भगवा बहूनि कारणानि
दस्सेन्तो—"सो वा ममच्चयेन सत्था" ति ओवदित्वा पुन अनागते
चारित्तं दस्सेन्तो यथा खो पना तिआदिमाह।

B. 184 10 तत्थ समुदाचरन्ती ति कथेन्ति वोहरन्ति। नामेन वा गोत्तेन वा
ति नवको ति अवत्वा "तिस्स, नागा" ति एवं नामेन वा, "कस्सप,
गोतमा" ति एवं गोत्तेन वा, "आवुसो तिस्स, आवुसो कस्सपा" ति
एवं आवुसोवादेन वा समुदाचरितब्बो। भन्ते ति वा आयस्माति वा
ति भन्ते तिस्स, आयस्मा तिस्सा ति एवं समुदाचरितब्बो। समूहनतू
15 ति आकङ्खमानो समूहनतु, यदि इच्छति समूहनेय्या ति अत्थो।

कस्मा पन समूहनथा ति एकंसेनेव अवत्वा विकप्पवचनेनेव ठपेसी
ति? महाकस्सपस्स बलं दिट्ठत्ता। पस्सति हि भगवा—"समूहनथा ति
वुत्तेपि सङ्गीतिकाले कस्सपो न समूहनिस्सती" ति। तस्मा विकप्पेनेव
ठपेसि।

20 तत्थ—"एकच्चे थेरा एवमाहंसु—"चत्तारि पाराजिकानि ठपेत्वा
अवसेसानि खुद्दानुखुद्दकानी" तिआदिना नयेन पञ्चसतिकसङ्गीतियं
खुद्दानुखुद्दककथा आगताव विनिच्छयो पेत्थ[३] समन्तपासादिकायं[४]
वुत्तो। केचि पनाहु—"भन्ते, नागसेन, कतमं खुद्दकं, कतमं अनुखुद्दकं"
ति मिलिन्देन रञ्ञा पुच्छितो। "दुक्कटं, महाराज, खुद्दकं, दुब्भासितं

१. एकोव—सी०, रो०।
२. बुद्धसहस्सानि—सी०, रो०।
३. पनेत्थ—सी०; चेत्थ—स्या०।
४. ० विनयट्ठकथायं—सी०, रो०।

अनुखुद्दकं'' ति वुत्तत्ता नागसेनत्थेरो खुद्दानुखुद्दकं जानाति[१]। महाकस्सपो[२] पन तं अजानन्तो—

"सुणातु, मे आवुसो, संघो सन्तम्हाकं सिक्खापदानि गिहिगतानि। गिहिनोपि जानन्ति—"इदं वो समणानं सक्यपुत्तियानं कप्पति, इदं वो न कप्पती'' ति। सचे मयं खुद्दानुखुद्दकानि सिक्खापदानि समूहनिस्साम, 5 भविस्सन्ति वत्तारो—"धूमकालिकं समणेन गोतमेन सावकानं सिक्खापदं पञ्ञत्तं, याव नेसं सत्था अट्ठासि, ताविमे सिक्खापदेसु सिक्खिंसु, यतो[३] इमेसं सत्था परिनिब्बुतो, न[४] दानिमे सिक्खापदेसु सिक्खन्ती'' ति। यदि संघस्स पत्तकल्लं, संघो अपञ्ञत्तं न पञ्ञपेय्य, पञ्ञत्तं न R. 593 समुच्छिन्देय्य, यथापञ्ञत्तेसु सिक्खापदेसु समादाय वत्तेय्य। एसा ञत्ती 10 ति कम्मवाचं सावेसी ति। न तं एवं गहेतब्बं। नागसेनत्थेरो हि— "परवादिनो ओकासो मा अहोसी'' ति एवमाह। महाकस्सपत्थेरो "खुद्दानुखुद्दकपत्तिं न समूहनिस्सामी'' ति कम्मवाचं सावेसि।

ब्रह्मदण्डकथापि सङ्गीतियं आगतत्तासमन्तपासादिकायं B. 185 विनिच्छिता। 15

९०. **कङ्खा** ति द्वेळ्हकं। **विमती** ति विनिच्छितुं असमत्थता, बुद्धो नु खो, न बुद्धो नु खो, धम्मो नु खो, न धम्मो नु खो, संघो नु खो, न संघो नु खो, मग्गो नु खो, न मग्गो नु खो, पटिपदा नु खो, न पटिपदा नु खो ति यस्स संसयो उप्पज्जेय्य, तं वो वदामि "पुच्छथ भिक्खवे'' ति अयमेत्थ सङ्खेपत्थो। 20 **सत्थु गारवेनापि न पुच्छेय्याथा** ति मयं सत्थुसन्तिके पब्बजिम्ह, चत्तारो पच्चयापि नो सत्थु सन्तकाव, ते मयं एत्तकं कालं कङ्खं अकत्वा न अरहाम अज्ज पच्छिमकाले कङ्खं कातुं ति सचे एवं सत्थरि गारवेन न पुच्छथ। **सहायकोपि भिक्खवे सहायकस्स आरोचेतू** ति तुम्हाकं

१. जानि—सी०। २. महाकस्सपत्थेरो—सी०, स्या०।
३. यदा—सी०, रो०। ४. सी० पोत्थके नत्थि।

यो यस्स भिक्खुनो सन्दिट्ठो सम्भत्तो, सो तस्स आरोचेतु । अहं एतस्स[1] भिक्खुस्स कथेस्सामि, तस्स कथं सुत्वा सब्बे निक्कङ्खा भविस्सथा ति दस्सेति ।

एवं पसन्नो ति एवं सद्दहामि अहं ति अत्थो । **आणमेवा** ति 5 निक्कङ्खभावपच्चक्खकरणञाणंयेव, एत्थ तथागतस्स न सद्धामत्तं ति अत्थो । **इमेसं हि आनन्दा** ति इमेसं अन्तोसाणियं निसिन्नानं पञ्चन्नं भिक्खुसतानं । **यो पच्छिमको** ति यो गुणवसेन पच्छिमको । आनन्दत्थेरं-येव सन्धायाह ।

९१. **अप्पमादेन सम्पादेथा** (दी० नि० २.११९) ति 10 सतिअविप्पवासेन सब्बकिच्चानि सम्पादेय्याथ[2] । इति भगवा परिनिब्बानमञ्चे निपन्नो पञ्चचत्तालीस वस्सानि दिन्नं ओवादं सब्बं एकस्मिं अप्पमादपदेयेव पक्खिपित्वा अदासि । **अयं तथागतस्स** R. 594 **पच्छिमा वाचा** ति इदं पन सङ्गीतिकारकानं वचनं ।

३४. परिनिब्बुतकथावण्णना

९२. इतो परं यं परिनिब्बानपरिकम्मं कत्वा भगवा परिनिब्बुतो, 15 तं दस्सेतुं **अथ खो भगवा पठमं झानं** तिआदि वुत्तं । तत्थ **परिनिब्बुतो भन्ते** ति निरोधं समापन्नस्स भगवतो अस्सासपस्सासानं अभावं दिस्वा पुच्छति[3] । **न आवुसो** ति थेरो कथं जानाति ? थेरो किर सत्थारा सद्धिं येव तं तं समापत्तिं समापज्जन्तो याव नेवसञ्ञा- B. 186 नासञ्ञायतना वुट्ठानं, ताव गन्त्वा इदानि भगवा निरोधं समापन्नो, 20 अन्तोनिरोधे च कालंकिरिया नाम नत्थी ति जानाति ।

अथ खो भगवा सञ्ञावेदयितनिरोधसमापत्तिया वुट्ठहित्वा नेवसञ्ञानासञ्ञायतनं समापज्जि ...पे०... **ततियज्झाना वुट्ठहित्वा चतुत्थज्झानं समापज्जी** ति एत्थ भगवा चतुवीसतिया ठानेसु पठमज्झानं समापज्जि, तेरससु ठानेसु दुतियज्झानं, तथा ततियज्झानं,

१. एकस्स—सी०, स्या०, रो० । २. सम्पादेथ—सी० ।
३. पुच्छि—सी०, रो० ।

पन्नरससु ठानेसु चतुत्थज्झानं समापज्जि । कथं? दससु असुभेसु, द्वत्तिंसाकारे अट्ठसु कसिणेसु, मेत्ताकरुणामुदितासु, आनापाने, परिच्छेदाकासे ति इमेसु ताव चतुवीसतिया ठानेसु पठमज्झानं समापज्जि । ठपेत्वा पन द्वत्तिंसाकारञ्च दस असुभानि च सेसेसु तेरससु दुतियज्झानं, तेसुयेव च ततियज्झानं समापज्जि । अट्ठसु 5 पन कसिणेसु, उपेक्खाब्रह्मविहारे, आनापाने, परिच्छेदाकासे, चतूसु अरूपेसू ति इमेसु पन्नरससु ठानेसु चतुत्थज्झानं समापज्जि । अयम्पि च सङ्खेपकथाव । निब्बानपुरं पविसन्तो पन भगवा धम्मस्सामी सब्बापि चतुवीसतिकोटिसतसहस्ससङ्ख्या[1]समापत्तियो पविसित्वा विदेसं गच्छन्तो ञातिजनं आलिङ्गित्वा विय सब्बसमापत्तिसुखं अनुभवित्वा पविट्ठो । 10

चतुत्थज्झाना वुट्ठहित्वा समनन्तरा भगवा परिनिब्बायी ति एत्थ झानसमनन्तरं, पच्चवेक्खणासमनन्तरं ति द्वे समनन्तरानि । तत्थ झाना वुट्ठाय भवङ्गं ओतिण्णस्स तत्थेव परिनिब्बानं झानसमनन्तरं नाम । झाना वुट्ठहित्वा पुन झानङ्गानि पच्चवेक्खित्वा भवङ्गं ओतिण्णस्स तत्थेव परिनिब्बानं पच्चवेक्खणासमनन्तरं नाम । इमानिपि 15 द्वे समनन्तरानेव । भगवा पन झानं समापज्जित्वा झाना वुट्ठाय झानङ्गानि पच्चवेक्खित्वा भवङ्गचित्तेन अब्याकतेन दुक्खसच्चेन परिनिब्बायि । ये हि केचि बुद्धा वा पच्चेकबुद्धा[2] वा अरियसावका वा R. 595 अन्तमसो कुन्थकिपिल्लिकं उपादाय सब्बे भवङ्गचित्तेनेव अब्याकतेन दुक्खसच्चेन कालं करोन्ती ति । **महाभूमिचालादीनि** वुत्तनयानेवा 20 ति ।

९३. **भूता** (दी० नि० २.१२०) ति सत्ता । **अप्पटिपुग्गलो** ति पटिभागपुग्गलविरहितो । **बलप्पत्तो** ति दसविधञाणबलं पत्तो ।

९४. **उप्पादवयधम्मिनो** ति उप्पादवयसभावा । **तेसं वूपसमो** ति B. 187 तेसं सङ्खारानं वूपसमो, असङ्खतं निब्बानमेव सुखं ति अत्थो । 25

१. ० सत ०—सी० पोत्थके नत्थि । २. स्या० पोत्थके नत्थि ।

९५. नाहु अस्सासपस्सासो ति न जातो अस्सासपस्सासो। अनेजो ति तण्हासङ्खाताय एजाय अभावेन अनेजो। सन्तिमारब्भा ति अनुपादिसेसं निब्बानं आरब्भ पटिच्च सन्धाय। यं कालमकरी ति यो कालं अकरि। इदं वुत्तं होति—"आवुसो, यो मम सत्था
5 बुद्धमुनि सन्ति गमिस्सामी ति, सन्ति आरब्भ कालमकरि, तस्स ठितचित्तस्स तादिनो इदानि अस्सासपस्सासो न जातो, नत्थि, नप्पवत्तती" ति।

असल्लीनेना ति अलीनेन असङ्कुटितेन[1] सुविकसितेनाव[2] चित्तेन। वेदनं अज्झवासयी ति वेदनं अधिवासेसि, न वेदनानुवत्ती हुत्वा इतो
10 चितो च सम्परिवत्ति। विमोक्खो ति केनचि धम्मेन अनावरण-विमोक्खो सब्बसो अपञ्ञत्तिभावुपगमो पज्जोतनिब्बानसदिसो जातो।

९६. तदासी ति "सह परिनिब्बाना महाभूमिचालो" ति एवं हेट्ठा वुत्तं भूमिचालमेव सन्धायाह। तञ्हि लोमहंसनञ्च भिंसनकञ्च आसि। सब्बाकारवरूपेते ति सब्बवरकारणूपेते।

15 ९७. अवीतरागा (दी० नि० २.१२१) ति पुथुज्जना चेव सोतापन्नसकदागामिनो च। तेसञ्हि दोमनस्सं अप्पहीनं। तस्मा तेपि बाहा पग्गय्ह कन्दन्ति। उभोपि हत्थे सीसे ठपेत्वा रोदन्ती ति सब्बं पुरिमनयेनेव वेदितब्बं।

९८. उज्झायन्ती ति "अय्या अत्तनापि अधिवासेतुं न सक्कोन्ति,
20 सेसजनं कथं समस्सासेस्सन्ती" ति वदन्तियो उज्झायन्ति। कथंभूता पन भन्ते आयस्मा अनुरुद्धो देवता मनसिकरोती ति देवता, भन्ते, कथंभूता आयस्मा अनुरुद्धो सल्लक्खेति, किं ता सत्थु परिनिब्बानं अधिवासेन्ती ति?

R. 596
B. 188
अथ तासं पवत्तिदस्सनत्थं थेरो सन्तावुसो तिआदिमाह। तं
25 वुत्तत्थमेव। रत्तावसेसं ति बलवपच्चूसे परिनिब्बुतत्ता रत्तिया अवसेसं

१. असङ्कुचितेन—सी०, रो०। २. सुविकसितेनेव—सी०; सुविकसितेन—रो०।

चुल्लकद्धानं। **धम्मिया कथाया** ति अञ्ञा पाटियेक्का धम्मकथा नाम नत्थि। "आवुसो सदेवके नाम लोके अप्पटिपुग्गलस्स सत्थुनो अयं मच्चुराजा न लज्जति[1], किमङ्गं पन लोकियमहाजनस्स लज्जिस्सती" ति एवरूपाय पन मरणपटिसंयुत्ताय कथाय वीतिनामेसुं। तेसञ्हि तं कथं कथेन्तानं मुहुत्तेनेव अरूणं उग्गच्छि। 5

९९. **अथ खो** (दी॰ नि॰ २.१२१) ति अरूणुग्गं[2] दिस्वाव थेरो थेरं एतदवोच। **तेनेव करणीयेना** ति कीदिसेन नु खो परिनिब्बानट्ठाने मालागन्धादिसक्कारेन भवितब्बं, कीदिसेन भिक्खुसंघस्स निसज्जट्ठानेन भवितब्बं, कीदिसेन खादनीयभोजनीयेन भवितब्बं ति, एवं यं भगवतो परिनिब्बुतभावं सुत्वा कत्तब्बं तेनेव करणीयेन। 10

३५. बुद्धसरीरपूजावण्णना

१००. **सब्बञ्च ताळावचरं** (दी॰ नि॰ २.१२२) ति सब्बं तूरियभण्डं। **सन्निपातेथा** ति भेरिं चरापेत्वा समाहरथ। ते तथेव अकंसु। **मण्डलमाळे** ति दुस्समण्डलमाळे। **पटियादेन्ता** ति सज्जेन्ता।

दक्खिणेन दक्खिणं ति नगरस्स दक्खिणदिसाभागेनेव दक्खिण- 15 दिसाभागं। **बाहिरेन बाहिरं** ति अन्तोनगरं अप्पवेसेत्वा बाहिरेनेव नगरस्स बाहिरपस्सं हरित्वा। **दक्खिणतो नगरस्सा** ति अनुराधपुरस्स दक्खिणद्वारसदिसे ठाने ठपेत्वा सक्कारसम्मानं कत्वा जेतवनसदिसे ठाने झापेस्सामा ति अत्थो।

१०१. **अट्ठ मल्लपामोक्खा** ति मज्झिमवया थामसम्पन्ना 20 अट्ठमल्लराजानो। **सीसंन्हाता** ति सीसं धोवित्वा नहाता। **आयस्मन्तं अनुरुद्धं** ति थेरोव दिब्बचक्खुको ति पाकटो, तस्मा ते सन्तेसुपि अञ्ञेसु महाथेरेसु—"अयं नो पाकटं कत्वा कथेस्सती" ति थेरं पुच्छिंसु। **कथं पन भन्ते देवतानं अधिप्पायो** ति भन्ते, अम्हाकं ताव अधिप्पायं

१. लज्जि—सी॰, रो॰। २. अरूणुग्गमं—सी॰।

जानाम। देवतानं कथं अधिप्पायो ति पुच्छन्ति[1]। थेरो पठमं तेसं अधिप्पायं दस्सेन्तो **तुम्हाकं खो** तिआदिमाह।

मुकुटबन्धनं नाम मल्लानं चेतियं ति मल्लराजूनं पसाधनमङ्गल-सालाय एतं नामं। चित्तीकतट्ठेन पनेसा "चेतियं" ति वुच्चति।

B. 189 R. 597 5 १०२. **याव सन्धिसमलसङ्कटीरा** (दी० नि० २.१२३) ति एत्थ **सन्धि** नाम घरसन्धि। **समलं** नाम गूथरासिनिद्धमनपनाळि[2]। **सङ्कटीरं** नाम सङ्कारट्ठानं। **दिब्बेहि च मानुसकेहि च नच्चेही** ति उपरि देवतानं नच्चानि होन्ति, हेट्ठा मनुस्सानं। एस नयो गीतादीसु। अपिच देवतानं अन्तरे मनुस्सा, मनुस्सानं अन्तरे देवता ति एवम्पि 10 सक्करोन्ता पूजेन्ता अगमंसु। **मज्झेन मज्झं** नगरस्स हरित्वा ति एवं हरियमाने भगवतो सरीरे बन्धुलमल्लसेनापतिभरिया मल्लिका नाम— "भगवतो सरीरं आहरन्ती" ति सुत्वा अत्तनो सामिकस्स कालं किरियतो पट्ठाय अपरिभुञ्जित्वा ठपितं विसाखाय पसाधनसदिसं महालतापसाधनं नीहरापेत्वा—"इमिना सत्थारं पूजेस्सामी" ति तं मज्जापेत्वा गन्धोदकेन 15 धोवित्वा द्वारे ठिता।

तं किर पसाधनं तासञ्च द्विन्नं इत्थीनं, देवदानियचोरस्स गेहे ति तीसुयेव ठानेसु अहोसि। सा च सत्थु सरीरे द्वारं सम्पत्ते—"ओतारेथ, ताता, सत्थु सरीरं" ति वत्वा तं पसाधनं सत्थु सरीरे पटिमुञ्चि। तं सीसतो पट्ठाय पटिमुक्कं यावपादतलागतं। सुवण्णवण्णं भगवतो सरीरं 20 सत्तरतनमयेन महापसाधनेन पसाधितं अतिविय विरोचित्थ। तं सा दिस्वा पसन्नचित्ता पत्थनं अकासि—"भगवा याव वट्टे संसरिस्सामि, ताव मे पाटियेक्कं पसाधनकिच्चं मा होतु, निच्चं पटिमुक्कपसाधन-सदिसमेव सरीरं होतू" ति।

अथ भगवन्तं सत्तरतनमयेन महापसाधनेन उक्खिपित्वा पुरत्थिमेन 25 द्वारेन नीहरित्वा पुरत्थिमेन नगरस्स मकुटबन्धनं मल्लानं चेतियं, एत्थ भगवतो सरीरं निक्खिपिंसु।

१. पुच्छिंसु—सी०, रो०।
२. ० रासि ०—सी०, रो० पोत्थकेसु नत्थि।

३६. महाकस्सपत्थेरवत्थुवण्णना

१०५. पावाय कुसिनारं (दी० नि० २.१२४) ति पावानगरे पिण्डाय चरित्वा "कुसिनारं गमिस्सामी" ति अद्धानमग्गप्पटिपन्नो होति। **रुक्खमूले निसीदी** ति एत्थ कस्मा दिवाविहारं ति न वुत्तं? दिवाविहारत्थाय अनिसिन्नत्ता। थेरस्स हि परिवारा भिक्खू सब्बे सुखसंवड्ढिता महापुञ्ञा। ते मज्झन्हिकसमये तत्तपासाणसदिसाय 5 भूमिया पदसा गच्छन्ता किलमिंसु। थेरो ते दिस्वा—"भिक्खू किलमन्ति, गन्तब्बट्ठानञ्च न दूरं, थोकं विस्समित्वा दरथं पटिप्पस्सम्भेत्वा सायन्हसमये कुसिनारं गन्त्वा दसबलं पस्सिस्सामी" ति मग्गा B. 190 ओक्कम्म अञ्ञतरस्मिं रुक्खमूले सङ्घाटिं पञ्ञपेत्वा उदकतुम्बतो R. 598 उदकेन हत्थपादे सीतले कत्वा निसीदि। परिवारभिक्खूपिस्स रुक्खमूले 10 निसीदित्वा योनिसो मनसिकारे कम्मं[1] कुरुमाना तिण्णं रतनानं वण्णं भणमाना निसीदिंसु। इति दरथविनोदनत्थाय निसिन्नत्ता "दिवाविहारं" ति न वुत्तं।

मन्दारवपुप्फं गहेत्वा ति महापातिप्पमाणं पुप्फं आगन्तुकदण्डके ठपेत्वा छत्तं विय गहेत्वा। **अद्दस खो** ति आगच्छन्तं दूरतो अद्दस। 15 दिस्वा च पन चिन्तेसि—

"एतं आजीवकस्स हत्थे मन्दारवपुप्फं पञ्ञायति, एतञ्च न सब्बदा मनुस्सपथे पञ्ञायति,[2] यदा पन कोचि इद्धिमा इद्धिं विकुब्बति, तदा,[3] सब्बञ्ञुबोधिसत्तस्स च मातुकुच्छिओक्कमनादीसु होति। न खो पन अज्ज केनचि इद्धिविकुब्बनं कतं, न मे सत्था मातुकुच्छिं ओक्कन्तो, न 20 कुच्छितो निक्खमन्तो, नापिस्स अज्ज अभिसम्बोधि, न धम्मचक्कप्पवत्तनं, न यमकपाटिहारियं, न देवोरोहणं, न आयुसङ्खारोस्सज्जनं। महल्लको पन मे सत्था धुवं परिनिब्बुतो भविस्सती" ति।

१. कम्मट्ठानं— स्या०। २. होति—रो०।
३. ० सिया—रो०।

ततो—"पुच्छामि नं" ति चित्तं उप्पादेत्वा—"सचे खो पन निसिन्नकोव पुच्छामि, सत्थरि अगारवो कतो भविस्सती" ति उट्ठहित्वा ठितट्ठानतो अपक्कम्म छद्दन्तो नागराजा मणिचम्मं विय दसबलदत्तियं मेघवण्णं पंसुकूलचीवरं पारुपित्वा दसनखसमोधानसमुज्जलं अञ्जलिं 5 सिरस्मिं पतिट्ठपेत्वा सत्थरि कतेन गारवेन आजीवकस्स अभिमुखो हुत्वा—"आवुसो, अम्हाकं सत्थारं जानासी" ति आह। किं पन सत्थु परिनिब्बानं जानन्तो पुच्छि अजानन्तो ति? आवज्जनपटिबद्धं खीणासवानं जाननं, अनावज्जितत्ता पनेस अजानन्तो पुच्छी ति एके। थेरो समापत्तिबहुलो, रत्तिट्ठानदिवाट्ठानलेणमण्डपादीसु निच्चं समापत्तिबलेनेव 10 यापेति, कुलसन्तकम्पि गामं पविसित्वा द्वारे समापत्तिं समापज्जित्वा समापत्तितो वुट्ठितोव भिक्खं गण्हाति। थेरो किर इमिना पच्छिमेन अत्तभावेन महाजनानुग्गहं करिस्सामि—"ये मय्हं भिक्खं वा देन्ति B. 191 गन्धमालादीहि वा सक्कारं करोन्ति, तेसं तं महप्फलं होतू" ति एवं करोति। तस्मा समापत्तिबहुलताय न जानाति। इति अजानन्तोव R. 599 15 पुच्छती ति वदन्ति, तं न गहेतब्बं।

न हेत्थ अजाननकारणं अत्थि। अभिलक्खितं सत्थु परिनिब्बानं अहोसि, दससहस्सिलोकधातुकम्पनादीहि निमित्तेहि। थेरस्स पन परिसाय केहिचि भिक्खूहि भगवा दिट्ठपुब्बो, केहिचि न दिट्ठपुब्बो, तत्थ येहिपि दिट्ठपुब्बो, तेपि पस्सितुकामाव, येहिपि अदिट्ठपुब्बो, तेपि पस्सितुकामाव। 20 तत्थ येहि न दिट्ठपुब्बो, ते अतिदस्सनकामताय गन्त्वा "कुहिं भगवा" ति पुच्छन्ता "परिनिब्बुतो" ति सुत्वा सन्धारेतुं नासक्खिस्सन्ति। चीवरञ्च पत्तञ्च छड्डेत्वा एकवत्था वा दुन्निवत्था वा दुप्पारुता वा उरानि पटिपिसन्ता परोदिस्सन्ति। तत्थ मनुस्सा—"महाकस्सपत्थेरेन सद्धिं आगता पंसुकूलिका सयम्पि इत्थियो विय परोदन्ति, ते किं अम्हे 25 समस्सासेस्सन्ती" ति मय्हं दोसं दस्सन्ति। इदं पन सुञ्ञं महाअरञ्ञं, इध यथा तथा रोदन्तेसु दोसो नत्थि। पुरिमतरं सुत्वा नाम सोकोपि तनुको होती ति भिक्खूनं सतुप्पादनत्थाय जानन्तोव पुच्छि।

अज्ज सत्ताहपरिनिब्बुतो समणो गोतमो ति अज्ज समणो गोतमो सत्ताहपरिनिब्बुतो। ततो मे इदं ति ततो समणस्स गोतमस्स परिनिब्बुतट्ठानतो।

१०६. सुभद्दो नाम वुड्ढपब्बजितो (दी० नि० २.१२५) ति सुभद्दो ति तस्स नामं। वुड्ढकाले पन पब्बजित्ता वुड्ढपब्बजितो ति वुच्चति। कस्मा पन सो एवमाह? भगवति आघातेन। अयं किरेसो खन्धके आगते आतुमावत्थुस्मिं नहापितपुब्बको वुड्ढपब्बजितो भगवति कुसिनारतो निक्खमित्वा अड्ढतेळसेहि भिक्खुसतेहि सद्धिं आतुमं आगच्छन्ते भगवा आगच्छती ति सुत्वा—"आगतकाले यागुपानं[1] करिस्सामी" ति सामणेरभूमियं ठिते द्वे पुत्ते एतदवोच—"भगवा, किर ताता, आतुमं आगच्छति महता भिक्खुसंघेन सद्धिं अड्ढतेळसेहि भिक्खु सतेहि, गच्छथ, तुम्हे ताता, खुरभण्डं आदाय नाळियावापकेन[2] अनुघरकं अनुघरकं[3] आहिण्डथ लोणम्पि तेलम्पि तण्डुलम्पि खादनीयम्पि संहरथ भगवतो आगतस्स यागुपानं करिस्सामा" (म. व. २६२) ति। ते तथा अकंसु।

मनुस्सा ते दारके मञ्जुके पटिभानेय्यके दिस्वा कारेतुकामापि अकारेतुकामापि कारेन्तियेव। कतकाले—"किं गण्हिस्सथ ताता" ति पुच्छन्ति। ते वदन्ति—"न अम्हाकं अञ्ञेन केनचि अत्थो, पिता पन नो भगवतो, आगतकाले यागुदानं दातुकामो" ति। तं सुत्वा मनुस्सा अपरिगणेत्वाव यं ते सक्कोन्ति आहरितुं, सब्बं देन्ति। यम्पि न सक्कोन्ति, मनुस्सेहि पेसेन्ति। अथ भगवति आतुमं आगन्त्वा भुसागारं पविट्ठे सुभद्दो सायन्हसमयं गामद्वारं गन्त्वा मनुस्से आमन्तेसि—"उपासका, नाहं तुम्हाकं सन्तिका अञ्ञं किञ्चि पच्चासीसामी, मय्हं दारकेहि आभतानि[4] तण्डुलादीनि[4] येव संघस्स पहोन्ति। यं हत्थकम्मं, तं मे देथा" ति। "इदञ्चिदञ्च गण्हथा" ति

5 10 B. 192 R. 600 15 20 25

१. यागुदानं—सी०, स्या०, रो०। २. पसिब्बकेन—रो०।
३. सी०, रो० पोत्थकेसु नत्थि। ४-४. आभततेलादीनि—सी०, रो०।

सब्बूपकरणानि गाहेत्वा[१] विहारे उद्धनानि कारेत्वा एकं काळकं कासावं निवासेत्वा तादिसमेव पारुपित्वा—"इदं करोथ, इदं करोथा" ति सब्बरत्तिं विचारेन्तो सतसहस्सं विस्सज्जेत्वा भोज्जयागुञ्च मधुगोळकञ्च पटियादापेसि। भोज्जयागु नाम भुञ्जित्वा पातब्बयागु, 5 तत्थ सप्पिमधुफाणितमच्छमंसपुप्फफलरसादि यं किञ्चि खादनीयं नाम सब्बं पक्खिपति कीळितुकामानं सीसमक्खनयोग्गा होति सुगन्धगन्धा।

अथ भगवा कालस्सेव सरीरपटिजग्गनं कत्वा भिक्खुसंघपरिवुतो पिण्डाय चरितुं आतुमनगराभिमुखो पायासि। मनुस्सा तस्स 10 आरोचेसुं—"भगवा पिण्डाय गामं पविसति, तया कस्स यागु पटियादिता" ति। सो यथानिवत्थपारुतेहेव तेहि काळककासावेहि एकेन हत्थेन दब्बिञ्च कटच्छुञ्च गहेत्वा ब्रह्मा विय दक्खिणजाणुमण्डलं भूमियं पतिट्ठपेत्वा वन्दित्वा—"पटिग्गण्हातु, मे भन्ते, भगवा यागुं" ति आह।

15 ततो "जानन्तापि तथागता पुच्छन्ती" ति खन्धके आगतनयेन भगवा पुच्छित्वा च सुत्वा च तं वुड्ढपब्बजितं विगरहित्वा तस्मिं वत्थुस्मिं अकप्पियसमादानसिक्खापदञ्च, खुरभण्डपरिहरणसिक्खापदञ्चाति द्वे सिक्खापदानि पञ्ञपेत्वा—"भिक्खवे, अनेककप्पकोटियो R. 601 B. 193 भोजनं परियेसन्तेहेव वीतिनामिता। इदं पन तुम्हाकं अकप्पियं 20 अधम्मेन उप्पन्नं भोजनं, इमं परिभुत्तानं[२] अनेकानि अत्तभावसहस्सानि अपायेस्वेव निब्बत्तिस्सन्ति, अपेथ मा गण्हथा" ति भिक्खाचाराभिमुखो अगमासि। एकभिक्खुनापि न किञ्चि गहितं।

सुभद्दो अनत्तमनो हुत्वा अयं "सब्बं जानामी" ति आहिण्डति। सचे न गहितुकामो, पेसेत्वा आरोचेतब्बं। अयं पक्काहारो नाम 25 सब्बचिरं तिट्ठन्तो सत्ताहमत्तं तिट्ठेय्य। इदञ्हि मम यावजीवं परियत्तं अस्स। सब्बं तेन नासितं, अहितकामो अयं मय्हं ति भगवति आघातं

१. गहापेत्वा—सी०, रो०। २. परिभुत्ता—सी०।

बन्धित्वा दसबले धरन्ते किञ्चि वत्तुं नासक्खि। एवं किरस्स अहोसि—"अयं उच्चा कुला पब्बजितो महापुरिसो, सचे किञ्चि वक्खामि, मंयेव[1] सन्तज्जेस्सती"[2] ति। स्वायं अज्ज "परिनिब्बुतो भगवा" ति सुत्वा लद्धस्सासो विय हट्ठतुट्ठो एवमाह।

थेरो तं सुत्वा हदये पहारदानं विय मत्थके पतितसुक्खासनि विय मञ्ञि, धम्मसंवेगो चस्स उप्पज्जि—"सत्ताहमत्तपरिनिब्बुतो भगवा, अज्जापिस्स सुवण्णवण्णं सरीरं धरतियेव, दुक्खेन भगवता आराधितसासने नाम एवं लहु महन्तं पापकसटं कण्टको उप्पन्नो, अलं खो पनेस पापो वड्ढमानो अञ्ञेपि एवरूपे सहाये लभित्वा सक्का सासनं ओसक्कापेतुं" ति। ततो थेरो चिन्तेसि— 5 10

"सचे खो पनाहं इमं महल्लकं इधेव पिलोतिकं निवासापेत्वा छारिकाय[3] ओकिरापेत्वा नीहरापेस्सामि, मनुस्सा 'समणस्स गोतमस्स सरीरे धरमानेयेव सावका विवदन्ती' ति अम्हाकं दोसं दस्सेस्सन्ति[4] अधिवासेमि ताव।

भगवता हि देसितो धम्मो असङ्गहितपुप्फरासिसदिसो। तत्थ यथावातेन पहटपुप्फानि यतो वा यतो वा गच्छन्ति, एवमेव एवरूपानं पापपुग्गलानं वसेन गच्छन्ते गच्छन्ते काले विनये एकं द्वे सिक्खापदानि नस्सिस्सन्ति, सुत्ते एको द्वे पञ्हावारा नस्सिस्सन्ति, अभिधम्मे एकं द्वे भूमन्तरानि नस्सिस्सन्ति, एवं अनुक्कमेन मूले नट्ठे पिसाचसदिसा भविस्साम; तस्मा धम्मविनयसङ्गहं करिस्साम। एवञ्हि सति दळ्हं सुत्तेन सङ्गहितानि पुप्फानि विय अयं धम्मविनयो निच्चलो भविस्सति। 15 20 B.194

एतदत्थञ्हि भगवा मय्हं तीणि गावुतानि पच्चुग्गमनं अकासि, तीहि ओवादेहि उपसम्पदं अदासि, कायतो अपनेत्वा[5] काये[5] चीवरपरिवत्तनं अकासि, आकासे पाणिं चालेत्वा चन्दूपमं पटिपदं कथेन्तो मं कायसक्खिं R.602

१. ममं येव—सी०, स्या०, रो०। २. सन्तज्जिस्सन्ति—सी०।
३. ० सीसं—स्या०। ४. दस्सेन्ति—सी०, रो०।
५-५. सी०, रो० पोत्थकेसु नत्थि।

कत्वा कथेसि, तिक्खत्तुं सकलसासनदायज्जं पटिच्छापेसि। मादिसे भिक्खुम्हि तिट्ठमाने अयं पापो सासने वुड्ढिं मा अलत्थ। याव अधम्मो न दिप्पति, धम्मो न पटिबाहियति; अविनयो न दिप्पति विनयो न पटिबाहियति; अधम्मवादिनो न बलवन्तो होन्ति,
5 धम्मवादिनो न दुब्बला होन्ति; अविनयवादिनो न बलवन्तो होन्ति, विनयवादिनो न दुब्बला होन्ति, ताव धम्मञ्च विनयञ्च सङ्गायिस्सामि। ततो भिक्खू अत्तनो अत्तनो पहोनकं गहेत्वा कप्पियाकप्पियं कथेस्सन्ति। अथायं पापो सयमेव निग्गहं पापुणिस्सति। पुन सीसं उक्खिपितुं न सक्खिस्सति। सासनं इद्धञ्चेव फीतञ्च भविस्सती" ति।

10 सो एवं नाम मय्हं चित्तं उप्पन्नं ति कस्सचि अनारोचेत्वा भिक्खुसंघं समस्सासेसि। तेन वुत्तं—"अथ खो आयस्मा महाकस्सपो... पे०... नेतं ठानं विज्जती" ति।

१०७. चितकं ति वीसरतनसतिकं चन्दनचितकं। आळिम्पेस्सामा ति अग्गिं गहापेस्साम। न सक्कोन्ति आळिम्पेतुं ति अट्ठपि सोळसपि
15 द्वत्तिंसपि जना जालनत्थाय[1] यमकयमकउक्कायो गहेत्वा तालवण्टेहि बीजन्ता भस्ताहि धमन्ता तानि तानि कारणानि करोन्तापि न सक्कोन्तियेव अग्गिं गाहापेतुं। देवतानं अधिप्पायो ति एत्थ ता किर देवता थेरस्स उपट्ठाकदेवताव। असीतिमहासावकेसु हि चित्तानि पसादेत्वा तेसं उपट्ठाकानि असीति[2] कुलसहस्सानि सग्गे निब्बत्तानि।
20 तत्थ[3] थेरे चित्तं पसादेत्वा सग्गे निब्बत्ता देवता तस्मिं समागमे थेरं अदिस्वा—"कुहिं नु खो अम्हाकं कुलूपकत्थेरो" ति अन्तरामग्गे पटिपन्नं दिस्वा "अम्हाकं कुलूपकत्थेरेन अवन्दिते चितको मा पज्जलित्था" ति अधिट्ठहिंसु।

B. 195 मनुस्सा तं सुत्वा—"महाकस्सपो किर नाम भो भिक्खु पञ्चहि
25 भिक्खुसतेहि सद्धिं 'दसबलस्स पादे वन्दिस्सामी' ति आगच्छति। तस्मिं

१. एकतो हुत्वा—सी०, रो०। २. ० असीति—सी०।
३. तथा—सी०, रो०।

किर अनागते चितको न पज्जलिस्सति[1]। कीदिसो भो सो भिक्खु काळो ओदातो दीघो रस्सो, एवरूपे नाम भो भिक्खुम्हि ठिते किं दसबलस्स परिनिब्बानं नामा'' ति केचि गन्धमालादिहत्था पटिपथं गच्छिंसु। केचि वीथियो विचित्ता कत्वा आगमनमग्गं ओलोकयमाना अट्ठंसु। R. 603 5

१०८. अथ खो आयस्मा महाकस्सपो येन कुसिनारा ...पे०... सिरसा वन्दी ति थेरो किर चितकं पदक्खिणं कत्वा आवज्जन्तोव सल्लक्खेसि—"इमस्मिं[2] ठाने सीसं[2], इमस्मिं ठाने पादा" ति। ततो पादानं समीपे ठत्वा अभिञ्ञापादकं चतुत्थज्झानं समापज्जित्वा वुट्ठाय—"अरासहस्सपटिमण्डितचक्कलक्खणपतिट्ठिता दसबलस्स पादा 10 सद्धिं कप्पासपटलेहि पञ्च दुस्सयुगसतानि सुवण्णदोणिं[3] चन्दनचितकञ्च द्वेधा कत्वा मय्हं उत्तमङ्गे सिरस्मिं पतिट्ठहन्तू" ति अधिट्ठासि। सह अधिट्ठानचित्तेन तानि पञ्च[4] दुस्सयुगसतानि[5] द्वेधा कत्वा वलाहकन्तरा पुण्णचन्दो विय पादा निक्खमिंसु। थेरो विकसितरत्तपदुमसदिसे हत्थे पसारेत्वा सुवण्णवण्णे सत्थुपादे याव गोप्फका दळ्हं गहेत्वा अत्तनो 15 सिरवरे पतिट्ठपेसि। तेन वुत्तं—"भगवतो पादे सिरसा वन्दी" ति।

महाजनो तं अच्छरियं दिस्वा एकप्पहारेनेव महानादं नदि, गन्धमालादीहि पूजेत्वा यथारुचि वन्दि। एवं पन थेरेन च महाजनेन च तेहि च पञ्चहि भिक्खुसतेहि वन्दितमत्ते पुन अधिट्ठानकिच्चं नत्थि। पकतिअधिट्ठानवसेनेव थेरस्स हत्थतो मुञ्चित्वा अलत्तकवण्णानि 20 भगवतो पादतलानि चन्दनदारुआदीसु किञ्चि अचालेत्वाव यथाठाने पतिट्ठहिंसु। यथाठाने ठितानेव अहेसुं। भगवतो हि पादेसु निक्खमन्तेसु वा पविसन्तेसु वा कप्पासअंसु वा दसिकतन्तं[6] वा तेलबिन्दु वा दारुक्खन्धं वा ठाना चलितं नाम नाहोसि। सब्बं यथाठाने ठितमेव

१. पज्जलति—सी०, रो०।
२-२. सी०, रो० पोत्थकेसु नत्थि।
३. सुवण्णवण्णदोणि—सी०, रो०।
४. सी०, रो० पोत्थकेसु नत्थि।
५. दुस्सयुगादीनि—सी०, रो०।
६. दसातन्तं—सी०; दुस्सतन्तं—स्या०; ० दसातन्तु—रो०।

अहोसि। उट्ठहित्वा पन अत्थङ्गते चन्दे विय सूरिये विय च तथागतस्स पादेसु अन्तरहितेसु महाजनो महाकन्दितं कन्दि। परिनिब्बानकालतो अधिकतरं कारुञ्ञं अहोसि।

B. 196 **सयमेव भगवतो चितको पज्जली** ति इदं पन कस्सचि
5 पज्जलापेतुं वायमन्तस्स अदस्सनवसेन वुत्तं। देवतानुभावेन पनेस समन्ततो एकप्पहारेनेव पज्जलि।

१०९. **सरीरानेव अवसिस्सिंसू** (दी० नि० २.१२६) ति पुब्बे एकग्घनेन[1] ठितत्ता सरीरं नाम अहोसि। इदानि विप्पकिण्णत्ता
R 604 सरीरानी ति वुत्तं सुमनमकुळसदिसा च धोतमुत्तसदिसा च सुवण्ण-
10 सदिसा च धातुयो अवसिस्सिंसू ति अत्थो। दीघायुकबुद्धानञ्हि सरीरं सुवण्णक्खन्धसदिसं एकमेव[2] होति। भगवा पन—"अहं न चिरं ठत्वा परिनिब्बायामि, मय्हं सासनं ताव सब्बत्थ न वित्थारितं, तस्मा परिनिब्बुतस्सापि मे सासपमत्तम्पि धातुं गहेत्वा अत्तनो अत्तनो वसनट्ठाने चेतियं कत्वा परिचरन्तो महाजनो सग्गपरायणो होतू"
15 ति धातूनं विकिरणं अधिट्ठासि। कति पनस्स धातुयो विप्पकिण्णा, कति न विप्पकिण्णा ति चतस्सो दाठा, द्वे अक्खका, उण्हीसं ति इमा सत्त धातुयो न विप्पकिरिंसु, सेसा विप्पकिरिंसू ति। तत्थ सब्बखुद्दका धातु सासपबीजमत्ता अहोसि, महाधातु मज्झे भिन्नतण्डुलमत्ता, अतिमहती मज्झे भिन्नमुग्गमत्ता ति।

20 **उदकधारा** ति अग्गबाहुमत्तापि जङ्घमत्तापि तालक्खन्धमत्तापि उदकधारा आकासतो पतित्वा निब्बापेसि। **उदकसालतो** ति परिवारेत्वा ठितसालरुक्खे सन्धायेतं वुत्तं। तेसम्पि हि खन्धन्तर-विटपन्तरेहि[3] उदकधारा निक्खमित्वा निब्बापेसुं। भगवतो चितको महन्तो। समन्ता पथविं भिन्दित्वापि नङ्गलसीसमत्ता उदकवट्टि
25 फलिकवटंसकसदिसा उग्गन्त्वा चितकमेव गण्हन्ति। **गन्धोदकेना** ति

१. एकसंघाते—सी०, रो०। २. एकग्घना—सी०, रो०।
३. साखन्तरविटपन्तरेहि—सी०, रो०।

सुवण्णघटे रजतघटे च पूरेत्वा[१] आभतनानागन्धोदकेन। निब्बादकेना ति सुवण्णघटे रजतघटे च पूरेत्वा आभतनानागन्धोदकेन। निब्बापेसुं ति सुवण्णमयरजतमयेहि अट्ठदण्डकेहि विकिरित्वा चन्दनचितकं निब्बापेसुं।

एत्थ च चितके झायमाने परिवारेत्वा ठितसालरुक्खानं साखन्तरेहि 5 विटपन्तरेहि पत्तन्तरेहि जाला उग्गच्छन्ति, पत्तं वा साखा वा पुप्फं वा दड्ढा नाम नत्थि, किपिल्लिकापि मक्कटकापि जालानं अन्तरेनेव B. 197 विचरन्ति। आकासतो पतितउदकधारासुपि सालरुक्खेहि निक्खन्तउदकधारासुपि पथविं भिन्दित्वा निक्खन्तउदकधारासुपि धम्मकथा व[२] पमाणं। एवं चितकं निब्बापेत्वा पन मल्लराजानो सन्थागारे चतुज्जा- 10 तियगन्धपरिभण्डं कारेत्वा लाजपञ्चमानि पुप्फानि विकिरित्वा उपरि चेलवितानं बन्धित्वा सुवण्णतारकादीहि खचित्वा तत्थ[३] गन्धदाममालादामरतनदामानि ओलम्बेत्वा सन्थागारतो याव मकुटबन्धनसङ्खाता R. 605 सीसपसाधनमङ्गलसाला, ताव उभोहि पस्सेहि साणिकिलञ्जपरिक्खेपं कारेत्वा उपरि चेलवितानं बन्धापेत्वा सुवण्णतारकादीहि खचित्वा 15 तत्थपि गन्धदाममालादामरतनदामानि ओलम्बेत्वा मणिदण्डवण्णेहि वेणूहि च पञ्चवण्णद्धजे उस्सापेत्वा समन्ता वातपटाका[४] परिक्खिपित्वा सुसम्मट्ठासु[५] वीथीसु[६] कदलियो च पुण्णघटे च ठपेत्वा दण्डकदीपिका जालेत्वा अलङ्कतहत्थिक्खन्धे सह धातूहि सुवण्णदोणिं ठपेत्वा मालागन्धादीहि पूजेन्ता[७] साधुकीळितं कीलन्ता अन्तोनगरं पवेसेत्वा सन्थागारे 20 सरभमयपल्लङ्के ठपेत्वा उपरि सेतच्छत्तं धारेसुं[८]। एवं कत्वा—"अथ खो कोसिनारका मल्ला भगवतो सरीरानि सत्ताहं सन्थागारे सत्तिपञ्जरं करित्वा'' ति सब्बं वेदितब्बं।

१. ० पूरेत्वा—स्या०। २. धम्मता व—सी०, स्या०।
३. ० तत्थ—रो०। ४. धजापटाका—सी०, स्या०, रो०।
५. सित्तसम्मट्ठासु—स्या०, रो०। ६. रो० पोत्थके नत्थि।
७. पूजित्वा—सी०; पूजेत्वा—रो०। ८. धारयिंसु—सी०, रो०।

तत्थ सत्तिपञ्जरं करित्वा ति सत्तिहत्थेहि पुरिसेहि परिक्खिपापेत्वा। धनुपाकारं ति पठमं ताव हत्थिकुम्भेन कुम्भं पहरन्ते परिक्खिपापेसुं, ततो अस्से गीवाय गीवं पहरन्ते, ततो रथे आणिकोटिया आणिकोटिं पहरन्ते, ततो योधे बाहुना बाहुं पहरन्ते। तेसं 5 परियन्ते कोटिया कोटिं पहरमानानि धनूनि परिक्खिपापेसुं। इति समन्ता योजनप्पमाणं ठानं सत्ताहं सन्नाहगवच्छिकं विय कत्वा आरक्खं संविदहिंसु। तं सन्धाय वुत्तं—"धनुपाकारं परिक्खिपापेत्वा" ति।

कस्मा पनेते एवमकंसू ति? इतो पुरिमेसु हि द्वीसु सत्ताहेसु ते भिक्खुसंघस्स ठाननिसज्जोकासं करोन्ता खादनीयं भोजनीयं संविदहन्ता 10 साधुकीळिकाय ओकासं न लभिंसु। ततो नेतं अहोसि—"इमं सत्ताहं साधुकीळितं कीळिस्साम, ठानं खो पनेतं विज्जति यं अम्हाकं पमत्तभावं ञत्वा कोचिदेव आगन्त्वा धातुयो गण्हेय्य, तस्मा आरक्खं ठपेत्वा कीळिस्सामा" ति। ते तथा[1] एवमकंसु।

३७. सरीरधातुविभजनवण्णना

P. 198 ११०. अस्सोसि खो राजा (दी० नि० २.१२६) ति कथं 15 अस्सोसि? पठममेव किरस्स अमच्चा सुत्वा चिन्तयिंसु—"सत्था नाम परिनिब्बुतो, न सो सक्का पुन आहरितुं। पोथुज्जनिकसद्धाय पन अम्हाकं रञ्ञा सदिसो नत्थि, सचे एसा इमिनाव नियामेन सुणिस्सति, हदयमस्स फलिस्सति। राजा खो पन अम्हेहि अनुरक्खितब्बो" ति ते तिस्सो सुवण्णदोणियो आहरित्वा चतुमधुरस्स पूरेत्वा रञ्ञो सन्तिकं R. 606 20 गन्त्वा एतदवोचुं—"देव, अम्हेहि सुपिनको दिट्ठो, तस्स पटिघातत्थं तुम्हेहि दुकूलदुपट्टं निवासेत्वा यथा नासापुटमत्तं पञ्ञायति, एवं चतुमधुरदोणिया निपज्जितुं वट्टती" ति। राजा अत्थचरानं अमच्चानं वचनं सुत्वा "एवं होतु ताता" ति सम्पटिच्छित्वा तथा अकासि।

अथेको अमच्चो अलङ्कारं ओमुञ्चित्वा केसे पकिरिय याय दिसाय 25 सत्था परिनिब्बुतो, तदभिमुखो हुत्वा अञ्जलिं पग्गय्ह राजानं आह—

१. सी० पोत्थके नत्थि।

"देव, मरणतो मुच्चनकसत्तो नाम नत्थि, अम्हाकं आयुवड्ढनो चेतियट्ठानं पुञ्ञक्खेत्तं अभिसेकसिञ्चको[1] सो भगवा सत्था कुसिनाराय परिनिब्बुतो" ति । राजा सुत्वाव विसञ्ञीजातो चतुमधुरदोणियं उसुमं मुञ्चि । अथ नं[2] उक्खिपित्वा दुतियाय दोणिया निपज्जापेसुं । सो पुन[3] सञ्ञं लभित्वा—"ताता, किं वदेथा" ति पुच्छि । "सत्था, महाराज, परिनिब्बुतो" ति । राजा पुनपि विसञ्ञीजातो चतुमधुरदोणिया उसुमं मुञ्चि । अथ नं ततोपि उक्खिपित्वा ततियाय दोणिया निपज्जापेसुं । सो पुन सञ्ञं लभित्वा "ताता, किं वदेथा" ति पुच्छि[4] । "सत्था, महाराज, परिनिब्बुतो" ति । राजा पुनपि विसञ्ञीजातो, अथ नं उक्खिपित्वा नहापेत्वा मत्थके घटेहि उदकं आसिञ्चिंसु । 10

राजा सञ्ञं लभित्वा[5] आसना वुट्ठाय गन्धपरिभाविते मणिवण्णे केसे विकिरित्वा सुवण्णफलकवण्णाय पिट्ठियं पकिरित्वा पाणिना उरं पहरित्वा पवाळङ्कुरवण्णाहि सुवट्टितङ्गुलीहि सुवण्णबिम्बिसकवण्णं उरं पहरित्वा[6] पवाळङ्कुरवण्णाहि सुवट्टितङ्गुलीहि सुवण्णबिम्बिसकवण्णं उरं सिब्बन्तो विय गहेत्वा परिदेवमानो उम्मत्तकवेसेन अन्तरवीथिं 15 ओतिण्णो । सो अलङ्कतनाटकपरिवुतो नगरतो निक्खम्म जीवकम्बवनं गन्त्वा यस्मिं ठाने निसिन्नेन भगवता धम्मो देसितो' तं ओलोकेत्वा— B. 199 "भगवा सब्बञ्ञु, ननु इमस्मिं ठाने निसीदित्वा धम्मं देसयित्थ, सोकसल्लं मे[7] विनोदयित्थ, तुम्हे मय्हं सोकसल्लं नीहरित्थ, अहं तुम्हाकं सरणं गतो, इदानि पन मे पटिवचनम्पि न देथ, भगवा", ति 20 पुनप्पुनं परिदेवित्वा "ननु भगवा अहं अञ्ञदा एवरूपे काले 'तुम्हे' तुम्हे महाभिक्खुसंघपरिवारा जम्बुदीपतले चारिकं चरथा' ति सुणोमि, इदानि पनाहं तुम्हाकं अननुरूपं अयुत्तं पवत्तिं सुणोमी" ति एवमादीनि च वत्वा सट्ठिमत्ताहि गाथाहि भगवतो गुणं अनुस्सरित्वा चिन्तेसि— R. 607

१. अभिसेकपीठको—सी०, स्या०; ० पीठिका—रो० ।
२. ० ततो—सी०, स्या० ।
३. सी० पोत्थके नत्थि ।
४. पुच्छित्वा—रो० ।
५. पटिलभित्वा—सी०, रो० ।
६. सिब्बन्तो विय गहेत्वा—सी०, रो० ।
७. सी० पोत्थके नत्थि ।

"मम परिदेवितेनेव न सिज्झति, दसबलस्स धातुयो आहरापेस्सामी" ति एवं अस्सोसि। सुत्वा च इमिस्सा विसञ्ञिभावादिपवत्तिया अवसाने दूतं पाहेसि। तं सन्धाय अथ खो राजा तिआदि वुत्तं।

तत्थ दूतं पाहेसी (दी० नि० २.१२७) ति दूतञ्च पण्णञ्च पेसेसि। पेसेत्वा च पन—"सचे दस्सन्ति, सुन्दरं। नो चे दस्सन्ति, आहरणुपायेन आहरिस्सामी" ति चतुरङ्गिनिं सेनं सन्नय्हित्वा सयम्पि निक्खन्तोयेव। यथा च अजातसत्तु, एवं लिच्छवी आदयोपि दूतं पेसेत्वा सयम्पि चतुरङ्गिनिया सेनाय निक्खमिंसुयेव। तत्थ पावेय्यका सब्बेहि आसन्नतरा कुसिनारतो तिगावुतन्तरे नगरे वसन्ति। भगवापि पावं पविसित्वाव कुसिनारं गतो। अथ कस्मा पठमतरं न आगता ति चे? महापरिवारा पनेते राजानो महापरिवारं करोन्ताव पच्छतो जाता।

१११. ते संघे गणे एतदवोचुं ति सब्बेपि ते सत्तनगरवासिनो आगन्त्वा—"अम्हाकं धातुयो वा देन्तु, युद्धं वा" ति कुसिनारानगरं परिवारेत्वा ठिते—"एतं[1] भगवा अम्हाकं गामक्खेत्ते" ति पटिवचनं अवोचुं। ते किर एवमाहंसु—"न मयं सत्थु सासनं पहिणिम्ह, नापि गन्त्वा आनयिम्ह। सत्था पन सयमेव आगन्त्वा सासनं पेसेत्वा अम्हे पक्कोसापेसि। तुम्हेपि खो पन यं तुम्हाकं गामक्खेत्ते रतनं उप्पज्जति, न तं अम्हाकं देथ। सदेवके च लोके बुद्धरतनसमं रतनं नाम नत्थि। एवरूपं उत्तमरतनं लभित्वा मयं न दस्साम। न खो पन तुम्हेहियेव मातुथनतो खीरं पीतं, अम्हेहिपि मातुथनतो खीरं पीतं। न तुम्हेयेव पुरिसा, अम्हेपि पुरिसा होतू" ति अञ्ञमञ्ञं अहंकारं कत्वा सासनपटिसासनं पेसेन्ति, अञ्ञमञ्ञं मानगज्जितं गज्जन्ति। युद्धे पन सति कोसिनारकानंयेव जयो अभविस्स। कस्मा? यस्मा धातुपासनत्थं[2] आगता देवता नेसं पक्खा अहेसुं। पाळियं पन—"भगवा अम्हाकं गामक्खेत्ते, परिनिब्बुतो न मयं दस्साम भगवतो सरीरानं भागं" ति एत्तकमेव आगतं।

B. 200

१. एवं—सी०, रो०। २. धातुपूजनत्थं—सी०, रो०।

एवं वुत्ते दोणो ब्राह्मणो ति दोणब्राह्मणो इमं तेसं विवादं सुत्वा—"एते राजानो भगवतो परिनिब्बुतट्ठाने विवादं करोन्ति, न खो पनेतं पतिरूपं, अलं इमिना कलहेन, वूपसमेस्सामि नं" ति सो गन्त्वा ते संघे गणे एतदवोच। किमवोच? उन्नतप्पदेसे ठत्वा द्विभाणवारपरिमाणं दोणगज्जितं नाम अवोच। तत्थ पठमभाणवारे ताव एकपदम्पि ते न जानिंसु। दुतियभाणवारपरियोसाने—"आचरियस्स विय भो सद्दो, आचरियस्स विय भो सद्दो" ति सब्बे निरवा अहेसुं। जम्बुदीपतले किर कुलधरे[1] राजा येभुय्येन तस्स न अन्तेवासिको नाम नत्थि। अथ सो ते अत्तनो वचनं सुत्वा निरवे तुण्हीभूते विदित्वा पुन एतदवोच—"सुणन्तु भोन्तो" ति एतं गाथाद्वयं आवोच।

R. 608 5 10

११२. तत्थ अम्हाकं बुद्धो ति अम्हाकं बुद्धो। अहु खन्तिवादो ति बुद्धभूमिं अप्पत्वापि पारमियो पूरेन्तो खन्तिवादितापसकाले धम्मपालकुमारकाले छद्दन्तहत्थिकाले भूरिदत्तनागराजकाले चम्पेय्यनागराजकाले सङ्खपालनागराजकाले महाकपिकाले अञ्ञेसु च बहूसु जातकेसु परेसु कोपं अकत्वा खन्तिमेव अकासि। खन्तिमेव वण्णयि। किमङ्ग पन एतरहि इट्ठानिट्ठेसु तादिलक्खणं पत्तो, सब्बथापि अम्हाकं[2] बुद्धो खन्तिवादो अहोसि, तस्स एवंविधस्स। न हि साधुयं उत्तमपुग्गलस्स, सरीरभागे सिया सम्पहारो ति न हि साधुयं ति न हि साधु अयं। सरीरभागे ति सरीरविभागनिमित्तं[3], धातुकोट्ठासहेतू ति अत्थो। सिया सम्पहारो ति आवुधसम्पहारो साधु[4] न सिया ति वुत्तं होति।

15 20

सब्बेव भोन्तो सहिता ति सब्बेव भोन्तो सहिता होथ, मा भिज्जथ। समग्गा ति कायेन च वाचाय च एकसन्निपाता एकवचना समग्गा होथ। सम्मोदमाना ति चित्तेनापि अञ्ञमञ्ञं सम्मोदमाना होथ। करोमट्ठभागे ति भगवतो सरीरानि अट्ठ भागे करोम। चक्खुमतो ति पञ्चहि चक्खूहि चक्खुमतो बुद्धस्स। न केवलं तुम्हेयेव,

25 B. 201

१. ० जातो—सी०, स्या०, रो०। २. रो० पोत्थके नत्थि।
३. विभंगनिमित्त'—सी०, रो०। ४. स्या० पोत्थके नत्थि।

बहुजनोपि पसन्नो, तेसु एकोपि लद्धुं अयुत्तो नाम नत्थी ति बहुं कारणं वत्वा सञ्ञापेसि ।

११३. **तेसं संघानं गणानं पटिस्सुत्वा** (दी० नि० २.१२८) ति तेसं तेसं ततो ततो समागतसंघानं समागतगणानं पटिस्सुणित्वा । R. 609 5 **भगवतो सरीरानि अट्ठधा समं सुविभत्तं विभजित्वा** ति एत्थ अयमनुक्कमो—दोणो किर तेसं पटिस्सुणित्वा सुवण्णदोणिं विवरापेसि । राजानो आगन्त्वा दोणियंयेव ठिता सुवण्णवण्णा धातुयो दिस्वा—"भगवा सब्बञ्ञु पुब्बे मयं तुम्हाकं द्वत्तिंसमहापुरिसलक्खणपटिमण्डितं छब्बण्णबुद्धरस्मिखचितं असीतिअनुब्यञ्जनसमुज्जलितसोभं सुवण्णवण्णं 10 सरीरं अद्दसाम, इदानि पन सुवण्णवण्णाव धातुयो अवसिट्ठा जाता, न युत्तमिदं भगवा तुम्हाकं" ति परिदेविंसु ।

ब्राह्मणोपि तस्मिं समये तेसं पमत्तभावं ञत्वा दक्खिणदाठं गहेत्वा वेठन्तरे ठपेसि । अथ पच्छा अट्ठधा समं सुविभत्तं विभजि । सब्बापि धातुयो पाकतिकनाळिया सोळस नाळियो अहेसुं । एकेकनगरवासिनो 15 द्वे द्वे नाळियो लभिंसु । ब्राह्मणस्स पन धातुयो विभजन्तस्सेव सक्को देवानमिन्दो—"केन नु खो सदेवकस्स लोकस्स कङ्खच्छेदनत्थाय चतुसच्चकथाय पच्चयभूता भगवतो दक्खिणदाठा गहिता" ति ओलोकेन्तो "ब्राह्मणेन गहिता" ति दिस्वा—"ब्राह्मणोपि दाठाय अनुच्छविकं सक्कारं कातुं न सक्खिस्सति, गण्हामि नं" ति वेठन्तरतो गहेत्वा 20 सुवण्णचङ्कोटके ठपेत्वा देवलोकं नेत्वा चूळामणिचेतिये पतिट्ठपेसि ।

ब्राह्मणोपि धातुयो विभजित्वा दाठं अपस्सन्तो चोरिकाय गहितत्ता—"केन मे दाठा गहिता" ति पुच्छितुम्पि नासक्खि । "ननु तयाव धातुयो भाजिता, किं त्वं पठमंयेव अत्तनो धातुया[1] अत्थिभावं न अञ्ञासी" ति अत्तनि दोसारोपनं सम्पस्सन्तो—"मय्हम्पि कोट्ठासं 25 देथा" ति वत्तुम्पि नासक्खि । ततो—"अयम्पि सुवण्णतुम्बो

१. धातूहि—सी०, रो० ।

धातुगतिकोव, येन तथागतस्स धातुयो मिता[1], इमस्साहं थूपं करिस्सामी" ति चिन्तेत्वा इमं मे भोन्तो तुम्बं ददन्तू ति आह ।

११४. पिप्पलिवनिया मोरिया (दी० नि० २.१२८) पि अजातसत्तुआदयो विय दूतं पेसेत्वा युद्धसज्जाव निक्खमिंसु । B. 202

३८. धातुथूपपूजावण्णना

११५. राजगहे भगवतो सरीरानं थूपञ्च महञ्च अकासी ति कथं अकासि ? कुसिनारतो याव राजगहं पञ्चवीसति योजनानि । एत्थन्तरे अट्ठउसभवित्थतं समतलं मग्गं कारेत्वा यादिसं मल्लराजानो मकुटबन्धनस्स च सन्थागारस्स च अन्तरे पूजं कारेसुं । तादिसं पञ्चवीसतियोजनेपि मग्गे पूजं कारेत्वा लोकस्स अनुक्कण्ठनत्थं सब्बत्थ अन्तरापणे पसारेत्वा सुवण्णदोणियं पक्खित्तधातुयो सत्तिपञ्जरेन परिक्खिपापेत्वा अत्तनो विजिते पञ्चयोजनसतपरिमण्डले मनुस्से सन्निपातापेसि । ते धातुयो गहेत्वा कुसिनारतो साधुकीळितं कीळन्ता निक्खमित्वा यत्थ यत्थ सुवण्णवण्णानि पुप्फानि पस्सन्ति, तत्थ तत्थ धातुयो सत्तिअन्तरे ठपेत्वा पूजं अकंसु । तेसं पुप्फानं खीणकाले गच्छन्ति, रथस्स धुरट्ठानं पच्छिमट्ठाने सम्पत्ते सत्त दिवसे साधुकीळितं कीळन्ति । एवं धातुयो गहेत्वा आगच्छन्तानं सत्तवस्सानि सत्त मासानि सत्त दिवसानि वीतिवत्तानि ।

(margin: 5, R. 610, 10, 15)

मिच्छादिट्ठिका—"समणस्स गोतमस्स परिनिब्बुतकालतो पट्ठाय बलक्कारेन साधुकीळिताय उपद्दुतम्ह सब्बे नो कम्मन्ता नट्ठा" ति उज्झायन्ता मनं पदोसेत्वा छळासीतिसहस्समत्ता अपाये निब्बत्ता । खीणासवा आवज्जित्वा "महाजनो मनं पदोसेत्वा अपाये निब्बत्ती" ति दिस्वा—"सक्कं देवराजानं धातुआहरणूपायं कारेस्सामा" ति तस्स सन्तिकं गन्त्वा तमत्थं आरोचेत्वा—"धातुआहरणूपायं करोहि महाराजा" ति आहंसु । सक्को आह—"भन्ते, पुथुज्जनो नाम

(margin: 20)

[1]. मिनिता—सी०, रो० ।

अजातसत्तुना समो सद्धो नत्थि, न सो मम वचनं करिस्सति, अपिच खो मारविभिंसकसदिसं विभिंसकं दस्सेस्सामि, महासद्दं सावेस्सामि, यक्खगाहकखिपितकअरोचके करिस्सामि, तुम्हे अमनुस्सा महाराज कुपिता धातुयो आहरापेथा' ति वदेय्याथ, एवं सो आहरापेस्सती''
5 ति। अथ खो सक्को तं सब्बं अकासि।

थेरापि राजानं उपसङ्कमित्वा—"महाराज अमनुस्सा कुपिता, धातुयो आहरापेही" ति भणिंसु। राजा—"न ताव, भन्ते, मय्हं
B. 203 चित्तं तुस्सति, एवं सन्तेपि आहरन्तू" ति आह। सत्तमदिवसे धातुयो आहरिंसु। एवं आहता धातुयो गहेत्वा राजगहे थूपञ्च महञ्च अकासि।
R. 611 10 इतरेपि अत्तनो अत्तनो बलानुरूपेन आहरित्वा सकसकट्ठानेसु थूपञ्च महञ्च अकंसु।

एवमेतं भूतपुब्बं ति एवं एतं धातुभाजनञ्चेव दसथूपकरणञ्च जम्बुदीपे भूतपुब्बं ति पच्छा सङ्गीतिकारका आहंसु। एवं पतिट्ठितेसु पन थूपेसु महाकस्सपत्थेरो धातूनं अन्तरायं दिस्वा राजानं अजातसत्तुं
15 उपसङ्कमित्वा "महाराज, एकं[1] धातुनिधानं कातुं वट्टती" ति आह। साधु, भन्ते, निधानकम्मं ताव मम होतु, सेसधातुयो पन कथं आहरामी ति? न, महाराज, धातुआहरणं तुय्हं भारो, अम्हाकं भारो ति। साधु, भन्ते, तुम्हे धातुयो आहरथ, अहं धातुनिधानं करिस्सामी ति। थेरो तेसं तेसं राजकुलानं परिचरणमत्तमेव ठपेत्वा सेसधातुयो आहरि।
20 रामगामे पन धातुयो नागा परिग्गहिंसु, तासं अन्तरायो नत्थि। "अनागते लङ्कादीपे महाविहारे महाचेतियम्हि निदहिस्सन्ती" ति ता न आहरित्वा सेसेहि सत्तहि नगरेहि आहरित्वा राजगहस्स पाचीनदक्खिणदिसाभागे ठत्वा—"इमस्मिं ठाने यो पासाणो अत्थि, सो अन्तरधायतु, पंसु सुविसुद्धा होतु, उदकं मा उट्ठहतू" ति अधिट्ठासि।
25 राजा तं ठानं खणापेत्वा ततो उद्धतपंसुना इट्ठका कारेत्वा असीतिमहासावकानं चेतियानि कारेति। "इध राजा किं कारेती" ति

१. एवं—स्या०।

पुच्छन्तानम्पि "महासावकानं चेतियानी" ति वदन्ति, न कोचि धातुनिधानभावं जानाति। असीतिहत्थगम्भीरे पन तस्मिं पदेसे जाते हेट्ठा लोहसन्थारं सन्थरापेत्वा तत्थ थूपारामे चेतियघरप्पमाणं तम्बलोहमयं गेहं कारापेत्वा अट्ठ अट्ठ हरिचन्दनादिमये करण्डे च थूपे च कारापेसि। अथ भगवतो धातुयो हरिचन्दनकरण्डे पक्खिपित्वा तं 5 हरिचन्दनकरण्डकम्पि अञ्ञस्मिं हरिचन्दनकरण्डके, तम्पि अञ्ञस्मिं ति एवं अट्ठ हरिचन्दनकरण्डे एकतो कत्वा एतेनेव उपायेन ते अट्ठ करण्डे अट्ठसु हरिचन्दनथूपेसु, अट्ठ हरिचन्दनथूपे अट्ठसु लोहितचन्दनकरण्डसु, अट्ठ लोहितचन्दनकरण्डे अट्ठसु लोहितचन्दनथूपेसु, अट्ठ लोहितचन्दनथूपे अट्ठसु दन्तकरण्डेसु, अट्ठ दन्तकरण्डे अट्ठसु दन्तथूपेसु, अट्ठ दन्तथूपे 10 B. 204 R. 612 अट्ठसु सब्बरतनकरण्डेसु, अट्ठ सब्बरतनकरण्डे अट्ठसु सब्बरतनथूपेसु, अट्ठ सब्बरतनथूपे अट्ठसु सुवण्णकरण्डेसु, अट्ठ सुवण्णकरण्डे अट्ठसु सुवण्णथूपेसु अट्ठ सुवण्णथूपे अट्ठसु रजतकरण्डेसु, अट्ठ रजतकरण्डे अट्ठसु रजतथूपेसु अट्ठ रजतथूपे अट्ठसु मणिकरण्डेसु, अट्ठ मणिकरण्डे अट्ठसु मणिथूपेसु अट्ठ मणिथूपे अट्ठसु लोहितङ्ककरण्डेसु, अट्ठलोहितङ्ककरण्डे अट्ठसु लोहितङ्क- 15 थूपेसु, अट्ठ लोहितङ्कथूपे अट्ठसु मसारगल्लकरण्डेसु, अट्ठ मसारगल्लकरण्डे अट्ठसु मसारगल्लथूपेसु, अट्ठ मसारगल्लथूपे अट्ठसु फलिककरण्डेसु, अट्ठ फलिककरण्डे अट्ठसु फलिकमयथूपेसु पक्खिपि।

सब्बेसं उपरिमं फलिकचेतियं थूपारामचेतियप्पमाणं अहोसि, तस्स उपरि सब्बरतनमयं गेहं कारेसि, तस्स उपरि सुवण्णमयं, तस्स उपरि 20 रजतमयं, तस्स उपरि तम्बलोहमयं गेहं[1]। तत्थ सब्बरतनमयं वालिकं ओकिरित्वा जलजथलजपुप्फानं सहस्सानि विप्पकिरित्वा अड्ढछट्ठानि जातकसतानि असीतिमहाथेरे सुद्धोदनमहाराजानं महामायादेविं सत्त सहजाते ति सब्बानेतानि सुवण्णमयानेव कारेसि। पञ्चपञ्चसते सुवण्ण- रजतमये पुण्णघटे ठपापेसि, पञ्च सुवण्णद्धजसते उस्सापेसि। पञ्चसते 25

१. ० अकासि—सी०, रो०; अहोसि—स्या०।

सुवण्णदीपे, पञ्चसते रजतदीपे कारापेत्वा सुगन्धतेलस्स पूरेत्वा तेसु दुकूलवट्टियो ठपेसि ।

अथायस्मा महाकस्सपो—"माला मा मिलायन्तु, गन्धा मा विनस्सन्तु, दीपा मा विज्झायन्तू" ति अधिट्ठहित्वा सुवण्णपट्टे अक्खरानि
5 छिन्दापेसि—"अनागते पियदासो नाम कुमारो छत्तं अस्सापेत्वा असोको धम्मराजा भविस्सति । सो इमा धातुयो वित्थारिका करिस्सती" ति ।
राजा सब्बपसाधनेहि पूजेत्वा आदितो पट्ठाय द्वारं पिदहन्तो निक्खमि ।
B. 205 सो तम्बलोहद्वारं पिदहित्वा आविञ्छनरज्जुयं कुञ्चिकमुद्दिकं बन्धित्वा[१]
R. 613 तत्थेव महन्तं मणिक्खन्धं ठपेत्वा[२]—"अनागते दलिद्दराजा[३] इमं मणिं
10 गहेत्वा धातूनं सक्कारं करोतू[४]" ति अक्खरं[५] छिन्दापेसि ।

सक्को देवराजा विस्सकम्मं आमन्तेत्वा—"तात, अजातसत्तुना धातुनिधानं[६] कतं, एत्थ[७] आरक्खं पट्ठपेही" ति पहिणि । सो आगन्त्वा वाळसङ्घाटयन्तं योजेसि, कट्ठरूपकानि तस्मिं धातुगब्भे फलिकवण्णखग्गे गाहेत्वा वातसदिसेन वेगेन अनुपरियायन्तं[८] यन्तं योजेत्वा एकाय एव
15 आणिया बन्धित्वा समन्ततो गिञ्जकावसथाकारेन सिलापरिक्खेपं कत्वा उपरि एकाय पिदहित्वा पंसुं पक्खिपित्वा भूमिं समं कत्वा तस्स उपरि पासाणथूपं पतिट्ठपेसि । एवं निट्ठिते[९] धातुनिधाने यावतायुकं ठत्वा थेरोपि परिनिब्बुतो, राजापि यथाकम्मं गतो, तेपि मनुस्सा कालंकता ।

अपरभागे पियदासो नाम कुमारो छत्तं उस्सापेत्वा असोको नाम
20 धम्मराजा हुत्वा[१०] ता धातुयो गहेत्वा जम्बुदीपे वित्थारिका अकासि ।
कथं ? सो निग्रोधसामणेरं निस्साय सासने लद्धप्पसादो चतुरासीति विहारसहस्सानि कारेत्वा भिक्खुसंघं पुच्छि—"भन्ते, मया चतुरासीति

१. बन्धि—रो० ।
२. ठपेसि—सी०, स्या०, रो० ।
३. ० राजानो—सी०, रो० ।
४. करोन्तू ति—सी०, रो० ।
५. अक्खरानि—सी०, रो० ।
६. धातुनिधानिकं—सी०, रो० ।
७. तत्थ—स्या० ।
८. अनुपरियन्तं—सी०, रो०; अनुपरियायन्ति—स्या० ।
९. परिनिट्ठिते—स्या० ।
१०. ० सो—रो० ।

विहारसहस्सानि कारितानि, धातुयो कुतो लभिस्सामी" ति ? महाराज,—"धातुनिधानं नाम अत्थी" ति सुणोम, न पन पञ्ञायति— "असुकस्मिं ठाने" ति । राजा राजगहे चेतियं भिन्दापेत्वा धातुं अपस्सन्तो[1] पटिपाकतिकं कारेत्वा भिक्खुभिक्खुनियो उपासकउपासिकायो ति चतस्सो परिसा गहेत्वा वेसालिं गतो । तत्रापि अलभित्वा कपिलवत्थुं । तत्रापि अलभित्वा रामगामं गतो । रामगामे नागा चेतियं भिन्दितुं न अदंसु । चेतिये निपतितकुदालो खण्डाखण्डं होति । एवं तत्रापि अलभित्वा अल्लकप्पं वेठदीपं पावं[2] कुसिनारं ति सब्बत्थ चेतियानि भिन्दित्वा धातुं अलभित्वाव पटिपाकतिकानि कत्वा पुन राजगहं गन्त्वा चतस्सो परिसा सन्निपातापेत्वा—"अत्थि केनचि सुतपुब्बं 'असुकट्ठाने नाम धातुनिधानं' ति" पुच्छि ।

तत्रेको वीसवस्ससतिको थेरो—"असुकट्ठाने धातुनिधानं" ति न जानामि, मय्हं पन पिता महाथेरो मं सत्तवस्सकाले माला-चङ्कोटकं गाहापेत्वा—"एहि सामणेर, असुकगच्छन्तरे पासाणथूपो अत्थि, तत्थ गच्छामा" ति गन्त्वा पूजेत्वा—"इमं ठानं उपधारेतुं वट्टति सामणेरा" ति आह । अहं एत्तकं जानामि महाराजा ति आह । राजा "एतदेव ठानं" ति वत्वा गच्छे हारेत्वा पासाणथूपञ्च पंसुञ्च अपनेत्वा हेट्ठा सुधाभूमिं अद्दस । ततो सुधञ्च[3] इट्ठकायो च हारेत्वा[4] अनुपुब्बेन परिवेणं ओरुय्ह सत्तरतनवालुकं असिहत्थानि च कट्ठरूपकानि सम्परिवत्तकानि[5] अद्दस । सो यक्खदासके पक्कोसापेत्वा बलिकम्मं कारेत्वापि नेव अन्तं न कोटिं पस्सन्तो देवतानं[6] नमस्समानो—"अहं[7] इमा[7] धातुयो गहेत्वा चतुरासीतिया विहारसहस्सेसु निदहित्वा सक्कारं करोमि, मा मे देवता अन्तरायं करोन्तू" ति आह ।

R. 614
B. 206

१. ० पुन—स्या० ।
२. पावकं—सी०, रो० ।
३. सुधा च—सी०, स्या०, रो० ।
४. हारापेत्वा—सी०, रो० ।
५. सम्परिवत्तन्तानि—सी०, स्या०, रो० ।
६. देवता—सी०, रो०; देवतायो—स्या० ।
७-७. सी०, रो० पोत्थकेसु नत्थि ।

सक्को देवराजा चारिकं चरन्तो तं दिस्वा विस्सकम्मं आमन्तेसि[1]–"तात, असोको धम्मराजा–'धातुयो नीहरिस्सामी' ति परिवेणं ओतिण्णो, गन्त्वा कट्ठरूपकानि हारेही" ति । सो पञ्चचूळगामदारकवेसेन गन्त्वा रञ्ञो पुरतो धनुहत्थो ठत्वा—"हरामि महाराजा" ति
5 आह । "हर, ताता" ति सरं गहेत्वा सन्धिम्हियेव विज्झि, सब्बं विप्पकिरियित्थ । अथ राजा आविञ्छने बन्धं कुञ्चिकमुद्दिकं गण्हि[2], मणिक्खन्धं पस्सि । "अनागते दलिद्दराजा इमं मणिं गहेत्वा धातूनं सक्कारं करोतू" ति पुन अक्खरानि दिस्वा कुज्झित्वा—"मादिसं नाम राजानं दलिद्दराजाति वत्तुं अयुत्तं" ति पुनप्पुनं घटेत्वा द्वारं
10 विवरापेत्वा[3] अन्तोगेहं पविट्ठो ।

अट्ठारसवस्साधिकानं द्विन्नं वस्ससतानं उपरि आरोपितदीपा तथेव पज्जलन्ति । नीलुप्पलपुप्फानि तङ्खणं आहरित्वा आरोपितानि विय, पुप्फसन्थारो तङ्खणं सन्थतो विय, गन्धा तं मुहुत्तं पिसित्वा ठपिता विय राजा सुवण्णपट्टं गहेत्वा—"अनागते पियदासो नाम कुमारो छत्तं
15 उस्सापेत्वा असोको नाम धम्मराजा भविस्सति सो इमा धातुयो वित्थारिका करिस्सती" ति वाचेत्वा—"दिट्ठो भो, अहं[4] अय्येन महाकस्सपत्थेरेना" ति वत्वा वामहत्थं आभुजित्वा दक्खिणेन हत्थेन अप्फोटेसि । सो तस्मिं ठाने परिचरणधातुमत्तंमेव ठपेत्वा सेसा धातुयो
R. 615 गहेत्वा धातुगेहं पुब्बे पिहितनयेनेव पिदहित्वा सब्बं यथापकतियाव
20 कत्वा उपरि पासाणचेतियं पतिट्ठापेत्वा चतुरासीतिया विहारसहस्सेसु
B. 207 धातुयो पतिट्ठापेत्वा महाथेरे वन्दित्वा पुच्छि—"दायादोम्हि, भन्ते, बुद्धसासने" ति । किस्स दायादो, त्वं महाराज, बाहिरको त्वं सासनस्सा ति । भन्ते, छन्नवुतिकोटिधनं विस्सज्जेत्वा चतुरासीति विहारसहस्सानि कारेत्वा अहं न दायादो, अञ्ञो को दायादो ति ? पच्चयदायको नाम,
25 त्वं महाराज, यो पन अत्तनो पुत्तञ्च धीतरञ्च पब्बाजेति, अयं सासने[5]

१. आमन्तेत्वा—सी०, रो० । २. गण्हित्वा—स्या० ।
३. विवरित्वा—सी०, रो० । ४. ०मय्हं—सी० ।
५. सासनस्स—स्या० ।

दायादो नामा ति। सो पुत्तञ्च धीतरञ्च पब्बाजेसि। अथ नं थेरा आहंसु—"इदानि, महाराज, सासने दायादोसी" ति।

एवमेतं भूतपुब्बं ति एवं[1] अतीते धातुनिधानम्पि जम्बुदीपतले भूतपुब्बं ति। ततियसङ्गीतिकारापि इमं पदं ठपयिंसु।

११६. अट्ठदोणं चक्खुमतो सरीरं ति आदिगाथायो पन तम्ब- 5
पण्णिदीपे थेरेहि वुत्ता ति।

इति सुमङ्गलविलासिनिया दीघनिकायट्ठकथायं
महापरिनिब्बानसुत्तवण्णना निट्ठिता

—३—

१. एव मेतं—सी०, रो०।

(४) महासुदस्सनसुत्तवण्णना

१. कुसावतीराजधानीवण्णना

B. 208
R. 616

१-२. एवं मे सुतं (दी० नि० २.१३०) ति महासुदस्सनसुत्तं। तत्रायं अपुब्बपदवण्णना। सब्बरतनमयो ति एत्थ एका इट्ठका सोवण्णमया, एका रूपियमया, एका वेळुरियमया, एका फलिकमया, एका लोहितङ्कमया, एका मसारगल्लमया, एका सब्बरतनमया, अयं पाकारो 5 सब्बपाकारानं अन्तो उब्बेधेन[1] सट्ठिहत्थो अहोसि। एके पन थेरा— "नगरं नाम[2] अन्तो ठत्वा ओलोकेन्तानं दस्सनीयं वट्टति, तस्मा सब्बबाहिरो सट्ठिहत्थो, सेसा अनुपुब्बनीचा" ति वदन्ति। एके— "बहि[3] ठत्वा ओलोकेन्तानं दस्सनीयं वट्टति, तस्मा सब्बअब्भन्तरिमो सट्ठिहत्थो, सेसा अनुपुब्बनीचा" ति। एके—"अन्तो च बहि च ठत्वा 10 ओलोकेन्तानं दस्सनीयं वट्टति, तस्मा मज्झपाकारो सट्ठिहत्थो, अन्तो च बहि च तयो तयो[4] अनुपुब्बनीचा"[5] ति।

एसिका (दी० नि० २.१३१) ति एसिकत्थम्भो[6]। तिपोरिसङ्गा ति एकं पोरिसं मज्झिमपुरिसस्स अत्तनो हत्थेन पञ्चहत्थं, तेन तिपोरिसपरिक्खेपा पन्नरसहत्थपरिमाणा ति अत्थो। ते पन कथं ठिता ति? नगरस्स 15 बाहिरपस्से[7] एकेकं महाद्वारबाहं निस्साय एकेको, एकेकं खुद्दकद्वारबाहं निस्साय एकेको, महाद्वारखुद्दकद्वारानं अन्तरा तयो तयो ति। तालपन्तीसु सब्बरतनमयानं तालानं एकं सोवण्णमयं ति पाकारे वुत्तलक्खणमेव वेदितब्बं, पण्णफलेसुपि एसेव नयो। ता पन तालपन्तियो

१. उच्चतरो—स्या०, रो०।
२. पन—सी०।
३. बहिद्धा—सी०।
४. सी०, रो० पोत्थकेसु नत्थि।
५. अनुपुब्बनिन्ना—सी०।
६. ० थम्भा—स्या०।
७. ० एसिको—रो०, स्या०।

असीतिहत्था उब्बेधेन, विप्पकिण्णवालुके समतले भूमिभागे पाकारन्तरे एकेका हुत्वा ठिता।

वग्गू ति छेको सुन्दरो। **रजनीयो** ति रञ्जेतुं समत्थो। **खमनीयो** ति दिवसम्पि सुय्यमानो खमतेव, न बीभच्छेति[1]। **मदनीयो** ति मानमदपुरिसमदजननो। **पञ्चङ्गिकस्सा** ति आततं विततं आततविततं सुसिरं घनं ति इमेहि पञ्चहङ्गेहि समन्नागतस्स। तत्थ आततं नाम चम्मपरियोनद्धेसु भेरीआदीसु एकतलं तुरियं। विततं नाम उभयतलं। आततविततं नाम सब्बतो[2] परियोनद्धं। सुसिरं नाम वंसादि। घनं नाम सम्मादि। **सुविनीतस्सा** ति आकड्ढनसिथिलकरणादीहि सुमुच्छितस्स। **सुप्पटिताळितस्सा** ति पमाणे ठितभावजाननत्थं सुट्ठु पटिताळितस्स। **सुकुसलेहि समन्नाहतस्सा** ति ये वादितुं छेका कुसला, तेहि वादितस्स। **धुत्ता** ति अक्खधुत्ता,[3]। **सोण्डा** ति सुरासोण्डा। तेयेव पुनप्पुनं पातुकामतावसेन पिपासा। **परिचारेसुं** (दी. नि. २.१३२) ति हत्थं[4] वा पादं वा चालेत्वा[4] नच्चन्ता कीळिंसु।

R. 617 · 5 · B. 209 · 10

२. चक्करतनवण्णना

३. **सीसं न्हातस्सा** ति सीसेन सद्धिं गन्धोदकेन नहातस्स। **उपोसथिकस्सा** ति समादिन्नउपोसथङ्गस्स। **उपरिपासादवरगतस्सा** ति पासादवरस्स उपरि गतस्स, सुभोजनं भुञ्जित्वा पासादवरस्स उपरिमहातले सिरिगब्भं पविसित्वा सीलानि आवज्जन्तस्स। तदा किर राजा पातोव सतसहस्सं विस्सज्जेत्वा महादानं दत्वा सोळसहि गन्धोदकघटेहि सीसं नहायित्वा कतपातरासो सुद्धं उत्तरासङ्गं एकंसं करित्वा उपरिपासादस्स सिरिसयने पल्लङ्कं आभुजित्वा निसिन्नो अत्तनो दानादिमयं[5] पुञ्ञसमुदायं आवज्जन्तो निसीदि। अयं सब्बचक्कवत्तीनं धम्मता।

15 · 20

१. जिगुच्छेति—सी०; निप्फज्जेति—स्या०।
२. ० सब्बसो—सी०।
३. ० अक्खधुत्ता—सी०, रो०।
४. हत्थवारपदवारे गहेत्वा—सी०, स्या०, रो०।
५. दानदमसंयममयं—स्या०।

तेसं तं आवज्जन्तानं येव वुत्तप्पकारपुञ्ञकम्मपच्चयउतुसमुट्ठानं नीलमणिसङ्घातसदिसं पाचीनसमुद्दजलतलं भिन्दमानं विय, आकासं अलङ्कुरुमानं[१] विय दिब्बं चक्करतनं पातुभवति। तं महासुदस्सनस्सापि तथेव पातुरहोसि। तयिदं दिब्बानुभावयुत्तत्ता दिब्बं ति वुत्तं। सहस्सं 5 अस्स अरानं ति सहस्सारं। सह नेमिया, सह नाभिया चाति सनेमिकं सनाभिकं। सब्बेहि आकारेहि परिपुण्णं ति सब्बाकारपरिपूरं।

तत्थ चक्कञ्च तं रतिजननट्ठेन रतनञ्चा ति चक्करतनं। याय पन तं नाभिया "सनाभिकं" ति वुत्तं। सा इन्दनीलमया[२] होति, मज्झे R. 618 पनस्सा साररजतमया[३] पनाळि, याय सुद्धसिनिद्धदन्तपन्तिया हसमाना 10 विय विरोचति, मज्झे छिद्देन विय चन्दमण्डलेन, उभोसुपि बाहिरन्तेसु- B. 210 रजतपट्टेन कतपरिक्खेपा होति। तेसु पनस्स नाभिपनाळिपरिक्खेप- पट्टेसु युत्तयुत्तट्ठानेसु परिच्छेदलेखा सुविभत्ताव हुत्वा पञ्ञायन्ति। अयं ताव अस्स नाभिया सब्बाकारपरिपूरता[४]।

येहि पन तं—"अरेहि सहस्सारं" ति वुत्तं, ते सत्तरतनमया 15 सूरियरस्मियो विय पभासम्पन्ना होन्ति। तेसम्पि घटकमणिकपरिच्छेद- लेखादीनि सुविभत्तानेव हुत्वा पञ्ञायन्ति। अयमस्स अरानं सब्बाकार- परिपूरता।

याय पन तं नेमिया—"सनेमिकं" ति वुत्तं, सा बालसूरियरस्मि- कलापसिरिं अवहसमाना विय सुरत्तसुद्धसिनिद्धपवाळमया होति। 20 सन्धीसु पनस्सा सञ्झारागसस्सिरिका रत्तजम्बुनदपट्टा वट्टपरिच्छेदलेखा सुविभत्ता हुत्वा पञ्ञायन्ति। अयमस्स नेमिया सब्बाकारपरिपूरता।

नेमिमण्डलपिट्ठियं पनस्स दसन्नं दसन्नं अरानं अन्तरे धमनवंसो विय अन्तो सुसिरो छिद्दमण्डलखचितो वातगाही पवाळदण्डो होति, यस्स वातेरितस्स सुकुसलसमन्नाहतस्स[५] पञ्चङ्गिकतूरियस्स विय सद्दो

१. अलंकतं कुरुमानं—स्या०। २. इन्दनीलमणिमया—सी०, स्या०। ३. रजतमया—सी०, रो०। ४. ० पूरिता—सी०, रो०। ५. ० समन्नागतस्स—सी०।

वग्गु च रजनीयो च कमनीयो च मदनीयो च होति। तस्स खो पन पवाळदण्डस्स उपरि सेतच्छत्तं उभोसु पस्सेसु समोसरितकुसुमदामानं द्वे पन्तियो ति एवं समोसरितकुसुमदामपन्तिसतद्वयपरिवारसेतच्छत्तसतधारिना पवाळदण्डसतेन समुपसोभितनेमिपरिक्खेपस्स द्विन्नम्पि नाभिपनाळीनं अन्तो द्वे सीहमुखानि होन्ति, येहि तालक्खन्धप्पमाणा 5 पुण्णचन्दकिरणकलापसस्सिरीका तरुणरविसमानरत्तकम्बलगेण्डुकपरियन्ता आकासगङ्गागतिसोभं अवहसमाना विय द्वे मुत्तकलापा ओलम्बन्ति; येहि चक्करतनेन सद्धिं आकासे सम्परिवत्तमानेहि तीणि चक्कानि एकतो परिवत्तन्तानि विय खायन्ति। अयमस्स सब्बसो सब्बाकारपरिपूरता।

तं पनेतं एवं सब्बाकारपरिपूरं पकतिया सायमासभत्तं भुञ्जित्वा 10 अत्तनो अत्तनो घरद्वारे पञ्ञत्तासनेसु निसीदित्वा पवत्तकथासल्लापेसु मनुस्सेसु वीथिचक्कादीसु कीळमाने दारकजने नातिउच्चेन नातिनीच्चेन वनसण्डमत्थकासन्नेन आकासप्पदेसेन उपसोभयमानं विय, R. 619 रुक्खसाखग्गानि द्वादसयोजनतो पट्ठाय सुय्यमानेन मधुरस्सरेन सत्तानं B. 211 सोतानि ओधापयमानं योजनतो पट्ठाय नानप्पभासमुदयसमुज्जलेन 15 वण्णेन नयनानि समाकड्ढन्तं विय, रञ्ञो चक्कवत्तिस्स पुञ्ञानुभावं उग्घोसयन्तं विय, राजधानिया अभिमुखं आगच्छति।

अथस्स चक्करतनस्स सद्दसवनेनेव—"कुतो नु खो, कस्स नु खो अयं सद्दो" ति आवज्जितहदयानं पुरत्थिमदिसं आलोकयमानानं तेसं मनुस्सानं अञ्ञतरो अञ्ञतरं एवमाह—"पस्सथ, भो, अच्छरियं, 20 अयं पुण्णचन्दो पुब्बे एको[1] उग्गच्छति, अज्जेव पन अत्तदुतियो उग्गतो, एतम्हि राजहंसमिथुनमिव पुण्णचन्दमिथुनं पुब्बापरियेन[2] गगनतलं अभिलङ्घती" ति। तमञ्ञो आह—"किं कथेसि, सम्म, कुहिं नाम तया द्वे पुण्णचन्दा एकतो उग्गच्छन्ता दिट्ठपुब्बा, ननु एस तपनीयरंसिधारो[3] पिञ्छरकिरणो दिवाकरो उग्गतो" ति। तमञ्ञो हसितं 25

१. एकको—स्या०। २. अपुब्बापरियेन—सी०।
३. तपनीयरसघाटा—सी०।

कत्वा एवमाह—"किं उम्मत्तोसि, ननु इदानेव दिवाकरो अत्थङ्गतो, सो कथं इमं पुण्णचन्दं अनुबन्धमानो उग्गच्छिस्सति ? अद्धा पनेतं अनेकरतनप्पभासमुदयुज्जलं एकस्सपि[1] पुञ्ञवतो विमानं भविस्सती ति। ते सब्बेपि अपसारयन्ता अञ्ञे एवमाहंसु—"भो, किं बहुं विलपथ[2], 5 नेवायं पुण्णचन्दो, न सूरियो न देवविमानं। न हेतेसं एवरूपा सिरिसम्पत्ति[3] अत्थि, चक्करतनेन पन एतेन भवितब्बं" ति।

एवं पवत्तसल्लापस्सेव तस्स जनस्स चन्दमण्डलं ओहाय तं चक्करतनं अभिमुखं होति। ततो तेहि—"कस्स नु खो इदं निब्बत्तं" ति वुत्ते भवन्ति वत्तारो—"न कस्सचि अञ्ञस्स, ननु अम्हाकं 10 महाराजा पूरितचक्कवत्तिवत्तो, तस्सेतं निब्बत्तं" ति। अथ सो च महाजनो, यो च अञ्ञो पस्सति, सब्बो चक्करतनमेव अनुगच्छति। तञ्चापि चक्करतनं रञ्ञोयेव अत्थाय अत्तनो आगतभावं R. 620 ञापेतुकामं विय सत्तक्खत्तुं पाकारमत्थकेनेव नगरं अनुसंयायित्वा,[4] अथ रञ्ञो अन्तेपुरं पदक्खिणं कत्वा, अन्तेपुरस्स च उत्तरसीहपञ्जर- 15 सदिसे ठाने यथा गन्धपुप्फादीहि सुखेन सक्का होति पूजेतुं, एवं अक्खाहतं विय तिट्ठति।

एवं ठितस्स पनस्स वातपानछिद्दादीहि पविसित्वा नानाविराग- रतनप्पभासमुज्जलं अन्तोपासादं अलङ्कुरुमानं पभासमूहं दिस्वा दस्सनत्थाय B. 212 सञ्जाताभिलासो राजा होति। परिजनोपिस्स पियवचनपाभतेन 20 आगन्त्वा तमत्थं निवेदेति[5]। अथ राजा बलवपीतिपामोज्जफुटसरीरो पल्लङ्कं मोचेत्वा उट्ठायासना सीहपञ्जरसमीपं गन्त्वा तं चक्करतनं दिस्वा "सुतं खो पन मेतं" ति आदिकं चिन्तनं[6] चिन्तयति। महासुदस्सनस्सापि सब्बं तं तथेव अहोसि। तेन वुत्तं—"दिस्वा रञ्ञो

१. कस्सा पि—सी०।
२. विप्पलपथ—सी०।
३. सरसम्पत्ति—सी०।
४. अनुसायित्वा—सी०; अनुपरियायित्वा—स्या०।
५. दीपेति—सी०।
६. चित्तं—स्या०।

महासुदस्सनस्स ...पे०... अस्सं नु खो अहं राजा चक्कवत्ती" ति। तत्थ सो होति राजा चक्कवत्ती ति कित्तावता चक्कवत्ती होती ति ? एकङ्गुलद्वङ्गुलमत्तम्पि चक्करतने आकासं अब्भुग्गन्त्वा पवत्ते इदानि तस्स पवत्तापनत्थं यं कातब्बं, तं दस्सेन्तो अथ खो आनन्दा तिआदिमाह। 5

४. तत्थ उट्ठायासना ति निसिन्नासनतो उट्ठहित्वा चक्करतन-समीपं आगन्त्वा[1]। सुवण्णभिङ्कारं गहेत्वा ति हत्थिसोण्डसदिसपनाळिं सुवण्णभिङ्कारं उक्खिपित्वा। अन्वदेव राजा महासुदस्सनो सद्धिं चतुरङ्गिनिया सेनाया ति सब्बचक्कवत्तीनञ्हि उदकेन अब्भुक्कि-करित्वा—"अभिविजिनातु भवं चक्करतनं" ति वचनसमनन्तरमेव 10 वेहासं अब्भुग्गन्त्वा चक्करतनं पवत्तति। यस्स पवत्ति समकालमेव सो राजा चक्कवत्ती नाम होति। पवत्ते पन चक्करतने तं अनुबन्ध-मानोव राजा चक्कवत्तियानवरं आरुय्ह वेहासं अब्भुग्गच्छति। अथस्स छत्तचामरादिहत्थो परिजनो चेव अन्तेपुरजनो[2] च ततो नानाकारकञ्चु-ककवचादिसन्नाहविभूसितेन विविधाभरणप्पभासमुज्जलेन समुस्सितद्धज- 15 पटाकपटिमण्डितेन अत्तनो अत्तनो बलकायेन सद्धिं उपराजसेनापतिपभुत-योपि वेहासं अब्भुग्गन्त्वा राजानमेव परिवारेन्ति।

राजयुत्ता पन जनसङ्गहत्थं नगरवीथीसु भेरियो चरापेन्ति—"ताता, अम्हाकं रञ्ञो चक्करतनं निब्बत्तं, अत्तनो[3] विभवानुरूपेन मण्डितपसाधिका सन्निपतथा" ति। महाजनो पन पकतिया चक्करतन- 20 R. 621 सद्देनेव सब्बकिच्चानि पहाय गन्धपुप्फादीनि आदाय सन्निपतितोव। सोपि सब्बो वेहासं अब्भुग्गन्त्वा राजानमेव परिवारेति। यस्स यस्स हि रञ्ञो सद्धिं गन्तुकामताचित्तं उप्पज्जति, सो सो आकासगतोव होति। एवं द्वादसयोजनायामवित्थारा परिसा होति। तत्थ एकपुरिसोपि छिन्नभिन्नसरीरो वा किलिट्ठवत्थो वा नत्थि। सुचिपरिवारो हि राजा 25 B. 213

१. गन्त्वा—सी०। २. अन्तोजनो—स्या०।
३. ० अत्तनो—सी०, स्या०, रो०।

चक्कवत्ती। चक्कवत्तिपरिसा नाम विज्जाधरपुरिसा विय आकासे गच्छमाना इन्दनीलमणितले विप्पकिण्णरतनसदिसा[1] होति। महासुदस्सनस्सापि तथेव अहोसि। तेन वुत्तं—"अन्वदेव, राजा महासुदस्सनो सद्धिं चतुरङ्गिनिया सेनाया" ति।

5 तं पन चक्करतनं रुक्खग्गानं उपरूपरि नातिउच्चेन नातिनीचेन गगनप्पदेसेन पवत्तति। यथा रुक्खानं पुप्फफलपल्लवेहि अत्थिका, तानि सुखेन गहेतुं सक्कोन्ति; यथा च भूमियं ठिता "एस राजा, एस उपराजा, एस सेनापती" ति सल्लक्खेतुं सक्कोन्ति। ठानादीसु च इरियापथेसु यो येन इच्छति, सो तेनेव गच्छति। चित्तकम्मादिसिप्पप-
10 सुता चेत्थ अत्तनो अत्तनो किच्चं करोन्तायेव गच्छन्ति। यथेव हि भूमियं, तथा तेसं सब्बकिच्चानि आकासेव इज्झन्ति; एवं चक्कवत्तिपरिसं गहेत्वा तं चक्करतनं वामपस्सेन सिनेरुं पहाय महासमुद्दस्स उपरिभागेन सत्तसहस्सयोजनप्पमाणं[2] पुब्बविदेहं गच्छति।

तत्थ यो विनिब्बेधेन द्वादसयोजनाय, परिक्खेपतो छत्तिसयोजनाय
15 परिसाय सन्निवेसक्खमो सुलभाहारुपकरणो छायुदकसम्पन्नो सुचिसमतलो रमणीयो भूमिभागो, तस्स उपरिभागे तं चक्करतनं अक्खाहतं विय तिट्ठति। अथ तेन सञ्ञाणेन सो महाजनो ओतरित्वा यथारुचि नहानभोजनादीनि सब्बकिच्चानि करोन्तो वासं कप्पेति। महासुदस्सनस्सापि सब्बं तथेव अहोसि। तेन वुत्तं—"यस्मिं खो पनानन्द, पदेसे चक्करतनं
20 पतिट्ठाति, तत्थ सो राजा महासुदस्सनो वासं उपगच्छि सद्धिं चतुरङ्गिनिया सेनाया" ति।

एवं वासं उपगते चक्कवत्तिम्हि ये तत्थ राजानो, ते "परचक्कं आगतं" ति सुत्वापि न बलकायं सन्निपातेत्वा युद्धसज्जा होन्ति। चक्करतनस्स हि उप्पत्तिसमनन्तरमेव नत्थि, सो[3] सत्तो नाम, यो
R. 622 25 पच्चत्थिकसञ्ञाय तं राजानं आरब्भ आवुधं उक्खिपितुं विसहेय्य। अयमानुभावो चक्करतनस्स।

१. ० मणिरतन ०—स्या०। २. अट्ठयोजनसहस्सप्पमाणं—स्या०।
३. कोचि—स्या०।

चक्कानुभावेन हि तस्स रञ्ञो, B. 214
अरी असेसा दमथं उपेन्ति ।
अरिन्दमं[1] नाम नराधिपस्स,
तेनेव तं वुच्चति तस्स चक्कं ति ।।,

तस्मा सब्बेपि ते राजानो अत्तनो अत्तनो रज्जसिरिविभवानुरूपं 5
पाभतं गहेत्वा तं राजानं उपगम्म ओनतसिरा अत्तनो मोळिमणिप्प-
भाभिसेकेन तस्स पादपूजं करोन्ता—"एहि, खो महाराजा" ति
आदीहि वचनेहि तस्स किंकारपटिसावितं आपज्जन्ति । महासुदस्सन-
स्सापि तथेव अकंसु । तेन वुत्तं—"ये खो पनानन्द, पुरत्थिमाय दिसाय
...पे०...अनुसास, महाराजा" ति । 10

तत्थ **स्वागतं** ति सु-आगतं । एकस्मिञ्हि आगते सोचन्ति, गते
नन्दन्ति । एकस्मिं आगते नन्दन्ति, गते सोचन्ति, तादिसो त्वं आगमन-
नन्दनो, गमनसोचनो । तस्मा तव आगमनं सुआगमनं ति वुत्तं होति ।
एवं वुत्ते पन राजा चक्कवत्ती नापि—"एत्तकं नाम मे अनुवस्सं बलिं
उपकप्पेथा" ति वदति, नापि अञ्ञस्स भोगं अच्छिन्दित्वा 15
अञ्ञस्स देति । अत्तनो पन धम्मराजभावस्स
अनुरूपाय पञ्ञाय पाणातिपातादीनि उपपरिक्खित्वा पेमनीयेन
मञ्जुना[2] सरेन[2]—"पस्सथ ताता, पाणातिपातो नामेस आसेवितो
भावितो बहुलीकतो[3] निरयसंवत्तनिको होती" ति आदिना नयेन धम्मं
देसेत्वा "पाणो न हन्तब्बो" ति आदिकं ओवादं देति । महासुदस्सनोपि 20
तथेव अकासि । तेन वुत्तं—"राजा महासुदस्सनो एवमाह—'पाणो न
हन्तब्बो...पे०...यथाभुत्तञ्च भुञ्जथा' ति" । किं पन सब्बेपि रञ्ञो
इमं[4] ओवादं गण्हन्ती ति ? बुद्धस्सापि ताव सब्बे न गण्हन्ति, रञ्ञो
किं गण्हिस्सन्ती ति । तस्मा ये पण्डिता विभाविनो[5], ते गण्हन्ति ।
सब्बे पन अनुयन्ता[6] भवन्ति । तस्मा **ये खो पनानन्दा** तिआदिमाह । 25

१. अरिन्दमो—स्या० । २-२. मञ्जुनावचनेन—स्या० ।
३. ० यानीकतो—सी० । ४. सी० पोत्थके नत्थि ।
५. वियत्ता मेधाविनो—स्या० । ६. अनुयुत्ता—सी०, रो० ।

D. 214

अथ तं चक्करतनं एवं पुब्बविदेहवासीनं ओवादे दिन्ने कतपातरासे चक्कवत्तिबलेन[1] वेहासं अब्भुग्गन्त्वा पुरत्थिमसमुद्दं अज्झोगाहति। यथा यथा च तं अज्झोगाहति, तथा तथा अगदगन्धं घायित्वा संखित्तफणो नागराजा विय, संखित्तऊमिविप्फारं हुत्वा ओगच्छमानं 5 महासमुद्दसलिलं योजनमत्तं ओगन्त्वा अन्तोसमुद्दे वेळुरियभित्ति विय तिट्ठति। तङ्खणञ्ञेव च तस्स रञ्ञो पुञ्ञसिरिं दट्ठुकामानि B. 215 R. 623 विय महासमुद्दतले विप्पकिण्णानि नानारतनानि ततो ततो आगन्त्वा तं पदेसं पूरयन्ति। अथ सा राजपरिसा तं नानारतनपरिपूरं महासमुद्दतलं दिस्वा यथारुचि उच्छङ्गादीहि आदियति, यथारुचि आदिन्नारतनाय 10 पन परिसाय तं चक्करतनं पटिनिवत्तति। पटिनिवत्तमाने च तस्मिं परिसा अग्गतो होति, मज्झे राजा, अन्ते चक्करतनं। तम्पि जलनिधिजलं पलोभियमानमिव चक्करतनसिरिया, असहमानमिव च तेन वियोगं नेमिमण्डलपरियन्तं अभिहनन्तं निरन्तरमेव उपगच्छति। एवं राजा चक्कवत्ती पुरत्थिममहासमुद्दपरियन्तं पुब्बविदेहं अभिवि- 15 जिनित्वा दक्खिणसमुद्दपरियन्तं जम्बुदीपं विजेतुकामो चक्करतनदेसितेन मग्गेन दक्खिणसमुद्दाभिमुखो गच्छति। महासुदस्सनोपि तथेव अगमासि। तेन वुत्तं—"अथ खो आनन्द, चक्करतनं पुरत्थिमं समुद्दं अज्झोगाहेत्वा पच्चुत्तरित्वा दक्खिणं दिसं पवत्ती" ति।

एवं पवत्तमानस्स पन तस्स पवत्तनविधानं, सेनासन्निवेसो, 20 पटिराजागमनं, तेसं अनुसासनिप्पदानं, दक्खिणसमुद्दअज्झोगाहनं, समुद्दसलिलस्स ओगच्छमानं[2] रतनानं आदानं ति सब्बं पुरिमनयेनेव वेदितब्बं।

विजिनित्वा पन तं दससहस्सयोजनप्पमाणं जम्बुदीपं दक्खिणसमुद्दतो पि पच्चुत्तरित्वा सत्तयोजनसहस्सप्पमाणं अपरगोयानं विजेतुं पुब्बे 25 वुत्तनयेनेव गन्त्वा तम्पि समुद्दपरियन्तं तथेव अभिविजिनित्वा पच्छिम-समुद्दतोपि उत्तरित्वा अट्ठयोजनसहस्सप्पमाणं उत्तरकुरुं विजेतुं तथेव

१. ० बले—सी०, रो०।　　२. ओगच्छनं—स्या०; ओगमनं—सी०।

गन्त्वा तम्पि समुद्दपरियन्तं तथेव अभिविजियउत्तरसमुद्दतो पच्चुत्तरति ।

एत्तावता रञ्ञा चक्कवत्तिना चातुरन्ताय पथविया आधिपच्चं अधिगतं होति । सो एवं विजितविजयो अत्तनो रज्जसिरिसम्पत्ति-दस्सनत्थं सपरिसो उद्धं गगनतलं अभिलङ्घित्वा सुविकसितपदुमकुमुद- 5
पुण्डरीकवनविचित्ते[1] चत्तारो जातस्सरे विय पञ्चसतपञ्चसतपरित्तदीप-परिवारे चत्तारो महादीपे ओलोकेत्वा चक्करतनदेसितेनेव मग्गेन B. 216
यथानुक्कमं अत्तनो राजधानिं पच्चागच्छति । अथ तं चक्करतनं अन्तेपुरद्वारं सोभयमानं विय हुत्वा तिट्ठति ।

एवं पतिट्ठिते पन तस्मिं चक्करतने राजन्तेपुरे उक्काहि वा 10
दीपिकाहि वा किञ्चि करणीयं न होति, चक्करतनोभासोयेव रत्तिं R. 624
अन्धकारं विधमतियेव । ये पन अन्धकारत्थिका होन्ति, तेसं अन्धकारमेव होति । महासुदस्सनस्सापि सब्बमेतं तथेव अहोसि । तेन वुत्तं—"दक्खिणं समुद्दं अज्झोगाहेत्वा...पे०...एवरूपं चक्करतनं पातुरहोसी" ति । 15

३. हत्थिरतनवण्णना

६. एवं पातुभूतचक्करतनस्सेव चक्कवत्तिनो अमच्चा पकति-मङ्गलहत्थिट्ठानं समं सुचिभूमिभागं[2] कारेत्वा हरिचन्दनादीहि सुरभिगन्धेहि उपलिम्पापेत्वा हेट्ठा विचित्तवण्णसुरभिकुसुमसमोकिण्णं, उपरि सुवण्णतारकानं अन्तरन्तरा समोसरितमनुञ्ञकुसुमदामपटि-मण्डितवितानं देवविमानं वित अभिसङ्खरित्वा—"एवरूपस्स, नाम, देव, 20
हत्थिरतनस्स आगमनं चिन्तेथा" ति वदन्ति । सो पुब्बे वुत्तनयेनेव महादानं दत्वा सीलानि च समादाय तं पुञ्ञसम्पत्तिं आवज्जन्तो निसीदि । अथस्स पुञ्ञानुभावचोदितो छद्दन्तकुला वा उपोसथकुला वा तं सक्कारविसेसं अनुभवितुकामो तरुणरविमण्डलाभिरत्तचरणगीवा-मुखपटिमण्डितविसुद्धसेतसरीरो सत्तपतिट्ठो सुसण्ठितअङ्गपच्चङ्गसन्निवेसो 25

[1] ० पदुमुप्पल ०—सी० । [2] परिसुद्धं भूमिभागं—स्या० ।

विकसितरत्तपदुमचारुपोक्खरो इद्धिमा योगी विय वेहासगमनसमत्थो मनोसिलाचुण्णरञ्जितपरियन्तो विय रजतपब्बतो हत्थिसेट्ठो आगन्त्वा[१] तस्मिं पदेसे तिट्ठति। सो छद्दन्तकुला आगच्छन्तो सब्बकनिट्ठो आगच्छति, उपोसथकुला आगच्छन्तो सब्बजेट्ठो। पाळियं[२] पन उपोसथो
5 नागराजा इच्चेव आगतं। नागराजा[२] नाम कस्सचि अपरिभोगो, सब्बकनिट्ठो आगच्छती ति अट्ठकथासु वुत्तं। स्वायं पूरितचक्कवत्ति-वत्तानं चक्कवत्तीनं वुत्तनयेनेव चिन्तयन्तानं आगच्छति। महासुदस्सनस्स पन सयमेव पकतिमङ्गलहत्थिट्ठानं आगन्त्वा तं[३] हत्थिं[३] अपनेत्वा तत्थ अट्ठासि। तेन वुत्तं—"पुन चपरं आनन्द, ...पे०... नागराजा"
10 ति।

B. 217 एवं पातुभूतं पन तं हत्थिरतनं दिस्वा हत्थिगोपकादयो हट्ठतुट्ठा वेगेन गन्त्वा रञ्ञो आरोचेन्ति। राजा तुरिततुरितो आगन्त्वा तं दिस्वा पसन्नचित्तो—"भद्दकं, वत भो हत्थियानं सचे दमथं उपेय्या" ति
R. 625 चिन्तयन्तो हत्थं पसारेति। अथ सो घरधेनुवच्छको विय कण्णे
15 ओलम्बित्वा सूरतभावं दस्सेन्तो राजानं उपसङ्कमति। राजा तं आरोहितुकामो होति। अथस्स परिजना अधिप्पायं ञत्वा तं हत्थिरतनं सुवण्णधजं, सुवण्णालंकारं, हेम जालपटिच्छन्नं कत्वा उपनेन्ति[४]। राजा तं अनिसीदापेत्वाव सत्तरतनमयाय निस्सेणिया आरूय्ह आकासगमन-निन्नचित्तो होति। तस्स सह चित्तुप्पादेनेव सो नागराजा[५] राजहंसो
20 विय इन्दनीलमणिप्पभाजालं नीलगगनतलं अभिलङ्घति। ततो चक्कचारिकाय वुत्तनयेनेव सकलराजपरिसा। इति सपरिसो राजा अन्तोपातरासेयेव सकलपथविं अनुसंयायित्वा राजधानिं पच्चागच्छति। एवं महिद्धिकं चक्कवत्तिनो हत्थिरतनं होति। महासुदस्सनस्सापि तादिसमेव अहोसि। तेन वुत्तं—"दिस्वा रञ्ञो...पे०...पातुरहोसी"
25 ति।

१. सी०, रो० पोत्थकेसु नत्थि। २-२. सी० पोत्थके नत्थि।
३-३. मंगलहत्थिं—सी०। ४. उपनेति—स्या०।
५. हत्थिनागराजा—स्या०, रो०।

४. अस्सरतनवण्णना

७. एवं पातुभूतहत्थिरतनस्स पन चक्कवत्तिनो अमच्चा[१] पकतिमङ्गलअस्सट्ठानं सुचिसमतलं कारेत्वा अलङ्करित्वा च पुरिमनयेनेव रञ्ञो तस्स आगमनचिन्तनत्थं उस्साहं जनेन्ति। सो पुरिमनयेनेव कतदानमाननसक्कारो समादिन्नसीलब्बतो पासादतले सुखनिसिन्नो पुञ्ञसम्पत्तिं समनुस्सरति। अथस्स पुञ्ञानुभावचोदितो सिन्धवकुलतो 5 विज्जुलताविनद्धसरदकालसेतवलाहकरासिसस्सिरीको रत्तपादो रत्ततुण्डो चन्दप्पभापुञ्जसदिससुद्धसिनिद्धघनसंहतसरीरो काकगीवा विय इन्दनीलमणि विय च काळवण्णेन सीसेन समन्नागतत्ता काळसीसो (दी० नि०१.१३३) ति सुट्ठु कप्पेत्वा ठपितेहि विय मुञ्जसदिसेहि[२] सण्हवट्टउजुगतेहि[३] केसेहि समन्नागतत्ता मुञ्जकेसो वेहासङ्गमो 10 वलाहको नाम अस्सराजा आगन्त्वा तस्मिं ठाने पतिट्ठाति। महासुदस्सनस्स पनेस हत्थिरतनं विय आगतो। सेसं सब्बं हत्थिरतने B. 218 वुत्तनयेनेव वेदितब्बं। एवरूपं अस्सरतनं सन्धाय भगवा—"पुन च परं" तिआदिमाह।

५. मणिरतनवण्णना

८. एवं पातुभूतअस्सरतनस्स पन रञ्ञो चक्कवत्तिनो चतुहत्था- 15 यामं सकटनाभिसमपरिणाहं उभोसु अन्तेसु कण्णिकपरियन्ततो विनिग्गतेहि सुपरिसुद्धमुत्ताकलापेहि द्वीहि[४] कञ्चनपदुमेहि अलङ्कतं चतुरासीतिमणिसहस्सपरिवारं तारागणपरिवुतस्स पुण्णचन्दस्सिरिं फरमानं[५] R. 626 विय वेपुल्लपब्बततो मणिरतनं आगच्छति। तस्सेवं आगतस्स मुत्ताजालके ठपेत्वा वेळुपरम्पराय सट्ठिहत्थप्पमाणं आकासं आरोपितस्स 20 रत्तिभागे समन्ता योजनप्पमाणं ओकासं आभा फरति, याय सब्बो सो ओकासो अरुणुग्गमनवेला[६] विय सञ्जातालोको होति। ततो कस्सका

१. परिसा—सी०। २. ० सेतेहि—स्या०।
३. ० उजुगतिगतेहि—सी०, स्या०। ४. सी० पोत्थके नत्थि।
५. पटिप्फरमानं—सी०, स्या०। ६. ० वेलाय—सी०, स्या०, रो०।

कसिकम्मं वाणिजा आपणुग्घाटनं ते ते सिप्पिनो तं तं कम्मन्तं पयोजेन्ति "दिवा" ति मञ्ञमाना। महासुदस्सनस्सापि सब्बं तं तथेव अहोसि। तेन वुत्तं—"पुन च परं आनन्द,...पे०...मणिरतनं पातुरहोसी" ति।

६. इत्थिरतनवण्णना

5 ९. एवं पातुभूतमणिरतनस्स पन चक्कवत्तिनो विसयसुखविसेसस्स विसेसकारणं इत्थिरतनं पातुभवति। मद्दराजकुलतो वा हिस्स अग्गमहेसिं आनेन्ति, उत्तरकुरुतो वा पुञ्ञानुभावेन सयं आगच्छति। अवसेसा पनस्सा सम्पत्ति—"पुन च परं आनन्द, रञ्ञो महासुदस्सनस्स इत्थि-रतनं पातुरहोसि, अभिरूपा दस्सनीया" तिआदिना नयेन पळियंयेव 10 आगता।

तत्थ सण्ठानपारिपूरिया अधिकं रूपं अस्सा ति **अभिरूपा** (दी० नि० १.१३४)। दिस्समानाव चक्खूनि पिणयति, तस्मा अञ्ञं किच्चविक्खेपं हित्वापि दट्ठब्बा ति **दस्सनीया**। दिस्समानाव सोमनस्स-वसेन चित्तं पसादेती ति **पासादिका**। **परमाया** ति एवं पसादावहत्ता 15 उत्तमाय। **वण्णपोक्खरताया** ति वण्णसुन्दरताय। **समन्नागता** ति उपेता। **अभिरूपा** वा यस्मा नातिदीघा नातिरस्सा। **दस्सनीया** यस्मा B. 219 नातिकिसा नातिथूला। **पासादिका** यस्मा नातिकाळ्िकानाच्चोदाता। **परमाय वण्णपोक्खरताय समन्नागता** यस्मा अभिक्कन्ता मानुसिवण्णं अप्पत्ता दिब्बवण्णं। मनुस्सानञ्हि वण्णाभा बहि न निच्छरति। देवानं 20 पन अतिदूरम्पि निच्छरति।

तस्सा पन द्वादसहत्थप्पमाणं पदेसं सरीराभा ओभासेति। नाति-दीघादीसु चस्सा पठमयुगळेन आरोहसम्पत्ति, दुतिययुगळेन परिणाह-सम्पत्ति, ततिययुगळेन वण्णसम्पत्ति वुत्ता। छहि वापि एतेहि काय-विपत्तिया अभावो, **अतिक्कन्ता मानुसिवण्णं** ति इमिना कायसम्पत्ति 25 वुत्ता। **तूलपिचुनो वा कप्पासपिचुनो** वा ति सप्पिमण्डे पक्खिपित्वा ठपितस्स सतवारविहतस्स[1] तूलपिचुनो वा कप्पासपिचुनो वा। **सीते** ति

१. सतविहतस्स—सी०; सत्तद्धाविहतस्स—स्या०।

रञ्ञो सीतकाले। **उण्हे** ति रञ्ञो उण्हकाले। **चन्दनगन्धो** ति निच्चकालमेव सुपिसितस्स अभिनवस्स चतुज्जातिसमायोजितस्स हरिचन्दनस्स गन्धो कायतो वायति। **उप्पलगन्धो वायती** ति हसित-कथितकालेसु मुखतो तङ्खणं विकसितस्सेव नीलुप्पलस्स अतिसुरभि-गन्धो वायति। R. 627 5

एवं रूपसम्फस्सगन्धसम्पत्तियुत्ताय पनस्सा सरीरसम्पत्तिया अनुरूपं आचारं दस्सेतुं **तं खो पना** तिआदि वुत्तं। तत्थ राजानं दिस्वा निसिन्नासनतो अग्गिदड्ढा विय पठममेव उट्ठाती ति **पुब्बुट्ठायिनी**। तस्मिं निसिन्ने तस्स तालवण्टेन बीजनादिकिच्चं कत्वा पच्छा निपतति निसीदती ति **पच्छानिपातिनी**। किं करोमि, ते[1] देवा, ति वाचाय किं-कारं पटिसावेती ति **किं कारपटिस्साविनी**। रञ्ञो मनापमेव चरति करोती ति **मनापचारिनी**। यं रञ्ञो पियं तदेव वदती ति **पियवादिनी**। 10

इदानि—"स्वास्सा[2] आचारो भावविसुद्धियाव, न साठेय्यना" ति दस्सेतुं **तं खो पना** तिआदिमाह। तत्थ **नो अतिचरी** ति न अति-क्कमित्वा चरि,[3] ठपेत्वा राजानं अञ्ञं पुरिसं चित्तेनपि न पत्थसी ति[4] वुत्तं होति। 15

तत्थ ये तस्सा आदिम्हि "अभिरूपा" तिआदयो, अन्ते "पुब्बु-ट्ठायिनी" तिआदयो गुणा वुत्ता, ते पकतिगुणा एव। "अतिक्कन्ता मानुसिवण्णं" तिआदयो पन चक्कवत्तिनो पुञ्ञं उपनिस्साय चक्करतन-पातु भावतो पट्ठाय पुरिमकम्मानुभावेन निब्बत्ता ति वेदितब्बा। 20

अभिरूपतादिकापि वा चक्करतनपातुभावतो पट्ठाय सब्बाकारपरिपूरा जाता। तेनाह—"एवरूपं इत्थिरतनं पातुरहोसी" ति। B. 220

७. गहपतिरतनवण्णना

१०. एवं पातुभूतइत्थिरतनस्स पन रञ्ञो चक्कवत्तिनो घनकर-णीयानं किच्चानं यथासुखं पवत्तनत्थं गहपतिरतनं पातुभवति। सो 25

१. सी० पोत्थके नत्थि।
२. तस्सायं—रो०।
३. चरति—सी०।
४. पत्थती ति—स्या०।

पकतियाव महाभोगो, महाभोगकुले जातो। रञ्ञो धनरासिवड्ढको सेट्ठिगहपति होति। चक्करतनानुभावसहितं पनस्स कम्मविपाकजं दिब्बचक्खु पातुभवति, येन अन्तोपथवियम्पि योजनब्भन्तरे निधिं पस्सति। सो तं सम्पत्तिं दिस्वा तुट्ठमानसो[1] गन्त्वा राजानं धनेन 5 पवारेत्वा सब्बानि धनकरणीयानि सम्पादेति। महासुदस्सनस्सापि तथेव सम्पादेति। तेन वुत्तं—"पुन च परं आनन्द ...पे०... एवरूपं गहपतिरतनं पातुरहोसी" ति।

८. परिणायकरतनवण्णना

R. 628 ११. एवं पातुभूतगहपतिरतनस्स पन रञ्ञो चक्कवत्तिस्स सब्बकिच्चसंविधानसमत्थं परिणायकरतनं पातुभवति। सो रञ्ञो 10 जेट्ठपुत्तोव होति। पकतिया एव सो पण्डितो ब्यत्तो मेधावी विभावी। रञ्ञो पुञ्ञानुभावं निस्साय पनस्स अत्तनो कम्मानुभावेन परचित्तञाणं उप्पज्जति। येन द्वादसयोजनाय राजपरिसाय चित्ताचारं ञत्वा रञ्ञो हिते च अहिते च ववत्थपेतुं समत्थो होति। सोपि तं अत्तनो आनुभावं दिस्वा तुट्ठहदयो राजानं सब्बकिच्चानुसासनेन पवारेति। महासुदस्सनम्पि 15 तथेव पवारेसि। तेन वुत्तं—"पुन च परं ...पे०... परिणायकरतनं पातुरहोसी" ति।

तत्थ ठपेतब्बं ठपेतु (दी० नि० २.१३५) ति तस्मिं तस्मिं ठानन्तरे ठपेतब्बं ठपेतुं।

९. चतुइद्धिसमन्नागतवण्णना

१२. समवेपाकिनिया ति समविपाचनिया। गहणिया ति 20 कम्मजतेजोधातुया। तत्थ यस्स भुत्तमत्तोव आहारो जीरति, यस्स B. 221 वा पन पुटभत्तं विय तथेव तिट्ठति, उभोपेते न समवेपाकिनिया समन्नागता। यस्स पन पुन भत्तकाले भत्तच्छन्दो उप्पज्जतेव, अयं समवेपाकिनिया समन्नागतो ति।

[1] तुट्ठहदयो—सी०, स्या०।

१०. धम्मपासादपोक्खरणिवण्णना

१३. मापेसि खो (दी० नि० २.१३६) ति नगरे भेरिं चरापेत्वा जनरासिं कारेत्वा[1] न मापेसि, रञ्ञो पन सह चित्तुप्पादेनेव भूमिं भिन्दित्वा चतुरासीति पोक्खरणीसहस्सानि निब्बत्तिंसु। तानि सन्धायेतं वुत्तं। द्वीहि वेदिकाही ति एकाय इट्ठकानं परियन्तेयेव परिक्खित्ता एकाय परिवेणपरिच्छेदपरियन्ते। एतदहोसी ति कस्मा 5 अहोसि? एकदिवसं किर नहत्वा च पिवित्वा च गच्छन्तं महाजनं महापुरिसो ओलोकेत्वा इमे उम्मत्तकवसेनेव गच्छन्ति। सचे एतेसं एत्थ पिळन्धनपुप्फानि भवेय्युं, भद्दकं सिया ति। अथस्स एतदहोसि। तत्थ सब्बातुकं ति पुप्फं नाम एकस्मिं येव उतुम्हि पुप्फति। अहं पन तथा करिस्सामि—"यथा सब्बेसु उतूसु पुप्फिस्सती" 10 ति चिन्तेसिं। रोपापेसी ति नानावण्णउप्पलबीजादीनि ततो ततो आहरापेत्वा न[2] रोपापेसि, सह चित्तुप्पादेनेव पनस्स सब्बं इज्झति[3]। तं लोको रञ्ञा रोपितं ति मञ्ञि। तेन वुत्तं—"रोपापेसी" ति। ततो पट्ठाय महाजनो नानप्पकारं जलजथलजमालं पिळन्धित्वा नक्खत्तं कीळमानो विय गच्छति। 15

R. 629 अथ राजा ततो उत्तरिपि जनं सुखसमप्पितं कातुकामो—"यन्नूनाहं इमासं पोक्खरणीनं तीरे" ति आदिना जनस्स सुखविधानं चिन्तेत्वा सब्बं अकासि। तत्थ न्हापेसुं ति अञ्ञो सरीरं उब्बट्टेसि, अञ्ञो चुण्णानि योजेसि, अञ्ञो तीरे नहायन्तस्स उदकं आहरि, अञ्ञो वत्थानि पटिग्गहेसि चेव अदासि च। 20

पट्ठपेसि खो ति कथं पट्ठपेसि? इत्थीनञ्च पुरिसानञ्च अनुच्छविके अलङ्कारे कारेत्वा[4] इत्थिमत्तमेव तत्थ परिचारवसेन सेसं सब्बं परिच्चागवसेन उपेत्वा राजा महासुदस्सनो दानं देति, तं परिभुञ्जथा ति भेरिं चरापेसि। महाजनो पोक्खरणीतीरं आगन्त्वा नहत्वा वत्थानि

१. कारापेत्वा—सी०। २. स्या० पोत्थके नत्थि।
३. इज्झि—सी०। ४. ठपेत्वान—स्या०।

B. 222 परिवत्तेत्वा नानागन्धेहि विलित्तो पिळन्धनविचित्तमालो दानग्गं गन्त्वा अनेकप्पकारेसु यागुभत्तखज्जकेसु अट्ठविधपानेसु च यो यं इच्छति, सो तं खादित्वा च पिवित्वा च नानावण्णानि खोमसुखुमानि वत्थानि निवासेत्वा सम्पत्तिं अनुभवित्वा येसं तादिसानि अत्थि, ते
5 ओहाय गच्छन्ति। येसं पन नत्थि, ते गहेत्वा गच्छन्ति। हत्थिअस्सयानादीसुपि निसीदित्वा थोकं विचरित्वा अनत्थिका ओहाय, अत्थिका गहेत्वा गच्छन्ति। वरसयनेसु निपज्जित्वा[1] सम्पत्तिं अनुभवित्वा अनत्थिका ओहाय, अत्थिका गहेत्वा गच्छन्ति। इत्थीहिपि सद्धिं सम्पत्तिं अनुभवित्वा अनत्थिका ओहाय, अत्थिका गहेत्वा गच्छन्ति।
10 सत्तविधरतनपसाधनानि च पसाधेत्वा[2] पि सम्पत्तिं अनुभवित्वा अनत्थिका ओहाय, अत्थिका गहेत्वा गच्छन्ति। तम्पि दानं उट्ठाय समुट्ठाय दीयतेव। जम्बुदीपवासिकानं अञ्ञं कम्मं नत्थि, रञ्ञो दानं परिभुञ्जनन्ताव विचरन्ति।

अथ ब्राह्मणगहपतिका चिन्तेसुं—"अयं राजा एवरूपं दानं
15 ददन्तोपि 'मय्हं तण्डुलादीनि वा खीरादीनि वा देथा' ति न किञ्चि आहरापेति, न खो पन अम्हाकं—'राजा आहरापेती' ति तुण्हीमासितुं पतिरूपं" ति ते बहुं सापतेय्यं संहरित्वा रञ्ञो उपनामेसुं। तस्मा—"अथ, खो आनन्द, ब्राह्मणगहपतिका" तिआदिमाह। **एवं समचिन्तेसुं** ति कस्मा एवं चिन्तेसुं? कस्सचि घरतो अप्पं आभतं, कस्सचि बहु।
R. 630 20 तस्मिं पटिसंहरियमाने—"किं तवेव घरतो सुन्दरं आभतं, न मय्हं घरतो, किं तवेव घरतो बहु, न मय्हं" ति एवं कलहसद्दोपि उप्पज्जेय्य, सो मा उप्पज्जित्था ति एवं समचिन्तेसुं।

एहि त्वं सम्मा ति एहि त्वं वयस्स। **धम्मं नाम पासादं** ति
25 पासादस्स नामं आरोपेत्वाव आणापेसि। विस्सकम्मो पन कीव महन्तो देव पासादो होतू ति पटिपुच्छित्वा दीघतो योजनं, वित्थारतो अड्ढयोजनं सब्बरतनमयोव होतू ति वुत्तेपि 'एवं होतु, भद्दं तव वचनं' ति तस्स

१. निसज्ज—सी०। २. पसारेत्वा—रो०।

पटिस्सुणित्वा धम्मराजानं[1] सम्पटिच्छापेत्वा मापेसि। तत्थ **एवं भद्दं तवाति खो आनन्दा** ति एवं भद्दं तव इति खो आनन्द। **पटिस्सुत्वा** ति सम्पटिच्छित्वा, वत्वा ति अत्थो। **तुण्हीभावेना** ति समणधम्मपटिपत्ति- B. 223
करणोकासो मे भविस्सती ति इच्छन्तो तुण्हीभावेन अधिवासेसि। **सारमयो** ति चन्दनसारमयो। 5

द्वीहि वेदिकाही (दी० नि० २.१३७) ति एत्थ एका वेदिका पनस्स उण्हीसमत्थके अहोसि, एका हेट्ठा परिच्छेदमत्थके।

दुद्दिक्खो अहोसी ति दुउद्दिक्खो, पभासम्पत्तिया दुद्दसो ति अत्थो। **मुसती** ति हरति फन्दापेति निच्चलभावेन पतिट्ठातुं न देति। **विद्धे** ति उब्बिद्धे, मेघविगमेन दूरीभूते ति अत्थो। **देवे** ति आकासे। 10

मापेसि खो ति अहं इमस्मिं ठाने पोक्खरणिं मापेमि, तुम्हाकं घरानि भिन्दथा ति न एवं कारेत्वा मापेसि। चित्तुप्पादवसेनेव पनस्स भूमिं भिन्दित्वा तथारूपा पोक्खरणी अहोसि। ते **सब्बकामेही** ति सब्बेहि इच्छितिच्छितवत्थूहि, समणे समणपरिक्खारेहि, ब्राह्मणे ब्राह्मणपरिक्खारेहि सन्तप्पेसी ति। 15

पठमभाणवारवण्णना निट्ठिता

११. झानसम्पत्तिवण्णना

२०. **महिद्धिको** (दी० नि० १.१४२) ति चित्तुप्पादवसेनेव चतुरासीतिपोक्खरणीसहस्सानं निब्बत्तिसङ्खाताय महतिया इद्धिया समन्नागतो। **महानुभावो** ति तेसंयेव अनुभवितब्बानं महन्तताय महानुभावेन समन्नागतो। **सेय्यथिद** ति निपातो, तस्स—"कतमेसं तिण्णं" ति अत्थो। **दानस्सा** ति सम्पत्तिपरिच्चागस्स। **दमस्सा** ति 20
आळवकसुत्ते पञ्ञा दमो ति आगतो। इध अत्तानं दमेन्तेन कतं उपोसथकम्मं। **संयमस्सा** ति सीलस्स। R. 631

1. अथ ०–स्या०।

१२. बोधिसत्तपुब्बयोगवण्णना

इध ठत्वा पनस्स पुब्बयोगो वेदितब्बो। राजा किर पुब्बे गहपतिकुले निब्बत्ति। तेन च समयेन धरमानकस्सेव कस्सपबुद्धस्स
B. 224 सासने एको थेरो अरञ्ञे वासं वसति। बोधिसत्तो अत्तनो कम्मेन अरञ्ञं पविट्ठो थेरं दिस्वा उपसङ्कमित्वा वन्दित्वा थेरस्स निसज्जन-
5 ट्ठानचङ्कमनट्ठानानि ओलोकेत्वा पुच्छि—"इधेव, भन्ते, अय्यो वसती" ति? आम, उपासका ति सुत्वा—"इधेव[१] अय्यस्स पण्णसालं कातुं वट्टती" ति चिन्तेत्वा अत्तनो कम्मं पहाय दब्बसम्भारं कोट्टेत्वा पण्णसालं कत्वा छादेत्वा भित्तियो मत्तिकाय लिम्पित्वा द्वारं योजेत्वा कट्ठत्थरणं कत्वा—"करिस्सति नु खो परिभोगं, न करिस्सती" ति एकमन्तं[२]
10 निसीदि। थेरो अन्तोगामतो आगन्त्वा पण्णसालं पविसित्वा कट्ठत्थरणे[३] निसीदि। उपासकोपि आगन्त्वा वन्दित्वा समीपे निसिन्नो "फासुका, भन्ते, पण्णसाला" ति पुच्छि। फासुका, भद्दमुख, पब्बजितसारुप्पा ति। वसिस्सथ, भन्ते, इधा ति? आम, उपासका ति। सो अधिवासना-कारेन वसिस्सती ति ञत्वा निबद्धं मय्हं घरद्वारं आगन्तब्बं ति
15 पटिजानापेत्वा—"एकं, मे भन्ते, वरं देथा" ति आह। अतिक्कन्तवरा, उपासक, पब्बजिता ति। भन्ते, यञ्च कप्पति, यञ्च अनवज्जं ति। वदेहि उपासका ति। भन्ते, निबद्धवसनट्ठाने नाम मनुस्सा मङ्गले वा अमङ्गले वा आगमनं इच्छन्ति, अनागच्छन्तस्स कुज्झन्ति। तस्मा अञ्ञं निमन्तितट्ठानं गन्त्वापि मय्हं घरं पविसित्वाव भत्तकिच्चं
20 निट्ठापेतब्बं ति। थेरो अधिवासेसि।

सो पण्णसालाय कटसाटकं पत्थरित्वा मञ्चपीठं पञ्ञपेसि, अपस्सेनं निक्खिपि, पादकथलिकं ठपेसि, पोक्खरणिं खणि, चङ्कमं कत्वा वालिकं ओकिरि, मिगे आगन्त्वा भित्तिं घंसित्वा मत्तिकं पातेन्ते दिस्वा कण्टकवतिं परिक्खिपि। पोक्खरणिं ओतरित्वा उदकं आलुलिकं[४] करोन्ते[४]

१. इध मया—सी०। २. एकमन्ते—सी०।
३. कट्ठथरके—सी०; कट्ठत्थरे—स्या०। ४-४. आलुलिन्ते—सी०, रो०।

दिस्वा अन्तो पासाणेहि चिनित्वा बहि कण्टकवतिं परिक्खि-
पित्वा अन्तोवतिपरियन्ते तालपन्तियो रोपेति । महाचङ्कमे सम्मट्ठट्ठानं
आळ्‌लेन्ते दिस्वा चङ्कमम्पि वतिया परिक्खिपित्वा अन्तोवतिपरियन्ते
तालपन्तिं रोपेसि । एवं आवासं निट्ठपेत्वा थेरस्स तिचीवरं, पिण्डपातं, R. 632
ओसधं, परिभोगभाजनं, आरकण्टकं, पिप्फलिकं, नखच्छेदनं, सूचिं, 5
कत्तरयट्ठिं, उपाहनं, उदकतुम्बं, छत्तं, दीपकपल्लकं, मलहरणिं,
परिस्सावनं, धमकरणं, पत्तं, थालकं, यं वा पनञ्ञम्पि पब्बजितानं
परिभोगजातं, सब्बं अदासि । थेरस्स बोधिसत्तेन अदिन्नपरिक्खारो
नाम नाहोसि । सो सीलानि रक्खन्तो उपोसथं करोन्तो यावजीवं B. 225
थेरं उपट्ठहि । थेरो तत्थेव वसन्तो अरहत्तं पत्वा परिनिब्बायि । 10

बोधिसत्तोपि यावतायुकं पुञ्ञं कत्वा देवलोके निब्बत्तित्वा ततो
चुतो मनुस्सलोकं आगच्छन्तो कुसावतिया राजधानिया निब्बत्तित्वा
महासुदस्सनो राजा अहोसि ।

"एवं नातिमहन्तम्पि, पुञ्ञं आयतने[1] कतं ।
महाविपाकं होती ति, कत्तब्बं तं विभाविना" ॥ 15

२१. **महावियूहं** (दी० नि० २.१४१) ति रजतमयं
महाकूटागारं । तत्थ वसितुकामो हुत्वा अगमासि । **एत्तावता
कामवितक्का** ति कामवितक्कतया एत्तावता निवत्तितब्बं, **एत्तावता
कामवितक्का** ति कामवितक्कतया एत्तावता निवत्तितब्बं, इतो परं
तुय्हं अभूमि, इदं **झानागारं** नाम, नयिदं तया सद्धिं वसनट्ठानं ति 20
एवं तयो वितक्के कूटागारद्वारेयेव निवत्तेसि[2] ।

पठमज्झानं ति आदीसु विसुं कसिणपरिकम्मकिच्चं नाम
नत्थि । नीलकसिणेन अत्थे सति नीलमणिं पीतकसिणेन अत्थे सति
सुवण्णं, लोहितकसिणेन अत्थे सति रत्तमणिं, ओदातकसिणेन अत्थे
सति रजतं ति ओलोकितओलोकितट्ठाने कसिणमेव पञ्ञायति । 25

१. ते सासने—स्या० । २. विक्खम्भेसि—स्या० ।

२२. **मेत्तासहगतेना** ति आदीसु यं वतब्बं, तं सब्बम्पि विसुद्धिमग्गे वुत्तमेव। इति पाळियं चत्तारि झानानि, चत्तारि अप्पमञ्ञानेव वुत्तानि। महापुरिसो पन सब्बापि अट्ठ समापत्तियो, पञ्च अभिञ्ञायो च निब्बत्तेत्वा अनुलोमपटिलोमादिवसेन चुद्दसहाकारेहि समापत्तियो
5 पविसन्तो मधुपटलं पविट्ठभमरो मधुरसेन विय समापत्तिसुखेनेव यापेति।

१३. चतुरासीतिनगरसहस्सादिवण्णना

२३. **कुसावतीराजधानिप्पमुखानी** ति कुसावती राजधानी तेसं
R. 633 नगरानं पमुखा सब्बसेट्ठा ति अत्थो। **भत्ताभिहारो** ति अभिहरितब्बभत्तं।

B. 226 10 **वस्ससतस्स वस्ससतस्सा** ति कस्मा एवं चिन्तेसि? तेसं सद्देन उक्कण्ठित्वा, "समापन्नस्स सद्दो कण्टको" (अं नि० ४.२०७) ति हि वुत्तं। तस्मा सद्देन उक्कण्ठितो महापुरिसो। अथ कस्मा मा आगच्छन्तू ति न वदति? इदानि राजा न पस्सती ति निबद्धवत्तं न लभिस्सन्ति, तं तेसं मा उप्पज्जिथा ति न वदति।

१४. सुभद्दादेविउपसङ्कमनवण्णना

15 २५. **एतदहोसी** (दी० नि० २.१४४) ति कदा एतं अहोसि। रञ्ञो कालङ्किरियदिवसे। तदा किर देवता[1] चिन्तेसुं—"राजा अनाथकालङ्किरियं मा करोतु, ओरोधेहि बहूहि[2] धीतूहि पुत्तेहि परिवारितोव करोतू"[3] ति। अथ देविं आवट्टेत्वा तस्सा एवं चित्तं उप्पादेसुं। **पीतानि वत्थानी** ति तानि किर पकतिया रञ्ञो
20 मनापानि, तस्मा तानि पारुपथा ति आह। **एत्थेव देवि तिट्ठा** ति देवि इमं झानागारं नाम तुम्हेहि सद्धिं वसनट्ठानं न होति, झानरतिविन्दनट्ठानं मम, मा इध पाविसी ति।

१. बहूहि देवता—सी०। २. सी० पोत्थके नत्थि।
३. कालंकरोतू ति—सी०, रो०।

२६. एतदहोसी (दी० नि० २.१४५) ति लोके सत्ता नाम मरणासन्नकाले अतिविय विरोचन्ति, तेनस्स रञ्ञो विप्पसन्नइन्द्रियभावं दिस्वा एवं अहोसि। ततो मा रञ्ञो कालङ्कीरिया अहोसी ति तस्स कालङ्किरियं अनिच्छमाना सम्पति गुणमस्स कथयित्वा तिट्ठमानाकारं[1] करिस्सामी ति चिन्तेत्वा इमानि ते देवा तिआदिमाह। तत्थ छन्दं जनेही ति पेमं उप्पादेहि, रतिं[2] करोहि। जीविते अपेक्खं ति जीविते सापेक्खं[3], आलयं, तण्हं करोही ति अत्थो। 5

एवं खो मं त्वं देवी ति "मयं, खो देव, इत्थियो नाम पब्बजितानं उपचारकथं न जानाम, कथं वदाम[4] महाराजा" ति राजानं "पब्बजितो अयं" ति मञ्ञमानाय देविया वुत्ते—"एवं खो मं, त्वं देवि, समुदाचराही" तिआदिमाह। गरहिता ति बुद्धेहि पच्चेकबुद्धेहि सावकेहि अञ्ञेहि च पण्डितेहि[5] बहुस्सुतेहि गरहिता। किं कारणा? सापेक्खकालकिरिया हि अत्तनोयेव गेहे यक्खकुक्कुरअगोणमहिंसमूसिककुक्कुटऊकामङ्गुलादिभावेन[6] निब्बत्तनकारणं होति। 10

अथ खो आनन्द सुभद्दा देवी अस्सूनि पुञ्छित्वा ति देवी एकमन्तं गन्त्वा रोदित्वा कन्दित्वा अस्सूनि पुञ्छित्वा[7] एतदवोच। 15 B. 227

१५. ब्रह्मलोकूपगमवण्णना

२९. गहपतिस्स वा (दी० नि० २.१४८) ति कस्मा आह? तेसं किर सोणसेट्ठिपुत्तादीनं विय महती सम्पत्ति होति। सोणस्स किर सेट्ठिपुत्तस्स एका भत्तपाति द्वे सतसहस्सानि अग्घति। इति तेसं तादिसं भत्तं भुत्तानं मुहुत्तं भत्तसम्मदो भत्तमुच्छा भत्तकिलमथो होति। R. 634 20

यं तेन समयेन अज्झावसामी ति यत्थ वसामि, तं एकंयेव नगरं होति, अवसेसेसु पुत्तधीतादयो चेव दासमनुस्सा च वसिंसु।

१. तिट्ठनकारं—सी०, रो०। २. पीतिं—स्या०।
३. सी०, स्या० पोत्थकेसु नत्थि। ४. वदामि—सी०।
५. पब्बजितेहि—स्या०। ६. ० कुक्कुटऊका० सी० पोत्थके नत्थि।
७. पमज्जित्वा—सी०।

पासादकूटागारेसु पि एसेव नयो। पल्लङ्कादीसु पि एकंयेव पल्लङ्कं[1] परिभुञ्जति, सेसा पुत्तादीनं[2] परिभोगा होन्ति। इत्थीसुपि एकाव पच्चुपट्ठाति, सेसा परिवारमत्ता होन्ति। परिदहामी ति एकमेव दुस्सयुगं निवासेमि, सेसानि परिवारेत्वा विचरन्तानं असीतिसहस्साधिकानं
5 सोळसन्नं पुरिससतसहस्सानं होन्ति। भुञ्जामी ति परमप्पमाणेन नाळिकोदनमत्तं भुञ्जामि, सेसं परिवारेत्वा विचरन्तानं चत्तालीससहस्साधिकानं अट्ठन्नं पुरिससतसहस्सानं होती ति दस्सेति। एकथालिपाको हि दसन्नं जनानं पहोति।

एतानि पन[3] चतुरासीति नगरसहस्सानि चेव पासादसहस्सानि
10 च कूटागारसहस्सानि च एकिस्सायेव पण्णसालाय निस्सन्देन निब्बत्तानि। चतुरासीति पल्लङ्कसहस्सानि निपज्जनत्थाय दिन्नमञ्चकस्स निस्सन्देन निब्बत्तानि। चतुरासीति हत्थिसहस्सानि अस्ससहस्सानि रथसहस्सानि निसीदनत्थाय दिन्नपीठस्स निस्सन्देन निब्बत्तानि।

15 चतुरासीति मणिसहस्सानि एकदीपस्स निस्सन्देन निब्बत्तानि। चतुरासीति पोक्खरणीसहस्सानि एकपोक्खरणिया निस्सन्देन निब्बत्तानि। चतुरासीति इत्थिसहस्सानि पुत्तसहस्सानि गहपतिसहस्सानि परिभोगभाजनपत्तथालक-धमकरण-परिस्सावन-आरकण्टक-पिप्फलक-नखच्छेदन-कुञ्चिककण्णमलहरणी-पादकथलिक - उपाहन - छत्त-
20 कत्तरयट्ठिदानस्स निस्सन्देन निब्बत्तानि। चतुरासीति धेनुसहस्सानि गोरसदानस्स निस्सन्देन निब्बत्तानि। चतुरासीति वत्थकोटिसहस्सानि
B. 228 निवासनपारुपनदानस्स निस्सन्देन निब्बत्तानि। चतुरासीति थालिपाकसहस्सानि भोजनदानस्स निस्सन्देन निब्बत्तानि वेदितब्बानि।

३२. एवं भगवा महासुदस्सनस्स सम्पत्तिं आदितो पट्ठाय वित्थारेन
R. 635 25 कथेत्वा सब्बं तं दारकानं[4] पंस्वागारमीळ्हनं विय दस्सेन्तो

---

१. ० सयं—सी०। २. पुत्तधीतादीनं—सी०।
३. किर—स्या०, रो०। ४. कुमारकानं—सी०, स्या०।

परिनिब्बानमञ्चके निपन्नोव पस्सानन्दा तिआदिमाह। तत्थ **विपरिणता** ति पकतिविजहनेन निब्बुतपदीपो विय अपण्णत्तिकभावं गता। **एवं अनिच्चा खो आनन्द सङ्खारा** (दी० नि० २.१५०) ति एवं हुत्वा अभावट्ठेन अनिच्चा।

एत्तावता भगवा यथा नाम पुरिसो सतहत्थुब्बेधे चम्पकरुक्खे निस्सेणिं बन्धित्वा अभिरूहित्वा चम्पकपुप्फं आदाय निस्सेणिं मुञ्चन्तो ओतरेय्य, एवमेव निस्सेणिं बन्धन्तो विय अनेकवस्सकोटिसतसहस्सुब्बेधं महासुदस्सनसम्पत्तिं आरूय्ह सम्पत्तिमत्थके ठितं अनिच्चलक्खणं आदाय निस्सेणिं मुञ्चन्तो विय ओतिण्णो। तेनेव पुब्बे वसभराजा दीघभणकत्थेरानं लोहपासादस्स पाचीनपस्से अम्बलट्ठिकायं इमं सुत्तं सज्झायन्तानं सुत्वा—"किं भो, मय्हं अय्यकेन एत्थ वुत्तं, अत्तनो खादितपीतट्ठाने सम्पत्तिमेव कथेती" ति चिन्तेन्तो—"एवं अनिच्चा खो आनन्द, सङ्खारा" ति वुत्तकाले "इमं भो, दिस्वा पञ्चहि चक्खूहि चक्खुमता एवं वुत्तं" ति वामहत्थं समिञ्जित्वा दक्खिणहत्थेन अप्फोटेत्वा—"साधु साधु" ति तुट्ठहदयो साधुकारं अदासि।

एवं अद्धुवा ति एवं उदकपुप्फुळादयो[1] विय धुवभावविरहिता। **एवं अनस्सासिका** ति एवं सुपिनके पीतपानीयं विय अनुलित्तचन्दनं विय च अस्सासविरहिता।

सरीरं निक्खिपेय्या ति सरीरं छड्डेय्य। इदानि अञ्ञस्स सरीरस्स निक्खेपो वा पटिजग्गनं वा नत्थि किलेसपहीनत्ता[2], आनन्द, तथागतस्सा ति वदति। इदं पन वत्वा पुन थेरं आमन्तेसि। चक्कवत्तिनो अनुभावो नाम रञ्ञो पब्बजितस्स सत्तमे दिवसे अन्तरधायति। महासुदस्सनस्स पन कालङ्किरियतो सत्तमेव दिवसे सत्तरतनपाकारा सत्तरतनताला चतुरासीति पोक्खरणीसहस्सानि धम्मपासादो धम्मपोक्खरणी चक्करतनं ति सब्बमेतं अन्तरधायो ति। हत्थिआदीसु पन अयं धम्मता खीणायुका सहेव कालं करोन्ति। आयुसेसे सति हत्थिरतनं उपोसथकुलं गच्छति,

१. उदकबुब्बुलादयो—सी०, स्या०, रो०। २. स्या० पोत्थके नत्थि।

R. 636 अस्सरतनं वलाहककुलं, मणिरतनं वेपुल्लपब्बतमेव गच्छति । इत्थि-रतनस्स आनुभावो अन्तरधायति । गहपतिरतनस्स चक्खु पाकतिकमेव होति । परिणायकरतनस्स वेय्यत्तियं[1] नस्सति ।

इदमवोच भगवा ति इदं पाळियं आरुळ्हञ्च अनारुळ्हञ्च सब्बं 5 भगवा अवोच । सेसं उत्तानत्थमेवा ति ।

इति सुमङ्गलविलासिनिया दीघनिकायट्ठकथायं
महासुदस्सनसुत्तवण्णना निट्ठिता ।

—०—

१ वेय्यत्तिकं—स्या० ।

(५) जनवसभसुत्तवण्णना

१. नातीकियादिब्याकरणवण्णना

१. एवं मे सुतं ति जनवसभसुत्तं। तत्रायं अनुत्तानपदवण्णना। B. 230 R. 637 **परितो परितो जनपदेसू** (दी० नि० २.१५१) ति समन्ता समन्ता जनपदेसु। **परिचारके** ति बुद्धधम्मसंघानं परिचारके। **उपपत्तीसू** ति ञाणगतिपुञ्ञानं उपपत्तीसु। **कासिकोसलेसू** ति कासीसु च कोसलेसु च, कासिरट्ठे च कोसलरट्ठे चा ति अत्थो। एस नयो सब्बत्थ। अङ्ग- 5 मगधयोनककम्बोजअस्सकअवन्तिरट्ठेसु पन ञसु न ब्याकरोति। इमेसं पन सोळसन्नं महाजनपदानं पुरिमेसु दससुयेव ब्याकरोति। **नातिकिया** ति नातिकगामवासिनो[1]।

तेना ति तेन अनागामिआदिभावेन। **सुत्वा** ति सब्बञ्ञुतञ्ञाणेन परिच्छिन्दित्वा ब्याकरोन्तस्स भगवतो पञ्हाब्याकरणं सुत्वा तेसं 10 अनागामिआदीसु निट्ठङ्गता हुत्वा। तेन अनागामिआदिभावेन अत्तमना अहेसुं। अट्ठकथायं पन **तेना** ति ते नातिकिया ति वुत्तं। एतस्मिं अत्थे नकारो निपातमत्तं होति।

२. आनन्दपरिकथावण्णना

४. **भगवन्तं कित्तयमानरूपो** (दी० नि० २.१५२) ति अहो बुद्धो, अहो धम्मो, अहो संघो; अहो धम्मो स्वाक्खातो ति एवं 15 कित्तयन्तोव कालमकासि। **बहुजनो पसीदेय्या** ति अम्हाकं पिता माता भाता भगिनी पुत्तो धीता सहायको, तेन[2] अम्हेहि[2] सद्धिं एकतो भुत्ता, एकतो सयिता, तस्स इदञ्चिदञ्च मनापं अकरिम्ह, सो किर अनागामी सकदागामी सोतापन्नो, अहो साधु, अहो सुट्ठु ति एवं बहुजनो पसादं आपज्जेय्य। 20

१. नादिक ०—सी०। २-२. तेनम्हा—सी०; तेन अम्हाकं—रो०।

गतिं ति ञाणगतिं। अभिसम्परायं ति ञाणाभिसम्परायमेव। अद्दसा खो ति कित्तके जने अद्दस ? चतुवीसतिसतसहस्सानि।

B. 231 R. 638 उपसन्त पदिस्सो ति उपसन्तदस्सनो। भातिरिवा ति अतिविय भाति, अतिविय विरोचति। इन्द्रियानं ति मनच्छट्ठानं इन्द्रियानं।
5 अद्दसं खो अहं आनन्दा ति नेव दस, न वीसति, न सतं, न सहस्सं, अनूनाधिकानि चतुवीसतिसतसहस्सानि अद्दसं ति आह।

३. जनवसभयक्खवण्णना

६. दिस्वा पन मे एत्तको जनो मं निस्साय दुक्खा पमुत्तो ति बलवसोमनस्सं उप्पज्जि, चित्तं पसीदि, चित्तस्स पसन्नत्ता चित्तसमुट्ठानं लोहितं पसीदि, लोहितस्स पसन्नत्ता मनच्छट्ठानि इन्द्रियानि पसीदिंसु ति
10 सब्बमिदं वत्वा अथ खो आनन्दा तिआदिमाह। तत्थ यस्मा सो भगवतो धम्मकथं सुत्वा दससहस्साधिकस्स जनसतसहस्सस्स जेट्ठको हुत्वा सोतापन्नो जातो, तस्मा जनवसभो ति अस्स नामं अहोसि।

इतो सत्ता (दी० नि० २.१५५) ति इतो देवलोका चवित्वा सत्त। ततो सत्ता ति ततो मनुस्सलोका चवित्वा सत्त। संसारानि
15 चतुद्दसा ति सब्बापि चतुद्दसखन्धपटिपाटियो। निवासमभिजानामी ति जातिवसेन निसासं जानामि। यत्थ मे वुसितं पुरे ति यत्थ देवेसु च वेस्सवणस्स सहब्यतं उपगतेन मनुस्सेसु च राजभूतेन इतो अत्तभावतो पुरेयेव मया वुसितं। पुरे एवं वुसितत्ता एव च इदानि सोतापन्नो हुत्वा तीसु वत्थूसु बहुं पुञ्ञं कत्वा तस्सानुभावेन उपरि निब्बत्तितुं
20 समत्थो पि दीघरत्तं वुसितट्ठाने निकन्तिया बलवताय एत्थेव निब्बत्तो।

९. आसा च पन मे सन्तिट्ठती ति इमिनाहं सोतापन्नो ति न सुत्तप्पमत्तोव हुत्वा कालं वीतिनामेसिं। सकदागामिमग्गत्थाय पन मे विपस्सना आरद्धा। अज्जेव अज्जेव पटिविज्झिस्सामी ति एवं
25 सउस्साहो विहरामी ति दस्सेति। यदग्गे ति लट्ठिवनुय्याने पठमदस्सने सोतापन्नदिवसं सन्धाय वदति। तदग्गे अहं, भन्ते, दीघरत्तं अविनिपातो अविनिपातं सञ्जानामी ति तंदिवसं आदिं कत्वा, अहं,

भन्ते, पुरिमं चतुद्दसअत्तभावसङ्खातं दीघरत्तं अविनिपातो लद्दिवनुय्याने सोतापत्तिमग्गवसेन अधिगतं अविनिपातधम्मतं सञ्जानामी ति अत्थो ।

अनच्छरियं ति अनुअच्छरियं । चिन्तयमानं पुनप्पुनं अच्छरियमेविदं यं केनचिदेव करणीयेन गच्छन्तो भगवन्तं अन्तरमग्गे अद्दसं । इदम्पि अच्छरियं यञ्च वेस्सवणस्स महाराजस्स सयंपरिसाय[1] भासतो भगवतो दिट्ठसदिसमेव सम्मुखा सुतं । द्वे पच्चया ति अन्तरामग्गे दिट्ठभावो च वेस्सवणस्स सम्मुखा सुत्तं आरोचेतुकामता च । B. 232 5 R. 639

४. सुधम्मसभावण्णना

१०. सन्निपतिता (दी० नि० २.१५६) ति कस्मा सन्निपतिता ? ते किर चतूहि कारणेहि सन्निपतन्ति—वस्सूपनायिकसङ्गहत्थं, पवारणासङ्गहत्थं, धम्मसवनत्थं, पारिच्छत्तककीळानुभवनत्थं ति । तत्थ स्वे वस्सूपनायिका ति आसाळ्हीपुण्णमाय द्वीसु देवलोकेसु देवा सुधम्माय देवसभाय सन्निपतित्वा मन्तेन्ति असुकविहारे एको भिक्खु वस्सूपगतो, असुकविहारे द्वे, तयो, चत्तारो, पञ्च, दस, वीसति, तिंसं, चत्तालीसं, पञ्ञासं, सतं, सहस्सं भिक्खू वस्सूपगता । एत्थेत्थ ठाने अय्यानं आरक्खं सुसंविहितं करोथा ति एवं वस्सूपनायिकसङ्गहो कतो होति । 10 15

तदापि एतेनेव कारणेन सन्निपतिता । इदं तेसं होति आसनस्मि ति इदं तेसं चतुन्नं महाराजानं आसनं होति । एवं तेसु निसिन्नेसु अथ पच्छा अम्हाकं आसनं होति ।

येनत्थेना ति येन वस्सूपनायिकत्थेन । तं अत्थं चिन्तयित्वा तं अत्थं मन्तयित्वा ति तं अरञ्ञवासिनो भिक्खुसंघस्स आरक्खत्थं[2] चिन्तयित्वा । एत्थेत्थ वुट्ठभिक्खुसंघस्स[3] आरक्खं संविदहथा ति चतूहि महाराजेहि सद्धिं मन्तेत्वा । वुत्तवचनापि तं ति तेत्तिंस देवपुत्ता वदन्ति, महाराजानो वुत्तवचना नाम । तथा तेत्तिंस देवपुत्ता 20

१. सायं परिसायं—सी०, रो०; तस्सं परिसायं—स्या० ।
२. आरक्खतं—सी०; आरक्खं—स्या०, रो० ।
३. सी० पोत्थके नत्थि ।

पच्चानुसासन्ति, इतरे **पच्चानुसिट्ठवचना** नाम। पदद्वयेपि पन तं ति निपातमत्तमेव। **अविपक्कन्ता** ति अगता।

११. **उळारो** (दी० नि० २.१५७) ति विपुलो महा। **देवानुभावं** ति या सा सब्बदेवतानं वत्थालङ्कारविमानसरीरानं पभा
5 द्वादस योजनानि फरति। महापुञ्ञानं पन सरीरप्पभा योजनसतं फरति, तं देवानुभावं[1] अतिक्कमित्वा।

B. 233 **ब्रह्मुनो हेतं पुब्बनिमित्तं** ति यथा सूरियस्स उदयतो एतं पुब्बङ्गमं एतं पुब्बनिमित्तं यदिदं अरुणुग्गं, एवमेव ब्रह्मुनोपि एतं—"पुब्बनिमित्तं" ति दीपेति।

५. सनङ्कुमारकथावण्णना

R. 640 10 १४. **अनभिसम्भवनीयो**[2] (दी० नि० २.१५७) ति अपत्तब्बो, न तं देवा तावतिंसा पस्सन्ती ति अत्थो। **चक्खुपथस्मिं** ति चक्खुपसादे आपाथे वा। सो देवानं चक्खुस्स आपाथे सम्भवनीयो पत्तब्बो न होति, न अभिभवती वुत्तं होति। हेट्ठा हेट्ठा हि देवता उपरूपरि देवानं ओळारिकं कत्वा मापितमेव अत्तभावं पस्सितुं
15 सक्कोन्ति। **वेदपटिलाभं** ति तुट्ठिपटिलाभं। **अधुनाभिसित्तो रज्जेना** (दी० नि० २.१५८) ति सम्पति अभिसित्तो रज्जेन। अयं पनत्थो दुट्ठगामणिअभयवत्थुना दीपेतब्बो।

सो किर द्वत्तिंस दमिळराजानो विजित्वा अनुराधपुरे पत्ताभिसेको तुट्ठसोमनस्सेन[3] मासं निद्दं लभि। ततो—"निद्दं न लभामि, भन्ते," ति
20 भिक्खुसंघस्स आचिक्खि। तेन हि, महाराज, अज्ज[4] उपोसथं अधिट्ठाही ति। सो च उपोसथं अधिट्ठासि। संघो गन्त्वा—"चित्तयमकं सज्झायथा" ति अट्ठ आभिधम्मिकभिक्खू पेसेसि। ते गन्त्वा—"निपज्ज, त्वं महाराजा," ति वत्वा सज्झायं आरभिंसु। राजा सज्झायं सुणन्तोव निद्दं ओक्कमि।

१. देवानं देवानुभावं—सी०। २. आविभवती ति—सी०।
३. लद्धसोमनस्सेन—सी०; तुट्ठिसोमनस्सेन—स्या०। ४. ० पातोव—सी०।

थेरा[1]—राजानं मा पबोधयित्था ति पक्कमिंसु। राजा दुतियदिवसे सूरियुग्गमने पबुज्झित्वा थेरे अपस्सन्तो—"कुहिं अय्या" ति पुच्छि। तुम्हाकं निद्दोक्कमनभावं ञत्वा गता ति। नत्थि, भो, मय्हं अय्यकस्स[2] दारकानं अजाननकभेसज्जं नाम, याव निद्दाभेसज्जम्पि जानन्तियेवा ति आह। 5

पञ्चसिखो ति पञ्चसिखगन्धब्बसदिसो हुत्वा। पञ्चसिखगन्धब्बदेवपुत्तस्स किर सब्बदेवता अत्तभावं ममयन्ति। तस्मा ब्रह्मापि तादिसंयेव अत्तभावं निम्मिनित्वा पातुरहोसि। **पल्लङ्केन निसीदी** ति पल्लङ्कं आभुजित्वा निसीदि।

१३. **विस्सट्ठो** (दी० नि० २.१५९) ति सुमुत्तो अपलिबुद्धो। 10 **विञ्ञेय्यो** ति अत्थविञ्ञापनो। **मञ्जू** ति मधुरो मुदु। **सवनीयो** ति सोतब्बयुत्तको कण्णसुखो। **बिन्दू** ति एकग्घनो। **अविसारी** ति सुविसदो[3] अविप्पकिण्णो। **गम्भीरो** ति नाभिमूलतो पट्ठाय गम्भीरसमुट्ठितो, न जिव्हादन्तओट्ठतालुमत्तप्पहारसमुट्ठितो। एवं समुट्ठितो हि अमधुरो च होति, न च दूरं सावेति। **निन्नादी** ति महामेघ- 15 R. 641 मुदिङ्गसद्दो[4] विय निन्नादयुत्तो। अपिचेत्थ पच्छिमं पच्छिमं पदं पुरिमस्स पुरिमस्स अत्थोयेवा ति वेदितब्बो। **यथापरिसं** ति यत्तका परिसा, तत्तकमेव विञ्ञापेति। अन्तो परिसायं येवस्स सद्दो सम्परिवत्तति, न बहिद्धा विधावति। **ये हि केची** ति आदि बहुजनहिताय पटिपन्नभावदस्सनत्थं वदति। **सरणं गता** ति न यथा वा तथा वा 20 सरणं गते सन्धाय वदति। निब्बेमतिकगहितसरणे पन सन्धाय वदति।

B. 234

१४. **गन्धब्बकायं परिपूरेन्ती** ति गन्धब्बदेवगणं परिपूरेन्ति। इति अम्हाकं सत्थु लोके उप्पन्नकालतो पट्ठाय च देवलोकादीसु पिट्ठं कोट्टेत्वा पूरितनाळि विय सरवननळवनं विय च निरन्तरं जातपरिसा ति आह।

१. ते—सी०।
२. अय्यस्स—सी०।
३. अविसदो—सी०।
४. ० मुतिङ्ग०—सी०; महामेघगज्जित—स्या०।

६. भावितइद्धिपादवण्णना

१९. **यावसुपञ्ञत्ता चिमे तेन भगवता** (दी० नि० २.१९०) ति तेन मय्हं सत्थारा भगवता याव सुपञ्ञत्ता याव[1] सुकथिता। **इद्धिपादा** ति एत्थ इज्झनट्ठेन इद्धि, पतिट्ठानट्ठेन पादा ति वेदितब्बा। **इद्धि-पहुताया** ति इद्धिपहोनकताय[2]। **इद्धिविसविताया** ति इद्धिविपज्जन-
5 भावाय,[3] पुनप्पुनं आसेवनवसेन चिण्णवसिताया ति वुत्तं होति। **इद्धि-विकुब्बनताया** ति इद्धिविकुब्बनभावाय, नानप्पकारतो कत्वा[4] दस्सनत्थाय। **छन्दसमाधिप्पधानसङ्खारसमन्नागतं** ति आदीसु छन्दहेतुको छन्दाधिको[5] वा समाधिछन्दसमाधि। कत्तुकम्यताछन्दं अधिपतिं करित्वा पटिलद्धसमाधिस्सेतं अधिवचनं। पधानभूता सङ्खारा पधानसङ्खारा।
10 चतुकिच्चसाधकस्स सम्मप्पधानवीरियस्सेतं अधिवचनं। **समन्नागतं** ति छन्दसमाधिना च पधानसङ्खारेन[6] च उपेतं। **इद्धिपादं** ति निप्फत्ति-परियायेन इज्झनट्ठेन वा, इज्झन्ति एताय सत्ता इद्धा वुद्धा उक्कंसगता होन्ती ति इमिना वा परियायेन **इद्धी** ति सङ्ख्यं गतानं अभिञ्ञा-चित्तसम्पयुत्तानं छन्दसमाधिपधानसङ्खारानं अधिट्ठानट्ठेन पादभूतो सेस-
15 चित्तचेतसिकरासी ति अत्थो। वुत्तञ्हेतं—इद्धिपादो ति तथाभूतस्स वेदनाक्खन्धो...पे०...विञ्ञाणक्खन्धो" (विभं० २६५) ति। इमिना नयेन सेसेसुपि अत्थो वेदितब्बो। यथेव हि छन्दं अधिपतिं करित्वा पटिलद्धसमाधि छन्दसमाधी ति वुत्तो, एवं वीरियं, चित्तं, वीमंसं अधिपतिं करित्वा पटिलद्धसमाधि वीमंसासमाधी ति वुच्चति। अपिच
20 उपचारज्झानं पादो, पठमज्झानं इद्धि। सउपचारं पठमज्झानं पादो, दुतियज्झानं इद्धी ति एवं पुब्बभागे पादो, अपरभागे इद्धी ति एवमेत्थ अत्थो वेदितब्बो। वित्थारेन इद्धिपादकथा **विसुद्धिमग्गे च विभङ्गट्ठ-कथाय च** वुत्ता।

B. 235 R. 642

१. सी०, स्या० पोत्थकेसु नत्थि।
२. ० पहोनकत्थाय—सी०, रो०।
३. इद्धिविसवनसभावाय—सी०; इद्धिविसेसभावाय—स्या०।
४. सी० पोत्थके नत्थि।
५. वा छन्दाधिपतिको वा—सी०।
६. ० सङ्खारेहि—सी०, स्या०।

केचि पन "निप्फन्ना इद्धि, अनिप्फन्नो इद्धिपादो" ति वदन्ति। तेसं वादमद्दनत्थाय अभिधम्मे उत्तरचूळिकवारो नाम आभतो—"चत्तारो इद्धिपादा-छन्दिद्धिपादो, वीरियिद्धिपादो, चित्तिद्धिपादो, वीमंसिद्धिपादो। तत्थ कतमो छन्दिद्धिपादो? इध भिक्खु यस्मिं समये लोकुत्तरं झानं भावेति निय्यानिकं अपचयगामिं दिट्ठिगतानं पहानाय 5 पठमाय भूमिया पत्तिया विविच्चेव कामेहि पठमं झानं उपसम्पज्ज विहरति दुक्खापटिपदं दन्धाभिञ्ञं। यो तस्मिं समये छन्दो छन्दिकता कत्तुकम्यता कुसलो धम्मच्छन्दो, अयं वुच्चति छन्दिद्धिपादो, अवसेसा धम्मा छन्दिद्धिपादसम्पयुत्ता" (विभं० २७२) ति। इमे पन लोकुत्तर-वसेनेव आगता। तत्थ रट्ठपालत्थेरो छन्दं धुरं कत्वा लोकुत्तरं धम्मं 10 निब्बत्तेसि। सोणत्थेरो वीरियं धुरं कत्वा, सम्भूतत्थेरो चित्तं धुरं कत्वा, आयस्मा[1] मोघराजा वीमंसं धुरं कत्वा ति।

तत्थ यथा चतूसु अमच्चपुत्तेसु ठानन्तरं पत्थेत्वा राजानं उप-निस्साय विहरन्तेसु एको उपट्ठाने छन्दजातो रञ्ञो अज्झासयञ्च रुचिञ्च ञत्वा दिवा च रत्तो च उपट्ठहन्तो राजानं आराधेत्वा ठानन्तरं पापुणि। 15 यथा सो, एवं छन्दधुरेन लोकुत्तरधम्मनिब्बत्तको वेदितब्बो।

एको पन—"दिवसे दिवसे उपट्ठातुं को सक्कोति, उप्पन्ने किच्चे परक्कमेन आराधेस्सामी" ति कुपिते पच्चन्ते रञ्ञा पहितो परक्कमेन सत्तुमद्दनं कत्वा ठानन्तरं पापुणि। यथा सो, एवं वीरियधुरेन लोकुत्तरधम्मनिब्बत्तको वेदितब्बो। 20

एको—"दिवसे दिवसे उपठानम्पि उरेन सत्तिसरपटिच्छन्नम्पि B. 236 भारोयेव, मन्तबलेन[2] आराधेस्सामी" ति सत्तविज्जाय कतपरिचयत्ता R. 643 मन्तसंविधानेन राजानं आराधेत्वा ठानन्तरं पापुणाति[3]। यथा सो, एवं चित्तधुरेन लोकुत्तरधम्मनिब्बत्तको वेदितब्बो।

१. सी० पोत्थके नत्थि। २. ० वसेन–स्या०।
३. पापुणि—सी०, स्या०।

अपरो—"किं इमेहि उपट्ठानादीहि, राजानो नाम जातिसम्पन्नस्स ठानन्तरं देन्ति, तादिसस्स देन्तो मय्हं दस्सती" ति जातिसम्पत्तिमेव निस्साय ठानन्तरं पापुणि। यथा सो, एवं सुपरिसुद्धं वीमंसं निस्साय वीमंसधुरेन लोकुत्तरधम्मनिब्बत्तको वेदितब्बो।

5 अनेकविहितं ति अनेकविधं। **इद्धिविधं** ति इद्धिकोट्ठासं।

७. तिविधओकासाधिगमवण्णना

१७. **सुखस्स अधिगमाया** (दी० नि० २.१६०) ति झानसुखस्स मग्गसुखस्स फलसुखस्स च अधिगमाय। **संसट्ठो** ति सम्पयुत्तचित्तो। **अरियधम्मं** ति अरियेन भगवता बुद्धेन देसितं धम्मं। **सुणाती** ति सत्थु सम्मुखा भिक्खुभिक्खुनीआदीहि वा देसियमानं सुणाति। **योनिसो** 10 **मनसिकरोती** ति उपायतो पथतो कारणतो 'अनिच्चं' ति आदिवसेन मनसि करोति। योनिसो **मनसिकारो** नाम उपायमनसिकारो पथमनसिकारो, अनिच्चे अनिच्चं ति दुक्खे दुक्खं ति अनत्तनि अनत्ता ति असुभे असुभं सच्चानुलोमिकेन वा चित्तस्स आवट्टना अन्वावट्टना आभोगो समन्नाहारो मनसिकारो, अयं वुच्चति योनिसोमनसिकारो'' 15 ति। एवं वुत्ते योनिसोमनसिकारे कम्मं आरभती ति अत्थो। **असंसट्ठो** ति वत्थुकामेहिपि किलेसकामेहिपि असंसट्ठो विहरति। **उप्पज्जति सुखं** ति उप्पज्जति पठमज्झानसुखं। **सुखा भिय्यो सोमनस्सं** ति समापत्तितो वुट्ठितस्स झानसुखपच्चया अपरापरं सोमनस्सं उप्पज्जति। **पमुदा** ति तुट्ठाकारतो दुब्बलपीति। **पामोज्जं** ति बलवतरं 20 पीतिसोमनस्सं। **पठमो ओकासाधिगमो** ति पठमज्झानं पञ्चनीवरणानि विक्खम्भेत्वा अत्तनो ओकासं गहेत्वा तिट्ठति, तस्मा "पठमो ओकासाधिगमो" ति वुत्तं।

B. 237 **ओळारिका** ति एत्थ कायवचीसङ्खारा ताव ओळारिका होन्तु, चित्तसङ्खारा कथं ओळारिका ति? अप्पहीनत्ता। कायसङ्खारा हि 25 चतुत्थज्झानेन पहीयन्ति, वचीसङ्खारा दुतियज्झानेन, चित्तसङ्खारा निरोधसमापत्तिया। इति कायवचीसङ्खारेसु पहीनेसुपि ते तिट्ठन्तियेवा R. 644 ति पहीने उपादाय अप्पहीनत्ता ओळारिका नाम जाता।

सुखं ति निरोधा वुट्ठहन्तस्स उप्पन्नं चतुत्थज्झानिकफलसमापत्तिसुखं । सुखा भिय्यो सोमनस्सं ति फलसमापत्तितो वुट्ठितस्स अपरापरं सोमनस्सं । दुतियो ओकासाधिगमो ति चतुत्थज्झानं सुखं दुक्खं विक्खम्भेत्वा अत्तनो ओकासं गहेत्वा तिट्ठति । तस्मा "दुतियो ओकासाधिगमो" ति वुत्तं । दुतियततियज्झानानि पनेत्थ चतुत्थ गहिते गहितानेव होन्ती ति विसुं न वुत्तानी ति ।

इदं कुसलं (दी० नि० २.१६१) ति आदीसु कुसलं नाम दसकुसलकम्मपथा । अकुसलं ति दसअकुसलकम्मपथा । सावज्जदुकादयो पि एतेसं वसेनेव वेदितब्बा । सब्बञ्चेव पनेतं कण्हञ्च सुक्कञ्च सप्पटि-भागं चा ति कण्हसुक्कसप्पटिभागं । निब्बानमेव हेतं अप्पटिभागं । अविज्जा पहीयती ति वट्टपटिच्छादिका[1] अविज्जा पहीयति । विज्जा उप्पज्जती ति अरहत्तमग्गविज्जा उप्पज्जति । सुखं ति अरहत्तमग्ग-सुखञ्चेव फलसुखञ्च । सुखा भिय्यो सोमनस्सं ति फलसमापत्तितो वुट्ठितस्स अपरापरं सोमनस्सं । ततियो ओकासाधिगमो ति अरहत्तमग्गो सब्बकिलेसे विक्खम्भेत्वा अत्तनो ओकासं गहेत्वा तिट्ठति । तस्मा "ततियो ओकासाधिगमो" ति वुत्तो । सेसमग्गा पन तस्मिं गहिते अन्तोगधा एवा ति विसुं न वुत्ता ।

इमे पन तयो ओकासाधिगमा अट्ठतिंसारम्मणवसेन वित्थारेत्वा कथेतब्बा । कथं ? सब्बानि आरम्मणानि विसुद्धिमग्गे वुत्तनयेनेव उपचारवसेन च अप्पनावसेन च ववत्थपेत्वा चतुवीसतिया ठानेसु पठमज्झानं "पठमो ओकासाधिगमो" ति कथेतब्बं । तेरससु ठानेसु दुतियततियज्झानानि, पन्नरससु ठानेसु चतुत्थज्झानञ्च निरोधसमापत्तिं पापेत्वा "दुतियो ओकासाधिगमो" ति कथेतब्बं । दस उपचारज्झानानि पन मग्गस्स पदट्ठानभूतानि ततियं ओकासाधिगमं भजन्ति । अपिच तिसु सिक्खासु अधिसीलसिक्खा पठमं ओकासाधिगमं भजति, अधिचित्तसिक्खा दुतियं, अधिपञ्ञासिक्खा ततियं ति एवं सिक्खावसेनपि कथेतब्बं ।

१. विज्जापटिच्छादिका—सी०, रो० ।

B. 238 सामञ्ञफलेपि चूळसीलतो याव पठमज्झाना पठमो ओकासाधिगमो,
R. 645 दुतियज्झानतो याव नेवसञ्ञानासञ्ञायतना दुतियो, विपस्सनातो याव अरहत्ता ततियो ओकासाधिगमो ति एवं सामञ्ञफलसुत्तन्तवसेनपि कथेतब्बं। तीसु पन पिटकेसु विनयपिटकं पठमं ओकासाधिगमं भजति,
5 सुत्तन्तपिटकं दुतियं, अभिधम्मपिटकं ततियं ति एवं पिटकवसेनपि कथेतब्बं।

पुब्बे किर महाथेरा वस्सूपनायिकाय इममेव सुत्तं पट्ठपेन्ति। किं कारणा? तीणि पिटकानि विभजित्वा कथेतुं लभिस्सामा ति। तेपिटकेन हि समोधानेत्वा कथेन्तस्स दुक्कथितं ति न सक्का वत्तुं।
10 तेपिटकं भजापेत्वा कथितमेव इदं सुत्तं सुकथितं होती ति।

८. चतुसतिपट्ठानवण्णना

१८. **कुसलस्साधिगमाया** (दी० नि० २.१६२) ति मग्गकुसलस्स चेव फलकुसलस्स च अधिगमत्थाय। उभयम्पि हेतं अनवज्जट्ठेन खेमट्ठेन वा कुसलमेव। तत्थ **सम्मासमाधियती** ति तस्मिं अज्झत्तकाये सम्मासमाहितो एकग्गचित्तो होति। **बहिद्धा परकाये ञाणदस्सनं**
15 **अभिनिब्बत्तेती** ति अत्तनो कायतो परस्स कायाभिमुखं ञाणं पेसेति। एस नयो सब्बत्थ। सब्बत्थेव च **सतिमा** ति पदेन कायादिपरिग्गाहिका सति। **लोको** ति पदेन परिग्गहितकायादयोव लोको। चत्तारो चेते सतिपट्ठाना लोकियलोकुत्तरमिस्सका कथिता ति वेदितब्बा।

९. सत्तसमाधिपरिक्खारवण्णना

१९. **समाधिपरिक्खारा** (दी० नि० २.१६३) ति एत्थ तयो
20 परिक्खारा। "रथो सीलपरिक्खारो झानक्खो चक्कवीरियो" (सं० नि० ४.७) ति हि एत्थ अलङ्कारो परिक्खारो नाम। "सत्तहि नगरपरिक्खारेहि सुपरिक्खतं होती" (अं० नि० ३.२३४) ति एत्थ परिवारो परिक्खारो नाम। "गिलानपच्चयजीवितपरिक्खारो" (दी. नि. ३.१०१) ति एत्थ सम्भारो परिक्खारो नाम। इध पन
25 परिवारपरिक्खारवसेन "सत्त समाधिपरिक्खारा ति" वुत्तं। **परिक्खता** ति परिवारिता। **अयं वुच्चति सो अरियो सम्मासमाधी** ति अयं

सत्तहि रतनेहि परिवुतो चक्कवत्ती विय सत्तहि अङ्गेहि परिवुतो "अरियो सम्मासमाधी" ति वुच्चति। **सउपनिसो इतिपी** ति सउपनिस्सयो इतिपि वुच्चति, सपरिवारा येवा ति वुत्तं होति। **सम्मादिट्ठिस्सा** ति सम्मादिट्ठियं ठितस्स। **सम्मासङ्कप्पो पहोती** ति सम्मासङ्कप्पो पवत्तति। एस नयो सब्बपदेसु। अयं पनत्थो मग्ग-वसेनापि फलवसेनापि वेदितब्बो। कथं? मग्गसम्मादिट्ठियं ठितस्स मग्गसम्मासङ्कप्पो पहोति...पे०...मग्गञाणे ठितस्स मग्गविमुत्ति पहोति। तथा फलसम्मादिट्ठियं ठितस्स फलसम्मासङ्कप्पो पहोति ...पे०...फलसम्माञाणे ठितस्स फलविमुत्ति पहोती ति। (B. 239, 5, R. 646)

स्वाक्खातो तिआदीनि विसुद्धिमग्गे वण्णितानि। **अपारुता** ति विवटा। **अमतस्सा** ति निब्बानस्स। **द्वारा** ति पवेसनमग्गा। **अवेच्चप्प-सादेना** ति अचलप्पसादेन। **धम्मविनीता** ति सम्मानिय्यानेन[1] निय्याता। (10)

अत्थायं इतरा पजा ति अनागामिनो सन्धायाह। अनागामिनो च अत्थी ति वुत्तं होति। **पुञ्ञभागा** ति पुञ्ञकोट्ठासेन निब्बत्ता। **ओत्तप्पन्ति** ओत्तप्पमानो। तेन कदाचि नाम मुसा अस्सा ति मुसावाद-भयेन सङ्खातुं न सक्कोमि, न पन मम सङ्खातुं बलं नत्थी ति दीपेति। (15)

तं किं मञ्ञति भवं ति इमिना केवलं[2] वेस्सवणं पुच्छति, न पनस्स एवरूपो सत्था नाहोसी ति वा न भविस्सती ति वा लद्धि अत्थि। सब्बबुद्धानञ्हि अभिसमये विसेसो नत्थि। (20)

सयंपरिसायं ति अत्तनो परिसायं। **तयिदं ब्रह्मचरियं** ति तं इदं सकलं सिक्खत्तयब्रह्मचरियं। सेसं उत्तानमेव। इमानि पन पदानि धम्म-सङ्गाहकत्थेरेहि ठपितानी ति।

इति सुमङ्गलविलासिनिया दीघनिकायट्ठकथायं
जनवसभसुत्तवण्णना निट्ठिता।

१. धम्मविनिय्यानेन—सी०, रो०; धम्मनियामेन—स्या०,।
२. न केवलं—सी०।

B. 240
R. 647

(६) महागोविन्दसुत्तवण्णना

१. निदानवण्णना

१. एवं मे सुतं ति महागोविन्दसुत्तं। तत्रायमनुत्तानपदवण्णना। **पञ्चसिखो** (दी० नि० २.१६५) ति पञ्चचूळो पञ्चकुण्डलिको। सो किर मनुस्सपथे पुञ्ञकम्मकरणकाले दहरो पञ्चचूळकदारककाले वच्छपालकजेट्ठको हुत्वा अञ्ञेपि दारके गहेत्वा बहिगामे चतुमग्गट्ठानेसु सालं
5 करोन्तो पोक्खरणिं खणन्तो सेतुं बन्धन्तो विसमं मग्गं समं करोन्तो यानानं अक्खपटिघातनरुक्खे हरन्तो ति एवरूपानि पुञ्ञानि करोन्तो विचरित्वा दहरोव कालमकासि। तस्स सो अत्तभावो इट्ठो कन्तो मनापो अहोसि। सो कालं कत्वा चातुमहाराजिकदेवलोके नवुतिवस्ससतसहस्सप्पमाणं आयुं गहेत्वा निब्बत्ति। तस्स तिगावुतप्पमाणो सुवण्णक्खन्धसदिसो
10 अत्तभावो अहोसि। सो सकटसहस्समत्तं आभरणं पसाधेत्वा नवकुम्भमत्ते गन्धे विलिम्पित्वा दिब्बरत्तवत्थधरो रत्तसुवण्णकण्णिकं पिळन्धित्वा पञ्चहि कुण्डलकेहि[१] पिट्ठियं वत्तमानेहि पञ्चचूळकदारकपरिहारेनेव विचरति। तेनेतं "पञ्चसिखो" त्वेव सञ्जानन्ति।

अभिक्कन्ताय रत्तिया ति अभिक्कन्ताय खीणाय रत्तिया, एक-
15 कोट्ठासं अतीताया ति अत्थो। अभिक्कन्तवण्णो ति अतिइट्ठकन्तमनापवण्णो। पकतियापि हेस कन्तवण्णो, अलङ्करित्वा आगतत्ता पन अभिक्कन्तवण्णो अहोसि। केवलकप्प ति अनवसेसं समन्ततो। अनवसेसत्थो एत्थ केवलसद्दो। केवलपरिपुण्णं ति एत्थ विय। समन्ततो अत्थो कप्पसद्दो, केवलकप्पं जेतवनं ति आदीसु विय। ओभासेत्वा ति
20 आभाय फरित्वा, चन्दिमा विय सूरियो विय च एकोभासं एकपज्जोतं करित्वा ति अत्थो।

१. कुन्तलिकेहि—सी०।

२. देवसभावण्णना

२. सुधम्मायं सभायं ति सुधम्माय नाम इत्थिया रतनमत्तकण्णिक-रुक्खनिस्सन्देन निब्बत्तसभायं । तस्सा किर फलिकमया भूमि, मणिमया आणियो, सुवण्णमया थम्भा, रजतमया थम्भघटिका च सङ्घाता च, पवाळमयानि वाळरूपानि, सत्तरतनमया गोपानसियो च पक्ख-पासका च मुखवट्टि च, इन्दनीलइट्ठकाहि छदनं, सोवण्णमयं छदनपीठं, रजतमया थूपिका, आयामतो च वित्थारतो च तीणि योजनसतानि, परिक्खेपतो नवयोजनसतानि, उब्बेधतो पञ्चयोजनसतानि, एवरूपायं सुधम्मायं सभायं ।

R. 648 B. 241 5

धतरट्ठो तिआदीसु धतरट्ठो गन्धब्बराजा गन्धब्बदेवतानं कोटिसत-सहस्सेन परिवुतो कोटिसतसहस्ससुवण्णमयानि फलकानि च सुवण्ण-सत्तियो च गाहापेत्वा पुरत्थिमाय दिसाय पच्छिमाभिमुखो द्वीसु देवलोकेसु देवता पुरतो[1] कत्वा[1] निसिन्नो ।

10

विरूळ्हको कुम्भण्डराजा कुम्भण्डदेवतानं कोटिसतसहस्सेन परिवुतो कोटिसतसहस्सरजतमयानि फलकानि च सुवण्णसत्तियो च गाहापेत्वा दक्खिणाय दिसाय उत्तराभिमुखो द्वीसु देवलोकेसु देवता पुरतो कत्वा निसिन्नो ।

15

विरूपक्खो नागराजा नागानं कोटिसतसहस्सेन परिवुतो कोटिसत-सहस्समणिमयानि महाफलकानि[2] च सुवण्णसत्तियो च गाहापेत्वा पच्छिमाय दिसाय पुरत्थिमाभिमुखो[3] द्वीसु देवलोकेसु देवता पुरतो कत्वा निसिन्नो ।

20

वेस्सवणो यक्खराजा यक्खानं कोटिसतसहस्सेन परिवुतो कोटिसतसहस्सपवाळमयानि महाफलकानि च सुवण्णसत्तियो च गाहापेत्वा उत्तराय दिसाय दक्खिणाभिमुखो द्वीसु देवलोकुसु देवता पुरतो कत्वा निसिन्नो ति वेदितब्बो ।

१-१. पुरक्खत्वा—सी० । २. फलकानि—सी० ।
३. पुरत्थाभिमुखो—सी०, स्या० ।

अथ पच्छा अम्हाकं आसनं होती ति तेसं पच्छतो अम्हाकं निसीदितुं ओकासो पापुणा ति। ततो परं पविसितुं वा न लभाम। सन्निपातकारणं पनेत्थ पुब्बे वुत्तं चतुब्बिधमेव। तेसु वस्सूपनायिकसङ्गहो वित्थारितो। यथा पन वस्सूपनायिकाय, एवं महापवारणायपि
5 पुण्णमदिवसे सन्निपतित्वा "अज्ज कत्थ गन्त्वा कस्स सन्तिके पवारेस्सामा" ति मन्तेन्ति। तत्थ सक्को देवानमिन्दो येभुय्येन
B. 242 पियङ्गुदीपमहाविहारस्मिं येव पवारेति। सेसा देवता परिच्छत्तकादीनि दिब्बपुप्फानि चेव दिब्बचन्दनचुण्णानि च गहेत्वा अत्तनो अत्तनो मनापट्ठानमेव गन्त्वा पवारेन्ति। एवं पवारणसङ्गहत्थाय
10 सन्निपतन्ति।

R. 649 देवलोके पन आसावती नाम लता अत्थि। सा पुप्फिस्सती ति देवा वस्ससहस्सं उपट्ठानं गच्छन्ति। पारिच्छत्तके पुप्फमाने एकवस्सं उपट्ठानं गच्छन्ति। ते तस्स पण्डुपलासादिभावतो पट्ठाय अत्तमना होन्ति। यथाह—

15 "यस्मिं, भिक्खवे, समये देवानं तावतिंसानं परिच्छत्तको कोविळारो पण्डुपलासो होति, अत्तमना, भिक्खवे, देवा तावतिंसा तस्मिं समये होन्ति, पण्डुपलासो खो दानि पारिच्छत्तको कोविळारो, न चिरस्सेव पन्नपलासो[१] भविस्सती ति। यस्मिं, भिक्खवे, समये देवानं तावतिंसानं पारिच्छत्तको कोविळारो पन्नपलासो होति, खारकजातो होति,
20 जालकजातो होति, कुटुमलकजातो[२] होति, कोरकजातो[३] होति, अत्तमना, भिक्खवे, देवा तावतिंसा तस्मिं समये होन्ति—"कोरकजातो दानि पारिच्छत्तको कोविळारो न चिरस्सेव सब्बपालिफुल्लो भविस्सती" (अं० नि० ३.२४३) ति।

१. सन्नपलासो—सी०; छिन्नपलासो—स्या०, रो०।
२. कुडुमलकजातो—सी०; मकुलकजातो—स्या०।
३. कोकासजातो—सी०; कोकासकजातो—रो०।

सब्बपालिफुल्लस्स खो पन, भिक्खवे, पारिच्छत्तकस्स कोविळारस्स समन्ता पञ्ञास योजनानि आभाय[1] फुटं[1] होति, अनुवातं योजनसतं गन्धो गच्छति। अयमानुभावो पारिच्छत्तकस्स कोविळारस्सा" ति।

पुप्फिते पारिच्छत्तके आरोहनकिच्चं वा अङ्कुसकं गहेत्वा नमनकिच्चं वा पुप्फाहरणत्थं चङ्कोटककिच्चं वा नत्थि। कन्तनकवातो उट्ठहित्वा पुप्फानि वण्टतो कन्तति, सम्पटिच्छनकवातो सम्पटिच्छति, पवेसनकवातो सुधम्मं देवसभं पवेसेति, सम्मज्जनकवातो पुराणपुप्फानि नीहरति, सन्थरणकवातो पत्तकण्णिककेसरानि नच्चन्तो[2] सन्थरति, मज्झट्ठाने धम्मासनं होति। योजनप्पमाणो रतनपल्लङ्को उपरि तियोजनेन सेतच्छत्तेन धारयमानेन, तदनन्तरं सक्कस्स देवरञ्ञो आसनं अत्थरियति। ततो तेत्तिंसाय देवपुत्तानं, ततो अञ्ञासं महेसक्खदेवतानं। अञ्ञतरदेवतानं पन पुप्फकण्णिकाय आसनं होति।

देवा देवसभं पविसित्वा निसीदन्ति। ततो पुप्फेहि रेणुवट्टि उग्गन्त्वा उपरि कण्णिकं आहच्च निपतमाना देवतानं तिगावुतप्पमाणं अत्तभावं लाखारसपरिकम्मसज्जितं विय करोति। तेसं सा कीळा चतूहि मासेहि परियोसानं गच्छति। एवं पारिच्छत्तककीळानुभवनत्थाय[3] सन्निपतन्ति।

मासस्स पन अट्ठदिवसे देवलोके महाधम्मसवनं घुसति[4]। तत्थ[5] सुधम्मायं देवसभायं सनङ्कुमारो वा महाब्रह्मा, सक्को वा देवानमिन्दो, धम्मकथिकभिक्खु वा, अञ्ञतरो वा धम्मकथिको देवपुत्तो धम्मकथं कथेति। अट्ठमियं पक्खस्स चतुन्नं महाराजानं अमच्चा, चातुद्दसियं पुत्ता, पन्नरसे सयं चत्तारो महाराजानो निक्खमित्वा सुवण्णपट्टञ्च जातिहिङ्गुलकञ्च गण्हित्वा गामनिगमराजधानियो अनुविचरन्ति। ते[6]—

5 10 B. 243 15 R. 650 20

१-१. आभा फुटा—सी०, स्या०, रो०। २. हरन्तो—सी०; रचेन्तो—स्या०। ३. पारिच्छत्तककोविलार०—सी०। ४. घोसति—स्या०; सुस्सति—रो०। ५. सी० पोत्थके नत्थि। ६. तेसु—सी०।

"असुका नाम इत्थी वा पुरिसो वा बुद्धं सरणं गतो, धम्मं सरणं गतो, संघं सरणं गतो, पञ्चसीलानि रक्खति, मासस्स अट्ठ उपोसथे करोति, मातुउपट्ठानं पूरेति, पितुउपट्ठानं पूरेति, असुकट्ठाने उप्पलहत्थकसतेन पुप्फकम्भेन पूजा कता, दीपसहस्सं आरोपितं, अकालधम्मसवनं कारितं, 5 छत्तवेदिका पुटवेदिका[1] कुच्छिवेदिका सीहासनं सीहसोपानं कारितं, तीणि सुचरितानि पूरेति, दसकुसलकम्मपथे समादाय वत्तती'' ति सुवण्णपट्टे जातिहिङ्गुलकेन लिखित्वा आहरित्वा पञ्चसिखस्स हत्थे देन्ति। पञ्चसिखो मातलिस्स हत्थे देति। मातलि सङ्गाहको सक्कस्स देवरञ्ञो देति।

10 यदा पुञ्ञकम्मकारका बहू न होन्ति, पोत्थको खुद्दको होति, तं दिस्वाव देवा—"पमत्तो, वत भो महाजनो विहरति, चत्तारो अपाया परिपूरिस्सन्ति, छ देवलोका तुच्छा भविस्सन्ती" ति अनत्तमना होन्ति। सचे पन पोत्थको महा होति, तं दिस्वाव देवा—"अप्पमत्तो वत भो महाजनो विहरति, चत्तारो अपाया सुञ्ञा B. 244 15 भविस्सन्ति, छ देवलोका परिपूरिस्सन्ति, बुद्धसासने पुञ्ञानि करित्वा आगते महापुञ्ञे पुरक्खत्वा[2] नक्खत्तं कीळितुं लभिस्सामा" ति अत्तमना होन्ति। तं पोत्थकं गहेत्वा सक्को देवराजा वाचेति। तस्स पकतिनियामेन कथेन्तस्स सद्दो द्वादस योजनानि गण्हाति[3]। उच्चेन सरेन कथेन्तस्स च सकलं दसयोजनसहस्सं देवनगरं छादेत्वा तिट्ठति। 20 एवं धम्मसवनत्थाय सन्निपतन्ति। इध पन पवारणसङ्गहत्थाय सन्निपतिता ति वेदितब्बा।

R. 651 ३. तथागतं नमस्सन्ता (दी० नि० २.१६६) ति नवहि कारणेहि तथागतं नमस्समाना। धम्मस्स च सुधम्मतं ति स्वाक्खाततादिभेदं धम्मस्स सुधम्मतं उजुप्पटिपन्नतादिभेदं संघस्स च सुप्पटिपत्तिं ति 25 अत्थो।

१. मुद्धवेदिका—सी०; मुट्ठिवेदिका—स्या०।

२. पुरक्खित्वा—स्या०, रो०।

३. गच्छति—स्या०।

३. अट्ठयथाभुच्चवण्णना

४. **यथाभुच्चे** ति यथाभूते यथासभावे। **वण्णे** ति गुणे। **पयिरुदाहासी** ति कथेसि। **बहुजनहिताय पटिपन्नो** ति कथं पटिपन्नो ? दीपङ्करपादमूले अट्ठ धम्मे समोधानेत्वा बुद्धत्थाय[1] अभिनीहरमानोपि बहुजनहिताय पटिपन्नो नाम होति।

दानपारमी, सीलपारमी, नेक्खम्मपारमी, पञ्ञापारमी, 5 वीरियपारमी, खन्तिपारमी, सच्चपारमी, अधिट्ठानपारमी, मेत्तापारमी, उपेक्खापारमी ति कप्पसतसहस्साधिकानि चत्तारि असङ्ख्येय्यानि इमा दस पारमियो पूरेन्तो पि बहुजनहिताय पटिपन्नो।

खन्तिवादितापसकाले, चूळधम्मपालकुमारकाले, छद्दन्तनागराज-काले भूरिदत्तचम्पेय्यसङ्खपालनागराजाकाले, महाकपिकाले च 10 तादिसानि दुक्करानि करोन्तोपि बहुजनहिताय पटिपन्नो। वेस्सन्तरत्त-भावे ठत्वा सत्तसतकमहादानं दत्वा सत्तसुठानेसु पथविं कम्पेत्वा पारमीकूटं[2] गण्हन्तोपि[2] बहुजनहिताय पटिपन्नो। ततो अनन्तरे अत्तभावे तुसितपुरे यावतायुकं तिट्ठन्तोपि बहुजनहिताय पटिपन्नो।

तत्थ पञ्च पुब्बनिमित्तानि दिस्वा दससहस्सचक्कवाळदेवताहि 15 याचितो पञ्च महाविलोकनानि विलोकेत्वा देवानं सङ्गहत्थाय पटिञ्ञं दत्वा तुसितपुरा चवित्वा मातुकुच्छियं पटिसन्धिं गण्हन्तोपि बहुजनहिताय B. 245 पटिपन्नो।

दस मासे मातुकुच्छियं वसित्वा लुम्बिनीवने मातुकुच्छितो निक्खमन्तोपि, एकूनतिंसवस्सानि अगारं अज्झावसित्वा महाभिनिक्ख- 20 मनं निक्खमित्वा अनोमनदीतीरे पब्बजन्तोपि, छब्बस्सानि पधानेन अत्तानं किलमित्वा बोधिपल्लङ्कं[3] आरुय्ह सब्बञ्ञुतञ्ञाणं पटिविज्झन्तोपि, सत्तसत्ताहं बोधिमण्डे यापेन्तोपि, इसिपतनं आगम्म अनुत्तरं धम्मचक्कं पवत्तेन्तोपि, यमकपाटिहारियं करोन्तोपि, देवोरोहणं

१. बुद्धत्ताय—सी०, रो०। २-२. पारमिं कोटिं गाहेन्तो पि—सी०।
३. बोधिमण्डं—सी०।

ओरोहन्तोपि,[१] बुद्धो हुत्वा पञ्चचत्तालीस वस्सानि तिट्ठन्तोपि, आयुसङ्खारं ओस्सजन्तोपि, यमकसालानमन्तरे अनुपादिसेसाय
R. 652 निब्बानधातुया परिनिब्बायन्तोपि बहुजनहिताय पटिपन्नो। यावस्स सासपमत्तापि धातुयो धरन्ति, ताव बहुजनहिताय पटिपन्नो ति
5 वेदितब्बो। सेसपदानि एतस्सेव वेवचनानि। तत्थ पच्छिमं पच्छिमं पुरिमस्स पुरिमस्स अत्थो।

नेव अतीतंसे समनुपस्साम, न पनेतरही (दी० नि० २.१६७) ति अतीतेपि बुद्धतो अञ्ञं न समनुपस्साम, अनागतेपि न समनुपस्साम, एतरहि पन अञ्ञस्स सत्थुनो अभावतोयेव अञ्ञत्र तेन भगवता न
10 समनुपस्सामा ति अयमेत्थ अत्थो। अट्ठकथायम्पि हि—"अतीतानागता बुद्धा अम्हाकं सत्थारा सदिसायेव, किं सक्को कथेती" ति विचारेत्वा—"एतरहि बहुजनहिताय पटिपन्नो सत्था अम्हाकं सत्थारं मुञ्चित्वा अञ्ञो कोचि नत्थि, तस्मा न पस्सामा ति कथेती" ति वुत्तं। यथा च एत्थ, एवं इतो परेसुपि पदेसु अयमत्थो वेदितब्बो। स्वाक्खातादीनि
15 च कुसलादीनि च वुत्तत्थानेव।

गङ्गोदकं यमुनोदकेना ति गङ्गायमुनानं समागमट्ठाने उदकं वण्णेनपि गन्धेनपि रसेनपि संसन्दति समेति, मज्झे भिन्नसुवण्णं विय एकसदिसमेव होति, न महासमुद्दउदकेन संसट्ठकाले विय विसदिसं। परिसुद्धस्स निब्बानस्स पटिपदापि परिसुद्धाव। न हि दहरकाले
20 वेज्जकम्मादीनि कत्वा अगोचरे चरित्वा महल्लककाले निब्बानं दट्ठुं सक्का, निब्बानगामिनी पन पटिपदा परिसुद्धाव वट्टति आकासूपमा। यथा हि आकासम्हि अलग्गं परिसुद्धं चन्दिमसूरियानं आकासे इच्छितिच्छितट्ठानं गच्छन्तानं विय निब्बानं गच्छन्तस्स भिक्खुनो
L. 246 पटिपदापि कुले वा गणे वा अलग्गा अबद्धा आकासूपमा[२] वट्टति। सा
25 पनेसा तादिसाव भगवता पञ्ञत्ता कथिता देसित। तेन वुत्तं—"संसन्दति निब्बानञ्च पटिपदा चा" ति।

२. करोन्तो पि—सी०। १. आकाससमा—सी०।

पटिपन्नानं ति पटिपदाय ठितानं। **वुसितवतं** ति वुत्थवासानं एतेसं। **लद्धसहायो** ति एतेसं[1] तत्थ तत्थ सह अयनतो सहायो। "अदुतियो असहायो अप्पटिसमो" ति इदं पन असदिसट्ठेन वुत्तं। **अपनुज्जा** ति तेसं मज्झेपि फलसमापत्तिया विहरन्तो चित्तेन अपनुज्ज, अपनुज्जेव एकारामतं अनुयुत्तो विहरती ति अत्थो। 5

अभिनिप्फन्नो खो पन तस्स भगवतो लाभो ति तस्स भगवतो महालाभो उप्पन्नो। कदा पट्ठाय उप्पन्नो? अभिसम्बोधिं पत्वा सत्तसत्ताहं अतिक्कमित्वा इसिपतने धम्मचक्कं पवत्तेत्वा अनुक्कमेन देवमनुस्सानं दमनं करोन्तस्स तयो जटिले पब्बाजेत्वा राजगहं गतस्स बिम्बिसार-दमनतो पट्ठाय उप्पन्नो। यं सन्धाय वुत्तं—"तेन खो पन समयेन 10 भगवा सक्कतो होति गरुकतो मानितो पूजितो अपचितो लाभी चीवर-पिण्डपातसेनासनगिलानपच्चयभेसज्जपरिक्खारानं" (सं० नि० २.१०२) ति। सतसहस्सकप्पाधिकेसु चतूसु असङ्ख्येय्येसु उस्सन्नपुञ्ञनिस्सन्द-समुप्पन्नो लाभसक्कारो महोघो विय अज्झोत्थरमानो आगच्छति।

एकस्मिं किर समये राजगहे सावत्थियं साकेते कोसम्बियं 15 बाराणसियं भगवतो पटिपाटिभत्तं नाम उप्पन्नं। तत्थेको—"अहं सतं विस्सज्जेत्वा दानं दस्सामी" ति पण्णं लिखित्वा विहारद्वारे बन्धि। अञ्ञो—"अहं द्वे सतानि, अञ्ञो—'अहं पञ्च सतानि", अञ्ञो—"अहं सहस्सं", अञ्ञो—'अहं द्वे सहस्सानि', अञ्ञो—अहं पञ्च, दस, वीसति, पञ्ञासं; अञ्ञो—'अहं सतसहस्सं, अञ्ञो अहं द्वे सत- 20 सहस्सानि विस्सज्जेत्वा दानं दस्सामी ति पण्णं लिखित्वा विहारद्वारे बन्धि। जनपदचारिकं चरन्तम्पि ओकासं लभित्वा—"दानं दस्सामी" ति सकटानि पूरेत्वा महाजनो अनुबन्धियेव। यथाह—"तेन खो पन समयेन जानपदा मनुस्सा बहुं लोणम्पि तेलम्पि तण्डुलम्पि खादनीयम्पि सकटेसु आरोपेत्वा भगवतो पिट्ठितो पिट्ठितो अनुबन्धा होन्ति—'यत्थ 25 पटिपाटिं लभिस्साम, तत्थ भत्तं करिस्सामा' (म० व० २३९) ति। एवं अञ्ञानिपि खन्धके च विनये च बहूनि वत्थूनि वेदितब्बानि।

R. 653

B. 247

१. एकेकस्स—सी०।

असदिसदाने पनेस लाभो मत्थकं पत्तो। एकस्मिं किर समये भगवति जनपदचारिकं चरित्वा जेतवनं सम्पत्ते राजा निमन्तेत्वा दानं अदासि। दुतियदिवसे नागरा अदंसु। पुन तेसं दानतो अतिरेकं राजा, तस्स दानतो अतिरेकतरं नागरा ति एवं बहूसु दिवसेसु गतेसु राजा
5 चिन्तेसि। "इमे नागरा दिवसे दिवसे अतिरेकतरं करोन्ति, पथविस्सरो पन राजा नागरेहि दाने पराजितो ति गरहा भविस्सती" ति। अथस्स मल्लिका उपायं आचिक्खि। सो राजङ्गणे सालकल्याणिपदरेहि मण्डपं
R. 654 कारेत्वा तं नीलुप्पलेहि छादेत्वा पञ्च आसनसतानि पञ्ञापेत्वा पञ्च हत्थिसतानि आसनानं पच्छाभागे ठपेत्वा एकेकेन हत्थिना एकेकस्स
10 भिक्खुनो सेतच्छत्तं धारापेसि। द्विन्नं द्विन्नं आसनानं अन्तरे सब्बालङ्कारपटिमण्डिता एकेका खत्तियधीता चतुज्जातियगन्धं पिंसति। निट्ठितं निट्ठितं मज्झट्ठाने गन्धम्बणे पक्खिपति। तं अपरा खत्तियधीता नीलुप्पलहत्थकेन सम्परिवत्तेति। एवं एकेकस्स भिक्खुनो तिस्सो तिस्सो खत्तियधीतरो परिवारा, अपरा सब्बालङ्कारपटिमण्डिता इत्थी तालवण्टं
15 गहेत्वा बीजति, अञ्ञा धमकरकं गहेत्वा उदकं परिस्सावेति, अञ्ञा पत्ततो उदकं हरति। भगवतो चत्तारि अनग्घानि अहेसुं। पादकथलिका आधारको अपस्सेनफलकं छत्तपादमणी ति इमानि चत्तारि अनग्घानि अहेसुं। संघनवकस्स देय्यधम्मो सतसहस्सं अग्घति। तस्मिं च दाने अङ्गुलिमालत्थेरो संघनवको अहोसि। तस्स आसनसमीपे आनीतो हत्थी
20 तं उपगन्तुं नासक्खि। ततो रञ्ञो आरोचेसुं। राजा—"अञ्ञो हत्थी नत्थी" ति? दुट्ठहत्थी पन अत्थि, आनेतुं न सक्का ति। सम्मासम्बुद्धो—संघनवको कतरो महाराजा, ति? अङ्गुलिमालत्थेरो भगवा ति। तेन हि तं दुट्ठहत्थिं आनेत्वा ठपेतु, महाराजा ति। हत्थिं मण्डयित्वा आनयिंसु। सो थेरस्स तेजेन नासावातसञ्चरणमत्तम्पि कातुं
25 नासक्खि। एवं निरन्तरं सत्त दिवसानि दानं दीयित्थ। सत्तमे दिवसे राजा दसबलं वन्दित्वा—"भगवा मय्हं धम्मं देसेथा" ति आह।

B. 248 तस्सं च परिसति काळो च जुण्हो चाति द्वे अमच्चा होन्ति। काळो चिन्तेसि—"नस्सति राजकुलस्स सन्तकं, किं नामेते एत्तका

जना करिस्सन्ति, भुञ्जित्वा विहारं गन्त्वा निद्दायिस्सन्तेव, इदं पन एको राजपुरिसो लभित्वा किं नाम न करेय्य, अहो नस्सति रञ्ञो सन्तकं'' ति। जुण्हो चिन्तेसि—''महन्तं इदं राजत्तं नाम। को अञ्ञो इदं कतुं सक्खिस्सति? किं राजा नाम सो, यो राजत्तने ठितोपि एवरूपं दानं दातुं न सक्कोती'' ति। भगवा परिसाय 5 अज्झासयं ओलोकेन्तो तेसं द्विन्नं अज्झासयं विदित्वा—''सचे अज्ज जुण्हस्स अज्झासयेन धम्मकथं कथेमि, काळस्स सत्तधा मुद्धा फलिस्सति। मया खो पन सत्तानुद्दयताय पारमियो पूरिता। जुण्हो अञ्ञस्मिम्पि R. 655 दिवसे मयि धम्मं कथयन्ते मग्गफलं पटिविज्झिस्सति, इदानि पन काळं ओलोकेस्सामी'' ति रञ्ञो चतुप्पदिकमेव गाथं अभासि— 10

> ''न वे कदरिया देवलोकं वजन्ति,
> बाला हवे नप्पसंसन्ति दानं।
> धीरो च दानं अनुमोदमानो,
> तेनेव सो होति सुखी परत्था''
> (ध० प० ३४) ति॥ 15

राजा अनत्तमनो हुत्वा—''मया महादानं दिन्नं, सत्था च मे मन्दमेव धम्मं कथेसि, नासक्खि मञ्ञे दसबलस्स चित्तं गहेतुं'' ति। सो भुत्तपातरासो विहारं गन्त्वा भगवन्तं वन्दित्वा पुच्छि—''मया, भन्ते, महन्तं दानं दिन्नं, अनुमोदना च मे न महती कता, को नु खो मे, भन्ते, दोसो'' ति? नत्थि, महाराज, तव दोसो, परिसा पन अपरिसुद्धा, 20 तस्मा धम्मं न देसेसिं ति। कस्मा पन[1] भगवा परिसा न सुद्धाति? सत्था द्विन्नं अमच्चानं परिवितक्कं आरोचेसि। राजा काळं पुच्छि—''एवं, तात, काळा'' ति? एवं, महाराजा, ति। मयि मम सन्तकं ददमाने तव कतरं ठानं रुज्जति, न तं सक्कोमि पस्सितुं, पब्बाजेथ नं मम रट्ठतो ति आह। ततो जुण्हं पक्कोसापेत्वा पुच्छि—''एवं 25 किर, तात, चिन्तेसी'' ति? आम महाराजा ति। तव चित्तानुरूपमेव

१. ० भन्ते—सी०।

होतू ति तस्मिं येव मण्डपे एवं पञ्ञत्तेसुयेव आसनेसु पञ्च भिक्खु-
सतानि निसीदापेत्वा तायेव खत्तियधीतरो परिवारापेत्वा राजगेहतो
B. 249 धनं गहेत्वा मया दिन्नसदिसमेव सत्त दिवसानि दानं देहीति। सो
तथा अदासि। दत्वा सत्तमे दिवसे—"धम्मं भगवा देसेथा" ति
5 आह।

सत्था द्विन्नम्पि दानानं अनुमोदनं एकतो कत्वा द्वे महानदियो
एकोघपुण्णा कुरुमानो विय महाधम्मदेसनं देसेसि। देसनापरियोसाने
जुण्हो सोतापन्नो अहोसि। राजा पसीदित्वा दसबलस्स बाहिरवत्थुं
नाम अदासि। एवं अभिनिप्फन्नो खो पन तस्स भगवतो लाभो ति
10 वेदितब्बो।

अभिनिप्फन्नो सिलोको ति वण्णगुणकित्तनं। सोपि भगवतो
R. 656 धम्मचक्कप्पवत्तनतो पट्ठाय अभिनिप्फन्नो। ततो पट्ठाय हि भगवतो
खत्तियापि वण्णं कथेन्ति। ब्राह्मणापि गहपतयोपि नागा सुपन्ना गन्धब्बा
देवता ब्रह्मानोपि कित्तिं वत्वा—"इतिपि सो भगवा" तिआदिना[1]।
15 अञ्ञतित्थिया पि[2] वररोजस्स सहस्सं दत्वा समणस्स गोतमस्स अवण्णं
कथेही ति उय्योजेसुं। सो सहस्सं गहेत्वा दसबलं पादतलतो पट्ठाय
याव केसन्ता[3] अपलोकयमानो लिक्खामत्तम्पि वज्जं अदिस्वा—
"विप्पकिण्णद्वत्तिंसमहापुरिसलक्खणे असीतिअनुब्यञ्जनविभूसिते ब्यामप्प-
भापरिक्खित्ते सुफुल्लितपारिच्छत्तकतारागणसमुज्जलितअन्तलिक्ख-
20 विचित्तकुसुमसस्सिरिकनन्दनवनसदिसे अनवज्जअत्तभावे अवण्णं
वदन्तस्स[4] मुखम्पि विपरिवत्तेय्य, मुद्धापि सत्तधा फलेय्य, अवण्णं
वत्तुं उपायो नत्थि, वण्णमेव वदिस्सामी" ति पादतलतो पट्ठाय[5] याव
केसन्ता अतिरेकपदसहस्सेन वण्णमेव कथेसि। यमकपाटिहारिये
पनेस वण्णो नाम मत्थकं पत्तो[6]। एवं अभिनिप्फन्नो सिलोको ति।

१. आदिना—सी०। २. हि—सी०।
३. केसग्गा—स्या०। ४. भासन्तस्स—सी०।
५. सी० पोत्थके नत्थि। ६. ० ति—स्या०।

याव मञ्ञे खत्तिया ति खत्तिया ब्राह्मणा वेस्सा सुद्दा नागा सुपण्णा यक्खा असुरा देवा ब्रह्मनो ति सब्बेव ते सम्पियायमानरूपा हट्ठतुट्ठा विहरन्ति । विगतमदो खो पना ति एत्तका मं जना सम्पियायमानरूपा विहरन्ती ति न मदपमत्तो[1] हुत्वा दवादिवसेन आहारं आहारेति, अञ्ञदत्थु[2] विगतमदो खो पन सो भगवा आहारं आहारेति । 5

यथावादी ति यं[3] वाचाय वदति, तदन्वयमेवस्स कायकम्मं होति । यञ्च[4] कायेन करोति, तदन्वयमेवस्स वचीकम्मं होति । कायो वा वाचं, वाचा वा कायं नातिक्कमति, वाचा कायेन, कायो च वाचाय समेति । यथाह— 10 B.250

"वामेन सूकरो होति, दक्खिणेन अजामिगो ।
सरेन नेलको[5] होति, विसाणेन जरग्गवो" ति ॥,

अयं सूकरयक्खो सूकरे दिस्वा सूकरसदिसं वामपस्सं दस्सेत्वा ते गहेत्वा खादति, अजामिगे दिस्वा तंसदिसं दक्खिणपस्सं दस्सेत्वा ते गहेत्वा खादति, नेलकवच्छके दिस्वा वच्छकरवं रवन्तो[6] ते गहेत्वा खादति, गोणे दिस्वा तेसं विसाणसदिसानि विसाणानि मापेत्वा ते दूरतोव—"गोणो विय दिस्सती" ति एवं उपगते गहेत्वा खादति । यथा[7] च धम्मिकवायसजातके सकुणेहि पुट्ठो वायसो—"अहं वातभक्खो, वातभक्खताय मुखं विवरित्वा पाणकानञ्च[8] मरणमयेन[8] एकेनेव पादेन ठितो । तस्मा तुम्हेपि— 15 20 R.657

"धम्मं चरथ भद्दं[9] वो[9], धम्मं चरथ ञातयो ।
धम्मचारी सुखं सेति, अस्मिं लोके परम्हि चा" ति ॥,

सकुणेसु विस्सासं उप्पादेसि[10] । ततो—

१. मत्तपमत्तो—सी० ।
२. अञ्ञदत्थुं—स्या० ।
३. यथा—सी० ।
४. ० कम्मं—सी० ।
५. एलको—स्या० ।
६. विरवन्तो—स्या० ।
७. वातभक्खो ०—सी० ।
८-८. पाणमरणमद्दनभयेन—स्या० ।
९-९. भद्दन्ते—रो० ।
१०. आपादेसि—सी०, स्या० ।

"भद्दको वतायं पक्खी, दिजो परमधम्मिको ।
एकपादेन तिट्ठन्तो, धम्मो धम्मो ति भासती" ति ।।,

एवं विस्सासमागते सकुणे खादित्थ । तेन तेसं वाचा कायेन, कायो च वाचाय न समेति, न एवं भगवतो । भगवतो पन वाचा कायेन,
5 कायो च वाचाय समेतियेवा ति दस्सेति ।

तिण्णा तरिता विचिकिच्छा अस्सा ति तिण्णविचिकिच्छो । "कथमिदं कथमिदं" ति एवरूपा विगता कथंकथा अस्सा ति विगतकथंकथो । यथा हि महाजनो—"अयं रुक्खो, किं रुक्खो नाम, अयं गामो, अयं जनपदो, इदं रट्ठं, किं रट्ठं नाम, कस्मा नु खो अयं रुक्खो
10 उजुक्खन्धो, अयं वङ्कक्खन्धो, कस्मा कण्टको कोचि उजुको होति, कोचि
B. 251 वङ्को, पुप्फं किञ्चि सुगन्धं, किञ्चि दुग्गन्धं, फलं किञ्चि मधुरं, किञ्चि अमधुरं" ति सकङ्खोव होति, न एवं सत्था । सत्था हि—"इमेसं नाम
R. 658 धातूनं उस्सन्नुस्सन्नत्ता इदं एवं होती" ति विगतकथंकथो व । यथा च पठमज्झानादिलाभीनं दुतियज्झानादीसु कङ्खा होति । पच्चेकबुद्धानम्पि
15 हि सब्बञ्ञुतञ्ञाणे याथावसन्नि ट्ठानाभावतो वोहारवसेन कङ्खा नाम होतियेव, न एवं बुद्धस्स । सो हि भगवा सब्बत्थ विगतकथंकथो ति दस्सेति ।

परियोसितसङ्कप्पो ति यथा केचि सीलमत्तेन, केचि विपस्सनामत्तेन, केचि पठमज्झानेन...पे०...केचि नेवसञ्ञानासञ्ञायतनसमा-
20 पत्तिया, केचि सोतापन्नभावमत्तेन...पे०...केचि अरहत्तेन, केचि सावकपारमीञाणेन, केचि पच्चेकबोधिञाणेन परियोसितसङ्कप्पा परिपुण्णमनोरथा होन्ति, न एवं मम सत्था । मम पन सत्था सब्बञ्ञुतञ्ञाणेन परियोसितसङ्कप्पो ति दस्सेति ।

अज्झासयं आदिब्रह्मचरियं ति करणत्थे पच्चत्तवचनं, अधिकासयेन
25 उत्तमनिस्सयभूतेन आदिब्रह्मचरियेन पोराणब्रह्मचरियभूतेन च अरियमग्गेन तिण्णविचिकिच्छो विगतकथंकथो परियोसितसङ्कप्पोति अत्थो । "पुब्बे अननुस्सुतेसु धम्मेसु सामं सच्चानि अभिसम्बुज्झि, तत्थ च

सब्बञ्ञुतं पत्तो, बलेसु च वसीभावं'' ति हि वचनतो परियोसितसङ्कप्पतापि भगवतो अरियमग्गेनेव निप्फन्नाति ।

यथरिव भगवा ति यथा भगवा, एवं एकस्मिं जम्बुदीपतले चतूसु दिसासु चारिकं चरमाना अहो वत चत्तारो जिना धम्मं देसेय्युं ति पच्चासिंसमाना वदन्ति । अथापरे तीसु मण्डलेसु एकतो विचरणभावं 5 आकङ्खमाना तयो सम्मासम्बुद्धा ति आहंसु । अपरे—"दस पारमियो नाम पूरेत्वा चतुन्नं तिण्णं वा उप्पत्ति दुल्लभा, सचे पन एको निबद्धवासं वसन्तो धम्मं देसेय्य, एको चारिकं चरन्तो, एवम्पि जम्बुदीपो सोभेय्य चेव, बहुञ्च हितसुखमधिगच्छेय्या'' ति चिन्तेत्वा अहो वत, मारिसा ति आहंसु । 10

६. अट्ठानमेतं अनवकासो यं (दी० नि० २.१६८) ति एत्थ ठानं अवकासो ति उभयमेतं कारणाधिवचनमेव । कारणञ्हि तिट्ठति एत्थ R. 659 तदायत्तवुत्तिताय फलं ति ठानं । ओकासो विय चस्स तं तेन विना अञ्ञत्थ अभावतो ति अवकासो । यन्ति करणत्थे पच्चत्तं[1] । इदं वुत्तं होति—"येन कारणेन एकिस्सा लोकधातुया द्वे बुद्धा एकतो उप्पज्जेय्युं, 15 B. 252 तं कारणं नत्थी'' ति ।

एत्थ च—

"यावता चन्दिमसूरिया, परिहरन्ति दिसा भन्ति विरोचना ।
ताव सहस्सधा लोको, एत्थ ते वत्तते वसो"
(म० नि० १.४०२) ति ॥, 20

गाथाय एकचक्कवाळमेव एका लोकधातु । "सहस्सी लोकधातु अकम्पित्था'' (अं० नि० १.२५७) ति आगतट्ठाने चक्कवाळसहस्सं एका लोकधातु । "आकङ्खमानो, आनन्द, तथागतो तिसहस्सिमहासहस्सिलोकधातुं सरेन विञ्ञापेय्य, ओभासेन च फरेय्या'' (अं०नि०१.२११)ति आगतट्ठाने तिसहस्सिमहासहस्सी एका लोकधातु । 25
"अयञ्च दससहस्सी लोकधातू'' (म० नि० ३.१८५) ति आगतट्ठाने

१. ० वचनं—स्या० ।

दसचक्कवाळसहस्सानि एका लोकधातु। तं[1] सन्धाय **एकिस्सा लोकधातुया** ति आह। एत्तकञ्हि जातिखेत्तं नाम। तत्रापि ठपेत्वा इमस्मिं चक्कवाळे जम्बुदीपस्स मज्झिमदेसं न अञ्ञत्र बुद्धा उप्पज्जन्ति जातिखेत्ततो पन परं बुद्धानं उप्पत्तिट्ठानमेव न पञ्ञायति। **येनत्थेना** ति
5 येन पवारणसङ्गहत्थेन।

४. सनङ्कुमारकथावण्णना

७. **वण्णेन चेव यससा चा** (दी० नि० २.१६९) ति अलङ्कार-परिवारेन च पुञ्ञसिरिया चा ति अत्थो।

साधु महाब्रह्मे ति एत्थ सम्पसादने साधुसद्दो। **सङ्खाय मोदामा** ति जानित्वा मोदाम।

५. गोविन्दब्राह्मणवत्थुवण्णना

10 १२. **याव दीघरत्तं महापञ्ञोव सो भगवा** (दी० नि० २.१७२) ति एत्तकन्ति परिच्छिन्दित्वा न सक्का वुत्तं। अथ खो याव[2] दीघरत्तं अतिचिररत्तं महापञ्ञोव सो भगवा। **नो** ति कथं तुम्हे मञ्ञथाति। अथ सयमेवेतं पञ्हं ब्याकातुकामो—"अनच्छरियमेतं मारिसा, यं
B. 253 इदानि पारमियो पूरेत्वा बोधिपल्लङ्के तिण्णं मारानं मत्थकं भिन्दित्वा
15 पटिविद्धअसाधारणञाणो सो भगवा महापञ्ञो भवेय्य, किमेत्थ
R. 660 अच्छरियं, अपरिपक्काय पन बोधिया पदेसञाणे ठितस्स सरागादिकालेपि महापञ्ञभावमेव वो, मारिसा, कथेस्सामी" ति भवपटिच्छन्नकारणं आहरित्वा दस्सेन्तो **भूतपुब्बं भो** तिआदिमाह।

पुरोहितो ति सब्बकिच्चानि अनुसासनपुरोहितो। **गोविन्दो** ति
20 गोविन्दियाभिसेकेन अभिसित्तो, पकतिया पनस्स अञ्ञदेव नामं, अभिसित्तकालतो पट्ठाय "गोविन्दो" ति सङ्ख्यं गतो। **जोतिपालो** ति जोतनतो च पालनतो च जोतिपालो। तस्स किर जातदिवसे सब्बावुधानि उज्जोतिंसु[3]। राजापि पच्चूससमये अत्तनो मङ्गलावुधं

१. सो ०—स्या०। २. सी० पोत्थके नत्थि।
३. पज्जलिंसु—स्या०।

पज्जलितं दिस्वा भीतो अट्ठासि । गोविन्दो पातोव राजूपट्ठानं गन्त्वा सुखसेय्यं पुच्छि राजा—"कुतो मे आचरिय, सुखसेय्या" ति वत्वा तं कारणं आरोचेसि । मा भायि, महाराज, मय्हं पुत्तो जातो, तस्सानुभावेन सकलनगरे आवुधानि पज्जलिंसू ति । राजा—"किं नु खो मे कुमारो पच्चत्थिको भवेय्या" ति चिन्तेत्वा सुट्ठुतरं भायि । "किं वितक्केसि महाराजा" ति च पुट्ठो तमत्थं आरोचेसि । अथ नं गोविन्दो "मा भायि महाराज, नेसो कुमारो तुम्हाकं दुब्भिस्सति, सकलजम्बुदीपे पन तेन समो पञ्ञाय न भविस्सति, मम पुत्तस्स वचनेन महाजनस्स कङ्खा छिज्जिस्सति, तुम्हाकञ्च सब्बकिच्चानि अनुसासिस्सती" ति समस्सासेति । राजा तुट्ठो—"कुमारस्स खीरमूलं होतू" ति सहस्सं दत्वा "कुमारं महल्लककाले मम[१] दस्सेथा" ति आह । कुमारो अनुपुब्बेन वुड्ढिमनुप्पत्तो । जोतितत्ता पनस्स पालनसमत्थताय च जोतिपालोत्वेव नामं अकंसु । तेन वुत्तं—"जोतनतो च पालनतो च जोतिपालो" ति ।

सम्मा वोस्सज्जित्वा ति सम्मा वोस्सज्जित्वा । अयमेव वा पाठो । **अलमत्थदसतरो** ति समत्थो पटिबलो अत्थदसो अलमत्थदसो, तं अलमत्थदसं तिरेती[२] ति अलमत्थदसतरो । **जोतिपालस्सेव माणवस्स अनुसासनिया** ति सोपि जोतिपालंयेव पुच्छित्वा अनुसासती ति दस्सेति ।

१३. **भवमत्थु भवन्तं जोतिपालं** (दी० नि० १.१७३) ति भोतो जोतिपालस्स भवो वुद्धि विसेसाधिगमो सब्बकल्लाणञ्चेव मङ्गलञ्च होतू ति अत्थो । **सम्मोदनीयं कथं** ति ? "अलं, महाराज, मा चिन्तयि, धुवधम्मो एस सब्बसत्तानं" ति आदिना नयेन मरणप्पटिसंयुत्तं सोकविनोदनपटिसन्थारकथं परियोसापेत्वा । **मा नो भवं जोतिपालो अनुसासनिया पच्चब्याहासी** ति मा पटिब्याकासि, "अनुसासा" ति वुत्तो—"नाहं अनुसासामी" ति नो[३] मा अनुसासनिया पच्चक्खासी ति

5 10 15 20 B. 254 25 R. 661

१. मं—सी० । २. अतिसेती ति—सी० ।
३. एवं नो—सी०, स्या० ।

अत्थो । **अभिसम्भोसी** ति संविदहित्वा पट्ठपेसि । **मनुस्सा एवमाहंसू** ति तं पितरा महापञ्ञतरं सब्बकिच्चानि अनुसासन्तं सब्बकम्मे[1] अभिसम्भवन्तं दिस्वा तुट्ठचित्ता **गोविन्दो वत भो ब्राह्मणो, महागोविन्दो वत भो ब्राह्मणो** ति एवमाहंसु । इदं वुत्तं होति "गोविन्दो वत भो ब्राह्मणो अहोसि एतस्स पिता, अयं पन महागोविन्दो वत भो ब्राह्मणो" ति ।

६. रज्जसंविभजनवण्णना

१४. येन ते छ खत्तिया (दी० नि० २.१७४) ति ये ते "सहाया" ति वुत्ता छ खत्तिया, ते किर रेणुस्स एकपितिका कनिट्ठभातरो । तस्मा महागोविन्दो "अयं अभिसित्तो एतेसं रज्जसंविभागं करेय्य वा न वा, यन्नूनाहं ते पटिकच्चेव रेणुस्स सन्तिकं पेसेत्वा पटिञ्ञं गण्हापेय्यं" ति चिन्तेन्तो येन ते छ खत्तिया[2] तेनुपसङ्कमि । **राजकत्तारो** ति राजकारका अमच्चा ।

मदनीया कामा ति मदकरा पमादकरा कामा । **गच्छन्ते गच्छन्ते** काले एस अनुस्सरितुम्पि न सक्कुणेय्य, तस्मा आयन्तु भोन्तो आगच्छन्तू ति अत्थो ।

सरामहं भो ति तदा किर मनुस्सानं सच्चवादिकालो होति, तस्मा "कदा मया वुत्तं, केन दिट्ठं, केन सुतं" ति अभूतं अवत्वा "सरामहं भो" ति आह । **सम्मोदनीयं कथं** ति किं महाराज देवत्तं गते रञ्ञे मा चिन्तयित्थ, धुवधम्मो एस सब्बसत्तानं, एवंभाविनो सङ्खारा ति एवरूपं पटिसन्थारकथं । **सब्बानि सकटमुखानि पट्ठपेसी** ति सब्बानि छ रज्जानि सकटमुखानि पट्ठपेसि । एकेकस्स रञ्ञो रज्जं तियोजनसतं होति । रेणुस्स रञ्ञो रज्जोसरणपदेसो दसगावुतं, मज्झे पन रेणुस्स रज्जं वितानसदिसं अहोसि । कस्मा एवं पट्ठपेसी ति ? कालेन कालं राजानं पस्सितुं आगच्छन्ता अञ्ञस्स रज्जं अपीळेत्वा अत्तनो अत्तनो रज्जपदेसेनेव आगमिस्सन्ति चेव गमिस्सन्ति च । पररज्जं ओतिण्णस्स

[1] ० कम्मन्ते—सी०, स्या०, रो० । [2] खत्तियकुमारा—सी० ।

हि—"भत्तं देथ, गोणं देथा" ति वदतो मनुस्सा उज्झायन्ति—"इमे राजानो अत्तनो अत्तनो विजितेन न गच्छन्ति, अम्हाकं पीळं करोन्ती" ति। अत्तनो[1] विजितेन गच्छन्तस्स "अम्हाकं सन्तिका इमिना इदञ्चिदञ्च लद्धब्बमेवा" ति मनुस्सा पीळं न मञ्ञन्ति। इममत्थं चिन्तयित्वा महागोविन्दो "सम्मोदमाना राजानो चिरं रज्जमनुसासन्तू" ति एवं पट्ठपेसि। R. 662 5

"दन्तपुरं कलिङ्गानं, अस्सकानञ्च पोतनं,
माहिस्सति अवन्तीनं, सोवीरानञ्च रोदुकं।
मिथिला च विदेहानं, चम्पा अङ्गेसु मापिता,
बाराणसी च कासीनं, एते गोविन्दमापिता" ति॥ 10

एतानि सत्त नगरानि महागोविन्देनेव तेसं राजूनं अत्थाय मापितानि।

सत्तभू ब्रह्मदत्तो च, वेस्सभू भरतो सह।
रेणु द्वे च धतरट्ठा, तदासुं सत्त भारधा"[2] ति॥

इमानि तेसं सत्तन्नम्पि नामानि। तेसु हि एको सत्तभू नाम अहोसि, एको ब्रह्मदत्तो नाम, एको वेस्सभू नाम, एको तेनेव सह भरतो नाम, एको रेणु नाम, द्वे पन धतरट्ठा ति इमे सत्त जम्बुदीपतले भारधा महाराजानो अहेसुं ति। 15

७. कित्तिसद्दअब्भुग्गमनवण्णना

१९. उपसङ्कमिंसू (दी०नि० २.१७६) ति "अम्हाकं अयं इस्सरियसम्पत्ति न अञ्ञस्सानुभावेन, महागोविन्दस्सानुभावेन निप्फन्ना। महागोविन्दो अम्हे सत्त राजानो समग्गे कत्वा जम्बुदीपतले पतिट्ठापेसि। पुब्बूपकारिस्स पन न सुकरा पटिकिरिया कातुं। अम्हे सत्तपि जने एसो येव अनुसासतु, एतं येव सेनापतिञ्च पुरोहितञ्च करोम, एवं नो वुद्धि भविस्सती" ति चिन्तेत्वा उपसङ्कमिंसु। महागोविन्दोपि— B. 256 20

१. ० अत्तनो—सी०। २. भारता—सी०; भारधा—स्या०।

"मया एते समग्गा कता, सचे एतेसं अञ्ञो सेनापति पुरोहितो च भविस्सति,[1] ततो अत्तनो अत्तनो सेनापतिपुरोहितानं वचनं गहेत्वा अञ्ञमञ्ञं भिन्दिस्सन्ति,[2] अधिवासेमि नेसं सेनापतिट्ठानञ्च पुरोहितट्ठानञ्चा" ति चिन्तेत्वा "एवं भो" ति पच्चस्सोसि।

5 **सत्त च ब्राह्मणमहासाले** ति "अहं सब्बट्ठानेसु सम्मुखो भवेय्यं वा न वा, यत्थाहं सम्मुखो न भविस्सामि, तत्थेव ते कत्तब्बं करिस्सन्ती" ति सत्त अनुपुरोहिते ठपेसि। ते सन्धाय इदं वुत्तं— R. 663 "सत्त च ब्राह्मणमहासाले" ति। दिवसस्स द्विक्खत्तुं[3] वा सायं पातो वा नहायन्ती ति **नहातका**। वतचरियपरियोसाने वा नहाता, ततो 10 पट्ठाय ब्राह्मणेहि सद्धिं न खादन्ति न पिवन्ती ति नहातका।

अब्भुग्गच्छी ति अभिउग्गच्छि। तदा किर मनुस्सानं "न ब्रह्मुना सद्धिं अमन्तेत्वा सक्का एवं सकलजम्बुदीपं अनुसासितुं" ति निसिन्ननिसिन्नट्ठाने[4] अयमेव कथा पवत्तित्थ। **न खो पनाहं** ति महापुरिसो किर—"अयं मय्हं अभूतो वण्णो उप्पन्नो, वण्णुप्पत्ति खो 15 पन न भारिया, उप्पन्नस्स वण्णस्स रक्खनमेव भारियं, अयञ्च मे अचिन्तेत्वा अमन्तेत्वा करोन्तस्सेव वण्णो उप्पन्नोव, चिन्तेत्वा मन्तेत्वा करोन्तस्स पन वित्थारिकतरो भविस्सती" ति ब्रह्मदस्सने उपायं परियेसन्तो तं दिस्वा **सुतं खो पन मेतं** तिआदिअत्थं परिवितक्केसि।

B. 257 **येन रेणू राजा तेनुपसङ्कमी** ति एवं मे अन्तरा दट्ठुकामो वा 20 सल्लपितुकामो वा न भविस्सति, यतो[5] छिन्नपलिबोधो सुखं विहरिस्सामी ति पलिबोधुपच्छेदनत्थं उपसङ्कमि। एस नयो सब्बत्थ। **सादिसियो** ति समवण्णा समजातिका।

नवं सन्धागारं कारेत्वा ति रत्तिट्ठानदिवाट्ठानचङ्कमनसम्पन्नं वस्सिके चत्तारो मासे वसनक्खमं बहि नळपरिक्खित्तं विचित्तं आवसथं

1. भविस्सन्ति—सी०।
2. भिज्जिस्सन्ति—सी०।
3. तिक्खत्तुं—सी०, स्या०।
4. निपन्ननिसिन्नट्ठाने—सी०।
5. ततो—सी०, स्या०, रो०।

कारेत्वा। करुणं झानं झायी करुणाय तिकचतुक्कज्झानं झायि, करुणामुखेन पनेत्थ अवसेसापि तयो ब्रह्मविहारा गहिताव। उक्कण्ठना परितस्सना ति झानभूमियं ठितस्स अनभिरतिउक्कण्ठना वा भयपरितस्सना वा नत्थि, ब्रह्मुनो पन आगमनपत्थना आगमनतण्हा अहू ति अत्थो। 5

८. ब्रह्मुनासाकच्छावण्णना

२६. भयं ति चित्तत्रासभयमेव। अजानन्ता ति अजानमाना। कथं जानेमु तं मयं (दी० नि० २.१७९) ति मयं किन्ति तं[1] जानाम, अयं कत्थवासिको, किन्नामो, किं गोत्तो ति आदीनं आकारानं केन आकारेन तं धारयामा ति अत्थो।

मं वे कुमारं जानन्ती ति मं "कुमारो" ति "दहरो" ति 10 जानन्ति। ब्रह्मलोके ति सेट्ठलोके। सनन्तनं ति चिरन्तनं पोराणकं। R 664 अहं सो पोराणकुमारो सनङ्कुमारो नाम ब्रह्मा ति दस्सेति। एवं गोविन्द जानाही ति गोविन्दपण्डित, त्वं एवं जानाहि, एवं मं धारेहि।

"आसनं उदकं पज्जं, मधुसाकञ्च[2] ब्रह्मुनो।
अग्घे भवन्तं पुच्छाम, अग्घं कुरुतु नो भवं" ति॥ 15

एत्थ अग्घं ति अतिथिनो उपनामेतब्बं वुच्चति। तेनेव इदमासनं पञ्ञत्तं, एत्थ निसीदथ, इदं उदकं परिसुद्धं, इतो पानीयं पिवथ, पादे धोवथ, इदं पज्जं पादानं हितत्थाय अभिसङ्खतं तेलं, इतो पादे मक्खेथ, इदं मधुसाकं ति। बोधिसत्तस्स ब्रह्मचरियं न अञ्ञेसं ब्रह्मचरियसदिसं होति, न सो "इदं स्वे, इदं ततियदिवसे भविस्सती" ति सन्निधिं नाम 20 B. 258 करोति। मधुसाकं पन अलोणं अधूपनं अतक्कं उदकेन सेदितसाकं, तं सन्धायेस—"इदं[3] परिभुञ्जथा" ति वदन्तो "अग्घे भवन्तं पुच्छामा" तिआदिमाह। इमे सब्बेपि अग्घा ब्रह्मुनो अत्थि। ते अग्घे भवन्तं

१. तं कथं—सी०। २. मधुसाकञ्च—सी०; मधुसाकं च—स्या०, रो०।
३. ० गहेत्वा - सी०, स्या०।

पुच्छाम। एवं पुच्छन्तानञ्च अग्घं कुरुतु नो भवं, पटिग्गण्हातु नो[1] भवं इदमग्घं ति वुत्तं होति। किं पनेस—"इतो एकम्पि ब्रह्मा न भुञ्जती" ति इदं न जानाती ति। नो न जानाति, जानन्तोपि अत्तनो सन्तिके आगतो अतिथि पुच्छितब्बो ति वत्तसीसेन पुच्छति।

5 अथ खो ब्रह्मा—"किं नु खो, पण्डितो, मम परिभोगकरणाभावं ञत्वा पुच्छति, उदाहु कोहञ्ञे ठत्वा पुच्छती" ति समन्नाहरन्तो "वत्तसीसे ठितो पुच्छती" ति ञत्वा पटिग्गण्हितुं दानि मे वट्टती ति **पटिग्गण्हाम ते अग्घं, यं त्वं गोविन्द भासती** ति आह। यं त्वं गोविन्द भाससि—"इदमासनं पञ्ञत्तं, एत्थ निसीदथा" ति 10 आदि, तत्र ते मयं आसने निसिन्ना नाम होम, पानीयं पीता नाम होम, पादापि मे धोता नाम होन्तु, तेलेनपि मक्खिता नाम होन्तु, उदकसाकम्पि परिभुत्तं नाम होतु, तया दिन्नं अधिवासितकालतो पट्ठाय यं यं त्वं भाससि, तं तं मया पटिग्गहितमेव होति। तेन वुत्तं—"पटिग्गण्हाम ते अग्घं, यं त्वं गोविन्द भासती" ति। एवं पन 15 अग्घं पटिग्गण्हित्वा पञ्हस्स ओकासं करोन्तो **दिट्ठधम्महितत्थाया** तिआदिमाह।

R. 665 **कङ्खी अकङ्खिं परवेदियेसू** ति अहं सविचिकिच्छो भवन्तं परेन सयं अभिसङ्खतत्ता परस्स पाकटेसु परवेदियेसु पञ्हेसु निब्बिचिकिच्छं।

२८. **हित्वा ममत्तं** (दी० नि० २.१८०) ति इदं मम, इदं ममा 20 ति उपकरणतण्हं चजित्वा। **मनुजेसू** ति सत्तेसु, मनुजेसु यो कोचि मनुजो ममत्तं हित्वा ति अत्थो। **एकोदिभूतो** ति एकीभूतो, एको तिट्ठन्तो एको निसीदन्तो ति[2]। वचनत्थो पनेत्थ एको उदेति पवत्तती ति एकोदि, तादिसो भूतो ति एकोदिभूतो। **करुणेधिमुत्तो** ति करुणाझाने अधिमुत्तो, तं झानं निब्बत्तेत्वा ति अत्थो। **निरामगन्धो** ति 25 विस्सगन्धविरहितो। **एत्थ ठितो** ति एतेसु धम्मेसु ठितो। **एत्थ च**

१. सी० पोत्थके नत्थि। २. ० अत्थो—स्या०।

सिक्खमानो ति एतेसु धम्मेसु सिक्खमानो। अयमेत्थ सङ्खेपो, वित्थारो B 259
पन उपरि महागोविन्देन च ब्रह्मुना च वुत्तो येव।

तत्थ एते अविद्वा ति एते आमगन्धे अहं अविद्वा, न जानामी ति अत्थो। इध ब्रूहि धीरा ति तेन मे त्वं इध धीरपण्डित, ब्रूहि, वद। केनावटा वाति पजा कुरुतू ति कतमेन किलेसावरणेन आवरिता पजा 5 पूतिका वायति। आपायिका ति अपायूपगा। निवुतब्रह्मलोका ति निवुतो पिहितो ब्रह्मलोको अस्सा ति निवुतब्रह्मलोको। कतमेन किलेसेन पजाय ब्रह्मलोकूपगो मग्गो निवुतो पिहितो पटिच्छन्नो ति पुच्छति।

कोधो मोसवज्जं निकति च दुब्भो ति कुज्झनलक्खणो कोधो च, 10 परविसंवादनलक्खणो मुसावादो च, सदिसं दस्सेत्वा वञ्चनलक्खणा निकति च, मित्तदुब्भनलक्खणो दुब्भो च। कदरियता अतिमानो उसूया ति थद्धमच्छरियलक्खणा कदरियता च, अतिक्कमित्वा मञ्ञनलक्खणो अतिमानो च, परसम्पत्तिखीयनलक्खणा उसूया च। इच्छा विविच्छा परहेठना चा ति तण्हालक्खणा इच्छा च, मच्छरियलक्खणा विविच्छा 15 च, विहिंसालक्खणा परहेठना च। लोभो च दोसो च मदो च मोहो ति यत्थ कत्थचि लुब्भनलक्खणो लोभो च, दुस्सनलक्खणो दोसो च, मज्जनलक्खणो मदो च मुय्हनलक्खणो मोहो च। एतेसु युत्ता अनिरामगन्धा ति एतेसु चुद्दससु किलेसेसु युत्ता पजा निरामगन्धा न होति, आमगन्धा सकुणपगन्धा पूतिगन्धायेवा ति वदति। आपायिका 20 निवुतब्रह्मलोका ति एसा पन आपायिका चेव होति। पटिच्छन्नब्रह्मलोक- R. 666 मग्गा चाति[1]। इदं पन सुत्तं कथेन्तेन आमगन्धसुत्तेन दीपेत्वा कथेतब्बं, आमगन्धसुत्तम्पि इमिना दीपेत्वा कथेतब्बं।

ते न सुनिम्मदया ति ते आमगन्धा सुनिम्मदया सुखेन निम्म-देतब्बा पहातब्बा न होन्ति, दुप्पजहा दुज्जया ति[2] अत्थो। यस्स दानि 25 भवं गोविन्दो कालं मञ्ञती ति "यस्सा पब्बज्जाय भवं गोविन्दो

१. ० दस्सेति—सी०, स्या०, रो०। २. सी० पोत्थके नत्थि।

कालं मञ्ञति, अयमेव होतु, एवं सति मय्हम्पि तव सन्तिके आगमनं स्वागमनं भविस्सति, कथितधम्मकथा सुकथिता भविस्सति, त्वं तात सकलजम्बुदीपे अग्गपुरिसो दहरो पठमवये ठितो, एवं महन्तं नाम सम्पत्तिसिरिविलासं पहाय तव पब्बजनं नाम गन्धहत्थिनो अयसंबन्धनं छिन्दित्वा गमनं विय अतिउळारं, बुद्धतं ति नामेसा'' ति महापुरिसस्स दळ्हीकम्मं कत्वा ब्रह्मा सनङ्कुमारो ब्रह्मलोकमेव गतो।

B. 260

९. रेणुराजआमन्तनावण्णना

२९. महापुरिसोपि "मम इतोव निक्खमित्वा पब्बजनं नाम न युत्तं, अहं राजकुलस्स अत्थं अनुसासामि, तस्मा रञ्ञो आरोचेस्सामि। सचे सोपि पब्बजिस्सति, सुन्दरमेव। नो च पब्बजिस्सति, पुरोहितट्ठानं निय्यातेत्वा अहं पब्बजिस्सामी'' ति चिन्तेत्वा राजानं[१] उपसङ्कमि। तेन वुत्तं[१]—"अथ खो भो महागोविन्दो,...पे०...नाहं पोरोहिच्चे रमे'' ति।

तत्थ **त्वं पजानस्सु रज्जेना** (दी० नि० २.१८१) ति तव रज्जेन त्वमेव जानाहि[२]। **नाहं पोरोहिच्चे रमेति** अहं पुरोहितभावे न रमामि, उक्कण्ठितोस्मि, अञ्ञं अनुसासकं जानाहि, नाहं[३] पोरोहिच्चे रमेति[३]।

अथ राजा—"धुवं चत्तारो मासे पटिसल्लीनस्स ब्राह्मणस्स गेहे भोगा मन्दा जाता'' ति चिन्तेत्वा धनेन निमन्तेन्तो—"सचे ते ऊनं कामेहि, अहं परिपूरयामि ते'' ति वत्वा पुन—"किन्नु खो एस एकको विहरन्तो केनचि विहिंसितो भवेय्या'' ति चिन्तेत्वा।

"यो तं हिंसति वारेमि, भूमिसेनापति अहं।
तुवं[४] पिता[४] अहं पुत्तो, मा नो गोविन्द पाजही'' ति॥,

आह।

१. सी०, रो० पोत्थकेसु नत्थि।　२. पटिजानाहि—स्या०।
३-३. सी० पोत्थके नत्थि।　४-४. त्वं पितासि—सी०।

तस्सत्थो—यो तं हिंसति, तं वारेमि, केवलं तुम्हे "असुको" ति आचिक्खथ, अहमेत्थ कत्तब्बं जानिस्सामी ति। भूमिसेनापति अहं ति अथवा अहं पथविया सामी, स्वाहं इमं रज्जं तुम्हेयेव पटिच्छापेस्सामि। तुवं पिता अहं पुत्तो ति त्वं पितिट्ठाने ठस्ससि, अहं पुत्तट्ठाने। सो त्वं मम मनं हरित्वा अत्तनोयेव मनं[1] गोविन्द, पाजेहि; यथा इच्छसि तथा पवत्तस्सु[2]। अहं पन तव मनंयेव अनुवत्तन्तो तया दिन्नपिण्डं परिभुञ्जन्तो तं असिचम्महत्थो वा उपट्ठहिस्सामि, रथं वा ते पाजेस्सामि। "मा नो गोविन्द, पजही" ति वा पाठो। तस्सत्थो—त्वं पितिट्ठाने तिट्ठ, अहं पुत्तट्ठाने ठस्सामि। मा नो त्वं भो गोविन्द, पजहि, मा परिच्चजी ति। अथ महापुरिसो यं राजा चिन्तेसि, तस्स अत्तनि अभावं दस्सेन्तो—

R. 667 | 5 | B. 261 | 10

"न मत्थि ऊनं कामेहि, हिंसिता मे न विज्जति।
अमनुस्सवचो सुत्वा, तस्माहं न गहे रमे" ति ॥,

आह।

तत्थ न मत्थी ति न मे अत्थि। गहे ति गेहे। अथ नं राजा पुच्छि—

15

"अमनुस्सो कथं वण्णो, किं ते अत्थं अभासथ।
यञ्च सुत्वा जहासि नो, गेहे[3] अम्हे च केवली" ति ॥

तत्थ जहासि नो,गेहे अम्हे च केवली ति ब्राह्मणस्स सम्पत्तिभरिते गेहे सङ्गहवसेन अत्तनो गेहे करोन्तो यं सुत्वा अम्हाकं गेहे च अम्हे च केवली सब्बे अपरिसेसे जम्बुदीपवासिनो जहासी ति वदति।

20

अथस्स आचिक्खन्तो महापुरिसो उपवुत्थस्स मे पुब्बे तिआदिमाह। तत्थ उपवुत्थस्सा ति चत्तारो मासे एकीभावं उपगन्त्वा वुत्थस्स। यिट्ठकामस्स मे सतो ति यजितुकामस्स मे समानस्स। अग्गि पज्जलितो आसि, कुसपत्तपरित्थतो ति कुसपत्तेहि परित्थतो

25 R. 668

1. मा नो—सी०। 2. पवत्तय—सी०, स्या०।
3. 'सब्बे गेहे—सी०।

सप्पिदधिमधुआदीनि पक्खिपित्वा अग्गि जलयितुमारद्धो आसि, एवं अग्गि जालेत्वा "महाजनस्स दानं दस्सामी" ति एवं चिन्तेत्वा ठितस्स ममा ति अयमेत्थ अत्थो।

सनन्तनो ति सनङ्कुमारो ब्रह्मा। ततो राजा सयम्पि पब्बजितुकामो हुत्वा सद्दहामी तिआदिमाह। तत्थ **कथं वत्तेथ अञ्ञथा** ति कथं तुम्हे अञ्ञथा वत्तिस्सथ। ते तं अनुवत्तिस्सामा ति ते मयम्पि तुम्हेयेव अनुवत्तिस्साम, अनुपब्बजिस्सामा ति अत्थो। "अनुवजिस्सामा" तिपि पाठो, तस्स अनुगच्छिस्सामा ति अत्थो। **अकाचो** ति निक्काचो अकक्कसो। **गोविन्दस्सानुसासने** ति तव गोविन्दस्स सासने। भवन्तं गोविन्दमेव सत्थारं करित्वा चरिस्सामी ति वदति।

१०. छखत्तियआमन्तनावण्णना

३०. **येन ते छ खत्तिया तेनुपसङ्कमी** (दी० नि० २.१८२) ति रेणुं राजानं "साधु महाराज रज्जं नाम मातरं पितरं भातिभगिनीआदयोपि मारेत्वा गण्हन्तेसु सत्तेसु एवं महन्तं रज्जसिरिं पहाय पब्बजितुकामेन उळारं महाराजेन कतं" ति उपत्थम्भेत्वा दळ्हतरमस्स उस्साहं कत्वा उपसङ्कमि। **एवं समचिन्तेसुं** ति रञ्ञो[1] चिन्तितनयेनेव[2] कदाचि ब्राह्मणस्स भोगा परिहीना भवेय्युं ति मञ्ञमाना समचिन्तेसुं। **धनेन सिक्खेय्यामा** ति उपलापेय्याम सङ्गण्हेय्याम। **तावतकं आहरीयतं** ति तावतकं आहरापियतु गण्हियतु[3], यत्तकं इच्छथ, तत्तकं गण्हथा ति वुत्तं होति। **भवन्तानंयेव वाहसा** ति भवन्ते पच्चयं कत्वा, तुम्हेहि दिन्नत्तायेव पहूतं सापतेय्यं[4] जातं।

३१. **सचे जहथ कामानी** ति सचे वत्थुकामे च किलेसकामे च परिच्चजथ। **यत्थ सत्तो पुथुज्जनो** ति येसु कामेसु पुथुज्जनो सत्तो लग्गो लग्गितो। **आरम्भव्हो दळ्हा होथा** ति एवं सन्ते

१. रञ्ञा—सी०। २. चिन्तितनियामेनेव—सी०।
३. गण्हतु—सी०; गण्हापयतु—स्या०। ४. सी० पोत्थके नत्थि।

वीरियं आरभथ, असिथिलपरक्कमतं अधिट्ठाय दळ्हा भवथ। खन्तीबलसमाहिता ति खन्तिबलेन समन्नागता भवथा ति राजूनं उस्साहं जनेति।

एस मग्गो उजुमग्गो ति एस करुणाझानमग्गो उजुमग्गो नाम। एस मग्गो अनुत्तरो ति एसेव ब्रह्मलोकूपपत्तिया असदिसमग्गो उत्तममग्गो नाम। सद्धम्मो सब्भि रक्खितो ति एसो एव च बुद्धपच्चेकबुद्धसावकेहि सब्भिरक्खितधम्मो नाम। इति करुणाझानस्स वण्णभणनेनापि तेसं अनिवत्तनत्थाय दळ्हीकम्ममेव करोति। 5 R. 669

को नु खो पन भो जानाति जीवितानं ति भो जीवितं नाम उदकपुप्फुळूपमं तिणग्गे उस्सावबिन्दूपमं तङ्खणंविद्धंसनधम्मं, तस्स को गतिं जानाति, किस्मिं खणे भिज्जिस्सति? गमनीयो सम्परायो ति परलोको पन अवस्सं गन्तब्बोव। तत्थ पण्डितेन कुलपुत्तेन मन्तायं बोद्धब्बं[1]। मन्ता वुच्चति पञ्ञा, ताय मन्तेतब्बं बुज्झितब्बं, उपपरिक्खितब्बञ्च जानितब्बञ्चा ति अत्थो। करणत्थे वा भुम्मं। मन्तायं बोद्धब्बं ति मन्ताय बुज्झितब्बं, ञाणेन जानितब्बं ति अत्थो। किं बुज्झितब्बं? जीवितस्स दुज्जानता, सम्परायस्स च अवस्सं गमनीयता, बुज्झित्वा च पन सब्बपलिबोधे छिन्दित्वा कत्तब्बं कुसलं चरितब्बं ब्रह्मचरियं। कस्मा? यस्मा नत्थि जातस्स अमरणं। 10 15 B. 263

११. ब्राह्मणमहासालादीनं आमन्तनावण्णना

३२. अप्पेसक्खा च अप्पलाभा चा (दी० नि० २.१८४) ति भो पब्बज्जा नाम अप्पयसा चेव, पब्बजितकालतो पट्ठाय हि रज्जं पहाय पब्बजितं विहेठेत्वा विहेठेत्वा लामकं अनाथं कत्वाव कथेन्ति। अप्पलाभा च, सकलगामं चरित्वापि[2] अज्झोहरणीयं दुल्लभमेव। इदं पन ब्रह्मञ्ञं महेसक्खञ्च महायसत्ता, महालाभञ्च 20

१. बोधेतब्बं—स्या०। २. विचरित्वा पि—स्या०।

लाभसक्कारसम्पन्नत्ता । भवं हि एतरहि सकलजम्बुदीपे अग्गपुरोहितो सब्बत्थ अग्गासनं अग्गोदकं अग्गभत्तं अग्गगन्धं अग्गमालं लभती ति ।

राजाव रञ्ञं ति अहञ्हि भो एतरहि पकतिरञ्ञं मज्झे[1] चक्कवत्तिराजा विय । ब्रह्माव ब्रह्मानं ति पकतिब्रह्मानं मज्झे महाब्रह्मसदिसो । देवताव गहपतिकानं ति अवसेसगहपतिकानं पनम्हि सक्कदेवराजसदिसो ।

१२. भरियानं आमन्तनावण्णना

३३. चत्तारीसा भरिया सादिसियो (दी० नि० २.१८५) ति सादिसियोव चत्तारीसा भरिया, अञ्ञा पनस्स तीसु वयेसु नाटकित्थियो[2] बहुकायेव[2] ।

१३. महागोविन्दपब्बज्जावण्णना

३४. चारिकं चरती (दी० नि० २.१८६) ति गामनिगमपटिपाटिया चारिकं चरति, गतगतट्ठाने बुद्धकोलाहलं विय होति । मनुस्सा "महागोविन्दपण्डितो किर आगच्छती" ति सुत्वा पुरेतरमेव मण्डपं कारेत्वा मग्गं अलङ्करित्वा[3] पच्चुगन्त्वा गण्हित्वा एन्ति, महालाभसक्कारो महोघो विय अज्झोत्थरन्तो उप्पज्जि । सत्तपुरोहितस्सा ति सत्तन्नं राजूनं पुरोहितस्स । इति यथा एतरहि एवरूपेसु वा ठानेसु किस्मिञ्चिदेव दुक्खे उप्पन्ने "नमो बुद्धस्सा" ति वदन्ति, एवं तदा नमत्थु महागोविन्दस्स ब्राह्मणस्स, नमत्थु सत्तपुरोहितस्सा" ति वदन्ति ।

३५. मेत्तासहगतेना (दी. नि. २.१८६) ति आदिना नयेन पाळिय ब्रह्मविहाराव आगता । महापुरिसो पन सब्बापि अट्ठ समापत्तियो च पञ्च च अभिञ्ञायो निब्बत्तेसि । सावकानं च ब्रह्मलोकसहब्यताय मग्गं देसेसी ति ब्रह्मलोके ब्रह्मुना सहभावाय मग्गं कथेसि ।

१. सी० पोत्थके नत्थि । २-२. नाटकियो पहूता येव—सी० ।
३. अलंकारापेत्वा—सी०, स्या० ।

सब्बेनसब्बं ति ये अट्ठ च समापत्तियो पञ्च च अभिञ्ञायो निब्बत्तेसुं। ये न सब्बेनसब्बं सासनं आजानिंसू ति ये अट्ठसु समापत्तीसु एकसमापत्तिम्पि न जानिंसु, न सक्खिसु निब्बत्तेतुं। अमोघा ति सविपाका। अवञ्झा ति न वञ्झा। सब्बनिहीनं पसवन्ती ति गन्धब्बकायं[1] पसवि[1]। सफला ति अवसेसदेवलोकूपपत्तीहि सात्था। 5
सउद्रया ति ब्रह्मलोकूपपत्तिया सवुड्ढि[2]।

३७. सरामहं (दी० नि० २.१८७) ति सरामि अहं पञ्चसिख, इमिना किर पदेन अयं सुत्तन्तो बुद्धभासितो नाम जातो। न निब्बिदाया ति न वट्टे निब्बिन्दनत्थाय। न विरागाया ति न वट्टे विरागत्थाय। न निरोधाया ति न वट्टस्स निरोधत्थाय। न उपसमाया 10 ति न वट्टस्स उपसमनत्थाय। न अभिञ्ञाया ति न वट्टं अभिजाननत्थाय। न सम्बोधाया ति न किलेसनिद्दविगमेन वट्टतो पबुज्झनत्थाय। न निब्बानाया ति न अमतनिब्बानत्थाय[3]।

३७. एकन्तनिब्बिदाया (दी० नि० २.१८७) ति एकन्तमेव वट्टे निब्बिन्दनत्थाय। एत्थ पन निब्बिदाया ति विपस्सना। विरागाया 15 ति मग्गो। निरोधाय उपसमाया ति निब्बानं। अभिञ्ञाय सम्बोधाया ति मग्गो। निब्बानाया ति निब्बानमेव। एवं[4] एकस्मिं ठाने विपस्सना, तीसु मग्गो, तीसु निब्बानं वुत्तं ति एवं ववत्थानकथा वेदितब्बा। परियायेन पन सब्बानिपेतानि मग्गवेवचनानिपि निब्बान- R. 671 वेवचनानिपि होन्तियेव। सम्मादिट्ठिआदीसु यं वत्तब्बं, तं विसुद्धिमग्गे 20 सच्चवण्णनायं वुत्तमेव।

३८. ये न सब्बेनसब्बं ति ये चत्तारोपि अरियमग्गे परिपूरेतुं न जानन्ति, तीणि वा द्वे वा एकं वा निब्बत्तेन्ति। सब्बेसंयेव इमेसं कुलपुत्तानं ति ब्रह्मचरियचिण्णकुलपुत्तानं। अमोघा ...पे०...सफला सउद्रया ति अरहत्तनिकूटेन देसनं निट्ठापेसि। 25

१. हीनं गन्धब्बकायं पसविसु—सी०; सब्बनिहीनं पसवुं ति पाठो; गन्धब्बकायं पसविसु ति अत्थो—स्या०। २. सवड्ढिका—सी०, रो०। ३ अमतमहानिब्बानत्थाय—सी०, स्या०। ४. सी० पोत्थके नत्थि।

B 265 भगवन्तं अभिवादेत्वा पदक्खिणं कत्वा (दी० नि० २.१८८) ति भगवतो धम्मदेसनं चित्तेन सम्पटिच्छन्तो अभिनन्दित्वा वाचाय पसंसमानो अनुमोदित्वा महन्तं अञ्जलिं सिरस्मिं पतिट्ठपेत्वा पसन्न-लाखारसे निमुज्जमानो विय दसबलस्स छब्बण्णरस्मिजालन्तरं पविसित्वा
5 चतूसु ठानेसु वन्दित्वा तिक्खत्तुं पदक्खिणं कत्वा भगवन्तं अभित्थवन्तो अभित्थवन्तो सत्थु पुरतो अन्तरधायित्वा अत्तनो देवलोकमेव अगमासी ति।

इति सुमङ्गलविलासिनिया दीघनिकायट्ठकथायं
महागोविन्दसुत्तवण्णना निट्ठिता।

—०—

(७) महासमयसुत्तवण्णना

१. निदानवण्णना

१. एवं मे सुतं (दी० नि० २.१८९) ति महासमयसुत्तं। तत्रायमपुब्बपदवण्णना। सक्केसू ति अम्बट्ठसुत्ते वुत्तेन उप्पत्तिनयेन। "सक्या वत, भो कुमारा" ति उदानं पटिच्च सक्का ति लद्धनामानं राजकुमारानं निवासो एकोपि जनपदो रुळ्हीसद्देन "सक्का" ति वुच्चति, तस्मिं सक्केसु जनपदे[1]। महावने ति सयंजाते अरोपिते हिमवन्तेन सद्धिं एकाबद्धे महति वने। सब्बेहेव अरहन्तेही ति इमं सुत्तं कथितदिवसेयेव पत्तअरहत्तेहि। R. 672, B 266 5

तत्रायं अनुपुब्बकथा। साकियकोलिया किर कपिलवत्थुनगरस्स च कोलियनगरस्स च अन्तरे रोहिणिं नाम नदिं एकेनेव आवरणेन बन्धापेत्वा सस्सानि करोन्ति[2]। अथ जेट्ठमूलमासे सस्सेसु मिलायन्तेसु उभयनगरवासिकानम्पि कम्मकरा सन्निपतिंसु। तत्थ कोलियनगरवासिनो आहंसु—"इदं उदकं उभतो हरियमानं न तुम्हाकं न अम्हाकं पहोस्सति, अम्हाकं पन सस्सं एकेन उदकेनेव निप्फज्जिस्सति, इदं उदकं अम्हाकं देथा" ति। कपिलवत्थुनगरवासिनो आहंसु—"तुम्हेसु कोट्ठे पूरेत्वा ठितेसु मयं रत्तसुवण्णनीलमणिकाळकहापणे च गहेत्वा पच्छिपसिब्बकादिहत्था न सक्खिस्साम तुम्हाकं घरद्वारे विचरितुं। अम्हाकं पि सस्सं एकेनेव उदकेन निप्फज्जिस्सति, इदं उदकं अम्हाकं देथा" ति। न मयं दस्सामा" ति। "मयम्पि न दस्सामा" ति। एवं कलहं[3] वड्ढेत्वा एको उट्ठाय एकस्स पहारं अदासि, सोपि अञ्ञस्सा ति एवं अञ्ञमञ्ञं पहरित्वा राजकुलानं जातिं घट्टेत्वा कलहं वड्ढयिंसु। 10 15 R. 673 20

१. जनपदेसु—सी०, रो०। २. कारेन्ति—स्या०। ३. कथं—सी०, रो०।

कोलियकम्मकरा वदन्ति—"तुम्हे कपिलवत्थुवासिके गहेत्वा गज्जथ, ये सोणसिङ्गालादयो विय अत्तनो भगिनीहि सद्धिं संवसिंसु। एतेसं हत्थिनो च अस्सा च फलकावुधानि च अम्हाकं किं करिस्सन्ती" ति? साकियकम्मकरापि वदन्ति—"तुम्हे दानि कुट्ठिनो दारके गहेत्वा
5 गज्जथ, ये अनाथा निग्गतिका तिरच्छाना विय कोलरुक्खे वसिंसु। B. 267 एतेसं हत्थिनो च अस्सा च फलकावुधानि च अम्हाकं किं करिस्सन्ती" ति? ते गन्त्वा तस्मिं कम्मे नियुत्तअमच्चानं कथेसुं, अमच्चा राजकुलानं कथेसुं। ततो साकिया—"भगिनीहि सद्धिं संवासिकानं थामञ्च बलञ्च दस्सेस्सामा" ति युद्धसज्जा निक्खमिंसु। कोलियापि—"कोल-
10 रुक्खवासीनं थामञ्च बलञ्च दस्सेस्सामा" ति युद्धसज्जा निक्खमिंसु।

भगवा पि रत्तिया पच्चूससमयेव महाकरुणासमापत्तितो वुट्ठाय लोकं ओलोकेन्तो इमे एवं युद्धसज्जे निक्खमन्ते अद्दस। दिस्वा—"मयि गते अयं कलहो वूपसमिस्सति नु खो उदाहु नो" ति उपधारेन्तो—"अहमेत्थ गन्त्वा कलहवूपसमनत्थं तीणि जातकानि कथेस्सामि, ततो
15 कलहो वूपसमिस्सति। अथ सामग्गिदीपनत्थाय द्वे जातकानि कथेत्वा अत्तदण्डसुत्तं देसेस्सामि। देसनं सुत्वा उभयनगरवासिनोपि अड्ढतियानि अड्ढतियानि कुमारसतानि दस्सन्ति, अहं ते पब्बाजिस्सामि, तदा महासमागमो भविस्सती" ति सन्निट्ठानमकासि। तस्मा इमेसु युद्धसज्जेसु निक्खमन्तेसु कस्सचि अनारोचेत्वा सयमेव पत्तचीवरमादाय गन्त्वा द्विन्नं सेनानं
20 अन्तरे आकासे पल्लङ्कं आभुजित्वा छब्बण्णरस्मियो विस्सज्जेत्वा निसीदि। कपिलवत्थुवासिनो भगवन्तं दिस्वाव—"अम्हाकं ञातिसेट्ठो सत्था आगतो, दिट्ठो नु खो तेन अम्हाकं कलहकारणभावो" ति चिन्तेत्वा—"न खो पन सक्का भगवति आगते अम्हेहि परस्स सरीरे R. 674 सत्थं पातेतुं, कोलियनगरवासिनो अम्हे हनन्तु वा पचन्तु वा" ति
25 आवुधानि छड्डेत्वा भगवन्तं वन्दित्वा निसीदिंसु। कोलियनगरवासिनोपि तथेव चिन्तेत्वा आवुधानि छड्डेत्वा भगवन्तं वन्दित्वा निसीदिंसु।

भगवा जानन्तोव—"कस्मा आगतत्थ महाराजा" ति पुच्छि। भगवा, न तित्थकीळाय न पब्बतकीळाय न नदीकीळाय न गिरिदस्सनत्थं, इमस्मिं पन ठाने सङ्गामं पच्चुपट्ठपेत्वा आगतम्हा ति।

किं निस्साय वो कलहो महाराजा ति ? —

उदकं, भन्ते, ति ।

उदकं किं अग्घति महाराजा ति ?

अप्पग्घं[1], भन्ते, ति ।

पथवी नाम किं अग्घति महाराजा ति ? 5

अनग्घा, भन्ते, ति ।

खत्तिया किं अग्घं, ति महाराजा ति ?

खत्तिया नाम अनग्घा भन्ते ति ।

अप्पमूलकं उदकं निस्साय किमत्थं अनग्घे खत्तिये नासेथ, महाराजा, ति ? "कलहे अस्सादो नाम नत्थि, कलहवसेन महाराजा 10 अट्ठाने वेरं कत्वा एकाय रुक्खदेवताय काळसीहेन सद्धिं बद्धाघातो सकलम्पि इमं कप्पं अनुप्पत्तोयेवा" ति वत्वा फन्दनजातकं कथेसि । B. 268 ततो "परपत्तियेन नाम महाराजा न भवितब्बं । परपत्तिया हुत्वा हि एकस्स ससकस्स कथाय तियोजनसहस्सवित्थते हिमवन्ते चतुप्पदगणा महासमुद्दं पक्खन्दिनो अहेसुं । तस्मा परपत्तियेन न भवितब्बं" ति 15 वत्वा पथवीउन्द्रियजातकं कथेसि । ततो—"कदाचि, महाराजा, दुब्बलो पि महब्बलस्स रन्धं विवरं पस्सति, कदाचि महब्बलो दुब्बलस्स । लटुकिकापि हि सकुणिका हत्थिनागं घातेसी" ति वत्वा लटुकिकजातकं कथेसि । एवं कलहवूपसमत्थाय तीणि जातकानि कथेत्वा सामग्गिपरिदीपनत्थाय द्वे जातकानि कथेसि । कथं ? 20 समग्गानञ्हि महाराजा कोचि ओतारं नाम पस्सितुं न सक्कोती ति वत्वा रुक्खधम्मजातकं कथेसि । ततो "समग्गानं महाराजा कोचि विवरं पस्सितुं नासक्खि । यदा पन अञ्ञमञ्ञं विवादमकंसु, अथ ते नेसादपुत्तो जीविता वोरोपेत्वा आदाय गतो । विवादे अस्सादो नाम नत्थी" ति वत्वा वट्टकजातकं कथेसि । एवं इमानि पञ्च जातकानि 25 कथेत्वा अवसाने अत्तदण्डसुत्तं कथेसि ।

१. अप्पं—रो० ।

R. 675 राजानो पसन्ना—"सचे सत्था नागमिस्स, मयं सहत्था अञ्ञमञ्ञंयेव वधित्वा लोहितनदिं पवत्तयिस्साम, अम्हाकं पुत्तभातरो[1] गेहद्वारे न पस्सेय्याम, सासनपटिसासनम्पि नो आहरणको न भविस्सति। सत्थारं निस्साय नो जीवितं लद्धं। सचे पन सत्था अगारं अज्झा-
5 वसिस्स, द्विसहस्सदीपपरिवारेसु चतूसु महादीपेसु रज्जमस्स हत्थगतं अभविस्स, अतिरेकसहस्सं खो पनस्स पुत्ता अभविस्संसु, ततो खत्तिय-परिवारोव अविचरिस्स[2]। तं खो पनेस सम्पत्तिं पहाय निक्खमित्वा सम्बोधिं पत्तो, इदानिपि खत्तियपरिवारोयेव विचरतू" ति उभयनगर-वासिनो अड्ढतियानि अड्ढतियानि कुमारसतानि अदंसु। भगवा ते
10 पब्बाजेत्वा महावनं अगमासि। तेसं गरुगारववसेन[3] न अत्तनो रुचिया पब्बजितानं अनभिरति उप्पज्जि। पुराणदुतियकायोपि नेसं अय्यपुत्ता उक्कण्ठन्तु, घरावासो न सण्ठाती'' ति आदीनि वत्वा सासनं पेसेन्ति। ते अतिरेकतरं उक्कण्ठिंसु।

भगवा आवज्जन्तो तेसं अनभिरतभावं ञत्वा इमे भिक्खू मादिसेन
15 बुद्धेन सद्धिं एकतो वसन्ता उक्कण्ठन्ति, हन्द नेसं कुणालदहस्स वण्णं
B. 269 कथेत्वा तत्थ नेत्वा अनभिरतिं विनोदेस्सामी"[4] ति कुणालदहस्स वण्णं कथेसि। ते तं दट्ठुकामा अहेसुं। दट्ठुकामत्थ, भिक्खवे, कुणालदहं ति? आम भगवा ति। यदि एवं, एथ, गच्छामा ति। इद्धिमन्तानं भगवा गमनट्ठानं मयं कथं गमिस्सामा ति? तुम्हे गन्तुकामा होथ,
20 अहं ममानुभावेन गहेत्वा गमिस्सामी ति। साधु, भन्ते ति। अथ भगवा पञ्च भिक्खुसतानि गहेत्वा आकासे उप्पतित्वा कुणालदहे पतिट्ठाय ते भिक्खू आह—"भिक्खवे, इमस्मिं कुणालदहे येसं मच्छानं नामं न जानाथ, तेसं[5] नामं[5] पुच्छथा" ति।

ते पुच्छिंसु। भगवा पुच्छितपुच्छितं कथेसि। न केवलं मच्छानंयेव,
25 तस्मिं वनसण्डे रुक्खानं पि पब्बतपादे द्विपदचतुप्पदसकुणानम्पि नामानि

१. पुत्तधीतरो—सी०, रो०।
२. अचरिस्सथ—सी० रो०; अचरिस्स—स्या०।
३. गरुगारवेन—स्या०, रो०।
४. विनोदेमी ति—सी०, स्या०, रो०।
५-५. सी०, स्या०, रो० पोत्थकेसु नत्थि।

पुच्छापेत्वा कथेसि। अथ द्वीहि सकुणेहि मुखतुण्डकेन डंसित्वा गहितदण्डके निसिन्नो कुणालसकुणराजा पुरतो पच्छतो उभोसु पस्सेसु सकुणसंघपरिवुतो आगच्छति। भिक्खू तं दिस्वा—"एस, भन्ते, इमेसं सकुनानं राजा भविस्सति, परिवारा एते एतस्सा" ति मञ्ञामा ति। R. 676 एवमेव, भिक्खवे, अयम्पि मम वंसो मम पवेणी ति। इदानि तावा मयं, 5 भन्ते, एते सकुणे पस्साम। यं पन भगवा "अयम्पि मम वंसो मम पवेणी" ति आह, तं सोतुकामम्हा ति। सोतुकामत्थ भिक्खवे ति? आम, भगवा ति। तेन हि सुणाथा ति तीहि गाथासतेहि मण्डेत्वा कुणालजातकं कथेन्तो अनभिरतिं विनोदेसि। देसनापरियोसाने सब्बेपि सोतापत्तिफले पतिट्ठहिंसु, मग्गेनेव च नेसं इद्धिपि आगता। 10 भगवा—"होतु ताव एत्तकं एतेसं भिक्खूनं" ति आकासे उप्पतित्वा महावनमेव अगमासि। तेपि भिक्खू गमनकाले दसबलस्स आनुभावेन गन्त्वा आगमनकाले अत्तनो आनुभावेन भगवन्तं परिवारेत्वा महावने ओतरिंसु।

भगवा पञ्ञत्तासने निसीदित्वा ते भिक्खू आमन्तेत्वा—"एथ, 15 भिक्खवे, निसीदथ, उपरिमग्गत्तयवज्झानं वो किलेसानं पहानाय[1] कम्मट्ठानं कथेस्सामी" ति कम्मट्ठानं कथेसि। भिक्खू चिन्तेसुं—भगवा अम्हाकं अनभिरतभावं ञत्वा कुणालदहं नेत्वा अनभिरतिं विनोदेसि। तत्थ सोतापत्तिफलप्पत्तानं नो इदानि इध तिण्णं मग्गानं कम्मट्ठानं अदासि। न खो पनम्हेहि 'सोतापन्ना मयं' ति वीतिनामेतुं वट्टति, 20 उत्तमपुरिससदिसेहि नो भवितुं वट्टती" ति ते दसबलस्स पादे वन्दित्वा उट्ठाय निसीदनं पप्फोटेत्वा विसुं विसुं पब्भाररुक्खमूलेसु निसीदिंसु।

भगवा चिन्तेसि—"इमे भिक्खू पकतियापि अविस्सट्ठकम्मट्ठाना[2], B. 270 लद्धुपायस्स पन भिक्खुनो किलमनकारणं नाम नत्थि। गच्छन्ता गच्छन्ता च विपस्सनं वड्ढेत्वा[3] अरहत्तं पत्वा—"अत्तना अत्तना 25

१. रो० पोत्थके नत्थि। २. अविसट्ठकम्मन्ता—सी०, स्या०, रो०।
३. पट्ठपेत्वा—सी०, स्या०, रो०।

पटिलद्धगुणं आरोचेस्सामा' ति मम सन्तिकं आगमिस्सन्ति । एतेसु आगतेसु दससहस्सचक्कवाळे देवता एकचक्कवाळे सन्निपतिस्सन्ति, महासमयो भविस्सति, विवित्ते ओकासे मया निसीदितुं वट्टती'' ति । ततो विवित्ते ओकासे बुद्धासनं पञ्ञपेत्वा निसीदि ।

5 सब्बपठमं कम्मट्ठानं गहेत्वा गतथेरो सह पटिसम्भिदाहि अरहत्तं पापुणि । ततो अपरो ततो अपरो ति पञ्चसतापि पदुमिनियं पदुमानि R. 677 विय विकसिंसु । सब्बपठमं अरहत्तप्पत्तभिक्खु—''भगवतो आरोचेस्सामी'' ति पल्लङ्कं विनिब्भुजित्वा निसीदनं पप्फोटेत्वा उट्ठाय दसबलाभिमुखो अहोसि । एवं अपरो पि अपरोपी ति पञ्चसतापि भत्तसालं पविसन्ता विय 10 पटिपाटियाव आगमंसु । पठमं आगतो वन्दित्वा निसीदनं पञ्ञपेत्वा एकमन्तं निसीदित्वा पटिलद्धगुणं आरोचेतुकामो —'' अत्थि नु खो अञ्ञो कोचि, नत्थी'' ति निवत्तित्वा आगमनमग्गं ओलोकेन्तो अपरम्पि अद्दस अपरम्पि अद्दस । इति सब्बेपि ते आगन्त्वा एकमन्तं निसीदित्वा अयं इमस्स हरायमानो न कथेसि, अयं इमस्स हरायमानो न कथेसी 15 ति । खीणासवानं किर द्वे आकारा होन्ति—''अहो वत मया पटिलद्धगुणं सदेवको लोको खिप्पमेव पटिविज्जेय्या'' ति चित्तं उप्पज्जति । पटिलद्ध-भावं पन निधिलद्धपुरिसो विय न अञ्ञस्स आरोचेतुकामो होति ।

एवं ओसीदमत्ते[1] पन तस्मिं अरियमण्डले पाचीनयुगन्धरपरिक्खेपतो अब्भा[2], महिका[3], धूमो, रजो, राहू ति इमेहि उपक्किलेसेहि[4] विप्पमुत्तं 20 बुद्धुप्पादपटिमण्डितस्स लोकस्स रामणेय्यकदस्सनत्थं पाचीनदिसाय उक्खित्तरजतमयमहाआदासमण्डलं[4] विय, नेमिवट्टियं गहेत्वा परिवत्तिय-मानरजतचक्कसस्सिरिकं पुण्णचन्दमण्डलं उल्लङ्घित्वा अनिलपथं पटि-पज्जित्थ । इति एवरूपे खणे लये मुहुत्ते भगवा सक्केसु विहरति कपिल-वत्थुस्मिं महावने महता भिक्खुसंघेन सद्धिं पञ्चमत्तेहि भिक्खुसतेहि 25 सब्बेहेव अरहन्तेहि ।

१. ओसटमत्ते—सी०, स्या०, रो० । २. अब्भो—सी० ।
३. महिया—स्या०, रो० । ४-४. सी० पोत्थके नत्थि ।

तत्थ भगवापि महासम्मतस्स वंसे उप्पन्नो, तेपि पञ्चसता भिक्खू महासम्मतस्स कुले उप्पन्ना। भगवावि खत्तियगब्भे जातो, तेपि खत्तियगब्भे जाता। भगवापि राजपब्बजितो, तेपि राजपब्बजिता। भगवापि सेतच्छत्तं पहाय हत्थगतं चक्कवत्तिरज्जं निस्सज्जेत्वा पब्बजितो, तेपि सेतच्छत्तं पहाय हत्थगतानि रज्जानि निस्सज्जेत्वा पब्बजिता। इति भगवा परिसुद्धे ओकासे परिसुद्धे रत्तिभागे सयं परिसुद्धो परिसुद्धपरिवारो वीतरागो वीतरागपरिवारो वीतदोसो वीतदोसपरिवारो वीतमोहो वीतमोहपरिवारो नित्तण्हो नित्तण्हपरिवारो निक्किलेसो निक्किलेसपरिवारो सन्तो सन्तपरिवारो दन्तो दन्तपरिवारो मुत्तो मुत्तपरिवारो अतिविय विरोचती ति। वण्णभूमि नामेसा, यत्तकं सक्कोति, तत्तकं वत्तब्बं। इति इमे भिक्खू सन्धाय वुत्तं—"पञ्चमत्तेहि भिक्खुसतेहि सब्बेहेव अरहन्तेही" ति।

B. 271 · 5 · 10 R. 678

येभुय्येना ति बहुतरा सन्निपतिता, मन्दा न सन्निपतिता असञ्ञा अरूपावचरदेवता समापन्नदेवता च[1]। तत्रायं सन्निपातक्कमो महावनस्स किर सामन्ता देवता चलिंसु—"आयाम, भो बुद्धदस्सनं नाम बहूपकारं, धम्मस्सवनं बहूपकारं, भिक्खुसंघदस्सनं बहूपकारं, आयाम आयामा" ति महासद्दं कुरुमाना आगन्त्वा भगवन्तं च तंमुहुत्तं अरहत्तप्पत्तखीणासवे च वन्दित्वा एकमन्तं अट्ठंसु। एतेनेव उपायेन तासं तासं सद्दं सुत्वा सद्दन्तरअड्ढगावुतगावुतअड्ढयोजनयोजनादिवसेन तियोजनसहस्सवित्थते हिमवन्ते, तिक्खत्तुं तेसट्ठिया नगरसहस्सेसु, नवनवुतिया दोणमुखसतसहस्सेसु, छन्नवुतिया पट्टनकोटिसतसहस्सेसु, छपण्णासाय रतनाकरेसू ति सकलजम्बुदीपे, पुब्बविदेहे, अपरगोयाने, उत्तरकुरुम्हि, द्वीसु परित्तदीपसहस्सेसू ति सकलचक्कवाळे, ततो दुतियततियचक्कवाळे ति एवं दससहस्सचक्कवाळेसु देवता सन्निपतिता ति वेदितब्बा। दससहस्सचक्कवाळञ्हि इध दसलोकधातुयो ति अधिप्पेता। तेन वुत्तं—"दसहि च लोकधातूहि देवता येभुय्येन सन्निपतिता होन्ती" ति।

15 · 20 · 25

१. च ठपेत्वा— स्या०।

एवं सन्निपतिताहि देवताहि सकलचक्कवाळगब्भं याव ब्रह्मलोका सूचिघरे निरन्तरं पक्खित्तसूचीहि विय परिपुण्णं होति । तत्र ब्रह्मलोकस्स एवं[1] उच्चत्तनं[1] वेदितब्बं । लोहपासादे किर सत्तकूटागारसमो पासाणो ब्रह्मलोके ठत्वा अधो खित्तो चतूहि मासेहि पथविं पापुणाति । एवं महन्ते ओकासे यथा हेट्ठा ठत्वा खित्तानि पुप्फानि वा धूमो वा उपरि गन्तुं, उपरि वा ठत्वा खित्तसासपा हेट्ठा ओतरितुं अन्तरं न लभन्ति, एवं निरन्तरं देवता अहेसुं । यथा खो पन चक्कवत्तिरञ्ञो निसिन्नट्ठानं असम्बाधं होति, आगतागता महेसक्खा खत्तिया ओकासं लभन्तियेव, परतो परतो[2] पन अतिसम्बाधं होति, एवमेव भगवतो निसिन्नट्ठानं असम्बाधं, आगतागता महेसक्खा देवता च महाब्रह्मानो च ओकासं लभन्तियेव । अपिसुदं भगवतो आसन्नासन्नट्ठाने महापरिनिब्बाने वुत्तनयेनेव वालग्गकोटिनितुदनमत्ते[3] पदेसे दसपि वीसम्पि सब्बपरतो तिंसम्पि देवता सुखुमे सुखुमे अत्तभावे मापेत्वा अट्ठंसु । सट्ठि सट्ठि देवता अट्ठंसु ।

२. **सुद्धावासकायिकानं** ति सुद्धावासवासीनं । सुद्धावासा नाम सुद्धानं अनागामिखीणासवानं आवासा पञ्च ब्रह्मलोका । एतदहोसी ति कस्मा अहोसि ? ते किर ब्रह्मानो समापत्तिं समापज्जित्वा यथापरिच्छेदेन वुट्ठिता ब्रह्मभवनं ओलोकेन्ता पच्छाभत्ते भत्तगेहं विय सुञ्ञतं अद्दसंसु । ततो "कुहिं ब्रह्मानो गता" ति आवज्जन्ता महासमागमं ञत्वा—"अयं समागमो महा, मयं ओहीना, ओहीनकानं ओकासो दुल्लभो होति, तस्मा गच्छन्ता अतुच्छहत्था हुत्वा एकेकं गाथं अभिसङ्खरित्वा गच्छाम । ताय महासमागमे च अत्तनो आगतभावं जानापेस्साम, दसबलस्स च वण्णं भासिस्सामा" ति । इति तेसं समापत्तितो वुट्ठाय आवज्जितत्ता एतदहोसि ।

१-१. ० लेसेहि विप्पमुत्तं बुद्धुप्पादपटिमण्डितस्स लोकस्स रामणेय्यकदस्सनत्थं पाचीनदिसाय उक्खितरजतमया महा-आदास—सी० पोत्थके अधिको पाठो ।
२. पुरतो पुरतो—सी०, रो० ।
३. वालग्गनितुदनमत्ते—सी०, रो० ।

भगवतो पुरतो पातुरहेसुं ति पाळियं भगवतो सन्तिके अभिमुखट्ठानेयेव ओतिण्णा विय कत्वा वुत्ता। न खो पनेत्थ एवं अत्थो वेदितब्बो। ते पन ब्रह्मलोके ठितायेव गाथा अभिसङ्खरित्वा एको पुरत्थिमचक्कवाळमुखवट्टियं ओतरि, एको दक्खिणचक्कवाळमुखवट्टियं, एको पच्छिमचक्कवाळमुखवट्टियं, एको उत्तरचक्कवाळमुखवट्टियं ओतरि। ततो पुरत्थिमचक्कवाळमुखवट्टियं ओतिण्णब्रह्मा नीलकसिणं समापज्जित्वा नीलरस्मियो विस्सज्जित्वा दससहस्सचक्कवाळदेवतानं मणिचम्मं पटिमुञ्चन्तो विय अत्तनो आगतभावं जानापेत्वा बुद्धवीथि नाम केनचि ओत्थरितुं[1] न सक्का, तस्मा पहटवुद्धवीथियाव[2] आगन्त्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं अट्ठासि। एकमन्तं ठितो अत्तना अभिसङ्खतं गाथं अभासि।

5 B. 273 10

दक्खिणचक्कवाळमुखवट्टियं ओतिण्णब्रह्मापि पीतकसिणं समापज्जित्वा पीतरस्मियो[3] सुवण्णपभं[4] मुञ्चित्वा दससहस्सचक्कवाळदेवतानं[5] सुवण्णपटं पारुपेन्तो विय अत्तनो आगतभावं जानापेत्वा तथेव अट्ठासि[6]। पच्छिमचक्कवाळमुखवट्टियं ओतिण्णब्रह्मा पि[7] लोहितकसिणं समापज्जित्वा लोहितरस्मियो मुञ्चित्वा दससहस्सचक्कवाळदेवतानं रत्तवरकम्बलेन परिक्खिपन्तो विय अत्तनो आगतभावं जानापेत्वा तथेव अट्ठासि। उत्तरचक्कवाळमुखवट्टियं ओतिण्णब्रह्मा पि ओदातकसिणं समापज्जित्वा ओदातरस्मियो मुञ्चित्वा दससहस्सचक्कवाळदेवतानं सुमनपटं पारुपन्तो विय अत्तनो आगतभावं जानापेत्वा तथेव अट्ठासि।

15 R. 680 20

पाळियं पन "भगवतो पुरतो पातुरहेसुं[8]। अथ खो ता देवता भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं अट्ठंसू" ति एवं एकक्खणं[9] विय पुरतो

१. ओतरितं—स्या०, रो०। २. महतिया बुद्धवीथिया व—सी०। ३. सी०, स्या०, रो० पोत्थकेसु नत्थि। ४. सुवण्णपभारस्मियो—स्या०। ५. ० देवता—रो०। ६. अकासि—सी०, रो०। ७. स्या०, रो० पोत्थकेसु नत्थि। ८. पातुरहंसु—सी०, स्या०, रो०। ९. ० खणे-सी०, स्या०।

पातुभावो च अभिवादेत्वा एकमन्तं ठितभावो च वुत्तो। सो इमिना अनुक्कमेन अहोसि, एकतो कत्वा पन दस्सितो। ताथाभासनं पन पाळियं[1] विसुं विसुंयेव वुत्तं।

तत्थ **महासमयो** ति महासमूहो। **पवनं** वुच्चति वनसण्डो।
5 उभयेनपि भगवा इमस्मिं वनसण्डे अज्ज महासमूहो महासन्निपातो[2] ति आह। ततो येसं[3] सो सन्निपातो, ते दस्सेतुं **देवकाया समागता** ति आह। तत्थ **देवकाया** ति देवघटा। **आगतम्ह इमं धम्मसमयं** ति एवं समागते देवकाये दिस्वा मयम्पि इमं धम्मसमूहं आगता। किं कारणा? **दक्खिताये अपराजितसंघं**, केनचि अपराजितं अज्जेव
10 तयो मारे मद्दित्वा विजितसङ्गामं इमं अपराजितसंघं दस्सनत्थाय आगतम्हा ति अत्थो। सो पन ब्रह्मा इमं गाथं भासित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा पुरत्थिमचक्कवाळसुखवट्टियंयेव अट्ठासि।

अथ दुतियो वुत्तनयेनेव आगन्त्वा अभासि। तत्थ **तत्र भिक्खवो** ति तस्मिं सन्निपातट्ठाने भिक्खू। **समादहंसू** ति समाधिना योजेसुं।
15 **चित्तमत्तनो उजुकं अकंसू** ति अत्तनो चित्तं सब्बे वङ्ककुटिल-
B. 274 जिम्हभावे हरित्वा उजुकं अकरिंसु। **सारथीव नेत्तानि गहेत्वा** ति यथा समप्पवत्तेसु[4] सिन्धवेसु ओधस्तपतोदो[5] सारथि सब्बयोत्तानि गहेत्वा अचोदेन्तो अवारेन्तो तिट्ठति, एवं छळङ्गुपेक्खासमन्नागता गुत्तद्वारा सब्बेपेते पञ्चसता भिक्खू इन्द्रियानि रक्खन्ति पण्डिता, एते
20 दट्ठुं इधागतम्ह भगवा ति। सोपि गन्त्वा यथाठानेयेव अट्ठासि।

R. 681 अथ ततियो वुत्तनयेनेव आगन्त्वा अभासि। तत्थ **छेत्वा खीलं** ति रागदोसमोहखीलं छिन्दित्वा। **पलिघं** ति रागदोसमोहपलिघमेव। **इन्दखीलं** ति पि रागदोसमोहइन्दखीलमेव। **ऊहच्च मनेजा** ति एते तण्हाएजाय अभावेन अनेजा भिक्खू इन्दखीलं ऊहच्च समूहनित्वा।

१. पालियं पि—सी०; पालियं हि—रो०। २. सन्निपतितो ति—सी०, रो०।
३. सेसं—रो०। ४. सम्मापवत्तेसु—सी०, रो०।
५. ओभट्टपतोदो—रो०।

ते चरन्ती ति चतूसु दिसासु अप्पटिहतचारिकं चरन्ति। **सुद्धा** ति निरुपक्किलेसा। **विमला** ति निम्मला। इदं तस्सेव वेवचनं। **चक्खुमता** ति पञ्चहि चक्खूहि चक्खुमन्तेन[1]। **सुदन्ता** ति चक्खुतोपि दन्ता, सोततोपि घानतोपि जिव्हातोपि कायतोपि मनतोपि दन्ता। **सुसुनागा** ति तरुणनागा। ते एवरूपेन अनुत्तरेन योगाचरियेन दमिते 5 तरुणनागे दस्सनाय आगतम्ह भगवा ति। सोपि गन्त्वा यथाठानेयेव अट्ठासि।

अथ चतुत्थो वुत्तनयेनेव आगन्त्वा अभासि। तत्थ **गतासे** ति निब्बेमतिकसरणगमनेन गता। सोपि गन्त्वा यथाठानेयेव अट्ठासि।

२. देवतासन्निपातवण्णना

३. अथ भगवा ओलोकेन्तो पथवीतलतो याव[2] चक्कवाळमुख- 10 वट्टिपरिच्छेदा[3] यावअकनिट्ठब्रह्मलोका देवतासन्निपातं दिस्वा चिन्तेसि—"महा अयं देवतासमागमो, भिक्खु पन एवं महा देवताय समागमो ति न जानन्ति, हन्द, नेसं आचिक्खामी" ति, एवं चिन्तेत्वा "अथ खो भगवा भिक्खू आमन्तेसी" ति सब्बं वित्थारेतब्बं। तत्थ **एतपरमा** ति एतं परमं पमाणं एतेसं ति एतपरमा। इदानि बुद्धानं 15 पन अभावा "येपि ते, भिक्खवे, एतरही" ति ततियो वारो न वुत्तो। **आचिक्खिस्सामि भिक्खवे** ति कस्मा आह? देवतानं चित्तकल्लता- जननत्थं। देवता किर चिन्तेसुं—"भगवा एवं महन्ते समागमे महेसक्खानंयेव देवतानं नामगोत्तानि कथेस्सति, अप्पेसक्खानं किं कथेस्सती" ति? अथ भगवा "इमा देवता किं चिन्तेन्ती" ति 20 B. 275 आवज्जन्तो मुखेन हत्थं पवेसेत्वा हदयमंसं मद्दन्तो विय सभण्डं चोरं गण्हन्तो विय च तं तासं चित्ताचारं ञत्वा—"दससहस्सचक्क- वाळतो आगतागतानं अप्पेसक्खमहेसक्खानं सब्बासम्पि देवतानं नामगोत्तं कथेस्सामी" ति चिन्तेसि।

१. चक्खुमन्तो—सी०। २. पट्ठाय—सी०, रो०।
३. ० च्छेदेन—सी०।

R 682 बुद्धा नाम महन्ता एते सत्तविसेसा, यं सदेवकस्स लोकस्स दिट्ठं सुतं मुतं विञ्ञातं पत्तं परियेसितं अनुविचरितं मनसा, न किञ्चि कत्थचि नीलादिवसेन विभत्तरूपारम्मणेसु रूपारम्मणं वा भेरिसद्दादिवसेन विभत्तसद्दारम्मणादीसु विसुं विसुं सद्दादिआरम्मणं वा अत्थि, यं एतेसं 5 ञाणमुखे आपाथं नागच्छति। यथाह—

"यं भिक्खवे सदेवकस्स लोकस्स...पे०...सदेवमनुस्साय दिट्ठं सुतं मुतं विञ्ञातं पत्तं परियेसितं अनुविचरितं मनसा, तमहं जानामि, तमहं पस्सामि, तमहं अब्भञ्ञासिं" (अं० नि० २.२७) ति।

एवं सब्बत्थ अप्पटिहतञाणो भगवा सब्बापि ता देवता भब्बाभब्ब-10 वसेन द्वे कोट्ठासे अकासि। "कम्मावरणेन[1] वा समन्नागता" ति आदिना नयेन वुत्ता सत्ता अभब्बा नाम। ते एकविहारे वसन्तेपि बुद्धा न ओलोकेन्ति। विपरीता पन भब्बा नाम, ते दूरे वसन्तेपि गन्त्वा सङ्गण्हन्ति। तस्मा तस्मिम्पि देवतासन्निपाते ये अभब्बा, ते पहाय भब्बे परिग्गहेसि। परिग्गहेत्वा—"एत्तका एत्थ रागचरिता, एत्तका 15 दोसचरिता, एत्तका[2] मोहचरिता"[2] ति चरितवसेन छ कोट्ठासे अकासि। अथ नेसं सप्पायं धम्मदेसनं उपधारयन्तो—"रागचरितानं देवतानं सम्मापरिब्बाजनियसुत्तं कथेस्सामि, दोसचरितानं कलहविवादसुत्तं, मोहचरितानं महाब्यूहसुत्तं, वितक्कचरितानं चूळब्यूहसुत्तं, सद्धाचरितानं तुवट्टकपटिपदं, बुद्धिचरितानं पुराभेदसुत्तं कथेस्सामी" ति देसनं 20 ववत्थपेत्वा पुन तं परिसं मनसाकासि—"अत्तज्झासयेन[3] नु खो जानेय्य, परज्झासयेन अत्थुप्पत्तिकेन पुच्छावसेना" ति।

ततो "पुच्छावसेन जानेय्या" ति ञत्वा "अत्थि नु खो कोचि देवतानं अज्झासयं गहेत्वा चरितवसेन[4] पञ्हं पुच्छितुं समत्थो" ति "तेसु पञ्चसतेसु भिक्खूसु एकोपि न सक्कोती" ति अद्दस। ततो B. 276 25 असीतिमहासावके द्वे अग्गसावके च समन्नाहरित्वा "तेपि न सक्कोन्ती"

१. ये कम्मावरणेन—सी०, स्या०। २-२. सी०, स्या० पोत्थकेसु नत्थि।
३. अत्थज्झासयेन–सी०। ४. चरियावसेन—रो०।

ति दिस्वा चिन्तेसि "सचे पच्चेकबुद्धो भवेय्य, सक्कुणेय्य नु खो" ति "सोपि न सक्कुणेय्या" ति ञत्वा "सक्कसुयामादीसु कोचि सक्कुणेय्या" ति समन्नाहरि। सचे हि तेसु कोचि सक्कुणेय्य, तं पुच्छापेत्वा अत्तना विस्सज्जेय्य, न पन तेसुपि कोचि सक्कोति।

अथस्स एतदहोसि—"मादिसो बुद्धोयेव सक्कुणेय्य, अत्थि पन कत्थचि अञ्ञो बुद्धो" ति अनन्तासु लोकधातूसु अनन्तञाणं पत्थरित्वा ओलोकेन्तो अञ्ञं बुद्धं न अद्दस। अनच्छरियञ्चेतं, यं इदानि अत्तना समं न पस्सेय्य, सो जातदिवसेपि ब्रह्मजालवण्णनायं वुत्तनयेन अत्तना समं अपस्सन्तो—"अग्गोहमस्मि लोकस्सा" ति अप्पटिवत्तियं सीहनादं नदि। एवं अञ्ञं अत्तना समं अपस्सित्वा चिन्तेसि—"सचे अहं पुच्छित्वा अहमेव विस्सज्जेय्यं, एवम्पेता देवता न सक्खिस्सन्ति पटिविज्झितुं। अञ्ञस्मिं पन बुद्धेयेव पुच्छन्ते मयि च विस्सज्जन्ते अच्छेरकं भविस्सति, सक्खिस्सन्ति च देवता पटिविज्झितुं, तस्मा निम्मितबुद्धं मापेस्सामी" ति अभिञ्ञापादकज्झानं समापज्जित्वा वुट्ठाय—"पत्तचीवरगहणं आलोकितविलोकितं समिञ्जितपसारितञ्च मम सदिसंयेव होतू" ति कामावचरचित्तेहि परिकम्मं कत्वा पाचीनयुगन्धरपरिक्खेपतो उल्लङ्घमानं चन्दमण्डलं भिन्दित्वा निक्खमन्तं विय रूपावचरचित्तेन अधिट्ठासि।

(5 R. 683; 10; 15)

देवसंघो तं दिस्वा—"अञ्ञोपि नु खो, भो, चन्दो उग्गतो" ति आह। अथ चन्दं[1] ओहाय आसन्नतरे जाते "न चन्दो, सूरियो उग्गतो" ति पुन आसन्नतरे जाते "न सूरियो, देवविमानं एकं" ति पुन आसन्नतरे जाते "न देवविमानं, देवपुत्तो एको[2]" ति पुन आसन्नतरे जाते "न देवपुत्तो, महाब्रह्मा एको" ति पुन आसन्नतरे जाते "न महाब्रह्मा, अपरोपि भो बुद्धो आगतो" ति आह। तत्थ पुथुज्जनदेवता चिन्तयिंसु—"एकबुद्धस्स ताव अयं देवतासन्निपातो, द्विन्नं कीव महन्तो

(20; 25)

१. नं चन्दं—सी०; तं चन्दं—रो०; चन्दमण्डलं—स्या०। २. एसो—स्या०।

भविस्सती'' ति । अरियदेवता चिन्तयिंसु—"एकिस्सा लोकधातुया द्वे बुद्धा नाम नत्थि, अद्धा भगवता अत्तना सदिसो अञ्ञो एको बुद्धो निम्मितो" ति ।

अथ तस्स देवसंघस्स पस्सन्तस्सेव निम्मितबुद्धो आगन्त्वा दसबलं
5 अवन्दित्वाव सम्मुखट्ठाने समसमं कत्वा मापिते आसने निसीदि । भगवतोपि द्वत्तिंस महापुरिसलक्खणानि, निम्मितस्सापि द्वत्तिंसाव ।
B. 277 भगवतोपि सरीरा छब्बण्णरस्मियो निक्खमन्ति, निम्मितस्सापि, भगवतो सरीररस्मियो निम्मितस्स सरीरे पटिहञ्ञन्ति, निम्मितस्स सरीर-
R. 684 रस्मियो भगवतो काये पटिहञ्ञन्ति । ता द्विन्नम्पि बुद्धानं सरीरतो
10 उग्गम्म अकनिट्ठभवनं[1] आहच्च ततो पटिनिवत्तित्वा देवतानं मत्थक-परियन्ते ओतरित्वा चक्कवाळमुखवट्टियं पतिट्ठहिंसु । सकलचक्कवाळ-गब्भं सुवण्णमयवङ्कगोपानसीविनद्धमिव चेतियघरं विरोचित्थ । दससहस्स-चक्कवाळदेवता एकचक्कवाळे रासिभूता द्विन्नं बुद्धानं रस्मिगब्भन्तरं पविसित्वा अट्ठंसु । निम्मितबुद्धो निसीदन्तोयेव दसबलस्स बोधिपल्लङ्के
15 किलेसप्पहानं अभित्थवन्तो—

"पुच्छामि[2] मुनिं पहूतपञ्ञं,
तिण्णं पारङ्गतं परिनिब्बुतं ठितत्तं ।
निक्खम्म घरा पनुज्ज कामे,
कथं भिक्खु सम्मा सो लोके परिब्बजेय्या''

20 (सु० नि० ३२१) ति ॥,

गाथं अभासि । सत्था देवतानं[3] ताव चित्तकल्लताजननत्थं आगतागतानं नामगोत्तानि कथेस्सामी ति चिन्तेत्वा आचिक्खिस्सामि भिक्खवे तिआदिमाह ।

४. तथ **सिलोकमनुकस्सामी** (दी० नि० २.१९०) ति अक्खरपद-
25 नियमितं वचनसङ्खातं पवत्तयिस्सामि । **यत्थ भुम्मा तदस्सिता** ति

१. अकनिट्ठमवग्गं—सी० । २. पुच्छामि तं—स्या० ।
३. देवकायानं—सी०, रो० ।

येसु येसु ठानेसु भुम्मा देवता तं तं निस्सिता। **ये सिता गिरिगब्भरं** ति आदीहि तेसं भिक्खूनं वण्णं कथेसि। ये भिक्खू गिरिकुच्छि निस्सिता ति अत्थो। **पहितत्ता** ति पेसितचित्ता। **समाहिता** ति अविक्खित्ता।

पुथू ति बहुजना। **सीहाव सल्लीना** ति सीहा विय निलीना एकत्तं उपगता। **लोमहंसाभिसम्भु नो** ति लोमहंसं अभिभवित्वा ठिता, 5 निब्भया ति वुत्तं होति। **ओदातमनसा सुद्धा** ति ओदातचित्ता हुत्वा सुद्धा। **विप्पसन्नामनाविला** ति विप्पसन्नअनाविला।

भिय्योपञ्चसते ञत्वा ति सम्मासम्बुद्धेन सद्धिं अतिरेकपञ्चसते भिक्खू जानित्वा। **वने कापिलवत्थवे** ति कपिलवत्थुसमीपम्हि जाते वनसण्डे। **ततो आमन्तयी सत्था** ति तदा आमन्तयि। **सावके सासने रते** ति 10 B. 278 अत्तनो धम्मदेसनाय सवनन्ते जातत्ता सावके सिक्खत्तयसासने रतत्ता R. 685 सासने रते। इदं सब्बं—"सिलोकमनुकस्सामी" ति वचनतो अञ्ञेन वुत्तं विय कत्वा वदति।

देवकाया अभिक्कन्ता, ते विजानाथ भिक्खवो ति ते दिब्बचक्खुना विजानाथा ति नेसं भिक्खूनं दिब्बचक्खुञाणा भिनीहारत्थाय कथेसि।[1] 15 **ते च आतप्पमकरूं सुत्वा बुद्धस्स सासनं** ति ते च भिक्खू तं[2] बुद्धसासनं सुत्वा तावदेव तदत्थाय वीरियं करिंसु।

एवं कतमत्तातप्पानंयेव तेसं **पातुरहु ञाणं**। कीदिसं? अमनुस्सानं दस्सनं दिब्बचक्खुञाणं उप्पज्जि[3]। न[4] तं[4] तेहि तस्मिं खणे परिकम्मं कत्वा उप्पादितं। अरियमग्गेनेव हि तं निप्फन्नं। अमनुस्सदस्सनत्थं 20 पनस्स अभिनीहारमत्तमेव कतं। सत्थापि—"अत्थि तुम्हाकं ञाणं, तं नीहरित्वा तेन हि ते विजानाथा" ति इदमेव सन्धाय "ते विजानाथ, भिक्खवो," ति आह।

अप्पेके सतमद्दक्खुं ति तेसु भिक्खूसु एकच्चे भिक्खू अमनुस्सानं सतं अद्दसंसु। **सहस्सं अथ सत्तरिं** ति एके सहस्सं। एके सत्तति 25 सहस्सानि।

१. कथेति—सी०, रो०। २. सी० पोत्थके नत्थि।
३. उप्पज्जितं—रो०। ४-४. रो० पोत्थके नत्थि।

सतं एके सहस्सानं ति एके सतसहस्सं अद्दसंसु। **अप्पेकेनन्तमद्दक्खुं** ति विपुलं अद्दसंसु, सतवसेन सहस्सवसेन च अपरिच्छिन्ने पि अद्दसंसू ति अत्थो। कस्मा? यस्मा **दिसा सब्बा फुटा अहुं**, भरिता सम्पुण्णाव अहेसुं।

5 **तञ्च सब्बं अभिञ्ञाया** ति यं[1] तेसु एकेनेकेन दिट्ठं, तञ्च सब्बं जानित्वा। **ववत्थित्वान चक्खुमा** ति हत्थतले लेखं विय पच्चक्खतो ववत्थपेत्वा पञ्चहि चक्खूहि चक्खुमा सत्था। **ततो आमन्तयी** ति पुब्बे वुत्तगाथमेव नामगोत्तकित्तनत्थाय आह। तुम्हे एते विजानाथ, पस्सथ, ओलोकेथ, ये वोहं कित्तयिस्सामी ति अयमेत्थ सम्बन्धो। **गिराही** ति

10 वचनेहि। **अनुपुब्बसो** ति अनुपटिपाटिया।

५. **सत्तसहस्सा ते यक्खा, भुम्मा कापिलवत्थवा** (दी॰ नि॰ २.१९१) ति सत्तसहस्सा तावेत्थ कपिलवत्थुं निस्साय

B. 279
R. 686

निब्बत्ता भुम्मा यक्खायेवा ति वदति। **इद्धिमन्तो** ति दिब्बइद्धियुत्ता। **जुतिमन्तो** ति आनुभावसम्पन्ना। **वण्णवन्तो** ति सरीरवण्णसम्पन्ना।

15 **यसस्सिनो** ति परिवारसम्पन्ना। **मोदमाना अभिक्कामुं** ति तुट्ठचित्ता आगता। **भिक्खूनं समितिं वनं** ति इमं महावनं भिक्खूनं सन्तिकं भिक्खूनं दस्सनत्थाय आगता। अथवा **समितिं** ति समूहं, भिक्खुसमूहं दस्सनाय आगता ति पि अत्थो।

छसहस्सा हेमवता, यक्खा नानत्तवण्णिनो ति छसहस्सा

20 हेमवतपब्बते निब्बत्तयक्खा, ते च सब्बेपि नीलादिवण्णवसेन नानत्तवण्णा।

सातागिरा तिसहस्सा ति सातागिरिपब्बते निब्बत्तयक्खा तिसहस्सा।

इच्चेते सोळससहस्सा ति एते सब्बेपि सोळससहस्सा होन्ति।

25 **वेस्सामित्ता पञ्चसता** ति वेस्सामित्तपब्बते निब्बत्ता पञ्चसता।

१. ०यं – रो०।

कुम्भीरो राजगहिको ति राजगहनगरे निब्बत्तो कुम्भीरो नाम यक्खो। **वेपुल्लस्स निवेसनं** ति तस्स वेपुल्लपब्बतो निवेसनं निवासनट्ठानन्ति अत्थो। **भिय्यो नं सतसहस्सं, यक्खानं पयिरूपासती** ति तं अतिरेकं यक्खानं सतसहस्सं पयिरूपासति। **कुम्भीरो राजगहिको, सोपागा समितिं वनं** ति सोपि कुम्भीरो सपरिवारो इमं वनं भिक्खुसमितिं दस्सनत्थाय आगतो। 5

६. **पुरिमञ्च दिसं राजा, धतरट्ठो पसासती** ति पाचीनदिसं अनुसासति। **गन्धब्बानं अधिपती** ति चतूसुपि दिसासु गन्धब्बानं जेट्ठको। सब्बे ते तस्स वसे वत्तन्ति। **महाराजा यसस्सिसो** ति महापरिवारो एसो महाराजा। 10

पुत्तापि तस्स बहवो, इन्दनामा महब्बला ति तस्स धतरट्ठस्स बहवो महब्बला पुत्ता, ते सब्बे सक्कस्स देवरञ्ञो नामधारका। B. 280

विरूळ्हो तं पसासती ति तं दिसं विरूळ्हो अनुसासति।

पुत्तापि तस्सा ति तस्सा पि तादिसायेव पुत्ता। पाळियं पन "महब्बला" ति लिखन्ति। अट्ठकथायं सब्बवारेसु "महाबला" ति पाठो। 15

"पुरिमं दिसं धतरट्ठो, दक्खिणेन विरूळ्हको, R. 687
पच्छिमेन विरूपक्खो, कुवेरो उत्तरं दिसं।
चत्तारो ते महाराजा, समन्ता चतुरो दिसा,
दद्दल्लमाना अट्ठंसु, वने कापिलवत्थवे" ति॥ 20

इमा पन गाथा सब्बसङ्गाहिकवसेन वुत्ता।

अयञ्चेत्थ अत्थो—दससहस्सचक्कवाळे धतरट्ठा नाम महाराजानो अत्थि। ते सब्बे पि कोटिसतसहस्सकोटिसतसहस्सगन्धब्बपरिवारा आगन्त्वा पुरत्थिमाय दिसाय कपिलवत्थुमहावनतो पट्ठाय चक्कवाळगब्भं पूरेत्वा ठिता। एवं दक्खिणदिसादीसु विरूळ्हकादयो। तेनेवाह— 25
"समन्ता चतुरो दिसा, दद्दल्लमाना अट्ठंसू" ति। इदञ्हि वुत्तं होति—
"समन्ता चक्कवाळेहि आगन्त्वा चतुरो दिसा पब्बतमत्थकेसु

अग्गिक्खन्धा विय सुट्ठु जलमाना ठिता'' ति। ते पन यस्मा कपिल-
वत्थुवनमेव सन्धाय आगता, तस्मा चक्कवाळं पूरेत्वा चक्कवाळेन
समसमा ठितापि—''वने कापिलवत्थवे'' ति वुत्ता।

७. **तेसं मायाविनो दासा, आगुं वञ्चनिका सठा**
5 (दी० नि० २.१९२) ति तेसं महाराजानं कतपापपटिच्छादन-
लक्खणाय मायाय युत्ता कुटिलाचारा दासा अत्थि, ये सम्मुखपरम्मुख-
वञ्चनाहि लोकं वञ्चनतो ''वञ्चनिका'' ति च, केराटियसाठेय्येन
समन्नागतत्ता ''सठा'' ति च वुच्चन्ति। तेपि आगता ति अत्थो।
माया कुटेण्डु विटेण्डु, विटुच्चो विट्टुटो सहा ति ते दासा सब्बेपि
10 मायाकारकाव। नामेन पनेत्थ एको **कुटेण्डु** नाम, एको **विटेण्डु**
नाम। पाळियं पन ''वेटेण्डू'' ति लिखन्ति। एको **विटुच्चो** नाम,
एको **विटुटो** नाम। **सहा** ति सोपि विटुटो तेहि सहेव
आगतो।

B. 281 **चन्दनो कामसेट्ठो च, किन्निघण्डु निघण्डु चा** ति अपरो
15 किन्निघण्डु नाम। पाळियं पन ''किन्नुघण्डू'' ति लिखन्ति। **निघण्डु
चा** ति अञ्ञो[1] निघण्डु नाम, एत्तका दासा। इतो[2] परे पन[2]—

''पनादो ओपमञ्ञो च, देवसुतो च मातलि,
चित्तसेनो च गन्धब्बो, नळो राजा जनेसभो।
आगुं पञ्चसिखो चेव, तिम्बरू सूरियवच्छसा'' ति॥

R. 688 20 इमे देवराजानो। तत्थ **देवसुतो** ति देवसारथि। **चित्तसेनो**
ति चित्तो च सेनो च चित्तसेनो च। **गन्धब्बो** ति अयं चित्तसेनो
गन्धब्बकायिको देवपुत्तो[3]। न केवलञ्चेस, सब्बे पेते पनादादयो
गन्धब्बा एव। **नळोराजा** ति नळकारदेवपुत्तो नामेको। **जनेसभो**
ति जनवसभो देवपुत्तो। **आगुं पञ्चसिखो चेवा** ति पञ्चसिखो चेव

१. अञ्ञो—रो०। २-२. इतरे पन—सी०, रो०।
३. सी० पोत्थके नत्थि।

देवपुत्तो आगतो। **तिम्बरूति** तिम्बरू नाम गन्धब्बदेवराजा। **सूरियवच्छसा** ति तस्सेव धीता।

एते चञ्ञे च राजानो, गन्धब्बा सह राजुभी ति एते च नामवसेन वुत्तगन्धब्बराजानो अञ्ञे च एतेहि राजूहि सद्धिं बहू गन्धब्बा। **मोदमाना अभिक्कामुं, भिक्खूनं समितिं वनं** ति हट्ठतुट्ठचित्ता 5 भिक्खुसंघसमितिं इमं वनं आगताति अत्थो।

८. **अथागुं नागसा नागो, वेसाला सहतच्छका** ति नागसदहवासिका[1] च वेसालीवासिका च नागा सह तच्छकनागपरिसाय आगता ति अत्थो। **कम्बलस्सतरा** ति कम्बलो च अस्सतरो च। एते किर सिनेरुपादे वसन्ति। सुपण्णेहिपि अनुद्धरणीया महेसक्खनागा 10 **पायागा सह ञातिभी** ति पयागतित्थवासिनो च सह ञातिसंघेन आगता।

यामुना धतरट्ठा चा ति यमुनवासिनो च धतरट्ठकुले उप्पन्ना नागा च। **एरावणो महानागो** ति एरावणो च देवपुत्तो, जातिया नागो न होति। नागवोहारेन पमेस वोहरियति। **सोपागा** ति सोपि 15 आगतो।

यो नागराजे सहसा हरन्ती ति ये इमे वुत्तप्पकारे नागे B 282 लोभाभिभूता साहसं कत्वा हरन्ति गण्हन्ति। **दिब्बा दिजा पक्खी विसुद्धचक्खू** ति दिब्बानुभावतो दिब्बा मातुकुच्छितो च अण्डकोसतो चा ति द्वे वारे जाता ति दिजा पक्खयुत्तताय पक्खी योजनसतन्तरेपि 20 योजनसहस्सन्तरेपि नागे दस्सनसमत्थचक्खुताय विसुद्धचक्खू। **वेहायसा ते वनमज्झप्पत्ता** ति ते आकासेनेव इमं महावनं सम्पत्ता। R 689 **चित्रा सुपण्णा इति तेस नामं** ति तेसं "चित्रसुपण्णा" ति नामं।

१. नागसदेहवासिका—रो०; नाभसदह-वासिनो—सी०; नभसदहवासिको—स्या०।

अभयं तदा नागराजानमासि, सुपण्णतो खेममकासि बुद्धो ति तस्मा सब्बेपि ते अञ्ञमञ्ञं सण्हाहि वाचाहि उपव्हयन्ता मित्ता विय बन्धवा विय **च** समुल्लपन्ता सम्मोदमाना आलिङ्गन्ता हत्थे गण्हन्ता अंसकूटे हत्थं ठपेन्ता हट्ठतुट्ठचित्ता। **नागा सुपण्णा** 5 **सरणमकंसु बुद्धं** ति बुद्धंयेव सरणं[1] गता।

९. **जिता वजिरहत्थेना** (दी० नि० २.१९३) ति इन्देन देवरञ्ञा जिता। **समुद्दं असुरासिता** ति महासमुद्दवासिनो[2] सुजाताय असुरकञ्ञाय कारणा सब्बेपि **भातरो वासवस्सेते इद्धिमन्तो यसस्सिनो**।

10 तेसु **कालकञ्चा महाभिस्मा** ति कालकञ्चा च महन्ते भिंसने अत्तभावे मापेत्वा आगमिंसु। **असुरा दानवेघसा** दानवेघसा नाम अञ्ञे धनुग्गहअसुरा। **वेपचित्ति सुचित्ति च, पहारादो नमुची सहा** ति वेपचित्तिअसुरो, सुचित्तिअसुरो चाति एते च असुरा नमुचि च मारो देवपुत्तो एतेहि सहेव आगतो। इमे असुरा महासमुद्दवासिनो, अयं 15 परनिम्मितदेवलोकवासी, कस्मा एतेहि सहागतो ति? अच्छन्दिकत्ता। तेपि हि अच्छन्दिका अभब्बा, अयम्पि तादिसोयेव। तस्मा धातुसो संसन्दमानो आगतो।

सतञ्च बलिपुत्तानं ति बलिनो महाअसुरस्स पुत्तानं सतं। **सब्बे वेरोचनामका** ति सब्बे अत्तनो मातुलस्स राहुस्सेव नामधरा। 20 **सन्नय्हित्वा बलिसेनं** ति अत्तनो बलिसेनं सन्नय्हित्वा सब्बे कतसन्नाहाव हुत्वा। **राहुभद्दमुपागमुं** ति राहुअसुरिन्दं उपसङ्कमिंसु। B.283 **समयो दानि भद्दन्तेति** भद्दं तव होतु, समयो ते भिक्खूनं[3] समितिं वनं उपसङ्कमित्वा[3] भिक्खुसंघं दस्सनाया ति अत्थो।

१०. **आपो च देवा पथवी, तेजो वायो तदागमुं** ति आपो- 25 कसिणादीसु परिकम्मं[4] कत्वा निब्बत्ता आपोतिआदिनामका देवा

१. ते सरणं—सी०, स्या०। २. ० असुराजिता—सी०।
३-३. सी० पोत्थके नत्थि। ४. कम्मं—सी०।

आगमु[1]। वरुणा वारणा देवा, सोमो च यससा सहा ति वरुणदेवता, वारणदेवता, सोमदेवता ति एवं नामका च देवा यससा नाम देवेन सहागवा ति अत्थो। मेत्ताकरुणाकायिका ति मेत्ताझाने च करुणाझाने च परिकम्मं कत्वा निब्बत्तदेवा। आगु देवा यसस्सिनो ति एतेपि महायसा देवा आगता। R. 690 5

दसेते दसधा काया, सब्बे नानत्तवण्णिनो ति ते दसधा ठिता दस देवकाया। सब्बे नीलादिवसेन नानत्तवण्णा आगता ति अत्थो।

वेण्डू च देवा ति वेण्डुदेवता च। सहलि चा ति सहलिदेवता च। असमा च द्वे यमा ति असमदेवता च द्वे च यमका देवा। चन्दस्सुपनिसा देवा, चन्दमागु पुरक्खत्वा ति चन्दनिस्सितका देवा चन्दं पुरतो कत्वा आगता। तथा सूरियनिस्सितका देवा सूरियं पुरक्खत्वा। नक्खत्तानि पुरक्खत्वा ति नक्खत्तनिस्सितापि देवा नक्खत्तानि पुरतो कत्वा आगता। आगु मन्दवलाहका ति वातवलाहका, अब्भवलाहका, उण्हवलाहका एते सब्बेपि वलाहकायिका "मन्दवलाहका" नाम वुच्चन्ति। तेपि आगताति अत्थो। वसूनं वासवो सेट्ठो, सक्कोपागा पुरिन्ददो ति वसूनं देवतानं सेट्ठो वासवो यो सक्कोति च, पुरिन्ददो ति च वुच्चति, सोपि आगतो। 10 15

दसेते दसधा काया ति एतेपि दस देवकाया दसधाव आगता। सब्बे नानत्तवण्णिनो ति नीलादिवसेन नानत्तवण्णा।

अथागु सहभू देवा ति अथ सहभू नाम देवा आगता। जलमग्गिसिखारिवा ति अग्गिसिखा विय जलन्ता। जलमग्गि च सिखारिवा ति इमानि तेसं नामानी तिपि वुत्तं। अरिट्ठका च रोजा चा ति अरिट्ठकदेवा च रोजदेवा च। उमापुप्फनिभासिनो ति उमापुप्फदेवा नाम एते देवा। उमापुप्फसदिसा हि तेसं सरीराभा, तस्मा "उमापुप्फनिभासिनो" ति वुच्चन्ति। 20 B 284 25

1. तदा आगमुं—सी०।

वरुणा सहधम्मा चा ति एते च द्वे जना। **अच्चुता च अनेजका** ति अच्चुतदेवता च अनेजकदेवता च। **सुलेय्यरुचिरा आगुं** ति सुलेय्या च रुचिरा च आगता। **आगुं वासवनेसिनो** ति वासवनेसीदेवा नाम आगता। **दसेते दसधा काया** ति एतेपि दसदेवकाया दसधाव आगता।

R. 691

समाना महासमाना ति समाना च महासमाना च[1]। **मानुसा मानुसुत्तमा** ति मानुसा च मानुसुत्तमा च। **खिड्डापदोसिका आगुं, आगुं मनोपदोसिकाति** खिड्डापदोसिका मनोपदोसिका च देवा आगता।

अथागुं हरयो देवा ति हरिदेवा नाम आगता। **ये च लोहितवासिनो** ति लोहितवासिनो च आगता। **पारगा महापारगा** ति एते च दुविधा आगता। **दसेते दसधा काया** ति एतेपि दसदेवकाया दसधाव आगता।

सुक्का करम्भा अरुणा, वेघनसा सहा ति एते सुक्कादयो तयो, तेहि सह वेघनसा च आगता। **ओदातगय्हा पामोक्खा** ति ओदातगय्हा नाम पामोक्खदेवा आगता। **आगुं देवा विचक्खणा** ति विचक्खणा नाम देवा आगता।

सदामत्ता हारगजा ति सदामत्ता च हारगजा च। **मिस्सका च यसस्सिनो** ति यससम्पन्ना मिस्सकदेवा च। **थनयं आगु पज्जुन्नो** ति पज्जुन्नो च देवराजा थनयन्तो आगतो। **यो दिसा अभिवस्सती** ति यो यं यं दिसं याति, तत्थ तत्थ देवो वस्सति। **दसेते दसधा काया** ति एतेपि दसदेवकाया दसधा आगता।

खेमिया तुसिता यामा ति खेमिया देवा तुसितपुरवासिनो च यामादेवलोकवासिनो च। **कथका च यसस्सिनो** ति यससम्पन्ना कथकदेवा च। पाळियं पन "कट्ठका चा" ति लिखन्ति। **लम्बीतका लामसेट्ठा** ति लम्बितकदेवा च लामसेट्ठदेवा च। **जोतिनामा च आसवा** ति पब्बतमत्थके कतनळग्गिक्खन्धो विय जोतमाना जोतिदेवा

१. देवा च—सी०, रो०।

नाम अत्थि, ते च आसा च देवा आगतातिं अत्थो। पाळियं पन[1] "जातिनामा" ति लिखन्ति। आसा देवता छन्दवसेन आसवा ति वुत्ता। निम्मानरतिनो आगुं, अथागुं परनिम्मिता। दसेते दसधा काया ति एतेपि दस देवकाया दसधाव आगता। B. 285

सट्ठेते देवनिकाया ति एते च आपो च देवा तिआदिका छ दसका सट्ठि देवनिकाया सब्बे नीलादिवसेन नानत्तवण्णिनो। नामन्वयेव आगच्छुं ति नामभागेन नामकोट्ठासेन आगता। ये चञ्ञे सदिसा सहा ति ये च अञ्ञेपि तेहि सदिसा वण्णतोपि नामतोपि एतादिसायेव सेसचक्कवाळेसु देवा, तेपि आगतायेवाति एकपदेनेव कलापं विय पुटकं विय च कत्वा[2] सब्बा देवता निद्दिसति। 5 R. 692 10

एवं दससु लोकधातुसहस्सेसु देवकाये निद्दिसित्वा इदानि यदत्थं ते आगता, तं दस्सेन्तो पवुट्ठजातिं ति गाथमाह। तस्सत्थो—पवुट्ठा विगता जाति अस्सा ति अरियसंघो पवुट्ठजाति नाम, तं पवुट्ठजातिं। रागदोसमोहखीलानं अभावा अखीलं। चत्तारो ओघे तरित्वा ठितत्ता ओघतिण्णं। चतुन्नं आसवानं अभावेन अनासवं। अरियसंघं दक्खेम पस्सिस्साम। तेसंयेव ओघानं तिण्णत्ता ओघतरं। आगुं अकरणतो नागं। असितातिगं ति काळकभावातीतं चन्दं व सिरिया विरोचमानं दसबलञ्च दक्खेम पस्सिस्सामा ति एतदत्थं सब्बेपि ते नामन्वयेन आगच्छुं। ये चञ्ञे सदिसा सहा ति। 15

११. इदानि ब्रह्मानो दस्सेन्तो[3] सुब्रह्मा परमत्तो चा (दी० नि० २.१९५) तिआदिमाह। तत्थ सुब्रह्मा ति एको ब्रह्मा[4]। परमत्तोति ब्रह्माव[5]। पुत्ता इद्धिमतो सहा ति एते इद्धिमतो बुद्धस्स भगवतो पुत्ता अरियब्रह्मानो सहेव आगता। सनङ्कुमारो 20

१. रो० पोत्थके नत्थि।
२. एकतो कत्वा—सी०, रो०।
३. देसेन्तो—स्या०।
४. सेट्ठब्रह्मा—स्या०।
५. एको ब्रह्मा व—सी०; ब्रह्मा च —स्या०।

तिस्सो **चा** ति सनङ्कुमारो च तिस्समहाब्रह्मा च। **सोपागा** ति सोपि आगतो।

"सहस्सं ब्रह्मलोकानं, महाब्रह्माभितिट्ठति।
उपपन्नो जुतिमन्तो, भिस्माकायो यसस्सि सो" ति॥

B. 286 5 एत्थ **सहस्सं ब्रह्मलोकानं** ति एकङ्गुलिया एकसहस्सचक्कवाळे दसहि अङ्गुलीहि दससहस्सिचक्कवाळे आलोकफरणसमत्थानं महाब्रह्मानं सहस्सं आगतं। **महाब्रह्माभितिट्ठती** ति यत्थ एकेको महाब्रह्मा अञ्ञे ब्रह्मे अभिभवित्वा तिट्ठति। **उपपन्नो** ति ब्रह्मलोके निब्बत्तो[1]। **जुतिमन्तो** ति आनुभावसम्पन्नो। **भिस्माकायो** ति महाकायो, द्वीहि 10 तीहि मागधिकेहि गामक्खेत्तेहि सम्पमाणअत्तभावो। **यसस्सिसो** ति अत्तभावसिरीसंखातेन यसेन समन्नागतो।

दसेत्थ इस्सरा आगुं, पच्चेकवसवत्तिनो ति एकस्मिञ्च ब्रह्मसहस्से ये पाटियेक्कं पाटियेक्कं वसं वत्तेन्ति, एवरूपा दस इस्सरा महाब्रह्मानो आगता। **तेसञ्च मज्झतो अगा हारितो परिवारितो** ति तेसं ब्रह्मानं 15 मज्झे हारितो नाम महाब्रह्मा सतसहस्सब्रह्मपरिवारो आगतो।

१२. **ते च सब्बे अभिक्कन्ते, सइन्दे देवे सब्रह्मके** ति ते सब्बेपि सक्कं देवराजानं जेट्ठकं कत्वा आगते देवकाये, हारितमहाब्रह्मानं जेट्ठकं कत्वा आगते ब्रह्मकाये च। **मारसेना अभिक्कामी** ति मारसेना अभिगता। **पस्स कण्हस्स मन्दियं** ति काळकस्स[2] मारस 20 बालभावं पस्सथ।

एथ गण्हथ बन्धथा ति एवं अत्तनो परिसं आणापेसि। **रागेन बद्धमत्थु वो** ति सब्बं वो इदं देवमण्डलं रागेन बद्धं होतु। **समन्ता परिवारेथ, मा वो मुञ्चित्थ कोचि नं** ति तुम्हाकं एकोपि एतेसु एकम्पि मा मुञ्चि। "मा वो मुञ्चेथा" तिपि पाठो, एसेवत्थो।

१. उपपन्नो—सी०। २. कालधम्मस्स—सी०; कालकराहुस्स—रो०।

इति तत्थ महासेनो, कण्हो सेनं अपेसयी ति एवं तत्थ महासमये महासेनो मारो मारसेनं अपेसयि[1]। पाणिना तलमाहच्चा ति हत्थेन पथवीतलं पहरित्वा। सरं कत्वान भेरवं ति मारविभिंसकदस्सनत्थं भयानकं सरञ्च कत्वा।

यथा पावुस्सको मेघो थनयन्तो सविज्जुको ति सविज्जुको पावुस्सकमेघो विय महागज्जितं गज्जन्तो। तदा सो पच्चुदावत्ती ति तस्मिं समये सो मारो तं विभिंसनकं दस्सेत्वा पटिनिवत्तो। सङ्कुद्धो असयं वसे ति सुट्ठु कुद्धो कुपितो कञ्चि वसे वत्तेतुं असक्कोन्तो असयंवसे असयंवसी अत्तनो[2] वसेन अकामको हुत्वा निवत्तो। भगवा किर "अयं मारो इमं महासमागमं दिस्वा—"अभिसमयन्तरायं करिस्सामी' ति अन्तरन्तरे मारसेनं पेसेत्वा मारं विभिंसकं[3] दस्सेती'' ति अञ्ञासि। पकति चेसा भगवतो, यत्थ अभिसमयो न भविस्सति, तत्थ मारं विभिंसकं दस्सेन्तं न निवारेति। यत्थ पन अभिसमयो होति, तत्थ[4] यथा[4] परिसा नेव मारस्स रूपं पस्सति, न सद्दं सुणाति, एवं अधिट्ठाती ति। इमस्मिञ्च समागमे[5] महाभिसमयो भविस्सति, तस्मा यथा देवता नेव तस्स रूपं पस्सन्ति, न सद्दं सुणन्ति, एवं अधिट्ठासि। तेन वुत्तं—"तदा सो पच्चुदावत्ति, सङ्कुद्धो असयंवसे" ति।

१३. तञ्च सब्बं अतिञ्ञाय, ववत्थित्वान चक्खुमा (दी० नि० २.१९६) ति तं सब्बं भगवा जानित्वा ववत्थपेत्वा च।

मारसेना अभिक्कन्ता, ते विजानाथ भिक्खवो ति भिक्खवे मारसेना अभिक्कन्ता, ते तुम्हे अत्तनो[6] अनुरूपं विजानाथ, फलसमापत्तिं समापज्जथा ति वदति। आतप्पमकरुं ति फलसमापत्तिं पविसनत्थाय

B. 287 R. 694

१. पेसयि—सी०। २. न अत्तनो—सी०;
३. विभिंसनकं—सी०। ४-४. मारं विभिंसनकं दस्सेन्तं वारेति—सी०।
५. समये—स्या०। ६. ० अत्तनो—सी०।

वीरियं आरभिंसु । **वीतरागेहि पक्कामुं** ति मारो च मारसेना[१] च वीतरागेहि अरियेहि दूरतोव अपक्कमुं । **नेसं लोमापि इञ्जयुं** ति तेसं वीतरागानं लोमानिपि न चालयिंसु । अथ मारो भिक्खुसंघं आरब्भ इमं गाथं अभासि—

5 "सब्बे विजितसङ्गामा, भयातीता यसस्सिनो ।
मोदन्ति सह भूतेहि, सावका ते जनेसुता" ति ॥

तत्थ **मोदन्ति सह भूतेही** ति दसबलस्स सासने भूतेहि सञ्जातेहि अरियेहि सद्धिं मोदन्ति पमोदन्ति[२] । **जनेसुता** ति जने विस्सुता[३] पाकटा अभिञ्ञाता ।

10 इदं पन महासमयसुत्तं नाम देवतानं पियं मनापं, तस्मा मङ्गलं वदन्तेन अभिभनवट्ठानेसु इदमेव सुत्तं वत्तब्बं । देवता किर—"इमं सुत्तं सुणिस्सामा" ति ओहितसोता विचरन्ति । देसनापरियोसाने पनस्स कोटिसतसहस्सदेवता अरहत्तं पत्ता, सोतापन्नादीनं गणना नत्थि ।

R. 695
B. 288

देवतानञ्चस्स पियमनापभावे इदं वत्थु—कोटिपब्बतविहारे किर 15 नागलेणद्वारे नागरुक्खे एका देवधीता वसति । एको दहरो अन्तोलेणे इमं सुत्तं सज्झायति । देवधीता सुत्वा सुत्तपरियोसाने महासद्देन साधुकारमदासि । को एसो ति । अहं, भन्ते, देवधीता ति । कस्मा साधुकारमदासी ति ? भन्ते, दसबलेन महावने निसीदित्वा कथितदिवसे इमं सुत्तं सुत्वा अज्ज अस्सोसिं, भगवता कथिततो एकक्खरम्पि अहापेत्वा 20 सुग्गहितो अयं धम्मो तुम्हेही ति । दसबलस्स कथयतो सुतं तयाति ? आम, भन्ते ति । महा किर देवतासन्निपातो अहोसि, त्वं[४] कत्थ ठिता सुणी ति ?

अहं, भन्ते, महावनवासिया[५] देवता[५] । महेसक्खासु पन देवतासु आगच्छन्तीसु जम्बुदीपे ओकासं नालत्थं, अथ इमं तम्बपण्णिदीपं

१. मारानुचरा—सी० ।
२. सी० पोत्थके नत्थि ।
३. सुता ०—सी० ।
४. त्वं पन—सी०, रो० ।
५-५. महावनवासिका देवताहि सद्धिं अट्ठासि—सी०, रो० ।

आगन्त्वा जम्बुकोलपट्टने ठत्वा सोतुं आरद्धम्हि । तत्रापि महेसक्खासु देवतासु आगच्छन्तीसु अनुक्कमेन[1] पटिक्कममाना रोहणजनपदे महागामस्स पिट्ठिभागतो[2] समुद्दे[2] गलप्पमाणं उदकं पविसित्वा तत्थ ठिता अस्सोसिं ति । तुय्हं ठितट्ठानतो दूरे सत्थारं पस्ससि देवते ति ? किं कथेथ, भन्ते । सत्था महावने धम्मं देसेन्तो निरन्तरं ममञ्ञेव ओलोकेती ति मञ्ञमाना ओतप्पमाना[3] ऊमीसु निलयामी ति । 5

तं दिवसं किर कोटिसतसहस्सदेवता अरहत्तं पत्ता । तुम्हेपि तदा अरहत्तं पत्ताति ? नत्थि भन्ते । अनागामिफलं पत्तत्थ मञ्ञेति ? नत्थि, भन्ते । सकदागामिफलं पत्तत्थ मञ्ञेति ? नत्थि भन्ते । तयो मग्गे पत्ता देवता किर गणनपथं अतीता, सोतापन्ना जातत्थ मञ्ञेति ? देवता तं 10 R. 696 दिवसं सोतापत्तिफलं पत्तत्ता हरायमाना—"अपुच्छितब्बं पुच्छति अय्यो" ति आह । ततो नं सो भिक्खु आह—"सक्का पन देवते, तव अत्तभावं अम्हाकं दस्सेतुं" ति ? न सक्का भन्ते सकलकायं दस्सेतुं । अङ्गुलि- B. 289 पब्बमत्तं दस्सेस्सामि अय्यस्सा ति कुञ्चिकछिद्देन अङ्गुलिं अन्तोलेणाभिमुखं अकासि, चन्दसहस्ससूरियसहस्सउग्गमनकालो विय अहोसि । 15 देवधीता[4] "अप्पमत्ता, भन्ते, होथा" ति दहरभिक्खुं वन्दित्वा अगमासि । एवं इमं सुत्तं देवतानं पियं मनापं, ममायन्ति नं देवता ति ।

इति सुमङ्गलविलासिनिया दीघनिकायट्ठकथायं
महासमयसुत्तवण्णना निट्ठिता ।

—०—

१. अनुपुब्बेन—सी०, स्या०, रो० । २-२. पिट्ठिभागे गोठकसमुद्दे—सी० ।
३. ० हिरियमाना—सी० । ४. देवता—रो० ।

परिसिट्ठं

१. सद्दानुक्कमणिका

२. गाथानुक्कमणिका

सुमङ्गलविलासिनी

सद्दानुक्कमणिका

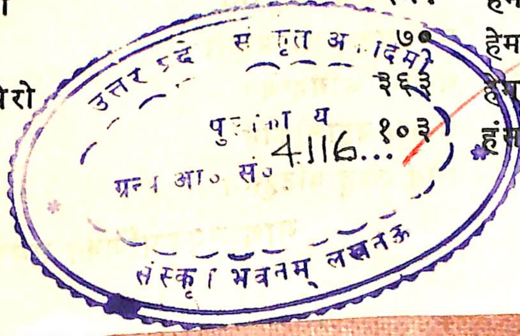
अ

आ

इ

फ

सद्दानुक्कमणिका समत्ता



२. गाथानुक्कमणिका

गाथानुक्कमणिका समत्ता